हिन्दी-साहित्य और बिहार

(तृतीय खण्ड)

[उन्नीसवीं शती :: उत्तरार्द्ध : पूर्वांश]

प्रधान सम्पादक

पं० हंसकुमार तिवारी

सम्पादक

डॉ० बजरंग वर्मा

कामेश्वर शर्मा 'नयन'

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद

पटना-८०००४

वक्तव्य

'हिन्दी-साहित्य और बिहार'-ग्रन्थमाला का तृतीय खण्ड पाठकों के सामने प्रस्तुत करते हुए हमे जो प्रसन्नता हो रही है, उसका अनुमान करना कठिन है। किसी साधक साहित्यकार की विराट् कल्पना को आशिक मूर्त्तता प्रदान करने का दुर्लभ सुयोग पाकर भला किसे प्रसन्नता नही होगी ? इस सन्दर्भ मे, हमे स्वभावत बिहार के साहित्यिक इतिहास-सम्बन्धी इस कल्पना के उद्भावक मनीषी आचार्य शिवपूजन सहायजी का पावन स्मरण हो आता है। इस खण्ड के प्रकाशन मे अनिवार्य कारणवश अप्रत्याशित विलम्ब भी हो गया। अत आज इसे प्रकाशित करते हुए प्रसन्नता के साथ-साथ हमें परम सन्तोष का अनुभव हो रहा है।

इस ग्रन्थमाला के प्रथम खण्ड मे ईसवी सन् की सातवी से अठारहवी शती तक के, और द्वितीय खण्ड मे उन्नीसवी शती पूर्वार्द्ध (सन् १८०१ से १८५० ई० तक) के हिन्दी-साहित्यसेवियो के विवरणात्मक परिचय प्रकाशित किये गये है। प्रस्तुत तृतीय खण्ड मे उन्नीसवी शती उत्तरार्द्ध (सन् १८५१ से १९०० ई० तक) के बिहार-निवासी साहित्य-सेवियो का विवरणात्मक परिचय देने की योजना थी। और, इसी आशय से इसके प्रथम अध्याय का मुद्रण भी आरम्भ हुआ था। किन्तु, जब प्रथम अध्याय मे ही इसकी काया अत्यन्त बृहत् होती पाई गई, तब यह निर्णय किया गया कि शेष अध्यायो की सामग्री को चतुर्थ खण्ड के रूप मे ही प्रकाशित करना ठीक होगा। इसी कारण, इस खण्ड मे मात उन्ही तीन सौ बिहारी साहित्य-साधको के विवरणात्मक परिचय सकलित किये जा सके है, जिनका जन्मकाल प्रस्तुत काल-खण्ड के बीच तिथिवार-सहित प्राप्त है। उक्त कारणवश ही हमे 'परिशिष्ट' मे दिये जाने योग्य और भी अनेक आवश्यक सामग्री के साथ-साथ शोध की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण व्यक्ति-ग्रन्थ-नामानुक्रमणी तथा सहायक सामग्री की सूची आदि तथ्यो के प्रकाशन मे भी कटौती करनी पडी है।

'हिन्दी-साहित्य और बिहार'-ग्रन्थमाला के अन्तर्गत, अन्य खण्डो के माध्यम से, सन् १९५० ई० तक के बिहार-निवासी साहित्यसेवियो के विवरणात्मक इतिवृत्त के प्रकाशन की योजना है। तत्पश्चात् बिहार की हिन्दीसेवी सस्थाओ एव भाषा-सम्बन्धी विभिन्न आन्दोलनो का इतिहास, बिहार की हिन्दी-पत्रकारिता एव हिन्दी-मुद्रण-सस्थानो का इतिहास, बिहार के लोक-साहित्य की विभिन्न विधाओ का इतिहास तथा बिहार की हिन्दीतर भाषाओ का साहित्यिक इतिहास तैयार कराये जायेगे। इन सबके ग्रन्थाकार प्रकाशन के बाद, उक्त समग्र प्रकाशित सामग्री के आधार पर बिहार की हिन्दी-सेवा की विभिन्न विधाओ एव प्रवृत्तियो का एक बृहत् इतिहास 'बिहार का साहित्यिक इतिहास' के नाम से निर्मित होगा, जो हिन्दी-ससार की, वास्तव मे, एक बहुत बड़ी उपलब्धि होगी।

'हिन्दी-साहित्य और बिहार' के प्रथम दो खण्डो के प्रकाशन की श्लाघा विद्वानो ने मुक्त कण्ठ से की है, क्योकि उन दोनो खण्डो ने वैयक्तिक अथवा विश्व-विद्यालयीय स्तर पर कार्य करनेवाले अनुसन्धित्सुओ के लिए एक प्रकार से प्रकाश-स्तम्भ का काम किया है। विश्वास है कि पूर्व के खण्डो की तरह इस तृतीय खण्ड को भी विद्वत्समाज के बीच समादर प्राप्त होगा।

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्
रथयात्रा, सं० २०३३ वि०

हंसकुमार तिवारी

प्रस्तावना

हिन्दी-साहित्येतिहास के काल-विभाजन की दिशा मे पिछले तीन-चार दशको के अन्तर्गत यद्यपि बहुविध विचार हुए है, तथापि विभिन्न साहित्यिक प्रवृत्तियो एव विधाओ के सम्यक् अध्ययन के लिए आचार्य प० रामचन्द्र शुक्ल के एतद्विषयक मतो को सकारण विशेष महत्त्व देना पडता है। उनके मतानुसार हिन्दी-साहित्य के आधुनिक अथवा गद्यकाल का आरम्भ सन् १८४३ ई० (स० १९०० वि०) से होता है। 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' का जो यह खण्ड आपके सामने प्रस्तुत है, उसका सम्बन्ध ईसवी सन् की उन्नीसवी शती के उत्तरार्द्ध से है। इसमे बिहार के उन कतिपय हिन्दी-साहित्यसेवियो के परिचय, उनकी रचना के उपलब्ध उदाहरणो के साथ, सगृहीत है, जिनका जन्म सन् १८५१ से १९०० ई० के बीच हुआ था।

इस खण्ड मे उन्ही तीन सौ बिहारी साहित्यकारो के इतिवृत्त सगृहीत है, जिनका जन्मकाल, उक्त कालखण्ड के बीच तिथिवार-सहित, विभिन्न सूत्रो से प्राप्त हुआ है। इनमे अनेकानेक ऐसे भी साहित्यकार है, जिनके निधन की प्रामाणिक तिथियाँ भी उपलब्ध हुई है। इस कालखण्ड के वे साहित्यकार, जिनके जन्म की निश्चित तिथियाँ ज्ञात न होकर मात्र स्थूल तिथियाँ ही उपलब्ध हुई है तथा जिनका जन्मकाल उन्नीसवी शती, उत्तरार्द्ध (सन् १८५१—१९०० ई०) के बीच अनुमित है, इस खण्ड मे स्थान नही पा सके है। यही हाल उन अन्य प्रान्तीय साहित्यकारो का हुआ है, जिनका कार्य-क्षेत्र मुख्यत बिहार रहा है। यदि इस ग्रन्थमाला के द्वितीय खण्ड का पथानुसरण करते हुए, पृथक्-पृथक् अध्यायो एव परिशिष्टो के रूप मे, उक्त कोटि की सामग्री इस तृतीय खण्ड मे भी समाहित करने की चेष्टा की जाती, तो इसकी काया निश्चय ही अप्रत्याशित रूप से स्फीत हो जाती। अत इसी भय के परिणामस्वरूप ऐसा निर्णय लिया गया कि अन्य अध्यायो से सम्बद्ध शेष सामग्री एव उससे सम्बद्ध परिशिष्टो का प्रकाशन इस ग्रन्थमाला के चतुर्थ खण्ड के रूप मे ही किया जाय।

प्रस्तुत खण्ड मे तीन कोटि के परिशिष्ट है, जिनमे सामग्री-विभाजन इस प्रकार हुआ है—परिशिष्ट-१ मे इस खण्ड से सम्बद्ध उन २२ बिहारी साहित्यकारो के परिचय समाहित है, जिनके विवरण बाद मे प्राप्त हुए। परिशिष्ट-२ मे एक 'परिचय-तालिका' प्रस्तुत है, जिससे पाठक सुगमतापूर्वक इस खण्ड की सामग्री का सिहावलोकन कर सके। अत मे, परिशिष्ट-३ के अन्तर्गत, प्रस्तुत खण्ड से सम्बद्ध कुछ साहित्यकारो की रचनाओ के ऐसे उदाहरण सगृहीत है, जो हमे इस ग्रन्थ के मुद्रण के क्रम मे प्राप्त हुए। पूर्व खण्डो की तरह प्रस्तुत खण्ड मे सकलित उदाहरणो की प्रथम पक्ति की अकारादिक्रम से सूची, व्यक्तिनामानुक्रमणी, ग्रन्थ एव पत्र-पत्रिकाओ की नामानुक्रमणी, सहायक ग्रन्थो एव पत्र-पत्रिकाओ की नामानुक्रमणी आदि सामग्री पाठक नही पायेगे। यदि सम्भव हुआ तो अगले खण्ड मे इनके समावेश की व्यवस्था की जायगी।

'हिन्दी-साहित्य और बिहार' के इस तृतीय खण्ड से सम्बद्ध तीन सौ साहित्यसेवियो मे सर्वाधिक (कुल सख्या ६२) शाहाबाद-निवासी है। साहित्य-सर्जन की उर्वरता की

दृष्टि से, शाहाबाद के बाद क्रमश गया, सारन, मुजफ्फरपुर और दरभगा का नाम आता है। गया के ५८, सारन के ३८ तथा मुजफ्फरपुर और दरभगा के २५-२५ साहित्यकारो के विवरण प्राप्त हुए है। शेष जिला का क्रम इस प्रकार है—पटना २१, मुँगेर २१, भागलपुर १६, चम्पारन १३, पूर्णिया ७, सतालपरगना ५, पलामू ३, हजारीबाग २, सहरसा २, सिहभूमि १ और राँची १। चूँकि इस खण्ड मे सन् १८५१ से १९०० ई० तक के केवल निश्चित जन्मतिथिवाले साहित्यकारो का ही इतिवृत्त सगृहीत है, इसलिए प्रस्तुत कालखण्ड की जिलेवार वास्तविक स्थिति स्पष्ट करना कठिन है। फिर भी, सगृहीत सामग्री से विभिन्न जिलो का एक धुँधला चित्र तो स्पष्ट हो ही जाता है, और यह ज्ञात होता है कि शाहाबाद, गया, सारन, मुजफ्फरपुर, दरभगा, मुँगेर, भागलपुर, पटना और चम्पारन जिले साहित्य-सर्जन की दिशा मे विशेप रूप से सक्रिय रहे है। वस्तुस्थिति तो यह है कि प्राचीन साहित्यानुसन्धान के परिप्रेक्ष्य मे बिहार के प्रत्येक जिले का जब योजनाबद्ध रूप से साहित्यिक सर्वेक्षण कराया जायगा, तभी सही आँकडे हमारे सामने आ सकेगे। बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की जिला-शाखाएँ भी इस सम्बन्ध मे सहायक हो सकती है। आरा नागरी-प्रचारिणी सभा इस ओर बहुत दिन पूर्व ही, विशेष रूप से सक्रिय थी। प्राप्त सूचना के अनुसार अख्तियारपुर (शाहाबाद) के बाबू शिवनन्दन सहाय (जन्म सन् १८६० ई०) और ऐमन-डिहरी (शाहाबाद) के ठाकुर नन्दकिशोर सिंह 'किशोर' (जन्म सन् १८९६ ई०) ने भी वैयक्तिक स्तर पर शाहाबाद के साहित्यकारो की बृहत नामावली तैयार की थी। इधर, जैन-कॉलेज, आरा के प्राध्यापक प्रो० रामेश्वरनाथ तिवारी तो शाहाबाद-जिले की साहित्य-सेवा का इतिहास ही तैयार करवा रहे थे। किन्तु, शाहाबाद से सम्बद्ध कोई भी सामग्री अभीतक प्रकाश मे नही आ सकी। यही हाल श्रीरूपलालजी द्वारा सगृहीत पूर्णिया-विपयक सामग्री का हुआ। इस मानी में, सचमुच दरभगा (History of Maithili Literature, मैथिली साहित्यक-इतिहास आदि), गया (गया के लेखक और कवि) और चम्पारन (चम्पारन जिले की साहित्य-साधना) जिले बाजी मार ले गये। इनका पथानुसरण करते हुए, अन्य जिलो को भी इस ओर अविलम्ब प्रवृत्त हो जाना चाहिए।

काव्य-रचना . 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' के पूर्व खण्डो की तरह प्रस्तुत खण्ड के रचनाकारो मे उनकी सख्या पर्याप्त है, जिन्होंने अपनी काव्य-रचना के द्वारा हिन्दी-साहित्य के भाण्डार को भरा है। जिन व्यक्तियो की काव्य-रचना के उदाहरण अथवा काव्य-रचना के प्रमाण हमे प्राप्त हुए है, उनकी सख्या लगभग २०० है। इनमे अधिकाश कवियो के साथ एक नई बात यह देखने को मिलती है कि उन्होने काव्य-रचना के सन्दर्भ मे, प्रचलित ब्रजभाषा के साथ-साथ खडीबोली मे भी अपनी रचनाएँ प्रस्तुत की है। कुछेक ऐसे कवि भी हैं, जिनकी रचनाएँ अवधी मे मिली हैं। किन्तु, उनकी अवधी पर ब्रजभाषा का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है। निवेदन किया जा चुका है कि काव्य-रचना के लिए भक्ति अथवा रीति-काल मे ब्रजभाषा का जितना देशव्यापी प्रचार हुआ, उतना अवधी का नही हो सका। और, आगे चलकर तो निश्चय ही इन दोनो से खड़ी-बोली मैदान मार ले गई।

इस खण्ड मे चर्चित कवियो मे स्वभावत अधिकाश ऐसे है, जिन्हे भारतेन्दु अथवा द्विवेदी-युगीन साहित्यकारो के बीच आदरणीय स्थान प्राप्त है। इनमे कुछेक कवियो के कार्य तो युगान्तरकारी माने गये। जैसे, चम्पारन के प० चन्द्रशेखरधर मिश्र ने सस्कृत-वृत्तो मे पहले-पहल खडीबोली के पद्य लिखे। सतालपरगना के महेशनारायण ने उस समय खडीबोली को काव्य-रचना के लिए सप्रमाण सक्षम घोषित किया, जब भारतेन्दु जैसे कृतिकार भी उसकी असमर्थता की वकालत कर रहे थे। उन्होने 'मुक्तछन्द' की दिशा मे भी महाप्राण निराला के पहले अभूतपूर्व प्रयोग किये। उनकी काव्य-रचना मे हिन्दी के उन सभी वादो के बीज मिले है, जो कालक्रम से आगे चलकर पल्लवित हुए।

ब्रजभापा, खडीबोली और अवधी के अतिरिक्त जिन अन्य भाषाओ मे इन रचनाकारो ने काव्य-रचना की, उनकी नामावली भापानुसार इस प्रकार है—

(क) भोजपुरी गगाप्रसाद जायसवाल, गोपाल शास्त्री, जानकीशरण 'स्नेहलता', दुर्गाशकरप्रसाद सिह 'नाथ', ठाकुर नन्दकिशोर सिह 'किशोर', भिखारी ठाकुर, भुवनेश्वर प्रसाद 'भुवनेश', मनोरजनप्रसाद सिह, महादेवप्रसाद सिंह 'घनश्याम', महेन्द्र सिह, योगेश्वराचार्य, रगबहादुरप्रसाद 'बहादुर', रघुवीर नारायण, रामदहिन शर्मा, रामप्रीत शर्मा 'प्रियतम', रामसकल पाठक 'द्विजराज', रामाजी, रामावतार प्रसाद, शिवानन्द मिश्र 'नन्द', सत्यनारायण शरण, आदि।

(ख) मैथिली काशीनाथ झा, तेजनाथ झा, धनुषधारी दास, निर्भयलाल चौधरी, पुण्यानन्द झा, बदरीनाथ झा 'कविशेखर', भवप्रीतानन्द ओझा, भुवनेश्वर झा 'भुवनेश', भोलालाल दास, मनमोहन चौधरी, रघुनन्दन दास 'बबुए', राघवप्रसाद सिह 'महन्थ', लक्ष्मणशरण 'मोदलता', राजदेव झा आदि।

(ग) मगही बलदेवप्रसाद 'छबीन', भागवतप्रसाद मिश्र 'राघव', विश्वेश्वर दयाल 'सुखशान्ति', हरिहरप्रसाद 'जिजल' आदि।

(घ) अगिका : भवप्रीतानन्द ओझा, भुवनेश्वरप्रसाद चौधरी 'भुवनेश' आदि।

इन कवियो मे, मैथिली और अगिका के भक्त-कवि भवप्रीतानन्द ओझा ने अपने झूमरो के कारण पर्याप्त लोकप्रियता अर्जित की। भोजपुरी के भिखारी ठाकुर एक वास्तविक जनकवि के रूप मे उभरे। अपनी काव्य-रचनाओ के माध्यम से उन्होने उत्तर-प्रदेश के पूर्वी और बिहार के पश्चिमी जिलो मे पर्याप्त प्रसिद्धि पाई। भोजपुरी के और भी तीन कवि विशेप रूप से उल्लेखनीय रहे। रघुवीर नारायण का 'बटोहिया' गीत भारत की सीमा पारकर दक्षिण-अफ्रिका, मारिशस तथा ट्रिनिडाड के प्रवासी भारतीयो मे लोकप्रिय हुआ। उनकी 'भारत-भवानी' की लोकप्रियता भी असहयोग-आन्दोलन से पूर्व, बकिमचन्द्र के 'वन्देमातरम्' गीत की तरह हुई। बहुत-कुछ वैसी ही प्रसिद्धि मनोरजनप्रसाद सिंह के 'फिरगिया' गीत को मिली। कहते है, एक समय था, जब महात्मा गाधी अपनी सभाओ मे, पहले उसी गीत को सुनना चाहते थे। प० रामसकल पाठक 'द्विजराज' के 'विधवा-विलाप' की पक्तियाँ 'बिदेसिया' नाम से लोककठ मे छा गई।

प्रस्तुत खण्ड मे चर्चित कवियो की काव्य-रचनाओ के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि इनमे भक्ति और रीति-काल की प्रवृत्तियो के साथ-साथ राष्ट्रीयता का आधुनिक स्वर भी मुखरित हुआ। इनमे कई बडे महत्त्वपूर्ण भक्त-सत-कवि भी हुए। रस की दृष्टि से विचारने पर इन कवियो की कृतियो मे भक्ति या शान्त, शृगार और वीर-रसो की प्रमुखता है। वैसे, हास्य-रस के भी इनमे कई अच्छे कवि है। प्रकृति-वर्णन को भी इनकी रचनाओ मे यत्र-तत्र प्रमुखता दी गई है। जहातक काव्य-रचना की शैली का प्रश्न है, इनमे महाकाव्य, खण्डकाव्य, स्फुट कविताएँ, गीत, भजन आदि प्राय सभी कोटि की रचनाएँ मिलती है।

आश्रयदाता कृतिकारो, कवियो एव कलावन्तो के आश्रयदाता के रूप मे दरभगा, डुमराँव, रामनगर, बनैली, हथुआ, अमावाँ, मकसूदपुर, चौतरिया, टेकारी, सूर्यपुरा, श्रीनगर, गिद्धौर, जगदीशपुर, रामगढ, नरहन, मझोलिया, सीतामढी, बेतिया, माझा आदि रियासतो के अधिपति एव भूमिपति विशेष रूप से सक्रिय रहे। यह कहा जा चुका है कि यदि इन स्थानो मे योजनाबद्ध रूप मे साहित्यानुसन्धान का कार्य सचालित-सम्पादित हो तो अनेकानेक नवीन साहित्यिक तथ्य प्रकाश मे आयेंगे, इसमे सन्देह नही।

गद्य-रचना : प्रस्तुत खण्ड मे वर्णित साहित्यकारो की कृतियो के सिहावलोकन से इस काल-खण्ड मे आधुनिक अथवा गद्य-काल की प्रमुख प्रवृत्तियो के स्पष्ट रूप परिलक्षित होते है। गद्य-रचना की प्रक्रिया मे प्रखरता इसका ज्वलन्त प्रमाण है। इन साहित्यकारो की गद्य-रचना के जो उदाहरण प्राप्त हुए है, उनसे प्रमाणित होता है कि अमरनाथ झा, उमेश मिश्र, गगानन्द सिह, गगानाथ झा, गगापति सिह, बलदेव मिश्र, भोलालाल दास, क्षेमधारी सिह आदि ने खडीबोली के साथ-साथ मैथिली-गद्य-रचना करके उसके विकास मे भी बहुमूल्य योगदान किया है। भोजपुरी-गद्य-लेखक के रूप मे एकमात्र भिखारी ठाकुर की रचना के उदाहरण ही मिले है। इसी प्रकार, ईसाई पादरी पीटर शान्ति 'नवरगी' ही एकमात्र ऐसे साहित्यकार दृष्टि मे आये है, जिनकी गद्य-रचनाएँ नगपुरिया भाषा मे प्राप्त हुई है। मगही, अगिका, बज्जिका, कुरमाली (पँचपरगनिया), खोरठा आदि अन्य बिहारी भाषाओ की गद्य-रचनाएँ इन कृतिकारो मे से किसी ने नही की अथवा यदि की भी हो तो उसका पता हमे नही चला। कुल मिलाकर लगभग दो सौ साहित्यकारो ने स्वतन्त्र रूप से अथवा अपनी मातृभाषा के साथ-साथ अपनी विविधविषयक स्फुट अथवा ग्रन्थाकार रचनाओ के माध्यम से खडीबोली-गद्य के स्वरूप को सँवारने का प्रयास किया है। इनमे अक्षयवट मिश्र 'विप्रचन्द्र', गगाप्रसाद श्रीवास्तव, चन्द्रशेखरधर मिश्र, जगदीश झा 'विमल', जगन्नाथप्रसाद मिश्र, प्रमोदशरण पाठक, भवानीदयाल सन्यासी, यशोदानन्द अखौरी, डॉ० राजेन्द्र प्रसाद, राजा राधिकारमणप्रसाद सिह, रामदहिन मिश्र, शिवनन्दन सहाय, शिवपूजन सहाय, सकलनारायण शर्मा, जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी आदि कुछेक गद्यकारो के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है; क्योकि अपनी सशक्त गद्य-रचना के माध्यम से इन्होने खडीबोली-गद्य को निश्चय ही नया मोड दिया है। गद्य-रचना मे सलग्न अधिकाश लेखको ने विषय की विविधता पर तो विशेष रूप से बल दिया ही है, साथ ही रस-वैविध्य भी उनकी दृष्टि मे विद्यमान रहा है। गगाप्रसाद श्रीवास्तव (प्रसिद्ध नाम

जी० पी० श्रीवास्तव) और प० जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी अपनी व्यग्य-विनोद एवं हास्यपूर्ण रचनाओ के कारण 'हास्यरसावतार' की उपाधि से विभूषित हुए, इस तथ्य से हिन्दी का प्रबुद्ध पाठक अपरिचित नही है।

नाट्य-रचना स्फुट निबन्धो अथवा लेखो के अतिरिक्त साहित्य की अन्य विधाओ के माध्यम से भी इस खण्ड मे चर्चित साहित्यकारो ने खडीबोली एव अन्य बिहारी भाषाओ के गद्य को अधिकाधिक सक्षम और सशक्त बनाया है। नाट्य-रचना भी इन लेखको की एक प्रिय विधा रही है। इस खण्ड के लगभग ५० नाटककारो ने ऐतिहासिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, पौराणिक आदि विभिन्नविपयक नाटको की रचना कर खडीबोली-गद्य का नया प्रतिमान उपन्यस्त किया। रस और शैली की दृष्टि से भी इन नाटककारो ने अपनी परिष्कृत बुद्धि का परिचय दिया और बहुविध प्रयोग किये। इन नाटककारो की एक सबसे बडी विशेपता यह रही कि इनमे अधिकाश नाटककारो ने हिन्दी-नाटय-परम्परा के जनक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का पथानुसरण करते हुए अपनी-अपनी पृथक् नाटक-मण्डलिया स्थापित कर रखी थी और यदाकदा स्वय अभिनय भी करते थे। ऐसे नाटककारो मे प० ईश्वरीप्रसाद शर्मा, गगाप्रसाद श्रीवास्तव, जैनेन्द्रकिशोर जैन, भिखारी ठाकुर, रामेश्वरीप्रसाद 'राम', ललितकुमार सिह 'नटवर' आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इन नाटककारो से सम्बद्ध काल की एक स्वस्थ परम्परा यह भी रही कि इस काल के नाटक रगमच पर अभिनीत होने के बाद ही प्रकाशित हुआ करते थे। केवल पाठ्य नाटको से यह युग अपरिचित था। चम्पारन-निवासी भगवतीचरण के कई नाटक तब अभिनीत हुए थे, जब हिन्दी मे मौलिक नाटको की बहुत कमी थी। चर्चित साहित्यकारो मे जगन्नाथ भक्त ने, गया मे चित्रपट-निर्माण की दिशा मे भी प्रशसनीय प्रयास किये और उसी क्रम मे, उन्होने एक फिल्म-कम्पनी की स्थापना कर 'पुनर्जन्म' एव 'पितृपक्ष-मेला' नाम की दो फिल्मे बनाई थी।

भाषा की दृष्टि से विचार करने पर भिखारी ठाकुर और राजवल्लभ सिह 'वल्लभ' ही दो ऐसे नाटककार मिले, जिन्होने भोजपुरी-भाषा मे भी नाटक-रचना की। भिखारी ठाकुर ने तो अपनी नाट्य-रचना और अपने अभिनय के कारण पर्याप्त प्रसिद्धि पाई।

कथा-साहित्य इन रचनाकारो मे कथाकार के रूप मे निम्नाकित व्यक्ति विशेष महत्त्व के हुए —अनूपलाल मण्डल, अवधनारायण, ईश्वरीप्रसाद शर्मा, कमलदेव नारायण, गंगाप्रसाद श्रीवास्तव, जगदीश झा 'विमल', जनार्दन झा 'जनसीदन', जैनेन्द्रकिशोर 'जैन', पारसनाथ सिंह, व्रजनन्दन सहाय 'व्रजवल्लभ', राजा राधिकारमणप्रसाद सिह, शिवपूजन सहाय, श्रीकृष्ण मिश्र, साधुशरण, हरदीपनारायण सिंह 'दीप', हरिहरप्रसाद 'जिजल', कार्त्तिकेयचरण मुखोपाध्याय तथा चन्द्रशेखर पाठक। इन कथाकारो मे अनूपलाल मण्डल बिहार के 'प्रेमचन्द' कहे गये। अवधनारायण को अपने उपन्यास 'विमाता' के कारण देशव्यापी ख्याति मिली। जैनेन्द्रकिशोर जैन ने उस समय मौलिक उपन्यासो की रचना की, जब हिन्दी मे उनकी सख्या अल्प मात्र थी। गगाप्रसाद श्रीवास्तव 'हास्यरसावतार' माने

गये। उनकी तुलना 'डिकेन्स', 'मोलियर', और 'मार्क ट्वेन' से की गई और उन्हे 'कोरोनेशन मेड्ल' से सम्मानित किया गया। पारसनाथ सिह का 'जगतसेठ' भी सुयश पाकर पुरस्कृत हुआ। ब्रजनन्दन सहाय 'ब्रजवल्लभ' को सर्वप्रथम मौलिक उपन्यास लिखने का श्रेय मिला। उनका 'सौन्दर्योपासक' तत्कालीन बंगला के उत्तम उपन्यासो के समकक्ष घोषित हुआ। राजा राधिकारमणप्रसाद सिह ने अपने कथा-साहित्य के माध्यम से हिन्दी को एक नई शैली दी। उनके साथ प० चन्द्रशेखर पाठक की गणना भी हिन्दी के यशस्वी उपन्यासकारो मे की गई। आचार्य शिवपूजन सहाय ने 'देहाती दुनिया' की रचना कर 'आचलिक उपन्यासो' की एक सर्वथा नई परम्परा चलाई। वे हिन्दी के प्रथम आचलिक उपन्यासकार कहे गये।

जीवनी-संस्मरण 'जीवनी-साहित्य' के अन्तर्गत लगभग चालीस साहित्यकारो ने पहल की और पुराण, इतिहास, राजनीति, धर्म, सस्कृति, साहित्य आदि विभिन्न क्षेत्रो की प्रमुख विभूतियो के जीवन-चरित्र उनके द्वारा लिखे गये। इनमे शिवनन्दन सहाय सर्वाधिक सफल जीवनी-लेखक के रूप मे उभरे। आचार्य प० रामचन्द्र शुक्ल ने उन्हें हिन्दी के प्रथम सफल जीवनी-लेखक के रूप मे स्मरण किया है। इन लेखको मे कई ऐसे भी हुए, जिन्होने सस्मरणो के माध्यम से, अपने और सस्मरणीय विभूतियो के जीवन से सम्बद्ध अनेक महत्त्वपूर्ण तथ्य प्रकट किये। आचार्य शिवपूजन सहाय का नाम इस सन्दर्भ में विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

कतिपय अन्य साहित्यिक विधाओ मे सलग्न प्रमुख व्यक्तियो की नामावली अकारादिक्रम से इस प्रकार है —

(क) **आत्मकथा** . अक्षयवट मिश्र 'विप्रचन्द्र', गगापति सिह, डॉ० राजेन्द्र प्रसाद, पाण्डेय पुण्यात्मा 'आत्मा', पुण्यानन्द झा, यज्ञेश्वर सिंह 'पामर', ललितकुमार सिह 'नटवर', शिवपूजन सहाय तथा श्रीकृष्ण मिश्र।

(ख) **डायरी** . कमलानन्द सिह 'सरोज' तथा दुर्गाशकारप्रसाद सिह 'नाथ'।

(ग) **यात्रा** : अवधविहारी शरण, कामतानाथ शर्मा 'मदनेश', दीपनारायण प्रसाद, पचमसिंह वर्मा, भवानीदयाल 'संन्यासी', मथुराप्रसाद दीक्षित, मनोरजनप्रसाद सिंह, महेन्द्र सिंह तथा साँवालियाविहारीलाल वर्मा।

(घ) **आलोचना** जगन्नाथप्रसाद मिश्र, जगन्नाथराय शर्मा, जनार्दन मिश्र, डॉ० राजेन्द्र प्रसाद, दुर्गाशकरप्रसाद सिंह 'नाथ', बजरगदत्त शर्मा, बलदेवप्रसाद 'छबीन', बालमुकुन्द सहाय, महेश्वरीप्रसाद 'यत्न', रजनीकान्त शास्त्री, शिवपूजन सहाय, रामदहिन मिश्र, रामदीन पाण्डेय तथा रामबालक पाण्डेय।

(च) **साहित्यशास्त्र** : आलोचना और साहित्यशास्त्र—इन दो विषयों का बड़ा निकट का सम्बन्ध है। अत लगे हाथ उन विद्वानो की भी चर्चा की जा रही है, जो साहित्यशास्त्र-सम्बन्धी कृतियो की रचना मे सलग्न रहे है। ऐसे विद्वानो मे उमापतिदत्त शर्मा, कन्हैयालाल मिश्र, गगानाथ झा, गयाप्रसाद 'माणिक', जगन्नाथप्रसाद मिश्र, जगन्नाथराय शर्मा, जनार्दन मिश्र 'परमेश', जानकीशरण 'स्नेहलता', जैनेन्द्रकिशोर जैन,

दामोदर सहाय 'कविकिंकर', बनारसीलाल 'काशी', बलदेवप्रसाद 'छबीन', बलदेव मिश्र, रघुनन्दनदास 'बबुए', रामदहिन मिश्र, रामप्रीत शर्मा 'प्रियतम', रामलोचनशरण 'बिहारी', वासुदेव पाठक 'कवि', शिवप्रसाद पाण्डेय 'सुमति', श्यामजी शर्मा, हरिहर प्रसाद 'जिजल' आदि उल्लेख्य है।

भाषाशास्त्र प्रस्तुत खण्ड के साहित्यसेवियो की दृष्टि भाषाशास्त्र के विवेचन की ओर भी गई है। ऐसे विद्वानो मे अधिकाश ने भाषा के व्याकरण-पक्ष पर ही अपनी लेखनी चलाई है। जिन व्यक्तियो ने व्याकरण की दिशा मे उल्लेखनीय कार्य किये, उनके नाम ये है—कैन्हयालाल मिश्र, गोपाल शास्त्री, छात्रानन्द मिश्र, जगन्नाथराय शर्मा, बेचूनारायण, यदुनन्दन प्रसाद, रजनीकान्त शास्त्री, रामदहिन मिश्र, रामप्रीत शर्मा 'प्रियतम', रामलोचनशरण 'बिहारी' तथा हीरालाल झा 'हेम'। इनमे रामलोचनशरण 'बिहारी' अपनी व्याकरण-रचना पर उत्तर प्रदेश-सरकार द्वारा पुरस्कृत हुए। इन लेखको के अतिरिक्त उमापतिदत्त शर्मा, कालिका प्रसाद तथा रामप्रीत शर्मा 'प्रियतम' ने भाषाशास्त्र के अन्य पक्षो पर भी अपनी लेखनी उठाई।

लोक-साहित्य लोकभाषाओ मे साहित्य-सर्जन के साथ-साथ लोक-साहित्य के सग्रह के प्रति अभिरुचि भी इन साहित्यसेवियो की एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है। इनमे महादेवप्रसाद 'घनश्याम' भोजपुरी-क्षेत्र मे उपलब्ध 'कुँवरविजयी', 'लोरिकायन', 'ढोलन का गीत' जैसी गाथाओ के सग्रह-सम्पादन की ओर प्रवृत्त हुए। ठाकुर नन्दकिशोर सिह 'किशोर' ने भोजपुरी-लोकगीतो का सग्रह किया। दुर्गेशनन्दन 'माणिक' एव रामदहिन मिश्र ने हिन्दी-मुहावरा-सम्बन्धी कोष-निर्माण मे अपना आग्रह प्रदर्शित किया। फूलदेव सहाय वर्मा 'विश्वकोश' के सम्पादन से सम्बद्ध रहे। शब्दकोश एव अन्यकोटि के कोशो के निर्माण की ओर जो दूसरे लोग प्रवृत्त रहे, उनके नाम ये है—अवतार मिश्र 'कान्त', ईश्वरीप्रसाद शर्मा, गगापति सिंह, 'ठाकुर नन्दकिशोर सिह 'किशोर', फूलदेव सहाय वर्मा, बदरीनाथ झा 'कविशेखर', मधुसूदन ओझा 'स्वतन्त्र', रामकृष्णदास (ठाकुर प्रसाद) तथा शिवकुमार लाल। इनमे अवतार मिश्र 'कान्त' ने एक छन्दोबद्ध पर्यायवाची-कोश का निर्माण किया था, जिसे बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के 'चौबे-सग्रह' मे आज भी सुरक्षित होना चाहिए। इसी प्रकार, ठाकुर नन्दकिशोर सिह 'किशोर' तथा शिवकुमार लाल भी भोजपुरी-शब्दो के कोश-निर्माण मे प्रवृत्त रहे।

साहित्येतिहास इस खण्ड के साहित्यसेवियो की एक और ध्यान देने योग्य विशेषता है—इनका साहित्येतिहास-लेखन की ओर प्रवृत्त होना। इन लेखको मे महेशचन्द्र प्रसाद, रामदीन पाण्डेय, शिवनन्दन सहाय तथा शिवपूजन सहाय—ये चार विशेष रूप से चर्चा के योग्य है।

विभिन्न शास्त्र 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' के प्रस्तुत खण्ड मे चर्चित साहित्कारो की एक सबसे महत्त्वपूर्ण नवीनता यह देखने को मिलती है कि इनमे अनेक साहित्यकार अन्यान्य उपयोगी शास्त्रो से सम्बद्ध रचनाओ के भी निर्माता रहे। साहित्यशास्त्र

एव भाषाशास्त्र से सम्बद्ध लेखको की चर्चा ऊपर की जा चुकी है । अब यहा विषयानुसार कुछेक अन्य शास्त्रो के प्रमुख लेखको के नाम प्रस्तुत किये जा रहे है —

(क) धर्मशास्त्र उमापतिदत्त शर्मा, गगानन्द सिह, गगानाथ झा, गगापति सिह, गगाप्रसाद जायसवाल, गजाधर प्रसाद, गोपाल शास्त्री, गौरीनाथ झा, छोटेलाल भैया, जगतनारायण, जगदम्बसहाय श्रीवास्तव, जगन्नाथप्रसाद मिश्र, जनार्दन मिश्र, दामोदर सहाय 'कविकिकर', पचमसिह शर्मा, पारसनाथ सहाय, पृथ्वीनाथ सिह, बेचूनारायण, योगेश्वराचार्य, रघुनन्दन त्रिपाठी, रघुनन्दन दास 'बबुए', रजनीकान्त शास्त्री, राजकिशोर सिह, रामलोचनशरण 'बिहारी', रामानुग्रहलाल 'मेहीदास', शिवनन्दन सहाय, साँवलियाविहारीलाल वर्मा तथा क्षेमधारी सिह ।

(ख) इतिहास कन्हैयालाल मिश्र, कमलाप्रसाद वर्मा, गगापति सिंह, जगदम्बसहाय श्रीवास्तव, जगन्नाथप्रसाद मिश्र, जनार्दन झा 'जनसीदन', दिनेश प्रसाद वर्मा, पारसनाथ सिंह, भवानीदयाल सन्यासी, भोलालाल दास, मथुराप्रसाद दीक्षित, रजनीकान्त शास्त्री, डॉ०, राजेन्द्र प्रसाद, राधाकृष्ण झा, रामचन्द्र प्रसाद, रामदहिन मिश्र रामदीन पाण्डेय, रामलोचनशरण 'बिहारी', रामशरण उपाध्याय, रामावतार नारायण, शशिभूषण राय, सियाशरण सिया, हवलदारीराम गुप्त 'हलधर', कार्त्तिकेयचरण मुखोपाध्याय, चन्द्रशेखर पाठक, दीनदयालु सिह तथा पीटर शान्ति 'नवरगी' ।

(ग) सस्कृति जगतनारायण, जनार्दन मिश्र, पारसनाथ सहाय, भवानीदयाल सन्यासी, राजकिशोर सिह तथा डॉ० राजेन्द्र प्रसाद ।

(घ) राजनीति कमलाप्रसाद वर्मा, गोवर्द्धनलाल, जगन्नाथप्रसाद मिश्र, राजकिशोर सिह, राधाकृष्ण झा, रामनिरीक्षण सिह (नागरिक-शास्त्र), रामप्रसाद सिह 'साधक' (गाधी-साहित्य), ललितकुमार सिंह 'नटवर' (प्रशासन), श्रीकृष्ण सिह 'बिहार-केसरी' तथा हरिवश सहाय ।

(च) दर्शन उमेश मिश्र, गगानाथ झा, गोपाल शास्त्री, दामोदर सहाय 'कविकिंकर', नवमीलाल वैद्य, पाण्डेय पुण्यात्मा 'आत्मा', रगनाथ पाठक, रामानुग्रह लाल 'मेहीदास', हरनाथ सहाय तथा क्षेमधारी सिह ।

(छ) तर्कशास्त्र उमेश मिश्र तथा पारसनाथ सहाय ।

(ज) नीति उमापतिदत्त शर्मा, गोवर्द्धनलाल, जगतनारायण, जगन्नाथराय शर्मा, जनार्दन झा 'जनसीदन', यशोदानन्द 'अखौरी', रामकृष्णदास (ठाकुर प्रसाद), रामदहिन मिश्र, रामलोचनशरण 'बिहारी' तथा क्षेमधारी सिह ।

(झ) सगीत जैनेन्द्रकिशोर जैन, रुद्रप्रसाद 'रुद्र', ललितकुमार सिंह 'नटवर' तथा हवलदारी राम गुप्त 'हलधर' ।

(ट) भूगोल-खगोल : कन्हैयालाल मिश्र, जैनेन्द्रकिशोर जैन, दिनेशप्रसाद वर्मा, रामदहिन मिश्र, रामलोचनशरण 'बिहारी', रामशरण उपाध्याय तथा रामावतार नारायण ।

(ठ) गणित कन्हैयालाल मिश्र, बलदेव मिश्र, बेचूनारायण, रजनीकान्त शास्त्री, रामचरित्र सिंह तथा रामलोचनशरण 'बिहारी' ।

(ड) ज्योतिष : उमापतिदत्त शर्मा, पारसनाथ सिह, बलदेव मिश्र, रजनीकान्त शास्त्री, शिवनन्दन सहाय तथा हरनाथ सहाय ।

(ढ) अर्थशास्त्र गोवर्द्धनलाल, ब्रजनन्दन सहाय 'ब्रजवल्लभ', डॉ० राजेन्द्र प्रसाद तथा राधाकृष्ण झा ।

(त) शिक्षा कालिका प्रसाद, दामोदरसहाय 'कविकिंकर', यशोदानन्द 'अखौरी' तथा शिवकुमार लाल ।

(थ) कृषि : फूलदेवसहाय' वर्मा, लक्ष्मीनारायण सिन्हा तथा कार्त्तिकेयचरण मुखोपाध्याय ।

(द) समाज-शास्त्र गुप्तेश्वर पाण्डेय, जगन्नाथप्रसाद मिश्र, जनार्दन झा 'जनसीदन', बदरीनाथ वर्मा, बलदेव मिश्र', भवानीदयाल सन्यासी, रामनिरीक्षण सिंह तथा रुद्रप्रसाद रुद्र' ।

(ध) विधि-विज्ञान भोलालाल दास तथा साँवलियाविहारीलाल वर्मा ।

(प) क्रीडा रुद्रप्रसाद 'रुद्र', ललितकुमार सिह 'नटवर' (स्काउट) तथा कीर्त्यानन्द सिह (आखेट) ।

(फ) मनोविज्ञान : साधुशरण तथा क्षेमधारी सिंह ।

(ब) चिकित्सा : ईश्वरीप्रसाद शर्मा (प्राकृतिक), चन्द्रशेखरधर मिश्र (आयुर्वेद), जर्नादिन झा 'जनसीदन', दामोदरसहाय 'कविकिंकर', दिनेशप्रसाद वर्मा, धर्मनाथ मिश्र 'धर्म' (आयुर्वेद), नन्दकिशोर सिंह 'किशोर', नवमीलाल वैद्य (आयुर्वेद), भुवनेश्वर झा 'भुवनेश' (आयुर्वेद), मथुराप्रसाद दीक्षित (पशु-चिकित्सा), रामनिरीक्षण सिह (योग), रामलोचनशरण 'बिहारी' (स्वास्थ्य) तथा ब्रजविहारी सिह (आयुर्वेद-होमियोपैथी) ।

(भ) सामान्य विज्ञान : फूलदेवसहाय वर्मा, रघुवरदयाल (रसायन), रमेश प्रसाद(रसायन), रामदहिन मिश्र तथा रामलोचनशरण 'बिहारी' ।

बाल-साहित्य इस खण्ड के रचनाकारो ने विभिन्न विधाओ के माध्यम से बाल-साहित्य के भाण्डार की श्री-वृद्धि तो की ही, साथ ही वे छात्रोपयोगी साहित्य की सृष्टि मे भी अग्रणी रहे । विशुद्ध बाल-साहित्य के रचनाकारो की सख्या १८ हे और छात्रोपयोगी रचनाकारो की सख्या १२ । इनमे कई ऐसे भी हैं, जिन्होने उक्त दोनो प्रकार की साहित्य-रचना मे योगदान किया । इन रचनाकारो मे अन्यतम भोलालालदास ने अपनी रचनाएँ खडीबोली के अतिरिक्त मैथिली-भाषा मे भी प्रस्तुत की । इसी प्रकार, ईसाई पादरी पीटर शान्ति 'नवरगी' की रचनाएँ 'नगपुरिया'-भाषा मे है ।

अनुवाद · हिन्दी मे अनुवाद-कार्य को गतिशीलता प्रदान करने के प्रयास मे भी ये रचनाकार पीछे नही रहे है । इस खण्ड मे लगभग ७० ऐसे व्यक्ति मिले है, जिन्होने अनुवाद-कार्य मे प्रशसनीय योगदान किया है । सबसे अधिक अनुवाद-कार्य सस्कृत, बँगला, उर्दू तथा अँगरेजी से हुआ । नेपोलियन की जीवनी का फ्रेंच-भाषा से हिन्दी मे अनुवाद उमापतिदत्त शर्मा ने किया, जो कलकत्ता की हिन्दी-ट्रान्सलेटिग-कम्पनी के द्वारा प्रकाशित हुआ । इसी प्रकार रुद्रप्रसाद 'रुद्र' ने फारसी के 'करीमा' का हिन्दी मे अनुवाद किया ।

टीका-भाष्य : टीकाकार एव भाष्यकार के रूप मे जो रचनाकार उभरे, उनकी संख्या लगभग २५ है। उनमे कई बडे महत्त्व के माने गये और उनकी टीकाओ आदि को देशव्यापी मान्यता तथा ख्याति मिली।

पत्रकारिता : 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' के इस प्रस्तुत खण्ड के रचनाकारो का समुचित योगदान हिन्दी-पत्रकारिता के विकास मे भी पर्याप्त मात्रा मे मिलता है। कोई ८० रचनाकार किसी-न-किसी रूप मे हिन्दी-पत्रकारिता से सम्बद्ध रहे। जिन पत्र-पत्रिकाओ से वे सम्बद्ध रहे, वे इस प्रकार है—कैवर्त्त-कौमुदी, हिन्दी-पत्रिका, साहित्य-सुधा, प्रेम-भक्ति-सत्सग, प्रेमाभक्ति-प्रचारक, भारत-मित्र, मनोरजन, पाटलिपुत्र, लक्ष्मी, श्रीविद्या, शिक्षा, धर्माभ्युदय, हिन्दूपच, अनुसन्धान-पत्र, बिहार-बन्धु, चैतन्य-चन्द्रिका, भागवत, छोटानागपुर-सवाद-पत्र प्रियवदा, रौनियार, साहित्य-चन्द्रिका, धन्वन्तरि, प्राणचार्य, गगा, मिथिला-मित्र, हलधर, विद्या-धर्म-दीपिका, चम्पारन-चन्द्रिका, आविष्कार, मेल-मिलाप, धर्म-सन्देश, रौनियार वैश्य, सकीर्त्तन-समाचार, भक्ति-प्रचार, कलकत्ता-समाचार, विश्वबन्धु, विशाल भारत, विश्वमित्र, हिमालय, राष्ट्रवाणी, विदेह, पुस्तकालय, कृष्ण, मथिला-मिहिर, सुप्रभात, आज, आर्यावर्त्त (दैनिक, साप्ताहिक और मासिक), नव-ससार, प्रवर्त्तक, जागरण, रौनियार-बन्धु, रसिक-विनोदिनी, शान्ति, किसान-केसरी, प्रजा, दरभगा-गजट, गोधन, जीव-दया, गो-पालन, नलिनी, स्वाधीन, श्रीकृष्ण-सदेश, श्रीहरिश्चन्द्र-कौमुदी, भू-देव, प्रजाबन्धु, स्वतन्त्र, हि-दुस्तान, भारत, प्रदीप, पूर्णिया-समाचार, काशी-हिन्दू-विश्वविद्यालय-पत्रिका, देश, साहित्य, समस्यापूर्त्ति-पत्रिका, नागरी-हितैषी पत्रिका, समस्यापूर्त्ति, प्रकाश, निर्भीक, कर्मवीर, कारागार, प्रवासी, मैथिली, भारती, चाँद, स्वाधीन भारत, सैनिक, राष्ट्रबन्धु, शिक्षा-सेवक, प्रभाकर, कल्याण, हिन्दी-कोरेनेशन गजट, देवनागर, देश-सेवक, साहित्य-सरोवर, बिहार-सहयोग, अग्रसर, युगान्तर, किशोर, राम, शिक्षक, कर्मयोगी, सारन-सत्याग्रह, होनहार, रमणी-रत्नमाला, किसान-समाचार, आशा, गाँव, निगमागम-चन्द्रिका, आर्य-महिला, मार्त्तण्ड, मारवाडी-सुधार, मतवाला, मौजी, गोलमाल, आदर्श, उपन्यास-तरग, समन्वय, माधुरी, भक्ति-प्रचारक, हिन्दी-सर्चलाइट, साम्यवादी, कुसुमाजलि, गया-समाचार, रँगीला, विजय, बाँसुरी, हलधर, हित-वार्त्ता, द्विज-पत्रिका, हिन्दी-बगवासी, हिन्दी-कल्पद्रुम, सरस्वती, मर्यादा, अभ्युदय, सम्मेलन-पत्रिका, हरिश्चन्द्र-कला, साप्ताहिक शिक्षा, किसान, हित-चिन्तक आदि।

और, जो व्यक्ति अपनी सम्पादन-कला के कारण इस क्षेत्र मे विशेष रूप से चमके, उनके नाम ये है—ईश्वरीप्रसाद शर्मा, गयाप्रसाद 'माणिक', गौरीनाथ झा, चन्द्रशेखरधर मिश्र, जगन्नाथप्रसाद मिश्र, तेजनाथ झा 'मिहिर' (दैनिक 'आर्यावर्त्त' के प्रथम प्रधान सम्पादक), दुर्गाप्रसाद त्रिपाठी, धनुषधारी दास, धर्मलाल सिंह, नन्दकिशोर सिंह 'किशोर', प्रमोदशरण पाठक, पारसनाथ सिंह, फूलदेवसहाय वर्मा, बदरीनाथ वर्मा, ब्रजनन्दन सहाय 'ब्रजवल्लभ', भवानीदयाल सन्यासी, भोलालाल दास, मधुसूदन ओझा 'स्वतन्त्र, यशोदानन्द 'अखौरी', डॉ० राजेन्द्र प्रसाद, रामलोचनशरण 'बिहारी', ललितकुमार सिह 'नटवर', शशिनाथ चौधरी, शिवपूजन सहाय, हरिवश सहाय, कार्त्तिकेयचरण मुखोपाध्याय, नरेन्द्रनारायण सिंह तथा ब्रजविहारी सिह।

भाषा-प्रचारादि भाषा-प्रचार एव अन्य दृष्टियो से इस खण्ड के महत्त्वपूर्ण व्यक्तियो मे अचम्भित चौधरी 'दीन' ने निरक्षरता-निवारण-सम्बन्धी प्रचार-कार्य मे विशेष अभिरुचि ली। दक्षिण-भारत मे हिन्दी का जो व्यापक प्रचार-प्रसार हुआ, उसमे अवधनन्दन का योगदान महत्त्वपूर्ण माना जायगा। उमापतिदत्त शर्मा ने ही हिन्दी-विद्वानो के समक्ष पहले-पहल यह प्रस्ताव उपस्थित किया कि हिन्दी-सेवियो का एक अखिलभारतीय सम्मेलन होना चाहिए। उन्होने कलकत्ता मे 'एकलिपि-विस्तार-परिषद्' नाम की एक अद्वितीय सस्था की स्थापना मे अथक परिश्रम किया। कहते है, मुख्यत गगानन्द सिह के अध्यवसाय से ही भारतीय डाक-टिकट मे हिन्दी-भाषा को स्थान मिला। गुरुमहादेवाश्रम प्रताप शाही 'पाटलिपुत्र प्रेस' की स्थापना और सुप्रसिद्ध 'पाटलिपुत्र' पत्रिका का प्रकाशन कर प्रभूत यश के भागी बने। सन्ताली एव पहाडिया-भाषाओ के विशेषज्ञ गोपाललाल वर्मा ने सन्ताली को देवनागरी मे लिपिबद्ध करने की सर्वप्रथम प्रेरणा ही नही दी, उक्त भाषा की पहली पोथी भी उन्होने ही तैयार की। हिन्दी के प्रचार-कार्य मे भी उनकी विशेष दिलचस्पी रही। प० चन्द्रशेखरधर मिश्र खडीबोली-आन्दोलन के सक्रिय सचालक के रूप मे सामने आये। तत्कालीन सयुक्तप्रान्त के पूर्वी और बिहार के पश्चिमी जिलो मे हिन्दी-प्रचार की दृष्टि से, उन्होने अनेक नगरो एव ग्रामो मे हिन्दी-सस्थाओ की स्थापना की तथा पत्र-पत्रिकाओ को जन्म दिया। ब्रजनन्दन सहाय 'ब्रजवल्लभ' ने मैथिल-कोकिल विद्यापति को बँगला-साहित्य से हिन्दी मे लाकर प्रतिष्ठित करने का सर्वप्रथम सफल प्रयास किया। भवानीदयाल सन्यासी ने देश के साथ-साथ देश के बाहर भी हिन्दी का पर्याप्त और व्यापक प्रचार किया। रामकृष्ण परमहस एव स्वामी विवेकानन्द, के बाद वे ही ऐसे भारत-भक्त सन्यासी हुए, जिन्होने भारत की सीमा के बाहर हिन्दू और हिन्दुस्तान के साथ-साथ हिन्दी के महत्त्व का शख फूँका। रघुवीर प्रसाद विशेषकर विश्वविद्यालयो मे हिन्दी को उचित स्थान दिलाने की दिशा मे सक्रिय रहे। बिहार की विभिन्न परीक्षाओ मे हिन्दी को अपना स्थान दिलाने का कार्य, उन्होने बडे साहस के साथ किया। डॉ० राजेन्द्र प्रसाद हिन्दी को 'राष्ट्रभाषा'-पद पर प्रतिष्ठित करने की ओर सतत प्रयत्नशील रहे। स्कूलो मे हिन्दी के प्रवेश मे आपका बहुत बडा योगदान है। सरकारी कचहरियो मे हिन्दी-नागरी के व्यवहार के लिए रामबालक पाण्डेय के कार्य स्तुत्य माने गये। ललितकुमार सिह 'नटवर' ने बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की स्थापना मे अभूतपूर्व सहयोग दिया तथा कलकत्ता मे बंगीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की स्थापना कर विशेष यश अर्जित किया। लालजी सहाय की प्रेरणा से ही दार्जिलिग के यूरोपीय स्कूलो मे हिन्दी एक अनिवार्य विषय के रूप मे घोषित हुई। इन उल्लेखनीय विभूतियो के अतिरिक्त जिन अन्य महानुभावो ने हिन्दी-भाषा के प्रचार-प्रसार मे विशेष दिलचस्पी ली, उनके नाम इस प्रकार हैं—देवेन्द्रप्रसाद, परमेश्वरप्रसाद शर्मा, भगवतीचरण, भगीरथ झा 'रमेश', भुवनेश्वरप्रसाद चौधरी 'भुवनेश,' यशोदानन्द अखौरी, रामलोचनशरण 'बिहारी', रामेश्वरीप्रसाद 'राम,' शिवनन्दन सहाय, शिवनाथ मिश्र 'व्यास', शिवपूजन सहाय, हरदीपनारायण सिह 'दीप', हरिहरप्रसाद 'रसिक', कार्त्तिकेयचरण मुखोपाध्याय और गोवर्द्धन गोस्वामी। इनमे भगवतीचरण तो चलते-फिरते 'विश्वकोश' थे और हिन्दी-प्रचार ही उनके जीवन का

एकमात्र व्रत था। भगीरथ झा 'रमेश' ने 'रामचरितमानस' के माध्यम से हिन्दी की व्यापक प्रचार किया। शिवनन्दन सहाय और शिवपूजन सहाय हिन्दी के वैसे प्रचारक साधको मे हुए, जिनके सतत प्रयत्न से हिन्दी की नीव आगे चलकर मजबूत हुई। आचार्य शिवपूजन सहाय स्वय एक मान्य भाषाचार्य थे। हिन्दी-भाषा पर उनके जैसा कम ही रचनाकारो का अधिकार देखा गया। दुर्गाशकरप्रसाद सिह 'नाथ' एव रामदहिन शर्मा ने खडीबोली के साथ-साथ भोजपुरी-भाषा-प्रचार की दिशा मे भी स्तुत्य कार्य किया। इसी प्रकार, पीटर शान्ति 'नवरगी' ने भी 'नगपुरिया'-भाषा के क्षेत्र मे श्लाघनीय प्रचार-कार्य किया।

उपसंहार

'हिन्दी-साहित्य और बिहार' के द्वितीय खण्ड की तरह प्रस्तुत प्रस्तावना मे भी केवल उन्ही रचनाकारो अथवा उनकी रचना का विवेचन किया गया है, जिनकी रचना के उदाहरण अथवा पुस्तको के नामादि उपलब्ध हुए हे। जिनकी रचना के न तो उदाहरण ही प्राप्य है और न कृतियो के नामोल्लेख ही, उनके विषय मे प्रामाणिक रूप से कुछ कहना समीचीन नही। यहा यह कहने की आवश्यकता नही कि ऊपर यथासम्भव प्रामाणिक बातो का ही उल्लेख करने का प्रयास किया गया हे। और, कहना न होगा कि इस प्रामाणिकता के लिए पहले की तरह ही स्वभावत हमे विभिन्न सूत्रो पर अवलम्बित रहना पडा है। सूत्रो की प्रामाणिकता के सम्बन्ध मे निश्चित रूप से कुछ कहने की स्थिति मे सम्पति हम नही है। यदि सारे आधार-सूत्र प्रामाणिक सिद्ध हो जायं, तो भी हम मानते है कि अनुसन्धान के क्षेत्र मे कोई अन्तिम वाक्य नही होता। अत आशा और विश्वास है कि सुधी पाठक हमारी विवशता को दृष्टि मे रखते हुए, त्रुटियो के लिए क्षमा करेंगे और तद्विषयक प्रामाणिक सूचना देकर हमे अनुगृहीत करने का कष्ट करेंगे।

इस खण्ड को तैयार करने के क्रम मे प्राचीन हस्तलिखित-ग्रन्थ-शोध-विभाग के क्षेत्रीय अनुसन्धान-पदाधिकारी श्रीरामनारायण शास्त्री और उसी विभाग के अनुसन्धान-पदाधिकारी श्रीपरमानन्द पाण्डेय तथा परिषद् के प्रकाशन-पदाधिकारी प० श्रुतिदेव शास्त्री और 'परिषद्-पत्रिका' के सम्पादक श्रीश्रीरजन सूरिदेव से भी बहुमूल्य सूचनाएँ प्राप्त हुई है। हम इन सभी आदरणीय सहयोगियो को हार्दिक धन्यवाद देते हे। इस सारस्वत यज्ञ मे और भी जिन उदाराशय महानुभावो का मूल्यवान् सहयोग प्राप्त हुआ है, उन सबके प्रति परिषद् कृतज्ञ है।

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद
गंगा-दशहरा, स० २०३३ वि०

बजरंग वर्मा

विषयानुक्रमणिका

●

हिन्दी-साहित्य और बिहार

प्रथम अध्याय

[वे साहित्यकार, जिनका जन्मकाल तिथि-वार-सहित ज्ञात है ।]

अचम्भित चौधरी 'दीन'[1]

आपका जन्म भागलपुर-जिला के 'प्रेमनगर-पोठिया' नामक स्थान मे, सन् १८८९ ई० (स० १९४६ वि०) की माघ कृष्ण-द्वितीया (भौमवार) को हुआ था।[2] आपके पिता का नाम स्व० दुर्गादत्त चौधरी था, जो श्रीकृतनारायण चौधरी के पुत्र थे। आपने सन् १९०७ ई० में पटना ट्रेनिंग-स्कूल से, वी० एम्० की परीक्षा पास की और सन् १९०८ ई० से आप गुरु ट्रेनिंग-स्कूल में प्रधानाध्यापक-पद पर कार्य करने लगे। इस पद पर आप सन् १९४५ ई० तक कार्य करते रहे। अपने सेवाकाल में आपने बागबानी, जातीय संगीत, मूर्ति-निर्माण, चित्रांकन आदि अनेक विषयो से सम्बद्ध रचनाओं के लिए प्रशंसा-पत्र प्राप्त किये थे। सन् १९४० ई० मे, निरक्षरता-निवारण-सम्बन्धी प्रचार-कार्य में आपने बडी दिलचस्पी के साथ कार्य किया था। हिन्दी के अतिरिक्त बँगला, उर्दू और अँगरेजी-भाषा मे भी आपकी पैठ है।

आपके द्वारा लिखित पुस्तको मे—१. विनय-पुष्पांजलि और २. स्वदेशी-संगीत (तीन भागो मे) का प्रकाशन हो चुका है। अप्रकाशित पुस्तको के नाम इस प्रकार है—१. दीन-सतसई, २. मानस-पूजन, ३. विविध विषय (सामाजिक उपदेश), ४. विनय-वाणी और ५. बालि-वध। उपर्युक्त प्रकाशित-अप्रकाशित सभी रचनाएँ पद्यबद्ध है। गद्य मे लिखित आपकी तीन पुस्तको मे केवल एक 'रामराज्य की झाँकी' ही प्रकाशित है। शेष दो—'भक्त शबरी' और 'भक्त रैदास' नाटक है, जो अभी तक अप्रकाशित है।[3]

---

१. सन् १५३६ ई० में आपके पूर्वज (आपसे बीस पीढ़ी पूर्व) रायबहादुर चौधरी पं० मुकुटनारायण शर्मा (झा) तिरहुत के 'सनौली'-ग्राम से भागलपुर-जिला के 'पोठिया'-ग्राम में आये थे। इनके पिता पं० वासुदेव झा तन्त्रविद्या के अच्छे ज्ञाता थे, जिनकी विद्वत्ता पर मुग्ध होकर उस समय के एक सिद्ध फकीर ने १६२ ग्रामों की अपनी जमीन्दरी उन्हें दी थी, जो 'तप्पा नयादेश' कहा जाता है। तेरहवीं पीढ़ी तक एकपुत्रीय वंश चला। चौदहवीं पीढ़ी से इनके वंश का विस्तार हुआ। अब भी इस ग्राम में ६० घर चौधरी-वंश के निवासी हैं। जमीन्दारी प्राप्त होने पर बादशाह की ओर से इस खानदान को 'रायबहादुर चौधरी' की उपाधि मिली थी।

२. लेखक द्वारा प्रेषित सामग्री के आधार पर।

३. पुस्तक-भण्डार-'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (सम्पादक-मण्डल, सन् १९४२ ई०, पृ० ६७२-८) में इसी नाम के एक और कवि द्वारा लिखित 'भजन-विनोद' नामक पुस्तक की चर्चा मिलती है।

उदाहरण

(१)

असुर ऊपर सिह राजित, ताहि ऊपर भगवती ।
मुकुट शोभित सुभग सिर, त्री-नयन, शशि छवि राजती ।।
करन-कुण्डल कंठ मह, मनि कंज हार विराजती ।
कोटि रवि-शशि किरण निन्दति, कान्ति धारिनि यशवती ।।
कुलिश-पाशऽरु-परशु-सर धनु शूल-असि कर सोहती ।
दया-माया-क्षमा-विद्या आदि रुपिनि गुनवती ।।
महिष मर्दिनि मर्द्दि असुरन, अमर-जन-मन-मोदती ।
हरनि आरति दुखित जन जग, 'दीन' कर इक तुही गती ।।[1]

(२)

रसना ! रस न जान हरि-नाम ।
हरि-रस सम नहिं आन कोऊ रस, तेहि न पियसि कोउ याम ।।
हरि-रस गुन ऋषि मुनि गन जानत, करत नित्य ते गान ।
योगिराट शिव कालकूट रस, जेहि बल कीन्हेउ पान ।।
हरि-रस परिहरि पियति विषय-रस, सो रस, सो रसना जरि जाय।
'दीन' अधम रसना सोई मानत, हरि-रस पिबति अघाय ।।[2]

(३)

देखु दयाल देव रघुराई, भारत विपति-पाश अरुझाई ।।
ज्यों-ज्यों करत उपाय त्रान हित, त्यों-त्यों कठिन ग्रन्थि पड़ि जाई ।।
बिपति-पाश केहु भाँति कटे नहिं, बुद्धि हारि देखि कठिनाई ।।
धन-विद्या-बल सकल खोई हम, केवल तन ते करौं उपाई ।।

---

१. शक्ति-विनय—तेवड़ा (सभी शुद्ध स्वर)—'विनय-पुष्पांजलि' (श्रीअचम्भित चौधरी 'दीन', प्रकाशन-काल नहीं), पृ० १ ।

२. ठुमरी-तेताला—वही, पृ० २६ ।

ते तनहू अब रोग-ग्रसित है, प्रान चहत प्रभु वेगि पराई ॥
तुम कृपाल करुणाकर हे हरि, दीनबन्धु जग में कहलाई ॥
'दीन' दशा अवलोकि नाथ ! फिर क्यों धारी एती निठुराई ॥'[1]

(४)

मनसिज अरिसुत शारदा, नमौ चरन सुखमूल ।
जाके सुमिरे नसत है, जड़ता अरु भवसूल ॥
रामनाम मनुदीप है, नर के पाप पतंग ।
जो बारे हिय-गेह में, रहे न एकहु संग ॥
रामनाम साबुन घिसे, मन-पट-मल नसि जाय ।
आत्मरूप सुन्दर लगे, सदानन्द रह छाय ॥
क्या जानूँ अज्ञान मैं, तेरी लीला राम ।
विधि हरिहर नहिं पावते, थाह जगत कोउ ठाम ॥
काम क्रोध के कीच में, फँसौ न कबहु राम ।
ऐसी किरपा राखियो, तुम हे पूरन काम ।
मन-मन्दिर महँ राजिये, युगल रूप श्रीराम ॥
जातैं देखौ नयन भरि, छवि अनुपम वसुयाम ॥
सत्य छिपाये नहिं छिपे, ज्यों सूरज की जोति ।
घोर घटा कहँ फारिके, प्रगट जगत में होति ॥
जगत हाट लखि मूढ़जन, जाते है बौराय ।
काँचहि कचन मनत है, कंचन काँच लखाय ।[2]

(५)

शबरी--हे ऋषियों, मैं कुछ भी नही जानती हूँ कि क्या हुआ है ? संयमी ऋषिजी के बहुत हठ करने पर मैं जल छूने आई हूँ । (आकाश की ओर देखखर) हे भगवन् ! तुम्हारी लीला बड़ी विचित्र है ।

---

१. होली ताल यत—'स्वदेशी-संगीत—बसन्त बहार होरी' (पहला भाग, अचम्भित चौधरी 'दीन', सन् १९३८ ई०), पृ० १-२ ।

२. अप्रकाशित 'दीन-सतसई' से ।

तुम जो कुछ करते हो, उसका उद्देश्य क्या है, इसका पता पाना असम्भव है। ऋषिजी के स्पर्श से जल दूषण हो और मेरे छूने से पवित्र हो जायगा, वास्तव में यह बात रहस्य-भरी है। नही तो कहाँ मैं कुल-जाति-हीना सदा अपवित्र रहने वाली भिल्ल-जाति की नारी हूँ और कहाँ ये संयमी जी उच्चकुल के ब्राह्मण है—उसमें भी ज्ञानी और सदाचारी है।[1]

(६)

रैदास—मुझे पारस पत्थर की जरूरत नही है। मुझे सोना बनाकर क्या करना है? खाने के लिए तो ठाकुरजी जूते के रोजगार से ही दे देते है, तब फालतू धन जमा करने से क्या काम? आप ले जाइए इस पत्थर को। ....संसार भले ही पागल रहे धन के पीछे, मुझे तो धन नहीं चाहिए। .... मुझे सुख-दुख के साथी भगवान माधो हैं। वे ही मेरे पारसमणि है। उन्ही से सब कुछ है। उनको छोड़ मुझे कुछ नही चाहिए।[2]

★

अनुग्रहनारायण सिंह

आप गया-जिला के 'पोइवाँ' (पो० औरगाबाद) के निवासी बाबू विश्वेश्वरदयाल सिह के पुत्र थे। आपका जन्म सन् १८८७ ई० के १८ जून को हुआ था।[3] आपकी शिक्षा १० वर्ष की आयु से आरम्भ हुई थी। आपने पटना-कॉलिज तथा युनिवर्सिटी लॉ-कॉलिज, कलकत्ता से क्रमश: एम्० ए० और बी० एल्० की डिगरियाँ प्राप्त की। छात्रावस्था मे बिहारी स्टूडेण्ट्स कॉंगरेस के आप दो-दो बार सचिव बनाये गये और सन् १९११ ई० मे, जब पटने मे कॉंगरेस का महाधिवेशन आरम्भ हुआ, तब उसमे आपने स्वयसेवक-संगठन का सचालन किया। सन् १९१५-१६ ई० तक आप टी० एन्० जुबली कॉलिज, भागलपुर के

१. 'भक्त शबरी का अभिनय' नाटक (अप्रकाशित) अंक १९-७ से।

२. 'भक्त रैदास का अभिनय' नाटक (अप्रकाशित) अंक, २, दृश्य ६ से।

३. 'गया के लेखक और कवि' (श्रीद्वारकाप्रसाद गुप्त सन् १९५० ई०), पृ० ४। इसके अतिरिक्त देखिए, 'बिहार-अब्दकोष' (श्रीगदाधरप्रसाद अम्बष्ठ, स० २००६ वि०, पृ० ४३४) तथा श्रीशंकरदयाल सिंह द्वारा लिखित एव सन् १९६१ ई० में प्रकाशित 'बाबू साहब : एक संक्षिप्त परिचय'।

इतिहास-विभाग मे प्राध्यापक थे सन् १९१६ मे २० ई० तक आप पटना हाइकोर्ट में वकील रहे और सन् १९२० ई० मे देशव्यापी असहयोग-आन्दोलन मे भाग लेने के लिए आपने अपनी चलती वकालत छोड दी। प्रसिद्ध चम्पारन-आन्दोलन मे आपने महात्मा गान्धी के साथ कार्य किया।

सन् १९२४ ई० मे आप क्रमश. पटना म्युनिसिपल बोर्ड तथा गया-जिला बोर्ड के उपाध्यक्ष और अध्यक्ष पद पर रहे। सन् १९३४ ई० मे, भूकम्प पीडितो के लिए जो सेण्ट्रल कमिटी बनी थी, उसके आप ही प्रधानमन्त्री थे। सन् १९३७ से ३९ ई० तक आप बिहार के प्रथम काँगरेसी मन्त्रिमण्डल मे, वित्तमन्त्री के पद पर रहे। सन् १९४० ई० मे रामगढ में होनेवाले अखिलभारतीय काँगरेस के आप स्वागत-मन्त्री चुने गये। सन् १९४२ ई० के राष्ट्रव्यापी जन-आन्दोलन के समय आप लगभग २२ महीनों तक कैद और नजरबन्द रखे गये थे। पुन जब बिहार मे काँगेरस-दल का मन्त्रिमण्डल बना, तब आप ही उसके उपनेता एवं वित्तमन्त्री हुए। स्वातन्त्र्योत्तर, सन् १९४७ ई० मे, अन्तरराष्ट्रीय खाद्य एव कृषि-सम्मेलन मे भारतीय प्रतिनिधि के रूप मे भाग लेने के लिए आप जेनेवा गये। तदुपरान्त, सन् १९५० ई० मे, पेरिस मे जब अन्तरराष्ट्रीय श्रम-सम्मेलन हुआ, तब वहाँ भी आपने भारत-सरकार का प्रतिनिधित्व किया।

आप बहुत समय तक बिहार-प्रान्तीय गान्धी-स्मारक निधि तथा सर्वोदय-सघ के अध्यक्ष भी थे, आप बिहार के अनेक जनोपयोगी, सार्वजनिक सस्थाओ और सास्कृतिक प्रतिष्ठानो के जन्मदाता थे। आपकी रचनाएँ अधिकतर राजनीति एव अर्थशास्त्र से सम्बद्ध है। सन् १९२४ ई० मे गया मे हुए अष्टम बिहार-प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के आप ही स्वागताध्यक्ष थे। आप गया से प्रकाशित होनेवाली लाला भगवान 'दीन' के समयुगीन 'लक्ष्मी' के एक सुपरिचित लेखक थे। आपको अपनी मातृभाषा हिन्दी से बडा प्रेम था। आपके द्वारा लिखित 'मेरे सस्मरण' [१] नामक पुस्तक इसका ज्वलन्त प्रमाण है।

आप सन् १९५७ ई० की ६ जुलाई को परलोकगामी हुए।

उदाहरण

मैने १९०८ मे पटना कालेज मे नाम लिखाया और उसके बाद श्री बाबू से मेरी जान-पहचान हुई। श्री बाबू से मेरी जान पहचान कराने वाले थे स्वर्गीय शम्भुनाथ वर्मा, जो हम दोनो के समान रूप से मित्र थे और जिनका बच्चो सा सरल तथा प्रसन्न स्वभाव भुलाये भी नही भूलता। उस समय के नौजवानों पर बंग-भंग-आन्दोलन का

१· इस पुस्तक की रचना आपने जेल में की थी।

२. 'श्रीकृष्ण-अभिनन्दन-ग्रन्थ' (सम्पादक-मण्डल, सं० २००५ वि०), पृ० ३६७।

स्थायी प्रभाव पड़ा था। तिलक और पाल उस समय के नौजवानों के प्रिय नेता थे। श्री बाबू की श्रद्धा बाल गंगाधर के प्रति थी और वे उनकी तथा उनके लेखों की बड़ी प्रशंसा किया करते थे। श्री बाबू तिलक के पक्के भक्त थे। वह संघर्ष का जमाना था। उग्रवादी समझे जानेवाले छात्रों के उत्साह को दबाने के लिए कालेज के अधिकारी विशेष रूप से सचेष्ट रहते थे; क्योंकि ऐसे छात्र स्वदेशी-आन्दोलन का समर्थन करते और उसमें भाग लेते थे। उन दिनों छात्रावास-जीवन में अनेक परिवर्त्तन हुए। कालेज-अधिकारियों से बराबर संघर्ष चलता रहता था।

अनूपलाल मण्डल

आप समेली, जिला पूर्णिया के निवासी श्रीलब्बू मण्डल के पुत्र है। आपका जन्म सं० १९५३ वि० (सन् १८९६ ई०) की आश्विन शुक्ल-पचमी को हुआ था।[१] आपने लोअर प्राइमरी स्कूल के एक शिक्षक के रूप मे अपने कर्मक्षेत्र मे प्रवेश किया। आगे चलकर सन् १९२८ ई० मे, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन (प्रयाग) की 'साहित्यरत्न' परीक्षा मे उत्तीर्णता प्राप्त कर आप हाइ स्कूल मे हिन्दी-अध्यापन का कार्य करने लगे। कुछ ही दिनो बाद, आप बीकानेर (राजस्थान) के अगरचन्द भैरोदान सेठिया महाविद्यालय मे हिन्दी-प्राध्यापक के पद पर नियुक्त हो गये। बीकानेर से वापस आने के बाद, 'युगान्तर-साहित्य मन्दिर' नामक एक प्रकाशन-संस्था स्थापित कर आप भागलपुर चले आये। आपके अधिकाश उपन्यास यही से प्रकाशित किये गये। इसी बीच, पाण्डिचेरी के श्रीअरविन्दाश्रम से आपका सम्पर्क हुआ। उक्त आश्रम मे लगभग दो वर्षों तक आप एक साधक के रूप मे रहे। उसी समय से आप उक्त आश्रम के आजीवन सदस्य है। सन् १९५१ ई० मे आप बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, के प्रकाशनाधिकारी-पद पर नियुक्त होकर पटना चले आये। इस पद पर लगभग दस वर्षों तक कार्य करने के पश्चात् सेवानिवृत्त हुए। सम्प्रति, आप अपनी जन्मभूमि मे ही निवास कर रहे है।

---

१ प्रस्तुत परिचय मुख्यतः लेखक द्वारा प्रेषित सामग्री के आधार पर तैयार किया गया है। इसके अतिरिक्त 'मिश्रबन्धु-विनोद' (मिश्रबन्धु, चतुर्थ भाग, स० १९९१ वि० पृ० ४७५) 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ५५३, ५६६, ६७२ तथा ७६८), 'बिहार अब्दकोष' (वही, पृ०, ४४९ ५०), 'हिन्दीसेवी-ससार' (प्रथम खण्ड, डॉ० प्रेमनारायण टण्डन, सन् १९६३ ई०), पृ० २२, में प्रकाशित तथा बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् द्वारा षष्ठ 'वार्षिकोत्सव (सन् १९४७ ई०) के अवसर पर पठित परिचय से भी सहायता ली गई है।

बिहार के उपन्यासकारो मे आपका प्रमुख स्थान माना जाता है। आपका साहित्यिक जीवन सन् १९२६ ई० से आरम्भ होता है। सन् १९२७ ई० मे, आपके द्वारा सम्पादित 'रहिमन-सुधा' नामक आपकी पहली पुस्तक पटना की 'सरस्वती-पुस्तकमाला' से प्रकाशित हुई। इसके बाद सन् १९२९ ई० मे, आपका प्रथम मौलिक सामाजिक उपन्यास 'निर्वासिता' प्रकाशित हुआ। आपके 'मीमासा' नामक उपन्यास का 'बहूरानी' नाम से सन् १९४० ई० मे चलचित्र भी बना।[1] बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् की ओर से सन् १९५७ ई० मे आपको 'रक्त और रग' नामक उपन्यास पर एक सहस्र मुद्रा का बिहारी ग्रन्थलेखक-सम्मान-पुरस्कार मिला था। आपके द्वारा लिखित अन्य हिन्दी-उपन्यासो के नाम इस प्रकार है—१. समाज की वेदी पर, २. सविता, ३ साकी, ४ रूपरेखा, ५ ज्योतिर्मयी, ६. वे अभागे, ७. ज्वाला, ८ दस बीघा जमीन, ९. आवारो की दुनिया, १० बुझने न पाये, ११. अभिशाप, १२. दर्द की तसवीरे, १३ अभियान का पथ, १४. केन्द्र और परिधि, १५ तूफान और तिनके और १६ नारी : एक समस्या।[2]

हिन्दी के साथ-साथ बँगला-भाषा पर भी आपका समान अधिकार है और कदाचित् इसी कारण आप अनुवाद कार्य की ओर भी उन्मुख हुए। आपके बँगला से अनूदित उपन्यासो मे श्रीबुद्धदेव बसु की 'शेष पाण्डुलिपि'[3] का अनुवाद विशेष रूप से उल्लेखनीय है। आपने नोर्वेजियन लेखक क्नूट हामसन के 'हंगर' नामक उपन्यास का हिन्दी-अनुवाद भी 'गरीबी के दिन' नाम से कराया था। बँगला से अनूदित आपकी दो और पुस्तकें मिलती हैं—१. श्रीमद्भगवद्गीता[4] और २. नीतिशास्त्र या समाजशास्त्र। आपके द्वारा लिखित तीन-चार जीवनियाँ भी मिलती है, जिनके नाम इस प्रकार है—१. महर्षि अरविन्द, २. महर्षि रमण, ३. मुसोलिनी का बचपन और ४. कुरसेला-नरेश श्रीरघुवंश-प्रसाद सिंह का जीवन-चरित्र।

अपनी जातीय पत्रिका 'कैवर्त्त-कौमुदी' के सम्पादन के सिलसिले मे आपने अपनी सम्पादन-कला का अच्छा परिचय सन् १९२६-२७ ई० मे ही दिया था। आपके द्वारा सम्पादित पुस्तको मे प्रमुख के नाम ये हैं—१. पचामृत (पाँच एकाँकियो का संग्रह), २. उपनिषद् की कहानियाँ (दो भागों मे) और ३. उपदेश का कहानियाँ (चार भागो मे)।

उदाहरण

(१)

सुबल ने एकान्त में नन्दिता को देवप्रिय के विषय में जो कुछ कहा, नन्दिता पत्थर की तरह जड होकर सारी बातें सुन गई; पर समझ नहीं सकी कि अब वह क्या करे। जो अपनी विवाहिता पत्नी को छोड़

१. निर्माता ' फिल्म-इण्डिया, बम्बई। इसके प्रेरणास्रोत प्रसिद्ध अभिनेता श्रीकिशोर साहू थे।
२. आपके द्वारा लिखित 'शुभा', 'मानसी', 'देवायतन' आदि कई उपन्यास अभी तक अप्रकाशित ही हैं।
३. इस उपन्यास का अनुवाद सन् १९६० ई० में प्रकाशित हुआ था।
४. श्रीअनिलवरण राय, श्रीअरविन्दाश्रम, पाण्डिचेरी के 'श्रीअरविन्द-गीता' का अनुवाद।

सकता है, जो रेवा जैसी विदुषी सुन्दरी के व्यामोह से अपने को अलग कर सकता है, जो आश्रम-निवासिनी आधुनिकाओं को मतिभ्रम में डालकर भाग खड़ा हो सकता है, वह निपट गँवार, बिलकुल साधारण युवती को अपनी प्रेयसी का गौरव देने मे प्रसन्नता का अनुभव करता है, यह क्या कुछ कम आश्चर्य का विषय है। पर, संसार में आश्चर्य कुछ है ही नहीं—और यदि आश्चर्य कुछ है तो वह है मनुष्य का मन, जो केन्द्र से छिटककर परिधि में चक्कर लगाता रहता है। परिधि छोटी होती है, बड़ी होती है, विस्तृत होती है, विस्तीर्ण होती है—इतनी विस्तीर्ण कि एक जगत के बाद दूसरे जगत को अपने अन्दर समाकर भी उसका पेट नही भर सकता, विस्तीर्णता की सीमा नहीं, वह सीमाहीन है, अनन्त है तो क्या केन्द्र को भुलाकर परिधि में खो जाना मानव का काम्य है? केन्द्र सत्य है या परिधि? किसकी स्थिति चिर है? कौन किसका सापेक्ष है? जीवन की सार्थकता, शान्ति, स्वस्ति किसमें है? परिधि को केन्द्र मानने पर असंख्य परिधियाँ उत्पन्न होती हैं और ऐसा जाल बुन डालती है कि जीवन उलझकर निरुपाय, निःसहाय, निष्प्राण हो उठता है।'[1]

(२)

पर अन्धकार में आँखें चाहे कितनी मूँदी जायें, केवल आँखें तो देखती नही हैं। प्रभावती ने उस अन्धकार में, आँखें मूँद लेने के बावजूद, अपने सामने जिस चित्र को साकार रूप में देखा, वह स्वयं प्रभावती थी—प्रभावती के उद्भासित मुखमण्डल पर हँसती-मुस्कुराती-सी प्रसन्न-प्रफुल्ल दो बड़ी-बड़ी आँखें जो घनी बरौनियों से ढकी हैं, उसकी

१. 'केन्द्र और परिधि' (अनूपलाल मण्डल, सं० २०१४ वि०), पृ० ३५७-५८।

लम्बी खिली भवे, उसकी मोहक नासिका, उसके मद भरे पतले लाल अधर, उसका छोटा-सा चिबुक के ऊपर छोटा-सा काला तिल, उसकी शंख जैसी ग्रीवा, उसका उन्नत सुपुष्ट वक्षस्थल. .प्रभावती के अंग-प्रत्यंगो की समष्टिगत इकाई का माधुर्य अपने-आप मे, अपने सामने प्रत्यक्ष हो उठा। उसने मनोमुग्धभाव से उस चित्र को मानसिक क्षितिज में उद्भासित देखा, तभी उसे स्मरण हो आया कि अमल ने उसके मुख की चाँद से तुलना, चाहे हँसी मे ही की हो ; पर वह भूल नही थी ! इस विचार से वह आनन्द में उद्बुद्ध हो रही। कुछ क्षण बाद, वह उसी उद्बुद्धता को लेकर सो गई।[१]

★

अपूछलाल सिंह 'अपूछ'[२]

आपकी रचनाएँ 'अनूपलता', 'अनूपकवि' और 'हरिजीकवि' के नाम से भी मिलती है।[3]

आप मुजफ्फरपुर-जिला के शिवहर-थाना के 'फुलकहा' नामक ग्राम के निवासी श्रीरामचरण सिंहजी के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९१२ वि० (सन् १८५५ ई०) की अग्रहण शुक्ल-नवमी (सोमवार) को हुआ था।[४] जब आप निरे बालक थे, तभी आपके पिताजी का देहान्त हो गया। लगभग सात वर्ष की आयु मे आपकी माताजी का भी देहान्त हो गया। अत., बडी कठिनाई से आप किसी तरह हिन्दी-उर्दू की साधारण शिक्षा पा सके। जीविका का कोई साधन न देख आपने छोटे-छोटे बच्चो को पढाना-लिखाना आरम्भ किया। प्रखरबुद्धि और नीतिज्ञ होने के कारण कुछ ही दिनो के बाद आपका प्रवेश शिवहर-दरबार मे हो गया और वहाँ आप पटवारी का काम करने लगे।

आप नियमित रूप से रामायण-पाठ करते थे। आप जैसे कर्मनिष्ठ, व्यवहारकुशल और नीतिज्ञ थे, वैसे ही ईमानदार और परोपकारी भी। यही कारण था कि सभी आपको सम्मान की दृष्टि से देखते थे।

---

१. 'रक्त और रंग' (अनूपलाल मण्डल, स० २०१२ वि०), पृ० ३४८-४९।

२. आपका प्रस्तुत परिचय आपके एक निकट सम्बन्धी श्रीहरदीपनारायण सिंह 'दीप' द्वारा प्रेषित सामग्री के आधार पर तैयार किया गया है।

३. आपके जन्म के पूर्व आपके सात भाइयों की मृत्यु हो चुकी थी। केवल दो बहनें जीवित थी। जब आपका जन्म हुआ, तब जीवित रहने के विचार से आपके माता-पिता ने आपको कूड़े-कचरे पर फेंकवा दिया। फिर, पड़ोस की एक दासी ने उठाकर आपकी पूज्या माता की गोद में आपको रख दिया। इसी कारण आपका नाम 'अपूछ' रखा गया।

४. श्रीहरदीपनारायण सिंह 'दीप' द्वारा प्रेषित सामग्री के आधार पर।

आपमे बचपन से ही कविता करने की चाह थी और उसी समय से आप कुछ-कुछ कविता करने लगे थे। आगे चलकर आप अच्छी कविता करने लगे। अपने इसी गुण के कारण आप शिवहर के राजा श्रीशिवराजनन्दन सिह और बाबू गिरिजानन्दन सिह के प्रेमपात्र बने रहे। आपकी एक समस्यापूर्ति से प्रसन्न होकर दरभगा-नरेश ने भी आपको अपने दरबार मे आकर रहने का निमन्त्रण दिया था।

आपने कई काव्य-पुस्तको की रचना की थी, जिनमे केवल 'श्रीमोहन-दधिदान' और 'पावस-प्रकाश' ये दो ही प्रकाश पा सकी। आपकी काव्य-रचनाओ मे दिव्य शृगार रस एवं आध्यात्मिक शान्त रस की प्रचुरता है।

आप सन् १९२६ ई० की भाद्रपद-शुक्ल एकादशी (शुक्रवार) को परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

आये अषाढ़ सुनो सजनी रजनी लखि जीत्र में होत अँदेसो।
पावस आस लगाय रही नहि आय लला बिलमे केहि देसो॥
काम सकाम किये सब जीवन खोज करौ धरि योगिनि बेसो।
अपुछ आस पुरे तबही जबही कोउ आन मिलावै केसो॥
चहुँ ओर घटा घन घेरि लई चमके बिजुली धड़के छतिया।
पहुँच्यो अदरा बरसे बदरा ओ भिजे चदरा न सुझे रतिया॥
दियरा कर बारि अटारि गई बिनु श्याम के सेज पै या गतिया।
मणि खोय फणी अरु मीन विना जल व्याकुल हौं न सुनो बतिया।[1]

(२)

किशोरी संग झूलत नन्द किशोर।
दोउ ओर दोउ खम्भ मनिन के बाँधि रेशम डोर॥
कनक सिहासन बैठे दोऊ सखिन झुलावत झोर।
पिउ को प्यारी चितवन चकति जैसे चन्द चकोर॥
बोलत कीर पपीहा नाचत नाचत समुदित मोर।
मन्द मन्द फुहुकारत बादल उमड़ि घटा घन घोर।
बाजत ताल सितार तमूरा गावत सब करि सोर॥

---

१ 'पावस-प्रकाश' (मुशी अपवननाल, सन् १९२५ ई०), पृ० ३३-३४।

नारद सारद औ चतुरानन गुन गावत कर जोर ।।
अपुछ निरखि जनम फल पाये जनि डारो प्रभु भोर ।।[1]

(३)

छैल सब झूलत सरयू-तीर ।
बन प्रमोद कुसुमित सब तरिवर सुन्दर सघन गंभीर ।।
दादुर चातक मोर कोकिला बोलत झींगुर कीर ।
जुगनू चमदक-मक दामिनि की बरसत बादल नीर ।।
कनक खंभ मणि जडित हिंडोला तापर हनिवत वीर ।
बाजत ताल मृदंग तमूरा पुलकित लगत सरीर ।।
पौढ़ावत गावत सब हिलमिलि डोलत त्रिविधि समीर ।
अनुपलता लखि नाचत प्रमुदित मिटि गई सब तन पीर ।।[2]

(४)

आस करो परमेश्वर की जिन पोषत पालत है सबको री ।
अंडज पिंडज औ स्थावर उद्भिज जीव जहाँ तक लौ री ।।
ये सबकौ वै देत अहार तो तोको न दैहै य क्या तु कहो री ।
अपुछ धीर धरो मन मे परमेश्वर बेर कटावेंगे तोरी ।।[3]

★

१ 'पावस-प्रकाश' (वही), पृ० ११ ।
२ वही, पृ० ३८ ।
३. वही, पृ० ४८ ।

अमरनाथ झा

आपका जन्म स० १९५४ वि० (२५ फरवरी, सन् १८९७ ई०) की फाल्गुन कृष्ण-नवमी को, दरभगा-जिला के 'सरिसब-पाही' नामक ग्राम मे हुआ था।[1] आप स्वनामधन्य म० म० डॉ० सर गगानाथ झा के सुपुत्र थे। आपकी गणना भारत-प्रसिद्ध विद्वानो मे होती है।

आपकी शिक्षा मुख्यत प्रयाग मे हुई। आप अपने कॉलेज-जीवन मे सदैव सभी परीक्षाओ मे प्रथम हुए। सन् १९१७ ई० मे, बीस वर्ष की अवस्था मे ही म्योर कॉलेज, प्रयाग मे आप अँगरेजी के प्राध्यापक नियुक्त हुए और सन् १९२९ ई० मे, प्रयाग-विश्वविद्यालय मे अँगरेजी-विभाग के अध्यक्ष एव प्रोफेसर हो गये। सन् १९२८ ई० मे आप अखिलभारतीय ओरियण्टल कॉन्फरेस, लाहौर के हिन्दी-विभाग के सभापति चुने गये तथा सन् १९३५ ई० मे प्रयाग-विश्वविद्यालय के आर्ट्स फैकल्टी के 'डीन' नियुक्त हुए। सन् १९३८ ई० मे आपने प्रयाग-विश्वविद्यालय के उपकुलपति-पद को सुशोभित किया और कुछ वर्षों तक आप आगरा, लखनऊ एवं हिन्दू-विश्वविद्यालय काशी के भी उपकुलपति रहे। आपने अनेक अखिलभारतीय सम्मेलनो का सभापतित्व किया तथा अनेक विश्वविद्यालय आपके दीक्षान्त-भाषणो से गौरवान्वित हुए। जिन अखिलभारतीय सम्मेलनों का आपने सभापतित्व किया था, उनमे प्रमुख है—अखिलभारतीय शिक्षा-सम्मेलन (१९४१) और अखिलभारतीय राजनीति-सम्मेलन (१९५४)। भारतीय पीढशिक्षा-परिषद् के अध्यक्ष होने के साथ-साथ आप यूनेस्को के प्रथम अधिवेशन मे भारतीय प्रतिनिधि-मण्डल के सदस्य भी थे। भारत मे फ्रासीसी उपनिवेश चन्दरनगर के आजाद होने के बाद वहाँ के प्रथम चुनाव मे मुख्य चुनाव आयुक्त भी आप ही बनाये गये थे। अपनी बहुमूल्य सेवाओ के परिणामस्वरूप कई विश्वविद्यालयो द्वारा आपको 'डॉक्टरेट' की डिग्रियाँ मिली। आपको पटना, प्रयाग और आगरा-विश्वविद्यालयों से 'डी० लिट्' की उपाधि प्राप्त हुई थी। भारत-सरकार ने सन् १९५४ ई० मे आपको 'पद्मभूषण' की उपाधि से विभूषित किया था। आप 'साहित्यवाचस्पति' भी थे।

आप आजीवन अनेक अन्तरराष्ट्रीय एवं अखिलभारतीय संस्थाओ से सम्बद्ध रहे। अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे आप क्रमशः उत्तरप्रदेश और बिहार-लोकसेवा-आयोग के अध्यक्ष थे।

आप हिन्दी, अँगरेजी, उर्दू तथा सस्कृत के विश्रुत विद्वान् थे। अपनी मातृभाषा मैथिली के भी आप बडे अनुरागी थे। विदेशी भाषाओ मे, अँगरेजी के अतिरिक्त लैटिन और

---

१. 'दस तस्वीरें' (श्रीजगदीशचन्द्र माथुर, सन् १९४८ ई०,), पृ० १५। सन् १९४१ ई० में बिहार हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सभापति होते समय सम्मेलन-अधिकारियों द्वारा माँगे जाने पर आपने अपने हाथ से लिखकर अपने जीवन से सम्बद्ध अनेक घटनाओं की एक सूची दी थी। प्रस्तुत परिचय मुख्यतः उसी आधार पर तैयार किया गया है। इसके अतिरिक्त 'मिश्रबन्धु-विनोद' (मिश्रबन्धु, चतुर्थ-भाग, वही पृ० ५८९, ६००,-६०१), 'बिहार-विभाकर' (तारकेश्वर प्रसाद वर्मा, सन् १९४२ ई०, पृ० ३७-४१), 'हिन्दीसेवी-संसार' (वही, प्रथम खण्ड, सन् १९५१ ई०, पृ० ७), 'बिहार-अब्दकोष' (वही, पृ० ४३५) तथा 'जयन्ती स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० १४९ और ६७०) में प्रकाशित परिचयों से भी सहायता ली गई है।

फ्रेंच मे भी आपकी अच्छी गति थी। बँगला-साहित्य, विशेषत: कवीन्द्र रवीन्द्र की रचनाओ के आप बडे प्रेमी थे। हिन्दुस्तानी के आन्दोलन का आपने डटकर विरोध किया था।[१] सन् १९४१ ई० मे, पहले आप अखिलभारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के कार्यवाहक उपसभापति और फिर उसी वर्ष अबोहर-अखिलभारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सभापति भी चुने गये। इसके बाद, आगे चलकर भारतीय हिन्दी-आयोग के मान्य सदस्य और नागरी-प्रचारणी-सभा के सभापति हुए। बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के माध्यम से महाकवि विद्यापति की समग्र कृतियो के अनुसन्धान एवं प्रकाशन के लिए आपकी अध्यक्षता मे ही पहले-पहल विद्यापति-स्मारक-समिति गठित हुई थी। अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे आप नागरी-प्रचारिणी-सभा की ओर से प्रकाशित होनेवाले हिन्दी-साहित्य के बृहत् इतिहास के सम्पादक चुने गये थे। एक अध्यक्ष के रूप मे भी आपने उक्त सभा को गौरवान्वित किया था।

आप अँगरेजी के तो ख्यात लेखक थे ही, हिन्दी मे भी आपने कुछ महत्त्वपूर्ण पुस्तकों की रचना की थी। आपके द्वारा रचित पुस्तको मे, 'हिन्दी-साहित्य-संग्रह', 'हिन्दी-साहित्यरत्न', 'विचारधारा' और 'पद्मपराग' प्रमुख है। आपके द्वारा लिखित अनेक विद्वत्ता-पूर्ण गद्य-रचनाएँ एवं भूमिकाएँ तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओ एव पुस्तकों मे मिलती है।[२] आप सन् १९५५ ई० के २ सितम्बर को परलोक सिधारे।

उदाहरण

(१)

यह स्मरण रखते हुए हमे सन्तोष होना चाहिए कि भारतवर्ष मे मातृभाषा का अधिकार और स्वत्व शीघ्र ही स्थापित हो गया है। अब इनकी उन्नति अवश्यम्भावी है। इनकी गति रुक नहीं सकती है। कुछ दिन हुए, मैं काश्मीर में वेरीनाग गया हुआ था। वहाँ कुछ बुद्-बुद देखा—बहुत सुन्दर और रमणीक, परन्तु सूक्ष्म। आगे चलकर यही एक नदी के रूप मे परिवर्त्तित हुए, विमल जल, शान्त, स्थिर। फिर यही नदी तीव्र वेग से चट्टानों को रगड़ती हुई, अतुल तेज से बढ़ती गई, फैलती गई, खेतो को सीचती गई। अन्त मे यह समुद्र को पार कर, उसकी गम्भीरता, बहुनीरता, तरङ्गिता में लीन हो गई।

---

१. आपने अनेक सभाओं में अध्यक्ष-पद से यह घोषणा की थी कि उदूं कोई स्वतन्त्र भाषा नहीं है, वह हिन्दी की ही एक शैली है और उसे यदि देवनागरी-लिपि में लिखा जाय, तो हिन्दी उर्दू का विरोध स्वयं समाप्त हो जायगा।

२. देखिए, 'साहित्य' (त्रैमासिक, वर्ष ६, अंक ५-६, अगस्त-सितम्बर, सन् १९५५ ई०), पृ० १-२ तथा 'शिवपूजन-रचनावली' (शिवपूजन सहाय, सन् १९४९ ई०, चतुर्थ खण्ड), पृ० ६०३-४।

हिन्दी का तरङ्ग , हिन्दी का वेग बढ़ता रहेगा और विश्व-साहित्य में लीन होने पर भी हिन्दी अपना सुन्दर भव्य शिव रूप सुरक्षित रक्खेगी ।[1]

(२)

उच्चकोटि की कविता की पहचान क्या है ? यदि पद्य पढ़ते ही हृदय द्रवित हो जाय तो कविता उत्तम है। यदि पद्य कई बार पढने की आवश्यकता हो और आशय समझने में कठिनाई हो तो सब गुण रहते हुए भी उसे हम उच्चकोटि की कविता नही कहेंगे। पद्य में यदि कोई ऐसा गुण हो जिससे हमारे बिना प्रयत्न किए हुए ही, वह हमे स्मरण हो जाय तो हृदय में और स्मृति में उसका अटल वास हो जाता है। ऐसी कविता काल और समय की अपेक्षा नही करती ।[2]

(३)

ग्राम-साहित्य, साहित्य का एक बहुत बड़ा अङ्ग है। कोई भी साहित्य जीवित नहीं रह सकता है, उसका मौलिक सम्बन्ध जन-साधारण से न हो। कुछ थोड़े से विद्वानो द्वारा कोई साहित्य अधिक दिन तक प्रफुल्लित, उन्नत और प्रल्लवित नही रह सकता है। साहित्य के कुछ अंश तो ऐसे है जो राजाओं और धन-सम्पन्न सज्जनों के आश्रम में रचे जाते हैं, कुछ ऐसे जो प्रकांड पंडितों के योग्य होते है, और कुछ ऐसे जो जन-साधारण के लिए होते है। तीनों प्रकार के साहित्य का अपना-अपना महत्व है, और सब का अपना-अपना मूल्य है। परन्तु यदि किसी देश अथवा समाज की यथार्थ झलक कही मिलती है तो तीसरे प्रकार के साहित्य में। यह साहित्य बहुधा मौखिक हुआ करता है ।[3]

---

१. 'विचारधारा' (अमरनाथ झा, सन् १९४८ ई०), पृ० १०० ।

२ वही, पृ० ११२ ।

३. वही, पृ० १६२ ।

(४)

हिन्दी मे मौलिक उपन्यास और कहानियाँ यथेष्ठ संख्या मे अब प्रकाशित होती है। इनमे उपन्यास कला के नियमो के पालन की भी चेष्टा हुआ करती है। पाश्चात्य ग्रन्थो का भी इन पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। भारत के जीवन, भारत की समस्याएँ, भारत के नर-नारी इनसे हमारे उपन्यास-लेखक प्रचुर सामग्री एकत्रित कर सकते है। ससार मे सभी प्रकार के मनुष्य है। जीवन में अनेक रूप के अनुभव हुआ करते है। घटनाएँ भी कई प्रकार की होती है। कलाकार का कर्त्तव्य है कि वह ऐसे चरित्रों का चित्रण करें, ऐसी घटनाओ का वर्णन करे, जिनसे विश्व का कल्याण हो और मनुष्य का हृदय सत्य और सौन्दर्य की ओर आकर्षित हो [1]

(५)

मैथिलीक सेवा प्रत्येक मैथिलीक कर्त्तव्य थीक। अपन मातृ भाषा सन मधुर कोनो आओर भाषा नहि होइत छैक। यथासाध्य एकर उन्नति ओ प्रचार करबा में प्रत्येक कॉ तत्पर रहब उचित। तथापि हम ई लिखबाक साहस करैत छी जे आबक समय एहन अछि जे बिना हिन्दीकनीक ज्ञाने कोनो तरहक उन्नति सम्भव नहि। हिन्दी राष्ट्रभाषाक स्थान प्राप्त कय चुकल अछि। मैसूर प्रर्यन्त में हमर हिन्दी व्याख्यान दू महस्र श्रोता सुनलक ओ बुझलक। मिथिला प्रान्त सँ बाहर होइतहिं हिन्दीक प्रयोजन होइत छैक अशुद्ध हिन्दी बजैत अपनहि लाज होइत अछि। मैथिलातिरिक्त समूह प्राधान्य सभ क्षेत्र में बढ़ल जाइत अछि। योग्यता मे, परिश्रम में मैथिल अन्य जाति सँ कम नहि छी, तथापि मैथिलीक दशा अत्यन्त क्षीण अछि। यदि हिन्दी ओ अँग्रेजीक

---

१ श्रीदयाव्रत शर्मा द्वारा लिखित 'मनुष्यता के समीप' (मुरादाबाद, सन् १९४० ई०) में आपके द्वारा लिखित 'आशिष' से। —देखिए, 'विचारधारा' (वही), पृ० २७७।

अध्ययन मैथिल बालक करथि त हमरा पूर्ण आशा अछि जे शीघ्र उन्नति-शिखर पर पहुँचि जैताह ।[१]

अयोध्याप्रसाद सिंह

आप मुँगेर-जिला के 'मलयपुर' (मल्लेपुर) के निवासी थे। आपके पिता का नाम स्व० छत्रधारी सिंह था। आपका जन्म आश्विन शुक्ल-अष्टमी सं० १९३४ वि० (सन् १८७७ ई०) को हुआ था।[२] आपकी रचनाएँ गद्य और पद्य दोनो मे है। आपकी पुस्तकाकार रचनाओ मे तीन प्रकाशित है एव एक अप्रकाशित और अपूर्ण भी रह गई। आपकी प्रकाशित रचनाओ के नाम है-१ प्रेम-महिमा[३], २ ललित मनोरमा[४] तथा ३ जय जगदम्ब।[५] अप्रकाशित रचना का नाम 'ऋतुसंहार'[६] है। आप सं० १९७३ वि० (सन् १९२६ ई०) को पौष कृष्ण-चतुर्दशी को दिवगत हुए।

उदाहरण

जननी नमामि ।
तव पद कमल अति विमल ॥
निरखत हरित सुथल, प्रफुलित द्रुमन सकल ।
परसत सरित सजल, विकसित सुमन मुकुल ॥
तट-द्रुम सहित ताल, शीतांशु विधु बाल ।
पुष्पित कमल-नाल, सुरभित मधुर अनिल ॥
गिरिवर गहन माल, हिम विभूषित भाल ।
दिनकर-किरण-जाल, सुखमा सृजत अतुल ॥

---

१. देखिए, 'मैथिली एवं हिन्दी' शीर्षक लेख, 'मिथिला-मिहिर' (मिथिलांक, सन् १९३६ ई०), पृ० ८।

२. आपके पुत्र श्रीललितकिशोर सिंह, (हिन्दी-लेखक और प्राध्यापक, काशी-हिन्दू-विश्वविद्यालय वाराणसी) द्वारा प्रेषित सामग्री के आधार पर।

३. खड़ीबोली-काव्य। विषय—रामवन गमन। प्रकाशन-काल सन् १९१८ ई०।

४. उपन्यास-प्रकाशन-काल सन् १९२० ई०।

५. रागबद्ध राष्ट्रीय गीतों का संग्रह। प्रकाशन काल, सन् १९१५ ई०।

६. संस्कृत 'ऋतुसंहार' का कवित्त-सवैयों में अनुवाद।

शिशुगण गहत शरण, शंकट-तिमिर-हरण ।
निज जन सुहित-करण, दीजे चरण युगल ।।
[राग कुकुफ बेलावल-झपताल][1]

अवतार मिश्र 'कान्त'

आपका जन्म 'गोविन्दगज'-थाना के 'बडिअरिया' (टोला-मिश्रग्राम, चम्पारन) मे स० १९३६ वि० 'की माघ कृष्ण-पचमी का हुआ था ।[2] आपके पिता प० नन्हकू मिश्र बड़े ही धार्मिक एव सात्त्विक पुरुष थे ।[3] अपनी आरम्भिक शिक्षा समाप्त कर आपने नार्मल ट्रेनिंग की परीक्षा पास की और अध्यापन-वृत्ति का अवलम्बन किया । आप सरकारी विद्यालय मे शिक्षक ही रहे । शिक्षण के साथ-साथ आपने स्वाध्याय का क्रम भी जारी रखा । इसी क्रम मे आपने बँगला-भाषा पर अच्छा अधिकार प्राप्त कर लिया । आप बँगला 'प्रवासी' और 'भारतवर्ष' के बराबर ग्राहक बने रहे । कहते है कि आपके समय मे जितनी भी पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित होती थी, आप उन सबको नियमित रूप से मँगाकर पढते थे । इस प्रकार, आपने अपने पास हिन्दी-पुस्तको एव पत्र-पत्रिकाओ का विशाल सग्रह कर लिया था । आप हिन्दी के प्रसिद्ध कवि प० अम्बिकादत्त व्यास के शिष्य थे और उन्ही के सम्पर्क मे आने पर आपकी अभिरुचि हिन्दी-कविता करने की ओर हुई । काव्य-रचना मे आप इतने दक्ष थे कि अध्यापन-काल मे अपने शिष्यो को सुगमता से स्मरण हो जाने के विचार से आप व्याकरण, भूगोल, इतिहास आदि का प्रधान परिभाषाएँ एव घटनाएँ कविता मे बनाकर पढाया करते थे । आपको अपने अध्यापन-काल मे जहाँ-जहाँ रहने का अवसर मिला, वहाँ-वहाँ आपने कवि-समाज की स्थापना की । समय-समय पर तत्-तत् स्थानीय कवियो की गोष्ठी होती थी, जिसमे भिन्न-भिन्न विषयो की कविताएँ पढ़ी जाती थी । आपकी स्फुट रचनाएँ अधिकतर व्रजभाषा मे रचित मिलती है । आपने 'रसनाशतक'[4] 'शिवस्तवन' तथा 'अनेकार्थावली' नाम की तीन पुस्तको की रचना की थी, जो अभी तक सम्भवत: अप्रकाशित पडी हैं । इसके अतिरिक्त आपने छन्दो मे एक पर्यायवाची कोश की भी रचना की थी,

---

१. 'जय जगदम्ब' से—प्रो० ललितकिशोर सिंह से प्राप्त ।

२. आपके पुत्र पं० यज्ञनारायण मिश्र (वकील, मोतीहारी) द्वारा प्रेषित सामग्री के आधार पर ।

३. इन्होंने सस्कृत में एक पृथक् 'दुर्गासप्तशती' की रचना की थी ।—देखिए, 'चम्पारन की साहित्य-साधना (रमेशचन्द्र झा, सं० २०१३ वि०), पृ० ५४ । आपके पूर्वज गोरखपुर (उत्तरप्रदेश) जिला के वनकटा-ग्राम के मूल निवासी थे । लगभग डेढ सा वर्ष पूर्व आपके पूवजों में से एक को तत्कालीन महाराज बेतिया ने उनकी विद्वत्ता की प्रशंसा सुनकर उक्त ग्राम से बुलाकर, कई ग्रामों की वृत्ति देकर, अपने राज्य में बसा लिया । तदनन्तर, आप महाराज से प्राप्त अपने पूर्वस्थान को छोड़कर गण्डकी नदी के किनारे 'मिश्रग्राम' में आकर निवास करने लगे ।

४. यह जीभ पर रचित सौ दोहों का सग्रह है ।

जो बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के 'चौबे-संग्रह' मे सुरक्षित है। आपका रचनाकाल सन् १६३० ई० तक रहा। इसके पश्चात् रक्तचाप के कारण स० १९९३ वि० सन् (१६३६) ई० मे असमय ही काल-कवलित हो गये।

उदाहरण

(१)

'कान्त' न रसना तू भली, राम नाम सो घूँछ।
तव उतपति मुख मे बिफल, ज्यों कुत्ते की पूँछ॥
गज की अरजी पै करी, मरजी 'कान्त' उताल।
मम रसना थाकी रटत, अब किन द्रवो दयाल॥
रसना उगलति बिषय-बिष, जौ न जपति श्रीरंग।
तौ तो कहँ मुख राखिबो, मानहु 'कान्त' भुजंग॥
कान्त सुछबि पै नयन दा, कानन दो गुन गाथ।
रसना दो हरिनाम पै, पगु दो यम के माथ॥[१]

(२)

प्रीति-चुरैल लगी जब सों हरि, भोजन भौन लगे तेहि फीको।
अंग को खून बहै दृग पानी हो, जानि परै नहिं होनी है नीको॥
कंटक सूखि शरीर भयो अरु, पीर नितै-निति बाढ़त ही को।
'कान्त' जु रावरे फंदे फँसी, पहुँची-सी भई मुँदरी अँगुरी को॥[२]

(३)

लाई बोलि साँवरे जू रावरे बिलोकिबे को
निरखि अनोखी छबि नैनन भरीजिए।
सोने की लता है लिपटैये ना हिये सो याहि,
करिके ढिठाई कर आँगी हूँ न दीजिए॥

---

१. प० श्रीयज्ञनारायण मिश्र वही से प्राप्त।
२ वही।

नाज की पली है यह कोमल कली है नहिं
रंग सो रली है कहि नैसुक पतीजिए।
कछुक दिना लों 'कान्त' रखिए अछूतो अबै
अधर अनूठो वाको जूठो न कीजिए ॥[१]

(३)

बसन-बिहीन कटि असन धतूर भंग,
भूषन भुवंग गंग जटनि जटी रही।
डमरू त्रिसूल आदि लीने कै बिकट बेष,
देख्यौ एक नट संग सुन्दरी नटी रही।
आप तो भिखारी पर अचरज भारी होत,
टूटी-सी कुटी पै भीर जाचक ठटी रही।
बाँटत हमेस धन मंगन नरेस किन्हो,
रंकन मे सेस एक 'कान्त' को घटी रही ॥[२]

(४)

छाई सुघराई औ ललाई आसमान धाई,
आई रबि चाहै कढ़्यो ताई फोरी नभ की।
छीन भये तारे तिमि चन्दहूँ मलीन भये,
तिमिर बिलीन गो गलीन कोन दबकी।
चिरियाँ चुँचानी बजै चुरियाँ सुहागिन की,
कलियाँ गुलाबन की आँखें खुली सबकी।
अवध किशोर उठि करिये कृपा की कोर,
आनि भयी भोर 'कान्त' टेरत है कब की ॥

१ पं० श्रीयज्ञनारायण मिश्र वहीं से प्राप्त।
२. वही।
३ वही।

(५)

कलि जात कुचलि कलुख कोटि टलि जात,
टलि जात मोह-मद मत्सर मचलि जात।
चलि जात चर्चा चहूँधा चतुराई माहि,
दलि जात दोख दारिद दहलि जात।
हलि जात पुन्य-तरु-सोर त्यो पताल लगि,
फलि जात कामना कलेवर बदलि जात।
दलि जात दोख-दुख 'कान्त' से कुसीलहूँ के,
भूलहूँ के काहु-मुख सम्भु जो निकलि जात।'[1]

अवधकिशोर प्रसाद 'कुशल'

आप गया-शहर के धामी-टोला मुहल्ले के निवासी श्रीविन्दश्वरीप्रसाद, बी० ए०, बी० एल्० के पुत्र थे। आपका जन्म सन् १८९३ ई० की २७ जनवरी को हुआ था।[2] अपनी आरम्भिक शिक्षा समाप्त करने के बाद आपने सन् १९०९ ई० मे गया जिला-स्कूल से इण्ट्रेंस को परीक्षा पास की। फिर, आपने सन् १९१२ ई० मे हजारीबाग के सेण्ट कोलम्बा कॉलेज से आइ० ए० और सन् १९१४ ई० मे कलकत्ता के सिटी कॉलेज से बी० ए० की परीक्षा पास की। तदनन्तर, सन् १९१७ ई० मे पटना लॉ कॉलेज से आपने लॉ की डिग्री लेकर गया मे ही वकालत करना आरम्भ कर दिया। आप तीन वर्षों तक गया म्युनिसिपैलिटी के अध्यक्ष भी रहे। पटना-विश्वविद्यालय ने आपको 'उर्दू बोर्ड ऑव स्टडीज' का सदस्य नियुक्त किया था। आपकी उर्दू-सेवा स्मरणीय है। अपनी उर्दू-शायरी के कारण आपका सम्मान बड़े-बडे शहरो मे हुआ। आपकी उर्दू लगभग हिन्दी ही थी। आपने अधिकतर नाटक ही लिखे थे। आपकी प्रकाशित रचनाओ मे 'छिपी कटारी'[3] और 'अनोखी बर्छी'[4] नाटक उल्लेखनीय है। आपके अप्रकाशित नाटको के नाम ये है—

---

१. 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही), पृ० ५४।

२. आपके सुपुत्र डॉ० मुरलीमनोहर प्रसाद (आजाद पार्क-पश्चिम, गया) से प्राप्त सूचना के आधार पर।

३. तिलक-प्रथा पर लिखित सामाजिक-नाटक।

४. अनमेल विवाह पर लिखित सामाजिक-नाटक।

१. चंचल कुमारी[१], २. अजामिल उद्धार[२] और ३. भूल पर भूल[३]। आप सन् १९४९ ई० के २९ अक्टूबर को परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

एक नये चक्कर मे अपने-आपको पाता हूँ मैं,
जब सरे मंजिल पहुँच जाता हूँ, खो जाता हूँ मैं।
रश्मे उलफत में निराला ये आखिर पाता हूँ मै,
वो नही होते मेरे उनका हुआ जाता हूँ मैं।
नाम है कुश्ता मेरा, कुश्ते की है मुझ में सिफ़त,
मर के जी उठता हूँ मैं, फिर जी के मर जाता हूँ।
जिन्दगी नाहक है लेकिन, सबको रहती है ख़बर,
मौत है बरहक मगर उसको ख़बर होती नही।[४]

(२)

जब अपना घर समझ रखा है बुलबुल ने कफस ही को,
ये खामोश रह सकती नही सैयाद के डर से।
हमारे जब्त ग़म ने ये असर अपना दिखाया है,
के खज़र खुद-ब-खुद अब गिर पड़ा दस्ते सितमगर से।
जफा का जोर है कितना, बफा का जोर है कितना,
जमाने में हुआ साबित तेरे खंजर मेरे सर से।
सुर्खरू कर दिया आते ही जहाँ मे इसने,
किस कयामत का है वल्लाह ! असर होली में।[५]

---

१. यह एक ऐतिहासिक नाटक है। इसकी रचना अपने तब की थी, जब आप आइ० ए० के विद्यार्थी थे।

२. पौराणिक नाटक।

३. सामाजिक नाटक।

४. गया-निवासी डॉ० मुरलीमनोहर प्रसादजी से प्राप्त।

५ वही।

अवधनन्दन

आप सारन-जिला के 'डेरनी' नामक स्थान के निवासी है। आपका जन्म २५ दिसम्बर, सन् १९०० ई० को हुआ था।[1] आपने विद्यालय-माध्यम से मैट्रिक तक की ही शिक्षा प्राप्त की। लगभग बीस वर्ष की अवस्था मे (सन् १९२० ई०) आप महात्मा गाँन्धी की पुकार पर राष्ट्रभाषा हिन्दी की सेवा करने की दृष्टि से मद्रास चले गये। प्रारम्भ के पाँच वर्षों तक आपने दक्षिण के 'मदनपल्ली', 'बरहमपुर', 'ईरोड', 'तिरुचि', 'मद्रास', आदि स्थानो मे घूम-घूमकर हिन्दी सिखाने का कार्य किया। तदनन्तर, दक्षिण-भारत हिन्दी-प्रचार-सभा मे क्रमशः परीक्षा-मन्त्री, साहित्य-मन्त्री तथा तमिलनाडु हिन्दी-प्रचार-सभा के प्रान्तीय मन्त्री की हैसियत से आपने कई वर्षों तक कार्य किया। अभी कुछ समय पूर्व तक आप दक्षिण भारत हिन्दी-प्रचार-सभा (त्यागरायनगर, मद्रास-१७) के संयुक्त मन्त्री-पद पर कार्य कर रहे थे। 'हिन्दी-पत्रिका' के सम्पादक के रूप मे भी आपने कार्य किया। इन दिनो आप पटना मे ही निवास कर रहे हैं।

आप तमिल-भाषा के अच्छे जानकार है। दक्षिण मे आज जो हिन्दी का व्यापक प्रचार है, उसमे आपका अवदान बडा महत्त्वपूर्ण रहा है। आपने दक्षिण की आवश्यकता के अनुसार पर्याप्त (बालोपयोगी एव प्रचारोपयोगी) साहित्य तैयार कर हिन्दी की प्रभूत सेवा की है। आपके सत्प्रयत्न एव शुभ प्रेरणा से बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् ने तेलुगु के 'रंगनाथ-रामायण' और तमिल के 'कम्ब रामायण' का हिन्दी-अनुवाद प्रकाशित किया है। उक्त ग्रन्थो के सम्पादन मे भी आपका कृपापूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ है।[2] आपके द्वारा लिखित अनेक बालोपयोगी एवं प्रचारोपयोगी[3] पुस्तको के अतिरिक्त प्रमुख पुस्तके उल्लेखनीय हैं—

---

१. आपके ही द्वारा प्राप्त सामग्री के आधार पर। आपके प्रस्तुत परिचय को तैयार करने में 'हिन्दी-सेवी-संसार' (वही, पृ० २८). 'बिहार-अब्दकोष', (वही, पृ० ६५०), तथा दक्षिण भारत हिन्दी-प्रचार-सभा, त्यागरायनगर, मद्रास-१७ से प्राप्त सामग्री से भी सहायता ली गई है।

२. (क)....''हम दक्षिण-भारत के गाँव-गाँव में हिन्दी की धूनी रमानेवाले श्रीअवधनन्दनजी के कृपापूर्ण सहयोग और साहाय्य को शब्दों में बाँधना नहीं चाहते। इसमें रचमात्र अत्युक्ति नहीं कि उनके प्रयत्न का ही यह परिणाम है कि हम इस अनुवाद को हिन्दी-जगत् के समक्ष ला सके हैं।" —देखिए, 'रंगनाथ-रामायण' (श्री एस० सी० कामाक्षि राव, सन् १९६१ ई०), पृ० ४ (वक्तव्य) तथा पृ० १८ (प्रस्तावना)।

(ख) ''परिषद् के अनुरोध पर इन्होंने (श्रीअवधनन्दनजी) ने तेलुगु और तमिल दोनों की रामायणों का अनुवाद करा देने का जिम्मा लिया . . . और इसके सम्पादन का भार स्वय सँभाला।' —देखिए, 'कम्ब-रामायण' (भाग-१, श्री न० वि० राजगोपालन्. सन् १९६३ ई०, पृ० ख (वक्तव्य)।

३. इस कोटि की पुस्तकों में प्रमुख के नाम ये हैं—१ 'हिन्दी-स्वयंशिक्षक' (लेखक के कथनानुसार इसकी १ करोड़ प्रतियाँ अभी तक बिक चुकी है)। २. 'हिन्दी-अँगरेजी स्वयंशिक्षक', ३ 'हिन्दी-शिक्षण-पद्धति', ४ 'हिन्दी-इगलिश-सम्बोधिनी', ५. 'बालकृष्ण' ६. 'कवकुश' तथा ७ 'बच्चों की किताब।'

१. 'वीर दुर्गादास की जीवनी',[1] २ 'भगवान् बुद्ध की जीवनी',[2] ३. 'तमिल-साहित्य एवं संस्कृति'[3] तथा ४. 'दक्षिण भारत का सांस्कृतिक परिचय' ।

उदाहरण

(१)

उपर्युक्त चारों प्रान्तों (तमिल, तेलुगु, कन्नड और मलयालम) में रामकथा का प्रचार है और चारो भाषाओ में रामायण की रचना हुई है। किन्तु मलयालम रामायण एक आधुनिक रचना है और वाल्मीकि-रामायण का छायानुवाद-मात्र है। मलयालम रामायण रामानुजन् एषुत्तच्चन् नामक किसी कवि की रचना है, जो ईसवी-सन् १६वी और १७वी शती के मध्य वर्त्तमान थे। उन्होने अपनी रामायण अध्यात्मरामायण के आधार पर लिखी है, जिसकी भाषा संस्कृत-गर्भित है। कन्नड की सबसे प्राचीन रामायण 'पंप-रामायण' के नाम से प्रसिद्ध है और 'पंप' नामक एक जैन कवि की रचना है। पंप ने रामकथा मे बहुत हेर-फेर किया है और जैन दृष्टिकोण से उसकी रचना की है। अतएव यह निश्चय हुआ कि इस समय उन दोनों रामायणों का अनुवाद स्थगित रखा जाय और तेलुगु से रंगनाथ रामायण तथा तमिल से कंब-रामायण का अनुवाद कराया जाय। ये दोनो रामायण वाल्मीकि-रामायण की कथा के आधार पर लिखे गये है, किन्तु दोनों की रचना में पर्याप्त मौलिकता प्रदर्शित की गई है।[4]

(२)

दुर्गम विंध्य पर्वत को लघाँकर और गहन वनों को पारकर सुदूर दक्षिण भारत में आर्य संस्कृति का प्रचार करनेवाले महर्षि अगस्त्य का नाम चिरस्मरणीय रहेगा। आज से लगभग ढाई हजार वर्ष

---

१. सन् १९५३ ई० में द० हि० प्र० सभा द्वारा प्रकाशित ।
२. सन् १९५८ ई० में द० हि० प्र० सभा द्वारा प्रकाशित ।
३. सन् १९५८ ई० में सस्ता-साहित्य-मण्डल, दिल्ली से प्रकाशित ।

पूर्व, जब दक्षिण भारत घने जंगलों से आवृत्त था, जब उत्तुंग विध्य पर्वत दक्षिण का मार्ग रोक कर खड़ा था, जब एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचने के लिए कोई सुगम मार्ग या साधन नही था, जब दक्षिण के वन-पर्वत असंख्य वन्य-पशुओं और असभ्य तथा नर-रक्त-पिपासु जगली जातियों से संकुल थे, उस समय थोडे-से आर्य मिशनरिओ का हजारो मील की यात्रा तय करके उत्तर से दक्षिण में आगमन एक रोमाचकारी घटना है। हमलोग कोलंबस, मार्कोपोलो आदि की साहसिक यात्राओं का वर्णन पढकर स्तंभित रह जाते है, किन्तु अपनी संस्कृति के प्रचार के लिए साहसपूर्ण यात्रा करनेवाले अतीत काल के उन आर्यो की कथाए इतिहास के अधगर्त में अदृश्य पड़ी है और उनकी ओर हमारा ध्यान तक नहीं जाता। इन आर्य मिशनरियों ने हजार मील की यात्रा किस अवस्था मे की, किनकिन कठिनाइयों का सामना करते हुए वे आगे बढते गये और किस तरह से एक अज्ञात देश और वहाँ की अपरिचित जातियों के बीच इन्होंने अपने धर्म तथा संस्कृति का प्रचार किया, इसकी कथा क्या कम विस्मयकारी है? जिन महापुरुषो ने यह अलौकिक तथा अद्भुत कार्य किया उनमें महर्षि अगस्त्य का नाम सर्वप्रथम उल्लेखनीय है। वे ही सबसे पहले आर्य थे जिन्होने विध्य पर्वत को पार करके, दंडकारण्य से होते हुए सुदूर दक्षिण की यात्रा की और मार्ग में इल्वल तथा वातापी नामक दो दैत्यों का वधकर कन्याकुमारी तक जा पहुँचे। उन्होंने दक्षिण की तमिल जातियों के साथ तादात्म्य स्थापित किया और वहाँ के निवासियों के बीच, आर्य संस्कृति तथा आर्य कथा-कहानियों का प्रचार किया, तमिल भाषा का अध्ययन किया और उस भाषा का एक वृहत् व्याकरण रचा जो 'अगत्यम्' नाम से प्रसिद्ध है। उन्होंने तमिल लोगों को अनेक आर्य ग्रन्थों और शास्त्रों का ज्ञान दिया

और तमिल भाषा एवं साहित्य की अभिवृद्धि के लिए मदुरा में 'संघम' की स्थापना की।[1]

अवधनारायण

आप दरभगा-जिला के 'शुभंकरपुर' ग्राम के निवासी थे। आपकी जन्म-तिथि अगहन बदी ११ बुधवार, स० १९४२ वि० (सन् १८८५ ई०) है।[2] आपने सन् १९०५ ई० मे इण्ट्रेंस की परीक्षा पास की। आप दरभगा को सब-जजी मे सिरिश्तेदार थे। आपकी साहित्यिक रचना का काल सन् १९०७ ई० से प्रारम्भ होता है। साहित्य की ओर बचपन से ही आपकी अभिरुचि थी। आप बडे सरल स्वभाव के थे। आपकी साहित्य-रचना का श्रीगणेश अँगरेजी से आरम्भ हुआ। केवल १७ वर्ष की अवस्था मे आपने अँगरेजी मे 'डायमण्ड रेड' नामक उपन्यास की रचना की थी। इस उपन्यास को जिसने देखा वही चकित रह गया। किन्तु, मातृभाषा हिन्दी का प्रेम जब आपके हृदय मे उभरा, तब आपने उक्त उपन्यास की पाण्डुलिपि ही जला दी। इसके बाद आपने हिन्दी मे लिखना आरम्भ किया। आपने कथा-साहित्य की ही रचना की। आपकी रचनाओ में दो—'विमाता' (उपन्यास) और 'झलक'[4] (कहानी-संग्रह) ही प्रकाशित है। इनमे 'विमाता' के अनेक सस्करण हुए। इससे इसकी अत्यधिक लोकप्रियता सिद्ध है।[5] आप 'सेकेण्ड-हैण्ड लेडी' नामक एक और बृहत् उपन्यास की रचना कर रहे थे, जिसका दूसरा नाम 'सगही बहू' है। आप उसे पूरा न कर सके। इसकी अधूरी पाण्डुलिपि आपके ज्येष्ठ पुत्र श्रीरामावतार प्रसाद (शुभकरपुर दरभंगा) के पास आज भी सुरक्षित है। आज सं० २०१२ वि० (सन् १९५५ ई०) मे दिवगत हो गये।

---

१ 'तामिल साहित्य और सस्कृति' (श्रीअवधनन्दन, सन् १९५८ ई०), पृ० २१४।

२ श्रीजगदीश्वरी प्रसाद लिखित 'विमाता' के परिचय से, पृ० ७। आपके परिचय की शेष सामग्री 'हिन्दी-सेवी-संसार (वही, सन् १९५१ पृ० १०-११) तथा 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ५६३) से ली गई हैं। आपके पूर्वज तख्तमलजी तत्कालीन दिल्लीश्वर के बिहारप्रान्तीय सूबेदार के दीवान थे।

३ पुस्तक-भण्डार, पटना से प्रकाशित।

४. पुस्तक-भण्डार, पटना से प्रकाशित।

५. 'विमाता' के नवीन संस्करण का सस्कार-परिष्कार स्वयं आचार्य श्रीशिवपूजन सहायजी ने काशी में किया था। 'झलक' की कहानियों का सम्पादन भी उन्होंने ही किया था। आपसे आचार्यजी की आपसी व्यक्तिगत भेंट और मित्रता थी।

उदाहरण

(१)

विष यदि अधिक-से-अधिक मधु मे मिला दिया जाय, तो भी सब विष ही हो जाता है। साँप का बच्चा कैसा भी सुन्दर हो, पर काटने के सिवा कभी वह कोई उपकार नही करता। खोटी स्त्री कैसा भी प्रेम दिखलावे, पर अन्त में दुःख देने के सिवा कभी सुख देनेवाली नही होती। इसी प्रकार विमाता यदि कैसी भी दयावती और ज्ञानी हो, अपनी सौतेलो सन्तान को देखकर अवश्य कुढती है—उसे देख उसकी आँखे चढ आती है—उसे दु.ख देने से यदि कोई लाभ भी न हो, तथापि दु ख दिया ही करती है। पुरुष कितना ही ज्ञानी क्यों न हो, अपनी नई स्त्रो के वश अवश्य हो जाता है। वश में होते ही उसकी आज्ञाएँ प्राय. वेदवत् मानता है। पहली स्त्री के बालक-बालिका से चाहे कितना ही स्नेह क्यो न हो, पर नई स्त्री के वश में होकर उनको अवश्य दु.ख दिया करता है। यही स्वाभाविक है। इसके विपरीत बहुत कम विमाताएँ होती है—सौ में एक दो, जैसी सुभद्रा स्वयं थी। ऐसे पुरुष भी कम है, जो अपनी स्त्री के वश न होकर अपनी स्वर्गवासिनी स्त्री की सन्तान को विमाता की दुष्टता और अत्याचार से बचाकर अपनी नव पत्नी पर आँखें लाल करते हैं।'[1]

(२)

गोपाल ताँती एक गरीब मजदूर है। इस साल जाड़े में उसने काबुलियों से एक रुपये में एक गंजी चैत के करार पर उधार ली थी। शीत के प्रकोप और पेट-भर अन्न के अभाव के कारण उसका दमा

१. 'विमाता' (अवधनारायण, स० १९८५ वि०), पृ० २०-२१।

फिर उखड गया। इसलिए न वह मजदूरी ही कर सका और न काबुलियों का रुपया ही अदा कर सका। उसको उधार भी कौन दे? आधे से अधिक बैसाख भी बीत गया। रुपया न दे सका। आज चार काबुली गाली-गलौज करते हुए उसके झोपड़े में घुस पड़े। उसे जबर-दस्ती खीचकर बाहर ले आये। वहाँ गाँव के बहुत-से लोग मौजूद थे। किसी से कुछ करते-धरते नही बना। ऐसा करुणाजनक दृश्य देखकर राघव का हृदय काँप गया। सोचने लगा—"हाय एक रुपये के लिए इस रोग-पीड़ित भूखे गरीब की आबरू चली गई। इतने लोग यहाँ इकट्ठे है, किसी के दिल में दया नही।[१]

अवधनारायण सिंह राठौर 'अवध'

आप पटना-जिला के 'मनेर' नामक स्थान के निवासो श्रीचन्द्रदीप सिंहजी 'राठौर' के सुपुत्र है।[२] आपका जन्म सं० १९५० वि० (सन् १८९३ ई०) की आश्विन कृष्ण-तृतीया (गुरुवार) को हुआ था।[३] जब आप तीन वर्ष के थे, तभी आपके पिता चल बसे और आपकी शिक्षा का भार आपकी माता पर आ पड़ा। सन् १९०९ ई० मे मिड्ल पास कर कई वर्षों तक आप बेकार रहे। फिर सन् १९१५ ई० मे आप स्थानीय मिड्ल स्कूल मे शिक्षक के पद पर नियुक्त हुए।[४] सन् १९१७ ई० मे आपने गुरु ट्रेनिंग की परीक्षा पास की। अनेक वर्षों तक उक्त स्कूल मे ही विभिन्न पदो पर कार्य करने के उपरान्त सन् १९३८ ई० मे आप हेड पण्डित के पद पर नियुक्त हुए। उक्त पद पर सन् १९३९ ई० तक कार्य करने के बाद आपने अवकाश ग्रहण कर लिया। तदनन्तर, आपने मनेर मे ही स्थापित हिन्दी-माध्यमिक विद्यालय, मे अवैतनिक प्रधानाध्यापक के पद पर काम किया और साथ-ही-साथ उस संस्था के मन्त्री भी बने रहे। उसी विद्यालय मे आपने रामायण परीक्षा की व्यवस्था भी की। आप अनेक वर्षों तक पटना-जिला क्षत्रिय महासभा के सभापति एव मनेर ग्राम-पचायत के मुखिया भी रहे। आपने आर्यमित्र-प्रेस (बिहारशरीफ) से

---

१ 'झलक' (अवधनारायण स० २००६ वि०), पृ० ८८ ('मीठी लाज' शीर्षक कहानी से)।

२ आपके पितामह का नाम श्रीजयद्रथ था, जो सन् १८५७ ई० के सिपाही-विद्रोह में अँगरेजों द्वारा वीरगति को प्राप्त हुए।

३ आपके द्वारा प्रेषित सामग्री के आधार पर।

४. इसी वर्ष आपने मनेर में 'श्रीसरस्वती-सदन' नामक एक पुस्तकालय की स्थापना की थी, उसके नौ वर्षों तक आप ही मन्त्री रहे। यह पुस्तकालय बिहार-प्रान्त के देहाती पुस्तकालयों में शायद सबसे पुराना है।

श्रीरत्नचन्द्र छत्रपति के सभापतित्व मे 'नालन्दा'[१] नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन भी स० १९९२ वि० मे किया था। आपकी प्रकाशित अप्रकाशित पुस्तको का विवरण इस प्रकार है :—प्रकाशित पुस्तके – (१) श्रीलक्ष्मण जीवनी[२], (२) श्रीसमइया-सगीत[३] (दो भागो मे)[४], (३) कलितकीर्त्तन, (४) सुतीक्ष्ण प्रेम परिचय[५]। अप्रकाशित-पुस्तकें—(१) नाम-कीर्त्तन, (२) प्रार्थना-कीर्त्तन, (३) लीला-कीर्त्तन, (४) छवि-कीर्त्तन, (५) उपदेश-कीर्त्तन, (६) केवट-कृपालु (७) व्याकरण-बिरवा। इनके अतिरिक्त दो सौ से ऊपर फुटकर पद भी आपके रचे मिलते हैं। आप 'मनेर' का एक इतिहास भी लिख रहे थे, जो सम्भवत पूरा न हो सका।

उदाहरण

(१)

नर क्यों नश्वर तन अभिमान
मल से निकला मलवाहक है, तापर करत गुमान।
मलि मलि धोओ सुख से सोओ, करत नही कुछ्र कान।
रहिहै ना यह संग न जइहैं, जब चल बसिहे प्रान।
साधन हरिसेवा का करलो, जग भल कहे सुजान।
नरतन की शोभा याही मे, गावत वेद पुरान।
'अवध' विना श्रीराम भक्ति के, नहि मिलिहैं कल्यान॥[६]

(२)

वीरों की प्रिय जन्मभूमि में, कायरता अपनाना क्या?
रामकृष्ण का वंश कहाकर, लाघवता दिखलाना क्या?
अकर्मण्य जीवन धारन कर, मानव मान मिटाना क्या?
निसिदिन पड़े प्रजंक-अंक में, कहो भला इठलाना क्या?

---

१. यह पत्रिका नौ महीने के बाद बन्द हो गई।
२ सं० १९९३ वि० में प्रकाशित।
३. प्रथम झूलन-प्रधान और द्वितीय सम्य होली-प्रधान। दोनों स० १९९४ वि० में प्रकाशित।
४. स० १९९६ वि० में प्रकाशित।
५ स० २००६ वि० में प्रकाशित।
६. आपके द्वारा प्रेषित 'जीवन-क्या' शीर्षक कविता से।

कर्म-क्षेत्र से पीछे रहकर, यारों फिर पछताना क्या ?
बदल सके नहीं कम कलेवर, व्यर्थ भला फिर बकना क्या ?
पर हित कठिन प्रहार बज्र-सा, सहा नहीं तो सहना क्या ?
भूखे रह भूखों को रोटी, दिया नहीं तो देना क्या ?
उठो वीर! निज विरद सँभालो, कर्म करो है रोना क्या ?
रो रो मरने से दुनियाँ में, मरना भला है जीना क्या ?[1]

अवधप्रसाद शर्मा

आप पटना-जिला के राघवपुर (पो० बिहटा)-निवासी प० रघुनाथप्रसाद मिश्र के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९५२ वि० (सन् १८९५ ई०) की कार्त्तिक कृष्ण-त्रयोदशी को हुआ था।[2] आपकी आरम्भिक शिक्षा आपकी माता के द्वारा घर पर ही हुई। उसके बाद आप पहले गया और फिर काशी मे अध्ययन के लिए भेजे गये। उक्त स्थानो मे अध्ययन के परिणामस्वरूप आपने 'काव्यतीर्थ', 'आयुर्वेदाचार्य', 'आयुर्वेदरत्न' आदि उपाधियाँ प्राप्त की। स० १९८५ वि० से सं० १९८८ वि० तक आपने सस्कृत तथा हिन्दी-भाषाओ मे प्रकाशित मासिक पत्रिका 'साहित्य-सुधा' का सम्पादन किया था। आप सस्कृत के षड्दर्शन के विद्वान् थे। सस्कृत मे आपकी काव्य-रचनाएँ विशेष रूप से पाई जाती है। व्रजभाषा मे आप सन् १९१३ ई० मे ही काव्य-रचना करने लगे थे। आपकी कोई प्रकाशित पुस्तकाकार रचना नही मिलती। आपने कालिदास के 'कुमारसम्भव' का हिन्दी-पद्यानुवाद किया था, जो अप्रकाशित ही रह गया। आप सन् १९६२ ई० मे स्वर्ग सिधारे।

उदाहरण

(१)

दूर रहो हमसे तुम षट्पद, झूठी न प्रीति हमे दिखलाओ।
रात बिताई जहाँ तुमने फिर, जाओ वहीं सुख चैन उड़ाओ।

---

१ आपके द्वारा प्रेषित 'समस्या-गीत' के दूसरे भाग से।
२ आपके द्वारा ही प्रेषित सामग्री के आधार पर।

मेरे समीप न मंजुल शब्द करो, तुम तान उसी को सुनाओ।
कैरविणी मधु गंध बिभूषित, वंचक व्यर्थं हमे न लुभाओ।

(२)

अरण्य धान्याञ्जलि से सुपोषित
मृगादिको से गिरिजा हिली मिली
लगी मिलाने उनके सुनेत्र से
सहेलियों के सह स्वीय नैन को॥

× × ×

स्वयं गिरे पल्लव भोज्य है जहाँ
वही तपस्या महती कही गई।
तजा उसे भी उसने अतः प्रिया
उन्हे अपर्णा कहते पुराविद॥

× × ×

शरीर को संगति से महेश के।
वही चिताभस्म विशुद्धि हेतु है॥
वही गिरै भूपर जो सुनृत्य में।
उसे चढ़ाते सुरलोग शीष पै॥

× × ×

विवाद छोडो तुम जो कहो वही।
सही सभी है वह दोष पूर्ण हैं॥
लगा उन्ही में मन चित है सदा।
न देखता प्रेम कलंक को कभी।[२]

*

१ आपके द्वारा विभाग में प्रेपित सामग्री से।
२ विभाग में सुरक्षित अप्रकाशित 'कुमारसम्भव' के हिन्दी-अनुवाद से – १४, २७ ७८, तथा ८१ सख्यक रचनाएँ।

अवधबिहारी शरण

आप शाहाबाद-जिला के दल्लूपुर-ग्राम (भोजपुर-परगना) निवासी बाबू राजारामजी के पुत्र थे। आपका जन्म स० १९४८ वि० (सन् १८९१ ई०) की वैशाख शुक्ल तृतीया को हुआ था।[१] आपने सन् १९०७ ई० मे आरा जिला-स्कूल से 'इण्ट्रेंस' की परीक्षा और सन् १९११ ई० मे पटना-कॉलेज से बी० ए० की परीक्षा पास की। फिर, सन् १९१३ ई० मे कलकत्ता-विश्वविद्यालय से इतिहास मे एम्० ए० और सन् १९१४ ई० मे बी० एल्० हुए। इनके पूर्व सन् १९११ ई० में ही आपने महामहोपाध्याय प० रामावतार शर्मा के शिष्य के रूप मे, बिहार-सस्कृत-संजीवन-समिति की मध्यमा (साहित्य) परीक्षा पास कर ली थी। तत्पश्चात् सन् १९१४ ई० मे, एक वर्ष बी० एन्० कॉलेज मे लेक्चरर रहकर सन् १९१५ ई० मे आरा मे वकालत करने चले गये। सन् १९३८ ई० मे आप आरा के सरकारी वकील के पद पर नियुक्त कर लिये गये। सन् १९४८ ई० मे आप हाईकोर्ट मे वकालत करने के लिए पटना चले आये। सन् १९५१ ई० मे आप सुप्रीम कोर्ट के सीनियर एडवोकेट हो गये। आपको गगास्नान और हरिनाम-सुमिरन मे विशेष अनुराग था। आप महामहोपाध्याय प० सकलनारायण शर्मा की प्रेरणा और प्रोत्साहन से साहित्य-सेवा की ओर मुडे। अपनी साहित्य-सेवाओ के चलते आप आरा नागरी-प्रचारिणी सभा के 'उप-सभापति'-पद को बहुत दिनो तक सुशोभित करते रहे। एक सम्पादक के रूप मे आप 'प्रेमभक्ति-सत्संग' के मुख्यपत्र 'प्रेमाभक्ति-प्रचारक' से भी सम्बद्ध रहे।

आपके द्वारा लिखित लेख नियमित रूप से खड्गविलास प्रेस, पटना द्वारा प्रकाशित प्रसिद्ध मासिक 'शिक्षा' तथा 'प्रेमाभक्ति-प्रचारक' मे प्रकाशित होते रहे। आपकी पुस्तकाकार रचनाओ मे 'प्रमुख मेगास्थनीज का यात्रा-विवरण' तथा 'श्रीनामरामामृत है'। इनके अतिरिक्त आपकी अप्रकाशित रचनाओ मे 'रूप-वन्दना' और 'रामचरितमानस के बाल-काण्ड की टीका' है। ये दोनो पुस्तके अधूरी ही रह गई। आप सन् १९६० ई० के ३ अगस्त (एकादशी) को पटना मे स्वर्गवासी हुए।

उदाहरण

(१)

सबसे बड़ा नगर भारतवर्ष मे पाटलिपुत्र है। यह प्राच्य लोगों के राज्य में है। यह गङ्गा तथा हिरण्यवाह के सङ्गम पर स्थित है। गङ्गा सब नदियों से बड़ी है और हिरण्यवाह (Erannoboao) भारत-

---

१ आपके द्वारा प्रेषित सामग्री के आधार पर। इसके अतिरिक्त 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६५३) तथा 'हिन्दी-सेवी ससार' (वही, पृ०११) से भी प्रस्तुत परिचय-लेखन में सहायता ली गई है।

वर्ष की सबसे बड़ी नदियो मे तृतीय है, तथापि अन्य देश की बड़ी से बड़ी नदियो से भी बड़ी है। किन्तु यह गङ्गा से छोटी है, जिसमे यह गिरती है। मेगास्थनीज कहता है कि इस नगर की बस्ती बड़ी लम्बी थी। दोनो ओर अस्सी स्टेडियम तक यह फैली हुई थी। इसकी चौड़ाई पन्द्रह स्टेडियम थी। जो खाई इसके चतुर्दिक थी, वह छ: सौ फीट चौड़ी और तीस हाथ गहरी थी। इसकी भीत पर पाँच सौ सत्तर मीनारे (towers) थी और उसमे चौसठ द्वार बने थे।[1]

(२)

वैज्ञानिक बुद्धि कुतूहल और अश्रद्धा से उत्पन्न होती है। बुद्धि की धर्म पराप्रवृत्ति वैज्ञानिक प्रवृत्ति से तत्वत. दूसरी है। धर्म में जो बाते लिखी है उन्हे निष्ठापूर्वक मानना ही उस धम को स्थिति देता है। यदि उसके सिद्धान्तों पर तर्क-वितर्क होने लगे तो कितने निर्विवेक मत मतान्तरों का नाश हो जाय और तब विज्ञान और धर्म का एक ही नियम हो जाय। विज्ञान किसी सिद्धान्त को बिना साबित किए नही मानता। धर्म अपने सिद्धान्तों को मानकर उनसे लौकिक आचार व्यवहार के नियमों का निर्णय करता है। विज्ञान विवेक पर स्थित है—धर्म श्रद्धा पर। विज्ञान प्रथमतः सृष्टि के अनन्त विभेद के प्रति एकत्व का इस रचना के अद्भुत विभेद से सम्मिलन करता है। सत्य-विज्ञान भी प्रत्येक दृश्य का ज्ञान प्राप्त करके इस दर्शन विभेद मे एकत्व ढूँढ़ता है, पर धर्म के और इसके नियमों में बहुत अन्तर है।[2]

१. 'मेगास्थनीज का भारत-विवरण' (श्रीअवधविहारी शरण, प्रकाशन-काल नही), पृ० ३७-३८।
२. 'साहित्य-पत्रिका' (वर्ष ६, अक २, मई, सन् १९१४ ई०), पृ० १-२।

अवधेशप्रसाद द्विवेदी

आप सारन-जिला के बढई-टोला ग्राम (बरहोगाकोठी) के निवासी पं० देवनन्दन द्विवेदी के पुत्र है। आपका जन्म सं० १९५६ वि० (सन् १८९९ ई०) की पौष शुक्ल-पूर्णिमा को हुआ था।[1] आपने कलकत्ता सस्कृत-समिति से सन् १९२४ ई० मे 'काव्यतीर्थ' की उपाधि प्राप्त की थी। फिर, आपने काशी भारत धर्म-महामण्डल से 'विद्याभूषण' की उपाधि प्राप्त की। इन उपाधियो के प्राप्त करने के बाद आप बलिया-जिला के श्रीपाराशर-ब्रह्मचर्याश्रम के 'प्रबन्धक' पद पर नियुक्त हुए। वही से आपने सन् १९२२ ई० के राष्ट्रीय आन्दोलन मे सहयोग किया। आप श्रीभारत-धर्म महामण्डल द्वारा सचालित 'सूर्योदय' नामक सस्कृत मासिक-पत्र के तीन वर्षो (स० १९९४ वि० से स० १९९७ वि०) तक सहकारी सम्पादक और फिर उसी पत्र के दो वर्षो (स० १९९८ वि० से स० २००० वि०) तक सम्पादक रहे। उक्त मण्डल द्वारा, उस अवधि मे हिन्दी मे जो भी धार्मिक ग्रन्थ प्रकाशित हुए, उनका प्रकाशन एवं सशोधन आपके द्वारा ही होता रहा। आपकी सस्कृत-रचनाएँ 'सूर्योदय' तथा 'सुप्रभातम्' मे यदा-कदा प्रकाशित हुआ करती थी। हिन्दी-भाषा मे लिखित आपकी धार्मिक एव सास्कृतिक रचनाएँ मुख्य रूप से काशी से प्रकाशित मासिक 'आर्यमहिला' मे छपती थी। आपकी पुस्तकाकार कोई भी रचना प्रकाशित देखने को नही मिली।

उदाहरण

'आर्यमहिला' हिन्दी-संसार में करीब सतरह वर्षों से नारी-जाति मे उन्नति के लिए प्रयत्न करती आ रही है। हिन्दी-जगत् में बहुत सी पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित होती है। परन्तु, धार्मिक जगत् में महिला-संसार को अग्रसर करना प्राचीन आर्य-संस्कृति को सुरक्षित रखते हुए नारी जाति मे धार्मिक शिक्षा द्वारा उसकी उन्नति सम्पादन करना, इसका प्रधान लक्ष्य है। बड़ी प्रसन्नता की बात है कि, अब यह अठारहवे वर्ष मे पदार्पण कर रही है। हम इस शुभ अवसर पर भूतभावन श्रीविश्वनाथ के चरणों में प्रार्थना करते है कि, इसकी दिनोंदिन उन्नति हो, और अपने सिद्धान्त पर विपरीत वातावरण में भी दृढ़ता के साथ अग्रसर हो।[2]

★

---

१ आपके द्वारा प्रेषित सूचना के आधार पर।

२. 'आर्यमहिला' (वर्ष १८, सख्या २, मई, सन् १९३५ ई०) के 'नव वर्ष पर आये आशीर्वाद और बधाइयाँ' से।

अक्षयवट मिश्र 'विप्रचन्द्र'

आप शाहाबाद-जिला के डुमरॉंव नामक प्रसिद्ध ग्राम के निवासी थे। आपके पिता का नाम प० राजेश्वर मिश्र[१] था। आपका जन्म स० १९३१ वि० (सन् १८७४ ई०) की ज्येष्ठ शुक्ल-द्वादशी को हुआ था। पाँच वर्ष की अवस्था मे आपके पिताजी ने आपका अक्षरारम्भ कराया। आगे चलकर उनसे 'लघुकौमुदी' और 'अमरकोष' पढने के बाद आपने महाराज राधाप्रसाद सिंहजी के व्यास निखिलशास्त्रनिष्णात पं० श्रीचन्द्रमणि पाण्डेयजी से 'सिद्धान्तकौमुदी' पढना प्रारम्भ किया। धीरे-धीरे आपने शब्दरत्न-मनोरमा, परिभाषेन्दुशेखर, शब्देन्दुशेखर, भूषण, मजूषा, नवाह्निकमहाभाष्य आदि भी उन्ही से पढ़े। व्याकरण के बाद आपकी इच्छा काव्य पढने की हुई। डुमरॉंव राज हाइ इंगलिश स्कूल के हेड-पण्डित श्रीशिवबालक त्रिपाठी से आप काव्य पढने लगे। क्रमश: रघुवश, कुमारसम्भव, मेघदूत, किरातार्जुनीय, शिशुपालवध, साहित्यदर्पण आदि आपने पढ़े। जब हिन्दी-काव्य-रचना की ओर प्रवृत्ति हुई, तब आपने प० राधावल्लभ जोयसी 'विप्रवल्लभ' से श्रुतबोध-पिगल, जगद्विनोद, भाषाभूषण और नागराज-रचित प्राकृतपिगल पढा। छन्दोरचना की प्रक्रिया भी आपने उन्ही से सीखी।[२]

आरम्भ मे आपने काशी[३] और अयोध्या मे रहकर संस्कृत पढी थी तथा मालवा के जैन विद्वान् राजेन्द्र सूरि के साथ कई साल रहकर 'अभिधान राजेन्द्र-कोष' का निर्माण किया था। मालवा से लौटने पर कई साल आप कलकत्ता मे भी रहे थे। वहाँ विशुद्धानन्द सरस्वती विद्यालय मे रहकर आपने बडी प्रतिष्ठा पाई। कुछ दिन 'भारतमित्र' के सम्पादक स्वनामधन्य पत्रकार बालमुकुन्द गुप्त के सहकारी भी रहे। उन्ही दिनो आपने बॅगला और राजस्थानी-भाषा सीखी। आप कई प्रान्तो की भाषा स्वाभाविक रीति से बोलते थे।

विशुद्धानन्द विद्यालय से हटकर अध्यापक होकर आप मेरठ कॉलेज (उत्तरप्रदेश) मे चले आये। किन्तु, वहॉ कुछ ही दिनो तक कार्य करने के बाद आप पुन: कलकत्ता के गवर्नमेण्ट हिन्दू-स्कूल मे अध्यापक हो गये। एक वर्ष के बाद आप डुमरॉंव-महाराज के दत्तक राजकुमार श्रीनिवासप्रसाद सिंह (मूल नाम जगबहादुर सिंह) के निजी शिक्षक के पद पर नियुक्त होकर राँची चले आये, जहाँ आप चार वर्षो तक रहे।[४] सन् १९१३ ई० की

---

१. आपके पूज्य पिताजी का जन्म उसी साल हुआ, जिस साल आपके दादाजी राजेश्वरजी के पुजारी बनाये गये थे। इसी कारण ठाकुरजी का ही नाम उनका नाम रख दिया गया।
—'आत्मचरितचम्पू' (प्रथम संस्करण), पृ० ३५।

२. वही, पृ० ४३-४४। आपके प्रस्तुत परिचय-लेखन में 'जय-ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ५४३-४४, पृ० ६१५ तथा पृ० ६५०), 'हरिऔध-अभिनन्दन-ग्रन्थ' (सं० १९९३ वि०, बाबू ब्रजनन्दन सहायजी का लेख, पृ० ५४६), 'मिश्र बन्धु-विनोद' (वही, पृ० २३४-३५) आदि के अतिरिक्त स्व० बाबू शिवनन्दन सहाय की हस्तलिपि में सुरक्षित आपसे सम्बद्ध सामग्री का भी उपयोग किया गया है।

३. काशी में रहकर पढने का खर्च आपको डुमरॉंव-राज्य से मिलता था। वहाँ आप क्वीन्स कॉलेज में पढते थे। म० म० तात्याशास्त्री (श्रीरामकृष्ण शास्त्री) के आचार्यत्व में वहाँ आपने शीघ्र ही बहुत ज्ञान अर्जित कर लिया।

४. उस समय डुमरॉंव-राज्य के राजमन्दिर में आपके पिता प्रधान पुजारी थे।

पहली जनवरी से आपने पटना के ट्रेनिंग स्कूल मे कार्य करना आरम्भ किया। दो वर्षो के बाद, थिकेट साहब के प्रयत्न से आपको पटना-कॉलिज की प्रोफेसरी मिली।[1] वहाँ सस्कृत-हिन्दी-प्राध्यापक के रूप मे, छात्र समाज मे आपको यथेष्ट प्रतिष्ठा मिली। सन् १९१९ ई० मे, पटना मे 'न्यू कॉलिज' के नाम से एक नया कॉलेज खुला। इसमे पटना-कॉलिज के कई प्राध्यापको के साथ आप भी 'सीनियर प्रोफेसर' बनाकर भेजे गये। सन् १९२७ ई० मे यह कॉलेज तोडकर फिर पटना-कॉलेज मे मिला दिया गया। तब आप भी पूर्ववत् अपने पद पर चले आये। उक्त पद पर आप अन्त तक रहे। बाईस वर्षों तक सरकारी नौकरी करके सन् १९३४ ई० के ६ दिसम्बर को आपने अवकाश-ग्रहण किया। अपने प्राध्यापक-काल मे आपने अनेक अँगरेजो को सस्कृत और हिन्दी पढाकर कीर्ति और प्रतिष्ठा पाई। आप श्रीकृष्ण के अनन्य भक्त और शृंगार रस के बडे प्रेमी थे। आपकी स्मरण शक्ति भी बडी तीक्ष्ण थी। आपको विभिन्न कवियो की असंख्य समस्यापूर्त्तियाँ याद थीं। वाल्मीकीय रामायण, श्रीमद्भागवत और भगवद्गीता के अनेक स्थल आपको कण्ठस्थ थे।

आप सस्कृत[2] और प्राकृत के एक माने हुए विद्वान् थे। सस्कृत और व्रजभाषा मे बडी मधुर कविता करते थे। सस्कृत मे आपकी पाँच-छह कविता-पुस्तके छपी थी। आपने सस्कृत और बँगला से लगभग एक दर्जन पुस्तको का हिन्दी-गद्य-पद्य मे अनुवाद किया था। व्रज-भाषा मे आप आशुकवि के समान समस्यापूर्त्तियाँ किया करते थे। आपकी हिन्दी की गद्य-

---

१. आपका रेखाचित्र प्रस्तुत करते हुए स्व० आचार्य श्रीशिवपूजन सहायजी ने लिखा है—"उस समय वे कोट और अँगरेजी ढग का जूता पहनने लगे। नहीं तो बराबर बन्ददार या घुण्डीदार मिरजई और बगलबन्दी पहनते थे। सिर पर मलमल का साफा अपने हाथों बाँधते थे। कभी गोल पण्डिताऊ टोपी लगाकर निकलते जूता दिल्लीवाल या सलीमशाही होता था, पीछे प्रोफेसरी में पम्प भी आ गया। पहले तो घुटनों के नीचे से समेटकर कच्छा-धोती भी पहनते थे, पर आगे चलकर पण्डिताऊ धोती रह गई। जूते-कपडे के शौक से बढकर पान और इत्र का शौक था। इत्रों के अच्छे पारखी थे।" एक दूसरे स्थल पर उन्होंने आपका रेखाचित्र इस प्रकार प्रस्तुत किया है—"गोरा छरहरा शरीर, कलीदार अँगरखा, बँधाई पगड़ी, रेशमी दुपट्टा, आँखों में सुरमा, दाँतों पर सुनहली बिन्दी, त्रिकुटी पर पँचरंगा तिलक, ललाट पर अर्द्धचन्द्राकर त्रिपुण्ड, गले में रुद्राक्ष की माला, मुँह में पान की गिलौरी, हाथ में गोमुखी छडी, लम्बा डीलडौल, स्वर बड़ा गम्भीर।"—देखिए 'अवन्तिका' (मासिक, मई, सन् १९५५ ई०) तथा 'शिवपूजन-रचनावली' (वही), पृ० २६१ तथा २६७।

२. आपने स्वतन्त्र रूप से ये छह सस्कृत-ग्रन्थ लिखे थे—(१) राधामाधव-विलास (५२५ सस्कृत के दोहा-छन्दोबद्ध, १८ सस्कृत के मनोहर, षट्पदी आदि छन्दोबद्ध पद्य हैं। इसी ग्रन्थ के आधार पर प० विजयानन्द त्रिपाठी जैसे धुरन्धर विद्वान् भी आपको इस युग में, सस्कृत में दोहा-छन्द का आविष्कारक कहा करते थे)। (२) स्तोत्रकुसुमांजली (इसमें ६७ वियोगिनी-छन्दोबद्ध पद्य हैं, जिनमें श्रीरामचन्द्रजी की स्तुति है)। (३) पद्यपुष्पोपहार (इसमें अनेक प्रकार के छन्दोबद्ध २९ पद्य हैं, जिनमें आपके विद्यादाता तथा दीक्षागुरु स्व० प० चन्द्रमणि शर्माजी की स्तुति है)। (४) कृष्ण-कीर्त्तन (इसमें ११५ सस्कृत दोहा-छन्दोबद्ध पद्य हैं। उनका अनुवाद ब्रजभाषा के दोहा-छन्दों में किया गया है। दोनों भाषाएँ ग्रन्थकार की ही रचना है। इसके बहुत-से अंश 'सरस्वती' में भी छपे थे)। (५) विनयमालिका (इसमें संस्कृत के १८ पद्य हैं, जिनमें सक्षेप से रामायण और महाभारत की कथा है)। (६) शोकसूक्ति (इसमें ३५ वियोगिनी-छन्द के पद्य हैं, जिनमें ग्रन्थकार ने अपने पिता के स्वर्गवासी होने पर बड़ी करुणा के साथ विलाप किया है)।

पद्य-रचनाएँ भी आधे दर्जन से कम न होगी। आपकी समस्त रचनाओ को देखकर ऐसा अनुमान होता है कि आपने अपने जीवन के क्षणो को यथासम्भव साहित्य-साधना मे ही लगाये रखा। मुख्यत इसी कारण आप प० महावीरप्रसाद द्विवेदी के विशेष स्नेहभाजन लेखको मे एक थे। द्विवेदी-युग के गद्यकारो मे आपका आदरणीय स्थान माना जाता है।[1]

हिन्दी मे आपके द्वारा लिखित पाँच गद्य-ग्रन्थ मिलते हे—(१) दुर्गादत्त परमह स[2], (२)उपदेश रामायण[3], (३) दशावतार-कथा,[4] (४) लेखमणिमाला[5] और (५) आत्मचरित चम्पू[6]। इनके अतिरिक्त स्वतन्त्र रूप से हिन्दी-पद्य मे आपकी ये तीन पुस्तकाकार रचनाएँ मिलती है---(१) आनन्दकुसुमोद्यान[7], (२) सदाबहार[8] और (३) लार्ड हार्डिंज का स्वागत[9]। आपने वग-साहित्य-सम्राट् वकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय-रचित 'देवी चौधरानी', 'मृणालिनी' ओर 'रजनी' इन तीन उपन्यासो का अनुवाद भी किया था। आपके द्वारा लिखित स्फुट रचनाएँ 'सरस्वती,' 'माधुरी', 'सुधा,' 'मनोरमा', 'गगा', 'मनोरजन', 'धर्माभ्युदय',

---

इनके अतिरिक्त सस्कृत-ग्रन्थों को हिन्दी-पद्यानुवाद के रूप में भी आपने प्रस्तुत किया—(१) शिवमहिम्न-स्तोत्र (सस्कृत के पद्य शिखरिणी-छन्दों में हैं। हिन्दी-अनुवाद भी उसी छन्द में है। यह पुष्पदन्ताचार्य-कृत है)। (२) शिवताण्डव (सस्कृत के पद्य चामर छन्द मे हैं। हिन्दी-अनुवाद भी चामर-छन्द में ही है। यह रावण-कृत है। (३) गगालहरी (सस्कृत के पद्य शिखरिणी-छन्द में हैं। हिन्दी के पद्य भी उसी छन्द में हैं। मूल ग्रन्थ पण्डितराज जगन्नाथ-कृत है)। (४) गगाष्टक (इसका भी पद्यानुवाद ही है। मूल ग्रन्थ महर्षि वाल्मीकि-रचित है। इनके सिवा दो ग्रन्थ सस्कृत से हिन्दी में आपने अनूदित किये हैं—(१) मार्कण्डेयपुराण (इसी पुराण का हिन्दी में यह अविकल अनुवाद है। इसमें ४८० पृष्ठ हैं)। (२) दशकुमारचरितसार (इसमें हिन्दी में महाकवि दण्डी-कृत 'दशकुमार-चरित' की सक्षिप्त कथा है। इसमें ८४ पृष्ठ हैं)।

१ जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ (वही), पृ० ५४३ तथा ६१५।

२ यह एक गद्यात्मक हिन्दी-काव्य है, जिसमें डुमराँव-महाराज के राजगुरु अद्वितीय विद्वान् योगी महात्मा दुर्गादत्त परमहसजी का जीवनचरित लिखा गया है। यह पहले एकलिपि-विस्तार-परिषद्, कलकत्ता के मुखपत्र 'देवनागर' में, और फिर बाद में, पुस्तक-भण्डार, पटना से पुस्तकाकार प्रकाशित हुआ था। इसकी भूमिका आपके आदेशानुसार, स्व० आचार्य श्रीशिवपूजन सहायजी ने लिखी थी।

३. इसमें संक्षिप्त रामायण-कथा है। किन्तु, वाल्मीकीय रामायण तथा तुलसीदास-रचित श्रीरामचरित-मानस में जितने उपदेश हैं, उनका पूर्ण अनुवाद इसमें किया गया है। इसकी पृष्ठ-संख्या २२१ है।

४. इसमें भगवान् के दशावतारों की कथा सक्षेप में लिखी गई है। महाकवि क्षेमेन्द्र-रचित 'दशावतार-कथा' की छाया से यह ग्रन्थ तैयार किया गया है। इसमें १४४ पृष्ठ है।

५. यह आपके साहित्यिक निबन्धों का संग्रह है। यह गद्य-पद्य-मिश्रित है।

६. इसकी रचना अस्वस्थ रहते हुए भी, आचार्य स्व० श्रीशिवपूजन सहायजी के बार-बार आग्रह करने पर, आपने की थी। इसका प्रकाशन उसी साल हुआ था, जिस साल (सन् १६३६ ई०) आचार्यजी पुस्तक-भण्डार से छपरा के राजेन्द्र कॉलेज में गये थे। उसके कुछ ही दिनों बाद आप लगभग ६५ वर्ष की आयु में गोलोकवासी हुए।—देखिए, 'अवन्तिका' (वही), और 'शिवपूजन-रचनावली' (वही), पृ० २६६।

७. इसमें मनहरण, घनाक्षरी, सवैया आदि छन्दों के १४८ पद्य हैं, जिनमें श्रृंगार रस की अनूठी छटा दीख पड़ती है।

८. इसमें अनेक प्रकार के श्रृंगाररसात्मक गीत हैं।

९. इसमें १० पद्य हैं।

'बालक' आदि मासिक पत्र-पत्रिकाओ, तथा 'पाटलिपुत्र', 'भारतमित्र,' 'हिन्दी-बंगवासी,' 'वेंकटेश्वर-समाचार', 'शिक्षा' आदि साप्ताहिक पत्रो मे प्रकाशित मिलती है। यदि यह सारी रचना एकत्र कर पुस्तकाकार प्रकाशित हों, तो आपके नाम पर कई खण्ड देखने को मिलेंगे। आप लगभग ६५ वर्ष की आयु मे, सन् १९३९ ई० मे, परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

शिवताण्डवस्तोत्र शिवजी के स्तोत्रों में अद्वितीय समझा जाता है। इसमें शब्द-माधुर्य की विशेषता है। छन्द भी मनोहर और गाने के योग्य है। इन दोनों का हिन्दी-भाषा के छन्दो में अनुवाद करना कठिन प्रतीत होता है। संस्कृत में समास, प्रत्यय तथा मिलित विभक्तियों के कारण थोड़े अक्षरों मे बहुत-से अर्थ आ जाते है। यह बात हिन्दी-भाषा में नही है। जिन छन्दों में संस्कृत श्लोक है, उन्हीं छन्दों मे हिन्दी-भाषानुवाद करना तो असाध्य-सा प्रतीत होता है।[1]

(२)

सत्कवियों में दिल्लीश्वर-सभा-सम्मानित पण्डितराज जगन्नाथ अन्तिम कवि थे। इनके बाद ऐसा विलक्षण उद्दण्ड कवि कोई न हुआ। इनके काव्य में शब्द-माधुर्य, पद-लालित्य, भाव-गांभीर्य, सरस यमक अनुप्रास से ऐसे उत्तम होते हैं कि श्रवणमात्र से ही साधारण विद्वान् का भी हृदय आनन्दोद्रेक-परवश हो जाता है। जब हमने इनके बनाए हुए भामिनी-विलास को देखा तो चित्त में अनिर्वचनीय आनन्द उत्पन्न हुआ। पर दुख यह हुआ कि हा! इसके अनुपम सुख को केवल संस्कृत ही के कवि लूटते है। बिचारे हिन्दी-भाषा के रसिक कवि इस सुख से सर्वदा वंचित हो रहे हैं। इस कारण यह अत्युत्तम

---

१. 'शिवताण्डवस्तोत्र' के वक्तव्य से।

ग्रन्थ हिन्दी के अनेक प्रसिद्ध छन्दो मे अनुवाद किया और नाम भी भामिनि-विलास-प्रतिबिम्ब रखा।[1]

(३)

लाज समाज की खानि तिया सुभ सील सुभायहु मैं अति नीको।
एक ही प्रेम पगी पिय के पद लागत और सबै जग फीको॥
'बिप्र सुचन्द' बडी यह भाग लख्यो सखि आज सुहाग-सनी को।
प्रीति-भरी दुलही उलही नितही नव नेह बढ़ावत पी को॥[2]

(४)

मोहि सतावत है यह नित्य जगावत गातन मैं पुनि मार ये।
'विप्र सुचन्द' पसारि कला निज बेधत तीखी मनों तलवार ये॥
काह करूँ न कछू बनि आवत सूझत नाहि कोउ उपचार ये।
देखु सखी नभमंडल मांझ 'सुचन्द' नही है अधूम अंगार ये॥[3]

(५)

चंचल चित्त मलीन महारुअ, तेरो अहै अति ही तन कारो।
दोष सबै अपनो तजि कै, तुम तापै सदा अनुराग पसारो॥
विप्र सुचन्द जू और पै जात न, भूलि कबौ हिय मैं निरधारो।
धन्य है भौर तुही जग मै, नव मालती के रस चाखन वारो॥[4]

(६)

निज हिय चौकी पै बिठाय तुव दोनो पाय,
नेह भरे नैन नीर धार सों पखारूँगी।

१ 'भामिनीविलास-प्रतिबिम्ब' की भूमिका से।
—देखिए, 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही), पृ० ५४४।
२. 'समस्यापूर्त्ति' (पटना, अप्रैल, सन् १८९७ ई०), पृ० १५।
३. वही, (फरवरी, सन् १८९७ ई०), पृ० १०।
४. स्व० बा० शिवनन्दन सहाय द्वारा प्रेषित सामग्री से।

स्वच्छ मन मन्दिर मे मूरति तिहारी थापि,
पलक बनाय दीप आरती उतारूँगी ॥
'विप्रचन्द' आसन लगाय ध्यान तेरो रूप,
परम पवित्र तुव नाम ही उचारूँगी ।
इक टक लाय बिसराय सब काम धाम,
मोहन तिहारो बिधु बदन निहारूँगी ॥[1]

(७)

औचक ही आय निज सुन्दर दिखाय रूप,
मोहन सुमंत्र पढ़ि टोना कछु कै गयो ।
मचलि मतंग मो सुचाल चलि मंद मंद,
कोमल करेजे बीच प्रेम बीज बै गयो ॥
डोरी डारि नेह की विदेह करि दीनो हमैं,
'बिप्रचन्द' बिपुल बियोग दुख दै गयो ।
मृदु मुसकाय नैन बानन चलाय हाय,
जादूगर मोहन हमारो मन लै गयो ॥[2]

(८)

औचक ही कुंजन तें कढ़ि नन्दलाल आज,
बिहँसि बिलोकि मोहि टोना कछु करिगो ।
डरिगो हमारो मन भरिगो भरम जाल,
हरिगो बिचार प्रेम सम्पुट उघरिगो ॥
परिगो परम दुःख ढरिगो नयन नीर,
बरिगो वियोग बन्हि ताते गात ज़रिगो ।

---

१. स्व० बा० शिवनन्दन सहाय द्वारा प्रेषित सामग्री से ।
२. उन्हीं से प्राप्त ।

'विप्रचन्द' काहू भाँति टरिगो न आली हाय,
कान्ह को कटीलो कजरारो नैन गरिगो ॥[1]

(९)

'बीर-हीन भूतल दिखात' यह बैन सुनि,
लखन सकोप बोले नेकु ना डरत है ।
कुल-मरजाद मम जानत न एको भूप,
भाषत कठोर सो विचार ना करत है ।
कहाँ लौ गिनाऊँ 'बिप्रचन्द' परभाव ताको,
एक बार आय कालहू तें जो लरत है ।
दान में दया में धीरता मे बीरता मे,
कबौ कोऊ रघुवंशी पाँव पाछे ना धरत है ।[2]

(१०)

अहा ! अलौकिक ऋतु पावस की शोभा आज दिखाती है ।
सब वन बाग पहाड़ नदी मे हरियाली लहराती है ॥
नभ मण्डल में बादल छाये बिजली चमक दिखाती है ।
इन्द्रधनुष की छटा निराली सबकी छटा बढ़ाती है ॥[3]

आद्यादत्त ठाकुर

आप दरभगा-जिला के माधोपुर (नरहन) नामक गाँव के निवासी प० श्रीगिरिजादत्त ठाकुर के पुत्र थे ।[4] आपका जन्म सं० १९४३ वि० (सन् १८८६ ई०) की पौष कृष्ण-

---

१. उन्हीं से प्राप्त ।
२. 'समस्यापूर्त्ति' (पटना, अक्टूबर-नवम्बर, सन् १८९७ ई०), पृ० ६ ।
३. 'मनोरंजन' (आरा, भाग २, अक ४-५) में प्रकाशित 'वर्षा-बहार' शीर्षक कविता से । श्रीरामनारायण शास्त्री (बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना) से प्राप्त ।
४. आपके पूर्वज प्रख्यात तान्त्रिक थे, जो बराबर राजगुरु के पद पर आसीन रहे ।

नवमी को हुआ था।[१] आपने स्वतन्त्र छात्र के रूप मे मैट्रिक, आइ० ए० और बी० ए० की परीक्षाएँ पास की थी। तदुपरान्त, डॉ० गोपीनाथ कविराज के अधीन रहकर आपने काशी से एम्० ए० की उपाधि प्राप्त की उसके पूर्व आप संस्कृत की काव्यतीर्थ परीक्षा पास कर चुके थे। उक्त परीक्षाओ के पास करने के बाद आप गोरखपुर (उत्तरप्रदेश) के सेण्ट ऐण्ड्रूज कॉलेज मे सस्कृत के अध्यापक नियुक्त हुए। उसके कुछ ही दिनो बाद आप संस्कृत-प्राध्यापक होकर लखनऊ-विश्वविद्यालय चले गये। वही से सन् १९४७ ई० मे आपने अवकाश प्राप्त किया। आप अज्ञात ही रहना अधिक पसन्द करते है। इसी कारण आपकी अधिकांश रचनाएँ दूसरो के नाम से प्रकाशित है। कुछ आलोचनाएँ आपके नाम पर भी 'माधुरी' मे प्रकाशित है।[२] प्राप्त सूचना के अनुसार महामहोपाध्याय विद्यावाचस्पति पं० मधुसूदन झा के अधिकाश ग्रन्थो का सम्पादन आपने ही किया है।

उदाहरण

(१)

इस समय, जब कि भारत मे सर्वत्र हिन्दू-संगठन का आन्दोलन हो रहा है, हिन्दुत्व क्या है, इसकी विवेचना करना अत्यन्त आवश्यक तथा अनिवार्य है। प्रत्येक हिन्दू को यह जानने की आवश्यकता है कि हिन्दुत्व है क्या। प्रस्तुत पुस्तक मे हिन्दू शब्द की व्याख्या बड़े पाण्डित्य के साथ की गई है। प्रत्येक हिन्दू को उचित है कि इसे पढ़कर राष्ट्रीयता के भावों पर विचार करे और फिर तदनुसार कार्य करे। पुस्तक अत्यन्त विद्वत्तापूण है। अनुवाद भी बड़े मजे का है। ऐसी राष्ट्रहित साधन करनेवाली पुस्तक का अनुवाद करके गर्देजी ने हिन्दी तथा हिन्दुओ का बड़ा उपकार किया है। हम हृदय से इस पुस्तक का प्रचार चाहते है।[3]

(२)

चरित्र क्या है, और वह किस प्रकार दृढ़ किया जाता है, इस विषय का निरूपण इस पुस्तक में किया गया है। पुस्तक सात

---

१. श्रीललितेश्वर झा के दिनांक ११-७-५६ के पत्र द्वारा प्रेषित सूचना के अनुसार।

२. 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही), पृ० ६६६।

३. 'माधुरी' (मासिक, वर्ष ४, खण्ड २, संख्या ५), पृ० ६६३।—'हिन्दुत्व' नामक पुस्तक की समालोचना से।

अध्यायों में विभक्त है। प्रथम अध्याय मे रूपाचार का महत्व, कर्त्तव्य-पालन आदि अनेक उपयोगी विषयों का सन्निवेश है। चरित्र के बिना मनुष्य जीवन पशु-पक्षियों के जीवन से भी निकृष्ट है, यह प्राय. सभी स्वीकार करते है। हमारी तो धारणा है कि एक चरित्रहीन पुरुष भी सदाचार के महत्व का कायल रहता है और अपनी दुष्प्रवृत्ति के लिए अपने कुसंग तथा अपने हृदय-दौर्बल्य को ही दोष देता है। ऐसे बिरले ही दुराग्रही होंगे, जो सदाचार के विरुद्ध अपनी आवाज उठावें। सदाचार की महत्ता मान लेने पर उसके प्रचार की आवश्यकता है। अपरिपक्व-बुद्धि बालको को उस विषय का पाठ पढ़ाना प्रत्येक पाठक का कर्त्तव्य होना चाहिए।[1]

इन्द्रदेव नारायण[2]

आप चम्पारन-जिला के 'केसरिया' ग्राम के निवासी मुंशी रघुवीरप्रसादजी के पुत्र थे।[3] आपका जन्म सं० १९२८ वि० (सन् १८७१ ई०) की माघ कृष्ण-षष्ठी को हुआ था।[4] बाल्यावस्था से ही आप बडे मेधावी, तेजस्वी तथा तुलसी-साहित्य के प्रेमी थे। जिस वर्ष आपने मिड्ल इगलिश की परीक्षा पास की, उसी वर्ष आपके पिता का देहान्त हो गया और बाध्य होकर आपको बी० एन्० डब्ल्यू० रेलवे के हाजीपुर-डिवीजन मे लिपिक के पद को स्वीकार करना पडा। कुछ ही दिनो बाद, आप उक्त रेलवे के इजी-

---

१. 'माधुरी' (वर्ष ४, खण्ड २, सख्या ३), पृ० ४११। —'चरित्रशिक्षा' (बदरीदत्त जोशी) नामक पुस्तक की समालोचना से।

२ 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (पृ० ६७२-ज) में भ्रमवश आपका नाम 'इन्द्रनारायण द्विवेदी' लिख दिया गया है।

३ आपके पूर्वज सारन-जिलान्तर्गत मंगोलापुर-ग्राम (सकतडीह) के निकट के निवासी थे। आपके पूर्व-पुरुषों में मुं० रामानन्द, मु० रामप्रसाद दास और मु० अभिलाष दत्त के नाम मिलते हैं।

४. आपके भतीजे श्रीसच्चिदानन्द श्रीवास्तव (डाक-विभाग, मोतिहारी, चम्पारन) द्वारा प्रेषित सामग्री के आधार पर। आपके प्रस्तुत परिचय-लेखन में प० गणेश चौबे (बँगरी, चम्पारन) द्वारा प्रेषित सामग्री तथा 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (पृ० ६५-६६) से भी सहायता ली गई है।

नियरिंग विभाग के एकाउण्टेण्ट-पद पर चले आये। इस पद पर आप क्रमश बलरामपुर (तुलसीपुर डिवीजन, गोण्डा, उत्तरप्रदेश) और मुजफ्फरपुर मे रहे।[1] इसके पश्चात् रेलवे के अनेक विभागो, कारखानो मे कार्य करने के बाद आप बेतिया-राज के इजीनियरिंग-विभाग मे कुछ दिनो के लिए एकाउण्टेण्ट हुए। फिर, वहाँ से त्यागपत्र देकर आप बलरामपुर के महाराजाधिराज से प्राप्त अपने गाँव पर जीवन-निर्वाह करने चले गये। सन् १९१८-१९ ई० मे उक्त महाराज के स्वर्गस्थ हो जाने के बाद जब आपका गाँव सरकार ने ले लिया, तब आप तीन-चार वर्षों तक दरभगा-राज मे एकाउण्टेण्ट के पद पर नियुक्त हो गये। अन्त मे इस पद से भी त्यागपत्र देकर सन् १९४१ ई० के चैत्र मास मे स्वर्गवासी हो गये।[2] कहते है, आपके अन्तिम दिन बडे कष्ट मे बीते।[3] आप एक उदारमना, सरल, स्वाभिमानी व्यक्ति थे। आपकी गणना एक सिद्ध रामायणी और गृहस्थ सन्त के रूप मे होती है। तुलसी-साहित्य के अध्येताओ और टीकाकारो मे आपका विशिष्ट स्थान माना जाता है। आपकी इच्छा सम्पूर्ण तुलसी-साहित्य के प्रामाणिक सटीक सस्करणो के प्रकाशन की थी, जो पूरी न हो सकी। आपके रचनाकाल का आरम्भ सन् १९१५-१६ ई० से माना जाता है। आपकी प्रकाशित पुस्तको मे (१) 'मानस-मयक,'[4] (२) 'रामनामकोष', (३) 'मणिमंजूषा', (४) 'हनुमानबाहुक' और (५) 'कवितावली की टीका'[5] प्रमुख है। आपने 'रामचरितमानस' की एक टीका भी तैयार की थी,[6] जो पटना के खड्गविलास प्रेस द्वारा प्रकाशनार्थं ली गई थी। किन्तु, अबतक उसका प्रकाशन नही हो सका है। इन पुस्तकाकार रचनाओ के अतिरिक्त तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओ मे आपके द्वारा लिखित विभिन्न-विषयक लेख भी मिलते हैं।

उदाहरण

(१)

तुलसीदास जी कहते है—श्रीसीताराम जी से गाँव की स्त्रियाँ पूछती है—जिनके सिर पर जटाएँ है, वक्षःस्थल और भुजाएँ विशाल हैं,

---

१. श्रीगणेश चौबे (वही) का कहना है कि आपके जीवन का अधिकांश समय हैदराबाद में बीता।

२. 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही, पृ० ६६) में आपका मृत्युकाल सन् १९४० ई० बतलाया गया है।

३. "इन्द्रदेव बाबू के पास पुस्तकों का एक बड़ा सग्रह था। वृद्धावस्था में आर्थिक कठिनाइयों ने उनके उन ग्रन्थों को बेचकर अपना काम चलाने के लिए बाध्य किया। वे ग्रन्थरत्न कौडी के मोल बिके।"

—श्रीगणेश चौबे (वही) से प्राप्त सामग्री से।

४. इसका प्रकाशन बलरामपुर के महाराजाधिराज के सौजन्य से सन् १९२० ई० में, पटना के खड्गविलास प्रेस से हुआ। इसी के पारितोषिक-स्वरूप उक्त महाराजधिराज ने आपको एक गाँव की ठीकेदारी दे दी थी।

५. गीता प्रेस, गोरखपुर से प्रकाशित। स० १९९४ वि० से २०१२ वि० तक इसकी ९४,२५० प्रतियाँ मुद्रित हुई।

६. श्रीनरेन्द्रनारायण सिंह (नन्दवारा, मुजफ्फरपुर) ने दिनांक २५ सितम्बर, सन् १९५४ ई० के अपने पत्र द्वारा सूचित किया है यह टीका १४०० रुपये के व्यय से तैयार हुई थी।

नेत्र अरुण वर्ण हैं, भौहें तिरछी हैं, धनुष-वाणा और तरकस धारण किये वन के मार्ग में बड़े भले जान पड़ते हैं और स्वभाव से ही आदर-पूर्वक बार-बार तुम्हारी ओर देखकर जो हमारा मन मोह लेते हैं, बताओ तो वे साँवले-से कुँवर आपके कौन होते हैं ?'[1]

(२)

(गाँव की स्त्रियों के) अमृत-से सने हुए सुन्दर वचनों को सुनकर जानकीजी जान गयीं कि ये सब बड़ी चतुरा हैं। अतः, नेत्रों को तिरछाकर उन्हें सैन से ही कुछ समझकर मुसकुराकर चल दीं। गोसाईंजी कहते हैं कि उस समय लोचन के लाभरूप श्रीरामचन्द्र जी को देखती हुई वे सब सखियाँ ऐसी सुशोभित हो रही हैं, मानो सूर्य के उदय से प्रेमरूपी तलाब में कमलों की मनोहर कलियाँ खिल गई हैं। [अर्थात् श्रीरामचन्द्र रूपी सूर्य के उदय से प्रेमरूपी सरोवर में सखियों के नेत्र कमल-कली के समान विकसित हो गये।][2]

१. 'कवितावली की टीका' (अयोध्याकाण्ड), पृ० ३३-३४।

मूल पंक्तियाँ—

सीस जटा, उर बाहु विशाल, विलोचन लाल तिरीछी-सी भौंहें।
तून सरासन बान धरे तुलसी बन मारग में सुठि सोहैं॥
सादर बारहिं बार सुभायँ चितै तुम्ह त्यों हमरो मनु मोहैं।
पूँछति ग्रामबधू सिय सों, कहौ, साँवरे-से सखि रावरे को हैं॥

२. 'कवितावली की टीका' (वही), पृ० ३४।

मूल पंक्तियाँ—

सुनि सुन्दर बैन सुधारस साने सयानी हैं जानकी जानी भली।
तिरछे करि नैन दै सैन तिन्हें समुझाइ कछू मुसकाइ चली॥
तुलसी तेहि औसर सोहैं सबैं अवलोकति लोचन लाहु अली।
अनुराग-तड़ाग में भानु-उदैं बिगसीं मनो मंजुल कंजकली॥

ईश्वरदास जालान

आप मुजफ्फरपुर-निवासी श्रीगौरीदत्त जालान के पुत्र है। आपका जन्म सन् १८९५ ई० के ३० मार्च को हुआ था।[1] आपने एम्० ए०, बी० एल्० तथा ऐटर्नी एट-लॉ की उपाधियाँ प्राप्त की थी। आप सन् १९४७ से ५२ ई० तक पश्चिम बगाल-विधानसभा के अध्यक्ष-पद को सुशोभित करते रहे। उसके बाद आपने स्वायत्त-शासन विभाग के मन्त्री के रूप मे उक्त राज्य की सेवा की। आपके जीवन मे लक्ष्मी के साथ सरस्वती का अपूर्व सयोग देखने को मिलता है।

आपके रचनाकाल का आरम्भ सन् १९१२ ई० से होता है। आपके अनेक स्फुट-हिन्दी लेख द्विवेदी-युग की 'सरस्वती' मे प्रकाशित मिलते है। दैनिक 'भारत-मित्र', 'समाज-विकास', 'मर्यादा' आदि तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं मे भी आपके लेख प्रकाशित है। 'लिमिटेड कम्पनियाँ'[2] नाम से आपके द्वारा लिखित एक पुस्तकाकार रचना भी प्रकाशित हुई थी, जो अब नही मिलती।

उदाहरण

(१)

प्राचीन-काल मे लोग बिजली को केवल देवलोक का पदार्थ समझते थे और उससे बहुत भय करते थे। पुराणो में, बिजली इन्द्र महाराज का आयुध और मेघराशि उनकी सेना मानी गई है। जब मेघ दल बॉधकर आकाश में उतराते हैं तब बिजली चमक उठती है। दो शस्त्रो के आपस मे टक्कर खाने से जैसे आवाज होती है वैसे ही बिजलियॉ एक दूसरी पर लगने से कड़क उठती है। जबतक यूरोप के वैज्ञानिकों ने बिजली के तत्वो का आविष्कार करके जगत को यह बोध न करा दिया कि बिजली सृष्टि के पदार्थ मात्र में गुप्त-भाव से

---

१. आपके द्वारा प्रेषित सामग्री के आधार पर। इसके अतिरिक्त आपके परिचय-लेखन में श्रीललित कुमार सिंह 'नटवर', (४७, जकरिया स्ट्रीट, कलकत्ता-७) से प्राप्त सामग्री का भी उपयोग किया गया है।

२ सन् १९२३ ई० में पं० झाबरमल्ल शर्मा, जसरामपुर, राजस्थान द्वारा प्रकाशित।

रहती है और वह प्रगट भी देखी जा सकती है तबतक सर्वसाधारण की धारणा, उसके विषय मे, उक्त प्रकार की ही थी। परन्तु आजकल तो बिजली सभ्य ससार मे मनुष्य-जाति की बहुत आवश्यक और सहायक वस्तु हो रही है। उसके द्वारा ऐसे-ऐसे कार्य हो रहे है जो दूसरे उपायो से कदापि न हो सकते। आज क्षणमात्र मे लोग हजारों कोस को ख़बर घर बैठे बिजली द्वारा मँगा सकते है। बिना तेल और बत्ती जलाये, दिवाकर की ज्योति से भी अधिक चमकीली, आँखो मे चकाचौध लगाने और पानी में भी न बुझनेवाली, रोशनी लोग सब कही कर सकते है। आज बिजली के रूप में, मनुष्य-समाज को ऐसी असीम शक्तिशालिनी परिचारिका मिल गई है, जो अहनिश तरह-तरह से सेवा करती रहती है और कभी कमती ही नही। बिजली से रेलगाडी, ट्रैम, मोटर और न मालूम कितनी तरह की मैशीनें चलाई जाती है। विलायत के डाकघरो में चिट्ठियो पर मुहरे बिजली ही लगाती है। होटलो मे मास और तरकारी काटने का काम भी बिजली ही करती है। ऐसी अपूर्व, अचिन्तनीय, अद्भुत वस्तु।[1]

(२)

सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न कार्यकर्त्ताओं का ही है। यह प्रश्न किसी समाज-विशेष का नही, सारे देश का है। इस युग को 'श्रद्धा के संकट', 'क्राइसिस ऑफ फेथ' का युग कहा गया है। इस संकट के ज्वार-भाटे उन देशों में अधिक प्रबल होकर आये हैं और आ रहे है जिनमें हाल में महत्वपूर्ण राजनीतिक या आर्थिक उथल-पुथल हुए हैं, और जो

---

१. 'सरस्वती' (मासिक, जनवरी, सन् १९१३ ई०), से।

फलतः उग्र संक्रमण के मध्य से गुजर रहे है। भारत संसार के ऐसे देशो मे एक मुख्य देश है। वेदो का पुराना प्रश्न—"कस्मै देवाय हविषा विधेम" इसके सामने आज नाना रूप धारण कर फिर से आ खडा हुआ है। "नैको ऋषिर्यस्य वच. प्रमाणम्" की समस्या इसके जीवन के प्रत्येक पथ को रोककर आज इसके आगे अड़ी हुई है।

इसका क्या उचित उत्तर या समाधान हो सकता है, यह स्वयं एक उलझन है। इनके सुलझाव के लिए हमे अपनी दृष्टि और अपने चरण मोड़ने है उस दिशा मे, जिधर देश की महान् योजनाएँ तेजी से बढ़ रही हैं, और बढ़ती ही चली जा रही है। वह दिशा है—एकता की, समाजवाद की सहयोगिता की, देश के गणतंत्र के सत्य को राजनीति के स्तर से उठाकर आर्थिक और सामाजिक स्तर तक पहुँचा देने की।

देश मे आनेवाली परिस्थितियो को स्वानुकूल बना ले सकने का का सपना सपना ही रह जाय यह संभव है, किन्तु उन परिस्थितियो के अनुकूल अपने आपको बना लेने का निर्णय पूर्णत· सफल हो सकता है, इसमे संदेह का स्थान नही। जिस दिशा मे देश बढ़ रहा है उधर ही बढ़ चलना और उसमें आगे से आगे बढ़ते जाना आज किसी भी व्यक्ति या समाज का सबसे बड़ा स्वार्थ है, ऐसा स्वार्थ जो सात्विक और शुद्ध भाव से सम्पन्न किये जाने पर बड़े से बड़ा परमार्थ भी बन सकता है।[1]

---

१. 'समाज-विकास' (मासिक, जनवरी-फरवरी, सन् १९६२ ई०), पृ० ४२

ईश्वरीप्रसाद शर्मा[1]

आप आरा (शाहाबाद) नगर के 'मिश्रटोला' मुहल्ले के निवासी, तन्त्रशास्त्र के पारदर्शी विद्वान् स्वनामधन्य स्व० प० शारङ्गधर मिश्र के इकलौते पुत्र थे।[2] आपका जन्म स० १९५० वि० सन् १८९३ ई०) की आषाढी पूर्णिमा को हुआ था। जब आप सात वर्षों के हुए, तभी आपके पिताजी का देहान्त हो गया। उसी समय आप एक अँगरेजी-स्कूल मे भरती किये गये। जब आप थर्ड क्लास के विद्यार्थी थे, तभी से आपके हृदय मे हिन्दी का अनुराग उत्पन्न हुआ। आप आरा-नागरी-प्रचारिणी-सभा के पुस्तकालय मे आने-जाने लगे। सबसे पहले आपने सन् १९०६ ई० मे, काशी के 'भारत जीवन' मे, लिखना आरम्भ किया। तबसे आप बराबर पुस्तकें, लेख, कविताएँ आदि लिखते रहे। कहते है आपके समय के किसी बिहारी लेखक ने आपकी बराबरी मे लेख, कविता या पुस्तक रचना नही की। सन् १९०० ई० मे, आपके पिताजी के देहान्त के बाद सन् १९०९ ई० मे, आपकी माताजी भी चल बसी। किन्तु, आपके माता-पिता की जगह आपके चाचा-चाची ने आपको पाला-पोसा, पढाया-लिखाया, ब्याहा और बढाया।[3] आपके चचेरे भाई प० गुरुदेव प्रसाद बी० ए०, बी० टी० भी आपको पुत्रवत् मानते थे। मुख्यतः उन्ही के प्रभाव से आप स्कूल-कॉलेज के कुसगो से बचकर परम विद्याव्यसनी बन सके।

आपकी स्कूली शिक्षा आरा के 'कायस्थ जुबली एकेडमी' मे हुई थी। आपकी उच्च शिक्षा काशी के हिन्दू-कॉलेज मे हो रही थी। किन्तु, अचानक बहुत अस्वस्थ हो जाने के कारण आपको अपनी पढाई छोड देनी पडी। इसके बाद, आप 'कायस्थ जुबिली-एकेडमी' मे हिन्दी-शिक्षक नियुक्त हुए। सन् १९०५ ई० के स्वदेशी-आन्दोलन-युग मे, इसी स्कूल की एक सभा मे आपने अपना पहला व्याख्यान किया था, जिसके आधार पर लोगो ने आपके भविष्य के सम्बन्ध मे बडी-बडी आशाएँ प्रकट की। आप आरम्भ से ही एक विलक्षण प्रतिभा के अद्भुत व्यक्ति थे। जिस समय एण्ट्रेंस क्लास मे थे, उसी

---

१. आपका प्रस्तुत परिचय मुख्यतः स्व० आचार्य शिवपूजन सहाय जी द्वारा यत्र-तत्र लिखित टिप्पणियों के आधार पर तैयार किया गया है।— देखिए, 'मतवाला' (साप्ताहिक, वर्ष १, सख्या ३३, १२ अप्रैल, सन् १९२४ ई०), 'आज' (दैनिक, श्रावण, सं० १९८४ वि०), 'हिन्दूपंच' (वर्ष २, अंक ७, ४ अगस्त, सन् १९२७ ई०), 'हिन्दूपच' (श्रीकृष्णाक वर्ष २, अंक ८, भाद्रकृष्ण-जन्माष्टमी, स० १९८४ वि०) 'हिन्दूपंच' (वर्ष २, अंक ११, १५ सितम्बर सन् १९२७ ई०), 'सुधा' (वर्ष १, खण्ड १, संख्या ३, अक्टूबर, सन् १९२७ ई०) तथा 'पारिजात' (त्रैमासिक, फरवरी, सन् १९४६ ई०)। ये सारी टिप्पणियाँ 'शिवपूजन-रचनावली' के चतुर्थ खण्ड में सगृहीत हैं। —देखिए, 'शिवपूजन रचनावली' (वही), पृ० २२५–४८। इसके अतिरिक्त आपके परिचय-लेखन में 'मिश्रबन्धुविनोद' (वही, पृ० ५०२–३), 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ५४६, ५६०, ५८३, ६१५, तथा ६५१) एवं 'बिहार के नवयुवक-हृदय' (वही, पृ० ३०–३९) से भी सहायता ली गई है।

२. आपके पितामह का नाम प० पिनाकधर मिश्र था। चाचा थे प० श्रीधर मिश्र। आपका परिवार बड़ा ही शिक्षित-प्रतिष्ठित एव गण्यमान्य माना जाता है। हिन्दी के आदि-गद्य लेखकों में प्रसिद्ध पं० सदल मिश्र भी आपके पूर्वजों में एक थे।

३. वे आपको 'बच्चनजी' कहकर पुकारते थे। घर पर आपके प्यार का नाम यही था। बचपन के साथी आपको 'दीना' या 'दीनानाथ' कहा करते थे।

समय खूब धडल्ले से हिन्दी मे लेख लिखने लगे थे। आपका पहला लेख, जो एक गद्य-काव्य था, सन् १६०६ ई० मे 'भारत-जीवन' मे छपा था। उस समय आप 'सेकेण्ड क्लास' के छात्र थे। सन् १६१२ ई० मे आपने आरा से सचित्र हिन्दी-मासिक 'मनोरजन' का प्रकाशन किया, जिसकी उन दिनो चारो ओर बडी धूम थी। इसके बाद, कुछ दिनो तक आप पटना से निकलनेवाले 'पाटलिपुत्र'[1] के सहकारी सम्पादक रहे। उसके बाद गया की मासिक पत्रिका 'लक्ष्मी' का सम्पादन-भार ग्रहण करके लगभग डेढ वर्ष तक आप गया मे रहे। उस समय आप 'लक्ष्मी' के साथ-साथ 'श्रीविद्या' नामक एक दूसरी मासिकपत्रिका का भी सम्पादन करते थे। वहाँ से पुन: आरा आकर घर बैठे ही आप पटना से निकलनेवाले साप्ताहिक 'शिक्षा' का सम्पादन करने लगे। तत्पश्चात् आपने आगरा के त्रैमासिक 'धर्माभ्युदय'[2] का सम्पादन-भार सँभाला। लगभग दो-ढाई साल उसका सम्पादन करके आप कलकत्ता के हरिदास-कम्पनी मे चले गये। वहाँ भी दो-ढाई साल से ज्यादा न रहे। अन्त मे, आप कलकत्ता के ही बर्मन प्रेस मे जा पहुँचे। वहाँ उस प्रेस के अध्यक्ष बाबू रामलाल वर्मा[3] से आपको बडी घनिष्ठता हो गई। परिणाम यह हुआ कि आप अन्त तक उन्हीं के साथ रहे। उक्त वर्माजी ने जब साप्ताहिक 'हिन्दूपच' निकाला, तब तो एक वर्ष तक उसी की सेवा मे लगे रहकर आपने अपना प्राणत्याग किया।

आपकी स्मृति-शक्ति विलक्षण थी। आप बात-की-बात मे प्राय. ऐसी समयोपयुक्त सूक्तियाँ, श्लोक, कविताएँ, शेर आदि कह जाते थे कि सुननेवाले का दिल धडक उठता था। आपको ब्रजभाषा, खडीबोली, सस्कृत, बँगला और उर्दू के अनेक कवियो की रचनाएँ कण्ठस्थ थी।

सरल, मृदुभाषी और मिलनसार होने के साथ-साथ आप बडे ही विनोदी स्वभाव के थे तथा नाटक खेलने और देखने के बडे शौकीन। कलकत्ता मे रोज नाटक देखते थे। आरा मे आपने एक 'मनोरजन नाटक-मण्डली'[4] ही स्थापित कर ली थी, जो अच्छे-अच्छे नाटको का सदा अभिनय किया करती थी। इस मण्डली द्वारा प्रस्तुत नाटकों मे आप भी एक सफल हास्य अभिनेता के रूप मे रगमच पर उतरते थे।

अपनी वश-परम्परा के अनुसार आप भी आदिशक्ति की उपासना करते थे। किन्तु, आप अनुदार अथवा सकीर्ण विचारवाले व्यक्ति नही थे।

---

१ इसके प्रधान सम्पादक बाबू काशीप्रसाद जायसवाल, बार-एट-लॉ थे।

२ इस पत्रिका का आधा अश गुजराती में रहता था। आपने कुछ ही दिनों बाद उसे सर्वांग हिन्दीमय कर डाला।

३. वर्माजी के यहाँ काम करते हुए आप उन्हीं की राय से लगभग एक-डेढ वर्ष तक कलकत्ता की 'माहेश्वरी-पचायत' में दो सौ रुपये मासिक पर कुछ घण्टे काम कर आया करते थे।

४ इस नाटक-मण्डली ने आपके द्वारा लिखित 'सूर्योदय' नामक नाटक का सफलतापूर्वक अभिनय किया था। इसमें आप स्वय रगमच पर उतरे थे। इस मण्डली द्वारा 'सत्यहरिश्चन्द्र', 'मयूरध्वज' आदि और भी कई नाटक अभिनीत हुए थे। 'सत्यहरिश्चन्द्र' में आपने डोम का स्वाँग धारण किया था और 'मयूरध्वज' में भगवान् श्रीकृष्ण का। एक बार 'आरा नागरी-प्रचारणी सभा' के वार्षिकोत्सव के अवसर पर आपने स्व० प० शिवनाथ शर्मा ('आनन्द'-सम्पादक) द्वारा रचित 'नागरी-निरादर' नामक प्रहसन में मौलाना के वेष में रंगमच पर उतरकर जबानदानी के बड़े-बड़े मौलवियों को भी हैरत में डाल दिया था।

आपके पास पुस्तकों एवं पत्र-पत्रिकाओं का अपूर्व संग्रह था। किन्तु, उसकी रक्षा न हो सकी। हिन्दी-साहित्य के सभी प्रसिद्ध लेखकों और सम्पादकों की चिट्ठियों का आपके पास मूल्यवान् संग्रह था। दुर्भाग्यवश, उसकी भी रक्षा न हो सकी।

एक सिद्धहस्त अनुवादक के रूप मे भी आपको अच्छी ख्याति थी। मराठी[1], गुजराती[2], बँगला[3], अँगरेजी[4], संस्कृत[5], सबके अनुवाद में आपकी एक-सी गति थी। अनुवाद करते समय आप अपनी लिखावट मे कहीं काट-छाँट नहीं करते थे। मौलिक रचनाओं का भी यही हाल था। आपकी लिखी सबसे पहली मौलिक पुस्तक 'चन्द्रकुमार' उपन्यास है, जिसका प्लाट घर की मजदूरिन के मुँह से सुनी हुई कहानी के आधार पर रचा गया था। इसके बाद आपने 'हिरण्यमयी'[6] की रचना की। इन दोनों पुस्तकों के बाद आपने अनेक पुस्तकें लिखी और अनूदित कीं। आपकी मौलिक एवं अनूदित और सम्मानित पुस्तकों की संख्या लगभग १५० तक होगी।

इनके अतिरिक्त, लगभग डेढ़ दर्जन पुस्तकें आपने दूसरों के लिए लिखी होंगी। आप पद्य-रचना मे भी सिद्धहस्त थे। आपके लिखे नीति-शिक्षापूर्ण सरस पद्यों का संग्रह 'सौरभ' के नाम से छपकर अप्रकाशित ही रहा। आपका लिखा 'मान-मर्दन' नाटक भी अप्रकाशित ही है। आपने व्यंग्य-विनोदमयी अपनी पद्य-रचनाएँ 'चना-चबेना' के नाम से स्वयं प्रकाशित की थी। इसी शैली की एक गद्य-पद्य-मिश्रित रचना 'कचालू-रसीला' के नाम से प्रकाशित करने की इच्छा आपकी थी, जो पूरी न हो सकी।

ऊपर चर्चित पुस्तकों के अतिरिक्त आपके द्वारा लिखित मौलिक, अनूदित एवं सम्पादित प्रमुख पुस्तकों के नाम ये हैं (१) कोकिला,[7] (२) स्वर्णमयी, (३) मागधी कुसुम, (४) मालिनी बाबू, (५) गल्पमाला, (६) हिन्दी-बँगला-कोश, (७ चन्द्रधर, (८) अन्योक्ति-

---

१ मराठी से आपने 'इन्दुमती' और 'रत्नदीप' नामक उपन्यास का अनुवाद किया था।

२ गुजराती से आपने जैनधर्म-सम्बन्धी अनेक पुस्तकों का अनुवाद किया था। ये पुस्तकें एक जैन प्रकाशक के नाम से प्रकाशित हुई हैं।

३ 'बँगला' से आपने 'किन्नरी', 'अन्नपूर्णा का मन्दिर', 'जल-चिकित्सा' आदि अनेक प्रसिद्ध ग्रन्थों का अनुवाद किया था। 'पंजाब-हत्याकाण्ड' जैसी मोटी पुस्तक का बँगला-अनुवाद आपने एक ही महीने में करके श्रीनिहालचन्द्र वर्मा को दे डाला था। कलकत्ता के हरिदास ऐण्ड कम्पनी से प्रकाशित 'बँगला-हिन्दी कोष' आपके केवल तीन महीने के परिश्रम का ही फल है।

४. अँग्रेजी से अनूदित 'प्रेमिका' (पुस्तक-भण्डार, लहेरियासराय) नामक पुस्तक है। मेरी कॉरेली-लिखित 'थेल्मा' का अनुवाद आपने स्व० श्रीरामवृक्ष बेनीपुरी के अनुरोध पर एक पखवारे में ही कर डाला था। एक बार ग्रियर्सन्स 'मैगनीज' के पुराने अंकों की कुछ कहानियों का दस-पन्द्रह दिनों में ही अनुवाद कर आपने 'प्रेमगंगा' के नाम से पुस्तक तैयार कर ली, जो लखनऊ की गंगा पुस्तकमाला से प्रकाशित और बनैली-राज्य के कुमार रामानन्द सिंह को समर्पित हुई। इसके लिए कुमार साहब ने आदरपूर्वक बुलाकर आपको पाँच सौ रुपये दिये थे।

५. संस्कृत से हिन्दी-अनुवाद के लिए प्रसिद्ध नवलकिशोर प्रेस से वाल्मीकीय-रामायण के विषय में बहुत दिनों से पत्र-व्यवहार हो रहा था।

६ भारत-जीवन प्रेस, बनारस से प्रकाशित।

७. जासूसी उपन्यास। सन् १९०८ ई० में प्रकाशित।

तरंगिणी, (९) मातृवन्दना, (१०) सन् सत्तावन का गदर, (११) सूर्योदय (नाटक), (१२) रँगीली दुनिया, (१३) ईसप की कहानियाँ (३ भाग)[1], (१४) सिपाही-विद्रोह, (१५) सीता, (१६) शकुन्तला, (१७) सती-पार्वती, (१८) पचशर (गद्य-काव्य), (१९) उद्भ्रान्त प्रेम, (२०) अन्नपूर्णा का मन्दिर, (२१) किन्नरी, (२२) इन्दुमती, (२३) प्रेमगंगा (२४) प्रेमिका, (२५) जल-चिकित्सा, (२६) सुशील-शिक्षा, (२७) चन्द्रकुमार वा मनोरमा,[2] (२८) सच्ची मैत्री, (२९) बाल-गल्पमाला, (३०) पंजाब-हत्याकाण्ड, (३१) हिन्दी-बँगला-कोश, (३२) रामचरित्र[3] आदि।[4]

सन् १९२७ ई० की २२ जुलाई को 'हिन्दू-पंच' का सम्पादन करते हुए, कलकत्ता में ही, दो-तीन घण्टे की बीमारी से आपकी मृत्यु हो गई।[5]

उदाहरण

(१)

'मनोरजंन' ने जिस समय बिहार प्रान्त में कार्य करना आरम्भ किया था, उस समय इस प्रान्त में एकमात्र 'लक्ष्मी' ही एक ऐसी मासिक पत्रिका थी जो अच्छी श्रेणी में गिनी जाती थी, परमात्मा की दया और हिन्दी के धुरन्धर लेखकों और कवियों की लेखनी का साहाय्य पाकर 'मनोरंजन' ने वर्ष ही भर में पत्र-साहित्य में एक अच्छा स्थान प्राप्त कर लिया, पर कहते दुःख होता है कि इसके प्रकाशन का भार भी हमारे ही निर्बल स्कन्धों पर रहने के कारण अर्थ की कृच्छ्रता से और प्रेस अपना न होने से गत वर्ष इसका जीवन नितान्त ही संशयापन्न हो गया था और यदि हरिदास एण्ड कम्पनी के सुयोग्य संचालक पण्डित हरिदासजी वैद्य अपनी दयालुता से इसे फिर नहीं अपनाते तो शायद 'मनोरंजन' फिर नहीं निकल पाता, पर उक्त महोदय ने जिस प्रकार उत्साह देकर प्रथम वर्ष इसे निकलवाया उसी प्रकार

---

१. 'हिन्दी-पुस्तक साहित्य' (माताप्रसाद गुप्त, सन् १९४५ ई०), पृ० ३८५-८६।

२. सन् १९११ ई० में भारत-जीवन प्रेस से प्रकाशित।

३. इस बृहत् ग्रन्थ के प्रकाशित होने पर बनैली-नरेश राजा कीर्त्यानन्दसिंह बहादुर ने आपको एक हजार रुपये का सम्मान-पुरस्कार दिया था। यह ग्रन्थ उन्हीं को समर्पित है।

४. आपकी रचनाओं की तालिका के लिए देखिए, 'हिन्दी-पुस्तक-साहित्य' (वही), पृ० ३८५-८६।

५. 'बिहार के नवयुवक-हृदय' (वही), पृ० ३२-३३।

मरने से भी इसका उद्धार किया और इसने फिर दुनिया का मुँह देखा। अबके प्रबन्ध अच्छा कर लिया गया है और यदि हमारे ग्राहको ने पुरानी गड़बड़ी का खयाल छोड़कर सहायता की कमर कसी तो दो ही चार महीनो में इसकी रही-सही त्रुटियाँ भी दूर हो जायेंगी और कुछ ही अंकों के बाद चित्र और पृष्ठ तथा कागज की किस्म बढ़ाने का उद्योग किया जायगा। आशा है कि हमारे पाठक 'मनोरंजन' की सहायता को अग्रसर होंगे।[१]

(२)

बाँकीपुर के बैरिस्टर मि० मजहरुल हक़ इस वर्ष बिहारी-छात्र-समिति के सभापति थे। आपने अपने भाषण मे छात्रों के हित की अनेक बातें कही। राजनीतिक आन्दोलनों मे छात्रों का पड़ना आपने उनके लिए बड़ा हानिकार बतलाया और, कहा कि विद्यार्थी-अवस्था राजनीतिक विषयों की चर्चा करने का उचित समय नही है।....... अपने भाषण के मध्य उन्होंने बाल्मीकि-रामायण की बड़ी प्रशंसा की। कहा—"ए मेरे मुसलमान भाइयों! आपलोग यदि पितृभक्ति, मातृभक्ति, स्वामिभक्ति और एकपत्नीव्रत का महान आदर्श एक साथ ही देखना चाहते हों तो बाल्मीकि-रामायण पढ़ें। अगर आपने अबतक उसे नहीं पढ़ा है तो सच जानिए, आप संसार के एक अमूल्य और अनुपम रत्न ने वंचित रहे हैं। बाल्मीकि-रामायण अद्वितीय रत्नो की बड़ी भारी खान है।"

मि० हक़ के इस बाल्मीकि-प्रेम की बात सुन किस हिन्दू को प्रसन्नता न होगी? हमने सुना है कि आप सदैव बाल्मीकि का पाठ किया करते हैं। मि० हक़ हिन्दू-मुसलमानों में मेल कराने की बराबर

---

१. 'मनोरंजन' (भाग ३, संख्या २, ज्येष्ठ, सं० १९७२ वि०) के 'विविध विषय' के 'वक्तव्य' शीर्षक से, पृ० ३१।

चेष्टा करते है और अपनी हरकतो से तो वे कभी अपने को मुसलमानों का उत्कट हितैषी और हिन्दुओं का विरोधी नही प्रमाणित करते। आप कहते है कि ये दोनो जातियाँ भारत की दो बाहें है, एक के कटने से या उसमें पीडा पहुँचने से दूसरी को जरूर ही तकलीफ पहुँचेगी। अतएव, कभी इसमे मतभेद होना ठीक नही। ऐसे उदार-बुद्धि मुसलमान नेताओं की संख्या में जैसे-जैसे वृद्धि होती जायगी तैसे-तैसे हिन्दू-मुसलमानो के बीच की अनर्थकरी फूट दूर होती जायगी।[1]

(३)

बँगला-साहित्य मे जिन साहित्य-रथियों ने अपनी अमृत-प्रसविनी लेखनी से जान डाल दी थी और उसकी उन्नति के प्रधान सहायक बने थे उनमे प्रात.स्मरणीय पण्डित ईश्वरचन्द्र विद्यासागर भी अन्यतम थे। आज जो बंगला-साहित्य इतनी उन्नत अवस्था मे दीख पड़ता है, उन दिनो इसकी वैसी भी अवस्था नही थी, जैसी आज हमारी मातृभाषा हिन्दी की है। उसके—पढने योग्य, स्कूलो के विद्यार्थियों मे प्रचलित होने योग्य पुस्तकों का बड़ा अभाव था। विद्यासागर महाशय ने इस अभाव को दूर करने का बीड़ा उठाया और उनके संकल्प के फलस्वरूप जो पुस्तकें प्रकाशित हुई उनमें 'शकुन्तला' और 'सीता-वनवास' का खूब आदर हुआ। साहित्य के उस दुर्भिक्षकाल में इन पुस्तकों की जो प्रतिष्ठा थी आज इस सुदिन मे भी उनका वही सम्मान है। इन पुस्तकों को बालक, वृद्ध, युवा, स्त्रियाँ सभी बड़े चाव से पढ़ते और इनकी शिक्षाओ को हृदयङ्गम करते है।[2]

---

१. 'मनोरजन' (भाग २, सख्या ६–७, बैशाख, ज्येष्ठ, सं० १९७१ वि०) के 'विविध विषय' के 'मिस्टर मजहरूल हक और बाल्मीकि' शीर्षक से, पृ० २०९।

२. 'सीता-वनवास' (अनु० प० ईश्वरीप्रसाद शर्मा, सन् १९२३ ई०), पृ० १ (पूर्वकथन)।

(४)

बजा नगाड़ा है चौपट का चारों ओर मचा अन्धेर ।
माल मारते हैं मूजी सब मिले नहीं सज्जन को बेर ॥
बदमाशों की बन आयी है, सब मिल पूजे उनके पैर ।
सीधे-सादे बेचारों की कही नही दिखलाती खैर ॥
जाति-देश के नेता पद तक पा जाते है लंठ-लबार ।
क्यों न रकम वे हजम करें ! क्यों चन्दा जावें नहीं डकार ॥
देश-प्रेम का दम भर-भर के भरमाया लोगो को खूब ।
अपना काम बनाया सब बिधि, दुनियाँ को लूटा है खूब ॥
ऐसे ही चौपटानन्दो ने असहयोग की थाम लगाम ।
लुटिया खूब डुबायी इसकी हुए आप पूरे बदनाम ॥
चन्दा खाया, फण्ड सफाया किया, हुए बस मालामाल ।
छोड़ देश-सेवा का धन्धा, अब है पूरे बने दलाल ॥[1]

(५)

कविता की तोड़ू टाँग, महाकवि मैं हूँ ।
भाषा की ले लूँ जान, सुलेखक मैं हू ॥
मैं छन्द-बन्द का हाल न कुछ भी जानूँ ।
व्याकरण बिचारे को मैं फिर क्यों मानूँ ?
गुण, अलंकार, रस, रीति नहीं है जानो ।
इनकी मेरे आगे मरती है नानी ॥
कविता के नियमों का मुझको न पता है ।
स्वाभाविक कवि विरला ही हो सकता है ॥

१, 'चना-चबेना' (पं० ईश्वरीप्रसाद शर्मा, सं० १९८१ वि०), पृ० ४३ ।

कवि होकर निकला मातृगर्भ से मै हूँ।
मुझ-सा है जग मे कौन? एकता मै हूँ॥
यदि काव्यशास्त्र की बात चलाये कोई।
यदि छन्द-शास्त्र का नियम पूछता कोई॥
तो मुँह बा देता, आँख नचाता, हँसता।
मै झटपट उससे अटपट बाते कहता॥
बस गाल बजाना, बात बनाना आता।
औरों पर झूठा रोब जमाना आता॥
मैं कवि हूँ, मै ही कवि हूँ—लासानी हूँ।
मैं काव्य-जगत का राजा औ रानी हूँ॥[1]

(ठाकुर) उदयनारायण सिंह

आप मुजफ्फरपुर-जिला के 'मधुरापुर' (पो० विदुपुर) नामक स्थान के निवासी ठाकुर शिवराम सिंहजी के पुत्र थे। आपका जन्म सन् १८५४ ई० की ६ जनवरी को हुआ था।[2] आप हिन्दी-संस्कृत आदि भाषाओं के ज्ञाता थे। आपने सन् १८९६ ई० से सन् १९०५ ई० तक इटावा (उत्तरप्रदेश) के ब्रह्मप्रेस मे सेवा की। सन् १९०६ से १९०७ ई० तक वही आपने व्यवस्थापक के पद पर काम किया। आपने अपने 'मधुरापुर'-गाँव मे ही 'शास्त्रप्रकाश-भवन' नामक एक प्रकाशन सस्था खोली थी, जिससे आपके द्वारा लिखित पुस्तकों का प्रकाशन होता रहा। इस संस्था के द्वारा आपने संस्कृत के कई शास्त्रीय ग्रन्थो को हिन्दी मे अनूदित करके प्रकाशित किया। आपके कुछ ग्रन्थ दूसरी प्रकाशन-संस्थाओ से भी प्रकाशित हुए थे। आपके प्रकाशित ग्रन्थों की तालिका इस प्रकार है (१) संस्कृत-प्रवेशिका, (२) सूर्यसिद्धान्त (भाषाटीका सहित), (३) आर्यभट्टीयम् (सटीक सानुवाद—दो संस्करण मुद्रित) (४) न्याय दर्शन (सटीक-सानुवाद—दो संस्करण मुद्रित), (५) गोभिलगृह्यसूत्र (सटीक-सानुवाद—दो संस्करण मुद्रित), (६) खादिरगृह्यसूत्र (सटीक सानुवाद), (७) द्राह्यायणगृह्यसूत्र (सटीक सानुवाद)

---

१. 'चना-चबेना' (वही), पृ० ५५-५६।

२. आपके पुत्र डॉ० इन्द्रदेवनारायण सिंह (मधुरापुर, पो० विदुपुर, जिला-मुजफ्फरपुर) द्वारा प्राप्त सूचना के आधार पर।—देखिए, 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही पृ० ३१०) भी।

(८) वाराहगृह्यसूत्र (सटीक सानुवाद), (९) कौशिकगृह्यसूत्र (सटीक सानुवाद), (१०) सर्वदर्शनसंग्रह (सटीक सानुवाद)[1], (११) सिद्धान्तशिरोमणि (भाषाटीका)[2], (१२) जीवनमुक्तिविवेक, (१३) महावाक्यरत्नावली (भाषाटीका)[3] और (१४) क्षत्रिय-वंशावली[4]। इनके अतिरिक्त और भी गृह्यसूत्रों के हिन्दी अनुवाद आपने तैयार किये थे, जो पूरे न हो सके। आपका देहान्त ९७ वर्ष की अवस्था में, सन् १९५१ ई० में हो गया।

उदाहरण

(१)

कपिल जैमिनि प्रभृति महर्षियों ने वेदों ही का अवलम्बन कर अपना-अपना मत स्थापन किया है और वेद के प्रमाणों के निश्चय के लिए अपना-अपना समय नास्तिकों से वेदोक्त धर्म के रक्षार्थ—तर्क-शास्त्र से सर्वसाधारण को अवगत होना बहुत आवश्यक समझ कर प्रथम हमने गौतमीय न्यायभाष्य का भाषानुवाद किया है। इस न्यायशास्त्र के भाष्य के भीतर बहुत-से वार्त्तिक मिल गये हैं। इसका कारण—लिपिकारों का प्रमाद मात्र है। हमने अपने बड़े परिश्रम से लगभग न्यायशास्त्र की बीसों प्रतियों के अवलोकन तथा उनकी टीका आदि को देखभाल कर सूत्र, भाष्य और वार्त्तिकों का पता लगाया है, जिससे सर्वशुद्ध प्रति तय्यार कर पाठकों के लाभार्थ इसका मुद्रण कराया है। इस न्यायशास्त्र में ५ अध्याय, १० आह्निक, ५३० सूत्र और ९५ वार्त्तिक हैं।[5]

(२)

विशेषतः गृह्यसूत्रों में स्मार्त्त धर्म्मों का विधान होने से—इस समय कर्मों मे प्रवृत्ति कराने के लिए गृह्यसूत्रों का प्रकाशन करना

---

१. वेंकटेश्वर-प्रेस, बम्बई द्वारा प्रकाशित।
२. वहीं से प्रकाशित।
३. चौखम्भा प्रेस, काशी द्वारा प्रकाशित।
४. वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई द्वारा प्रकाशित।
५. 'न्यायदर्शनम्', (सन् १९२४ ई०, द्वितीयावृत्ति) की प्रस्तावना का एक अंश।

आवश्यक है। श्रौत तथा गृह्यसूत्रोक्त पशु संज्ञपन विचार॥ जिस काल में और जिस रीति से जो काम, जिसके लिये कर्त्तव्य कहा है, वह उसी, देशकाल में, उसी रीति से किया हुआ, उसी मनुष्य के लिए उचित धर्म है। अन्यथा किया हुआ, वही अधर्म हो जाता है। जैसे—रोना सर्वत्र बुरा समझा जाता है परन्तु वेद प्रमाणानुसार पिता के घर से पतिगृह को जाती हुई कन्या का रोना अच्छा माना जाता है। गाली देना सर्वत्र बुरा काम है, पर विवाह में स्त्रियाँ तथा पुरुष गालियों को शुभ मानते है। इस के अनुसार यज्ञादि मे पशुओं का आलम्भन भी पूर्वकाल में बुरा नहीं माना जाता था। परन्तु लोक-रीति से अपना मांस बढ़ाने के लिए शास्त्र-विरुद्ध पशु-हिंसा अत्यन्त बुरी मानी जाती थी।[1]

उमानाथ पाठक 'चातुर'

आप गया-जिला के बहेलिया बिगहा-निवासी प० रामाधीन पाठक के पुत्र हैं।[2] आपका जन्म स० १९५४ वि० (सन् १८८७ ई०) की पौष शुक्ल-त्रयोदशी को हुआ था।[3] टेकारी (गया) की प्राइमरी पाठशाला की शिक्षा समाप्त कर आप वही के राज हाइस्कूल मे पढते रहे। आपने सन् १९३१ ई० मे प्रयाग हिन्दी साहित्य सम्मेलन की 'विशारद' परीक्षा पास की। टेकारी मे श्रीसरस्वती पुस्तकालय आपके ही उत्साह एव प्रयत्न से स्थापित है। 'धरनी-विलाप' और 'ऋतु-संहार', इन दो अप्रकाशित पुस्तको के अतिरिक्त आपने 'चातुर-दोहावली, (प्रथम भाग)[4] और 'अक्षर-चालीसा'[5] नामक दो पुस्तकें लिखी, जो प्रकाशित हैं। इसके अतिरिक्त, आपकी कुछ स्फुट रचनाएँ भी यत्र-तत्र प्रकाशित मिलती है। अपनी उत्कृष्ट काव्य-रचनाओ के द्वारा आप पुरस्कृत भी हुए है।[6]

---

१ 'गोभिलगृह्यसूत्रम्' (सन् १९३४ ई०, द्वितीयावृत्ति) की प्रस्तावना से।

२ आप बिहार के लब्धप्रतिष्ठ व्यक्ति पं० गयादीन पाठक के पौत्र हैं।

३ आपके ही द्वारा प्रेषित विवरण के आधार पर। उक्त विवरण के अतिरिक्त आपके परिचय-लेखन में 'गया के लेखक और कवि' (वही, पृ० १३) नामक पुस्तक से भी सहायता ली गई है।

४ स० २००८ वि० में लेखक द्वारा प्रकाशित।

५. स० २०१२ वि० में पं० मोहन पाठक (बहेलिया बिगहा, टेकारी, गया) द्वारा प्रकाशित।

६, एक बार बिहार-प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के अवसर पर होनेवाले कवि-सम्मेलन में

उदाहरण

(१)

कृष्णगोपाल बाबू से मेरा सम्पर्क उनके बाल्यकाल से ही था। उनका बाल्यकाल एवं विद्यारंभ हमारे ही इस छोटे से ग्राम से प्रारम्भ हुआ। तत्पश्चात् उन्होंने स्थानीय हाई स्कूल (टिकारी) से प्रथम-श्रेणी में मैट्रिक की परीक्षा पास की और अपने स्कूल मे सर्वप्रथम उत्तीर्ण होने के कारण छात्रवृत्ति प्राप्त की। और मै उस उदीयमान बालक की साहित्यिक प्रतिभा से मुग्ध होकर ही उसकी ओर आकृष्ट हुआ। उसके वियोग में आज भी मेरा स्नेहपात्र रिक्त प्रतीत हो रहा है। वह मेरा अन्यतम आत्मीय था। उन्हे हिन्दी-साहित्य में पटना युनिवर्सिटी में सर्वप्रथम आने के कारण सिफ्टन स्वर्ण-पदक भी प्राप्त हुआ। उन्हें इतिहास में आनर्स भी मिला। यह सब उनकी प्रखर बुद्धि एवं असाधारण प्रतिभा का परिचायक है। मुझे तो बाल्य जीवन से ही उनकी असाधारण प्रतिभा का परिचय मिलने लग गया था और इस कारण उनके प्रति मेरी निष्ठा बढती ही गयी। तत्पश्चात् उन्होंने वकालत पास किया और कुछ दिन गया में वकालत करने के बाद उसमें रुचि न रहने के कारण अपने स्थानीय टिकारी राजस्कूल में हिन्दी अध्यापक हो गये। इस प्रकार प्रारम्भ से ही वे सरस्वती के उपासक रहे

आपको सर्वोत्तम कवि-पुरस्कार, एक 'स्वर्ण-पदक' मिला। निर्णायक थे प० अक्षयवट मिश्र 'विप्रचन्द्र' और बाबू लाला भगवान 'दीन'। आपको टीकमगढ (ओरछा, विन्ध्यप्रदेश) की महारानी द्वारा भी पुरस्कार-स्वरूप अयोध्या के स्वर्ग-द्वार में एक मकान और सनद प्राप्त होने की सूचना मिलती है।

अपनी काव्य-रचना के विषय में आपने स्वयं इस प्रकार लिखा है—

> कुछ शक्ति मिली जो निसर्ग ही से तुकबन्दियाँ मैं करने लगा था।
> कृतविद्य कविंदन की रचना सुनके-गुनके मुद में पगा था॥
> रस भाव अलंकृति ज्ञान बिना मन मौज के रंग ही में रंगा था।
> कल कल्पना मेरी हुई थी सगी, हुआ चातुर मैं उसका सगा था॥

—कवि से प्राप्त।

और अध्ययनोपरान्त कुछ कालोपरान्त सरस्वती की सेवा में दत्तचित्त हो गये।.........आत्मा अमर है और साहित्य और आत्मा का अविभाज्य सम्बन्ध है। तो उन साहित्यिक कृष्णगोपाल की आत्मा को यह समर्पण अवश्य स्वीकार होगा, ऐसा मुझे पूर्ण विश्वास है।[1]

(२)

अति अनियारे रतनारे कजरारे चारु
चौकत चकित चाह भरे चोजवारे है।
असम सरासन के असह अमोघ अस्त्र
गॅसै निकसै न कुंत कोर कसवारे है।
पानिप-सो पूरे प्रिय रूप सुधा प्यासे सदा
सजन सनेह के सकल हकारे हैं।
खंजन कमल मृग मीन के गरब हर
चातुर अजब लोल लोचन तिहारे है।।[2]

(३)

अवधबिहारी सुनो विनती हमारी आज,
आज ही हमारो अबै न्याउ निपटाइये।
कीरति तिहारी ख्यात भूपति मुकुट मनि,
मरजाद पुरुसोत्तम नाम क्यों लजाइये।
बाउर है, भल है, तिहारो जन सबै कहै,
साँसत पर्‌यो उर मैं बिलम्ब न लगाइये।
सोक हरि केते निवसाये निज लोकहिं त्यों,
चातुर निचित करि अवध बसाइये।।[3]

१ 'अक्षर-चालीसा' (पं० उमानाथ पाठक 'चातुर', सं० २०१२ वि०), पृ० १-२ (समर्पण)।
२ आपके द्वारा प्रेषित सामग्री से।
३, आपके द्वारा प्रेषित सामग्री से।

(४)

अन्तर बाहिर एक समाना, सब सो हितमित बैन बखाना।
श्रुति पुराण ईश्वर अनुरागी, चातुर वहै सत बड भागी ॥
छल बल हरि जे पर धन दारा, चाहहि निज सुख सुयश पसारा।
ते कुल सहित अवश्य नसानें, चातुर शास्त्र पुराण बखाने ॥
जनता असन बसन बिनु रोवै, अधिकारी सुख निदिया सोवै।
जल थल तजि अकाश पथ धावै, चातुर बातैं बड़ी सुनावै ॥
झगरा झंझट चोर बाजारी, ठगी, डकैती, प्रबलात्कारी।
चातुर अधिक अधिक अधिकाई, कलि को रामराज्य यह भाई ॥[1]

(५)

अधर सुधारस नित पियै, कर-कमलन करि वास।
चातुर हरि की बाँसुरी, करै त्रिलोक उजास ॥
असन बसन आसन जहाँ, जब जैसो मिलि जाय।
चातुर मन संतोस तो, सदा सुखद सब ठाँय ॥
अधिकारी वंचित रहै, आदर लहै लबार।
चातुर जिनसे वे मनुज, वादि रचे करतार ॥
अति अनीति फैली लखो, जगन्नाथ जग बीच।
चातुर सीदहि साधु अरु, गाल बजावहि नीच ॥
करनी नीकी जो करै, सुख पावै परिनाम।
चातुर जन सुमिरे सदा, सादर ताको नाम ॥
करुना - निधि सीकर-कृपा, छिरकहु हमरी ओर।
चातुर आतुर करुण स्वर, विलपत करत निहोर ॥
कुदिन अंधेरी रात मग, पिच्छिल व्यसनन कीच।

---

१ 'अक्षर-चालीसा' (वही), पृ० ८ और १० ।

रामनाम कर लकुटिया, चल चातुर दृग मीच ॥
चातुर विकल गुलाब पर, बसि इमि लसत मलिन्दु ।
मनहुँ प्रगट अनुराग पर भयो आदि-रस बिन्दु ॥
चातुर संकट के परे मन अधीर क्यों होय ।
जन्म कम दाता जो प्रभु, अवसि उबारहिं सोय ॥
चातुर बंसी बाँस की, कस नहिं करै गुमान ।
चाखि अधर-रस स्याम को भयी सुधा की खान ॥[1]

उमापतिदत्त शर्मा

आप शाहाबाद-जिला के डुमराँव-थाने के अन्तर्गत 'चिलहरी' नामक ग्राम के निवासी प० शिवदहिन पाण्डेय[2] के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९२९ वि० की कार्तिक शुक्ल-तृतीया, तदनुसार सन् १८७२ ई० के ५ नवम्बर (सोमवार) को हुआ था।[3] आप जब कुल छह वर्ष के थे, तभी आपके पिता का स्वर्गवास हो गया। आपकी माता ने आपकी शिक्षा दीक्षा का विशेष ध्यान रखा। आपका लालन-पालन धार्मिक वातावरण मे हुआ। अत बाल्यकाल से ही आपका अनुराग धार्मिक ग्रन्थो के प्रति हो गया। आपकी शिक्षा क्रमशः डुमराँव, आरा, बनारस और प्रयाग मे हुई। आप सन् १८९१ ई० मे बनारस के क्वीन्स कॉलेज से एण्ट्रेंस की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे छात्रवृत्ति लेकर पास की। सन् १८९३ ई० मे, उक्त क्वीन्स कॉलेज से आपने एफ्० ए० और सन् १८९५ ई० मे, प्रयाग-विश्वविद्यालय से बी० ए० की परीक्षाएँ पास की। इसके बाद, एक वर्ष तक आप एम्० ए० परीक्षा के लिए सस्कृत एव दर्शन विषय का अध्ययन करते रहे। उसी वर्ष सोनबरसा (भागलपुर) के राजा के यहाँ आपकी प्रथम नियुक्ति हुई। जब आप उक्त स्थान के हाइस्कूल के प्रधानाध्यापक-पद पर कार्य कर रहे थे, तब सन् १८९८ ई० मे 'हिन्दी बंगवासी' (कलकत्ता) के स्वामी ने आपको उस पत्र का सहकारी सम्पादक बनाना चाहा,

---

१. 'चातुर-दोहावली' (श्रीउमानाथ पाठक 'चातुर', स० २००८ वि०), पृ० २, ३, ८, १५, २० और २१।

२. ये सस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् एव ज्योतिषशास्त्र के अच्छे ज्ञाता थे।

३. विभाग में सुरक्षित सामग्री के आधार पर। आपके परिचय-लेखन में उक्त सामग्री के अतिरिक्त 'गंगा' (भागलपुर, प्रवाह १, तरंग ४, फरवरी, सन् १९३१ ई०, पृ० ३८२-८३) में छपी जीवनी और 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६५०) में मुद्रित विवरण से भी सहायता ली गई है।

पर आपने अपनी असमर्थता प्रकट की। सन् १६०१ ई० मे आपने सारे भारत मे भ्रमण किया और जूनागढ मे अच्छी प्रतिष्ठा पाई। उक्त भ्रमण से लौटने पर सन् १६०२ ई० मे आपकी नियुक्ति कलकत्ता के विशुद्धानन्द सरस्वती विद्यालय मे संस्कृत-शिक्षक के पद पर हुई। सन् १६०३ ई० मे आप उक्त विद्यालय के प्रधानाध्यापक हो गये और सन् १६०६ ई० तक उस पद पर सफलतापूर्वक कार्य करते रहे। तदनन्तर, कुछ दिनो के लिए आपकी नियुक्ति बगाल सरकार के अनुवाद विभाग मे सहायक अनुवादक के पद पर हुई। उन्ही दिनो आप एशियाटिक सोसाइटी ऑव बगाल, रॉयल एशियाटिक सोसाइटी ऑव ग्रेट-ब्रिटेन ऐण्ड आयरलैण्ड, वंगीय-साहित्य-परिषद् (कलकत्ता), साहित्य-सभा (कलकत्ता) आदि अनेक सस्थाओं के सदस्य और कलकत्ता-विश्वविद्यालय के परीक्षक चुने गये। इस समय तक काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा तथा आरा (शाहाबाद) नागरी-प्रचारिणी सभा के आप एक प्रधान सदस्य हो चुके थे। सन् १६०६ ई० मे ही आपकी नियुक्ति सस्कृत-प्राध्यापक एव धर्म-नीति के शिक्षक के रूप मे डिविजनल कॉलेज, मेरठ (उत्तरप्रदेश) मे हुई, जहाँ आप केवल एक वर्ष रहे।

आपको पाण्डित्य एव प्रतिभा पैतृक विरासत के रूप मे प्राप्त थी। आपका वास्तविक साहित्यिक जीवन कलकत्ता के 'हितवार्ता' से प्रारम्भ होता है। मुख्यत इसी मे आपके हिन्दी-लेख प्रकाशित हुआ करते थे। उक्त पत्रिका मे ही आपका 'आर्यभाषा' नामक लेख धारावाहिक रूप मे प्रकाशित हुआ था, जो आगे चलकर उसी नाम से पुस्तकाकार मुद्रित हुआ। उक्त पत्रिका के अतिरिक्त 'हिन्दी-प्रदीप' 'भारत मित्र', 'हिन्दी बगवासी' तथा अन्य पत्र पत्रिकाओ मे आपके ज्यौतिष, भाषा-विज्ञान, नीति एवं साहित्य-सम्बन्धी अनेक लेख बिखरे पडे हैं। अपने कलकत्ता-प्रवास मे आपने वहाँ 'एकलिपि-विस्तार-परिषद्' नाम की एक अद्वितीय सस्था को स्थापना करने मे अथक परिश्रम किया था। इस सस्था का उद्देश्य था समस्त भारत मे एकमात्र देवनागरी-लिपि का विस्तार करना।[1] कहते है, हिन्दी संसार मे आपने ही सबसे पहले यह प्रस्ताव उपस्थित किया कि हिन्दी-साहित्यसेवियो का एक अखिलभारतीय सम्मेलन होना चाहिए।

आपने विद्यालयो मे 'धार्मिक शिक्षा के लिए ऋजुस्तवमजूषा'[२] नामक एक सनातन-धर्म सम्बन्धी पुस्तक तैयार की थी, जिसकी प्रशसा तत्कालीन विद्वानो ने मुक्त कण्ठ से की थी।[२] इसके अतिरिक्त आपने फ्रेंच-भाषा से नेपोलियन की जीवनी का हिन्दी-अनुवाद भी किया था, जो कलकत्ता की हिन्दी-ट्रांसलेटिंग कम्पनी के द्वारा प्रकाशित हुआ था। आपके संग्रहालय को देखने से पता चलता है कि आप विदेशी भाषाओ के, जैसे जर्मन, फ्रेंच, सिंहली, स्यामी तथा अन्य पूर्वीय भाषाओ के भी अच्छे जानकार थे। आपने विदेशियों को हिन्दी-संस्कृत

---

१. सन् १६०४ ई० के ३१ दिसम्बर को कलकत्ता-हाइकोर्ट के जज श्रीशारदाचरण मित्र ने देवनागराक्षर की उत्तमता पर एक लेख 'कलकत्ता युनिवर्सिटी इन्स्टीच्यूट' में पढा था। उसी को सुनकर उक्त परिषद् की स्थापना की इच्छा आपके हृदय में हुई और १ जुलाई, सन् १६०२ ई० में आप उसकी स्थापना करने में सफल हुए। इस सस्था का मुखपत्र 'देवनागर' प्रकाशित होता था, जिसमें सभी भाषाओं के लेख देवनागरी-लिपि में छपते थे।

२ यह पुस्तक कई विद्यालयों में पाठ्य-पुस्तक के रूप में स्वीकृत की गई थी। उस समय तक इसके चार-चार सस्करण हो चुके थे।

की शिक्षा देने का कार्य भी कुछ दिनो तक किया था। इस दिशा मे आपके कार्यों की, महामना प० मदनमोहन मालवीय, महामहोपाध्याय प० सुधाकरप्रसाद द्विवेदी, श्रीसुरेन्द्रनाथ बनर्जी आदि ने भूरि-भूरि प्रशसा की थी। आपका शरीरान्त सन् १९११ ई० मे हुआ।

उदाहरण

(१)

बीरछबि आजु की अमंद लखि तेरे सौह
डोलत कपोलन पै कुण्डल मनी रहै।
मुकुट पै मोरपंख मण्डित अखण्ड लसै
चन्दन के बिन्दु चारु सुखमा बनी रहै॥
पीत पट स्याम जनु दामिनी अदंक चिर
कीधौं मकरन्द पै मिलिन्द उमगी रहै।
भनत 'उमा' कवि कोटि काम घटत हेरि
गोपी-बधूटी नैन-टकटकी लगी रहै॥[1]

(२)

जोगी सदा बिषया-रस मे कबहूँ न रखै मति जो त्रिपुरारी।
मन्मथ अङ्ग-बिहीन कियो इमि कारन जो न रहे गृहचारी॥
सो प्रभु ठानि हिमाचल पै तप ध्यान धरै गिरिराज-कुँआरी।
मोहि गयो सिव जोग भुलाय 'उमा' लखि आजु कि मोहनि डारी॥[2]

उमेश मिश्र

आप प्रसिद्ध स्थान जनकपुर (मिथिला) के समीपस्थ 'बिन्ही'[3] नामक ग्राम के निवासी, संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् महामहोपाध्याय प० जयदेव मिश्र के पुत्र थे। आपका जन्म सन्

१. 'रसिकमित्र' (मासिक, कानपुर, वर्ष ४, सख्या ६, सन् १९०१ ई०), पृ० २१।
२. वही (वर्ष ४, सख्या १०, सन् १९०१ ई०), पृ० २५।
३. 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६२,४१३), 'बिहार-अब्दकोष' (वही, पृ० ६५२), 'पंचदश लोकभाषा-

१८९५ ई० के १८ जून को हुआ था।[1] लगभग सात वर्ष की आयु मे, अपनी माता की मृत्यु हो जाने के दूसरे वर्ष ही, आप अपने पिता के साथ काशी चले आये। अपनी तीव्र स्मरण-शक्ति एव अनवरत परिश्रम से आपने थोडे ही समय मे साहित्य, व्याकरण, दर्शन आदि शास्त्रो का अध्ययन अपने पिता के चरणो मे बैठकर पूरा कर लिया। सस्कृत के पुराणो एव आकर-ग्रन्थो के अध्ययन मे आपके चाचा प० मधुसूदन मिश्र के कुशल-निर्देशन ने भी आपकी बडी सहायता की। काशी मे आपने प्राच्य शास्त्रीय रीति की प्राचीन गुरु परम्परा के अतिरिक्त, नवीन आँग्ल पाश्चात्य रीति के अनुसार भी सस्कृत का अध्ययन अनेक विद्वानो का अचार्यत्व प्राप्त कर किया।[2] आपने काशी-हिन्दू विश्वविद्यालय से सन् १९२२ ई० मे संस्कृत एव दर्शन मे एम्० ए० की उपाधि प्राप्त की। उसके पश्चात् अगले वर्ष ही आपने कलकत्ता के संस्कृत-एसोसिएशन से 'काव्यतीर्थ' की उपाधि ली। उसी वर्ष दर्शनशास्त्र के अध्यापन के लिए आप सस्कृत-लेक्चरर के पद पर प्रयाग-विश्वविद्यालय मे नियुक्त हो गये। लगभग दस वर्ष की गहन साधना के फलस्वरूप 'भौतिक पदार्थ-विवेचन' (Conception of Matter)-विषय पर प्रयाग-विश्वविद्यालय से आपको डी० लिट्० की उपाधि प्राप्त हुई। फिर, सन् १९४३ ई० मे भारत-सरकार ने सस्कृत को सर्वोच्च राजकीय उपाधि 'महामहोपाध्याय' से आपको सम्मानित किया।

आप सन् १९२३ से ५९ ई० तक यानी छत्तीस वर्षों तक प्रयाग-विश्वविद्यालय मे रहकर वेद, काव्य, मीमासा, धर्मशास्त्र दर्शनशास्त्र आदि की शिक्षा उच्चवर्गीय छात्रो को देते रहे। आपके अनेक छात्र 'डॉक्टर ऑव फिलॉसफी' की उपाधि से विभूषित हो चुके हैं। आपका द्वार जिज्ञासु अनुसन्धायकों के लिए अहर्निश उन्मुक्त रहता था। सन् १९४९ ई० मे बिहार-सरकार के विशेष आमन्त्रण पर आप 'मिथिला शोध-संस्थान एवं विद्यापीठ' के प्रथम निदेशक एव प्रोफेसर के पद पर नियुक्त हुए थे, पर सन् १९५२ ई० में, पुन प्रयाग वापस चले गये। प्रयाग से अवकाश ग्रहण करने के बाद दरभगा मे जब सर कामेश्वर सिंह संस्कृत-विश्वविद्यालय की स्थापना हुई, तब आप ही तीन वर्षों तक उसके आद्य उपकुलपति-पद पर रखे गये। अपने जीवन काल मे आप अनेक सस्थाओं के निर्माता रहे और अनेक से पदाधिकारी रूप मे आपका सम्पर्क भी रहा। सन् १९४३ ई० में प्रयाग मे, 'गगानाथ झा अनुसन्धान-केन्द्र' की स्थापना अन्य व्यक्तियों के अतिरिक्त आपके सहयोग से भी हुई और

निबन्धावली' (बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, सन् १९६० ई०, पृ० २९३ तथा कुछेक अन्य ग्रन्थों में आप दरभंगा-जिला के 'गजहरा' नामक ग्राम के निवासी बतलाये गये हैं।

१. आपके द्वारा द्वारा प्रेषित सामग्री के आधार पर। पटना से प्रकाशित दैनिक 'आर्यावर्त्त' (५ सितम्बर, सन् १९५९ ई०, शनिवार) में मुद्रित डॉ० रामकुमार वर्मा द्वारा लिखित आपके परिचय में आपका जन्म-काल सन् १८९६ ई० (सन् १३०३ साल) का १८ जून बतलाया गया है। आपके परिचय-लेखन में उक्त सामग्री के अतिरिक्त 'A History of Maithili Litrature' (Dr Jayakant Mishra, Vol II, 1950, P 147) 'हिन्दीसेवी संसार' (वही, सन् १९५२-५३ ई० पृ० १५२) में प्रकाशित आपके विवरणों से भी सहायता ली गई है।

२ आपके गुरुओं में स्व० म० म० पं० शिवकुमार शास्त्री, स्व० म० म० पं० अम्बादत्त शास्त्री, स्व० म० म० वामाचरण भट्टाचार्य, स्व० म० म० पं० फणिभूषण तर्कवागीश, स्व० पं० राजनाथ मिश्र, आचार्य म०म० प० गोपीनाथ कविराज, स्व० म० म० पं० रामावतार शर्मा, स्व० प्रो० आनन्दशंकर बापूभाई 'ध्रुव' एवं स्व० म० म० डॉ० सर गंगानाथ झा के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

आप उसके मन्त्री निर्वाचित हुए। उक्त संस्था के त्रैमासिक 'अनुसन्धान-पत्र' का आप ही नियमित रूप से सम्पादन करते रहे। अखिल-भारत प्राच्यविद्या-सम्मेलन के १४वे अधिवेशन के आप ही मन्त्री थे और आगे चलकर आप उसके दर्शन एव प्राच्य-धर्म-विभाग के सभापति भी हुए। आप 'वैदेही-समिति', दरभगा तथा 'मैथिली-साहित्य-समिति', प्रयाग के भी सभापति थे। इसके अतिरिक्त, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, वैदिक धर्म-सम्मेलन, प्रयाग-धर्मज्ञानोपदेश-महाविद्यालय, तिरुपति प्राच्य-सस्थान आदि सस्थाओ से भी आपका सम्पर्क था।

आप बडे सौम्य, मृदुभाषी एवं सरल स्वभाव के व्यक्ति थे। आपका परिवार सनातनी है। चरित्र गठन एव सरल जीवन को आप सर्वोपरि मानते थे। आपके अपने निजी पुस्तकालय मे अँगरेजी, सस्कृत, हिन्दी, बंगला आदि के अनेक मुद्रित-अमुद्रित ग्रन्थ सुरक्षित थे।

आपने अँगरेजी[1], संस्कृत[2], हिन्दी मैथिली[3] आदि कई भाषाओ मे रचनाएँ की हैं। आपने अबतक ४० मौलिक ग्रन्थो एव लगभग ३०० अनुसन्धानात्मक निबन्धों की रचना की है जिनमे ३६ ग्रन्थ और २०० के लगभग निबन्ध प्रकाशित हो चुके है। इसके अतिरिक्त, आपने अबतक ६४ से अधिक पुस्तको का सुयोग्य सम्पादन, टिप्पणी, भूमिका आदि के साथ किया है, जिनमे -- (१) कृष्णजन्म, (२) कीर्तिलता, (३) कीर्तिपताका, (४) गोरक्षविजय, (५) जया, (६) विजया, (७) शास्त्रार्थ-रत्नावली आदि विशेषता से उल्लेखनीय हैं। हिन्दी मे प्रकाशित ग्रन्थो मे प्रमुख है—(१) प्राचीन वैष्णव सम्प्रदाय, (२) भारतीय दर्शन, (३) विद्यापति ठाकुर, (४) साख्ययोग-दर्शन, (५) मैथिली संस्कृति और सभ्यता, (६) तर्कशास्त्र की रूपरेखा आदि। इनके अलावा आपके नानाविषयक लेख विभिन्न सग्रह-ग्रन्थों एवं पत्र पत्रिकाओ मे प्रकाशित मिलते है।

उदाहरण

(१)

भाषा की अभिव्यक्ति मे शारीरिक बनावट का तथा भौगोलिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों का पूर्ण प्रभाव रहता है। इन्ही

---

१ अँगरेजी के प्रमुख ग्रन्थ—(1) A History of Indian Philosophy (in three vols), (2) Conception of Matter, (3) Dream theory in Indian thought, (4) Physical theory of sound, (5) Bhasker school of vedant and, (6) Nimbarka school of vedanta

२ संस्कृत की प्रमुख कृतियाँ—(१) न्यायकौस्तुभ, (२) विज्ञानदीपिका, (३) मीमासाशास्त्रसर्वस्व, (४) मेधातिथिमनुभाष्य, (५) तन्त्ररत्न आदि।

मीमांसक मुरारिमिश्र के ग्रन्थों तथा उनके मत का आधुनिक काल में आपने ही सबसे पहले प्रचार किया।

३. मैथिली की प्रमुख पुस्तकें—(१) गद्य-कुसुममाला, (२) गद्य-कुसुमांजलि, (३) साहित्यदर्पण (अनु०), (४) शकरमिश्र, (५) भवभूति, (६) नलोपाख्यान, (७) यक्ष-पाण्डव-संवाद आदि।

कारणो से एक प्राणी की भाषा दूसरे प्राणी की भाषा से भिन्न होती है। पारस्परिक भेद होने पर भी जितने अंशो मे उनके बोलनेवालो मे साम्य है, उतने अंशो मे उनकी भाषा मे भी समानता रहेगी। अत., पूर्व देश के वासियो की भाषाओं मे परस्पर भेद रहने पर भी किन्ही अंशों में कुछ तो ऐक्य है ही एवं यही साधर्म्य पुनः पश्चिम-देशवासियो की भाषाओं में वैधर्म्य हो जाता है। मनुष्य होने के कारण तथा वैखरी शब्दों के द्वारा वर्षों के उच्चरित होने से भारतीय भाषाओं के साथ भारतेतर देश-वासियों की भाषाओ मे भी कुछ साम्य तो है, फिर भी उपर्युक्त अन्य भेदकों के कारण इन दोनो प्रकार के देशवासियो की भाषाओं मे परस्पर इतना अधिक भेद है कि एक की भाषा को दूसरे कुछ भी नही समझ सकते है।'[1]

(२)

मालूम होता है कि वस्तुस्थिति को देखते हुए, मनुष्य के हृदय-गत भावों को ध्यान में रखते हुए, उनके स्वभाव के अनुकूल सरल किन्तु सरस शब्दों मे विद्यापति ने पदों की रचना की है। इसलिए इनके पदों मे स्वभावोक्ति अत्यधिक है। वयःसन्धि के पदो को लीजिए। शैशव और यौवन अवस्था के जितने लक्षण उन्हें स्त्रियों में देख पडे उन सबों को कवि ने चित्रित किये हैं। पुनः प्रातःकाल के वर्णन में कितनी अच्छी स्वभावोक्ति है। प्राकृतिक वस्तुओं का कितना मनोहर चित्रण इसमें है और पुनः मम्मट के शब्दों में 'कान्ता-सम्मित' उपदेश भी इसमें है। प्रेम के वास्तविक स्वरूप का उदाहरण कवि ने

---

१. 'पचदश लोकभाषा-निबन्धावली' (वही), पृ० १-२। डॉ० मिश्र बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् की निबन्ध पाठ-योजना के अन्तर्गत सन् १९६२ ई० में 'मैथिली-भाषा और साहित्य'-विषय पर लिखित भाषण देने के लिए आमन्त्रित हुए थे।

कितने अच्छे रूप में 'कबहुँ रसिक सँय' इत्यादि पद में दिखाया है। अभिसार के वर्णन में कवि ने नायिका के व्यवहार का चित्रण उसके स्वरूपानुरूप ही तो किया है। उत्प्रेक्षा में भी कवि ने अत्यधिक चमत्कार दिखाया है, इसमे सन्देह नही। नायिका के शरीर के गढ़ने मे और फिर उसके सौन्दर्य को पराकाष्ठा पर्यन्त पहुँचाने मे कवि भवभूति के 'प्रश्च्योतनं नु हरिचन्दनपल्लवानां निष्पीडितेन्दुकरकन्दलजोऽनुसेक' को स्मरण कराये बिना नही रहते।[1]

(३)

एहि (मुद्राराक्षस) नाटकक प्रस्तावना देखला सँ बूझि पड़ैत अछि, जे कविवर विशाखदत्त पृथुक पुत्र एवं सामन्त वटेश्वरक पौत्र थिकाह। हिनक दोसर नाम विशाखदेव से हो थिकन्हि। परन्तु ई पृथु वा वटेश्वर के थिकाह, से एखन धरि निश्चित नहिं भेल अछि। एहि विषय में पाश्चात्य वा एतद्देशीय पण्डित लोकनिक भिन्न-भिन्न मत अछि। अध्यापक विलसन साहेबक मत जे "ई पृथु, चौहानवंशीय पृथुराज सँ अन्य नहि थिकाह" से केवल नामहि सँ, एक बूझि पड़इत अछि। एवं कोनो प्रति में पृथुक स्थान मे 'भास्करदत्त' इहो पाठ छैक। ई देखि विलसन महाशयक कथाक सम्भावनो नहि कएल जा सकइत अछि। एहि सँ अधिक नै कविक वंशपरिचयक पता लगइत अछि, नैं हिनक क्वचित दोसर कोनो ग्रन्थ भेटइत अछि जे किछु विशेष बूझि पड़त।[2]

(४)

नेनाक हृदय बड़ें कोमल ओ स्वच्छ रहैत छैक। नेना में जाहि वस्तुक अभ्यास लगाओल जाइछ से हृदय में अंकित भै जन्मभरि

---

१ 'विद्यापति ठाकुर' (म० म० डॉ० श्रीउमेश मिश्र, सन् १९४९ ई०), पृ० १३९–४०।

२ 'मैथिली-गद्य-कुसुमांजलि' (डॉ० उमेश मिश्र, सन् १९३९ ई०), पृ० ७-८।

नेनाक सगी बनि जाइत छैक। तैं नेना कै जावत "हम के थिकहुँ, हमरा कोन रूपैं रहैक थिक ओ हमर की कर्त्तव्य थीक ?" इत्यादि सदुपदेश द्वारा वा अपनहि अपन बुझबाक सामर्थ नहि होइक ताधरि ताहि नेनाक पिता-माता वा अन्य श्रेष्ठजन कैं हुनक शिक्षाक दिसि ध्यान राखब अत्यन्त आवश्यक। नेना कैं एहि प्रकारक ज्ञान संस्कृत विद्या ओ तत्सम्बन्धिक सदुपदेश द्वारा भै सकैछ। बिनु संस्कृतैं हमरा लोकनिक आचार, व्यवहार ओ सदुपदेश स्थिर रहत की तकर सम्भावना ? हमरा लोकनिक जीवन भरिक कर्त्तव्य (छोट वा पैघ सभ) केवल संस्कृतहि मे लिखल अछि।[1]

कन्हैयालाल मिश्र[2]

आप गया-जिला के 'कुरका' (पो० देव) नामक स्थान के निवासी प० रामपदारथ मिश्र[3] के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९२१ वि० (सन् १८६४ ई०) की भाद्र कृष्ण-पचमी को हुआ था।[4] आपका विद्यार्थी-जीवन पाँच वर्ष की अवस्था से आरम्भ होकर सन् १८८४ ई० मे समाप्त हुआ। उसके बाद, सन् १८८५ ई० मे आपकी नियुक्ति पूर्णिया जि ा स्कूल

---

१ 'मैथिली गद्य कुसुमाजलि' (वही), पृ० ६९-७०।

२ कहीं-कहीं आपका ाम 'कन्हैयाप्रसाद मिश्र' भी मिलता है (देखिए, 'हिन्दी पुस्तक-साहित्य, सन् १८६७-१९४२ ई०, डॉ० माताप्रसाद गुप्त, सन् १९४५ ई०, पृ० ३९१)। स्व० आचार्य शिवपूजन सहायजी ने लिखा है 'कि ये दोनों एक ही व्यक्ति हैं।' आपकी संचिका पर दिनांक १७-१-६१ की, अपनी टिप्पणी में आचार्यजी ने लिखा है कि "इसी नाम के एक पण्डितजी पटना-सिटी हाई स्कूल में सस्कृत-हिन्दी के अध्यापक थे। लम्बा, तगड़ा शरीर, बँधी पगड़ी, चपकन-चादर और पण्डिताऊ धोती। उनसे मैं परिचित हुआ था प० ईश्वरीप्रसादजी के संसर्ग से। उनकी कुछ छपी पुस्तकें भी हैं, जिनमें गद्य-पद्य दोनों हैं। मृत्यु सन् १९२० ई० के आसपास हुई होगी। परिचय के समय पचास-पचपन के रहे होंगे।"

३. आपकी छन्दोबद्ध वशावली के लिए देखिए, 'भाषा-पिंगल-सार' (प० कन्हैयालाल मिश्र, सन् १९२५ ई०), पृ० ६९—७२। कहते हैं, देव के राजा प्रवीरसिंह जब बक्सर के महाराज चेतसिंह से लड़े थे, तब आपके पूर्वज जयसिंह मिश्र उनके साथ थे। प्रवीरसिंह तोप से उड़ाये गये और उनकी भुजामात्र लेकर मिश्रजी देव आये। इसी कारण 'कुरका' गाँव उन्हें जागीर में मिला था।

४ गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० १४ तथा 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही), पृ० २६६। आपके पुत्र प० महेश्वर मिश्र ने, सर्विस-बुक के अनुसार, आपका जन्मकाल सन् १८६२ ई० बतलाया है, जो स्व० आचार्य शिवपूजन सहायजी की दृष्टि में ठीक नहीं है।

के संस्कृत-अध्यापक के पद पर हुई। पूर्णिया से आप स्थानान्तरित होकर क्रमश भागलपुर गया, मोतिहारी, पटना आदि स्थानो मे गये। आपकी गणना अनुभवी एवं आदर्श अध्यापको के साथ-साथ काव्यशास्त्र के मार्मिक विद्वानो एव व्रजभाषा के सुकवियो मे होती थी। जब आप उन्नीस वर्ष के थे, तभी आप प० अम्बिकादत्त व्यास के सम्पर्क मे आये और उन्ही से आपको काव्य-रचना की प्रेरणा मिली। आप लगभग २४ वर्ष की अवस्था से ६२ वर्ष की अवस्था तक हिन्दी-भाषा और साहित्य की अनवरत सेवा करते रहे। आपकी काव्य-प्रतिभा से प्रसन्न होकर रामनगर के तत्कालीन राजा श्रीप्रभुनारायण सिंह ने आपको 'कविमातगकेसरी' की उपाधि प्रदान की थी।[1] सन् १९०८ ई० मे आपने गया की 'काव्य-विलासिनी सभा' द्वारा प्रकाशित 'काव्य-विलासिनी'-पत्रिका का सम्पादन भी किया था। मुंगेर के तत्कालीन जिला मजिस्ट्रेट मि० सी० आरन मेरिट द्वारा आपको अपने लेखो पर पुरस्कार मिला था। आपने अनेक स्कूली पुस्तको की रचना की थी, जिनमे (१) भाषा-पिंगल-सार[2],(२) हिन्दी व्याकरण[3],(३) सरल शुभंकरी[4], (४) लोअर अंकगणित, (५) लोअर भूगोल आदि प्रमुख है।[5] आपकी अन्य प्रमुख कृतियो के नाम ये हैं—(१) बिहार के गृहस्थो का जीवन-चरित्र,[6] (२) मनुष्य का मातृत्व-सम्बन्ध, (३) विद्याशक्ति, (४) समस्या-पूर्त्ति, (५) जॉर्ज-राज्याभिषेक, (६) भारतवर्ष का इतिहास, (७) ललित-माधुरी (उपन्यास) और (८) कमलिनी (उपन्यास)। आपके जीवन के अन्तिम दिन महाराज देव (गया) के यहाँ व्यतीत हुए। आपका देहावसान सन् १९३३ ई० मे हुआ।

उदाहरण

(१)

पिंगल बिनु जाने रचहिं, जे कविता बुध बीच।
ते न बड़ाई लहहि कछु,गिने जाहिं कवि नीच ॥
छन्दशास्त्र सागर अगम, मति अति अल्प हमारि।
ललकि तैरि तरिबो चहति, शम्भु चरण उर धारि ॥

---

१ पलायध्व पलायध्व भूय पण्डितभूपपाः।
कन्हैयामिश्र आयाति कविमातङ्गकेसरी ॥—इस श्लोक की रचना उक्त महाराज ने की थी।

२ इस पुस्तक को पजाब टेक्ट-बुक कमिटी के सेक्रेटरी मि० ई० टाइडमैन ने पंजाब के स्कूलों और लाइब्रेरियों के लिए चुनी थी। इसके मुखपृष्ठ पर लिखा है—It has been recomended for the Libraries of Anglo Vernacular and Vernacular Schools in the Punjab. इसकी आलोचना 'सरस्वती' (मई, सन् १९१३ ई०, भाग १४, संख्या ५, पृ० ६६१) में प्रकाशित हुई थी।

३. इसकी आलोचना के लिए भी देखिए, 'सरस्वती' (वही), पृ० ६६१।

४. वही।

५. सन् १९०१ ई० में प्रकाशित।

६. वही। सन् १९१३ ई० में प्रकाशित।

दुर्लभ नर तनु जगत के, ताहू मे विद्वान्।
ताहू के कविता रचन, महा पुण्य फल जान ॥
नहि कविता पाडित्य बिनु, विरचि सकन है कोय।
जो चाहे कवि होत सो, पण्डित पहिले होय ॥[1]

(२)

पूजत है पहिले जिहि को जग दीन्ह बड़ाई बड़ा चतुरानन।
ध्यावत विघ्न नसावनहार न जासु समान सुने सुर कानन ॥
आन सुरानहिं कौन गिने जिहि पूजेउ शंकर गौरी षडानन।
विप्र कन्हाइ तिन्है बिनवै करिये नित मंगल सोइ गजानन ॥[2]

कमलदेव नारायण

आप मुजफ्फरपुर-जिला के 'बखरा' नामक ग्राम के निवासी श्रीकृष्णदेव नारायणजी[3] के पुत्र हैं। आपका जन्म सन् १९०० ई० की १५ मई को हुआ था।[4] आपने पाँच वर्ष की अवस्था से नवें वर्ष की अवस्था तक उर्दू पढी। किन्तु, सन् १९१० ई० मे स्कूल मे नाम लिखाने पर आपने हिन्दी ले ली। आपने नॉर्थब्रुक स्कूल से मैट्रिक तथा टी० एन्० जुबली कॉलिज से आइ० ए० की परीक्षा पास की। पटना-कॉलेज से बी० ए० की परीक्षा सन् १९२३ ई० मे पास की। सन् १९२६ ई० मे पटना लॉ-कॉलेज से लॉ की परीक्षा मे आपने द्वितीय स्थान प्राप्त किया और उसी वर्ष की २५ मई से दरभंगा मे वकालत करने लगे। आप एक थियोसोफिस्ट और विकासवाद मे विश्वास करनेवाले व्यक्ति हैं। स० २००२ वि० को महाशिवरात्रि को 'सस्कृत'-कार्यालय, अयोध्या ने आपको 'विद्याविनोद' की उपाधि से अलकृत किया था। बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का कार्यालय जबतक मुजफ्फरपुर मे था, तबतक उसे आपका सहयोग मिलता रहा।[5] आपका साहित्यिक

---

१. 'भाषा-पिंगल-सार' (वही), पृ० २।

२ वही, पृ० ४७।

३. ये सन् १९२६ ई० में दरभगा में, एकाउण्टेण्ट (कलक्टरी) थे। २२ जनवरी, सन् १९३४ ई० को इनका देहान्त हो गया। ये सस्कृत फारसी, अँगरेजी, हिन्दी, बँगला आदि अनेक भाषाओं के ज्ञाता थे।

४. आपके द्वारा प्रेषित सामग्री के आधार पर।—देखिए 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, पृ० ६०४) भी।

५. स्व० श्रीललितकुमार सिंह 'नटवर' द्वारा प्राप्त सूचना के आधार पर।

जीवन सन् १९१७ ई० से ही आरम्भ होता है, जब आप विद्यार्थी थे। उस समय पत्र-पत्रिकाओ मे आपके निबन्धादि प्रकाशित हुआ करते थे। आगे चलकर आप स्वतन्त्र रूप से पुस्तको के प्रणयन मे प्रवृत्त हुए। अबतक आपने प्रचुर मात्रा मे कहानी, निबन्ध, जीवनी, उपन्यास आदि कृतियो से साहित्य का भाण्डार भरा है।

आपके द्वारा लिखित प्रकाशित पुस्तको के नाम ये हैं—(१) ईश्वरचन्द्र विद्यासागर (जीवनी), (२) युगल कुसम (कहानी), (३) अर्द्धांगिनी (निबन्ध), (४) झरना (कहानी-सग्रह), (५) राम की ओर (निबन्ध)[१], (६) बिखरे फूल (कहानी), (७) घर कैसे चले (निबन्ध), (८) एक भूल (उपन्यास), (९) खानदानी (उपन्यास), (१०) जोडा (उपन्यास), (११) माया (उपन्यास), (१२) जीजा (उपन्यास), (१३) गपशप (उपन्यास), (१४) भूखा भगवान[२] (उपन्यास) (१५) बदर्जे मजबूरी, (कहानी-सग्रह), (१६) भले आदमी कैसे बने (निबन्ध), (१७) हँसते कैसे रहे (निबन्ध), (१८) हिन्दी मुहावरे और उनका उपयोग (निबन्ध), (१९) साइस की बातें (निबन्ध) और (२०) दाम्पत्य-जीवन की समस्याएँ (निबन्ध)। इनके अतिरिक्त आपके तीन उपन्यास -(१) नवासा, (२) रानी या नारी[३] और (३) भगवान सो गये हैं—अभी तक अप्रकाशित है।[४] आपने कोर्स के योग्य भी अनेक पुस्तको की रचना की थी।[५]

उदाहरण

(१)

प्रकृति चेतनामय है या निर्जीव ? निर्जीव पदार्थो के जीवन की अवधि होती है। आज कारखाने से मोटर लाओ और कल मरम्मत खोजती है। मालूम नही, यह सृष्टि कब से चल रही है और कबतक चलती रहेगी। आजतक सृष्टि की मोटर नही बिगडी। चॉद और

---

१. इसके अबतक तीन-तीन सस्करण हो चुके हैं।

२ इसके भी तीन-तीन सस्करण हो चुके हैं।

३. इसका प्रकाशन कलकत्ता से होनेवाला था। पता नहीं, हुआ या नहीं।

४ आपकी प्रायः सारी कृतियाँ 'वितरक', मोतीझील, मुजफ्फरपुर से प्रकाशित हैं। कुछ दिन पूर्व आप बिहार के कहानीकारों की जीवनियाँ प्रकाशित करनेवाले थे। कहा नहीं जा सकता, उस पुस्तक के प्रकाशन का क्या हुआ।

आप मुख्यत. एक कथाकार थे। दिनांक ३-९-६२ के अपने एक पत्र में आपने लिखा है कि "कथा-कहानियों के नाम ऐसा कुछ लिखना, जिससे समाज का पतन हो, हमें पसन्द नहीं। यदि साहित्य उपयोगी न हो, तो विशुद्ध मनोरजक होना चाहिए। यथासाध्य मैं सरल भाषा का पक्षपाती हूँ। जिस भाषा को अधिक-से-अधिक लोग समझ सकें, उसी को मैं उत्तम भाषा मानता हूँ।"

५. 'हिन्दीसेवी-ससार' (वही, सन् १९५१ ई०, पृ० २९) तथा 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६६२) में 'प्रेमनगर की सैर', वैज्ञानिक वातावरण, तथा 'बच्चों के खेल' नामक तीन नई पुस्तकों की चर्चा है।

सूरज की रोशनी कम नही हुई। ग्रह सब कभी अपने मार्ग से विचलित नही हुए। वैज्ञानिकों का कहना है कि यदि एक भी ग्रह अपने मार्ग से जरा भी विचलित हो जाय तो सब ग्रह आपस मे लड़ जायँगे और ध्वंस हो जायगा। हवा मे इतनी बड़ी पृथ्वी लटकी हुई है और सदा घूमती रहती है, और अपने पथ पर नाचती रहती है फिर भी अपने मार्ग से विचलित नही होती है। वैज्ञानिकों की रेलगाड़ी बराबर पटरियो से उतर जाती है। चेतनामय मनुष्य हवाई जहाज हाँकता हुआ बहुधा मार्ग भूल जाता है। लेकिन बतला सकते हो कि कोई ग्रह भी कभी विचलित हुआ? इन सब को नियमित रूप से चलानेवाला जरूर कोई चेतन शक्ति है। चाहे उस चेतन शक्ति को जो भी उपाधि दो।[1]

(२)

आश्रितों के भरण-पोषण की क्या व्यवस्था की जाय? बहुत लोग ऐसे है जो आश्रितों के लिये काफी धन कमाकर छोड़ देना चाहते है। परन्तु मेरे स्व० पिताजी का विचार था कि यह गलत विचार है और मैं उनसे सर्वथा सहमत हूँ। इसके दो कारण है। पहली बात तो यह है कि 'काफी' क्या है इसका निर्णय हो नही सकता है। यदि दोनों जून भोजन नहीं मिलता है तो दोनों जून भोजन की चिन्ता होगी। इसका प्रबन्ध होते ही ऐश-आराम की चिन्ता आ घेरती है। हजार की आमदनी की व्यवस्था कर दीजिये तो लाख करने की इच्छा होगी, और लाख की व्यवस्था अगर हो गई तो करोड़पति की वासना दबोचेगी। 'मनोरथानां न समाप्तिरस्ति'। फिर आपका जीवन इसी व्यवस्था में खतम हो जायगा। दूसरी बात यह है कि ऐसी व्यवस्था करने से भलाई के बदले हम घरवालों की बुराई कर बैठते है। घर

---

१. 'जोड़ा' (श्रीकमलदेव नारायण, सन् १९५८ ई०), पृ० ६५-६६।

वाले यह समझते है कि बाप-दादा काफी सम्पत्ति छोड़ गये हैं, हम बदन क्यो हिलावें और वे व्यसनी और काहिल बन जाते हैं। उद्योग करना अपनी मर्यादा के खिलाफ समझते है। ऐसे उदाहरणों की कोई कमी नही है।[1]

कमलानन्द सिंह 'सरोज'[2]

आप पूर्णिया-जिला के, 'बनैली' राजधानी की शाखा 'श्रीनगर' के राजा श्रीनन्दसिंह के पुत्र थे।[3] आपका जन्म स० १९३३ वि० (सन् १८७६ ई०) की ज्येष्ठ शुक्ल षष्ठी (सोमवार, दिनांक २९ मई) को हुआ था।[4] जब आप पाँच वर्ष के हुए, तभी आपके पिता का देहान्त हो गया। छठे वर्ष मे आपका अक्षरारम्भ कराया गया। लिखने पढने का थोड़ा अभ्यास हो जाने पर आप 'चाणक्यनीति' और 'अमरकोश' के श्लोको का अभ्यास करने लगे। लगभग ९ वर्षो को उम्र तक आप अपने राजभवन मे ही शिक्षा पाते रहे। तत्पश्चात् पूर्णिया जिला-स्कूल मे आपको दाखिल करा दिया गया, जहाँ केवल दो वर्षों तक विद्याध्ययन कर लेने के बाद श्रीमन्मथनाथ मुखर्जी के अभिभावकत्व मे विद्याग्रहण करने आप भागलपुर चले गये। वहाँ आपका नाम जिला-स्कूल मे लिखवाया गया। उक्त स्कूल के हेडपण्डित स्वनामधन्य साहित्याचार्य प० अम्बिकादत्त व्यास 'सुकवि' के सम्पर्क मे आकर

---

१ 'घर कैसे चले' (श्रीकमलदेव नारायण, सन् १९५७ ई०), पृ० १५।

२ प० महावीरप्रसाद द्विवेदी ने जून, सन् १९०३ ई० की 'सरस्वती' में आपकी जीवनी लिखी थी।

३ आपके प्रपितामह राजा दुलारसिंह ने सर्वप्रथम 'बनैली'-राजधानी की स्थापना की थी। राजा दुलारसिंह के दो पुत्र हुए—(१) वेदानन्दसिंह और (२) रुद्रानन्दसिंह। दोनों सौतेले भाई थे। पिता के मरने पर इन दोनों भाइयों के बीच राज्य आधा-आधा बँट गया। वेदानन्दसिंह हिन्दी के अच्छे लेखक थे। उनके द्वारा रचित 'वेदानन्द-विनोद' प्रसिद्ध है। रुद्रानन्द अल्पायु हुए। इनकी पाँच सन्तानों मे एकमात्र राजा श्रीनन्दसिंह बच गये थे। अतएव, इनके शुभचिन्तकों ने इन्हें स्वतन्त्र रूप मे अन्यत्र निवास करने की सम्मति दी। इन लोगों ने उक्त स्थान से कुछ दूर हटकर एक नगर बसाया, अच्छे-अच्छे महल बनवाये और वहीं अल्पवयस्क श्रीनन्दसिंह को ले गये। उस नगर का नाम श्रीनन्दसिंह के नाम पर 'श्रीनगर' पड़ा। राजा श्रीनन्दसिंह की तीसरी धर्मपत्नी रानी जगरमा देवी से दो पुत्र हुए—एक आप और दूसरे कालिकानन्दसिंह।—देखिए, 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही), पृ० १२९, ३१३, ४७० और ५४२।

४. वही।

५ एक बार ये आपके प्रीत्यर्थ नायिका-भेद का एक ग्रन्थ 'सुकवि-सरोज-विकास' बनाकर लाये थे जिसमें नायक-नायिका आदि के लक्षण तो संस्कृत-सूत्र में थे, किन्तु उनकी व्याख्या हिन्दी में तथा उदाहरण व्रजभाषा के कवित्त-सवैयों में थे। उक्त ग्रन्थ आपको ही समर्पित किया गया था, पर वह प्रकाशित न हो सका। उक्त 'सुकवि-सरोज-विकास' के पुरस्कार-स्वरूप आपने व्यासजी को दो हजार रुपये नकद, बहुमूल्य वस्त्राभूषण तथा एक हाथी दिया था। व्यासजी पर आपकी कितनी श्रद्धा-

आप हिन्दी साहित्य रचना की ओर प्रवृत्त हुए। एक बंगाली अभिभावक की सहायता मे आपको बँगला ग्रन्थो के अध्ययन का भी अवसर मिला। लगभग १६ वर्ष की अवस्था मे आप प्रवेशिका कक्षा मे पहुँचे। इसी समय आपका स्वास्थ्य बिगड गया और डॉक्टरो की राय से आप दो वर्षों तक पहाडी प्रदेशो मे भ्रमण करते रहे। स्वास्थ्य सुधर जाने पर आपको फिर अपने राजकाज मे लग जाना पड़ा और फिर स्कूल की पढाई छोड देनी पडी। किन्तु, स्वाध्याय के बल पर आपने हिन्दी, बँगला और अँगरेजी-साहित्य का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया। हिन्दी-साहित्य मे तो आपने सम्यक् योग्यता प्राप्त कर ली थी। समय के साथ-साथ आपका साहित्यानुराग भी बढता चला गया। फलत, आपने स्वयं तो रचना की ही, दूसरो को भी साहित्य-सेवा करने की प्रेरणा दी।[1] व्रजभाषा मे आपकी अनेक काव्य-रचनाएँ उपलब्ध है। आपकी काव्य रचना से प्रभावित होकर तत्कालीन 'कवि-समाज' ने आपको 'साहित्य-सरोज' की उपाधि प्रदान की थी। साहित्य-सम्बन्धी अनेक मासिक पत्रों के संरक्षक[2] होने के कारण 'कवि-मण्डली' की ओर से आपको 'द्वितीय भोज'

भक्ति थी, यह आपके और आपके आश्रित कवियों द्वारा रचित 'व्यास-शोक-प्रकाश' नामक पुस्तक से ज्ञात हो सकता है। सन् १६०० ई० में व्यासजी के स्वर्गवासी होने पर आपने उनकी निसहाय पत्नी और एकमात्र पुत्र के निर्वाह के लिए २००) वार्षिक नियत कर दिया था।

कहते हैं, इलाहाबाद-कमिश्नरी के फतहपुर के 'असनी'-ग्रामवासी 'सेवक' कवि का 'वाग्विलास' (नायिका-भेद) लुप्तप्राय हो गया था। आपने बहुत द्रव्य खर्च करके उसे ढूँढ निकाला और उक्त व्यासजी से सम्पादित कराकर उसे छपवाया। इस ग्रन्थ का नवीन सुसम्पादित संस्करण बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् मे प्रकाशित होनेवाला था, जो कतिपय कारणवश न हो सका।

१. आपके दरबार में उस समय सलेमपुर (दरभगा) के वैयाकरण श्रीकान्तमिश्र, कोइलख के प्रसिद्ध विद्वान् प० खुद्दी झा, तिलाठी (उत्तर भागलपुर) के ज्योतिषी पं० परमेश्वरीदत्त मिश्र पचाढी के वैदिक प० वासुदेव ठाकुर, सुलतानपुर-जिला के नोनरा-ग्रामवासी यशराज कवि, पूर्णिया-जिला के मनियारी-ग्रामवासी कवीश्वर जयगोविन्द महाराज, काशी-निवासी शीतलप्रसाद, समौली (दरभगा)-निवासी श्रीविद्यानन्द ठाकुर आदि अनेक कवि आश्रित थे। इनमें प० श्रीकान्त मिश्र ने ललित पद्यों में १५ सर्गों के 'साम्बकमलानन्द-कुलरत्न' नामक एक सस्कृत-काव्य की रचना की थी, जिसमें आपके पितृवश और मातृवश का वर्णन है। इसका प्रकाशन आपने ही करवाया था।

अयोध्या के महाराज प्रतापनारायण सिंह के दरबारी कवि लछिराम ने 'कमलानन्द-कल्पतरु' नामक एक अलकार ग्रन्थ की रचना कर श्रीनगर आकर आपको समर्पित किया। आपने उन्हें वस्त्राभरण-सहित १५०) रुपये का पुरस्कार देकर उनका सम्मान किया। शाहाबाद-निवासी पं० विजयानन्द त्रिपाठी 'श्रीकवि' स्वरचित 'रणधीर प्रेममोहिनी-नाटक' का संस्कृत-अनुवाद समर्पित करने आये, तो आपने उन्हें भी यथोचित पुरस्कार देकर सन्तुष्ट किया। पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी ने जॉन स्टुअर्ट मिल-लिखित प्रसिद्ध अँगरेजी-ग्रन्थ 'लिबर्टी' का हिन्दी-अनुवाद आपको समर्पित किया, तो उन्हें भी आपने ५००) रुपये का एक पुरस्कार दिया। आपके दरबार में राजपूताने से भी एक बार दो चारण कवि आये थे, जिनकी डिंगल-रचनाओं पर रीझकर आपने उन्हें पुरस्कृत किया था। आपके दरबार में भगवन्त, बलवन्त, अजान, सुजान, शिवहर्ष आदि अनेकानेक कवि आकर पुरस्कृत होते थे। काशी के प्रसिद्ध कवि पं० जगन्नाथदास 'रत्नाकर' भी आपसे मिलने दो-तीन बार श्रीनगर आये थे।

२ एक बार जब घाटा लग जाने के कारण 'सरस्वती' का प्रकाशन बन्द हो रहा था, तब आपने उसके तत्कालीन सम्पादक पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी को लिखा कि इण्डियन प्रेस के मालिक को कह दीजिए कि 'सरस्वती' के प्रकाशन में अबसे जो घाटा लगेगा, उसकी पूर्त्ति मैं करूँगा। 'सरस्वती'

की उपाधि प्राप्त थी। 'भारत-धर्म-महामण्डल'(काशी) ने आपकी साहित्य-सेवा से प्रसन्न होकर आपको 'कवि-कुलचन्द्र' की उपाधि से अलंकृत किया था। आपकी गणना हिन्दी-साहित्य के द्विवेदी युगीन प्रतिनिधि साहित्यकारो मे होती है। आपने व्रजभाषा और खडीबोली दोनो मे समान रूप से कविता की और दोनो प्रकार की रचनाओ मे आपको सफलता भी मिली। खडीबोली की गद्य-रचना मे भी आपने अपनी क्षमता प्रदर्शित की। यहाँतक कि अँगरेजी और बँगला से हिन्दी-अनुवाद करने मे भी आपकी दक्षता प्रकट होती है। व्रजभाषा मे लिखी आपकी काव्य-रचना (समस्यापूर्त्तियाँ) मुख्यत प० रसिकलाल शर्मा के सम्पादकत्व मे कानपुर से प्रकाशित 'रसिकमित्र' मे मुद्रित हुआ करती थी। इसके अतिरिक्त, मासिक 'सरस्वती' और 'मिथिला-मिहिर' मे आपकी अनेक गद्य-पद्य-रचनाएँ प्रकाशित मिलती हैं। आपकी पुस्तकाकार रचनाओ मे सर्वप्रथम बंकिम बाबू के बँगला-उपन्यास का हिन्दी-अनुवाद मिलता है। आपने बकिम बाबू के दूसरे उपन्यास 'राजा रानी' का अनुवाद भी किया था, जो प्रकाशित न हो सका। माइकेल मधुसूदन दत्त के वीरागना काव्य के कुछ अशो का पद्यबद्ध अनुवाद कर आपने 'सरस्वती' मे प्रकाशित करवाया था। आपकी सम्पूर्ण उपलब्ध रचनाओ का संग्रह पुस्तक-भण्डार, पटना-४ से आचार्य श्रीशिवपूजन सहायजी के सम्पादन मे 'सरोज रचनावली' के नाम से प्रकाशित हुआ है। उसमे निम्नलिखित रचनाएँ संगृहीत है —

(१) मिथिला-चन्द्रास्त[१], (२) हा! व्यास शोक-प्रकाश[२], (३) आलोचक और आलोचना[३], (४) दुष्यन्त के प्रति शकुन्तला का प्रेमपत्र[४], (५) महामहोपाध्याय कविवर विद्यापति ठाकुर, (६) श्रीएर्डवर्डबत्तीसी[५], (७) शान्तनु प्रति गगा[६], (८) पत्रावली[७], (९) रायबहादुर दीनबन्धु मित्र[८] (१०) डायरी[९], (११) आनन्द-मठ[१०], (१२) वीरागना-

---

बन्द न की जाय। जब 'सरस्वती' के मालिक ने आपसे आर्थिक सहायता लेने से इनकार किया, तब आपने अपनी रियासत में 'सरस्वती' के सैकड़ों ग्राहक ही बना दिये।—'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही) पृ० ३१३-१४।

१. यह आपकी सबसे पहली रचना है। यह छोटी-सी कविता-पुस्तक सन् १८९९ ई० में छपी थी। इसमें तत्कालीन दरभंगा-नरेश श्रीलक्ष्मीश्वरसिंह बहादुर के निधन पर श्रीनगर-दरबार के राजकवियों के शोकोद्गार अकित हैं।

२. यह कविता-पुस्तक सन् १९१० ई० में स्वय आपने प्रकाशित कराई थी।

३. यह समीक्षात्मक लेख 'सरस्वती' (भाग २, सख्या ९, सितम्बर, सन् १९०२ ई०, पृ० २९७—९९) में प्रकाशित हुआ था।

४ 'सरस्वती' (भाग ३, सख्या ११, नवम्बर, सन् १९०२ ई०, पृ० ३२९—३९) में प्रकाशित।

५. सप्तम एडवर्ड के तिलकोत्सव के अवसर पर रचित हिन्दी-कविताओं का सग्रह सन् १९०२ ई० में न्यू कण्ट्री प्रेस, पूर्णिया में मुद्रित।

६ यह आपकी चौथी रचना है, जो सन् १९०३ ई० के दिसम्बर की 'सरस्वती' में प्रकाशित हुई थी।

७. इसमें आपके द्वारा लिखित २८ पत्र सगृहीत हैं।

८. यह बकिम बाबू के एक बँगला-लेख का अनुवाद है। यह भी 'सरस्वती' (भाग ५, संख्या ९, सितम्बर, सन् १९०४ ई०, पृ० २८७—९९) में प्रकाशित हुआ था।

९ इसमें केवल १८ दिनों की दिनचर्या हैं। यह सन् १९०५ ई० की रचना है।

१०. बकिम बाबू के प्रसिद्ध बँगला-उपन्यास का हिन्दी अनुवाद। यह अनुवाद सन् १९०३ ई० से पहले ही पूरा हो चुका था। किन्तु, इसका प्रकाशन हुआ सन् १९०६ ई० में।

काव्य[1], (१३) वोट-बतासो[2], (१४) दाम्पत्य-दण्ड-विधान[3], (१५) स्फुट गेय पद[4], (१६) समस्यापूर्त्ति[5] और (१७) मैथिलक धन-विद्या[6]।

आप सं० १९६७ वि० (सन् १९१० ई०) की चैत्र शुक्ल-षष्ठी को परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

पीत पट ऐसी पियराई चहु ओर छाई,
सोनजुही सरसो वसन्तिका अनन्त की।
तीसी-फूल राजै श्याम-गात सों 'सरोज' कहै,
लतिका हरी-सी हरी होति मति सन्त की।
कोकिला को तान बाँसुरी-सी धुनि होत चारु,
कामिनी बिलोकि दसा पावै रति कन्त की।
नाना भाँति सुमन बिराजैं बनमाल ऐसी,
जसुधा-कुमार कैधो सुखमा बसन्त की।[7]

(२)

प्यारी परभात मन्द-मन्द केलि-मन्दिर तें,
उतरत आवै चली सुखमा अपार है।
नैन नीद माती अलसाती फटी कञ्चुकी है,
सोहत सुआनन पै बिथुरीले बार है।

---

१ बँगला के 'वीरांगना-काव्य' का यह हिन्दी-पद्यानुवाद सन् १९०७ ई० की 'सरस्वती' में प्रकाशित हुआ था।

२ यह रचना सन् १९०९ ई० में पुस्तिका-रूप में प्रकाशित हुई थी।

३. बंकिम बाबू की इसी नाम की रचना का हिन्दी-अनुवाद, जो नवम्बर, सन् १९०९ ई० की 'सरस्वती' में प्रकाशित हुआ था। इसके पूर्व यह रचना 'मिथिला-मिहिर' प्राचीन संस्करण में प्रकाशित हो चुकी थी।

४. व्रजभाषा एवं मैथिली में रचित गेय पद, जो आपकी बड़ी पुत्री श्रीमती रासेश्वरी देवी के संकलन से प्राप्त हुए हैं।

५. सन् १८९९ ई० से सन् १९०२ ई० तक की आपके द्वारा रचित समस्यापूर्त्तियाँ।

६. मैथिली-भाषा में लिखित एक अति संक्षिप्त लेख।

७. 'रसिकमित्र' (मासिक, कानपुर, भाग २, अंक ५, फरवरी, सन् १८९९ ई०) तथा 'सरोज-रचनावली' (वही), पृ० २७५।

छत पै उरोज के तहाँ ते परी एक लट,

उपमा 'सरोज' लखि करत बिचार है।

मानो मुखचन्द सम्भु-चन्द सो मिताई करि,

जानिबे को खबर लगाय दीनों तार है ॥[1]

(३)

परम चलाक छोटे नैनन को जानि खोटे,

कानन समीप ताको पकरि पठायो है।

करिके कठिन चारु कोमल हिये को तहाँ,

समर सरोज दोय दुंदभी धरायो है ॥

गति को कियो है मंद चपल गयंदन की,

अंगन की ओप यो प्रताप बगरायो है।

रचि रनभूमि प्यारी-अंग-काज जोबन के,

नासिबे को सिसुता मनोज चढि आयो है ॥[2]

(४)

जाहिर जहान में विदूषक हमारो नाम,

बीसबिसे कीरति कुमारी को मनावेंगे।

सखा संग प्यारी को मिलाय कै 'सरोज' आज,

मोद सरसाय बहुरूपहू बनावेंगे।

कौतुक दिखाय बोलि-बोलि बहुरंगन की,

अद्भुत बनाय मुँह नाच कै हँसावेंगे।

कूदि फाँदि हू-हा करि भाषत हौ साँची बात,

याही बिधि मानियों को छन में रिझावेंगे ॥[3]

---

१ 'रसिकमित्र' (वही, भाग २, सख्या ६, जून, सन् १८९९ ई०) तथा 'सरोज-रचनावली' (वही), पृ० २७६ ।

२. वही (भाग ३, अक ६ मार्च, सन् १९०० ई०) तथा 'सरोज-रचनावली' (वही), पृ० २८० ।

३ 'काव्य-सुधाधर' (वर्ष ४, प्रकाश ५, नवम्बर, सन् १८९९ ई०) तथा 'सरोज-रचनावली' (वही) पृ० २८९ ।

(५)

आइये कान्ह कृपा करके दधि माखन खाइये खाइये खाइये।
खाइये और लुटाइये पै ब्रज छोड़ि न जाइये जाइये जाइये ।।
जाइये भूलि न गोपिन प्रेम प्रमोद सो छाइये छाइये छाइये।
छाइये मेरे सरोज हिये मन मोहन आइये आइये आइये ।।[४]

(६)

समालोचको को चाहिए कि आलोचना करने के समय अपनी दृष्टि को शुद्ध कर लें और किसी प्रकार की मलिनता उसमे न रहने दे, तब दृश्य पदार्थों के गुण-दोषो की विवेचना करें; क्योकि कभी-कभी अपने नेत्र-दोष से भी पदार्थों पर दोषाध्यास होना संभव है। यह तो प्रत्यक्ष है कि जिनके नेत्र मे पीलापन आ जाता है, तो वे विशद पदार्थ को भी पीत कहकर अपने नयनदोष का परिचय देने लगते है और सामाजिक लोग उनके कहे हुए को एक कौतुक मात्र समझते है। ऐसे ही शास्त्ररूपी चक्षु होते हुए भी जिनका ज्ञान-प्रदीप विषय-वायु से ताड़ित होकर लुप्त हो गया है, उनको अपने हृदयागारस्थ विवेकरत्न ही का प्रत्यक्ष होना कठिन है; फिर, वे दूरदर्शी सूक्ष्म विषयों की आलोचना क्या करेंगे, और हठात् उनकी की हुई आलोचना सभ्य समाज में कैसे मान्य हो सकती है? शास्त्र-परिनिष्ठित बुद्धि न होने के कारण ग्रन्थकर्त्ता के आशय को बिना समझे ही उसके सदर्थ बोधक विषय में दोष दिखलाना मानों एक प्रकार से अपना उन्माद प्रकट करना है। यद्यपि बड़े-से-बड़े विद्वानों के कृत सिद्धान्त मे कुछ भूल निकल जाय तो असम्भव नहीं, क्योंकि मनुष्य मात्र से भूल होनी संभव है, तथापि गुणदोषाध्यासक समालोचकों को इस बात का तर्क कर लेना आवश्यक है कि ग्रन्थकर्त्ता ने किस अभिप्राय से किस

४. 'सरोज-रचनावली' (वही), पृ० २७६।

प्रकरण में किस शब्द को किस अर्थ में प्रयुक्त किया है ; तत्पश्चात् गुण-दोष की विवेचना में हाथ डालना न्याय-विरुद्ध न होगा। सारांश यह है कि बहुत-से प्राचीन ग्रन्थान्तर्गत समीचीन विषयों का आशय अपनी अल्पज्ञता के कारण न जान पड़ने से उस सदुक्ति को अत्युक्तितर कहकर इतर लोगो की बुद्धि को संशय मे डाल देना कदापि समुचित नही।'[1]

(७)

इन दिनो हिन्दी साहित्य के भण्डार मे बहुत से उपन्यास निकल चुके है और निकल रहे है सब अपने-अपने निराले ढंग के है। कोई तिलस्मी बातों से भरा हुआ है कोई उर्दू की रंगीन इबारतों से रँगा हुआ है और कितने बे शिर बे पैर के भूत प्रेत जासूसी की बातों से भरे हुए है। इन उपन्यासों से उपन्यास किस ढग पर लिखना चाहिए यह कुछ भी नही मालूम होता है। साहित्यदर्पणकार ने भी 'उपन्यासस्तु वाङ्मुखम्' छोड़कर और कोई लक्षण इस बारे मे नही लिखा है। इससे जाना जाता है कि संस्कृत मे भी साहित्यदर्पणकार के समय तक उपन्यास लिखने की प्रथा नही थी। व्यासजी ने भी अपनी गद्य-काव्यमीमासा मे उपन्यास का कुछ अच्छो तौर से निरूपण नही किया है। मुझे केवल व्यासजी प्रणीत शिवराजविजय नामक उपन्यास छोड़ संस्कृत मे और दूसरा उपन्यास देखने का सौभाग्य नही हुआ है।

संस्कृत मे अभाव रहने के कारण हिन्दी के विद्वानों ने अङ्गरेजी के नाविलों का अनुकरण किया और कतिपय अङ्गरेजी भाषा के उपन्यासो का उल्था भी कर डाला है। बङ्गाली लोग भारतवासियों में

१. 'सरस्वती' (मासिक, भाग २ सख्या ६, सितम्बर, सन् १९०२ ई०, पृ० २९७-९९) में प्रकाशित 'आलोचक और आलोचना' शीर्षक निबन्ध।—देखिए, 'सरोज-रचनावली' (आचार्य शिवपूजन सहाय, सन् १९५६ ई०) पृ० १९-२०।

बिलायती अनुकरण करने मे सबके दिग्दर्शक हैं और उनका साहित्य भण्डार भी उनके उत्साही सुपुत्र द्वारा बिचारी हिन्दी के पहले ही से भरपूर है। बङ्गभाषा मे बहुत से मनोरंजक उपन्यास भरे हुए है जिसका कुछ अंश हमारे हिन्दी प्रेमी द्वारा रसिको को अनुवाद रूप मे बंग भाषा के उपन्यास दृष्टिगोचर भी हुए है। लेखकों में बाबू बंकिमचन्द्र सबसे प्रथम श्रेणी मे गिने जाते हैं। इनके बनाये बहुत से उपदेशप्रद ऐतिहासिक और मनोरंजक उपन्यास है जिनमें दो-चार उपन्यासों का हिन्दी में अनुवाद भी हो चुका है। बंकिमचन्द्र के उपन्यास के ढंग पर हिन्दी मे आज तक मुझे एक भी उपन्यास देखने मे नही आया है। इसलिए मुझे हिन्दी में इससे अच्छा रोचक उपन्यास रचने का साहस नही हुआ। मै कुछ इतना बड़ा विद्वान नहीं हूँ कि स्वतन्त्र उपन्यास लिखकर इतने अच्छे-अच्छे उपन्यासों के रहते लोगों को आनन्द कर सकूँ। अनुवाद करना भी अपूर्ण साहित्य भण्डार के पुष्ट करने का एक मुख्य कारण है, यह विचार मैंने आनन्दमठ का अनुवाद कियाहै।[1]

कमलाप्रसाद वर्मा

आप शाहाबाद-जिला के बबुरा-ग्राम-निवासी मुंशी महावीरप्रसादजी[2] के पुत्र थे। आपका जन्म स० १९३९ वि० (सन् १८८३ ई०) की पौष शुक्ल एकादशी (१९ जनवरी शुक्रवार) को हुआ था।[3] आपकी शिक्षा अपने घर से ही प्रारम्भ हुई। सन् १८९५ ई० में

१. 'बंकिम बाबू के बँगला-उपन्यास 'आनन्द-मठ' के हिन्दी-अनुवाद (सन् १९०६ ई० में डायमण्ड जुबली प्रेस, कानपुर से प्रकाशित) की भूमिका से।—देखिए 'सरोज-चित्रावली' वही, पृ० ११, स० १८।

२. ये मुशी जुड़ावनलालजी के पुत्र थे। सन् १८५७ ई०के बाद ये पटना सिटी (गुलजारबाग)-स्थित 'महाराज की ड्योढी' चले आये। इनकी पत्नी श्रीमती यशोदा देवी को हिन्दी मे बड़ा प्रेम था। ज्येष्ठ पुत्र श्रीदेवीप्रसाद के मुक्तक-काव्यों का एक सग्रह 'देवी-तरग' के नाम से प्रकाशित भी हुआ था। आप श्रीदेवीप्रसाद के ही अनुज थे।

३. आपके पुत्र श्रीनन्दकिशोरप्रसाद वर्मा (कमला-कुंज, गुलजारबाग, पटना-७) से प्राप्त सूचना के

आप पटनासिटी के एक हाइ स्कूल मे छठे वर्ग मे प्रविष्ट हुए। उक्त स्कूल के टूट जाने पर आप सन् १८९९ ई० तक झाऊगंज स्थित डायमण्ड जुबली स्कूल मे पढते रहे। तदनन्तर, सन् १९०१ ई० मे पटनासिटी हाइ स्कूल मे आपका नाम लिखाया गया, जहाँ से सन् १९०१ ई० मे आपने एण्ट्रेंस की परीक्षा पास की। इसके बाद, सन् १९०३ ई० मे आप बिहार नेशनल कॉलेज के छात्र हुए, पर अस्वस्थता के कारण आपको कॉलेज छोड देना पडा। अपनी पढाई छोडने के बाद आप हाजीपुर-कचहरी मे कुछ दिनो तक लिपिक के पद पर काम करते रहे। तदुपरान्त, इक्कीस वर्ष की उम्र मे आपने कलकत्ता से मुख्तारी की परीक्षा पास की और सन् १९०७ ई० से हाजीपुर मे मुख्तारी करने लगे। सन् १९१२ ई० मे मुख्तारी करने आप पटना चले आये और जीवनपर्यन्त यही रहे। आप अच्छे कानूनदाँ थे। अत:, आपकी मुख्तारी खूब चलती थी। अपनी मुख्तारी के साथ साथ आपने प्रसिद्ध हिन्दी-पत्र 'बिहार-बन्धु' का दो वर्षों तक सफलतापूर्वक सम्पादन किया।[1] आपकी गणना 'स्काउटिंग मूवमेण्ट' के प्रवर्त्तको मे होती है। सन् १९२४ ई० मे आपने गुलजारबाग मे ब्वॉय स्काउट की स्थापना की, जिसके आपही मन्त्रा निर्वाचित हुए। उसके बाद आप बिहारप्रान्तीय स्काउट एसोसियेशन के उप-कमिश्नर बने। सन् १९४२ ई० मे आप उसके प्रान्तीय कमिश्नर बनाये गये। उसी वर्ष आप थियोसोफिकल सोसाइटी (ब्रह्मविद्या-सघ) के सभापति भी निर्वाचित हुए। समाज-सेवा के हित को दृष्टि मे रखते हुए सन् १९१८ ई० मे ही, जिस वर्ष आप पटनासिटी म्युनिसिपैलिटी के कमिश्नर निर्वाचित हुए थे, आपने 'पटनासिटी-सेवा-समिति' नामक सस्था की स्थापना की थी।

स० २००१ वि० की विजयादशमी को अयोध्या के 'सस्कृत'-कार्यालय से आपको 'साहित्यालकार' की उपाधि प्राप्त हुई। आरम्भ से ही आप बडे ही अध्ययनशील और परिश्रमी व्यक्ति थे। आपने वृद्धावस्था को कभी स्वीकार नही किया और रात-रात भर अध्ययन-मनन-लेखन मे ही आपका समय व्यतीत हुआ। मिश्रबन्धुओ के अनुसार, बिहार-प्रान्त मे हिन्दी-साहित्य का प्रचार करने का श्रेय बहुत कुछ आपको है।

हिन्दी के प्रति आपकी प्रगाढ भक्ति थी। सन् १९०२ ई० से ही आपकी गद्य-पद्य-रचनाएँ सामयिक पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होने लगी। आप 'मुक्तावली' काव्यग्रन्थ के रचयिता पं० विजयानन्दजी को अपना काव्य-गुरु मानते थे। सन् १९१२ ई० मे आपका प्रथम उपन्यास 'कुल-कलकिनी' प्रकाशित हुआ। इसके बाद आपकी विभिन्न विषयक कई पुस्तके प्रकाशित हुई। आपकी सारी रचनाएँ आपके द्वारा ही स्थापित ग्रन्थागार' नामक संस्था द्वारा प्रकाशित हुई हैं। पटना-आकाशवाणी के स्थापना काल से आपके मृत्युकाल तक आपकी रचनाएँ वहाँ से प्रसारित होती रही। आपकी प्रकाशित अन्य रचनाओ के नाम ये हैं—(१) अभिमन्यु का आत्मदान[2], (२) राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्र प्रसाद[3],

आधार पर। आपके प्रस्तुत परिचय-लेखन में उक्त सामग्री के अतिरिक्त 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, पृ० २४६–५१), 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ६४२) तथा 'हिन्दीसेवी संसार', वही, पृ० ३१) से भी सहायता ली गई है।

१. आचार्य शिवपूजन सहायजी ने दिनांक १६ जनवरी, सन् १९६१ ई० की अपनी एक टिप्पणी में लिखा है कि "मुख्तार साहब मेरे सुपरिचित व्यक्ति थे। 'बिहार-बन्धु' का दो बार सम्पादन किया था।"

२. खण्डकाव्य, प्रकाशन-काल सन् १९१८ ई०।

३ लघुखण्डकाव्य, प्रकाशन-काल सन् १९३६ ई०।

(३) करबला[1], (४) जीवन-संग्राम[2], (५) वैशाली[3], (६) परलोक की बातें[4], (७) भयानक भूल[5], (८) निर्बल-सेवा[6], (९) रोम का इतिहास[7], (१० भूलती-भागती यादें[8] और (११) हिमालय[9]। मिश्रबन्धुओं ने आपकी कुछ और रचनाओं का उल्लेख किया है—(१) आध्यात्मिक रहस्यों में सामाजिक जीवन, (२) विवेकानन्द की जीवनी, (३) राजनीति-विकास, (४ पाटलिपुत्र का ऐतिहासिक महत्त्व और (५) अनोखा रण्डीबाज।[10] आपका देहावसान सन् १९४९ ई० को २४ मई को हुआ।

उदाहरण

(१)

अयि दरिद्रते ! तुझे जहाँ जिसने अपनाया,
जीवन हुआ प्रशस्त, अमर-पद उसने पाया।
जीसस का वह रक्त, शोध का बना मसाला,
देखो ! क्या हो गया, रोम का हुआ दिवाला।
फिर देखो ! बलिदान 'करबला' का अनुपम था,
आत्म-विसर्जन वहाँ दीन का क्या कुछ कम था ?
ध्वंस हुआ साम्राज्य, किला व्यसनों का टूटा।
जगा कभी था धर्म, पाप का भाँड़ा फूटा।
प्रखर आँच उस कष्ट भरे जीवन अभिनय में,
बुद्धिमती पा गयीं भूख के उस अनुनय में।

---

१. खण्डकाव्य, प्रकाशन-काल सन् १९४३ ई०।
२. खण्डकाव्य, प्रकाशन-काल सन् १९४५ ई०।
३. लघु खण्ड-काव्य, प्रकाशन-काल सन् १९४५ ई०।
४. आध्यात्मिक रहस्य पर निबन्ध। प्रकाशन-काल अज्ञात।
५. उपन्यास, प्रकाशन-काल सन् १९०४ ई० (बिहार-बन्धु-प्रेस, बाँकीपुर, पटना)।
६. उपन्यास, प्रकाशन-काल अज्ञात।
७. इतिहास, प्रकाशन-काल अज्ञात।
८. संस्मरण, प्रकाशन-काल सन् १९५१ ई०। आचार्य शिवपूजन सहायजी ने आपकी संचिका पर दिनांक-१९ जनवरी, सन् १९६१ ई०, को टिप्पणी देते हुए लिखा है—"ये अपने समय के प्रमुख साहित्यकार थे। गद्य-पद्य के अच्छे लेखक भी। पुराने संस्मरणों के धनी। मेरे बड़े आग्रह पर संस्मरण लिखे। छपने पर मुझसे भूमिका लिखवाई।"
९. खण्डकाव्य, प्रकाशन-काल अज्ञात।
१०. 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, पृ० २४९—५१)।

जीवन का प्रह्लाद, भर्तृहरि, ध्रुव बन आया,
बना विज्ञ था तभी, जभी था सकट पाया।[1]

(२)

जीवन का संग्राम जीव का कठिन परिश्रम,
झिलमिल कही प्रकाश, कही है निशा घोर तम।
लडते-लडते कही ग्रीष्म की तपी आँच मे,
गिर जाता है कही नियति की कड़ी ग्रांच में।
होता यद्यपि खड़ा, पकड़ आशा की कड़ियाँ,
रहा गीनता किन्तु पराजय की ही घड़ियाँ।
जिसमें विह्वल जीव कही कुछ कर देता है,
आत्मघात परिताप विवस वह कर लेता है।
पर वह जो हो वीर, समय के इस प्रयास में
फॅसा हुआ वह कठिन काल की कड़ी फाँस में।
हिम्मत बाँधे, अटल खड़ा, निर्भय होता है,
दुर्बलता, पदचिन्ह देखकर जब खोता है।[2]

(३)

कोकिल कण्ठों के गानों में, मस्ती का वह उन्माद कहाँ ?
किसकी तानों में जादू है, स्वर की बस्ती आबाद कहाँ ?
संगमरमर मे नर्मदा कहाँ, वह जलप्रपात दिखलाती है ?
किस जंगल में जावित्री है, चन्दन की हवा बुलाती है ?
हिरनों में है वह मुश्क कहाँ, कोकिल की मीठी कूक कहाँ ?
मदभरे नयन की मृग-नयनी, कश्मीरी सुन्दर रूप वहाँ ?
किसके घर बजता है सितार, सारंगी कहाँ लुभाती है ?

---

१. 'जीवन-संग्राम' (श्रीकमलाप्रसाद वर्मा, सन् १९४५ ई०), पृ० ६।
२. वही, पृ० ४५।

किस रंग-महल में तबले पर, शहनाई गीत सुनाती है ?
शबनम में छिपती मलमल थी, किमखाब बाफता प्यारा था,
धन धान भरा जगमग करता, यह भारतवर्ष हमारा था।
है स्वर्ग निछावर भी इस पर, हम सबका एक सहारा है,
जय जन्मभूमि ! जय-जय स्वदेश ! जय भारतवर्ष हमारा है।'[1]

(४)

सन् १८७२ ई० में 'बिहार-बन्धु' का जन्म कलकत्ते में, स्वर्गीय प० बालकृष्ण भट्ट के निरीक्षण में हुआ था। इसमें पं० केशवराम भट्ट का बड़ा हाथ था। ये दोनों महाराष्ट्री ब्राह्मण थे और इनके पूर्वज 'बिहारशरीफ' में आ बसे थे। .... पं० केशवराम भट्ट के सहपाठी मुंशी हसनअली हिन्दी के अच्छे विद्वान् थे। कुछ दिनों तक यह भी 'बिहार-बन्धु' के सम्पादक थे। इस पत्र का अपना प्रेस था, जो सन् १८७४ ई० में पटने चला आया।...... इन दिनों 'बिहार-बन्धु' हिन्दी का प्रधान क्षेत्र था। 'बिहार-बन्धु' बिहार ही क्यों, सारे भारत का अपने टक्कर का हिन्दी-भाषा में पहला पत्र था। .....उन्नीसवी सदी के अन्त होते-होते 'बिहार-बन्धु' अन्तर्धान हो गया, पर बीसवीं सदी के प्रारम्भ से हमने फिर इसको देखा। यह है, सन् १९०३ ई० की बात। उस समय पं० शिवनन्दन त्रिपाठीजी इसका सम्पादन करते थे।..... सन् १९१२ ई० के प्रारम्भ में हम 'बिहार-बन्धु' का सम्पादन करने लगे। इसी साल बिहार बंगाल से अलग हो गया था।.... यही 'बिहार-बन्धु' की कहानी है, जो सन् १९१५ ई० में समाप्त हुई। इसका ('बिहार-बन्धु' का) सबसे बड़ा काम तो यह था कि इसके द्वारा पं० केशवराम भट्ट ने कचहरियों में हिन्दी को स्थान दिलवाया।[2]

---

१. 'करबला' (श्रीकमलाप्रसाद वर्मा, सन् १९४३ ई०), पृ० ७६।
२. 'भूलती-भागती यादें' (श्रीकमलाप्रसाद वर्मा, सन् १९५१ ई०), पृ० १६६, १७३, १८० और १८१।

(५)

उन दिवंगत आत्माओं की कीर्त्तिगाथा ही संसार में सच्चा प्रदीप प्रज्वलित कर अन्धकार में उजाला पैदा करती है। शाहजहाँ और मुमताज को संसार छोड़े सदियाँ बीती, पर उनकी समाधियों की सुन्दरता और अमर-प्रेम की कहानियाँ आज के भावुक लोगों को दूर-दूर से बुलाकर 'ताज' की परिक्रमा कराती है। उसके रंग-बिरंगे फूलों की सुगन्धि, शरद की चाँदनी में ताज की ओसो पर करोड़ों जगमग करते हीरे, रात्रि की नीरवता मे यमुना की सुरीली कलकल, हृदय के तार को गुंजित कर मन को मीठे स्वप्नों में सुला देती हैं। जीवन काव्यमय बन जाता है और मनुष्य थोडी देर के लिए अपने को भूल-सा जाता है। पर वहाँ तो न अब वह प्रेमी की मुमताज ही है और न उसके प्रेमोपासक शाहजहाँ ही! —ताज केवल ईंट-पत्थरों का ढेर है।[1]

कामतानाथ शर्मा 'मदनेश'

आप गया-जिला के 'दधपो' नामक स्थान के निवासी प० रघुनन्दन मिश्र के पुत्र है। आपका जन्म स० १९५० वि० (सन् १८९३ ई०) की कार्तिक अमावस्या को हुआ था।[2] आपका विद्यारम्भ सात वर्ष की अवस्था मे हुआ। आपकी साहित्य सेवा का आरम्भिक वर्ष स० १९८० वि० (सन् १९२३ ई०) माना जाता है।[3] आपकी अधिकाश पुस्तकाकार रचनाएँ सस्कृत भाषा मे[4] मिलती है। किन्तु, हिन्दी साहित्य का भाण्डार भी

---

१ 'करबला' (वही), पृ० १३-१४ (लेखक का 'कुछ अपना वक्तव्य')।

२ आपके ही द्वारा प्रेषित सामग्री के आधार पर।

३. 'गया के लेखक और कवि' (वही, पृ० १८) में आपका रचनाकाल सन् १९१७ ई० बतलाया गया है।

४. आपके द्वारा रचित सस्कृत-पुस्तकों के नाम ये हैं—(१) वसन्तकुसुमाकरम्, (२) शृंगारसर्वस्वम्, (३) स्वातन्त्र्यकौशलम्, (४) दरिद्र शतकम्, (५) सन्तापमालिका, ६) कारुण्यपञ्चाशिका, (७) मनःशिक्षाशतकम्, (८) रामनाममाहात्म्यम्, (९) ब्राह्मणमाहात्म्यम्—गोमाहात्म्यम्—पतिव्रतधर्मः—सन्तमाहात्म्यम्—धर्मप्राबल्यम्, (१०) रघुवशचरितम्, (११) श्रीमद्भागवतार्थ-प्रकाशिका, (१२) हरिवशभावप्रकाशिका तथा (१३) देवीभागवतार्थप्रकाशिका।

आपने कुछ कम न भरा। आपके द्वारा रचित समस्यापूर्त्तियाँ तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं मे प्राप्त होती है। आपकी हिन्दी-पुस्तको की नामावली इस प्रकार है—(१) श्रीकृष्ण-लीलासार, (२) विरह-बतीसी (३) सिंहभूमि का सफर, (४) गगासागर-यात्रा, (५) आरती-प्रकाश (६) गोमाता का आर्त्तनाद, (७) कीर्त्तन-कल्पलता, (८) योगीन्द्र-गिरिवर्णन और सीतामाहात्म्य[१]।

उदाहरण

हे तात दण्डक राज्य मे अभिषेक हमको कीजिए
सुख से करे प्रस्थान यह आदेश हमको दीजिए
जननी की आज्ञा मानकर फिर लौट आवेगे यहाँ
चौदह बरस तक के लिए, फिर हम कहाँ फिर तू कहाँ ?[२]
हे तात प्यारी जानकी है साथ जाना चाहती
मर्याद महिला धर्म का बिल्कुल बचाना चाहती
नाजुक नई तासीर है, हुसियार से रहना वहाँ
यह आखिरी उपदेश है, फिर हम कहाँ फिर तू कहाँ ?[३]
लाला लखन भी साथ ही जंगल रवाना हो रहा
तेरे बिना रुकता नही बिल्कुल दिवाना हो रहा
दर्म्यान तुमसे जानकर मैं भेज देती हूँ वहाँ ?
बरबख्त रखना ख्याल में फिर हम कहाँ फिर तू कहाँ ?[४]

१. इनमें प्रथम को छोड़कर और सभी बहुत छोटी-छोटी पुस्तिकाएँ हैं।
२. 'राम' की उक्ति।
३. 'कौशल्या' की उक्ति।
४. 'सुमित्रा' की उक्ति। उदाहरण आपके द्वारा प्रेषित सामग्री से।

कालिकाप्रसाद[1]

आप गया-जिला के 'ब्राह्मणी-घाट' नामक स्थान के निवासी थे। आपका जन्म सन् १८८२ ई० के १ दिसम्बर को हुआ था।[2] आपने फारसी लेकर प्रथम श्रेणी मे एण्ट्रेंस की परीक्षा पास की। तत्पश्चात् आपने बरेली (उत्तरप्रदेश)-कॉलेज (इलाहाबाद-विश्वविद्यालय) से बी० ए० की डिग्री प्राप्त की। इसके बाद सन् १६१६ ई० मे आपने कलकत्ता-विश्वविद्यालय से बी०टी० की परीक्षा पास की। इसके पूर्व सन् १६०७ ई० मे ही आप अपनी आजीविका की ओर प्रवृत्त हो चुके थे। सबसे पहले आप स्कूल सब-इन्सपेक्टर होकर बहेडा (दरभगा) गये। इसके बाद 'अनुवादक' बनाकर आप कलकत्ता भेज दिये गये। वहाँ से सन् १६२३ ई० मे तरक्की पाकर बिहार लौट आये और मुजफ्फरपुर मे ट्रेनिंग-स्कूल के सहायक प्रधानाध्यापक हुए। फिर, आप क्रमश मुजफ्फरपुर-जिलास्कूल, मोतीहारी-जिलास्कूल और पूसा (दरभगा) सरकारी हाइस्कूल मे प्रधानाध्याक-पद पर काम करते रहे। कुछ दिनो तक आप 'रजिस्ट्रार ऑव एक्जामिनेशन्स' होकर पटना भी रहे। पटना से मुजफ्फरपुर होते हुए सन् १६३२ ई० मे आप भागलपुर-ट्रेनिंग-स्कूल मे प्रधानाध्यापक होकर आये। आपकी गणना अपने समय मे आदर्श एव अनुभवी अध्यापक के रूप मे होती रही। बी० ए०, बी० टी० होते हुए भी आप भारत के विभिन्न विश्वविद्यालयो की एम्० ए० (हिन्दी) परीक्षा के परीक्षक हुआ करते थे।

आप सहृदयता की मूर्त्ति थे और आपका स्वभाव बडा मृदुल था। हिन्दी के प्रति आपका प्रगाढ प्रेम था। आपकी शैली प्रभावपूर्ण होती थी और भाषा की शुद्धता की दृष्टि से प्रामाणिक मानी जाती थी।[3] आपकी लिखी दो पुस्तके बतलाई जाती है—(१) व्याकरण पढने की विधि तथा (२) शिक्षा सम्बन्धी स्फुट-निबन्ध। आप सन् १६३७ ई० के २१ दिसम्बर को दिवंगत हुए। आपकी रचना के उदाहरण नही मिले।

---

१. इसी नाम के एक और साहित्यकार सारन-जिला के डिहमोरा नामक स्थान में हुए थे, जिनका रचना-काल मिश्रबन्धुओं ने स० १६५२ वि० बतल या है। इन्होंने 'सियास्वयंवर' नामक एक ग्रन्थ की भी रचना की थी—देखिए, 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६७२) (ग) तथा 'मिश्रबन्धुबिनोद' (वही), पृ० १०३।

२ देखिए 'बिहार-विभाकर' (श्रीतारकेश्वरप्रसाद वर्मा, पृ० १६६) तथा 'गया के लेखक और कवि' (वही, पृ० २०)। उक्त सामग्री के अतिरिक्त आपके परिचय लेखन में 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६४४) तथा स्व० ललितकुमार सिंह 'नटवर' द्वारा प्रेषित सामग्री का भी उपयोग किया गया है।

३. स्व० आचार्य शिवपूजन सहायजी ने दिनांक १८ फरवरी, १६६१ ई० की अपनी एक टिप्पणी में लिखा है कि "आपसे मेरा परिचय था। मेरे अनुभव के अनुसार आप हिन्दी-भाषा के विशेषज्ञ मर्मज्ञ विद्वान् थे। शब्दों के रूप और काव्य-रचनाशैली पर आपके जो व्याख्यान सम्मेलन के वार्षिक अधिवेशनों में प्रायः होते थे, उनसे आपकी सूक्ष्मदर्शिता और मननशीलता का विस्मयजनक परिचय मिलता था। विनयशीलता आपकी दूसरी बड़ी विशेषता थी।"

कालिकाप्रसाद[1]

आप शाहाबाद-जिला के बह्मवार (थाना-पीरो) के निवासी श्रीशिवबालक लालजी[2] के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९४० वि० (सन् १८८३ ई०) को भाद्र कृष्ण-पंचमी (बृहस्पतिवार) को हुआ था।[3] आपकी शिक्षा कुल मिड्ल कक्षा तक हुई थी। पर आपने स्वाध्याय के बल पर हिन्दी के साथ उर्दू, बँगला, संस्कृत और अँगरेजी भाषाओं में अच्छी गति प्राप्त कर ली थी। दलीपपुर (शाहाबाद) के साहित्यशास्त्रमर्मज्ञ प० धनंजय पाठक आपके दीक्षा एवं साहित्य-गुरु थे। आपका रचनाकाल सन् १९१२ ई० से आरम्भ होता है। आपका प्रवेश श्रीनर्मदेश्वरप्रसाद सिंह 'ईश' के साहित्यिक-दरबार में भी था। आपकी गणना साहित्यशास्त्र के पण्डितों में होती थी। आपकी स्फुट रचनाएँ 'मनोरंजन' (आरा), 'समन्वय' (कलकत्ता) तथा 'लक्ष्मी' (गया) में प्रकाशित हुआ करती थी। आपने 'कविराहजारा'[4] नामक पुस्तक तैयार कर स्व० आचार्य शिवपूजन सहायजी[5] को प्रकाशनार्थ दिया था। आप सन् १९४१ ई० की ३ जनवरी को परलोक गामी हुए।

उदाहरण

(१)

बूढ़ो सो बैल बँध्यो गृह मे
विष भोजन सौ जन भूत संघाती।
क्रीड़ा मसान दिसान मे अम्बर
कम्बर छाल बघम्बर गाती।

---

१. इसी नाम के एक और साहित्यकार डिहमौरा (सारन) के निवासी थे, जिनकी 'सिया-स्वयंवर' नामक एक रचना मिलती है।—देखिए, 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही), पृ० ६७२ (ग) तथा 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही), पृ० १०३।

२. ये उर्दू-भाषा के अच्छे जानकार एवं रामायणी थे। 'हिन्दी-बंगवासी' (कलकत्ता) और 'पैसा अखबार' (लाहौर) के नियमित पाठक।

३. श्रीसिद्धेश्वरीप्रसाद श्रीवास्तव (बह्मवार, शाहाबाद) द्वारा प्रेषित सामग्री के आधार पर।

४. इसमें हिन्दी के पुराने कवियों के सुन्दर-से-सुन्दर भक्तिभावपूर्ण कवित्त-सवैया आदि संगृहीत थे। लखनऊ के दंगे (सन् १९२६ ई०) में स्व० आचार्य शिवपूजन सहायजी की अन्यान्य साहित्यिक निधियों के साथ यह लुप्त हो गया।

५. स्व० आचार्य शिवपूजन सहायजी ने दिनांक १७ फरवरी, सन् १९६१ ई० की अपनी एक टिप्पणी में लिखा है कि "मेरे बड़े बहनोई थे। साहित्यानुरागी और साहित्यमर्मज्ञ भी। प्राचीन हिन्दी-साहित्य का अध्ययन-मनन विशेष मनोयोग से किया था। मेरे मन में साहित्य-प्रेम उत्पन्न किया। मेरी रचनावली (शिवपूजन-रचनावली, खण्ड ३) इन्हीं को समर्पित है। आपने 'रस कुसुमाकर' की प्रतिलिपि स्वयं की थी, जो परिषद् के संग्रहालय में है।"

त्र्यम्बक मुंड के माल विशाल
सुव्याल विभूषण दूषण जाती ।
होती न शम्भु शिवा घर में
करनी बरदान की देत बताती ॥[1]

(२)

घटा घहरात तामे बिजुरी छहरात
शीतल समीर त्योंही लाग्यो मेह झर है ।
पौरिये रतौंधी आवे सखी सबै सोच रहो
जागत न कोऊ परदेश मेरो बर है ।
ननद नियारी सासु मायके सिधारी
देखि भारी अँधियारी तामें सूझत न कर है ।
सावन की सूनी अधराति निशि जागु-जागु
जागु रे बटोही ! यहाँ चोरन को डर है ॥[2]

काशीनाथ झा

आप दरभगा-जिला के 'कोइलख' नामक प्रसिद्ध ग्राम के निवासी पं० भाईलाल झा के पुत्र है । आपका जन्म सं० १९३९ वि० (सन् १८८२ ई०) की माघ शुक्ल-चतुर्थी को हुआ था ।[3] आप पहले अँगरेजी-भाषा-शिक्षा के माध्यमिक स्तर तक की योग्यता प्राप्त कर सस्कृत एव हिन्दी-साहित्यानुशीलन की ओर प्रवृत्त हुए । आपकी नियुक्ति पहले मालद्वार (पूर्णिया)-राज के मैनेजर-पद पर हुई । उसके बाद, आप बनैली-राज के मैनेजर हुए । अन्त मे आप बनैली की रानी चन्द्रावती-निर्मित एव स्थापित श्यामा-मन्दिर तथा श्यामा-महाविद्यालय, काशी के प्रबन्धक हुए । आपको काशी के भारत-धर्म-महामण्डल की ओर से सं० १९९९ वि० मे 'विद्यालंकार' की उपाधि प्राप्त हुई । आपकी अनेक स्फुट रचनाएँ तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित मिलती हैं । आप गद्य-प्रबन्ध एवं पद्य-रचना मे प्रवीण है ।

---

१. 'मनोरजन' (मासिक, भाग २, सख्या ६-७, बैशाख-ज्येष्ठ सं० १९७१ वि०), पृ० १९८ ।

२ वही, पृ० १९८ ।

३ आपके द्वारा दिनाक १३ मार्च, सन् १९५७ ई०, को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के आधार पर ।

आपने बँगला-भाषा की कई पुस्तको का अनुवाद भी किया है। 'प्रस्थानत्रय-प्रकाशिका' नाम से आपका एक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ है[1]। आपकी एक और पुस्तकाकार रचना 'वेदान्त पंचदशीसार' के नाम से अप्रकाशित ही पडी रह गई।

उदाहरण

(१)

जय अवधेश दिनेश-कुलभूषण, जय मिथिलेश कुमारी।
राजीव-विलोचन भव-भय-मोचन, चन्द्रवदनि अति सुकुमारी।
मर्यादा-पुरुषोत्तम प्रभुवर, पति अनुगामिनि बनचारी।
काशीपति प्रमुदित छवि निरखत, युगल रूप की बलिहारी॥[2]

(२)

हे चन्द्रेश्वर जगत-अधीश्वर शंकर भोलादानी।
बाल-वयस परिणय भेल शुभ तनु, चन्द्रानन चन्द्रावति रानी॥
विनिमय भाव न तोष परस्पर, गुन अवगुन नहि जानी॥
'काशीपति' विनति प्रभु पशुपति, युग कर लिअ अहँ मानी।
अपन धाम में मिलन युगल करु, सायुज दय दुहु पानी॥[3]

(३)

वेदान्त के प्रस्थान (अंग) तीन हैं, श्रुति, न्याय और स्मृति। श्रुति प्रस्थान उपनिषत् है, न्याय प्रस्थान ब्रह्मसूत्र है और स्मृति प्रस्थान भगवद्गीता है। वेदान्त शास्त्र अद्वैत ब्रह्म प्रतिपादक है और ब्रह्म को सिद्ध करने में प्रधान प्रमाण तीन ही हैं, प्रत्यक्ष, अनुमान और शाब्द। उपमान, अर्थापत्ति और अनुपलब्धि के तीनों प्रमाण,

---

१. स० १९९६ वि० (सन् १९४० ई०) में श्रीचन्द्रकान्त झा, पी० मोद प्रेस, कचौड़ीगली, काशी से मुद्रित।

२. आपके द्वारा प्रेषित।

३. वही।

शाब्दादि तीन प्रमाणों के अन्तर्भूत होने के कारण गौण है और इनका उपयोग भी विरल है। लोक में भी तीन ही प्रमाणों से सब बातें सिद्ध होती है। (१) प्रत्यक्ष अर्थात् इन्द्रिय सन्निकर्ष जन्य ज्ञान से। (२) अनुमान अर्थात् तर्क से। और (३) शाब्द अर्थात् सुने हुए वाक्य के अर्थ से। किसी विषय के निश्चयात्मक ज्ञान मे ये तीन ही प्रमाण काम में आते है। यद्यपि सूर्य एक है तथापि प्रातः, मध्याह्न और संध्या इन तीन कालों में उसकी किरणो का तीन प्रकार का प्रभाव देखा जाता है। उदयकालीन सूर्य के अरुणोदय मात्र से रात्रि का अन्धकार सहसा फट जाता है और तब जगत के जीव अपने-अपने व्यवहार में लग जाते है। मध्याह्नकालीन सूर्य अपनी प्रखर किरणों से जगत को तप्त कर सुदूर गिरि गह्वरों के भीतर भी प्रकाश फैलाकर अन्धकार का नाश कर देता है और सायंकालीन सूर्य की रश्मि प्रकाश-युक्त होने पर भी प्रखर नही किन्तु मृदु होती है अर्थात् सूर्य्यमंडल के रहते हुए भी अन्धकार चारो ओर फैलने लगता है। इसी प्रकार ये तीनों प्रस्थान, उपनिषत्, ब्रह्मसूत्र और गीता यद्यपि एक ही ब्रह्म के प्रतिपादक है तथापि उनके विभिन्न प्रभाव हैं। उपनिषत् के श्रवण से अज्ञान, ब्रह्मसूत्र के मनन से संशय और गीता के निदिध्यासन से विपर्य्यय का नाश होता है।[1]

(४)

अन्तःकरण को प्रमाता कहते है। उसकी परिणामात्मिका वृत्ति को प्रमाण कहते है। जैसे जल नाले से होकर खेत की कियारी में जाता है तब उस कियारी के स्वरूप को धारण कर लेता है। यदि कियारी त्रिकोण हो तो जल भी त्रिकोण रूप हो जाता है। यदि चतुष्कोण कियारी हो तो जल भी वैसा ही प्रतीत होने लग जाता है। उसी

---

१. 'प्रस्थानत्रय-प्रकाशिका' (पं० काशीनाथ झा, सन् १९४० ई०), पृ० ११।

प्रकार अन्तःकरण की वृत्ति निकलकर विषय के रूप को ग्रहण करती है। वह उस विषयक (अज्ञानरूप) आवरण का भंग होना है और इसके अनन्तर वृत्ति अवच्छिन्न (वृत्ति मे स्थित) चिदाभास उस विषय को प्रकाश करता है तब उस विषय का ज्ञान होता है। वाह्य ज्ञान में घट आदि के आकार को प्राप्त हुआ चिदाभास विषय (प्रमेय) से अतिरिक्त भासमान नही होता है। इसको प्रमित, प्रभा, अथवा फल कहते है। आत्मज्ञान मे विषय और चिदाभास की एकता होने के कारण फल की व्याप्ति नही। जैसे अन्धियाले घर में कोई वस्तु घट से आवृत (ढका) हो तो उस वस्तु को कोई देख नही सकता। घट रूप आवरण को हटाने के लिये दण्ड (लाठी) से उस घट को फोड़ देने से आवरण हट जाता है किन्तु अन्धकार के कारण वह वस्तु देखी नही जाती है।[1]

कुलेशचन्द्र तिवारी

आप भागलपुर-जिला के 'गोड्डा' (पो० तारापुर) नामक ग्राम के निवासी थे। आपका जन्म सं० १९४२ वि० (सन् १८८६ ई०) की फाल्गुन कृष्ण-चतुर्दशी (४ मार्च) को हुआ था।[2] आप मैट्रिक तक की पढाई के बाद सस्कृत-साहित्य के अध्ययन की ओर प्रवृत्त हुए। 'साहित्यभूषण' की उपाधि प्राप्त कर आपने 'साहित्याचार्य' की तैयारी की, पर परीक्षा न दे सके। आगे चलकर हिन्दी के 'विशारद' भी हुए। उसके बाद, आप भागलपुर के श्रीभगवान पुस्तकालय के जन्मकाल से लेकर सन् १९२५ ई० तक पुस्तकाध्यक्ष रहे। इसी अवधि मे हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का एक अधिवेशन भागलपुर मे हुआ था जिसकी स्वागत समिति के आप सक्रिय कार्यकर्त्ता थे। भागलपुर-हिन्दी-सभा के संस्थापकों एवं संचालको मे आपका प्रमुख स्थान माना जाता है। उक्त सभा के आप अनेक वर्षों तक मन्त्री भी रहे। सन् १९२७ से ३० ई० तक आप श्रीगान्धी पुस्तकालय, हवेली खड़्गपुर (मुंगेर) मे संस्कृताध्यापक रहें। कहते हैं, आपके पास विविधविषयक पुस्तको का एक विशाल संग्रह था, जो सन् १९४२ ई० के गृहदाह में नष्ट हो गया। साहित्य के अतिरिक्त

---

१. प्रस्थानत्रय-प्रकाशिका' (वही), पृ० २१९।

२. विभाग में सुरक्षित सामग्री के आधार पर।

गणित पर भी आपका अद्भुत अधिकार था। हिन्दी के साथ-साथ, संस्कृत, बँगला, फारसी, उर्दू आदि भाषाओं में भी आपका प्रवेश था। तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में आपकी अनेक रचनाएँ प्रकाशित हुई थीं।[1]

एक आकस्मिक दुर्घटना के फलस्वरूप अक्टूबर सन् १९४७ ई० में आपका स्वर्गवास हो गया।[2] आपकी रचना के उदाहरण हमें नहीं मिल सके।

कृष्णचैतन्य गोस्वामी

आप पटनासिटी (पटना) के 'गायघाट'-मुहल्ले के निवासी श्रीराधालाल गोस्वामी के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९४६ वि० (सन् १८८९ ई०) की चैत्र कृष्ण-त्रयोदशी को हुआ था।[3] आपकी शिक्षा पटना, काशी और वृन्दावन में हुई। आपने अपने पिताजी से ज्यौतिषशास्त्र, महामहोपाध्याय षड्दर्शनाचार्य सार्वभौम श्रीदामोदरलाल गोस्वामी से काशी में व्याकरण, साहित्य और दर्शनशास्त्र, श्यामसुन्दर संस्कृत-विद्यालय (करनालगंज, पटनासिटी) में महन्त श्रीगोपालदत्त त्रिपाठी, व्याकरणाचार्य से व्याकरण और मीमांसा तथा वृन्दावन के गोस्वामी मधुसूदनाचार्यजी से भक्तिशास्त्र का अध्ययन किया था। सं० १९९१ वि० की वसन्तपंचमी को काशी के महामहोपाध्याय पं० दामोदरलालजी गोस्वामी ने आपको भक्त्यलंकार' की उपाधि दी थी। मथुरा में हुए अखिलभारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के षोडश अधिवेशन के स्वागत-मन्त्री आप ही थे। आपकी साहित्य-सेवा का आरम्भिक वर्ष सं० १९६४ वि० है। वृन्दावन से श्रीराधाचरण गोस्वामी के सम्पादन में प्रकाशित 'कृष्ण-चैतन्य-चन्द्रिका' (मासिक) में आपकी पहली कविता प्रकाशित हुई थी। उसके बाद आपकी गद्य-पद्य-रचनाएँ 'मर्यादा', 'सरस्वती', 'चित्रमय जगत्', 'इन्दु', 'मनोरंजन', 'चैतन्य', 'प्रेम' आदि में प्रकाशित हुईं। सं० १९७७ वि० की भाद्र-कृष्णाष्टमी से आपने 'चैतन्य पुस्तकालय,' गुलजारबाग से 'चैतन्य-चन्द्रिका'-नामक पत्र का प्रकाशन अपने सम्पादन में किया, जो लगभग एक वर्ष चला। इसके साथ ही, जीवन-भर आप अपने पूज्य पिता द्वारा संस्थापित 'चैतन्य पुस्तकालय'[4] का सफलतापूर्वक संचालन करते रहे। आपकी पुस्तकाकार प्रकाशित रचनाओं में प्रमुख के नाम हैं—(१) उपासना-विधि[5] और (२) गौडप्रेमामृत[6]।

---

१. मुँगेर-जिला-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन में, सन् १९३८ ई० में आपको कविता (समस्यापूर्त्ति) पर पुरस्कार भी मिला था।

२ आपके पुत्र श्रीतपेशचन्द्र त्रिवेदी ने अपने ग्राम 'गोड्डा' में 'श्रीचन्द्रकान्त पुस्तकालय' की स्थापना आपकी स्मृति में की है।

३. आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सूचना के आधार पर।

४. इस पुस्तकालय के सदस्यों में पं० रामावतार शर्मा, डॉ० राजेन्द्रप्रसाद, पं० दामोदर गोस्वामी, आचार्य बदरीनाथ वर्मा, श्रीजगतनारायण लाल के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

५. वैष्णवों के नित्य नैमित्तिक कर्त्तव्य—सं० १९८७ वि० में चैतन्य-पुस्तकालय, गुलजारबाग, पटना से प्रकाशित।

६ 'चैतन्य महाप्रभु की जीवनी' -सन् १९०९ ई० में वृन्दावन से प्रकाशित।

उदाहरण

(१)

इस पवित्र भारत-भूमि में जन्म लेकर प्रत्येक मनुष्य के हृदय में एक बार सात्विक भाव का उदय होता है, उनकी आस्तिक मति परमात्मा की ओर आकृष्ट होती है और वे भगवान की कृपा लाभ करने की अभिलाषा किया करते है। ऐसे अवसर पर उपासकों से, सद्गुरु से, दीक्षा लेकर सदाचारो का पालन करना चाहिए। ..सदाचार के पालन किये बिना कोई मनुष्य किसी प्रकार की सिद्धि नहीं प्राप्त कर सकता। जो मनुष्य सदाचारी नही है वह न तो कुलीन ही कहा जा सकता है और न धार्म्मिक। इसलिए प्रत्येक वैष्णव को अपने साम्प्रदायिक सदाचारो का पालन करते हुए भगवत् कृपा लाभ करने का यत्न करना चाहिए।[1]

(२)

भगवान् का नाम जपने के लिए न तो विशेष शुद्धि की जरूरत है और न कोई आयोजन की दरकार है। रोम की सफर में, दूकान पर बैठे हुए, अथवा और भी कोई ऐसी लाचारी की हालत में इतना नियम पालन करना कुछ कठिन नही है।

कलियुग के आलसी अल्प-प्राण आलसी जीवों को ज्ञान, योग, यज्ञ, तप आदि साधनों से मुक्ति मिलनी कठिन है। यह विचार कर परम करुणामय कलियुग पावनावतार भगवान श्रीकृष्ण चैतन्यदेव ने हरिनामस्मरण और कीर्त्तन को ही भगवत्चरनारविंदप्राप्ति का मुख्य साधन बताया हैं।[2]

---

१. 'उपासना-विधि' (श्रीकृष्णचैतन्य गोस्वामी, स० १९८७ वि०), पृ० १।
२ वही, पृ० २६।

(३)

जो वृक्ष थे, फल-पत्र सारे निज विसर्जन कर चुके।
निज त्याग की सीमा सभी के सामने थे धर चुके ॥
वे आज नव नव पल्लवो से मस्त होकर भूमते।
ऋतुराज पादों को झुकाकर डालियाँ है चूमते ॥[१]

(४)

ये मञ्जरों से लदे नम्र रसाल-तरु जो हैं बड़े।
वे देखिए, कुसुमाञ्जली ऋतुराज को देने खड़े ॥
इन कोकिलाओ के मनोरथ शब्द की अस्फुट कथा।
ऋतुराज के गुण-गान से सम्बन्ध रखती सर्वथा ॥[२]

(५)

दिनभर के कामो से आकुल हो जब हम थक जाते हैं।
देह और मस्तिष्कादि जब सब ही घबरा जाते है ॥
नही और कोई है हमको आश्रय देता किसी प्रकार।
निद्रे ! उसी समय तू हमको करती है सब विधि स्वीकार ॥[3]

(६)

दु:शासन के लिए हुआ था ज्यों कृष्ण का चीर अपार,
होता ज्यों नौका विहीन को नही नीर का बहु-विस्तार ॥
अथवा पंगुजनों को जगतस्पर्शी गिरि-शिखरों का जाल,
दुखियों को भी उसी भाँति यह शिशिर निशा है बड़ी विशाल ॥[४]

---

१. चित्रमय जगत्' (पूना, वर्ष ४, अक ५, मई, सन् १९१४ ई०)--श्रीरामनारायण शास्त्री से प्राप्त।
२. वही और उन्हीं से प्राप्त।
३. वही, (वर्ष ५, अक ६, सितम्बर, सन् १९१५ ई०) —उन्हीं से प्राप्त।
४. 'सरस्वती' (मासिक, प्रयाग, भाग १४, खण्ड १, संख्या २, फरवरी, सन् १९१३ ई०)—उन्हीं से प्राप्त।

(अखौरी) कृष्णप्रकाश सिंह 'कृष्ण'[1]

आपकी रचनाएँ 'त्रिपुरारि' नाम से भी मिलती है। आप गया-जिलान्तर्गत 'औरंगाबाद' नामक स्थान के निवासी, वहाँ के विख्यात वकील अखौरी ठाकुरप्रसाद सिंह के पुत्र है।[2] आपका जन्म सन् १८९२ ई० स० १९४९ वि०) के ८ जून (ज्येष्ठ मास) को हुआ था।[3] आपने सन् १९०९ ई० मे बी० एन० कॉलेजियट स्कूल से मैट्रिक की परीक्षा पास की। सन् १९१३ ई० मे वकालत की परीक्षा मे उत्तीर्ण हुए। औरंगाबाद के वकीलो मे आपकी विशेष प्रसिद्धि हुई। आपने औरंगाबाद मे एक कॉलेज की भी स्थापना की थी। आपको सन् १९१२ ई० मे रामगढ कवि-सम्मेलन से 'सुकवि' की उपाधि प्राप्त हुई थी। गल्पमाला-ऑफिस, बनारस ने आपकी प्रतिभा से प्रभावित होकर आपको एक रजत-पदक प्रदान किया था। इसके अतिरिक्त कलकत्ता-विश्वविद्यालय ने एकबार हिन्दी मे प्रथम होने के उपलक्ष्य मे आपको एक सम्मान-पत्र श्रीजयशकर प्रसादजी की उपस्थिति मे प्रदान किया था। आपकी साहित्य-सेवा का आरम्भिक वर्ष सन् १९०९ ई० माना जाता है। लेख और समाजोपयोगी कहानियाँ तथा नाटक लिखने मे आप बडे निपुण माने जाते है। आपकी स्फुट रचनाएँ अधिकतर मनोरजन', 'मर्यादा', 'हितैषी', भागवत' और 'इन्दु' मे प्रकाशित हुआ करती थी। 'भागवत' के तो आप प्रधान सम्पादक ही थे।

आपके द्वारा लिखित पुस्तको के नाम ये हैं (१) वीरचूड़ामणि,[4] (२) शान्ति और सुख, (३) सेण्ट्रल को-ऑपरेटिव बैक के कायदे, (४) सहयोग-पाठ[5], (५) नेलसन, (६) जैवधर्म, (७) निर्भयानन्द, (८) पन्ना, (९) कुसुम, (१०) मर्यादापुरुषोत्तम राम, (११) श्रान्त पथिक और (१२) शिक्षामृत।[6]

उदाहरण

(१)

अरी विक्षिप्ते; किसने तुझे कहा कि संसार में स्वार्थ का राज्य है। उन्मादिनी, कर्त्तव्य श्रेष्ठ और स्वार्थ निकृष्ट है। कर्त्तव्य योगाग्नि है, स्वार्थ आहुति। बिना आहुति दिये यज्ञ की समाप्ति नहीं होती। कर्त्तव्य मणि है, स्वार्थ सर्प है। बिना सर्प के मारे मणि

---

१ श्रीभुवनेश्वर प्रसाद 'भानु' (चन्दाअखौरी, पो० गजराजगंज, शाहाबाद) ने आपका नाम, अखौरी कृष्णप्रसाद बतलाया है। — देखिए, 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० २७।

२. आपके पूर्वज चुरामनपुर से 'खुटहा' (शाहाबाद) होते हुए गया आये थे।

३. आपके द्वारा प्राप्त और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सूचना के आधार पर।

४. बनारस के दुगवेकर-बन्धु ने इसका और 'नेलसन' का मराठी भाषा में अनुवाद करवाया था।

५. स्वर्ण-पदक-प्राप्त।

६. आपकी अधिकांश पुस्तकें हरिदास कम्पनी, कलकत्ता से प्रकाशित हुई थीं। कुछ पुस्तकें गया-प्रेस से भी छपी थीं।

मिलता किसे है ? माँ ! स्वार्थत्याग ही विजय है। माँ ! निस्वार्थ कर्त्तव्यपरायण की आत्मा ही अक्षय शांति को प्राप्त करते है। शिवि ने कपोत के लिए मांस देकर स्वार्थत्याग किया, हरिश्चन्द्र ने दारा पुत्र देकर कर्त्तव्य का पालन किया। माँ! कर्त्तव्यनिष्ठ हो, स्वार्थ की मिट्टी छोड़कर कर्त्तव्य की मणि ग्रहण करो; सुख, धैर्य और शांति मिलेगी।'[1]

(२)

अहो ! यह कैसा विचित्र देश है। दिन मे प्रचण्ड सूर्य इसके गाढ़ और नील आकाश को प्रकाशित करता है और रात्रि समय में शुभ्र चन्द्रमा इसे अपनी स्निग्ध ज्योत्स्ना से स्नान करा देता है। तामसी रात्रि में जब अनन्त उज्ज्वल ज्योति.पुञ्ज इस भारत आकाश मे झलमलाता है तब मैं विस्मित हो आतङ्क के साथ निर्निमेष देखता रह जाता हूँ। वर्षाऋतु में घनकृष्ण मेघराशि गुरु गम्भीर गर्ज्जन से सहस्रो दैत्यों को लज्जित करता हुआ जब इसके आकाश को आच्छन्न कर लेता है तब मैं निर्व्वाक हो खडा हो जाता हूँ। इसका रक्षक अभ्रभेदी धवल-तुषार मौलि नील हिमाद्रि स्थिर भाव से खड़ा पहरा देता है। इसके विशाल नद नदी फेनिल उच्छ्वास के साथ उद्दाम वेग से बहते है।

अहो ! मैं स्वर्ग के उत्फुल्ल प्रसूनो के आमोद से प्रमुदित हो संसार को तुच्छ दृष्टि से देखता था, जगत् की दूषित जलवायु से भय खाता था। परन्तु आज इस पवित्र भारतभूमि पर पग देते ही मेरे सारे विचारों ने एक बार ही पलटा खाया। मैं अपने स्वर्ग से

---

१. 'पन्ना' नाटक से।—देखिए, 'इन्दु' (कला ६, खण्ड १, किरण ६, जुलाई, सन् १९१५ ई०), पृ० ५६३।

इसकी तुलना करता हुआ 'यह भारत स्वर्ग-सहोदर है' कहते तनिक नहीं हिचकता ।[1]

कृष्णवल्लभ सहाय

आप पटना-जिला के शेखपुरा नामक स्थान के निवासी है। आगे चलकर सन् १६०८ ई० मे, आप हजारीबाग मे जाकर बस गये। आपका जन्म सन् १८६८ ई० के ३१ दिसम्बर को हुआ था।[2] आपकी आरम्भिक शिक्षा हजारीबाग मे ही हुई। वही के सेण्ट कोलम्बस कॉलिज से आपने अँगरेजी मे ऑनर्स लेकर बी० ए० की परीक्षा पास की। उक्त परीक्षा के ऑनर्स-विषय मे सर्वप्रथम होने के कारण आपको गेट-स्वर्ण पदक प्राप्त हुआ था। एम्० ए० की पढाई समाप्त करने के बाद परीक्षा के समय आपको सन् १६२१ ई० के असहयोग-आन्दोलन मे भाग लेने को विवश होना पडा। आन्दोलन के समाप्त होने पर आप बिहार विद्यापीठ मे अँगरेजी-अध्यापक के रूप मे कार्य करने लगे। सन् १६२४ और १६२६ ई० मे आप हजारीबाग-जिला से बिहार लेजिस्लेटिव कौसिल के सदस्य निर्वाचित हुए। उसके बाद, सत्याग्रह-आन्दोलन मे भाग लेने के कारण सन् १६३० से ३३ ई० तक आप जेल मे रहे। असहयोग के आरम्भ से ही अखिलभारतीय प्रान्तीय, एव जिला काँगरेस-समितियो से आपका बडा घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। काँगरेस के प्रथम शासनकाल मे आप बिहार-सरकार के पार्लियामेण्टरी सेक्रेटरी हुए और सन् १६४६ ई० के मन्त्रिमण्डल मे आपकी नियुक्ति राजस्व-मन्त्री के रूप मे हो गई। अपने शासनकाल मे आपने राजस्व-सम्बन्धी अनेक क्रान्तिकारी कानून पास करवाये। सन् १६६३ ई० मे आप बिहार के मुख्यमन्त्री हुए और सन् १६६७ ई० मे मुख्यमन्त्रित्व समाप्त हो जाने के बाद से आप हजारीबाग मे ही निवास कर रहे हैं। 'रामचरितमानस' के प्रति आपका असीम अनुराग रहा है। हिन्दी मे आपके अनेक स्फुट निबन्ध, विशेषकर राजनीतिक, प्रकाशित मिलते है। आपने 'छोटानागपुर-संवाद-पत्र' का सम्पादन कर अपनी सम्पादन-क्षमता का भी सुन्दर परिचय दिया है।

उदाहरण

(१)

जमींदारी-उन्मूलन के बिना गरीबी दूर होना कठिन है। गरीबी की समस्या हल करने के मार्ग में जमींदारी-उन्मूलन पहला कदम

---

१. 'कुसुम' नाटक से।—देखिए, 'इन्दु' (कला ६, खण्ड २, किरण २, जुलाई, सन् १६१५ ई०), पृ० १५४-५५।

२ 'बिहार-अब्दकोष' (वही, पृ० ६५५),। इसके अतिरिक्त उक्त परिचय-लेखन में 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६७१-८) तथा 'हिन्दीसेवी-संसार' (वही, पृ० ४२-४३) की सामग्री का भी उपयोग किया गया है।

होगा। जबतक जमींदारी प्रथा है, तबतक किसी तरह का भूमि सुधार होना कठिन है। जमीदार उपयोगी अङ्ग नही रहे और राष्ट्रधन की दृष्टि में वे पाट अदा नही कर सकते। यदि जमीदार समाज के उपयोगी अङ्ग होते, तो उन्हे इसी तरह रहने दिया जाता। समय आ गया है जब दूसरे के श्रम पर कोई मौज नही कर सकता। अपने परिश्रम की कमाई सबको खाने का अब समय है। कमानेवाले को ही खाने का अधिकार है। समाज का यही तकाजा है। जमीदारी प्रथा बहुत पुरानी हो गई है और इसका अन्त किया जाना आवश्यक है। समय की पुकार सभी को सुननी है। समय की पुकार है कि जमीदारी प्रथा का अन्त कर दिया जाय।[1]

(२)

किसी भी देश की उन्नति के लिए उस देश की भूमि का कुछ हिस्सा उचित परिमाण मे जंगलों से ढँका हुआ होना चाहिए। हजारों वर्ष पहले मनुष्य जाति मे इस प्रकार की धारणा थी कि मानव सभ्यता के फैलने के पथ मे जंगल बाधक है और इसी विचार को लेकर अधिक देशों मे जंगलो को काटकर भूमि को खेती के लिए तैयार किया गया। खेती कर अन्न उत्पन्न करना भी देश की प्रजा के पालन-पोषण के लिए नितांत आवश्यक है। किन्तु, विदेशों के वैज्ञानिक, गत दो सौ वर्षो के अनुभव के बाद, इस निर्णय पर पहुँचे है कि हर देश में खेती की भूमि को उपजाऊ बनाए रखने के लिए वहाँ के पहाड़ों तथा नदी-नालों के स्रोतस्थानों पर जंगलों को सुरक्षित रखना बहुत जरूरी है। जंगलों से न केवल लकड़ी जलावन तथा फल-फूल पत्ते इत्यादि वस्तुएँ जनता को सुलभ होती हैं, बल्कि

१ 'हुंकार' (साप्ताहिक, पटना, वर्ष ८, अंक ४०, ३० अप्रैल, सन् १९५० ई०), पृ० १२।

जंगलो का हवा-पानी पर बड़ा प्रभाव पड़ता है और नदी-नालो के स्रोतों को सूख न जाने से बचाने एवं नदियों मे बाढ़ आने को रोकने में भी जंगल बहुत सहायक होते है।[1]

केदारनाथ सिंह

आप गया-जिला के 'ओकरी' (डाक० जयन्तीपुर कुरुआ, जहानाबाद) के निवासी श्रीहरिहरप्रसाद सिह के पुत्र हैं। आपका जन्म स० १९५१ वि० (सन् १८९४ ई०) के ३० फाल्गुन को हुआ था।[2] आपकी शिक्षा अत्यल्प थी। आप अपने समय के नामी जमीन्दारो मे थे।[3] जब आप ३२ वर्ष के हुए, तब आपकी प्रथम पत्नी का स्वर्गवास हो गया। उसी के बाद आप काव्य-रचना की ओर प्रवृत्त हुए। कहते है, आपने 'विधवा-विलाप' नामक एक पुस्तक की रचना भी की थी, जिसकी पाण्डुलिपि खो गई। आपकी रचना के उदाहरण हमे नही मिले।

(कुमार) गंगानन्द सिंह

आप साहित्य-सरोज कविकुलचन्द्र राजा श्रीकमलानन्द सिंह के पुत्र है, जो हिन्दी एवं संस्कृत के एक यशस्वी विद्वान् थे। आपका जन्म सन् १८९८ ई० के २४ सितम्बर को पूर्णिया जिला के 'श्रीनगर' नामक स्थान मे हुआ था।[4] आपका विद्यारम्भ-सस्कार आपके चाचा स्व० बनैली-नरेश राजा श्रीकीर्त्यानन्द सिंह बहादुर के द्वारा हुआ। तदुपरान्त आपकी आरम्भिक शिक्षा मुँगेर मे हुई। लगभग तीन वर्षों तक मुँगेर-जिला-स्कूल मे विद्याध्ययन करने के पश्चात् सन् १९१० ई० मे आप पूर्णिया-जिला-स्कूल मे चले आये। वहाँ से आपने सन् १९१५ ई० मे प्रवेशिका की परीक्षा पास की। इसके बाद विद्याध्ययन के लिए आप कलकत्ता चले गये। कलकत्ता मे, आपने प्रेसिडेसी कॉलेज, संस्कृत-कॉलेज और

---

१. 'हुंकार' (वही, वर्ष ६, अक ४६, जून, सन् १९५२ ई०), पृ० १०।

२. प० महेन्द्रप्रताप 'विकत्तंन' (साकेत, ओकरी-जयन्तीपुर, जहानाबाद, गया) से प्राप्त और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सूचना के आधार पर।

३. अपनी जमीन्दारी के समय आप श्रीगुरुप्रसादजी, श्रीकमलनयनजी, श्रीबलदेव पाण्डेयजी आदि कवियों के प्रशंसक एव आश्रयदाता थे।

४. 'A History of Maithili Literature' (Vol. II. Dr. Jayakant Mishra, 1950), P. 146, 'बिहार के नवयुवक-हृदय' (वही), पृ० ८५, 'बिहार-विभाकर' (वही, पृ० ४४२), 'मिश्रबन्धुविनोद' (वही, पृ० ५२६-२७)। इन पुस्तकों मे आई आपसे सम्बद्ध सामग्री के अतिरिक्त 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० १४६); 'हिन्दीसेवी-ससार' (वही, पृ० ५१), 'बिहार-अब्दकोष' (वही, पृ० २१२) तथा आपके द्वारा प्रेषित सामग्री से भी पर्याप्त सहायता ली गई हैं।

कलकत्ता-विश्वविद्यालय मे विद्याध्ययन किया। वही से आपने सन् १९१९ ई० मे बी० ए० तथा सन् १९२१ ई० मे एम्० ए० की परीक्षा पास की। एम्० ए० की उपाधि प्राप्त करने के बाद आप कलकत्ता-विश्वविद्यालय के पुरातत्त्व-विभाग मे रिसर्च स्कॉलर हुए और भरहुत-शिलालेखो के आधार पर आपने तत्कालीन इतिहास की रचना की, जिसे आगे चलकर उस विद्यालय ने प्रकाशित किया।

आप देश-विदेश की अनेक प्रमुख साहित्यिक, सामाजिक, शैक्षणिक, राजनीतिक एवं शोध-सम्बन्धी सस्थाओ के सदस्य रहे हैं। जिन शोध-संस्थाओं से आपका सम्बन्ध रहा है, उनमे प्रमुख के नाम ये है—रॉयल सोसायटी ऑव ग्रेटब्रिटेन ऐण्ड आयरलैण्ड, रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, बंगाल एशियाटिक सोसाइटी, बिहार ऐण्ड उडीसा रिसर्च सोसाइटी आदि। साहित्यिक सस्थाओ मे आप बिहार हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, दरभगा-जिला हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, पूर्णिया-जिला-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, बिहार-सस्कृत-परिषद्, बिहार-सस्कृत समिति आदि से सम्बद्ध रहे। एक शिक्षाशास्त्री के रूप मे आपका सम्बन्ध पटना एव सस्कृत-विश्वविद्यालयो से भी रहा। एक राजनेता की हैसियत से आप अखिलभारतीय हिन्दू-महासभा और अखिलभारतीय काँगरेस से सम्बद्ध रहे। सन् १९२३ ई० से सन् १९३० ई० तक आप भारत की केन्द्रीय व्यवस्थापिका-सभा के निर्वाचित सदस्य रहे। श्रीमोतीलाल नेहरू के विशेष प्रियपात्र होने के कारण आप उक्त सभा मे स्वराज्य-दल और काँगरेस-दल के क्रमश प्रधान मन्त्री तथा उपनेता के पदो को सुशोभित करते रहे। सन् १९३० ई० मे काँगरेस के आदेशानुसार आपने उक्त सभा से त्यागपत्र दे दिया। सन् १९३७ से ५२ ई० तक आप विधान-परिषद् मे विरोधी पक्ष के उपनेता और फिर नेता के रूप मे राजनीतिक नभोमण्डल मे चमकते रहे। सन् १९५४ ई० मे आपने काँगरेस मे प्रवेश किया। सन् १९५७ ई० मे आपने बिहार के शिक्षा-मन्त्री-पद को सुशोभित किया और उक्त पद पर १८ फरवरी, १९६१ ई० तक कार्य करते रहे। इन दिनों आप श्रीकामेश्वर सिंह सस्कृत-विश्वविद्यालय के उपकुलपति-पद पर कार्य कर रहे है। बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् की ओर से महाकवि विद्यापति के साहित्य का अनुसन्धान, सम्पादन एवं प्रकाशन अनेक वर्षों तक आपकी देखरेख मे ही हुआ है।

अँगरेजी के अतिरिक्त आप संस्कृत एवं हिन्दी के विद्वान् माने जाते है। आप बिहार-हिन्दी साहित्य-सम्मेलन के स्थायी उप-सभापति है। सन् १९२६ ई० में बिहार-प्रान्तीय हिन्दी-कवि-सम्मेलन की अध्यक्षता आपने ही की थी। कहते है, आपके ही अध्यवसाय के परिणामस्वरूप हिन्दी-भाषा को 'डाक-टिकट' मे स्थान मिला था। आपकी साहित्य-सेवा का आरम्भिक वर्ष सन् १९१९ ई० माना जाता है। आपके द्वारा लिखित हिन्दी-रचनाएँ 'बालक', 'गल्पमाला', 'महावीर', 'हिन्दूपंच', 'अभ्युदय', 'तेज' आदि पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुआ करती थी। हिन्दी एव मैथिली मे लिखित फुटकर अनेक निबन्ध, गल्प, भाषण, कविता आदि के अतिरिक्त आपकी रचनाओ मे (१) 'वाल्मीकि का अपने काव्य मे आत्मप्रकाश' (अनुवाद) तथा (२) हिन्दू-धर्म और उसकी भित्ति (मिथिलेश-महेश-रमेश व्याख्यानमाला) तथा (३) अगिलही उल्लेखनीय है।

उदाहरण

(१)

ऐश्वर्य और विलास की सब सामग्री पाकर उसे ठुकरा देना, माता, पिता, पत्नि और कुटुम्बो की मर्यादा की अवहेलना कर निर्जीव मूर्ति अथवा काल्पनिक गिरिधारीलाल से प्रेम करना, समाज का तिरस्कार कर सकल साधारण के साथ स्वच्छन्दतापूर्वक विचरण करना, राजपूताने की एक युवती राजकुमारी के लिए सांसारिक दृष्टि से, पागलपन नही तो क्या कहा जा सकता ? फिर भी उस समय जब राजपूताना आजकल का राजपूताना नही था, जब वहाँ की भूमि वीर-प्रसविनी थी, जब वहाँ के नरनारीगण अपनी मान-रक्षा अपने प्राणो से करते थे। पर उसके पागलपन में विकार नही था, निर्मलता थी, चंचलता नही, दृढ़ता थी; डरानेवाली कठोरता नही; अक्षय सुख और शान्ति पहुँचानेवाली कोमलता थी। क्या तब हम उसे पागलपन कहेंगे ? नही, इसी प्रकार के पागलपन का नाम 'भक्ति' है।[१]

(२)

मेरा अधिक समय पत्र लिखने तथा बातचीत करने में कटता था। कभी-कभी एकाएक गम्भीर सागर से खेलती हुई चाँदनी, समुद्र के गर्भ से निकलते हुए सूर्य भगवान् या क्रमशः समुद्रतल से आवृत होते हुए भानुदेव मेरी दृष्टि को आकृष्ट कर लेते थे और कुछ देर तक मैं भी चिन्तासागर में निमग्न हो जाया करता था—मूक भाषा से जगन्नियन्ता का गुण-गान करता था। इसी तरह सोते-जागते, हँसते-खेलते, लिखते-पढ़ते, बातें करते और कभी-कभी चिन्ताओं में डुबकियाँ लगाते रात-दिन बीत जाया करते थे।

---

१. 'गंगा' (मासिक, वर्ष ५, प्रवाह ५, तरंग २, फाल्गुन, सं० १९९१ वि०), पृ० १३८–३९।

इसी बीच २१ नवम्बर को दीवाली आ गयी। विचार स्थिर हुआ कि घर से बाहर रहने पर भी यह त्योहार मनाया जाय। महाराजाधिराज ने अपने परिचित लगभग तीस-बत्तीस मित्रों को निमन्त्रित किया। भूपाल के नवाब साहब भी इसमें सदल-बल शरीक हुए। भोजन के बाद हँसी-खेल हुआ। सबके सब तृप्त और हृष्ट चित्त से सोने गये।[1]

गंगानाथ झा

आप दरभंगा-जिला के 'सरिसबपाही टोल'[2] नामक स्थान के निवासी पं० तीर्थनाथ झा के पुत्र थे।[3] आपका जन्म सन् १८७२ ई० के २५ दिसम्बर को हुआ था।[4] आपने सन् १८८६ ई० मे (कुल चौदह वर्ष की उम्र मे) मैट्रिक की और सन् १८८८ ई० मे एफ्० ए० की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे पास की थी। उक्त परीक्षा मे आप संस्कृत मे काशी से सर्वप्रथम हुए थे जिसके परिणामस्वरूप सरकारी छात्रवृत्ति के अतिरिक्त आपको 'विजयनगरम्' एवं 'मित्र'-पदक प्राप्त हुए थे। सन् १८९० ई० मे दर्शनशास्त्र मे ऑनर्स लेकर आपने प्रयाग-विश्वविद्यालय मे सर्वप्रथम स्थान प्राप्त किया। तत्पश्चात् सन् १८९२ ई० मे, २१ वर्ष की उम्र मे एम्० ए० (संस्कृत) की परीक्षा पासकर आप दरभंगा-राज-पुस्तकालय के पुस्तकालयाध्यक्ष-पद पर नियुक्त हो गये। सन् १९०२ ई० मे आप संस्कृत-प्रोफेसर होकर प्रयाग के म्योर सेण्ट्रल-कॉलेज मे चले आये। इसके ठीक तीन वर्ष बाद ही आप प्रयाग-विश्वविद्यालय के 'फेलो' हुए। म्योर-कॉलेज मे रहते हुए आपने सन् १९०७ से १९१८ ई० तक त्रैमासिक 'इण्डियन थॉट' का सम्पादन भी किया। सन् १९०९ ई० मे हिन्दू-फिलॉसफी पर आपका महाप्रबन्ध पूर्ण हुआ, जिसपर प्रयाग-विश्वविद्यालय ने आपको डी० लिट्० की उपाधि से विभूषित किया। इसके एक वर्ष बाद सरकार ने आपको 'महामहोपाध्याय' की उपाधि दी। सन् १९१८ ई० मे आप संस्कृत-कॉलेज, काशी के उपकुलपति हुए। कहते हैं, उनके पूर्व कोई भी भारतीय उस पद पर नही प्रतिष्ठित हुआ था।

---

१ 'गंगा, (वही, प्रवाह १, तरंग ५, सं० १९८८ वि०), पृ० ४३१।

२ इसका प्राचीन पौराणिक नाम 'अमरावती' बतलाया जाता है। प्राचीन मिथिला में इसकी ख्याति 'सरस्वती-विद्यापीठ' के रूप में थी।

३. आपकी माता का नाम श्रीमती रामकाशी देवी था, जो दरभंगा-राजवंश के महाराजकुमार श्रीबासुदेव सिंहजी की पुत्री थीं।

४. 'बिहार-विभाकर' (वही), पृ० ३०४—६। प्रस्तुत परिचय-लेखन में उक्त सामग्री के अतिरिक्त 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही) पृ० २३५-३६, 'A History of Maithili Literature, (वही), P. 144, 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ३९, १४७, तथा ५४३), 'सर्चलाइट'

ठीक उसके तीन वर्ष बाद, अर्थात् सन् १९२१ ई० में, आप आइ० ई० एस्० हुए और गवर्नर-जेनरल द्वारा 'कौंसिल ऑव स्टेट ऑव इण्डिया' के सदस्य भी बनाये गये। सन् १९२३ ई० में आपने प्रयाग-विश्वविद्यालय के उपकुलपति पद को सुशोभित किया और उसपर सन् १९३२ ई० तक रहे। सन् १९२४ ई० में आप द्वितीय अखिलभारतीय फिलॉसफिकल कॉन्फरेंस और तृतीय ओरियण्टल कॉन्फरेंस (मद्रास के सभापति हुए। उसके अगले वर्ष, अर्थात् सन् १९२५ ई० में प्रयाग-विश्वविद्यालय ने आपको 'डॉक्टर ऑव लॉ' की और सन् १९३६ ई० मे काशी-हिन्दू-विश्वविद्यालय ने आपको 'डॉक्टर ऑव लिटरेचर' की उपाधि दी। सन् १९४१ ई० के जून मास मे ब्रिटिश-अकादमी के मेम्बर होने के साथ-साथ 'सर' हुए और उसी वर्ष के नवम्बर की नवी तिथि को आप परलोकवासी हो गये।[१]

आपकी गणना बिहार के विश्वविख्यात विद्वानो में होती है। अँगरेजी के साथ साथ आप सस्कृत एवं हिन्दी के यशस्वी विद्वान् थे। आपकी विद्वत्ता से प्रभावित होकर 'रॉयल एशियाटिक सोसायटी ऑव ग्रेटब्रिटेन ऐण्ड आयरलैण्ड' ने सन् १९३७ ई० मे ही आपको अपना मानद सदस्य बनाया था। आपने पटना-विश्वविद्यालय मे रामदीन रीडरशिप के लिए दर्शन और साहित्य पर विद्वत्तापूर्ण भाषण किये थे। इसके अतिरिक्त, आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी के अभिनन्दन के सिलसिले मे, प्रयाग मे जो साहित्यिक-मेला हुआ था उसके अध्यक्ष भी आप ही थे। अँगरेजी मे अनेक स्वतन्त्र पुस्तको के अतिरिक्त आपने सस्कृत मे भी कई ग्रन्थो की रचना की थी।[२] मैथिली मे आपके द्वारा रचित वेदान्त दीपक' नामक एक ग्रन्थ मिलता है। आपके द्वारा अनूदित ग्रन्थ भी अनेक है, जिनमे 'योगसारसग्रह', 'साख्यतत्त्वकौमुदी', 'काव्यप्रकाश', 'योगभाष्य', 'छान्दोग्योपनिषद्', शाकरभाष्य', 'शबरभाष्य', 'प्रशस्तपादभाष्य' (न्यायकन्दली-सहित), 'न्यायभाष्य' (वार्त्तिक-सहित), 'खण्डन-खण्ड खाद्य', 'श्लोकवार्त्तिक', 'तन्त्रवार्त्तिक', 'वामन-काव्यालंकारसूत्र', 'जैमिनि-मीमासा-सूत्र'[३] और 'तर्कभाषा' प्रसिद्ध है।[४] हिन्दी मे आपके द्वारा लिखित ये

(अँगरेजी-दैनिक, २६ सितम्बर, सन् १९५४ ई०, रविवासर-अक), 'हिन्दी-पुस्तक-साहित्य', (वही, सन् १८६७–१९४२ ई०, पृ० ४१३) तथा विभाग में सगृहीत सामग्री का भी उपयोग किया गया है।

१. आपके परलोक-गमन के बाद आपके स्मारक की एक योजना बनी थी, जिसका उद्घाटन महामना पं० मदनमोहन मालवीय ने किया था। उसमें सर तेजबहादुर सप्रू सभापति थे। योजनानुसार एक सस्था (गंगानाथ झा रिसर्च-इन्स्टिच्यूट) की स्थापना हुई, जिसमें प्राच्य-भाषाओं के सम्बन्ध में आज भी अनुसन्धान अनुशीलन होता है। उक्त सस्था की ओर से एक त्रैमासिक पत्र 'द जर्नल ऑव द गंगानाथ झा रिसर्च इंस्टिच्यूट' के नाम से निकलता है।

२ आपके द्वारा रचित संस्कृत-ग्रन्थों में (१) भक्ति-कल्लोलिनी, (२) शाण्डिल्य-सूत्र की टीका, (३) प्रसन्नराघव-नाटक की टीका, (४) न्यायभाष्य की टीका, (५) मण्डनमिश्र-कृत 'मीमांसानुक्रमणी' की टीका आदि प्रमुख हैं।

३. इस ग्रन्थ के अनुवाद के लिए 'रायल एशियाटिक सोसाइटी' की बम्बई-शाखा ने आपको कैम्पबेल-स्वर्णपदक से विभूषित किया था।

४. इनमें अनेक ग्रन्थों के अनुवाद अँगरेजी में किये गये हैं।

पुस्तकें प्राप्त होती है—(१) न्याय-प्रकाश[1], (२) वैशेषिक-दर्शन[2], (३) धर्म-कर्म-रहस्य,[3] (४) कवि-रहस्य[4], (५) हिन्दू-धर्मशास्त्र[5]। हिन्दी मे लिखे आपके स्फुट लेख 'सरस्वती' के पुराने अंको मे प्रकाशित हुए थे।

उदाहरण

(१)

अपने राज्य के निवासी ब्राह्मणों में, आचार के अनुसार अवान्तर विभाग करने की इच्छा से, इन्होंने (हरिसिंहदेव) एक दिन सब ब्राह्मणों का निमंत्रण किया। बहुत-से ब्राह्मण सूर्योदय ही के समय चन्दन-तिलक लगाकर भोजन के लिए उपस्थित हो गये। ये लोग सबसे नीचे श्रेणी में रखे गये। इसके अनन्तर जैसे-जैसे जो कृत-नित्यक्रिय होकर आता गया वह वैसे-वैसे क्रमशः श्रेणी में रक्खा गया। अन्ततोगत्वा सन्ध्या हो जाने पर भी तेरह ब्राह्मण ऐसे निकले जिनका नित्यकर्म तब तक भी समाप्त न हो पाया। इन तेरहों को 'अवदात' (शुद्ध) की पदवी देकर सबसे ऊपर रक्खा गया। इन्ही तेरहो ब्राह्मण की सन्तान आजतक मिथिला मे 'श्रोत्रिय' नाम से प्रसिद्ध है।[6]

(२)

ईश्वर जगत्कर्ता थिकाह कि नहिं? मोटा-मोटी ईश्वरक जगत्कर्तृत्व न्याय, वैशेषिक, योग ओ वेदान्त वाला स्वीकार करइत छथि। तखन रहलाह मीमांसक और सांख्य। इहो षड्दर्शनक प्राचीन आकर-ग्रन्थ जे उपलब्ध अछि, ताहि मध्य प्राय. ई कतहु नहिं कहल

---

१ विभाषा-साहित्य का अध्ययन, प्र० नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी, सन् १६२० ई०।

२. विभाषा-साहित्य का अध्ययन, प्र० वही, सन् १६२१ ई०।

३. धर्म, प्र० इण्डियन प्रेस, इलाहाबाद सन् १६२६ ई०।

४ साहित्य-शास्त्र, प्र० हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद, सन् १६२६ ई०।

५ विभाषा-साहित्य का अध्ययन, प्र० पटना-विश्वविद्यालय, पटना, सन् १६३१ ई०।

६ 'सरस्वती' (मासिक, भाग १६, खण्ड १, संख्या ५, मई, सन् १६१५ ई०), पृ० २६६।

पाओल जाइत अछि जे 'ईश्वर नहिं छथि'। मीमासा शास्त्र मध्य तँ एतद्विषयक विचार कम देखना गेल अछि, परन्तु सांख्यहु मध्य केवल एक सूत्र 'ईश्वरासिद्धेः' देखल जाइछ। एना तँ एहि सूत्रक प्रचीनताक प्रसंग कतेको तरहक सन्देह विद्वान् लोकनि करइत छथि, परन्तु से नहिं भए सकइछ। यथार्थ—वाङ्मनोनीत विषयक साधन अनुमानादि सँ कोना भए सकइछ।'[1]

गंगापतिसिंह (श्रीजयसुन्दर)

आप दरभगा-जिला के 'पचही-ड्योढी' (थाना-मधेपुर, मधुबनी) नामक स्थान के निवासी बाबू खेलापतिसिंह साहब के पुत्र है। आपका जन्म स० १३०१ साल (सन् १८९४ ई०) की श्रावण कृष्ण-एकादशी को हुआ था।[2] आपकी आरम्भिक शिक्षा आपके घर पर ही हुई। तदनन्तर, वाटसन हाइ इंगलिश स्कूल से सन् १९१३ ई० मे आपने मैट्रिक की परीक्षा पास की। इसके बाद, सन् १९१७ ई० मे टी० एन्० जुबली कॉलेज, भागलपुर से आइ० ए० और सन् १९१९ ई० मे बी० एन्० कॉलेज, पटना से बी० ए० की परीक्षा पास कर आप पटना के लॉ-कॉलेज मे कानून का अध्ययन करने लगे। आगे चलकर आपकी नियुक्ति कलकत्ता-विश्वविद्यालय मे हिन्दी एव मैथिली के व्याख्याता-पद पर हो गई। कलकत्ता मे रहते हुए आपने सन् १९३६ ई० के हिन्दू-मुस्लिम दंगे के अवसर पर श्लाघनीय समाज सेवा की थी। आपकी गणना अँगरेजी, संस्कृत और हिन्दी के विद्वानों मे होती है। आपने अनेक लोकगीतो और लोक-गाथाओं का संग्रह किया था, जो सम्भवतः आज भी आपके पास सुरक्षित है। आपकी साहित्य-सेवा का आरम्भिक वर्ष सन् १९१४ ई० बतलाया जाता है। आपके स्फुट लेख दरभंगा से प्रकाशित 'मिथिला-मिहिर' मे मुद्रित हुए थे। आपके द्वारा लिखित प्रकाशित-अप्रकाशित पुस्तको के नाम है—(१) चन्द्रकवि की मिथिला-भाषा रामायण (सुन्दरकाण्ड, पाद-टिप्पणी-सहित), (२) रामकृष्ण परमहंस की संक्षिप्त जीवनी, (३) ग्रियर्सन साहब की संक्षिप्त जीवनी (अप्रकाशित), (४) मिथिला की घरेलू कहानियाँ (अप्रकाशित), (५) मैथिली शब्द-समुद्र (अप्रकाशित), (६) सुशीला (सामाजिक-उपन्यास), (७) विधवा-

---

१. 'मैथिली-गद्य-कुसुमांजलि' (वही), पृ० ३ ('दर्शन-निरूपण' शीर्षक लेख)।

२. आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सूचना के आधार पर। आपके प्रस्तुत परिचय-लेखन में उक्त सूचनाओं के अतिरिक्त 'A History of Maithili Literature' (वही, vol. II), P. 146; 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ६६६) तथा 'हिन्दीसेवी संसार' (वही, पृ० ५१) से भी सहायता ली गई है।

क्रन्दन (अप्रकाशित), (८) पौराणिक कथाओं का वैज्ञानिक तत्त्व (अप्रकाशित), (९) विवाह-विज्ञान, (१०) नरपशु (उपन्यास), (११) कन्नौज-पतन, (१२) खड्गबहादुर (नाटक) और (१३) आत्मकथा (अप्रकाशित)। इनके अतिरिक्त आपने स्कूली छात्रों के योग्य भी कई पुस्तकें लिखी हैं।[1]

उदाहरण

(१)

अशेष शस्य श्यामला असंख्य साधु, सन्त, सिद्ध, महात्मा, महात्यागी महायोगी, महाजयी, महातपी, बहुत बड़े साधक आदि युक्ता, नाना-शास्त्र, विविध विद्या, सकल कलावेत्ता संकुला मिथिला का गौरवपूर्ण उल्लेख कतिपय उपनिषद्, सभी रामायण, महाभारत, सभी पुराणों तथा जातक कथाओं में पाया जाता है। इस यज्ञ तपोभूमि की प्रशंसा में लिखा है 'मिथिला वैकुण्ठान्न न्यूना यत्र श्रीरवातरत्' अर्थात् मिथिला विष्णुधाम गो-लोक वैकुण्ठ से कम महत्व का पावन प्रान्त नहीं है जहाँ साक्षात् क्षीरोदतनया लक्ष्मीजी ने स्वयं जनक-नन्दिनी के रूप में अवतार लिया था।[2]

(२)

प्राचीन समय की गार्गी, मैत्रेयी, कात्यायिनी मध्य एतिहासिक समय की कालिदास मिश्र की स्त्री विद्युत्तमा, मण्डन मिश्र प्रिया सरस्वती रूपा भारती, विद्यापति पुत्रवधू महामहोपाध्याया चन्द्रप्रभा, विवादचन्द्र हिन्दू कानून ग्रन्थ को लिखनेवाली लखिमा महादेवी ('रचयति विवादचन्द्रं मिसरूमिश्रोपदेशेन') लखिमा ठकुरानी उत्कृष्ट विदुषी मिथिला की महिलाओं ने इस पाण्डित्यपूर्णा तीरभुक्ति के

---

१ आपके द्वारा लिखित छात्रोपयोगी कुछ पुस्तकों के नाम ये हैं—(१) बल मैथिली-व्याकरण (२) लोअर-साहित्य, (३) भूगोल-परिचय, (४) बच्चों का उपदेश, (५) प्रवेशिका मैथिली-साहित्य, (गद्य-पद्य-सग्रह), (६) लघु मैथिली-साहित्य (गद्य-पद्य-संग्रह) और (७) संस्कृत-पाठ्य पुस्तक का नोट।

२. लेखक से प्राप्त।

सुयश को शिक्षित ससार मे यत्र-तत्र सर्वत्र बहुत बढ़ाया है। धन्य है मिथिला जहाँ ऐसी-ऐसी विदुषी महिलाओं ने जन्म ग्रहण किया है।[1]

गगाप्रसाद जायसवाल 'गंगा'

आप शाहाबाद-जिला के 'ठठेरीबाजार' (डुमराँव)-निवासी और डुमराँव-राज्य के खजाची चौधरी शिवनारायण लाल[2] के पुत्र थे। आपका जन्म स० १९५६ वि० (सन् १८९९ ई०) की वैशाख कृष्ण-तृतीया को हुआ था।[3] जब आप दो वर्ष के थे, तभी आपके पिताजी स्वर्गवासी हो गये। आपकी माता के सदुद्योग से आपको अँगरेजी बँगला, संस्कृत तथा हिन्दी का अच्छा ज्ञान प्राप्त हो गया। जीविका के लिए आप डुमराँव के प्रतिष्ठित व्यवसायी ठाकुर राम तुलसीप्रसादजी की गद्दी मे प्रधान मुनीम का कार्य करते थे। आपका विवाह सन् १९२३ ई० मे डुमराँव के ही स्व० श्रीधीरारामजी की तृतीय कन्या से हुआ था। आपको हिन्दी गद्य-पद्य-रचना एवं संस्कृत की शिक्षा प्रसिद्ध साहित्यकार प० अक्षयवट मिश्र 'विप्रचन्द्र' से प्राप्त हुई थी। प्रेस-सम्बन्धी सारे कार्यों का अनुभव आपने खड्गविलास प्रेस, पटना के मालिक श्रीरामरणविजयप्रसाद सिंह तथा बाबू गोकर्ण सिंह की कृपा से प्राप्त किया था। काव्य-रचना की लगन आपमे बचपन से ही थी। जब आप चौबीस-पच्चीस वर्ष के हुए, तब आपकी रचनाएँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होने लगी। एक बार पुत्ररत्न की प्राप्ति पर जब आपने एक कविता बनाकर डुमराँव के महाराज भोजपुराधीश सर केशवप्रसाद सिंह को सुनाई तब उन्होने प्रसन्न होकर आपको प्रभूत पुरस्कार के साथ सम्मानित किया था। आपकी गणना डुमराँव-राज्य के प्रतिष्ठित कवियो मे होती थी। आपकी रचनाएँ 'स्वतन्त्र', किसान-समाचार', 'राम', 'कलवार केसरी', कौवन्त'-कौमुदी', 'हैहय क्षत्रिय मित्र' 'हैहय-क्षत्रिय,' 'जायसवाल वैश्यबन्धु', 'प्रतिभा', 'जायसवाल-युवक', 'रौनियार वैश्य', 'विश्वमित्र', 'बालक', 'गगा', 'भारत', 'संसार', 'भारत-मित्र', 'गुरुकुल', 'सगीत', 'आर्य', 'स्वस्थ जीवन', 'साधन', 'निरामय' आदि सामयिक पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित मिलती हैं। इनके अतिरिक्त आपकी अनेक रम्य रचनाएँ 'हिन्दू-समाज-सुधारमाला', 'सोहागरात के वादे', 'अनमेल विवाह', 'अछूत-पुकार', 'स्वदेशी प्रचार और विदेशी-बहिष्कार' 'सुदर्शनचक्र चरखा', 'राष्ट्रीय डंका अथवा स्वदेशी खादी', 'होली-हिन्दू-

---

१. लेखक से प्राप्त।

२. ये शिवनारायण लालजी गाने-बजाने में बड़े प्रवीण थे। इनके पिता, अर्थात् लेखक के पितामह चौधरी तुलसीप्रसादजी भी डुमराँव-राज्य में कोषाध्यक्ष थे।

३. आपके द्वारा प्रेषित सूचना के आधार पर। उक्त सामग्री के अतिरिक्त प्रस्तुत परिचय-लेखन में 'गगा' (वही, सं० १९९१ वि०, वर्ष ४, प्रवाह ४, तरंग ७, पृ० ७७८-८१) तथा 'हैहय-क्षत्रिय-मित्र' (मासिक, प्रयाग, भाग ३२, अंक ७, जुलाई, सन् १९३६ ई०, पृ० २४१-२४४) में पं० अक्षयवट मिश्र 'विप्रचन्द्र'-लिखित परिचय से भी सहायता ली गई है।

सुधार', 'राष्ट्रीय-गीताजली', 'हिन्दू-सगीत-रत्नाकर' आदि पुस्तकों मे भी प्रकाशित हो चुकी है। लखनऊ की 'हिन्दू-समाज-सुधारमाला' तथा प्रयाग के मासिक हैहय-क्षत्रिय-मित्र' के आप स्थायी लेखक रहे हैं। प्रो० अक्षयवट मिश्र तथा पं० देवदत्त त्रिपाठी द्वारा सम्पादित 'पद्मपुष्प वाटिका'[१] मे भी आपकी कई ललित रचनाएँ संकलित है। हिन्दी मे आपकी लिखी सात पुस्तके मिलती हैं, जिनके नाम ये है—(१) राष्ट्रीय मधुर वंशी[२], (२) राजापुरी ब्राह्मणो के नाम खुली चिट्ठी[३], (३) श्रीमहावीरी झण्डा[४] (४) गगा-सगीत-सुमनोद्यान[५], (५) मछली मास-निषेध (अप्रकाशित), (६) यज्ञोपवीत-विधान (अप्रकाशित) और (७) गायत्री-मन्त्र विधान (अप्रकाशित)।

उदाहरण

(१)

हे रामचन्द्र ! दयालु परमानन्द प्रभु अपनाइये।
निज कंज-नैन विशाल भुज मुख पद्म भव्य दिखाइए॥
छवि कामदेव असंख्य सम पुनि कोटि रवि जिमि सोहई।
हे जानकी-वर ! हृदय मम निज प्रेमधार बहाइए॥
शर-चाप-शोभित युगल कर अरु, पीत पट कटि में धरे।
सिर पै सुशोभित मुकुट प्रभु मम, हृदय मे बस जाइए॥
दुःख दम्भ द्वेष दरिद्रता दल, दुष्ट दानव दूर हो।
सबके हृदय में भक्ति दे शुभ ज्ञान ज्योति जगाइए॥
वर्णन सकेगा कौन कर तव चरित अपरम्पार है।
'गंगा' परम गति देहु प्रभु निज चरण-दास बनाइए॥[६]

---

१. सन् १९३२ ई० में इण्डियन प्रेस, इलाहाबाद से प्रकाशित। यह आइ० ए० और बी० ए० की पाठ्य-पुस्तिका के रूप में स्वीकृत थी।

२ स० १९८२ वि० में लहरी प्रेस, बुलानाला, काशी से प्रकाशित।

३. यह लेख के रूप में 'हैहय-क्षत्रिय-मित्र' (मासिक, अगस्त, सन् १९२८ ई०, भाग २४, अक ८) में प्रकाशित हुआ था।

४. सं० १९८७ वि० की माघ शुक्ल-द्वितीया, मंगलवार, को कला प्रेस, जीरो रोड, इलाहाबाद से छपकर प्रकाशित हुआ था।

५ हर समय गाने योग्य उत्तम गीतों का संग्रह।

६. 'गंगा-सगीत-सुमनोद्यान' (गंगाप्रसाद जायसवाल, स० १९६४ वि०), पृ० १-२। यह रचना 'कैवर्त्त-कौमुदी' (पटना, मासिक, वर्ष १, अक ५, फरवरी, सन् १९२७ ई०) तथा 'हैहय-क्षत्रिय' (प्रयाग, वर्ष १, अक ३८-३९, अगस्त, सन् १९१८ ई०) तथा 'हैहय-क्षत्रिय-मित्र' (प्रयाग, भाग २५, अक ७, जुलाई, सन् १९२९ ई०) में भी प्रकाशित हुई थी।

(२)

गरीबो को गरीबी से, बचाना धन की शोभा है।
जो रोता हो, उसे कुछ दे, हँसाना धन की शोभा है ॥
जो भूखा हो, उसे भोजन, जो प्यासा हो, उसे पानी।
जो नंगा हो, उसे कपड़ा, पिन्हाना धन की शोभा है ॥
जो दुखिया हो, तड़पता हो, गया हो गिर, उसे झटपट।
उठाकर प्रेम से, हिय से लगाना, धन की शोभा है ॥
अविद्या से समूचे देश मे जो दुःख छाया है।
उसे शिक्षा-प्रचारक बन, मिटाना धन की शोभा है ॥
कहे 'गंगा' हृदय से द्वेष, इर्ष्या औ' कुमति तजकर।
सदा शुभ कर्म में मन को लगाना, धन की शोभा है ॥[1]

(३)

अहा सुखभूमि भारत के, हितारथ जेल जाना है।
अहा श्रीकृष्ण-मन्दिर का हमें दर्शन भी पाना है ॥
गये जहँ 'लाजपत', 'मोती', 'जवाहिर', 'दास', 'मौलाना'।
जहाँ पै बाजपेयीजी, वहीं पर हमको जाना है ॥
बने डरपोक है जब तक, डराते क्रूर पशुबल से,
यहीं पै आत्मशक्ति का हमें बल अब दिखाना है ॥
उतारें भार भारत का, तभी चुप होय बैठेंगे।
नहीं तो जन्म भारत में, हमारा व्यर्थ पाना है ॥
फँसे हैं जिस गुलामी में, बँधे निज नीच बन्धन में।
उसी को काटकर अब तो, हमें भी मुक्ति पाना है ॥[2]

---

१. 'गंगा-संगीत-सुमनोद्यान' (वही), पृ० ७-८। यह रचना 'हैहय-क्षत्रिय' (प्रयाग, साप्ताहिक, वर्ष १ अं २४, मई, सन् १९२८ ई०) तथा 'बालक' (मासिक, वर्ष ५, अंक २, फाल्गुन, स० १९८६ वि०) भी प्रकाशित हुई थी।

२. 'राष्ट्रीय मधुर बंशी' (गंगाप्रसाद जायसवाल, सं०१९८२ वि०), पृ० ४।

(४)

हिलिमिलि हिन्दू सब माघ शुक्ल पंचमी के
महाबीरी झण्डा दिन अवसि मनाईं जा।
सुन्दर सिंगार करि हार-फूल गूंथि-साजि,
महाबीरी झण्डवा के गले में पिन्हाईं जा ॥
चमक दमक जामें फूलों की गमक रहे,
चारों दिशि सुन्दर सुदृश्य दिखलाईं जा।
अपने हूँ सजि-धजि होय के प्रसन्न चित्त,
धर्म गीत गाई बहु आनन्द बढ़ाईं जा ॥
झण्डवा पवित्र बुद्धि साहस अपार देत,
यह जानि बहु प्रीति झण्डा से लगाईं जा।
धर्म कर्म ज्ञान मोक्ष सब सुख देत यह,
ध्यान यह हिय से ना कबही भुलाईं जा ॥
धर्म हेतु धन दे, सहायक हू बनि-बनि,
धरम के कमवाँ मे हथवा बटाईं जा।
जान जाए धन जाए बरु सरबस जाए,
तबहू न धरम से पग के हटाईं जा ॥[1]

(५)

सत्यता और परिश्रम के द्वारा ही धन पैदा करके धनवान बनो। परन्तु यह प्रतिज्ञा कर लो कि मै यथासंभव दूसरो की भलाई करूँगा, बुराई नहीं। दूसरों के साथ अच्छा व्यवहार करूँगा, बुरा नहीं। सबसे नम्रतापूर्वक बोलूँगा, क्रोध या अभिमान से नहीं। अपनी तमाम शक्तियों को मनुष्य की भलाई में लगा दो, कोई भी

---

१. 'श्रीमहावीरी झण्डा' (गंगाप्रसाद जायसवाल, सन् १६८७ वि०), पृ० ४-५।

अनुचित या निन्दित कर्म न करो। अपने ज्ञान-चक्षु से सृष्टि के सौन्दर्य को देखो और उस परमात्मा की कारीगरी पर मुग्ध होकर, अपनी आत्मा को परमात्मा में अर्पण कर दो।'[1]

गंगाप्रसाद श्रीवास्तव

आप छपरा-नगर के निवासी बाबू रघुनन्दन प्रसादजी के पुत्र थे। आपका जन्म २३ अप्रैल, सन् १८९१ ई०, को हुआ था।[2] आपकी आरम्भिक शिक्षा गोरखपुर मे हुई, जहाँ आपके नाना निवास करते थे। आरम्भ मे आपको उर्दू पढाने के लिए एक मौलवी साहब रखे गये।[3] बाद मे आप स्कूल मे भरती हुए। किन्तु, वहाँ मास्टरो की मार-पीट के डर से आपने पढने से इनकार कर दिया। तब आपके नाना आपको हथुआ (सारन) ले गये और वही के राज-हाइ स्कूल मे उन्होने आपको भरती करा दिया। आपके पिता जब रेलवे की नौकरी मे बदलते-बदलते 'गोण्डा' चले आये और वही घर बनाकर रहने लगे, तब उन्होने आपको अपने पास बुलवाकर वहाँ के जिला-स्कूल में भरती करा दिया। वहाँ उर्दू कठिन लगने के कारण आप संस्कृत पढ़ने लगे। सन् १९०९ ई० में एण्ट्रेस-परीक्षा पासकर आप लखनऊ कैनिंग कॉलिज मे पढने के लिए गये। वहाँ से सन् १९१० ई० मे आपने एम्० ए० की परीक्षा पास की[4] और हिन्दी मे लिखना आरम्भ किया। कहते है, कॉलेज और होस्टल के जीवन की मधुरता और विचित्रता ने आपको हास्य-रस के लेख लिखने की ओर आप-से-आप प्रवृत्त कर दिया। उसी समय आप काशी को मासिक 'इन्दु' मे हास्य-रस की कहानियाँ लिखने लगे। सन् १९१२ ई० मे जब आरा से प० ईश्वरीप्रसाद शर्मा ने अपना मासिक पत्र 'मनोरजन' निकाला, तब आप उसके नियमित लेखक हुए। आपकी सर्वश्रेष्ठ कहानी 'मौलवी साहब' इसी मे छपी थी।

सन् १९१३ ई० मे बी० ए० पास कर आप वकालत पढने के लिए प्रयाग चले गये।

---

१. 'गंगा-संगीत-सुमनोद्यान' (वही), पृ० १५-१६ (परिचय)।

२. "ये लोग पहले पटना के रहनेवाले थे, परन्तु पीछे कुटुम्ब-कलह के कारण छपरा में आकर रहने लगे। यहाँ श्रीवास्तवजी के नाना का घर था।"—देखिए, 'शिवपूजन-रचनावली' (वही, चतुर्थ खण्ड, सन् १९५९ ई०, पृ० २७४-७६) तथा 'मतवाला' (साप्ताहिक, कलकत्ता, वर्ष १, संख्या ३४, चैत्र शुक्ल १५, सं० १९८१ शनिवार, १९ अप्रैल, सन् १९२४ ई०)।

३. "उनसे और चचल स्वभाव श्रीवास्तवजी की कैसी गहरी छनती थी, इसका कुछ खाका आपकी 'लम्बी-दाढ़ी' नामक पुस्तक के 'मौलवी साहब' नामक प्रबन्ध में खिंचा हुआ है।"—वही, पृ० २७४।

४. "इसी साल आपके क्लास में 'गंगाप्रसाद' नामक एक और विद्यार्थी आया था, इसीलिए आपने अपने को संक्षिप्त नाम से ही परिचित करना आरम्भ किया।"—वही, पृ० २७५।

दो वर्ष बाद, सन् १९१५ ई० मे, वकालत पास कर गोण्डा चले आये और वकालत करने लगे। यहाँ आकर जम जाने पर आपकी रचनाएँ पुस्तकाकार प्रकाशित होने लगी। कुछ ही दिनो मे हिन्दी-ससार ने आपको उच्च कोटि के हास्यरस-लेखक के रूप मे स्वीकार कर लिया।[1] हिन्दी के विभिन्न पत्रो ने आपको समय-समय पर हिन्दी का 'मौलियर', 'डिकेन्स', 'मार्कट्वेन' आदि कहकर आपका सम्मान किया है। आप नाटक, विशेषतया प्रहसन लिखने मे बडे सिद्धहस्त थे। आपकी गणना एक कुशल अभिनेता के रूप मे भी होती थी।[2] यो, अपने जीवन मे आप बडे ही हाजिरजवाब, हँसमुख, दूरदर्शी और मिलनसार थे। समाज सुधार के भी आप बडे पक्षपाती थे। जैसा कहते, वैसा ही आचरण भी करते थे। सन् १९३७ ई० मे ब्रिटिश-सरकार ने आपको 'कॉरोनेशन-पदक' प्रदान कर आपका सम्मान किया। आप गोण्डा-जिला के 'नेटरी-पब्लिक' पद से भी विभूषित हुए।[3]

आपने हिन्दी-साहित्य के विभिन्न अंगो, जैसे नाटक, गल्प, प्रहसन, एकाकी, चुटकुले, रेडियो वार्त्ता आदि को हास्य-रस से समृद्ध किया है। हिन्दी मे अबतक आपकी तीन-चार दर्जन पुस्तके छप चुकी है।[4] उन पुस्तको मे कुछ प्रमुख के नाम इस प्रकार है—(१) लम्बी-दाढी, (२) उलट-फेर[5] (३) मार मारकर हकीम, (४) मीठी हँसी, (५) मिस्टर लतखोरी-लाल, (६) स्वामी चौखटानन्द, (७) महाशय भडामसिंह शर्मा, (८) नोक-झोंक, (९) दुमदार आदमी, (१०) मरदानी औरत, (११) विलायती उल्लू, (१२) बौछार, (१३) गड़बडझाला, (१४) गगा-जमनी, (१५) कुर्सीमैन, (१६) आँखो मे धूल, (१७) हवाई डॉक्टर, (१८) नाक मे दम, (१९) जवानी बनाम बुढापा, (२०) रंग बेढब (२१) धोखाधड़ी, (२२) घदौलत-सीट (२३) चड्ढा-गुलखेरू, (२४) काठ का उल्लू और (२५) प्राणनाथ।[6]

---

१. "हास्यरस पर आपने तीन महत्त्वपूर्ण भाषण भी दिये थे, जिनमें आपने अपने साहित्य-विषयक मन्तव्यों को प्रकट किया है। द्विवेदी-मेला, प्रयाग के काव्य-परिहास-सम्मेलन पर दिये गये भाषण में आपने जो व्याख्या की है, उसके जिन सूत्रों का पता लगाया है, उससे हिन्दी में नवीन क्रान्ति उत्पन्न हुई है।"—'अवन्तिका' (वही), पृ० ३९।

२. आपने गोण्डा के नवयुवक वकीलों को लेकर एक अच्छी खासी नाटक-मण्डली बना रखी थी, जिसमें आप स्वय भी हास्यरस-सम्बन्धी पार्ट सफलतापूर्वक अदा करते थे।

३. 'अवन्तिका' (मासिक, जुलाई, वर्ष ४ खण्ड २, अक ७, पूर्णांक ४३, सन् १९५६ ई०), पृ० ३८।

४. आपकी पुस्तकों के अनुवाद गुजराती-भाषा में भी हुए हैं और उसी भाषा के सर्वश्रेष्ठ मासिक-पत्र 'बीसवी-सदी' ने पहले-पहल आपके गुणों पर रीझकर आपकी सचित्र जीवनी छापी थी।

५ इस नाटक की भूमिका गोण्डा के बहुभाषाविज्ञ सेसन-जज मिस्टर आर० पी० डिउहर्स्ट ने लिखी थी और उसमें आपकी मुक्त कण्ठ से प्रशसा की थी। इस नाटक की प्रशंसा में प्रयाग के 'पायोनियर' ने कई कॉलम खर्च किये थे।

६. सख्या १३ से २५ तक के ग्रन्थों का नामोल्लेख मिश्रबन्धुओं ने किया है—देखिए, 'मिश्रबन्धुविनोद' (वही), पृ० ४०१-२।

उदाहरण

(१)

मैं यही पाँच-छः बरस का था। हाथ-पैर चुलबुलाते रहते थे, बोटी-बोटी फड़कती रहती थी—रोएँ-रोएँ में चंचलता कूट-कूटकर भरी थी। गालो पर तमतमाहट, आँखों में चमक झलकती थी। सोच-समझ का कान्स्टेबुल बेड़ियाँ लिए दूर ही से मेरी ताक मे लगा था, मगर अभी पास फटकने की उसे हिम्मत नही हुई थी। मैं बेपरवाह हवा के झोंके की तरह इधर-उधर सनसनाता फिरता था। कूद-फाँद में ही दुनिया का सारा मजा मिलता था। दौड़-धूप ही मेरी जिन्दगी की जड़ थी। पूरा दिन इसी खेल-कूद मे कटता था। परन्तु अभी निश्चिन्तता और आनन्द की फुलवारी की एक क्यारी भी सैर अच्छी तरह से नही करने पाया था कि एक जमदूत-रूपी मौलवी ने मेरे हाथ पकड़, घसीटकर उसमे से मुझे बाहर निकाल दिया—कली खिलने भी नही पाई कि बेदर्द हाथो ने उसे मरोड़ डाला।[1]

(२)

ईश्वर बचाए नये अखबार से—फसली बुखार से—रंडियों के जंजाल से—बुढापे में ससुराल से—मिसों की मुहब्बत से—पेशे मे मुरव्बत से—जोरू के भाई से—फैशनेबिल लुगाई से—बरसात में टूटी छतों से और हमें सम्पादकजी के खतों से। जी हाँ, इनसे बचूँ तो गोया दुनिया की हर बला से बचा। इनके मारे न दिन में चैन और न रात में नींद। लिफाफे-पोस्टकार्ड के दाम बढ़ने पर भी हमारे सम्पादकजी की गर्मजोशी ठंढी न पड़ी। जब देखिए तब एक कार्ड हमारे नाम पर न्यौछावर किये बैठे हैं। ईश्वर जाने किस पुण्य की उम्मीद में और

---

१. 'लम्बी दाढ़ी,' (जी० पी० श्रीवास्तव, सन् १६४८ ई०), पृ० १।

यहाँ जान साँसत में पड जाती है। कागज, कलम, दवात—दुनिया-भर के सामान जुटाओ मगर सब बेकार क्योंकि यहाँ दिमाग ही कुड़क। आधी रात तक घिसघिस करने के बाद बड़ी मुश्किल से निकले भी तो एक या दो शब्द। इतने में जग पड़ी ससुरजी की सुपुत्री। अब न पूछिए, हिन्दी की लिखावट देखते ही उनका माथा ठनका। फिर तो सौतिया-डाह में भरी उठी। गर्जकर बोलीं—'यह किस नानी को चुपके-चुपके खत लिखा जा रहा है? और एकदम बरस पड़ी। अब क्या था, महाभारत शुरू हो गया, लम्प बुझ गया, कागज फट गये, कलम छिन गयी, गरज की साहित्य के सपूत का सारा 'प्रोग्राम' ही बदल गया।'[1]

गजाधर प्रसाद

आप गया-जिला के रढुई-ग्राम (थाना-अतरी)-निवासी मुंशी तारनीमलजी के पुत्र थे और गया-नगर के 'पीपरपाँती' मुहल्ले मे रहते थे। आपका जन्म स० १९३६ वि० (सन् १८७९ ई०) की आश्विन शुक्ल-दशमी को हुआ था।[2] आपको बी० ए०, बी० एल० की डिग्री प्राप्त थी। जीविका के लिए आपने पहले वकालत करना आरम्भ किया। उसके बाद आप क्रमश मुंसिफ और सब-जज हुए। हिन्दी मे आपकी लिखी निम्नलिखित तीन पुस्तको की चर्चा मिलती है—(१) 'ईशावास्य उपनिषद् की हिन्दी टीका[3], (२) जीवन-समस्या[4] और (३) श्रीमद्भागवत-गीता मे कर्म-फल-त्याग।[5] इससे अधिक आपके विषय मे और कुछ भी नही ज्ञात होता। आपकी रचना के उदाहरण भी नही मिले।

---

१. 'मीठी हँसी', (जी० पी०श्रीवास्तव, सं० २००७ वि०), पृ० ६४।
२. विभाग में सुरक्षित सामग्री के आधार पर।
३. सन् १९४६ ई० में प्रकाशित।
४. सन् १९४१ ई० में प्रकाशित।
५. सन् १९५० ई० में प्रकाशित।

गयाप्रसाद 'माणिक'

आप गया-शहर के 'पुरानी-गोदाम' नामक मुहल्ले के निवासी श्रीवशीलालजी के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९३८ वि० की कार्तिक शुक्ल-द्वादशी, गुरुवार को हुआ था।[1] आपने सन् १८९९ ई० मे प्रवेशिका की परीक्षा पास की और उसके बाद गया सिविल्-कोर्ट मे पेशकारी करने लगे। आप अपने विद्यार्थी-जीवन से ही साहित्यिक गोष्ठियो मे जाने लगे थे। उसी के परिणामस्वरूप आपमे काव्यानुराग उत्पन्न हुआ। सन् १९०९ ई० मे आपने 'माणिक-मण्डली' को जन्म देकर ज्ञानपुर (मिर्जापुर)-निवासी श्रीमहावीरप्रसादजी मालवीय 'वीर' के सम्पादकत्व मे प्रियंवदा' नामक पत्र का प्रकाशन किया था। मासिक 'रौनियार' का प्रकाशन भी आपने ही किया था। 'साहित्य-चन्द्रिका' के तो आप सम्पादक ही थे।[2] आपकी गणना अपने यहाँ के प्रतिभाशाली समस्या-पूर्तिकारो मे होती थी। आपकी पूर्तियाँ साहित्य-सरोवर', 'प्रियवदा', 'काव्य-विलासिनी', 'समस्यापूर्त्ति', रसिकमित्र', 'रसिक-रहस्य', 'काव्यपताका' आदि पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुआ करती थी। आप अधिकतर व्रजभाषा मे शृ गाररस प्रधान रचना किया करते थे। आपके द्वारा लिखित दो पुस्तकाकार रचनाएँ मिलती हैं—(१) अलकार-वृक्ष और (२) स्फुटरचनाएँ। आप ३८ वर्ष की अल्पायु मे सं० १९७६ वि० की आश्विन शुक्ल-द्वितीया को परलोकगामी हो गये।

उदाहरण

(१)

जौ पै वे निवास करैं सेखर पै शंकर के,
तुमरो निवास है रमा-निवास कर के।
उन पै चकोर जो पै रहत लुभाय सदा,
तुम पै मलिन्द-पुंज पूर्ण प्रेम भर के॥
जौ वे प्रकासमान गगन-बीच 'मानिक' जू
तुम हौ सौभाग्यमान बीच सरोवर के।
जनम दुहू को एक संग ही पयोधर ते
सकुच्यो सरोज क्यों बिलोकि कलाधर के॥[3]

---

१. 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० ३४ तथा 'मिश्रबन्धुविनोद' (वही), पृ० ४२७।
२. 'साहित्य-चन्द्रिका' (गया, भाग १, छटा ३, जनवरी, सन् १९१८ ई०), पृ० ३।
३. 'समस्यापूर्त्ति' (गया, सन् १९०८ ई०), पृ० २६-२७।

(२)

आगम प्रबीनता की बैनन में थोरी-थोरी
नैनन में चंचलता खंजन कलोल है।
वैसे ही सु बंक भौंह धनु रतिनाथ जू की
रंचक गुलाब ऐसो कोमल कपोल है।
छिन छिन छीनताई 'मानिक' जू लंक माहि
उच्चता उरोज युग श्रीफल सुडोल है।
मत्त गजराज की गँभीरता सु पाय अस
बाल बैस बेसक रतन अमोल है॥[1]

(३)

चहचहान सब लगे पखेरू, पिक सातो सुर करता था।
'पीव-कहाँ'-रट लाकर चातक, पीतम का दम भरता था॥
भन-भन शब्द मधुर मनहारी, कुंजों में सुन पडता था।
मधुप-समूह पान कर मधु को, प्रमुदित चित्त अकडता था॥[2]

गिरिजादत्त पाठक 'गिरिजा'

आपकी रचनाएँ 'द्विजराज', 'दत्त', 'विज्ञ बक्सरी' आदि नामो से भी मिलती हैं। आप शाहाबाद-जिला के प्रसिद्ध स्थान 'बक्सर' (मु० सहनीपट्टी) के निवासी कविवर पं० रामसकल पाठक 'द्विजराम' के पुत्र है।[3] आपका जन्म स० १९५५ वि० (सन् १८९८ ई०) की ज्येष्ठ कृष्ण-एकादशी को हुआ था[4]। आपकी आरम्भिक शिक्षा

---

१. 'रसिक-रहस्य' (पिलकछा, जौनपुर, वर्ष १, अंक १०, १५ जुलाई, सन् १९०७ ई०), पृ० ८।
२. 'लक्ष्मी' (मासिक, गया, भाग ८, सख्या २, अगस्त, सन् १९१० ई०), पृ० ६०-६१। 'विपिन-बिहार' नामक एक अँगरेजी-कविता के भावानुवाद का एक अंश।
३. आपके पूर्वज गया-जिला के 'बरडी' ग्राम से आये और अपनी विद्वत्ता से शाहाबाद में प्रतिष्ठित हुए थे।
४. आपके द्वारा प्रेषित सूचनाओं के आधार पर।

बक्सर मे ही हुई। सन् १९०९ ई० मे लोअर प्राइमरी स्कूल से निकलने के बाद आपने वही के श्रीरामेश्वर-संस्कृत पाठशाला एव जुबली संस्कृत-विद्यालय मे व्याकरण, साहित्य, आयुर्वेदादि विषयो का अध्ययन किया। आपको सन् १९१९ ई० मे बिहार-संस्कृत-समिति से 'काव्यतीर्थ' को उपाधि प्राप्त हुई। सन् १९२४ ई० मे आप 'आयुर्वेदोपाध्याय', सन् १९४० ई० मे 'धर्मशास्त्रशास्त्री तथा सन् १९५६ ई० मे 'आयुर्वेदवाचस्पति' हुए। आपको विविध सस्थाओ से 'कविरत्न', साहित्यभूषण', 'विद्याविनोद' आदि उपाधियाँ भी प्राप्त थी। सन् १९१९ ई० से आप साहित्य-रचना की ओर प्रवृत्त हुए। सन् १९३० ई० मे विजयगढ (अलीगढ) से प्रकाशित 'धन्वन्तरि' के सयुक्त सम्पादक तथा वही से निकलने वाले 'प्राणाचार्य' मासिक के सहायक सम्पादक के रूप मे भी आपने कार्य किया है। आपने गद्य-पद्य दोनो मे ही रचनाएँ की है। आपकी रचनाएँ हिन्दी के अतिरिक्त सस्कृत मे भी मिलती है। आपके द्वारा रचित 'भारत का गोवंश' शीर्षक एक रचना ३४ छप्पयो मे है। आपकी अनेक स्फुट रचनाएं अभीतक अप्रकाशित है।

उदाहरण

(१)

सूरवर दानि कुलकानि निरवाहि निज,
राखत नखतनाथ करत उदोत मन्द।
धारि वसुधा पै धार सरस सुधा-सी शुभ्र,
भूषण विभूति भरे भूरि भाषा भाव छन्द॥
सुन्दर सुजान प्रान सुजन समाजहूँ के
विमल विचार वीचि सीचि नव कवि चन्द।
भास हास हारी रस सरिता विहारी जनु,
'गिरिजा' गिरा के गुरु 'भारतेन्दु हरिचन्द' ॥[१]

(२)

जलज लजात जलजात सकुचात आली
सुमन-सरासन सुसासन निरेख्यो मैं।

---

१. आपके द्वारा प्रेषित सामग्री से। सन् १९३५ ई० में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की अर्द्ध-शताब्दी के अवसर पर आयोजित समारोह में पठित एवं रजत-पदक से सम्मानित।

ससिकर पूर रुचि रुचिरमुखी है सीता
नील नीरजात गात राम अवरेख्यो मैं।
बर जयमाल गरे डारत लजात दोऊ
'गिरिजा' अनूठी छबि सत्य सूक्ति लेख्यो मैं।
चन्द्र ते लजात जलजात जग जानत है।
आज जलजात तें लजात चन्द्र देख्यो मैं॥

(३)

मनभावन सावन मेघ घने
उमड़े चपला हठकीली भई।
दमकै दिन-रात हिया दरकै
जल नैन झरै लट पीली भई।
तनु छीजत जात छिनै छिन हा!
अब बेगि मिलौ लिखि पाँति दई।
चलि ह्वाँ ते पिया दुख दूरि किये
'गिरिजा' ललना चटकीली भई॥[२]

(४)

मानवता का अमिट नाम जो जपते है निशि बासर।
सूख रहे है शुचि सरिता के जल समान अनुवासर॥
गतप्राण है श्वाँस ले रहे भाथी की समता कर।
प्रजातन्त्र को जला रहे है लोहा लाल उगलकर॥[३]

★

---

१. आपके द्वारा प्राप्त सन् १६२० ई० में रचित।
२. 'साहित्य-माला' (गया, माला १, पुष्प ८, आश्विन, स० १६७७ वि०), पृ० ४।
३. आपके द्वारा प्राप्त। सन् १६५२ ई० में रचित।

गुप्तेश्वर पाण्डेय

आप शाहाबाद-जिला के 'रतवार' (पो० मोहनियाँ) नामक स्थान के निवासी पं० शुकदेव पाण्डेय के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९५६ वि० (सन् १८९९ ई०) की पौष कृष्ण-एकादशी को हुआ था।[1] आपकी शिक्षा का श्रीगणेश मोहनियाँ (शाहाबाद) गुरु-ट्रेनिंग की अपर प्राइमरी पाठशाला में हुआ था। आपने मिड्ल इंगलिश की शिक्षा भभुआ (शाहाबाद)-मिड्ल स्कूल से प्राप्त की। इसके बाद आपने क्रमशः सासाराम हाइ इंगलिश स्कूल तथा आरा टाउन स्कूल में शिक्षा प्राप्त की। अपने स्कूली जीवन में आप बराबर प्रथम हुए और सन् १९१८ ई० में, प्रथम श्रेणी में आपने प्रवेशिका परीक्षा भी पास की। तत्पश्चात् दो वर्षों तक पटना-कॉलेज में शिक्षा पाने के बाद आप असहयोग-आन्दोलन में सम्मिलित हो गये। सन् १९२१ ई० से आप बराबर देशसेवा के काम में लगे रहे। एक पदाधिकारी के रूप मे आपका सम्बन्ध जिला एवं प्रान्तीय काँगरेस-कमिटियों से भी रहा। राष्ट्र-हित में आपने अनेक बार जेल की यातनाएँ भी सही हैं। सन् १९३७ से ४७ ई० तक आप बिहार-विधान-परिषद् के सदस्य रहे। सन् १९३७ ई० में आप प्रान्तीय व्यवस्थापिका-सभा के सदस्य और सन् १९४८ ई० में शाहाबाद-जिलाबोर्ड के अध्यक्ष बनाये गये। सन् १९४७ ई० में ही आप आरा-सासाराम और डेहरी-रोहतास लाइट-रेलवे के डाइरेक्टर हुए। 'आरा-बाल हिन्दी-पुस्तकालय', 'आरा-नागरी-प्रचारिणी-सभा', 'नवजीवन-पुस्तकालय' तथा शाहाबाद के अनेक प्रमुख पुस्तकालयों के संचालन में आपका सक्रिय सहयोग रहा है। आपकी साहित्य-सेवा का आरम्भिक वर्ष सन् १९२१ ई० बतलाया जाता है। हिन्दी में लिखित आपकी स्फुट रचनाएँ 'आज', 'संसार', समाज', 'सन्मार्ग', 'नवराष्ट्र', 'राष्ट्र-वाणी', 'विश्वमित्र', 'अमृतबाजार-पत्रिका'. आर्यावर्त्त' आदि में प्रकाशित मिलती हैं। पुस्तकाकार रचनाओं में केवल एक 'पारिवारिक योजना' प्राप्त होती है।[2]

उदाहरण

(१)

भारतीय संस्कृति पाश्चात्य संस्कृतियों से इस अंश में भिन्नता रखती है कि इस संस्कृति के प्रवर्त्तक ऋषियों ने विश्व की परख करते समय उसके दृश्य रूप को ही उसका यथार्थ रूप स्वीकार नहीं कर लिया, अपितु, सतत तपश्चर्या और अनुसंधान के बाद निर्णय किया कि इस दृश्य जगत के मूल में अविनाशी आत्मतत्व छिपा हुआ है।

---

१. आपसे ही प्राप्त सूचनाओं के आधार पर।—देखिए, 'बिहार-अब्दकोश' (वही, पृ० ६५७) भी।
२. आपकी एक और पुस्तकाकार रचना अँगरेजी में लिखित मिलती हैं, जिसका प्राक्कथन तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्र प्रसादजी ने लिखा था।

यह दृश्य जगत उसकी छाया मात्र है। ऐसा अविनाशी आत्मतत्व ही भारतीय संस्कृति का आधार है, जिसे आध्यात्मिक आधार कहते है।[१]

(२)

'इच्छामात्रं प्रभोः' सृष्टिः के अनुसार ब्रह्म की इच्छा से ही सृष्टि होती है। ब्रह्म में 'एकोऽहं बहुस्याम' की भावना होती है। फलतः सृष्टि के मूल में भावना है। इसलिए व्यवहार में भी सब कर्मों के मूल में भावना ही काम करती है। शरीर मे इन्द्रियाँ प्रधान है। इन्द्रियों को मन प्रेरित करता है। मन का धर्म है सदा संकल्प-विकल्प करते रहना। बुद्धि उस संकल्प-विकल्प पर निश्चय की छाप लगाती है। जिस संकल्प पर बुद्धि की मुहर लग जाती है वही कर्म का रूप धारण करता है।[२]

गुरु महादेवाश्रम प्रताप शाही

आप सारन-जिला के प्रसिद्ध हथुआ-नरेश महाराजा सर कृष्णप्रताप शाही के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९५० वि० (सन् १८९३ ई०) की आषाढ शुक्ल-सप्तमी (बुधवार) को हुआ था।[3] २ दिसम्बर, सन् १९१४ ई० (बुधवार) को हथुआ (सारन) मे आपकी राजगद्दी हुई थी।[४] आपने इण्ट्रेस की परीक्षा पास करने के बाद अजमेर के प्रिन्स कॉलेज मे दो वर्षों तक शिक्षा प्राप्त की थी। कतिपय कारणवश आपकी और अधिक शिक्षा न हो सकी। आपके यहाँ कवियो, विद्वानो एवं पण्डितो का बडा आदर था।[५] आपही की प्रेरणा से राजमाता ने आर्थिक सहायता प्रदान कर काशी से प्रकाशित मासिक 'इन्दु' की सरक्षिका होना स्वीकार किया था। आपने पटना मे 'पाटलिपुत्र-प्रेस' की स्थापना कर

---

१. 'पारिवारिक योजना' (श्रीगुप्तेश्वर पाण्डेय, सं० २००८ वि०), पृ० ३२।

२. वही।

३ श्रीशिवप्रसाद गुप्त से प्राप्त सामग्री के आधार पर।

४. देखिए, 'पाटलिपुत्र' (साप्ताहिक, भाग १, अक २३, सन् १९१४ ई०), पृ० १।

५. इस सिलसिले में स्व० प० ज्वालाप्रसाद मिश्र, राजाराम शास्त्री, दिव्यचक्षु बच्चूसूर आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। पं० हरिवंश मिश्र, काव्यतीर्थ, जो 'इन्दु' के स्थायी कवि और लेखक थे, जीवन-पर्यन्त आपके ही आश्रित थे। आपका आश्रय पाकर ही इनकी काव्य-प्रतिभा फूली-फली।

'पाटलिपुत्र' नामक हिन्दी-साप्ताहिक निकाला था। उक्त प्रेस से अनेक साहित्यिकहिन्दी-पुस्तकें भी प्रकाशित हुई थी।[1] आप स्वय भी काव्य-रचना करते थे। आपकी रचनाएँ 'पाटलिपुत्र' मे प्रकाशित हुआ करती थी।[2] आपने गीता के कई श्लोको पर कविताएँ और टिप्पणियाँ भी लिखी थी। आप स० २००७ वि० (सन् १९५० ई०) की माघ कृष्ण-अमावास्या को परलोकगामी हुए। आपको रचना के उदाहरण नहीं मिले।

गोपाललाल वर्मा

आप मुंगेर-जिला के 'माऊर' नामक स्थान के निवासी श्रीनन्दलालजी के पुत्र थे। आपका जन्म सन् १८९४ ई० की ३ जुलाई को हुआ था।[3] आपने सन् १९१३ ई० मे कलकत्ता-विश्वविद्यालय से मैट्रिकुलेशन की परीक्षा पास की। तत्पश्चात् सन् १९१८ ई० मे बी० ए० की और सन् १९२६ ई० मे बी० एड्० की परीक्षाएँ आपने पास की। सन् १९४९ से ५१ ई० तक आप बिहार-सरकार के सहायक शिक्षा निदेशक (योजना, के पद पर कार्य करते रहे। आपकी गणना सन्ताली एवं पहाडिया भाषाओ के विशेषज्ञो मे की जाती थी। सन्ताली-भाषा को सर्वप्रथम देवनागरी-लिपि मे लिखने की प्रेरणा आपने ही दी थी। उक्त भाषा की पहली-पोथी भी, जो सरकार के द्वारा कोर्स के लिए मंजूर हुई थी, आपने ही तैयार की थी। हिन्दी-प्रचार-कार्य मे आपकी विशेष दिलचस्पी रही। आपके द्वारा लिखित विभिन्न-विषयक हिन्दी-लेख पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुए थे। इन दिनो आप दुमका (सथाल-परगना) के 'स्कूलपाडा' नामक स्थान मे निवास कर रहे थे। पिछले वर्ष आपका देहावसान हो गया। आपकी रचना के उदाहरण भी हमे नहीं प्राप्त हुए।

गोपाल शास्त्री

आप सारन-जिला के जगन्नाथपुर (पो० सैदपुरा) नामक स्थान के निवासी श्रीक्षेमधर त्रिपाठी[4] के पुत्र है। आपका जन्म स० १९४९ वि० (सन् १८९२ ई०) की आश्विन कृष्णाष्टमी (५ अक्टूबर, शुक्रवार) को हुआ था।[5] आपने 'साहित्याचार्य',

---

१. उक्त प्रेस से आपने एक अँगरेजी दैनिक 'एक्सप्रेस' का भी प्रकाशन कराया था।

२. एकादश सारन-जिला-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन (सन् १९५३ ई०) के अवसर पर श्रीकुमार नकुलेश्वरेन्द्र शाही, स्वागताध्यक्ष के भाषण से।

३. श्रीकृष्णनन्दन वर्मा शास्त्री (सन्तालपरगना) से प्राप्त सूचना के आधार पर।

४. आपकी माता का नाम कौशल्या देवी था।

५. दिनांक ७ नवम्बर, सन् १९५५ ई० को आपके द्वारा प्रेषित सामग्री के अनुसार। उक्त सामग्री के

'काव्यतीर्थ' और 'न्यायतीर्थ' की उपाधियाँ प्राप्त की थी। आगे चलकर बिहार-सरकार ने आपको 'दर्शनकेसरी' और भारत-धर्म-महामण्डल ने 'पण्डितराज' की सम्मानित उपाधि से विभूषित किया। गुजरात के शारदा विद्यापीठ ने आपको 'शंकराचार्य' की उपाधि दी और काशी के पण्डितो ने आपको महाध्यापक' कहा। आप पहले काशी के हरिश्चन्द्र-कॉलेज मे प्राध्यापक-पद पर नियुक्त हुए। फिर, सन् १९२१ ई० मे वहाँ से असहयोग करके काशी-विद्यापीठ मे उपाचार्य होकर प्राच्य-दर्शन पढाने चले आये। कुछ ही दिनों बाद आप उसके आचार्य भी हुए। आपने काशी-पण्डित-सभा की अध्यक्षता की और सार्वभौम संस्कृत-प्रचार-परिषद् का सभापतित्व भी किया। भारत-धर्म महामण्डल मे एक धर्मोपदेशक के रूप मे आपने अनेक महत्त्वपूर्ण भाषण दिये थे। आपकी गणना विद्वान् वक्ताओ मे होती है। सन् १९३२ ई० मे काशी तथा उत्तरप्रदेश-प्रान्तीय कांगरेस के अध्यक्ष होने के कारण आपको कारावास का दण्ड भी भुगतना पडा था। आपको सस्कृत, हिन्दी, ॲगरेजी, बॅगला, फारसी, मराठी गुजराती आदि अनेक भाषाओ का ज्ञान है। प्रसिद्ध सस्कृत मासिक 'सुप्रभातम्' की व्यवस्था से आप आरम्भ से ही सम्बद्ध रहे और आगे चलकर दो वर्ष तक आपने सफलतापूर्वक उसका सम्पादन भी किया। हिन्दी के आप बहुत बडे हिमायती है और सन् १९१६ ई० से ही हिन्दी-प्रचार करते आ रहे है। वास्तव मे, संस्कृत और हिन्दी की सेवा मे ही आपका सारा समय व्यतीत हुआ। आप आधुनिक और अतीतयुग की सन्धि चाहनेवाले प्रगतिशील दृष्टिकोण के विचारशील विद्वान् हैं। आपके स्फुट लेख सन् १९१६ ई० से ही पत्र-पत्रिकाओ मे छपने लगे थे। सन् १९२१ ई० के कांगरेस-आन्दोलन के समय भोजपुरी मे आपकी बहुत-सी कविताएँ छपाकर बाँटी गई थी। आपके द्वारा रचित हिन्दी-पुस्तको के नाम इस प्रकार हैं—(१) 'कविताकुंज',[१] (२) राष्ट्रभाषा-भूषण,[२] (३) हिन्दी दीपिका[३] (४) राष्ट्रधर्मोपदेशिका या हिन्दूधर्मोपदेशिका[४], (५) हरिजन-स्मृति[५], (६) भारतीय-सस्कृति[६], (७) सस्कृत शिक्षक[७] (८ मीमासापरिभाषा[८] आदि।[९] इन पुस्तको के अतिरिक्त अपने जीवन के सान्ध्य काल मे आप वेदो और पुराणो के सक्षिप्त संस्करण हिन्दी मे निकालने की दिशा मे प्रयत्नशील थे। कहा नही जा सकता कि आपका वह कार्य पूरा हुआ या नही।

अतिरिक्त आपके प्रस्तुत परिचय को तैयार करने में 'हिन्दीसेवी-ससार' (वही, पृ० ६७) तथा 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ५७) से भी सहायता ली गई है।

१ मुख्यतः भोजपुरी-भाषा में रचित कविताओं का सग्रह।

२ हिन्दी-भाषा का सरल व्याकरण।

३. समालोचनात्मक हिन्दी-व्याकरण, सन् १९३८ ई० में प्रकाशित।

४. धर्मशास्त्र के ग्रन्थों का सार रूप संग्रह।

५ हरिजन-आन्दोलन से सम्बद्ध पुस्तक।

६. हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग से प्रकाशित।

७ वयस्कों को संस्कृत सिखाने की दृष्टि से रचित।

८ मीमांसा-दर्शन, जिज्ञासुओं के लिए रचित पुस्तक।

९. सस्कृत में आपके द्वारा रचित 'पाणिनीय-प्रशस्ति' नामक पुस्तिका हिन्दी-अनुवाद-सहित प्राप्त होती है।

उदाहरण

(१)

संस्कृत वाङ्मय के परिशीलन से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि प्राचीन समय मे ईश्वर मानने या न माननेवालों के लिए आस्तिक या नास्तिक शब्द का प्रयोग नहीं होता था; क्योंकि ईश्वर शब्द का प्रयोग परमेश्वर अर्थ में इधर आकर बहुत अर्वाचीन समय से संस्कृत-साहित्य मे प्रयुक्त पाया जाता है। वेद से लेकर पाणिनिसूत्र तथा पतञ्जलि के महाभाष्य तक ईश्वर शब्द का प्रयोग स्वामी-अर्थ मे, राजा-अर्थ मे तथा खास किसी देव के अर्थ में पाया जाता है।

यद्यपि यह इतिहास का विषय है तथापि इतना यहाँ कह देना अप्रासंगिक न होगा कि पौराणिक काल मे आकर शैव सिद्धान्त मे शिव के लिए जो ईश्वर शब्द का प्रयोग था वही पौराणिक काल के बाद इधर आकर शैव धर्म द्वारा भारतीय संस्कृति में प्रविष्ट हो गया है, एवं शनैः शनैः परमेश्वर अर्थ में भी खूब प्रचलित हो गया है। अब कोई ऐसी पुस्तक नही जिसमें ईश्वर शब्द से परमेश्वर का अर्थ न लिया गया हो।[१]

(२)

भारतीय संस्कृति में यह सबसे विचित्रता है कि इसका सारा व्यवहार धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक सभी वैदिक मूल आधार पर चलता है। आज हम उससे बहुत दूर भले ही चले गये हों, पर जिस समय हम अपने आचार-व्यवहार को उससे मिलान् करने लगेंगे तब फिर हम उसी रास्ते पर आ जायेंगे। यही कारण है कि आज तक हमारी संस्कृति अविच्छिन्न रूप से बनी हुई है। श्रुति कहती है 'तस्य ब्रह्मणो

---

१. 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ५७) में प्रकाशित 'आस्तिक और नास्तिक' शीर्षक लेख से।

निःश्वसितमेतद् यदृग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वा इतिहासः पुराणम्' (उस ब्रह्म का निःश्वास स्वरूप ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद और इतिहास-पुराण है।) इससे पाठक विचार कर सकते है कि जब तक प्राणी का निःश्वास चलता रहता है, तभी तक उसकी सत्ता है। जब श्वास-प्रश्वास बन्द हुआ तो वह प्राणी भी समाप्त हुआ। इसी प्रकार इस आर्य जाति का श्वासस्वरूप वेद है। जबतक इसकी क्रियायें वेदानुमोदित हो रही हैं; तबतक यह आर्य हिन्दू जाति जीवित है। जिस रोज यह बहककर श्रुतिमार्ग से विच्युत हो जायगी, उसी रोज इसकी समाप्ति समझिये।[1]

(३)

वरवीर हिन्दवासी ? कबतक पडे रहोगे।
सदियाँ गुजर गयी हा, दासत्व कब तजोगे।
रावण रुला रहा था, तब राम ने जगाया।
वंशी बजा बजाकर श्रीकृष्ण ने जगाया।
वरवीर हिन्दवासी कब तक......।
'पंजाब' लाजपत को, रख लाज पत खड़े हैं।
'यू० पी०' के खम्भ होकर, श्रीमालवी अड़े है।
'बिहार' आज भारत का, हार बन रहा है।
'राजेन्द्र' 'हक्कसाहब' का साथ हो रहा है।
वरवीर हिन्दवासी कबतक..........।
जबतक हुई है, परतन्त्रता से मुक्ति।
इतिहास कह रहा है, तब की सभी ने युक्ति।
स्वतन्त्रता तमन्ना 'गाँधी' गुहारते हैं।

---

१. 'आर्यमहिला' (मासिक, वर्ष १८, सख्या ३-४, जून-जुलाई, सन् १९३५ ई०, पृ० १०५-६) में प्रकाशित 'भारतीय सस्कृति' शीर्षक लेख से।

'श्रीनेहरू' निहारो साथी पुकारते है ।
वरवीर हिन्दवासी कबतक···· ··

(४)

उठु उठु भारतवासी अब चेत करु,
सुतले मे लुटलसि देश रे बिदेशिया
जननी जनमभूमि जानसे अधिक जानि
जनमेले राम अरु कृष्णा रे बिदेशिया।
उहवें नकलची कपूत आज जनमेले
नासे देश जाति मरजाद रे बिदेशिया।
रेल की रहतिया पै बीड़ी सिगरेट बेंचि
जरलेहा भारत करेज रे बिदेशिया।
जननी जनमभूमि पापियो के पता नाही
स्वरगो से अधिक कहाले रे बिदेशिया।[२]

(अखौरी) गोपीकिशोर लाल

आप गया-जिला के 'ढेउरी' नामक स्थान (थाना-शहरघाटी) के निवासी अखौरी गिरधारीलालजी के पुत्र हैं।[३] किन्तु, आपका जन्म सन् १८८५ ई० के १४ अगस्त को पलामू-जिला के 'डालटनगंज' नामक स्थान मे हुआ था, जहाँ आपके पिता नौकरी के सिलसिले मे गये थे।[४] प्राचीन परम्परा के अनुसार आपका विद्यारम्भ 'मकतब' से हुआ। 'खालिक-बारी' और 'करीमा' पढ़ने के बाद आपने उर्दू पढने से इनकार कर दिया। तत्पश्चात् एक वर्ष तक हिन्दी-स्कूल मे पढकर आप एक हाइ इंगलिश स्कूल मे भरती हुए। सन् १९०१ ई०

१. कवि द्वारा प्राप्त।
२. वही।
३. गया-निवासी मुन्शी भिखारीलाल-लिखित एक पुस्तक के अनुसार इस वंश के लोग शाहाबाद-जिला के 'चुरामनपुर' से फैलकर गया-जिला के 'शहरघाटी'-परगने में जा बसे थे। आज भी उक्त स्थान में 'अखौरी'-पदवीधारी अनेक परिवार हैं। इन्हें यह पदवी दिल्ली के बादशाहों से मिली थी।
४. आपके द्वारा प्रेषित सामग्री के आधार पर।

मे कलकत्ता-विश्वविद्यालय से इण्ट्रेस की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे पास करने के बाद आप हजारीबाग के मिशन-कलिज मे भरती हुए। वहाँ के तत्कालीन प्राचार्य श्री जे० ए० मुरे के आप अत्यन्त प्रिय छात्र रहे। सन् १९०३ ई० मे आपने प्रथम श्रेणी मे हो एफ० ए० की परीक्षा पास की, जिसके परिणामस्वरूप आपको छोटानागपुर की एक छात्रवृत्ति भी मिली। सन् १९०३ ई० मे आप कलकत्ता के प्रेसिडेंसी कॉलेज मे चले आये। उन्ही दिनो छात्रावास मे आप भूतपूर्व राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्र प्रसादजी तथा अन्य अनेक प्रमुख व्यक्तियो के सम्पर्क मे आये। सन् १९०५ ई० मे आपने बी० ए० की परीक्षा पास की। जब आप एम्० ए० के छात्र हुए, तब आप हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक पं० अक्षयवट मिश्र के निकट सम्पर्क मे आये। उसी वर्ष बंग-भग के विरुद्ध विदेशी वस्तुओ का बहिष्कार कर आप स्वदेशी आन्दोलन की ओर उन्मुख हुए। परिणामत., आपको एम्० ए० और लॉ की पढाई बन्द कर देनी पडी। एम्० ए०, बी० एल्० कर वकालत करने की आपकी इच्छा पूरी न हो सकी और १० दिसम्बर, १९०६ ई० को आप डिप्टी-कलक्टर के पद पर नियुक्त हो गये। सरकारी नौकरी के सिलसिले मे आपने पूरे प्रान्त का भ्रमण किया और अनेक स्थानो पर साहित्यिक गोष्ठियाँ आयोजित की तथा बालिकाओं के लिए स्कूल खोले। आपने कई स्थानो पर नाट्य-मण्डलियाँ भी स्थापित की और उनके तत्त्वावधान मे प्रमुख हिन्दी-नाटको का अभिनय कराया। आपका हिन्दी सम्बन्धी प्रचार-कार्य महत्त्वपूर्ण माना जाता है। सन् १९३७ ई० मे आप बिहार-सरकार के राजस्व-सचिव-पद पर कार्य कर रहे थे, उसके बाद आपने अवकाश-ग्रहण कर लिया। अवकाश-ग्रहण के समय ब्रिटिश-सरकार की ओर से आपको 'रायबहादुर' की उपाधि प्राप्त हुई थी।

आपने हिन्दी मे 'ग्रहो का फेर' नामक एक हिन्दी-नाटक की रचना पाँच अंको मे की थी। इस सामाजिक नाटक का अभिनय अनेक स्थानो पर हुआ, किन्तु, कतिपय कारणवश यह मुद्रित होकर प्रकाशित नही हो सका। आपकी रचना के उदाहरण नही मिले।

गोवर्द्धनलाल

आप गया-शहर के 'धामी टोला' मुहल्ले (टेकारी-रोड) के निवासी श्रीकृष्ण लालजी के पुत्र है। आपका जन्म सं० १९४८ वि० (सन् १८९० ई०) की पहली जनवरी को हुआ था।[1] जब आप सात वर्ष के हुए, तभी आपके पिताजी का स्वर्गवास हो गया। लगभग १४ वर्ष की अवस्था तक आप घर पर ही फारसी, उर्दू और अँगरेजी की शिक्षा प्राप्त करते रहे। इसके बाद आपने

१. आपके पौत्र श्रीअरविन्दकुमार गुप्त द्वारा दिनांक २६ मार्च, १९६६ ई० को प्रेषित सामग्री के आधार पर। उक्त सामग्री के अतिरिक्त, आपके प्रस्तुत परिचय तैयार करने में 'गया के लेखक और कवि' (वही, पृ० ४६) से विशेष सहायता ली गई है।

अपनी स्कूली शिक्षा आरम्भ की। जब आप स्कूल मे थे, तभी आपका विवाह कर दिया गया, किन्तु दो वर्ष बाद ही आपकी बालिका-पत्नी का देहान्त हो गया। सन् १९१० ई मे आपने प्रवेशिका परीक्षा पास की और उसी वर्ष आपका दूसरा विवाह भी हुआ। आपने सन् १९१६ ई० मे एम० ए० तथा सन् १९१७ ई० मे बी० एल० की डिग्री प्राप्त की। इसके बाद आप हाइकोर्ट के वकील हुए। कुछ समय बाद आप वकालत करने गया चले गये और तबसे अन्त तक वही रहे।

आपका साहित्यिक जीवन सन् १९१० ई० से आरम्भ होता है। इसी समय से आप हिन्दी-सेवा की ओर प्रवृत्त हुए और अपनी लिखी रचनाएँ पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशनार्थ भेजने लगे। आगे चलकर आप 'लक्ष्मी', 'सरस्वती', सुधा', 'माधुरी' और 'हिन्दू-पंच के स्थायी लेखक बन गये। आपकी गणना गम्भीर एवं विचार पूर्ण उत्कृष्ट-गद्य-लेखको मे होती है। गया-हिन्दी-साहित्य-सभा के सभापतियो मे आपका महत्वपूर्ण स्थान रहा है। बिहार-प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के १८वे अधिवेशन (गया) के स्वागताध्यक्ष आप ही थे। आपने अनेक ग्रन्थो के निर्माण का सकल्प किया था, जिनमे कुछ को ही आप पूरा कर सके। पूर्ण ग्रन्थो मे 'नीतिविज्ञान'[1] उल्लेखनीय है, जिसका सम्भवत. गुजराती-भाषा मे भी अनुवाद हुआ था। 'अपूर्ण ग्रन्थो मे अर्थ-विज्ञान'[2] 'विकास-विज्ञान'[3] आदि के नाम लिये जा सकते है। आप सन् १९५५ ई० के ३१ मार्च को परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

रामनवमी प्रत्येक वर्ष आती है और आकर चली जाती है। हम प्रत्येक वर्ष भगवान राम का जन्म-दिवस मनाते है, पुण्य-तिथि में उपवास, नाम-जपन और झाँझ-करताल बजाकर भगवान का भजन-कीर्त्तन भी करते हैं। हमारी राम-भक्ति यही शेष हो जाती है। हम कभी भगवान के पावन चरित्र, उनके दिव्य-संदेश, उनके अपूर्व जीवन पर—जिस एक जीवन में ही शायद आर्य-जाति का समस्त जीवन

---

१. हिन्दी-ग्रन्थरत्नाकर-कार्यालय, बम्बई से प्रकाशित।—देखिए, 'मिश्रबन्धुविनोद' (वही), पृ० ४६६।

२. इस ग्रन्थ का प्रायः एक चतुर्थांश धारावहिक रूप में 'लक्ष्मी' में प्रकाशित हुआ था।

३. इसका अर्द्धांश धारावाहिक रूप में 'माधुरी' में प्रकाशित हो चुका है। उक्त दोनों ग्रन्थों के अतिरिक्त आप राजनीति-शास्त्र और स-ार के राष्ट्रों के शासन-विधान पर भी ऐतिहासिक एवं दार्शनिक दृष्टि से एक ग्रन्थ लिखना चाहते थे, जिसका प्राचीन ग्रीस का शासन-विधान-सम्बन्धी बहुत-सा अश 'प्रभा' में प्रकाशित हुआ था।

निहित है—जिस एक जीवन में ही सम्पूर्ण आर्य-सभ्यता और संस्कृति ने मूर्त्तिमान पार्थिव स्वरूप धारण किया था—विचार नहीं करते। हम भगवान की सच्ची उपासना से सदा मुँह चुराये फिरते है। हमारे करताल पीटने से, हमारे 'राम-राम' रटने से हमारी वाह्य मौखिक श्रद्धा भले ही प्रकट होती हो, परन्तु यथार्थ श्रद्धा का सम्बन्ध हृदय से है और वह श्रद्धा ज्ञान और विचार को तिलांजलि देकर कदापि उत्पन्न नही की जा सकती। जब तक मस्तिष्क द्वारा विचार करके हृदय में किसी वस्तु की महत्ता का प्रत्यक्ष अनुभव न कर लिया जाये, तब तक उस वस्तु के प्रति सच्ची श्रद्धा कदापि नही उत्पन्न हो सकती।'[१]

(२)

जब स्त्रियो का स्वत्व पूर्ण रूप से स्वीकृत होगा तो पुरुषों के साथ उनका नाता कुछ कम कोमल और मधुर तो अवश्य होगा, परन्तु वह स्त्रियाँ अधिक सम्मान और प्रतिष्ठा के योग्य बनेंगी। 'इसमें भी कोई सन्देह नही कि एक नई और श्रेष्ठ कविता की उत्पत्ति होगी और यह प्राचीन नखशिखवाली कविता से भिन्न होगी। स्त्रियाँ एक नई दृष्टि से देखी जायँगी जो कि पुरानी दृष्टि से एकदम विपरीत होगी। उनको नया सम्मान वो प्रतिष्ठा मिलेगी, जो कि पुराने पूजन अर्चन एवं प्यार दुलार से कही पृथक होगा। स्त्रियाँ यथार्थ मे पूज्य बनेंगी, और मनुष्य कुटिल, चपल, क्रूर पापिष्ठा नारियो की पूजा नही करेंगे वरन् सच्चे, साक्षात् और पवित्र देवियो की। स्त्रियों की दशा के सुधार के साथ, पुरुषो का चरित्र भी सुधरेगा, नारी आदर्श के ऊँचा

---

१ 'हिन्दूपंच' (साप्ताहिक, श्रीरामांक, वर्ष २, अंक ३३, मार्च, सन् १६२८ ई०), पृ० ११।

होने के साथ पुरुषगण का मानसिक मैल भी धुल जायगा, स्त्री पुरुष का सम्बन्ध एवं विवाह की संस्था कही पवित्र होगी और असंख्यों की जगन्माता दुर्गास्वरूप पवित्रता, बलिष्ठा और वीरा नारियो से समाज को वह लाभ होगा जिसे कलम को लिखने की शक्ति नही है।'[1]

गोविन्दप्रसाद शुक्ल

आप मुँगेर-जिला के दामोदरपुर (पा० मासूमगज, थाना-तारापुर) नामक स्थान के निवासी श्रीव्रजेश्वर शुक्ल के पुत्र थे। आपका जन्म स० १९४३ वि० (सन् १८८६ ई०) की आश्विन कृष्ण-द्वादशी (बुधवार) को पूर्णिया-जिला के वासुदेवपुर (थाना-धमदाहा) नामक स्थान मे हुआ था।[2] वासुदेवपुर आपका ननिहाल था, जहाँ आपकी एक मौसी की देख-रेख मे आपकी शिक्षा-दीक्षा हुई।[3] मुख्यत उन्ही के संसर्ग से आपमे काव्य-रचना की प्रवृत्ति जगी और कुल सोलह वर्ष की उम्र से ही आप व्रजभाषा मे रचना करने लगे। आपकी कविताएँ स्व० लाला भगवान 'दीन' तथा प० पद्मसिंह शर्मा को बडी प्रिय थी। बनैली (पूर्णिया) के राजा पद्मानन्दसिह बहादुर ने भी आपका यथेष्ट सम्मान किया था। आगे चलकर आपने खडीबोली मे भी कुछ स्फुट कविताओ की रचना की। ये रचनाएँ मुख्यत कवित्त एवं सवैया-छन्दो मे है। इनमे हास्यरस की प्रधानता है। आप अपनी स्फुटकाव्य-रचनाओ का एक सग्रह प्रकाशित करवाना चाहते थे, किन्तु आपकी यह इच्छा पूर्ण न हो सकी। आपने 'भ्रमर' नामक एक बँगला-उपन्यास का हिन्दी-अनुवाद भी किया था, जो काशी के बहार ऑफिस से प्रकाशित हुआ है।

---

१. 'लक्ष्मी' (मासिक, भाग १६, अक ४, अप्रैल, सन् १९१८ ई०), पृ० ११० ।

२. दिनांक १६ जुलाई, सन् १९५६ ई० को आपके द्वारा प्रेषित सामग्री के अनुसार। मिश्रबन्धुओं ने भी आपका उल्लेख किया है।—देखिए, 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही), पृ० ४५५।

अपने पूर्वजों के विषय में आपने लिखा है—"लगभग दो-सौ वर्ष होता है, मेरे पूर्वपुरुष पं० रामदत्त शुक्ल बस्ती-जिलान्तर्गत सुप्रसिद्ध महुली नामक ग्राम से आकर भागलपुर के दक्षिण 'गोबरांई' नामक ग्राम में बस गये। मेरे पितामह प० जगन्नाथ शुक्ल का विवाह मुँगेर-जिलान्तर्गत दामोदरपुर के बडे रईस बाबू कालीप्रसाद पाण्डे की कन्या से हुआ। विवाह के बीस वर्ष बाद वे यहीं बस गये। तबसे मेरे परिवार का स्थायी निवास यहीं है।

३. आपकी माता का नाम प्रेमबनी देवी था। आपकी मौसी अन्धी थी और उन्हें कोई सन्तान न थी। उन्हे पुराणों की कथाएँ कण्ठस्थ थीं। गणित में भी पारंगत थी।

उदाहरण

(१)

सीतल सुधाकर पै रबि-सा प्रखर तेज
मण्डल के मध्य स्याम झलक दिखाता है।
घंटा-संख-दुन्दुभी औ नूपुर-मधुर-बीना,
बिबिध गोविन्द रव मृदुल सुनाता है।
भासमान जगत अनन्त मे विलीन कर जाग्रत मे
सुप्त-सा प्रतीत उर लाता है।
बरबस तन-प्रान मुग्ध कर लेता मेरे
मानस में बैठे कौन मुरली बजाता है ॥[1]

(२)

नगर-निवासिनी-सी होनी चटकीली यदि,
गोकुल की गलियो में देते नित्य फेरी तो।
होते जो हृदयहीन इतने 'गोविन्द' नही,
बनते अवश्य प्रेम-प्रतिमा-पुजेरी तो।
हीरा और कॉच पहचानने की शक्ति होती,
राधिका को छोड़ अपनाते नही चेरी को।
ग्वाले-घर पाले यदि जाते नही यदुनाथ,
ऐसी मोटी बुद्धि कभी होती नही तेरी तो।[2]

(३)

मुरली मुकुट पट छोरि करी नारी भेस,
ललिता बिसाखा धरि ल्यायी निज भौना द्वै।

---

१ विभाग में प्राप्त सामग्री से।
२ वही।

मुसुकि जसोमति से कहत कन्हैया ऐसो,
तालो दै नचाई मौ को मानि कै खिलौना ह्वै ।
टपकि कपोलन पै आँसुन कौ बुन्द गिर्‌यौ
कजरारे नैनिन तै साँवरे सलोना ह्वै ।
सुकवि गोविन्द ताको सोभा ऐसो जानि परै
मानों नील कंज पै मिलिन्दन कै छौना ह्वै ।।[१]

(४)

कभी सोभित सान्ति-सभा को किये
कभी कॉगरेस में भी पधार गये ।
कभी कोट औ पैण्ट कभी कुरता
टोपी गाँधी गोविन्द सँवार गये ।
बहुरूप धरे बहुरूपिया-से
खुफिया सरकार के हार गये ।
फिर भी सुख का मुख देखा नही,
बहु चन्दा वसूल डकार गये ।[२]

(५)

लज्जा दूर करने को कटि में लँगोटी-फटा,
पेट पूजने को मात्र मुट्ठो चना भूना है ।
फिर भो टिकस मिस लूटे जा रहे है हम,
धुनकी-कानून धर जाना धर्म ध्रूना है ।
भारत का प्रान गोबंस का 'गोविन्द' बध,
सासक बिदेसियों से होता आज दूना है ।

---

१. विभाग में प्राप्त सामग्री से ।
२. वही ।

मेरे प्यारे बन्धुओं बिलोको जरा आँखें खोल,

कैसा यह दिव्य रामराज्य का का नमूना है ॥[1]

गौरीनाथ झा

आप दरभंगा-जिला के 'महरैल' नामक स्थान के निवासी पं० आदिनाथ झा (दामोदर झा) के पुत्र थे। आपका जन्म सन् १८८५ ई० की वैशाख शुक्ल दशमी (बृहस्पतिवार) को हुआ था।[2] आपकी आरम्भिक शिक्षा भौर-निवासी म० म० पं० कृष्णसिंह ठाकुर के अभिभावकत्व मे हुई। माध्यमिक स्तर की शिक्षा मे म० म० पं० शशिनाथ झा विशेष सहायक हुए। आपकी उच्च शिक्षा क्रमश दरभगा एव काशी मे हुई। इसमे दरभगा के म० म० प० चित्रधर मिश्र और काशी के म० म० प० शिवकुमार मिश्रजी की आप पर विशेष कृपादृष्टि रही। आपने सन् १६११ ई० मे बिहार-संस्कृत-समिति से 'व्याकरणतीर्थ' की उपाधि प्राप्त की। स० २००० वि० मे आप अखिलभारतीय हिन्दी-परीक्षा-समिति, अयोध्या के 'विद्याभूषण' हुए। सन् १६१२ ई० मे आप काशी-तारा मन्दिर ट्रस्ट-स्टेट के मैनेजर हुए और सन् १६२४-२५ ई० मे बनैली नरेश श्रीमान् कुमार कृष्णानन्द सिंहजी के प्राइवेट सेक्रेटरी-पद पर नियुक्त किये गये। इस पद पर आपने सन् १६४६ ई० तक कार्य किया। उक्त अवधि मे आपने टी० एन्० जे० कॉलेज, भागलपुर के ट्रस्टी तथा बनैली कृष्णगढ के रिसीवर के रूप मे भी सराहनीय सेवाएँ की। आपने 'मिथिला-प्रेस' का सस्थापन कर वहाँ से कई पत्रिकाएँ एव महत्त्वपूर्ण ग्रन्थो का प्रकाशन किया था।

आपकी साहित्य-सेवा का आरम्भिक वर्ष सन् १६१८ ई० बतलाया गया है। सन् १६३० ई० से आपने प्रसिद्ध हिन्दी मासिक 'गगा' के उप सम्पादक का पद भार सँभाला।[3] इसके बाद, सन् १६३१ ई० से आप 'मिथिलामित्र' और सन् १६३५ ई० से 'हलधर'

---

१ विभाग में प्राप्त सामग्री से।

२. 'हिन्दी-सेवी-ससार' (वही, पृ० ७३) में आपका जन्मकाल सन् १८८२ ई० बतलाया गया है, जो भ्रान्तिपूर्ण है। आपके प्रस्तुत परिचय-लेखन में उक्त पुस्तक तथा 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६६८) में आई सामग्री के अतिरिक्त विभाग में सुरक्षित दिनांक २६ अप्रैल, सन् १६५६ ई० को लेखक द्वारा प्रेषित सामग्री से भी सहायता ली गई है।

३. इसके मुख्य सम्पादक स्व० आचार्य शिवपूजन सहायजी थे। स्व० आचार्यजी ने आपकी सचिका में दिनांक २७ मार्च, सन् १६६७ ई० को टिप्पणी दी है कि "पं० झाजी मेरे साथ ही 'गगा' के सम्पादक थे। संस्कृत के विद्वान् और भाग्यशाली व्यक्ति थे। पण्डितजी बड़े कुशल नीतिज्ञ थे। किन्तु, उनकी विद्वत्ता असन्दिग्ध थी। वे सहृदय, विनयी और उदार व्यक्ति थे। अहंकार उन्हें छू नहीं गया था। उनकी सज्जनता मुग्धकारिणी थी। साहित्यसेवियों का सम्मान करने में वे अपनी पद-मर्यादा भूल जाते थे। उनकी सहायता से वशीभूत होकर ही विद्वान् साहित्यिक लोग उनके अनुज बन जाते थे।"

(साप्ताहिक) का सम्पादन भी करने लगे। कई स्फुट लेखों के अतिरिक्त आपकी प्रकाशित पुस्तकाकार कृतियो मे प्रमुख के नाम ये है —(१) ऋग्वेद-सहिता की हिन्दी-टीका और (२) ईश्वर-सिद्धि। 'दुर्गासप्तशती' की आपके द्वारा प्रस्तुत टीका सस्कृत मे है।

उदाहरण

(१)

भागलपुर से सुलतानगंज १५ मील पश्चिम की तरफ है; एकदम देहात है। यही 'गङ्गा के प्रधान संरक्षक महोदय का कृष्णगढ (प्राचीन कर्णगढ) नाम का गढ़ है और यही से गङ्गा' निकला करती है। यहाँ किसी भी मासिक पत्रिका के लिए उपयुक्त साधन उपलब्ध नही। हिन्दी की अन्य मासिक पत्रिकाओ के सञ्चालक प्राय. प्रसिद्ध प्रकाशक है; इसलिए उनके प्रकाशन से उनकी पत्रिकाओं को ब्लॉक आदि यो ही, या कही कहीं सुलभ मूल्य में, मिल जाते है। 'गङ्गा' के लिये यह भी सुभीता नही है। इसके सिवा 'गङ्गा के सञ्चालक जो विशेषाङ्क निकालते है, उनमे बहुत ही व्यय करना पड़ता है, क्योंकि हिन्दी मे बिल्कुल नये विषयों पर निकाले जाते है। अभी-अभी 'गङ्गा' का जो 'पुरातत्त्वाङ्क निकाला गया है, उसमे लगभग चार हजार रुपये खर्च हुए है। तो भी 'गङ्गा के प्रधान संरक्षक और अध्यक्ष महोदयो का उत्साह कम नहीं हुआ है; क्योंकि उनका लक्ष्य 'गङ्गा' के द्वारा अर्थोपार्जन नहीं; केवल हिन्दी की सेवा है।'[1]

(२)

जबसे भारत में चीनी के व्यवसाय को प्रोत्साहन देने के लिये विदेशों से आनेवाली चीनी को रोकने के उद्देश्य से कानून बनाया है, तभी से देश के विभिन्न भागों में चीनी के कितने ही नये-नये कारखाने खुलने लगे है। सरकार ने संरक्षण के लिए पन्द्रह वर्षों की

---

१. 'गंगा' (मासिक, प्रवाह ३, तरग २५, मई सन् १९३३ ई०), पृ० ७१८।

अवधि नियत कर दी है । जो लोग इस समय चीनी के व्यवसाय के लिए धन लगा रहे है, वे देश के एक मृतप्राय व्यवसाय करो पुनरुज्जीवित करने का यत्न कर रहे है, इसमे सन्देह नही। पर इस व्यवसाय को तब स्थायित्व प्राप्त होगा जब देश का ठोस हित हो सकेगा अर्थात इस व्यवसाय के द्वारा किसानों को एक स्थायी आमदनी होने लगेगी। किसानो की आमदनी का बढ़ना ही देश की वृद्धि होना है; अत. देश के सामने यह समस्या स्वभावत. उपस्थित हो रही है कि, किस प्रकार इस व्यवसाय को स्थायी किया जा सकता है ? इस प्रश्न पर किसान और व्यवसायी— दोनों को ही गम्भीरता के साथ विचार करने की जरूरत है। सामयिक उत्तेजना में आकर न तो व्यापारियों को सब लाभ आप ही लूटने का यत्न करना उचित है और न किसानों को ही अत्यधिक दाम लिये बिना व्यवसायियो को ईख मुहैया करने से इन्कार करना उचित है। दोनों को बड़ी समझदारी से काम लेने की आवश्यकता है।[1]

चण्डीप्रसाद ठाकुर

आप भागलपुर-जिलान्तर्गत 'कदराचक-ग्राम' के निवासी पं० नन्दलाल ठाकुर के पुत्र है।[2] आपका जन्म सन् १३०५ साल (सन् १८९८ ई०) की पौष शुक्ल-पंचमी को हुआ था।[3] अपनी आरम्भिक शिक्षा समाप्त कर आपने बी० एम्० की परीक्षा पास की। तत्पश्चात् आपने विभिन्न माध्यमिक एवं शिक्षक-शिक्षण-विद्यालयो मे क्रमश. सहायक तथा प्रधान शिक्षक के पदो पर कार्य किया। आप अपने जीवन के अन्तिम दिन कार्यमुक्त होकर अपने निवास-स्थान पर ही व्यतीत कर रहे है। छात्रावस्था से ही आप काव्य-रचना की

१. 'गगा' (मासिक, वर्ष ३, प्रवाह ३, तरग १२, दिसम्बर, सन् १९३३ ई०), पृ० १४२५।

२. आपके पूर्वज संस्कृत-विद्वान् थे। पितामह की गणना ज्योतिष-विद्या के जाने-माने विद्वानों में होती थी।

३. विभाग में सुरक्षित सामग्री के अनुसार।—देखिए, 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही ,पृ० ६७२ क) भी।

ओर प्रवृत्त हुए। आपकी कोई पुस्तकाकार रचना नही मिलती, केवल स्फुट रचनाएँ ही मिलती है, जो 'महावीर', 'पाटलिपुत्र', 'हितैषी' आदि पत्रिकाओ मे प्रकाशित है। आपने प्रसिद्ध 'रघुवंश महाकाव्य' के द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ सर्गों का समश्लोकी हिन्दी-अनुवाद भी किया था, जिसका प्रकाशन अभी तक नही हो सका है।

उदाहरण

(१)

परदेस गये पति पातिन पाति न, पौर किवाड़ डरा मन है,
अवलोकन सासु गई ननदी-सुत, आज नही फिरि आवन है।
तजि शैशव यौवन राज्य बसी, तुम चाहत रैन गमावन है,
बस जाव अरे मत देर करो, रविधाम चले पथ कानन है।[1]

चन्द्रशेखरधर मिश्र[2]

आप चम्पारन-जिला के 'रत्नमाला' (बगहा) नामक स्थान के निवासी थे। आपका जन्म स० १९१५ वि० (सन् १८५९ ई०)[3] की पौष कृष्ण-द्वितीया को हुआ था। आपके पिता का नाम श्रीकमलाधर मिश्र था, जो एक सफल विद्वान्, कवि एव गायक थे।[4] आपकी आरम्भिक शिक्षा घर पर ही, सस्कृत के माध्यम से हुई। कहा जाता है कि १२ वर्ष की अवस्था मे ही आपने 'लघुकौमुदी', 'अमरकोश' आदि की पढाई समाप्त कर

---

१ विभाग में सुरक्षित सामग्री से।

२. श्रीउमाशंकरजी ने आपका जन्मकाल सन् १९५४ ई० बतलाया है।—देखिए, 'कलम-शिल्पी' (श्रीउमाशकर, सन् १९६१ ई०), पृ० ५७-५८ और 'छात्र-सखा' (वर्ष ४, अक २, नवम्बर, सन् १९६८ ई० पृ० १५) में उनका लेख। 'बिहार-विभाकर' (वही, पृ० २५५) में आपका जन्म काल सन् १९५८ ई० बतलाया गया है।

३. आपका वंश अत्यन्त प्राचीन माना जाता है। आपके पूर्वज श्रीमयूर मिश्र 'हर्षवर्द्धन' के सभासदों में एक थे। उनकी तीन शादियाँ हुई थी। उनकी ब्राह्मण पत्नी से जो वश चला, उसकी ६०वी पीढी के पं० धरनीधर मिश्र चम्पारन आये और तनहूँ-राज के आश्रित हुए। राजा की ओर से उन्हें 'रत्नमाला' आदि ग्राम मिले। 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही), पृ० ५७ तथा 'अर्घ्य' 'त्रैमासिक, सितम्बर, सन् १९६१ ई०), पृ० ५१।

४. देखिए, 'सुधा' (लखनऊ, वर्ष १, खण्ड २, सख्या ६, आषाढ, तुलसी-संवत् ३०५ तथा 'शिवपूजन-रचनावली' (वही, चतुर्थ खण्ड, पृ० १६४—१६६) में 'एक नवीन आयुर्वेदिक आविष्कार'-शीर्षक लेख।

ली थी। 'सिद्धान्तकौमुदी', 'भूषणमजूषा' जैसे ग्रन्थ तो आपको कण्ठस्थ हो गये थे। तदनन्तर, आप अयोध्या के श्रीगुरुशरणलालजी के पास भेजे गये। वही आपका साहचर्य तत्कालीन हिन्दी-विद्वान् चौधरी बदरीनारायण 'प्रेमघन', प० मदनमोहन मालवीय, प० प्रतापनारायण मिश्र, श्रीमथुराप्रसादजी आदि से हुआ। आप कुशाग्रबुद्धि थे। एक घण्टे मे एक सौ अनुष्टुप् छन्दो की रचना कर लेते थे। आपका विवाह 'मेहसी ग्राम' में हुआ था। उन दिनो वहाँ के राजा भवानी बक्शपालसिंह और शीतलबक्शसिंह थे। उनके दरबार मे आपने एक घण्टे मे सस्कृत और हिन्दी के १०६ अनुष्टुप् छन्दों की रचना कर अपनी अद्भुत कवित्व-शक्ति का परिचय दिया था। काशी मे आपको उच्चाध्ययन का अवसर मिला था। वहाँ से विद्योपार्जन करने के बाद आपने ओषधि-निर्माण और रोगग्रस्त लोगो की सेवा को अपने जीवन का लक्ष्य बनाया था तथा इसी दृष्टि से अपने गाँव मे एक आयुर्वेदीय विद्यालय खोल रखा था। आपके द्वारा आविष्कृत 'उदुम्बरसार' नामक ओषधि, जिसकी प्रेरणा आपको नरसिंहपुराण' से मिली, अनेक रोगो के लिए रामबाण सिद्ध हुई थी।[1] अपनी आयुर्वेद-सम्बन्धी उपलब्धियो के परिणामस्वरूप आपको 'चिकित्सा-चूडामणि', 'वैद्यरत्न,' 'आयुर्वेदाचार्य' आदि उपाधियाँ भी प्राप्त थी।

आप खडीबोली के सरक्षक संवर्द्धक होने के साथ-साथ खडीबोली-आन्दोलन के सक्रिय सचालको मे थे। अपने अन्तिम दिनो तक आप हिन्दी की सेवा किसी न-किसी रूप मे करते रहे। आपने युक्तप्रान्त के पूर्वी और बिहार के पश्चिमी जिलो मे हिन्दी का बहुत प्रचार किया था और अनेक नगरो और ग्रामो मे हिन्दी-सभाएँ स्थापित की थी।[2] भारतेन्दु-युगीन साहित्यकारो मे आपका स्थान महत्त्वपूर्ण माना जाता है। हिन्दी-साहित्य के मूर्द्धन्य आलोचक आचार्य प० रामचन्द्र शुक्ल ने अपने प्रसिद्ध 'हिन्दी-साहित्य का इतिहास' मे आपकी चर्चा करते हुए लिखा है कि हिन्दी-साहित्य के आधुनिक काल में संस्कृत-वृत्तो मे खडीबोली के कुछ पद्य आपने ही पहले-पहल लिखे।[3] आपको भारतेन्दु-युग के लेखको और कवियो से लेकर महामना प० मदनमोहन मालवीय, श्रीप्रतापनारायण मिश्र, श्रीदेवकी-नन्दन तिवारी आदि प्रमुख साहित्य-सेवियो तक का सान्निध्य प्राप्त था। आप काशी-नागरी-प्रचारिणी-सभा के आजीवन सदस्य थे। इतिहासकारो के मतानुसार आपकी गणना खडीबोली के सर्वप्रथम सफल कवि के रूप मे होती है। कहते है, आपकी खडीबोली की कविताओ पर स्व० अयोध्याप्रसाद खत्री ने मुहरे भेंट की थी। सन् १९२३ ई० मे बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के पचम अधिवेशन (पटना) का सभापतित्व कर आपने उसे गौरवान्वित किया था।

आप अनेक सस्थाओ एवं पत्र-पत्रिकाओ के भी जन्मदाता थे। 'विद्याधर्म-दीपिका' (स० १९४४ वि०) नामक एक मासिक पत्रिका का प्रवर्त्तन कर आपने अनेक वर्षों तक उसका

---

१ मिश्रबन्धुओं ने भी आपका उल्लेख 'सुलेखक' कहकर किया है।—देखिए, 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही), पृ० ४२१।

२. देखिए, 'बालक' (मासिक, वर्ष १६, अक ७-८, जुलाई-अगस्त, सन् १९४२ ई०), 'अर्घ्य' (वही) तथा 'शिवपूजन-रचनावली' (वही, चतुर्थ खण्ड), पृ० १५५।

३. 'हिन्दी-साहित्य का इतिहास' (रामचन्द्र शुक्ल, पृ० ५९९)। आपकी साहित्यिक जीवनी बाबू श्याम-सुन्दरदासजी ने भी अपनी 'हिन्दी-कोविद-रत्नमाला' (सन् १९०७ ई०) में प्रकाशित की थी।

सम्पादन किया था।[1] आपने साप्ताहिक 'चम्पारन-चन्द्रिका' (सं० १६४० वि०) का सम्पादन भी कई वर्षो तक किया था। अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे आप 'आविष्कार' नामक एक मासिक पत्र काशी से निकालते थे। आपके द्वारा लिखित सस्कृत-रचनाएँ बडी ही उच्च कोटि की होती थीं। सस्कृत मे यद्यपि कोई ग्रन्थ आपने प्रस्तुत नहीं किया था, तथापि आपके द्वारा रचित 'गगा' तथा 'शिव-परक' रचनाएँ बडी ही मनोहारिणी हे। आपकी रचनाओ मे तीस पद्य-ग्रन्थ, पाँच उपन्यास, एक नाटक और कई जोवन-चरित हे। इसके अतिरिक्त, आपने वैद्यक-सम्बन्धी भी दस-बारह ग्रन्थ लिखे थे। आपको 'गूलर गुण-विकास' और 'आरोग्य-प्रकाश' नामक पुस्तके अत्यन्त प्रसिद्ध है। आपके द्वारा लिखित आत्मकथा (अप्रकाशित)[2] मे हिन्दी-साहित्य की अमूल्य निधि भरी पडी है। सन् १९६१ ई० मे, आपके निजी पुस्तकालय मे आग लग जाने के कारण आपके बहुत-से ग्रन्थ जल गये। आपकी मुक्ति सन् १९४९ ई० मे, विश्वनाथपुरी काशी मे, हुई।[3]

(१)

पेड से जो गिर हुआ बेहोश सबको सोच है।
कट गया है खून जारी है, पिसा है, मोच है॥
इस कड़ी आफत में रोगी को बचाना है यही।
जो तड़पकर रो रहा उसको हँसाता है यही॥

× × × ×

लेप करते ही तुरत गायब दरद औ' दाह है।
इसलिए इस सार पर सबकी अमृत-सी चाह है॥
एक पल मे दाह बेचैनी विकलता बन्द कर।
नीद ला देता है सुख की तुरत ही आनन्दकर॥[4]

---

१ कहते हैं, इस पत्रिका को आप अपने खर्च से मुद्रित करवाकर पाठकों के बीच नि:शुल्क वितरित करते थे।—देखिए, 'जागरण' (साप्ताहिक, वर्ष १, अक ४६, १० जुलाई, सन् १९३३ ई०) तथा 'शिवपूजन-रचनावली' (वही, चतुर्थ खण्ड), पृ० १५७।

२ 'बिहार की साहित्यिक प्रगति' (बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, पटना), पृ० १२६।

३. देखिए, 'हिन्दी-कोविद-रत्नमाला' (डॉ० श्यामसुन्दर दास, सन् १९३२ ई०, भाग २), पृ० १५। श्रीउमाशंकरजी के अनुसार ८८ वर्ष की आयु में, सन् १९४२ ई० में, आपका देहान्त हुआ। देखिए, 'छात्र-सखा' (वही), पृ० १८।

४. 'यशांगप्रकाश या 'गूलर-गुण-विकास' (श्रीचन्द्रशेखरधर मिश्र, प्रकाशन-काल,नहीं), पृ० १२ और १८।

(२)

पत्रादिक को पीसकर, करलो खूब महीन।
व्रण आदिक पर वह धरो, सूखै जो कि कभी न ॥
लेप करो मोटा सदा, सूखै तो जल और।
देकर फिर गीला करो, सूखै किसी न ठौर।
फिर छन-छन पर देखिए, इसका गुण-विस्तार।
किस प्रकार दुख सिन्धु से, करता बेड़ा पार ॥[1]

(३)

हो जब बाधा तुरत सुधा मिले, ऐसी मिले विधि जो सुविधा की।
बाधा तुरत ही दूर करे, बदनामी न हो कभी लाभ मुदा की।
सार में क्यों उपमा हो सुधा की, हरै कृमि की तति जो वसुधा की।
सार से जो वसुधा को सुधा मिले, धार बहै वसुधा में सुधा की ॥[2]

(४)

कानन लो अखियाँ है तुम्हारी, विलोकि मृगी गयी लज्जित कानन,
देस-विदेस में देख्यो नही, तव नासिका-सी छवि पायी सुकानन।
कानन हूं न सुन्यो सपने तव रूप की सोभा बढी छवि कानन,
कानन आँगुरि दे के कहौ कि जिये सतलाखन वर्ष बुकानन ॥[3]

(५)

पटना के एक सज्जन कुछ कार्यवश मेरे यहाँ आये। इनके दाँतों में पीड़ा हुई। आज तक, दाँतों के दर्द की जितनी दवायें हैं, व्यवहृत हो

१ 'यज्ञांगप्रकाश' या 'गूलर-गुण-विकाश' (वही), पृ० ७।
२ 'अर्घ्य' (वही), पृ० ५३।
३. आपको अपने तीन पुत्रों में, 'बुकानन' से बड़ी बड़ी आशाएँ थीं। उन्हीं के प्रति आशीर्वादस्वरूप आपने उक्त पंक्तियों की रचना की थी।—देखिए, श्रीहरिश्चन्द्रप्रसाद द्वारा लिखित 'स्व० प० चन्द्रशेखरधर मिश्र' शीर्षक लेख —'अर्घ्य' (वही), पृ० ५२।

सबकी सब फेल हो गई और 'गूलर-विज्ञान' भी फेल हो गया। यह विचित्रता रोगी और औषध बाँटनेवालो के द्वारा मुझे ज्ञात हुई। फिर मेरे विचारने पर समझ पड़ा कि रोगी के चहूदाँत मे जो गड्ढा है उसमे विकृत सड़ा मास आदि का अंश है जिससे पार होकर औषध का अंश रुधिर तक नही पहुँच सकता था। मैंने उस गड्ढे मे एक दो मिनट तुत्थ (तूतिये) का बहुत छोटा टुकडा रखवाकर निकलवा दिया जिससे विकृत मांस आदि अलग हो गये, फिर 'उदुम्बर-पत्ररस' का फाहा रखवा दिया जिससे दाँत का दर्द जाता रहा।[1]

चमकलाल चौधरी

आप भागलपुर-जिला के पोठिया' (थाना कहलगाँव) नामक ग्राम के निवासी पं० सोखीलाल चौधरी के पुत्र है। आपका जन्म सन् १२९८ साल (सन् १८९१ ई०) की अग्रहण शुक्ल-एकादशी को हुआ था।[2] आपकी शिक्षा सेकेण्ड ईयर तक हुई थी। इसके पूर्व आपने मधेपुरा ट्रेनिंग स्कूल से ट्रेनिग की परीक्षा पास कर ली थी। आपकी एक ही पुस्तकाकार कृति 'लाल कीर्त्तन-कुसुम' प्राप्त होती है।

उदाहरण

(१)

जय हो रामचन्द्र भगवान।

चन्द्रानन कच घुँघरवारे, भाल तिलक-दुति दृग रतनारे।

भृकुटी कुटिल रेख बर बाँकी, नासा कीर समान॥

श्याम गात गुण-मन्दिर सुन्दर, दाड़िम दशन रसन बिम्बाधर।

कल कपोल श्रुति कुण्डल शिर मृदु सुचि, राजत क्रीट मुकुट महान॥

---

१. 'आरोग्य-प्रकाश' (श्रीचन्द्रशेखरधर मिश्र, सं० १९९८ वि०), पृ० ५६।

२. विभाग में सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

वृषभ-कन्ध बल-निधि भुज-दण्डन, शंकर-चाप-प्रताप-सुखण्डन ।
सुर-मुनि-सुरभि-विप्र-जन-त्राता, दलन असुर-सन्तान ।।
पीताम्बर की कछनी काछत, कोटि काम उपमा छबि लाजत ।
'लाल' परम धन सब भूत के, सिया-रमन जग-प्रान ।।[1]

(२)

चन्द्र-छटा-सी अटा यह को, लट नागिनि-सी लटकाय रही ।
कटि ऐंचि उरोजन-भार अहो, नव मीन मयङ्क नचाय रही ।
हटती नहि हाय हराये किसे, बरजोर चकोर बझाय रही ।
चख 'लालन' हेरि हरी जबही, लपकी-छपकी सरमाय रही ।।[2]

छत्रधारी सिंह 'शारद'[3]

आप मुँगेर-जिला के 'मलयपुर' (मल्लेपुर) नामक स्थान के निवासी बाबू सर्वजीत सिंह के पुत्र थे । आपका जन्म स० १९१२ वि० (सन् १८५५ ई० की भाद्र शुक्ल-चतुर्थी को हुआ था ।[4] आपकी शिक्षा उर्दू-फारसी के माध्यम से हुई थी । किन्तु, भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र एव बाबू रामदीन सिहजी के प्रभाव से आप हिन्दी पढने लिखने की ओर प्रवृत्त हुए । शास्त्रीय संगीत मे पूर्ण प्रवेश होने के कारण आपने मुख्य रूप से राग-रागिनियो पर आधृत गीतो की रचना की है । आपके ऐसे ही राधा-कृष्ण सम्बन्धी गीतो का एक संग्रह 'रसिक-मन-रजन' नाम से सन् १९२१ ई० मे प्रकाशित हुआ था । आप स० १९६१ वि० (सन् १९०४ ई०) की पौष शुक्ल एकादशी को परलोकगामी हुए ।

उदाहरण

(१)

कैसे कटे री आलि, पावस की रतियाँ ।
दामिनि दमकि मोर जिया डरपावे री ।।

---

१. विभाग में सुरक्षित सामग्री से ।

२. वही ।

३. आपके पुत्र श्रीअयोध्याप्रसाद सिंह भी साहित्यकार थे, जिन्होंने 'ललित-मनोरमा' (उपन्यास), 'जय-जगदम्ब' और प्रेम-महिमा' नामक तीन पुस्तकों की रचना की थी ।

४. आपके पौत्र प्रो० ललितकिशोर सिंह (काशी हिन्दू-विश्वविद्यालय) से प्राप्त सूचना के आधार पर ।

निशि कारि अँधियारि,
दादुर को झनकार।
'शारद' के बिनु देखे,
फाटत है छतियाँ॥'[1]

छात्रानन्द मिश्र

आप गया-जिला के 'उतरेन' (पो० टिकारी) नामक स्थान के निवासी प० रामेश्वर मिश्र के पुत्र है। आपका जन्म सं० १९२७ वि० (सन् १८७० ई०) की वैशाख शुक्ल षष्ठी को हुआ था।[2] ग्रामीण पाठशाला की प्रारम्भिक शिक्षा समाप्त कर आपने मकसूदपुर के पण्डित शिवप्रसाद मिश्र से शिक्षा प्राप्त की। लगभग बीस वर्ष की आयु मे आपने 'काव्यतीर्थ' एव 'स्मृतितीर्थ' की परीक्षाएँ दी और दोनो मे सर्वप्रथम स्थान प्राप्त किया। इसके, बाद आप क्रमश: गया के हरिदास सेमिनरी (टाउन-स्कूल) और टेकारी-राज हाइ स्कूल के अध्यापक हुए। आपका साहित्यिक जीवन अध्यापन-काल से ही आरम्भ होता है। आपकी गणना संस्कृत-हिन्दी के प्रतिभाशाली साहित्यकारो मे होती है। आपके द्वारा लिखित हिन्दी-पुस्तको के नाम ये है— (१) सुदामाचरित्र (नाटक), (२) प्रतिभा (उपन्यास), (३) कथामंजरी (४ राधाविनोद (नाटक), (५) लघु भाषा व्याकरण, (६) समस्या सग्रह और (७, अनिरुद्ध-चरित्र।[3] आपकी रचना के उदाहरण नही मिले।

छेदीलाल झा 'सेवक'[4]

आप भागलपुर-जिला के 'वशीपुर' (पो० शम्भुगज) नामक स्थान के निवासी, व्याकरण एवं कर्मकाण्ड के विद्वान् पण्डित दर्शन झा के पुत्र है।[5] आपका जन्म

---

१. पो० ललितकिशोर सिंह (वही) से प्राप्त।—राग जाजवन्ती-झपताला।
२. 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० ६१।
३. आपकी संस्कृत-रचनाओं, में 'काकदूत', 'प्रेमोद्गार' और 'मुहुर्त्त-प्रदीप' मुख्य हैं।
४. 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६४३) में 'छेदी झा' नामक एक साहित्यसेवी 'सिलाव' (पटना)-निवासी बतलाये गये हैं। उन्हें 'नालन्दा' का सम्पादक भी कहा गया है। उक्त ग्रन्थ में ही (पृ० ६७२ ट) भागलपुर (बनगाँव)-निवासी एक और छेदी झा (द्विजवर) की चर्चा है, जिन्होंने 'गंगालहरी' सटीक और 'मिथिला की वर्त्तमान दशा' नामक पुस्तकों की रचना की थी।
५. आपके प्रपितामह मिथिला के 'तरौनी'-ग्राम से आकर दक्षिण भागलपुर के 'वंशीपुर' नामक स्थान में आ बसे थे।

स० १९५३ वि० (सन् १८९६ ई०) को कार्तिक शुक्ल-त्रयोदशी को हुआ था।[1] आपने पटना ट्रेनिंग-स्कूल से नार्मल' और प्रयाग-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन से 'विशारद' की परीक्षाएँ पास की है। इसके अतिरिक्त, आपको 'हिन्दी-भूषण' और 'मानस-मधुप' आदि उपाधियाँ भी प्राप्त है। आपने अपने जीवन-काल मे पचास के लगभग पुस्तकालयो की स्थापना की है। पुस्तकालयो के संगठन के प्रति आपकी विशेष अभिरुचि है। आपकी गणना असहयोग-आन्दोलन और बयालीस की क्रान्ति के कर्मठ सिपाहियो मे होती है। आपने शिक्षक-सघ के माध्यम से हिन्दी मे उच्च शिक्षा दिलाने का अथक परिश्रम किया था। 'श्रीरामचरितमानस' को अपने जीवन का आदर्श-ग्रन्थ मानकर आप साहित्य-सेवा की ओर प्रवृत्त हुए। आपकी स्फुट गद्य-पद्य-रचनाएँ, पाटलिपुत्र', 'प्रताप' भारत-सुदशा-प्रवर्त्तक', 'जनक', आर्यावर्त्त', 'मयक', 'प्रभाकर', 'देश' आदि पत्र पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुई थी। आपकी रचना के उदाहरण नही प्राप्त हुए।

छोटेलाल भैया

आप गया-जिला के 'नवागढी' नामक स्थान के निवासी पण्डित किशनलाल भैया के पुत्र है। आपका जन्म स० १९४० वि० (सन् १८८३ ई०) की भाद्र शुक्ल-चतुर्दशी को हुआ था।[2] आपकी शिक्षा घर पर ही हुई थी। आपने काव्यशास्त्र का अध्ययन अपने घर पर ही किया था। आपकी प्रकाशित पुस्तकाकार रचनाएँ निम्नलिखित दो है—(१) राधा-विरह तथा (२) शख-ध्वनि (वर्णाश्रम-धर्म-समर्थन)। आपकी रचना के उदाहरण भी हमे नही प्राप्त हुए।

जंगबहादुर सिंह अष्ठाना 'जयरामदास'

आप मुजफ्फरपुर-जिला के ग्राम 'कोटिया-अवधनन्दन'-निवासी मुशी लक्ष्मणदयाल सिंह[3] के पुत्र थे। आपका जन्म स० १९२१ वि० (सन् १८६४ ई०) की भाद्र शुक्ल-अष्टमी (शुक्रवार) को हुआ था।[4] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा शिवहर के राजकुमारो के साथ फारसी मे हुई। सन् १८८१ ई० मे मिडिल वर्नाकुलर पासकर सरकारी वजीफे के

---

१ आपके द्वारा प्रेषित सूचना के अनुसार।

२ 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० ६४१।

३ ये शिवहर-राज्य (मुजफ्फरपुर) में नजीर के पद पर थे और इनकी गणना प्रभावशाली व्यक्तियों में होती थी।

४. आपके ज्येष्ठ पुत्र श्रीअवधनन्दनप्रसाद सिंह द्वारा दिनांक ७ मई, सन् १९५६ ई० को प्रेषित विवरण के अनुसार।

साथ सन् १८८७-८८ ई० मे आपने प्रथम श्रेणी मे प्रवेशिका की परीक्षा पास की। अपने पिता की मृत्यु के कारण आप आगे नही पढ सके। इसके बाद आप अनेक पदो पर कार्य करते रहे। अनेक दिनो तक आप बेतिया-राज के सर्वे-सुपरवाइजर और 'कोर्ट-ऑव-वार्ड्स' मे तहसीलदार के पद पर थे। कुछ दिनो के लिए आपने ऑनरेरी मजिस्ट्रेट के पद पर भी कार्य किया। आपने रामनगर-राज मे कुछ काल तक मोख्तारी भी की। तत्पश्चात् गृहस्थाश्रम समाप्त कर और पञ्च-संस्कार लेकर अवधवास करने लगे। वही आपके जीवन के अन्तिम बाईस वर्ष व्यतीत हुए। इस अवधि मे आपने मुख्यत भक्ति-सम्बन्धी ही लेख लिखे, जिनमे अधिकाश 'कल्याण' (गोरखपुर) मे प्रकाशित हुए। आपके भक्ति सम्बन्धी कई लेख अखिलभारतीय साधु समाज से पुरस्कृत भी हुए थे। आपने कुछ पुस्तको की भी रचना की थी, जिनमे ये प्रमुख है—(१) ललित भागवत[1] (२) भक्तमाल-भूषण[2], (३) मानस-मुखबन्धु-प्रकाश[3], (४) ललित-रामायण, (५) रामायण शब्द-सग्रह, (६) बाल-विवाह, (७) श्रीचारधाम-यात्रापाठ, (८) ज्ञान-गीता,[4] (९) बृहत् मानस-शकामोचन, (१०) लीलारामायण और (११) माया-वर्णन।[5] आप सन् १९४७ ई० के ६ सितम्बर को साकेतवासी हुए।

उदाहरण

(१)

रामायण मे सबसे उत्तम गुण यह है कि इससे लोक व परलोक दोनों सुधरता है। परलोक सुधारना तो सब कोई जानते ही है कि इसको कहने-सुनने व समझने से पतित भी पावन हो अपार संसार को गोपदसम पार कर परमपद को जाता है, पर इससे लोक कैसे सुधरता है सो सुनिए—गुरु, माता, पिता, भाई, पुरुष, स्त्री, स्वामी, सेवक, शिष्य, शत्रु, मित्र इत्यादि के यथायोग्य बर्ताव से व साहस, धैर्य, क्षमा, दया, सन्धि, विग्रह इत्यादि के उचित व्यवहार से लौकिक कार्य चलता है। इन्ही सबों के सुधरे रहने से सब कार्य सुन्दर

---

१. १८ स्कन्ध भागवत की पद्यबद्ध-टीका। अप्रकाशित और आपकी धर्मपत्नी श्रीमती जानकीदेवी की पावन-स्मृति में स्थापित श्रीजानकी सार्वजनिक पुस्तकालय (कोठिया-अवधनन्दन) में सुरक्षित।

२. नाभादासजी-कृत 'भक्तमाल' की गद्य-पद्य-टीका। अप्रकाशित और वही सुरक्षित।

३. अप्रकाशित और उक्त पुस्तकालय में ही सुरक्षित। यह पुस्तक हिन्दी-भवन, सतना (राजपूताना) से प्रकाशित होनेवाली थी।

४. पुस्तक-सख्या ४, ६, ७ और ८ प्रकाशित।

५ 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६६१) में आपकी दो और रचनाओं का उल्लेख है। उनके नाम हैं—'पत्रप्रकाश' और 'छत्रबन्ध'।

होता है व इनमें भेद पड़ने से चित्त में खेद, कार्य मे विघ्न, धन में हानि व मर्यादा मे निचाई होती है । इन सब विषयो मे अधिक विभेद प्र य: ग्राम ही मे देखा जाता है। वह किस प्रकार होना चाहिए सो श्रीगोस्वामीजी अपने अमूल्य विभव श्रीरामायणजी मे अत्युत्तम रीति से विस्तार पूर्वक लक्षित कर दिये है ।[1]

(२)

शिवजी कहते है—हे पार्वती, जिसको मोह रूपी पिसाच ग्रसे है, जो पाखंडी है, जो हरिपद विमुख है, और जिसको सत्यासत्य का कुछ विचार नही है, वैसा अधम नर मोह के वश होकर कहता है कि जिसको वेद गाता है, जिसको मुनि लोग ध्यान धरते है वह दशरथ पुत्र राम नही वरन् कोई दूसरा राम है और वैसा ही मनुष्य इस बात को सुनता व सुनकर विश्वास भी करता है। अब तुम जो वही बात कही हो, उसको यद्यपि मै जानता हूँ कि तुम मोह से नही वरन् कथा सुनने के प्रेम से कही हौ, तथापि मुझे यह एक बात अच्छी नही लगी है कि कथा सुनने की अभिलाषा से तुमने मेरे इष्टदेव मे संदेह किया है ।[2]

(३)

आयो मास असाढ सखी ।
वर्षै घन नीर सोहावन लागे ।
चहूँ ओर में दादुर सोर करै
बन मोर बोले व पपीह अभागे ।।
जौवन जोर करै बिनु कंत के
सोय रती-पति व्याकुल जागे ।

---

१ 'बृहत् मानसशंका-मोचन' (श्रीबाबाजयरामदासजी, सं० १९९० वि०), पृ० २।
२ वही, पृ० ८४।

जंगी पिया विनु कैसे जिवो
बिरही को असाढ सतावन लागे ॥[1]

(४)

जन्मही से भोगत हौ कठिन कलिकाल दुख,
सहत हौ माया प्रपच अकुलाय के।
क्षण ही क्षण सोच लगि अन धन अरु परिजन की,
स्वारथ बस सबही परमारथ भुलाय के ॥
नष्ट भयो ज्ञान सब सुगति सुधार का,
दिवस निसि फूला मन अघही अघाय के।
कहता जयराम तनि अजहूँ तो सुनो नाथ,
ऐसे ही बितैहौ कि चितैहौ चित लाय के ॥[2]

(५)

द्वादस वर्ष अवध प्रभु बसिकै मातु पिता हर्षाये।
रामचन्द्र अभिषेक करन हित दशरथ साज सजाये ॥
सुरपुर देव विचारन लागे राम तिलक जौ होई।
रावन अधिक उपद्रव करिहै नहि बचिहे सुर कोई ॥
अस विचारि सब सम्मति करि के सारस्वत गोहराये।
प्रगटी आय तत्क्षण वाणी जब सब विनय सुनाये ॥
कह देवन सुनु आदि भवानी सुर हित कारज कीजै।
जेहि ते राम तिलक नहि पावै करि अस जस लीजै ॥[3]

---

१. 'बाल-विवाह' (जगबहादुर सिंह, प्रकाशन-काल नहीं), पृ० ११।
२. 'श्रीचारधाम यात्रा-पाठ' (श्रीबाबाजयरामदास, प्रकाशन काल नहीं), पृ० ४८।
३. 'ललित-रामायण' (श्रीबाबाजयरामदास, प्रकाशन-काल नहीं), पृ० ३।

जगतनारायण

आप सारन-जिला के 'दोन' नामक स्थान के निवासी मुशी नोखेलालजी के पुत्र थे। आपका जन्म स १९५२ वि० (सन् १८९५ ई०) की भाद्र शुक्ल त्रयोदशी रविवर को हुआ था।[१] आपकी आरम्भिक शिक्षा गाँव के स्कूल मे ही हुई। उसके बाद, आप हथुआ राज (सारन के ईडन-स्कूल मे चले आये, जहाँ से आपने उर्दू-फारसी के साथ सन् १९१४ ई० मे प्रवेशिका-परीक्षा पास की और प्रथम श्रेणी का स्कॉलरशिप प्राप्त किया। सन् १९१८ ई० मे आपने पटना कॉलेज से बी० एस्-सी० (ऑनर्स) की परीक्षा स्कालरशिप-सहित पास की। एम्० एस्-सी० की परीक्षा की तैयारी आपने भौतिकशास्त्र मे की थी, किन्तु सन् १९२० ई० के असहयोग-आन्दोलन में सम्मिलित होने के कारण आप परीक्षा नही दे सके। आपने कुछ दिनो तक पटना-कॉलेज के भौतिक शास्त्र विभाग मे प्रयोगशाला-सहायक के पद पर भी कार्य किया था। सन् १९२१ से २४ ई० तक आप पटना-जिला-कॉंगरेस कमिटी के क्रमशः मन्त्री, उपसभापति तथा सभापति रहे। इसी समय, आपने पटना के प्रसिद्ध सदाकत-आश्रम के राष्ट्रीय महाविद्यालय मे 'भौतिक-शास्त्र' के प्राध्यापक-पद पर भी काम किया। इसके साथ ही आप बिहार प्रान्तीय कॉंगरेस कार्यकारिणी-समिति के सम्मानित सदस्य और सहायक मन्त्री भी रहे। तत्पश्चात् कुछ दिनो के लिए कॉंगरेस से अलग होने पर आपने पुन उसकी सदस्यता स्वीकार की। इस बार आपने शान्तिपूर्ण अवज्ञा-आन्दोलन मे जमकर भाग लिया, जिसके परिणामस्वरूप आपको दो बार जेल भी जाना पडा। जेल से निकलने के कुछ दिनो बाद आप पुन: कॉंगरेस से अलग हो गये और थियोसोफिकल सोसाइटी मे अपनी सेवा देने लगे तथा जीवन भर उससे अलग नही हुए। इसी सिलसिले में कुछ समय के लिए आप बिहार थियोसोफिकल फेडरेशन, पटना के मुखपत्र 'मेत्र-मिलाप' और उत्तरप्रदेश थियोसोफिकल फेडरेशन, बनारस के मुखपत्र धर्म-सन्देश' से एक सम्पादक के रूप में सम्बद्ध रहे। सन् १९४२ ई० के दिसम्बर महीने मे आप उक्त सोसायटी के वार्षिकोत्सव मे पटना रहकर आपने एक वर्ष बेसेण्ट थियोसोफिकल स्कूल मे शिक्षक का भी कार्य किया।

आपकी साहित्य-रचना का क्रम तो सन् १९२२ ई० से ही मिलता है, किन्तु सन् १९४९ ई० से आप अपना पूरा समय इस दिशा मे देने लगे। आपके द्वारा लिखित स्फुट रचनाएँ विभिन्न पत्र पत्रिकाओं मे मिलती है। आपके द्वारा लिखित जो पुस्तिकाएँ है, उनके नाम ये है – (१) करॉंची कॉंगरेस के फैसले[२], (२) धर्म-ज्योति[३], (३) चरित्र गठन[४], (४) सत्सगति[५], (५) बडो के प्रति बच्चो का सन्देश[६], (६) परलोक-जीवन[७], (७) परलोक की

---

१. आपके द्वारा दिनाक ११ सितम्बर, सन् १९५५ ई० को प्रेषित विस्तृत विवरण के आधार पर।

२. सन् १९३१ ई० में प्रकाशित। प्र० स्वयं। सरकार द्वारा जब्त।

३. सन् १९३४ ई० में प्रकाशित। प्र० बिहार थियोसोफिकल फेडरेशन, पटना।

४. सन् १९३९ ई० में प्रकाशित। प्र० डायमण्ड जुबली थियोसोफिकल पब्लिशिंग हाउस, पटना।

५. वही।

६. वही। अनुवाद।

७. वही।

कहानियाँ[1], (८) इस्लाम की खूबियाँ[2] (९) सुख की अचूक कुंजी[3] (१०) साधन–चतुष्टय[4], (११) रामजी और भरतजी[5], (१२) कृष्णजी और सुदामाजी (१३ गौतमजी-हंस किसका ?, (१४ श्रीरामजी और केवट (१५) सीताजी और वनवास, (१६ राजा हरिश्चन्द्रजी, (१७ भक्त प्रह्लादजी (१८) बालकृष्ण की लीलाएँ, (१९) अचल ध्रुवजी (२०) बुद्ध भगवान और चता (२१) कृष्णजी की प्रेम-लीलाएँ, (२२) महर्षि वेदव्यासजी[1], (२३) श्रीगौतमबुद्धजी, (२४ श्रीवर्द्धमान महावीरजी, (२५) प्रभु यीसू मसीह, (२६) श्रीगुरु नानकदेवजी, (२७) हजरत मुहम्मद साहब[7], (२८ महात्मा जरथुश्त्रजी (२९) जगद्गुरु शकराचार्य (३०) सर्व-धर्म-समन्वय, (३) भीष्मपितामह (३२) धर्मराज युधिष्ठिरजी (३३) भारतीय सस्कृति, (३४) मै भारतीय हूँ, (३५ मै कौन हूँ, ३६) अद्भुत बालक[8], ३७) साम्प्रदायिकता निवारण[9] (५ भागो म) और (३८ विश्व और व्यक्ति[10] । इन प्रकाशित रचनाओ के अतिरिक्त आपके द्वारा लिखित अनेक पुस्तिकाएँ अभीतक अप्रकाशित ही पडी है।[11] आप सन् १९६६ ई० की १२ फरवरी (शनिवार) को परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

भारतीय संस्कृति की एक बड़ी विशेषता यह भी है कि यहाँ सदा जो कुछ किया जाता है लोक-संग्रह अर्थात् समस्त संसार के कल्याण का भाव सामने रखकर किया जाता है। सार्वभौमिक आत्मीयता अथवा

---

१. सन् १९३८ ई० में प्रकाशित।

२. सन् १९३९ ई० में प्रकाशित। अनुवाद।

३. सन् १९४५ ई० में प्रकाशित। अनुवाद। प्र० आनन्द पब्लिशिंग हाउस, थियोसोफिकल सोसायटी, बनारस।

४. सन् १९४६ ई० में प्रकाशित। अनुवाद। प्र० वही।

५. सन १९४९ ई० में प्रकाशित। प्र० नारायण प्रकाशन-मन्दिर, बनारस। इसके आगे की २१ सख्या तक की पुस्तकें भी सन् १९४९ ई० में, उक्त प्रकाशन सस्था से ही प्रकाशित हुई थी।

६ सन् १९५० ई० में प्रकाशित। प्र० वही। इसके आगे की २७ संख्या तक की पुस्तकें भी सन् १९५० ई० मे उक्त प्रकाशन-सस्था से ही प्रकाशित हुई थीं।

७. सन् १९५१ ई० में प्रकाशित। प्र० वही। इसकी आगे की ३७ सख्या तक की पुस्तकें भी सन् १९५१ ई० में उक्त प्रकाशन सस्था से ही प्रकाशित हुई थीं।

८. पद्य। सन् १९५३ ई० में प्रकाशित। प्र० वही।

९. सन् १९५४ ई० में प्रकाशित। प्र० वही।

१०. सन १९५५ ई० में प्रकाशित। प्र० वही।

११. इनकी संख्या भी कम नहीं है। किन्तु, इनमें अधिकांश अपूर्ण ही हैं। इनकी सूची विभाग के सग्रहालय में सुरक्षित है। ग्रन्थों में दो अनुवाद हैं—पहला Practical Theosophy (श्री सी० जिन-

'वसुधैव कुटुम्बकम्' का ही यह निश्चित फल है। अन्य देशों ने अपना प्रधान लक्ष्य राष्ट्रीयता रखा। इसलिए उनके यहाँ जो कुछ किया गया राष्ट्र के कल्याण का भाव सर्वप्रथम सामने रखकर किया गया। इसका नतीजा यह हुआ कि अपने राष्ट्र के हित के लिए अन्य राष्ट्रो को तबाह करना, उनसे अनुचित लाभ उठाना, उन्हें पददलित बनाये रखना—अन्य राष्ट्रों ने बुरा नही समझा। उनका तो ध्येय ही रहा—'मेरा देश, सही अथवा गलत जिस रास्ते से हो', ऐसी संकीर्ण राष्ट्रीयता के आधार पर और करते वे क्या ?[१]

(२)

वही ईश्वर का अंश है जो प्रत्येक प्राणी के हृदय मे विद्यमान है। भक्त तुलसीदासजी उसे 'ईश्वर अंश जीव अविनाशी' कहते है। कृष्ण भगवान गीता मे बताते है—'ईश्वर. सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।' अर्थात्, 'हे अर्जुन, सभी प्राणियों के हृदय मे ईश्वर बैठा है।' इसलिए अधिकारी पुरुष जिसे आत्म-अनुभव प्राप्त हो जाता है, अर्थात् जो अपना असली स्वरूप जान लेता है वह सब-कुछ आत्मा की दृष्टि से देखने लगता है। फिर, बाहरी भेद-भाव सब उनके लिए मिट जाते है। जिधर वह दृष्टि फेरता है, उसे हर जगह केवल एक सत्ता आत्मा ही दीख पड़ती है। वह समदर्शी हो जाता है। "ब्राह्मण, गाय, हाथी, कुत्ता अथवा चाण्डाल सबमे उसे एक ही सत्ता दीखती है।" वह सबको अपने मे और अपने मे सबको देखता है। ऐसा मनुष्य प्राणिमात्र अथवा सृष्टि-मात्र के साथ

राजदास-रचित) का 'व्यावहारिक ब्रह्मज्ञान' के नाम से और दूसरा Temple Talks (श्री जे० कृष्णमूर्त्ति-रचित) का 'धर्मचर्चा' नाम से।

१ 'भारतीय संस्कृति' (जगतनारायण, सन् १९५७ ई०), पृ० २३।

एक होकर रहता है । वह जो कुछ करता है, सबके हित के लिए करता है । उसकी बात-बात से प्राणिमात्र प्रभावित हो जाते है ।[1]

(३)

आध्यात्मिक जीवन के लिए पवित्रता बडी आवश्यक वस्तु है। ईश्वर का अंश तो प्रत्येक प्राणी के हृदय मे विद्यमान है और वह हर प्रकार से पूर्ण तथा निर्विकार है। विकार तथा मल तो उन आवरणों में होते है जिनसे वह ढका है । इसलिए इन आवरणो को पवित्र बनाना आवश्यक है, ताकि आत्मा की ज्योति शुद्ध रूप मे बाहर प्र ट हो सके।

शरीर की सफाई के लिए नित्य स्नान करना, स्वच्छ वस्त्र पहनना, घर-बाहर साफ सुथरा रखना तथा शुद्ध सात्विक भोजन करना आवश्यक है । इन्द्रियो की पवित्रता के लिये प्रेम, सुन्दरता तथा नि स्वार्थता को जीवन में स्थान देना जरूरी है। मन को पवित्र बनाने के लिए विचार की उदारता, निष्पक्षता तथा घमण्ड से परहेज आवश्यक है।[2]

जगदम्बसहाय श्रीवास्तव

आप मुजफ्फरपुर-जिला के 'अहियापुर' नामक ग्राम के निवासी श्रीमुंशी इन्द्रासनलाल के पुत्र थे। आपका जन्म स० ९४४ वि० को वैशाख शुक्ल चतुर्दशी (बुधवार) को हुआ था।[3] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर हुई थी। तदनन्तर, आपने प्रवेशिका परीक्षा की द्वितोय श्रेणी तक पढकर, पिताजी के स्वर्गवास हो जाने के कारण पढना छोड दिया। विद्यालयो मे व्यवसाय शिक्षा प्राप्त होती थी। घर मे आपके कन्धो पर ही सारा भार आ गया था, अतएव आपने अपने गाँव के ही लक्ष्मीप्रसाद साहजी के सान्निध्य मे रहकर भाषा, पिंगल, अलकार एव रसादि का ज्ञान प्राप्त किया। उन्ही की

१: 'सर्व-धर्म-समन्वय' (जगतनारायण, सन् १९६०), ई० पृ० ३० ।
२. 'महर्षि वेदव्यासजी' (जगतनारायण, सन् १९६० ई०), पृ० २३ ।
३. आपके द्वारा प्रेषित सामग्री के अनुसार ।

स।ति मे रहकर आपको कविता लिखने की प्रेरणा मिली। विद्वान् श्रीसाहजी ने 'तुलसी-साहित्य-सत्सग' नाम की संस्था चलाई थी। आप उसके सदस्य हो चुके थे, उसमे नियमित रूप से भाग लेते थे, और कविता-पाठ किया करते थे। फलत, शनै-शनै आप भी एक अच्छे कवि हो गये।

आपने हिन्दी और व्रजभाषा दोनो मे कविताएं लिखी। आपके द्वारा लिखित कुछ पुस्तकें प्रकाश मे आ चुकी है किन्तु अर्थाभाव के कारण अधिकाश पुस्तके अप्रकाशित रह गई है। अरेराज-माहात्म्य' नामक एक पुस्तक प्रकाशित है। इस पुस्तक के अतिरिक्त 'जगदम्ब सतसई' और 'भारत की आत्मकथा' (अपूर्ण) नामक पुस्तकें अद्यावधि अप्रकाशित है।[1]

उदाहरण

(१)

सत्य बात तो यह है कि प्राचीन समय मे चम्पारण की भूमि घने जंगलों से आच्छादित थी, जिनमे चम्पा वृक्ष अधिक रहे होगे इसलिए इसका नाम चम्पारण्य रक्खा गया, जो अपभ्रंश से चम्पारण कहलाने लगा।

प्राचीन काल मे जब शैव-धर्म का बोलबाला था, बौद्धधर्म का अन्त हो चला था, चम्पारण्य में एक सोमेश्वर नाम के राजा राज्य करते थे जिन्होंने अपनी राजधानी अरण्य मे बनायी, जो अरण्य-राज के के नाम से विख्यात थी और अपभ्रंश से अरेराज कहलाने लगी। इस सोमेश्वर राज के सम्बन्ध में हमारे राष्ट्रपति देशरत्न डा० राजेन्द्र प्रसाद जी ने 'चम्पारन मे महात्मा गान्धी' नाम की पुस्तक मे चम्पारण का सक्षिप्त इतिहास वर्णन करते हुए उल्लेख किया है कि प्राचीन काल में गडक। नदी के उत्तर-तट से लगायत नेपाल राज्य सोमेश्वर पहाड तक 'सोमेश्वर राज' स्थापित था। इस लेख से चम्पारण मे सोमेश्वर राजा का होना निस्सन्देह सत्य है।[2]

---

१. लेखक द्वारा विभाग में प्रेषित एक पत्र के आधार पर।

२ 'अरेराज-माहात्म्य', (श्रीजगदम्बसहाय श्रीवास्तव, स० २००७ वि०), पृ० २।

कुन्द इन्दु समवेत सरीरा, व्याघ्र चम सोहत कटि चीरा।
पच वक्त्र त्रै नैन विशाला, गंग शीश उर नर सिर माला।
भस्म अग भूषण वर व्याला, चन्द्र त्रिपुण्ड विराजत माला।
चारु जनेउ नाग लिपटाए, अजगर अंग सुभग सुहाए।
कर पिनाक त्रिशूल बिराजे, बैल बूढ बाहन वर साजे।
बाम भाग गिरिसुता सुहाई, जग जननी किमि छवि कहि जाई॥[१]

× × × ×

केकी कण्ठ सम तन दुती, मुख मयंक छवि छोर।
विहरत दशरथ अजिर में, जगदम का चितचोर।
नील नीर धर तम दुती दामिन मुकुट अंजोर।
लखि नाचत घनश्याम को, जगदम का मनमोर।
पीत चौतुनी जरकसी, राजत सिर अवधेश।
नील शैल पर जनु प्रभा, शोभत बाल दिनेश॥[२]

जगदीश झा 'विमल'

आप भागलपुर-जिला के 'कुमैठा' नामक ग्राम के निवासी प० कुलानन्द झा के पुत्र थे। आपका जन्म स० १९४८ वि० की भाद्र कृष्णाष्टमी को हुआ था।[३] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा ग्राम की पाठशाला मे ही हुई। उसके बाद आपका नाम जलालाबाद (भागलपुर) के सेकेण्डरी स्कूल मे लिखाया गया। वहाँ की अंतिम परीक्षा मे विशिष्ट

१. 'अरेराज-माहात्म्य' (वही), पृ० ६।
२. विभाग में सुरक्षित 'जगदम्ब सतसई' की अमुद्रित प्रति के पृ० ५ से।
३ 'बिहार के नवयुवक हृदय' (मगलाप्रसाद सिह, स० १९८५ वि०) पृ० ११।
आपके प्रस्तुत-परिचय-लेखन में 'बिहार के नवयुवक हृदय' (वही) में आई सामग्री के अतिरिक्त 'जयन्ती स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ५५१, ५६२, तथा ६०६) 'हिन्दीसेवी-संसार' (वही, पृ० ८८) और विभाग में सुरक्षित विवरण से भी सहायता ली गई है।

योग्यता के साथ सफलता प्राप्त करने के बाद आप नार्मल स्कूल, पटना मे प्रविष्ट हुए। सन् १९१० ई० मे आपने नार्मल की परीक्षा मे सम्पूर्ण प्रान्त के उत्तीर्ण छात्रो मे प्राथमिकता प्राप्त की।[२]

सन् १९११ ई० मे आप भागलपुर क्रिश्चियन मिशन स्कूल मे अध्यापक का कार्य करने लगे और अध्यापन-कार्य मे आपका इतना अनुराग था कि अपने जीवन के अन्तिम दिनो में भी आप जमालपुर रेलवे स्कूल मे अध्यापन करते रहे। सन् १९१४ ई० मे आपने साहित्य-सेवा के क्षेत्र मे पदार्पण किया। उसी समय से आपने देश की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ मे लेख, गल्प तथा कविताएँ लिखना प्रारम्भ किया। आप एकान्त मे रहकर साहित्य-सेवा करना अधिक पसन्द करते थे। आपकी स्फुट रचनाएँ पाटलिपुत्र', 'अभ्युदय', 'प्रताप' 'भारत-मित्र', 'स्वतन्त्र', 'मतवाला', 'हिन्दूपच', मर्यादा' 'सरस्वती', 'माधुरी', मनोरमा', 'आर्यमहिला', 'हिन्दी चित्रमय-जगत', 'हितकारिणी', 'श्रीकमला', 'प्रभा', 'शारदा', 'चाँद' आदि हिन्दी-संसार की प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होती रही।

आपके द्वारा लिखित पुस्तको की संख्या लगभग पचास है। उनमे अधिकाश प्रकाशित पुस्तको के नाम इस प्रकार हैं—'वीणा-झंकार' (कविता), 'पद्य प्रसून' (कविता), 'पद्यसंग्रह' कविता) 'खरा सोना' (उपन्यास), 'जीवन-ज्योति' (उपन्यास, 'लीला' (उपन्यास), 'आशा पर पानी' (उपन्यास), 'दुरगी दुनिया' (उपन्यास), 'रमणी' (कहानी), 'सावित्री' (कहानी), 'तरगिणी' (निबन्ध), 'छाया' (काव्य), गरीब' (उपन्यास), सती-पंचरत्न' (कविता), आदर्श सम्राट्', 'महावीर' आदि। इनके अतिरिक्त आपके अप्रकाशित ग्रन्थो को गणना करने पर आपके द्वारा लिखित पुस्तको की सख्या अस्सी के लगभग हो जाती है।[१]

हिन्दी साहित्य-सेवा के माध्यम से ही आपने समाज और देश की अपूर्व सेवा की है। एकान्त साधना-रत रहकर आपने साहित्य-रचना के क्षेत्र मे महत्त्वपूर्ण योगदान किया। आपकी रचनाओ में पं० रामचरित उपाध्याय और पं रामनरेश त्रिपाठी की-सी शैली की सादगी, शुचिता एवं भाव-प्रेषणीयता है। कविता-पाठ की भी आपकी वही सीधी-सादी शैली थी। स० १९९९ वि० में आपकी इहलीला समाप्त हो गई।

उदाहरण

(१)

विश्व तपस्वी के फलदायक हे शुचि स्वर्ग-द्वार-सोपान,
मोक्षप्रदायक हे गुरु-ज्ञानी अर्थ धर्म हे काम ललाम।
हे कवियों के मार्ग प्रदर्शक काव्यकला के दिव्य प्रकाश,
भावमयी रोचक रचना के अलङ्कार गुण ओज विकास।

---

१ 'मिश्रबन्धुविनोद' (वही, चतुर्थ भाग), पृ० ३६६।

हे विद्वान् हृदयतन्त्री के नीतिपूर्ण न्यारे झंकार,
हे आचार्य ज्ञान-गरिमा के योगी-हिय के योग विचार।
हे दुखियों के दया-निकेतन भाग्यहीन के भाग्य-विधान,
हे अनाथ के आश्रयदाता अन्नहीन के जीवन-प्रान।
अतल सिन्धु के अगम-उदर-सा हे गम्भीर अनन्त प्रशान्त,
रम्य गगन-सा निर्मल न्यारा हे जग विस्तृत अञ्चल प्रान्त।[1]

(२)

निसर श्रृंग से अगम सिन्धुपथ प्रखर वेग से बहती जा,
मूक हृदय की विषम वेदना अन्तस्तल में रहती जा।
अपनी बीती और किसी से नही भूलकर कहती जा,
भग्न-भवन के नग्न दृश्य को अतल उदधितल गहती जा,
तप-तल्लीन तीर तपसी के पावन पदरज लहती जा।
विप्लव बाढ विश्व मे भरने रुक-रुक कर मत बहती जा।
कठिन करारा काट-काट मत टील्हा-टापू भरती जा,
पर-हित-निरत विश्व सेवा मे नीति-प्रीति से सरती जा।[2]

(३)

दीन दुखियों के दुखों को देखकर,
जो हृदय पिघला कड़ापन छोड़कर।
हरने लगा दुख को प्रथम जो बोलकर,
वाणी मधुर सुन्दर सुधा में घोलकर॥

× × ×

---

१. 'बिहार के नवयुवक-हृदय' (वही, पृ० १३।
२. वही, पृ० १५।

दुखशैल भी आकर गिरा सर पर अगर,
करके कड़ा दिल ले उठा सिसका न पर।
गुण से विमल परिपूर्ण यो पाकर सदय,
धन्य कहते विश्व-जन ऐसा हृदय ॥[1]

(४)

अर्थ बताने के पहले बालकों से अर्थ पूछना चाहिए। इससे यह बात ज्ञात हो जायगी कि अर्थ बताने की आवश्यकता है या नही। शिक्षक का बताया हुआ संक्षेप ठीक-ठीक और सरल होना चाहिए। शिक्षक को शब्दार्थ अथवा वाक्यार्थ बताने का यह उद्देश्य होना चाहिए कि जिसमे बालक वाक्यार्थ समझ सके। यह नही कि उन शब्दों के कितने अर्थ है और किसका कहाँ व्यवहार होता है। शब्दार्थ बताने मे कोष का लम्बा-चौड़ा अर्थ नही बताना चाहिए बल्कि वही अर्थ बताना चाहिए जो वहाँ सार्थक हो। शब्दो के गुण या पदार्थ के आदर्श अथवा चित्रों से दिखाना चाहिए। ब्लैकबोर्ड का चित्र बहुत उपयोगी होता है। कभी-कभी धात्वर्थ भी बताना चाहिए। यदि उपमा उपमेय दिया हुआ हो तो उसको स्पष्ट बता देना चाहिए। पाठ विषय को कभी परीक्षा द्वारा या अन्वय के द्वारा समझा देना चाहिए![2]

*

जगन्नाथजी 'मनुज'

आप चम्पारन जिला के 'बेतिया' नामक स्थान के निवासी श्रीबिसुन शाह के पुत्र है। आपका जन्म स० १९५५ वि० (सन् १८९९ ई०) की चैत्र कृष्ण-नवमी (मगल-वार) को हुआ था।[3] आपकी प्राथमिक शिक्षा घर पर ही हुई। तदनन्तर आपका नाम बेतिया-राज उच्चांग्ल विद्यालय मे लिखाया गया, परन्तु सन् १९१८ ई० मे विभिन्न

१. 'विमल प्रसूनांजलि' (जगदीश झा 'विमल', स० १९७६ वि०), पृ० ७।
२. 'आदर्श शिक्षक' (पं० जगदीश झा 'विमल', प्रकाशन-काल अनुल्लिखित), पृ० १०-११।
३ लेखक द्वारा बैशाख कृष्ण ४, सं० २०१३ वि० को प्रेषित सामग्री के अनुसार। आपके पूर्वज सयुक्तप्रान्त,

राजनीतिक व्यवधानो के उपस्थित हो जाने के कारण आपको विद्यालयीय शिक्षा से वंचित रहना पडा। सन् १९४० ई० मे आपने 'हिन्दी-विद्यापीठ', देवघर से 'साहित्य-भूषण' की उपाधि प्राप्त की। काँगरेस की सदस्यता स्वीकार कर सन् १९२४ ई० मे आपने अहमदाबाद की काँगरेस का प्रतिनिधित्व किया। 'बेतिया' के विकास के लिए आपने वहाँ अधिकाधिक सार्वजनिक सस्थाओ को जन्म एव सरक्षण दिया। सन् १९२० ई० मे बेतिया' मे जब बिहार प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का द्वितीय अधिवेशन हुआ था, तब आपने उसमे पूरा सहयोग किया था। आपकी जनसेवा-भावना को देखकर ही सन् १९५४ ई० मे लोगो ने आपको 'बेतिया-नगरपालिका' का सदस्य चुना। यथावसर आपने बेतिया' की विभिन्न सस्थाओ की भरपूर सहायता की। 'बेतिया' की 'श्रीगान्धी-आश्रम', 'नवयुवक-पुस्तकालय' मारवाडी-हिन्दी-वाचनालय', जानकीकुँअर-राजकन्या-विद्यालय', 'हिन्दी-प्रकाशन-समिति' प्रभृति संस्थाएँ आपके ही अथक परिश्रम के फल है।

देश-सेवा के सिलसिले मे असहयोग-आन्दोलन मे भाग लेने के कारण आपको कई बार जेल की यातना भी सहनी पडी है। इसके बाद, आप विपिन-विद्यालय, बेतिया मे शिक्षक के पद पर प्रतिष्ठित रहे। प्रताप'-सम्पादक श्रीगणेशशंकर विद्यार्थी तथा विद्यार्थी'-सम्पादक प० रामजीलाल शर्मा के संसर्ग से हिन्दी साहित्य के क्षेत्र मे आपकी अच्छी प्रगति हुई। सन् १९२० ई० से ही आपने हिन्दी मे लिखना प्रारम्भ किया था। आपने अनेक पुस्तको की रचना की थी, जिनमे अधिकाश अप्रकाशित है। हिन्दी-प्रकाशन-समिति (बेतिया) से प्रकाशित 'प्रकाश' नामक पुस्तक के साथ ही हिन्दी के अनेक पत्रो मे आपके निबन्ध प्रकाशित हैं।[1]

उदाहरण

विश्ववन्द्य महात्मा मोहनदास कर्मचन्द गाँधी की भी क्रान्ति, जो 'असहयोग की लड़ाई' के नाम से सुविख्यात है, शान्तिमय ही है, इनकी क्रान्ति का एक मात्र उद्देश्य परतन्त्रता से उद्धार पाना है। 'गाँधी-क्रान्ति' एक अद्भुत धर्मयुद्ध है, जिसमें मनुष्य को नीति-देवी की वेदी पर नश्वर शरीर को अर्पित कर अपने सिद्धान्त की रक्षा के साथ उद्देश्य को सिद्ध करना है।[2]

वर्त्तमान उत्तरप्रदेश के रायबरेली जिला के रहनेवाले थे। सन् १८५७ ई० के सिपाही-विद्रोह में सब-के-सब शहीद हो चुके थे, परन्तु आपके परदादा श्रीकाली साह जान बचाकर 'बेतिया' चले आये थे।

१. 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही), पृ० ११२।

२. 'प्रकाश', (जगन्नाथजी 'मनुज', सन् १९५४ ई०), पृ० ५।

जगन्नाथप्रसाद 'वैष्णव'

आप मुजफ्फरपुर-जिला के 'बड़कागाँव' नामक ग्राम के निवासी श्रीमेवालाल शाह के पुत्र हैं। आपका जन्म स० १६४८ वि० (सन् १८९१ ई०) की चैत्र शुक्ल-प्रतिपद् तिथि को हुआ था।[1] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। तदुपरान्त, आपकी उच्च शिक्षा विद्यालयो के माध्यम से न हो सकी। आपने स्वाध्याय के बल पर हिन्दी मे लिखना प्रारम्भ किया। स० १६७० वि० से आपकी रचनाएँ प्रकाश मे आईं। आपका कार्य सकीर्त्तन-प्रचार के लिए हुआ। अतएव, आपकी कार्य-क्षमता देखकर अ० भा० सकीर्त्तन सम्मेलन ने आपको 'नामप्रचारक' की उपाधि से विभूषित किया। इसके अतिरिक्त आपने अपने समाज का भी पूरी निष्ठा के साथ कार्य-सम्पादन किया, जिसके परिणाम-स्वरूप वैश्य-महासभा' ने आपको 'उपदेशक' की उपाधि से अलकृत किया था। आप साधु सेवा कार्य मे भी सलग्न थे। 'साधु-महासभा' ने आपको 'वैष्णवराज' की उपाधि दी थी।

आपके द्वारा लिखित रचनाएँ अधिकतर प्रकाशित हो चुकी है। आपने 'रौनियार-वैश्य' नामक मासिक पत्रिका का सम्पादन-कार्य भी किया था। इस पत्रिका के अतिरिक्त 'सकीर्त्तन-समाचार' और 'भक्ति-प्रचार' नामक पत्रिकाएं भी आपने प्रकाशित करवाई थी। सकीर्त्तन एवं भक्तिपरक रचनाओ का प्रकाशन ही आपके जीवन का व्यसन था। आपने करीब दो दर्जन भजन एवं सकीर्त्तन की पुस्तके लिखी। इनमे प्रमुख के नाम इस प्रकार है— (१) 'जन्मबधैया-सकीर्त्तन,'[2] (२) 'विवाह-सकीर्त्तन,[3] (३) 'झूलन-संकीर्त्तन,'[4] (४) 'होली-संकीर्त्तन',[5] (५) 'चैती-संकीर्त्तन '[6] (६) 'चेतावनी-संकीर्त्तन,'[7] (७) 'सन्तवाणी-सकीर्त्तन',[8] (८) 'नाम-सकीर्त्तन'[9], (९) 'राधाकृष्ण-संकीर्त्तन',[10] (१०) 'शिव-संकीर्त्तन',[11] (११) 'शक्ति-संकीर्त्तन',[12] (१२) 'महावीर-संकीर्त्तन'।[13]

उपर्युक्त पुस्तको के अतिरिक्त आपकी स्फुट रचनाएँ पत्र-पत्रिकाओं मे प्राप्त होती है। सम्प्रति आप अयोध्या-वास कर रहे है।

---

१ विभाग में सुरक्षित लेखक द्वारा दिनाक ३ फरवरी, सन् १९५७ ई० को प्रेषित विवरण के अनुसार।

२ प्रकाशन-काल स० १९८६ वि० प्र० श्रीरामलोचनशरण, वैदेही-कुटीर, लहेरियासराय, दरभगा।

३ प्रकाशन-काल : स० १९८७ वि०, प्र० वही।

४. प्रकाशन-काल : स० १९८६ वि०, प्र० वही।

५. प्रकाशन-काल : स० १९८४ वि०, प्र० वही।

६ प्रकाशन-काल : स० १९८२ वि०, प्र० वही।

७. प्रकाशन-काल : स० १९८२ वि०, प्र० वही।

८. सम्पादक : श्रीजटाधरप्रसाद शर्मा 'विकल', प्र० श्रीवैदेहीशरण, हिन्दी पुस्तक-भण्डार, लहेरिया-सराय, दरभगा।

९. प्रकाशन-काल : स० १९८५ वि०, प्र० श्रीरामलोचनशरण, लहेरियासराय, दरभगा।

१० प्रकाशन-काल : स० १९८४ वि०, प्र० वही।

११ प्रकाशन-काल : सं० १९८५ वि०, प्र० वही।

१२. प्रकाशन-काल : स० १९८३ वि०, प्र० वही।

१३. प्रकाशन-काल : सं० १९८३ वि०, प्र० वही।

उदाहरण

(१)

श्री रघुनन्दन के पद पंकज,
भक्ति नहीं जिनके उर माहीं ।
सो नर गर्भ में क्यों न मुआ,
पुनि जन्मत काल मरे क्यों नाहीं ।
भार भयो महिमण्डल को,
पुनि शेष सहस्र फनी अकुलाहीं ।
रामदयाल भजो भगवन्तहिं,
मानुष जन्म वृथा चलि जाहीं ॥[१]

(२)

सुन सखि वर्षा ऋतु मन भाई,
काम काज सब छोड़ जगत के, निशदिन सुरत जमाई ।
त्रिकुटि महल में चढ़ि कर देखा, बिजली चमक दरसाई ।
अनहद गर्जन होत गगन में सुन सुन मन हरषाई ।
आहत बून्द पड़त सुखदायी भवमय तपन मिटाई ।
ब्रह्मानन्द स्वरूप समायो तन मन सुध बिसराई ॥[२]

(३)

इस कलिकाल में मनुष्यों के उद्धार के लिए सबसे सरल और सुखद उपाय श्री भगवान की कीर्त्तियों का कीर्त्तन ही है । इससे सरल और उपादेय उपाय का आधार कोई हो ही नहीं सकता । इस

---

१. 'रामविवाह-संकीर्त्तन' (जगन्नाथप्रसाद 'वैष्णव', सं० १९८७ वि०), पृ० ६ ।
२. 'झूलन-संकीर्त्तन' (जगन्नाथप्रसाद 'वैष्णव', सं० १९८६ वि०), पृ० १० ।

युग में और युगो की तरह तपस्या और यज्ञादि शुभ कर्मों की आवश्यकता नही रही, केवल परमात्मा के गुणगान करने से ही इस भवसागर से पार हो सकते है। शास्त्रो मे कहा भी है—'कलौ तद्हरिकीर्त्तनम्'।[1]

जगन्नाथप्रसाद मिश्र

आप दरभंगा-जिला के 'पतोर' नामक ग्राम के निवासी प० श्रीरामउदार मिश्रजी के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९५३ वि० (सन् १८९६ ई०) की आषाढ शुक्ल-सप्तमी को हुआ था।[2] आपकी आरम्भिक शिक्षा गाँव की पाठशाला मे ही हुई। तत्पश्चात् स्कूली शिक्षा के लिए आप दरभंगा जिला-स्कूल मे चले आये, जहाँ से आपने प्रथम श्रेणी मे प्रवेशिका की परीक्षा पास की। आपकी उच्च शिक्षा क्रमश मुजफ्फरपुर, पटना और कलकत्ता मे हुई। एम्० ए० की परीक्षा मे आप प्रथम श्रेणी मे प्रथम हुए। आगे चलकर आपने वकालत की परीक्षा भी पास की।

अपनी छात्रावस्था मे ही (सन् १९२०-२१ ई०) आप कलकत्ता-समाचार' के 'सहकारी सम्पादक'-पद पर काम करने लगे थे। कई वर्षों तक आप 'भारत-मित्र' कलकत्ता के भी कार्यवाह सम्पादक' रहे। सन् १९३१ ई० मे 'सहायक सम्पादक' के रूप मे आप दैनिक 'विश्वबन्धु' (कलकत्ता) और मासिक 'विशाल भारत' (कलकत्ता) से भी सम्बद्ध रहे। फिर, सन् १९३२ से ३८ ई० तक आपने मासिक 'विश्वमित्र' (कलकत्ता) के प्रधान सम्पादक पद को सुशोभित किया। आगे चलकर सन् १९४८ ई० मे आपने बिहार के सुप्रसिद्ध मासिक 'हिमालय' का भी सम्पादन किया। सन् १९५० से ५१ ई० तक आप दैनिक 'राष्ट्रवाणी' (पटना) के प्रधान सम्पादक-पद पर रहे। सम्पादक के रूप मे आपका सम्बन्ध मिथिला के मासिक 'विदेह' और पटना के 'पुस्तकालय' से भी रहा। इस दीर्घकालीन सम्पादकीय अनुभव के आधार पर आपकी गणना बिहार के कुशल सम्पादको मे की जाती रही है।

आप एक अध्यापक के रूप मे भी सुपरिचित थे। सन् १९३८ से ४९ ई० तक आप दरभगा के चन्द्रधारी मिथिला-कॉलेज मे हिन्दी-विभागाध्यक्ष-पद पर नियुक्त थे। आपने सन् १९५९ से १९६७ ई० तक दरभगा के महारानी रमेश्वरी महिला-महाविद्यालय मे प्राचार्य-पद को सुशोभित किया। सेवा-निवृत्त होकर आप लेखन मे निरन्तर दत्तचित्त रहे।

---

१ 'चेतावनी-सकीर्त्तन' (जगन्नाथप्रसाद 'वैष्णव', स० १९८२ वि०, भूमिका), पृ० ३४।

२ आपके द्वारा दिनांक ११ जून, सन् १९६८ ई० को प्रेषित विस्तृत विवरण के अनुसार। उक्त विवरण के अतिरिक्त आपके परिचय-लेखन में 'मिश्रबन्धुविनोद' (वही, चतुर्थ खण्ड, पृ० ९२-९३); 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० २०७); 'हिन्दीसेवी-ससार' (वही, पृ०), 'बिहार-अब्दकोश' (वही, पृ०

आपके जीवन का राजनीतिक पक्ष भी द्रष्टव्य है। आपने सन् १९२० ई० के असहयोग-आन्दोलन मे भाग लेने के लिए कॉलेज की पढाई छोड दी थी। सन् १९३० ई० मे भी आपने अपनी वकालत छोडकर सत्याग्रह-आन्दोलन मे भाग लिया था, जिसके परिणामस्वरूप आपकी वकालत की लाइसेंस जब्त कर ली गई थी और आपको जेल की सजा भुगतनी पडी थी। सन् १९५२ से ६२ ई० तक आप बिहार-विधान-परिषद् के मनोनीत सदस्य रहे। अपने जीवन-काल मे आप जिन प्रमुख संस्थाओ से सम्बद्ध रहे, उनमे उल्लेखनीय हैं—बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, आकाशवाणी, बिहार-विश्वविद्यालय-सिनेट, बिहार-हिन्दी-प्रगति-समिति, हिन्दी-विज्ञ-समिति, बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन तथा बिहार-राज्य पुस्तकालय-संघ। बिहार-हिन्दी-साहित्य सम्मेलन के बीसवें अधिवेशन (मुजफ्फरपुर) के सभापति-पद को आपने ही अलकृत किया था। बिहार राज्य-पुस्तकालय-संघ के तो सन् १९५१ ई० से ही आप अध्यक्ष थे।

आपकी साहित्यिक सेवा का आरम्भिक वर्ष सन् १९१४ ई० बतलाया जाता है। अपने स्कूली जीवन से ही आप काव्य-रचना करने लगे थे। आपकी स्फुट गद्य पद्य-रचनाएँ 'मिथिला-मिहिर' (दरभंगा), 'प्रताप' (कानपुर), 'मर्यादा (प्रयाग), 'सत्ययुग' (मुजफ्फरपुर), 'विशाल भारत' (कलकत्ता), 'विश्वमित्र' (कलकत्ता) आदि पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित मिलती है। आपकी पुस्तकाकार प्रकाशित रचनाओ के नाम इस प्रकार है—(१) समाजवाद क्या है,[१] (२) जानते हो ?,[२] (३) बच्चो का चिडियाखाना,[३] (४) जीवन देवता की बाणी,[४] (५) एक ही दुनिया,[५] (६) साहित्य की वर्त्तमान धारा,[६] (७) जीवन और जगत्,[७] (८) मनुष्य की मर्यादा,[८] (९) प्रेम और दाम्पत्य[९] (१०) राजनीति-विज्ञान[१०] (११) साहित्य-विवेचन,[११] (१२) महान् मनीषी,[१२]

---

६६१), बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् की उद्घाटन-समारोह-स्मारक-पुस्तिका और कविवर श्रीकेदारनाथमिश्र 'प्रभात' द्वारा लिखित अँगरेजी-परिचय ('सर्चलाइट', दैनिक दिनांक ४ जून, सन् १९६१ ई०) से भी सहायता ली गई है।

१ प्रकाशन-काल : सन् १९३९ ई०, प्र० हिन्दी-भवन, सलकिया, हावडा।

२ प्रकाशन-काल : सन् १९४० ई०, प्र० पुस्तक-भण्डार, लहेरियासराय, दरभगा।

३. वही।

४. प्रकाशन-काल : सं० १९८७ वि०, प्र० वाणी-मन्दिर, छपरा।

५ प्रकाशन-काल : सन् १९४५ ई०, प्र० संचयिनी, २४ स्ट्राण्ड रोड, कलकत्ता। यह 'Wendel wilk' लिखित 'One world' नामक अँगरेजी-पुस्तक का हिन्दी-अनुवाद है।

६. प्रकाशक : ग्रन्थमाला कार्यालय, बाँकीपुर, पटना।

७ प्रकाशन-काल : सन् १९५१ ई०, प्र० हरिदास ऐण्ड कम्पनी, पटना और मथुरा।

८. प्रकाशन-काल : सं० २००४, वि०, प्र० ग्रन्थमाला-कार्यालय, बाँकीपुर, पटना।

९. प्रकाशन-काल : सन् १९५० ई०, प्र० सुदर्शन प्रेस, दरभगा। इसका पॉकेट-संस्करण नर-नारी-प्रकाशन, पटना-५ से हुआ था।

१० प्रकाशन-काल : सं० २००८ वि०, प्र० अजन्ता प्रेस, बाँकीपुर, पटना।

११. प्र० वही।

१२. प्रकाशन-काल : सन् १९५८ ई०, प्र० आत्माराम ऐण्ड सन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली-६।

(१३) स्वाभिमानी,[1] (१४) प्रेम-प्रपंच,[2] (१५) साहित्य की आधुनिक प्रवृत्तियाँ[3], (१६) रवीन्द्रनाथ ठाकुर[4], (१७) दुर्वासा,[5], (१८) विश्वामित्र[6], (१९) व्यास और (२०) अगस्त्य[7]। आपकी एक और रचना साहित्य-विविधा' प्रकाशन के लिए तैयार है। आप सन् १९७० ई० की २८ जनवरी को अकस्मात् परलोकगामी हो गये।

उदाहरण

(१)

कवि क्रान्तदर्शी हुआ करते है। कार्लाइल ने कवि और भविष्य-वक्ता को एक श्रेणी मे रखा है। संस्कृत की एक उक्ति है, कवयः किं न पश्यन्ति' अर्थात् कवि क्या नही देखते, वे सबकुछ देख सकते है। उनकी दृष्टि सीमित विश्व को अतिक्रान्त करके असीम को प्रत्यक्ष कर सकती है और उसके रहस्यो का उसी प्रकार उद्घाटन कर सकती है, जिस प्रकार दृश्य जगत् के रहस्यो का। कवि केवल चर्म-चक्षु से नही देखता, मर्मचक्षु से भी देखता है। कल्पना का उसका तृतीय नेत्र जब खुल पड़ता है, उस समय सृष्टि के यावतीय पदार्थ उसके सामने उद्भासित हो उठते है। उनमे एक अपूर्व सौंदर्य, अभिनव रूप-माधुर्य लहराने लगता है। उसकी स्वप्न-माधुरी के स्पर्श से साधारण से साधारण वस्तु भी अपूर्व एवं अनुपमेय बन जाती है। कवि के काव्य को पढकर यदि हमारा कौतूहल-भाव ही उद्दीप्त होता, तो अवश्य ही उसमे हमे उसी हद तक आनन्द-लाभ होता, जिस हद तक हमें किसी खेल-तमाशे से होता है। किन्तु बात ऐसी नही है। काव्य के रसास्वादन से हमारे हृदय मे जो आनन्द एवं सौन्दर्य-वृत्ति जागरित होती है, उसका स्थायी प्रभाव हमारे हृदय पर पड़ता है।

---

१. प्रकाशन-काल : सन् १८६० ई०, प्र० सस्ता साहित्य-मण्डल, नई दिल्ली। यह 'तुर्गनेव' की एक रचना का अनुवाद है।

२. प्रकाशन-काल : सन् १९६४ ई०, प्र० वही। यह भी 'तुर्गनेव' की एक रचना का अनुवाद है।

३ प्रकाशन-काल : सन् १९६५ ई०, प्र० ग्रन्थमाला कार्यालय, पटना-४।

४. प्रकाशन-काल : वही, प्र० भारत-सरकार (प्रकाशन-विभाग), दिल्ली।

५. प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन, फैजबाजार, दिल्ली।

६ वही।

७. ये दोनों रचनाएँ भी वहीं से प्रकाशित।

जो वस्तु पहले हमें सुन्दर प्रतीत होती थी, वह और भी सुन्दरतर प्रतीत होने लगती है और इस प्रकार वह नूतन रूप मे हमारे लिए उपभोग्य बन जाती है। इतना ही नही, बल्कि जिस वस्तु या दृश्य-विशेष में हमें किसी प्रकार के सौन्दर्य का आभास नही मिलता था, अथवा जिसे हम असुन्दर या कुरूप समझ बैठे थे, उसे ही कवि की रस-दृष्टि की सहायता से हम सुन्दर और सुखी देखने लगते है। कवि की इस रस-दृष्टि के सम्पर्क में आकर हमारे हृदय का रस-प्रस्रवण जब उच्छल हो उठता है, उस समय हमारी दृष्टिभंगी सपूर्ण परि-मार्जित हो जाती है और सब कुछ में एक नूतन शोभाश्री हमे परिलक्षित होने लगती है और उसकी रूप-माधुरी नव-नव रूप मे हमारे मन-प्राण को आकर्षित एवं आप्यायित करने लगती है।'[1]

(२)

गाँधीजी का कहना है कि इस नैतिक शक्ति पर विश्वास रखकर ही भारतवासी स्वाधीनता के पथ पर अग्रसर हो सकते है। गाँधीजी आज हमे जो वाणी सुना रहे है वही हमारी सभ्यता एव सस्कृति की मर्मवाणी है। भारत के तपोवन से यही वाणी उच्चरित हुई थी। ज्ञान-तपस्वी ऋषियों ने बहुत पहले ही जीवन के इस तत्त्व को जान लिया था कि वास्तविक आनन्द उद्दीप्त वासनाओं की पूर्त्ति में नही, बल्कि सबके साथ आत्मीयता का सम्बन्ध जोड़ने में है। स्वदेशवासियों के साथ अपनापन का नाता जोड़ने—उनके प्रति संवेदनशील बनने मे ही गम्भीरतम आनन्द है। स्वार्थपरायण बनकर मनुष्य जब अपनी दुर्वासना की पूर्त्ति में संलग्न हो जाता है तब उसके जीवन की सारी महिमा म्लान हो जाती है और वह अपने चारों ओर भेद बुद्धि की ऊँची दीवार खड़ी कर लेता है। मनुष्य आज इस सत्य को हृदयङ्गम

---

१. 'साहित्य की वर्त्तमान धारा' (प्रो० जगन्नाथप्रसाद मिश्र, प्रकाशन-काल नहीं), पृ० ४६।

नहीं कर रहा है कि मनुष्य के साथ मनुष्य की जो भेद-बुद्धि है—मानवीय आदर्श से राष्ट्रीय आदर्श को महान् समझने का जो दम्भ है, वही तो आज मानव-सभ्यता को अभिशप्त बनाये हुए है। यह भेद-बुद्धि ही तो आज धर्म के नाम पर, राष्ट्र के नाम पर, वर्ण के नाम पर, मनुष्य को मनुष्य का शत्रु बनाये हुए है। इस भेद-बुद्धि के कारण ही आज मानव-सभ्यता रक्त-सागर में निमज्जित हो रही है। यह भेद-बुद्धि ही सारे अनर्थों की जड़ है।'[1]

जगन्नाथप्रसाद सिंह 'किंकर'

आप गया जिला के देव-रियासत के निवासी श्रीराजा भीष्मनारायण सिंहजी के पुत्र थे।[2] आपका जन्म सं० १६४६ वि० (सन् १८६२ ई०) की कार्तिक शुक्ल सप्तमी को हुआ था।[3] हिन्दी की प्रारम्भिक शिक्षा समाप्त करने के बाद आठ वर्षों तक आपने रायपुर के राज-कॉलेज मे और डेढ वर्षों तक सबौर के कृषि-कॉलेज मे अध्ययन किया, जहाँ आपको हिन्दी, उर्दू और अँगरेजी की उच्च शिक्षा मिली। आपका साहित्यिक जीवन स० १६७४ वि० से आरम्भ हुआ था। आप एक अध्ययनशील साहित्यकार थे। देव का 'किंकर-पुस्तकालय' आपकी अध्ययनशीलता का ज्वलन्त प्रमाण है। सन् १६२५ ई० मे आपने श्रीकृष्ण आर्ट प्रेस की स्थापना की और 'कृष्ण'[4] नामक मासिक-पत्र को जन्म दिया। आपकी गणना नवीन विचारधारा के सिद्धहस्त नाटककारो मे होती है। बिहार के मौलिक नाटक-लेखकों मे आपका महत्त्वपूर्ण स्थान माना जाता है। आप हिन्दी और उर्दू मे काव्य-रचना भी करते थे। आपके द्वारा लिखित पुस्तकों के नाम ये हैं— (१) नरनारायण-नाटक, (२ महात्मा तुलसीदास-नाटक, (३) सती पार्वती-नाटक, (४) पुनर्जन्म-नाटक, (५) राजर्षि प्रह्लाद-नाटक (६) बालकृष्ण नाटक, (७) वतन का पुजारी-नाटक, (८) वेश्या-नाटक, (६) भजन कद्री-पद्य-पुस्तक और (१०) श्रीकृष्ण-भजन-

---

१ 'मनुष्य की मर्यादा' (प्रो० जगन्नाथप्रसाद मिश्र, सं० २००७ वि०), पृ० ८५-८६।

२ आपके पितामह का नाम श्रीप्रकाशनारायण सिंह, के० सी० आइ० था, जो प्रातःस्मरणीय आदर्शवीर सिसोदिया-कुलभूषण महाराणा प्रतापसिंहजी के वंशज थे।

३. गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० ६८।

४, इसके सम्पादक श्रीरूपनारायण पाण्डेय थे। आपने केवल इसके एक अंक का सम्पादन किया था।

माला। सन् १६३४ ई० के १६ अप्रैल को अचानक हृदय की गति रुक जाने के कारण आप स्वर्गवासी हुए।[1] आपकी रचना के उदाहरण नहीं प्राप्त हो सके।

जगन्नाथ भक्त

आप हजारीबाग-जिला के 'पालगंज' नामक स्थान के रहनेवाले पं० श्रीरूपलालजी 'भक्त' के पुत्र थे। आपका जन्म स० १६२४ वि० सन् १८६७ ई०) की फाल्गुन कृष्ण-पमची को हुआ था।[2] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। आपने सस्कृत और हिन्दी का अध्ययन किया था। आपने गृहस्थ जीवन व्यतीत करने के बाद वानप्रस्थ स्वीकार किया था। यह व्रत आपके जीवनकाल पर्यन्त चला। आप वैष्णव थे।

आपकी साहित्यिक सेवा का आरम्भिक वर्ष अनुमानत स० १६५४ वि० (सन् १८८८ ई०) है। वैष्णव होने के कारण आपने हिन्दी मे अधिकतर भक्ति-पदो की रचना की। आपके द्वारा लिखित भजन, कीर्त्तन एव भक्ति-रस के पद कवित्त सवैया, चौपाई दोहा, सोरठा आदि छन्दो मे मिलते है। आपके द्वारा लिखित कोई पुस्तकाकार रचना नही मिलती। आपने गीता का दोहो और चौपाइयों मे अनुवाद किया था। आप स० १६६८ वि० (सन् १६४१ ई०) की कार्त्तिक शुक्ल-एकादशी, गुरुवार को परलोक सिधार गये।

उदाहरण

(१)

जय जगवन्दन, श्री नन्दनन्दन, जय सन्तन हितकारी।
असुर निकन्दन जन-मन-रञ्जन, जय गोवर्द्धनधारी॥
जय-भव-मोचन सरसिज-लोचन, वदन चन्द्र छविहारी।
गुण-सागर, नागर, राधावर, वृन्दाविपिन विहारी॥
अघबकशकट-विनाशक जय जय, जय जमलार्जुन तारी।
संसृति भंजन, रिपुदल गंजन, सज्जन - हिय - अधिकारी॥

---

१. आपने चित्रपट के निर्माण के लिए गया में एक फिल्म-कम्पनी का जन्म दिया था। 'पुनर्जन्म' और 'पितृपक्ष-मेला'-फिल्मों के निर्माण में आपको सफलता भी प्राप्त हुई थी।

२. 'पालगज' (हजारीबाग) के श्रीमुकुन्द 'भक्त' द्वारा प्रेषित विवरण के आधार पर।

दोष-दलन, करुणानिधि जय जय, जय जय वंशीधारी।
प्रणतारण-हित अतिहि मृदुल चित, गोपी पति बनवारी॥
बहुत दिनन तुव शरणहि आयो, तजि ममता अति भारी।
'जगन्नाथ' अति दीन दुखित पर काहे कृपा बिसारी॥[1]

(२)

निरखि दसरथ लाल के छवि,
साल हिय मेरो घनी।
क्या कहाँ सखि माधुरी,
बरनन करत कछु ना बनी॥
कटि देखते मृगराज लाजे,
पीत पट लखि दामिनी।
बनमाल उर सुविसाल हर,
छवि इन्द्र - धनु - कादम्बिनी॥
कन्ध केहरि - बाल के छवि,
सीव ग्रीवा है बनी।
भुजदण्ड सर कोदण्ड - मण्डित,
सुण्डकरि सोभा हनी॥
चिबुक अधर विसाल लोचन,
तिलक की सोभा घनी।
मुकुर छवि अवलोकि मुझको,
मौन ही रहते बनी॥
प्रीति लतिका निज उरोज,
सरोज - पद करि धारिनी।

---

१. विभाग में सुरक्षित सामग्री से।

बरन्यो सरूप अनूप रघुकुल
भूप के मन-भावनी[1] ॥

जगन्नाथ राय शर्मा

आप शाहाबाद जिला के 'डिहरी' नामक स्थान के निवासी श्रीरामदेनी शर्माजी के पुत्र है। आपका जन्म सन् १८९९ ई० के ? दिसम्बर को हुआ था[2]। आपकी अपर प्राइमरी तक की शिक्षा बक्सर के गुरु ट्रेनिंग-स्कूल, मे हुई। फिर, मिडिल से प्रवेशिका तक आप बक्सर-हाइ स्कूल मे पढे। आइ० ए० से एम्० ए० (सस्कृत) तक की आपकी शिक्षा काशी-हिन्दू-विश्वविद्यालय के सेण्ट्रल हिन्दू-कॉलिज मे हुई। आगे चलकर सन् १९३६ ई० मे आपने पटना-विश्वविद्यालय से भी हिन्दी मे एम्० ए० की परीक्षा स्वर्णपदक लेकर पास की। सन् १९२६ से ३६ ई० तक आप पटना के पाटलिपुत्र हाइ-स्कूल मे सहायक शिक्षक पद पर कार्य करते रहे। सन् १९३७ ई० मे आप पटना-विश्वविद्यालय मे हिन्दी-व्याख्याता के पद पर चले आये। बाद मे आप उक्त विश्वविद्यालय के हिन्दी-विभागाध्यक्ष हो गये। वहाँ से अवकाश ग्रहण कर आपने 'श्रीकृष्ण स्वाध्यय-मन्दिर' नामक संस्था की स्थापना की। इन दिनो आप अपने मूल निवास-स्थान पर ही रहकर साहित्य-सेवा मे संलग्न है। आपके निर्देशन मे कई लोगो ने डॉक्टरेट की उपाधियाँ प्राप्त की है। पटना मे रहते हुए बहुत दिनो तक आप बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् की सामान्य समिति के सदस्य तथा 'विशारद' और 'साहित्यरत्न'-परीक्षा-केन्द्रो के व्यवस्थापक रहे। सन् १९४६ ई० में आप 'मंगलाप्रसाद-पारितोषिक' के भी निर्णायक चुने गये थे। आपकी साहित्यिक सेवा का आरम्भिक वर्ष सन् १९१५ ई० बतलाया जाता है। आपकी प्रकाशित पुस्तको के नाम ये है—(१) विक्रम-विजय[3], (२) तरुण तरंग[4], (३) पत्रालय[5] (४) अपभ्रंश दर्पण[6], (५) रामायण और भाव-चित्रावली में मानस-सन्देश-अंश[7], (६) रामचरितमानस की कथावस्तु[8] (७) सूर साहित्य-दर्पण[9],

---

१ विभाग में सुरक्षित सामग्री से।

२. आपके द्वारा दिनांक २७ जुलाई, सन् १९५६ ई० को विभाग में प्रेषित विवरण के अनुसार। आपके प्रस्तुत परिचय-लेखन में उक्त विवरण के साथ-साथ 'हिन्दीसेवी-संसार' (वही पृ० २), 'बिहार अब्दकोष' (वही, स० २००१, पृ० ६६१), 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६५६) तथा बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् की उद्घाटन-समारोह-पुस्तिका (पृ० ७) से भी सहायता ली गई है।

३ ऐतिहासिक खण्डकाव्य, प्र० लेखक स्वयं।

४. स्फुट कविताएँ, प्र० वही।

५. पद्मालय, प्र० वही।

६. अपभ्रंश-भाषा का व्याकरण एवं इतिहास, प्र० वही।

७. तुलसीकृत मानस के सन्देश, प्र० बुकलव, महेन्द्रू, पटना-६।

८. मानस की कथाओं के उद्गम, प्र० बाहरी ब्रदर्स; बेटर बुक्स, पटना।

९ सूर-साहित्य की आलोचना, प्र० विद्याधाम, दिल्ली-६।

(८ हमारा सास्कृतिक साहित्य,[1] (९) अयोध्याकाण्ड,[2] (१०) व्रज-साहित्य सौरभ[3], और (११) निबन्ध-रत्नाकर[4]। इन पुस्तको के अतिरिक्त इन दिनो आप सूर-सागर' की विस्तृत टीका-समोक्षा तथा 'मानसोद्गम-मीमासा' नामक गवेषणात्मक ग्रन्थ की रचना में सलग्न है। आपकी स्फुट रचनाएँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हैं।

उदाहरण

(१)

संस्कृत, प्राकृत एवं भाषा के साहित्य का तुलसी ने जितना सूक्ष्म और गहरा अध्ययन किया था उसका निर्णय करना सामान्य विद्या-बुद्धि के मनुष्यों के लिए असम्भव है। जो समग्र भारतीय साहित्य का पूर्ण पंडित हो और तुलसी की सारी रचनाओ का मर्म समझकर उन्हें कंठस्थ कर सके, वही कुछ-कुछ इस मार्ग मे पाव रखने का अधिकारी हो सकता है। किन्तु इस काम के लिये केवल इतना ही पर्याप्त नही। इन गुणो के अतिरिक्त सूक्ष्म आलोचना की शक्ति, भाषा पर असाधारण अधिकार और कुशाग्र बुद्धि की भी इसके लिए अत्यन्त आवश्यकता है। फिर तुलसी के पांडित्य की झलक देने के लिए उनके ग्रन्थों से तथा अन्यान्य संस्कृत आदि भाषाओं के ग्रन्थो से असंख्य उदाहरण देने पड़ेंगे। इसके लिए स्थान का अभाव होने से हमे यही ठहर जाना पड़ता है। किन्तु, इतना तो अवश्य कहना पड़ता है कि जितना गहरा अध्ययन तुलसी ने किया था, उतना वाल्मीकि, व्यास और कालिदास को छोड़कर और किसी कवि ने नही। इन सबों में भी सबसे पीछे होने के कारण तुलसी को

१. सस्कृत, प्राकृत, पालि एवं अपभ्रंश-साहित्यों का सक्षिप्त इतिहास, प्र० ग्रन्थमाला-कार्यालय, बाँकीपुर, पटना-४।
२. टीका एवं समालोचना, प्र० नेशनल बुक-कम्पनी, खजांची रोड, पटना।
३. व्रज-साहित्य के सूर, नन्द, रसखान, घनानन्द और सत्यनारायण इन पाँच प्रमुख कवियों की चुनी रचनाओं का सग्रह, प्र० वही।
४. स्फुट साहित्यिक निबन्धों का संग्रह, प्र० लक्ष्मी पुस्तकालय, पटना।

सबसे अधिक साहित्य का अध्ययन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। इसमे कोई सन्देह नही कि संस्कृत-साहित्य-सागर में गोता लगानेवालों मे सबसे अधिक और सबसे चमकदार रत्न तुलसी ही के हाथ लगे।[१]

(४)

वैदिक धर्म के प्रतिकूल चार्वाक के अतिरिक्त आवाज उठानेवाले दो महान् क्रान्तिकारी आत्माये है। इनमें एक है—महात्मा बुद्ध और दूसरे है महात्मा महावीर। यज्ञ में होनेवाली पशु-हिसा से और ब्राह्मणो के द्वारा प्रवर्तित रूढिवाद से ऊबकर इन महात्माओ ने अपने स्वतन्त्र उपदेश दिये। इनके उपदेश इतने समयानुकूल थे कि भारतोय जनता ने ही नही बल्कि अन्यान्य देशों की जनता ने भी उन्हें सहर्ष स्वीकार किया। भगवान महावीर के उपदेश तो प्रधानतया भारत तक ही सीमित रहे किन्तु भगवान बुद्ध के उपदेश लंका, बर्मा, चीन और जापान तक जा पहुँचे। भगवान बुद्ध ने तत्कालीन मगध तथा उसके आसपास के प्रदेशों मे प्रचलित लोक-भाषा पाली में अपने उपदेश दिये और उनके उपदेशो के आधार पर निर्मित ग्रन्थ त्रिपिटक के नाम से प्रसिद्ध हुए। भगवान महावीर ने बुद्ध के समान कोई मार्ग नही स्थापित किया। उनके उपदेश उनसे प्राचीन तीर्थङ्करों के उपदेशों पर आधारित थे, और उसके गुण आदि प्रवर्त्तक ऋषभदेवजी थे। जैन धर्म-ग्रन्थ प्रधानतया प्राकृत में है और यह भाषा भी संभवतः तत्कालीन भारतीय लोक-भाषाओं में से एक थी। आगे चलकर जैनधर्म का प्राकृत के अतिरिक्त संस्कृत, अपभ्रंश और हिन्दी तथा अन्यान्य आधुनिक भारतीय भाषाओं में एक विशाल साहित्य निर्मित हो गया।[२]

---

१. 'निबन्ध-रत्नाकर' (प्रो० जगन्नाथराय शर्मा, सन् १९५६ ई०), पृ० १३।
२. 'अपभ्रंश-दर्पण' (प्रो० जगन्नाथराय शर्मा, सन् १९५५ ई०), पृ० ४५।

(३)

अयि कुन्द इन्दु तुषार सुन्दरि ! भुवनमोहिनि ! शारदे ।
कमलासने शुचि हंसवाहिनि ! भव्य भारत तार दे ॥
है हम विकल हो रहित तुम से आ परस्पर प्यार दे ।
हम शरण हिन्दू कोटि चौबिस देवि ! शक्ति अपार दे ॥[1]

(४)

सन्ध्या बीती शरद-शशि की चन्द्रिका चारु फैली ।
मीठा-मीठा विहग-रव भी था लगा शान्त होने ॥
बेला-भू से लिपट उठता सिन्धु की उर्म्मियों का ।
ऊँचा न्यारा सबल स्वर था, मानसोन्मादकारी ॥[2]

जनार्दन झा 'जनसीदन'

आप मुजफ्फरपुर-जिला के 'कुमर-बाजितपुर' नामक स्थान के निवासी पं० श्रीनाथ झा के पुत्र थे ।[3] आपका जन्म सं० १९२९ वि० (सन् १८७२ ई०) की कार्त्तिक कृष्ण-तृतीया को हुआ था ।[4] जब आप पाँच वर्ष के हुए, तब पाठशाला भेजे गये । नौ वर्ष की उम्र मे लोअर प्राइमरी पासकर आपने अपर प्राइमरी मे नाम लिखवाया । दसवें वर्ष मे आपने अपने हाथ से मिथिलाक्षर मे पुस्तक लिखकर सस्कृत पढना आरम्भ किया ।[5] सन् १८८७ ई० मे जब आप हाजीपुर (मुजफ्फरपुर) की धर्म-प्रचारिणी पाठशाला मे ज्योतिष पढ रहे थे, तब खड्गविलास प्रेस देखने की लालसा से आप बाँकीपुर गये । उससमय वही आपकी भेंट हरिमन्दिर के बाबा सुमेरसिंह से हुई । वे आपकी काव्य-रचना से बहुत

---

१ 'पद्मालय' (प्रो० जगन्नाथराय शर्मा, सन् १९२७ ई०), पृ० १०६ ।

२. 'विक्रम-विजय' (प्रो० जगन्नाथराय शर्मा, सन् १९९८ वि०), पृ० ३६ ।

३ इनके पूर्वज महामहोपाध्याय पं० दुर्मिल झा कोइलख (दरभगा)-वासी थे ।

४ हिन्दी-मैथिली के सुप्रसिद्ध लेखक और आपके पुत्र प्रो० हरिमोहन झा द्वारा दिनांक ७ जून, सन् १९५६ ई० को प्रेषित सूचना के अनुसार । —देखिए, A History of maithily literature, वही, P 143 भी ।

५. "उस समय देवाक्षर में छपी पाठ्य-पुस्तकें प्रायः नहीं मिलती थीं । संस्कृत के सभी विद्यार्थी हाथ से लिखकर ही अपना पाठ पढते थे । लखनऊ के नवलकिशोर प्रेस की छपी हुई कुछ पुस्तकों का प्रचार

प्रभावित हुए और उन्होने आपको पटना आकर रहने का आमन्त्रण दिया, किन्तु आप नही आये और हाजीपुर मे ही रहकर व्याकरण के साथ-साथ ज्योतिष पढते रहे। सन् १९०० ई० मे जब आप श्रीनगर (पूर्णिया) गये, तब वही नियुक्त होकर वहाँ के राजा कमलानन्द सिंह ('साहित्य-सरोज') के दरबार मे रहने लगे। वहाँ रहते हुए आपका सम्पर्क सरस्वती' के ख्यातिप्राप्त सम्पादक आचार्य प० महावीरप्रसाद द्विवेदी व्रजभाषा के स्वनामधन्य कवि बाबू जगन्नाथदास रत्नाकर' तथा हिन्दी-व्याकरण के आचार्य पं० अम्बिकादत्त व्यास से हुआ। सन् १९१० ई० मे आचार्य द्विवेदीजी की सिफारिश से आप इलाहाबाद के इण्डियन प्रेस के प्रकाशन-विभाग मे नियुक्त हुए।[1] यहाँ आप सन् १९१६ ई० तक रहे। इस अवधि मे आपने ३१ बँगला-पुस्तको[2] का हिन्दी मे अनुवाद किया। सन् १९१७ से १९१९ ई० तक आप पचगछिया हाइ-स्कूल मे हिन्दी-संस्कृत के अध्यापक के रूप मे कार्य करते रहे। सन् १९१९ ई० से, आप दरभगा से प्रकाशित होनेवाले 'मिथिला-मिहिर' का सम्पादन करने लगे। यह कार्य लगभग तीन वर्षो तक चला। सन् १९२२ से १९२७ ई० तक आप कविराज नगेन्द्रनाथ सेन तथा वणिक प्रेस के लिए पुस्तकें लिखते रहे। सन् १९२८ ई० से आप अपने घर पर ही रहकर साहित्य-सेवा करने लगे। वैशाली-उत्सव के प्रथम समारोह मे मुजफ्फरपुर-जिले के सबसे वयोवृद्ध साहित्यिक होने के नाते आप सभापति बनाये गये थे। आपका सारा जीवन साहित्य-सेवा में ही व्यतीत हुआ।

आपकी स्फुट गद्य-पद्य-रचनाएँ मुख्य रूप से 'सरस्वती', 'मिथिला-मिहिर', 'रसिकमित्र', 'रसिक-वाटिका' आदि पत्र-पत्रिकाओं मे प्रकाशित मिलती हैं। आपकी प्रकाशित पुस्तकाकार रचनाओं मे निम्ननिर्दिष्ट उल्लेखनीय है—(१) राजर्षि, (२) मुकुट, (३) चरित्र-गठन, (४) ऋद्धि, (५) स्वर्णलता (६) रॉबिन्सन क्रूसो, (७) नेपोलियन बोनापार्ट, (८) आश्चर्य घटना (९) विचित्र वधू रहस्य, (१०) सुशीला-चरित्र, (११) पतिव्रता, (१२) आदर्श महिला, (१३) राजपूत जीवन-सन्ध्या, (१४) माधवी-कंकण, (१५) समाज, (१६) गौर मोहन, (१७) नवीन सन्यासी, (१८) रत्नदीप, (१९) अद्भुत कथा, (२०) भारतीय साधक, (२१) ग्रह-नक्षत्र, (२२) सिक्ख-जाति का इतिहास, (२३) शुश्रूषा, (२४) षोडशी, (२५) सम्राट् अकबर, (२६) पारस्य[3], (२७) मनुस्मृति की टीका, (२८) विषवृक्ष, (२९) देवी चौधरानी, (३०) इन्दिरा, (३१) प्राणियों के अन्तःकरण की बात[4], (३२) पुरुष-परीक्षा[5], (३३) अन्योक्ति-मणिमाला, (३४) कलिकाल-कुतूहल, (३५) मैथिली नीति पद्यावली[6],

---

देहात में जहाँ-तहाँ होने लगा था। कहने का अभिप्राय यह कि उन दिनों हिन्दी-भाषा शैशवावस्था में थी।" —'एक संस्मरण' (पं० जनार्दन झा 'जनसीदन', प्रकाशन-काल नहीं), पृ० ३।

१. आप द्विवेदीजी के प्रिय लेखकों में थे। —देखिए, 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही), पृ० ३१३–७२ और पृ० ५५४। मिश्रबन्धुओं का कहना है कि आपने कुछ काल तक 'सरस्वती' के सम्पादन-विभाग में भी काम किया था। —'मिश्रबन्धुविनोद' (वही, चतुर्थ भाग), पृ० ३१३।

२. मिश्रबन्धुओं के अनुसार आपने ६०-६५ ग्रन्थों का अनुवाद किया था।—वही।

३. ये सारी पुस्तकें इण्डियन प्रेस, प्रयाग से प्रकाशित। इनमें अधिकांश बँगला से अनूदित पुस्तकें हैं।

४. ये सारी पुस्तकें वणिक प्रेस, कलकत्ता से प्रकाशित हैं।

५. महाकवि विद्यापति के प्रसिद्ध संस्कृत-ग्रन्थ का हिन्दी-अनुवाद।

६. ये सारी पुस्तकें विद्यापति प्रेस, लहेरियासराय और पटना से प्रकाशित।

(३६) चिकित्सा-सागर, (३७) वाटिका-विनोद[1], (३८) पाचन-मुष्टियोग, (३६) द्रव्यगुण-शिक्षा[2], (४०) अनुभूत मुष्टियोग[3], (४१) पुनर्विवाह,[4] (४२) शशिकला और (४३) द्विरागम-रहस्य।[5]

उदाहरण

(१)

एक वह समय था, जब मिथिला के गॉव-गॉव में संस्कृत के विद्वान् पाये जाते थे। ब्राह्मणों की कोई ऐसी बस्ती नही थी जहाँ दो-चार अच्छे पंडितों के नाम न सुने जाते रहे हो। दूर-दूर से छात्र शास्त्र पढने के लिए उनके निकट आते थे और यथेच्छ शास्त्रो का अध्ययन करके अपने देश लौट जाते थे। उन दिनो मिथिला विद्या का केन्द्र मानी जाती थी। वेद-वेदाङ्ग आदि सभी शास्त्रो के एक-से-एक अध्यापक मिथिला मे विद्यमान थे।

संस्कृत पठन-पाठन की व्यवस्था भी यहाँ आज से पचास-साठ वर्ष पूर्व तक बडी विलक्षण थी। विद्यार्थी पहले गुरु से समस्त शास्त्रीय शिक्षा प्राप्त करके पुनः पठनार्थ विशेषतः काशी जाते थे। वहॉ यथेष्ट शास्त्रों का अध्ययन करके जब परीक्षा मे उत्तीर्ण हो जाते थे, अध्यापकों से प्रशसापत्र पाकर लब्धप्रतिष्ठ हो अपने देश आते थे। वहॉ आने परबड़े आदरणीय समझे जाते थे। सब लोग उन्हे सम्मान की दृष्टि से देखते थे। उन पंडितो को परिवार-पोषण की चिन्ता नही रहती थी। उनका एकमात्र ध्येय विद्यार्थियो को नि.शुल्क पढ़ाना ही रहता था; उसी को

---

१. खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुर से प्रकाशित।

२ ये दोनों पुस्तकें कविराज नगेन्द्रनाथ सेन, कलकत्ता द्वारा प्रकाशित।

३ सुदर्शन प्रेस, दरभंगा से प्रकाशित।

४ प्रिण्टिंग वर्क्स, मधुबनी से प्रकाशित।

५. ये दोनों मैथिली-उपन्यास 'मिथिला-मिहिर' में (प्राचीन संस्करण) धारावाहिक रूप से प्रकाशित हुए थे। आपकी अप्रकाशित पुस्तकाकार रचनाओं में उल्लेखनीय ये हैं—(१) काव्यनिर्णय की टीका, (२) आत्मकथा (आंशिक) तथा (३) स्फुट रचनाएँ। ये सारी रचनाएँ आपके सुपुत्र प्रो० हरिमोहन झा (पटना) के पास सुरक्षित हैं।

वे अपना मुख्य कर्त्तव्य समझते थे। स्वयं साग खाकर गुजर करते थे और विद्यार्थियों को नियमानुसार पढ़ाते थे। किसी राजा महाराजा के यहाँ याचना करने नहीं जाते और न कभी किसी के आगे दान लेने के लिये हाथ पसारते थे; सन्तोष पूर्वक समय बिताने में ही आनन्द का अनुभव करते थे।[1]

(२)

सन् १९०३ ई० की बात है। शिवालाघाट काशी के रहनेवाले प्रसिद्ध कवि बाबू जगन्नाथदास बी० ए० ('रत्नाकरजी') राजा कमलानन्द सिंह का नाम सुनकर उनसे मिलने के लिए श्रीनगर (पूर्णिया) आये। राजा साहब ने उनका उचित स्वागत-सम्मान करके उन्हें कुछ दिन अपने यहाँ ठहराया। रत्नाकरजी मेधावी थे, अँगरेजी और फारसी के अच्छे विद्वान थे। हिन्दी भी उनकी निजी सम्पत्ति थी। ब्रजभाषा की कविता के बड़े पक्षपाती थे। वे स्वयं ब्रजभाषा मे ओजस्विनी कविता करते थे और गम्भीर स्वर में बड़े मस्ताने ढंग से अपनी बनाई कविता पढते थे, जिसे सुनकर रसिक जनो का दिल फड़क उठता था। वे नित्य नये-नये भावों की कविता सुनाकर राजा साहब तथा उनके आश्रित सहृदय व्यक्तियों को आनन्दित करने लगे। वे कभी-कभी अपनी विमल बुद्धि का चमत्कार दिखाकर सबको चकित कर देते थे।[2]

(३)

ध्रुव प्रह्लाद की कहानी को न जानै जग,
दीन्ही गति गीध को, गयन्द को उबार्‌यो है।
द्रुपद-सुता की लाज राखी 'जनसीदन' त्यो,
पापी अति पतित अजामिल को तार्‌यो है।

---

१. 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, 'मिथिला के पण्डित' शीर्षक लेख), पृ० १-२।
२. 'साहित्य' (त्रैमासिक, वर्ष ३, अंक ३, अक्टूबर, सन् १९५२ ई०, रत्नाकर-संस्मरण), पृ० ६०।

देखि ब्रजवासिन को विकल प्रलै घन सों,
ब्रज को बचावे हेतु हाथ गिरि धार्‌यो है।
जन की पुकार सुनि दौड़ि सुधि लेनवारे,
मेरी बार काहे निज नियम बिसार्‌यो है ॥[1]

(४)

बसन खरीदं मिस चली है सहेली संग,
मनमोहन सों मिलन पतीजिये।
आवत बिहारी को बिलोकि सखि बोली तहाँ,
कब सो खड़ी है झट दाम कर लीजिये।
रावरी प्रतीति करि ल्याई एहाँ एती दूर,
सुनिये बजाज बहु मोल मत कीजिये।
बिलम लगाइए न राखिए न लैहौं यह,
मारकीन छीन याहि नैनसुख दीजिये ॥[2]

(५)

धन्य जटायु भये जग मे,
जिन जानकी-कारन प्रान गँवायो।
धन्य समीर-तनै कपि जो,
बिन पंख समुद्र को पार ह्वै आयो।
लंक जराय सिया-सुधि लै,
'जनसीदन' राम को दुःख दुरायो।
हौ लहि पंख कियो न कछु,
एहि कारन पर्बत पच्छ कटायो ॥[3]

---

१. प्रो० हरिमोहन झा (पटना) द्वारा प्रेषित सामग्री से।
२. 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही), पृ० ४७६।
३, वही, पृ० ४८२-८३।

विमल विवेक-भानु का मन में उदय नही होता जबतक,
सत्त्व-कमल का विकसित होना देखा गया नही तबतक।
भटके हम बाबाजी बनकर सारा भेस बदल डाला,
भस्म लगाया, जटा बढ़ाया, गले बाँध कण्ठी-माला ॥[1]

जनार्दन मिश्र 'परमेश'

आप सन्तालपरगना-जिला के 'सनौर' नामक ग्राम (थाना-गोड्डा) के निवासी प० श्रीमुरारि मिश्र[2] के पुत्र है। आपका जन्म स० १९४८ वि० (सन् १८९० ई०) की आषाढ कृष्ण-चतुर्दशी (शनिवार) को हुआ था।[3] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। सन् १९०१ ई० मे आप खडहरा मिड्ल इंगलिश-स्कूल मे प्रविष्ट हुए। वहाँ आपका अधिक समय काव्य-ग्रन्थो के अध्ययन अथवा काव्य-रचना मे ही व्यतीत होता था। सन् १९१४ ई० मे आपने पटना नार्मल-ट्रेनिंग स्कूल की अन्तिम परीक्षा पास की और आपका नाम टी० के० घोष एकेडमी (बाँकीपुर) मे लिखवाया गया। वहाँ एक वर्ष तक अध्ययन करने के पश्चात् आपने अपनी पढाई बन्द कर दी। किन्तु, स्वाध्याय का क्रम ज्यो-का-त्यो चलता रहा। आपने हिन्दी के अतिरिक्त अँगरेजी, सस्कृत, बँगला, उर्दू आदि भाषाओ का भी अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया।

विद्यार्थी-जीवन के उपरान्त आप खड्गविलास प्रेस (बाँकीपुर) मे सहायक प्रबन्धक के पद पर प्रतिष्ठित हुए। यहाँ रहकर आप साप्ताहिक 'शिक्षा' के सम्पादन मे भी सहायता करते थे। कुछ ही दिनो के बाद आपकी नियुक्ति क्रमश· मुंगेर-जिला के 'छितरौर' एंव 'खड्गपुर' नामक स्थानों के माध्यमिक विद्यालयो मे सहायक शिक्षक के पद पर हुई। अध्यापन-कार्य मे आपका जी बहुत दिनो तक नही लगा और आप भागलपुर आकर

---

१. 'सरस्वती' (मासिक, भाग २२, सख्या ३, मार्च, सन् १९११ ई०), पृ० १३२।

२. आपके अध्यापक प० श्रीभैरव झा ने आपका यह उपनाम दिया था। उन्होंने ही आपको सर्वप्रथम छन्द का ज्ञान कराया था। (दिनांक २६ अप्रैल, सन् १९५६ ई० को आपके द्वारा प्रेषित सामग्री के अनुसार।) आपके प्रस्तुत परिचय-लेखन में आपके द्वारा प्रेषित सामग्री के अतिरिक्त डॉ० महेश्वरप्रसाद सिन्हा, आयुर्वेदाचार्य, दरभगा द्वारा लिखित परिचय (विभाग में सुरक्षित), तथा 'मिश्रबन्धुविनोद' (वही, पृ०, ३५०-५१), 'बिहार के नवयुवक-हृदय' (ठाकुर मंगलाप्रसाद सिंह, सं० १९८५ वि०, पृ० १८), 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ७४१), 'हिन्दी सेवी संसार' (वही, पृ० ९६) आदि ग्रन्थों में प्रकाशित सामग्री से भी सहायता ली गई है।

३. ये पं० हर्षदत्त मिश्र के पुत्र थे। इस मिश्र-परिवार की प्रान्त में एक समय बड़ी प्रतिष्ठा थी। ये दोनों यशस्वी वैद्य थे।

वहाँ के 'कोरोनेशन आर्ट्स प्रिण्टिग वर्क्स मे काम करने लगे। वहाँ से आपने 'साहित्य-कल्पलता' नामक की एक ग्रन्थमाला निकाली। वही से, सन् १९२२-२३ ई० मे आपके सम्पादकत्व मे 'सुप्रभात' नामक एक मासिक पत्र भी प्रकाशित हुआ, जो अर्थाभाव के कारण दो-तीन अंक के बाद बन्द हो गया।[1] 'सुप्रभात' के बन्द हो जाने पर आप भी ब्राह्मण प्रेस भागलपुर, मे व्यवस्थापक के पद पर आसीन हो गये। वहाँ रहकर आपने पुन 'सुप्रभात' को निकालने का प्रयत्न किया। किन्तु, दो अको के बाद ही आपके प्रयत्न विफल हो गये।[2]

सन् १९३१ ई० मे आप हिन्दी-साहित्य-विद्यालय (देवघर) मे अध्यापक के पद पर पुन बुला लिये गये, जहाँ आप तीन वर्षों तक रहे।[3] उस समय वहाँ हिन्दी-विद्यापीठ की स्थापना नही हुई थो। कहते हैं, उसकी योजना का प्रारूप आपने ही तैयार किया था। देवघर के बाद आप कुछ दिनो तक कुरसेला (पूर्णिया) मे रहे और फिर वहाँ के रईस राय-बहादुर रघुवशप्रसाद सिंह के यहाँ रहकर बच्चो को शिक्षा देने लगे। सन् १९४' ई० मे आप अस्वस्थ होकर अपने घर चले आये। सन् १९४२ ई० मे स्वस्थ होकर आप अध्यात्म-विषयक एक बृहत् ग्रन्थ के निर्माण मे लग गये।

आपको काव्य-रचना की ओर सर्वप्रथम प० भरव झा ने प्रवृत्त किया था। उसके बाद आपके काव्य-गुरु प० अक्षयवट मिश्र 'विप्रचन्द्र' हुए। आपकी अधिकांश काव्य-रचनाए, व्रजभाषा मे हैं। यों, आप खडीबोली मे भी रचना करते थे। सन् १९१२ ई० मे ही जब आप पटना नार्मल स्कूल के छात्र थे, तभी आपने 'जार्ज-किरणोदय'[4] नामक अपनी पहली पुस्तक तैयार की थी। धीरे-धीरे आप एक प्रसिद्ध कवि हो गये और 'मन्दार' (भागल-पुर) मे, बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के वार्षिक अधिवेशन के अवसर पर होनेवाले कवि-सम्मेलन की अध्यक्षता भी आपने की। आपकी स्फुट रचनाएँ अनेक पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित मिलती हैं।[5] आपकी ये पुस्तकाकार-रचनाएँ प्रकाशित हैं—(१) जार्ज-

---

१. सन् १९२१ ई० के असहयोग-आन्दोलन में भाग लेने के कारण सरकार ने 'सुप्रभात' के प्रकाशन पर रोक लगा दी थी और घर पर इनकी जमीन भी जब्त कर ली थी।

२ एक सहायक सम्पादक के रूप में आप फारबिसगज (पूर्णिया) से प्रकाशित 'हितैषी' और भागलपुर ' प्रकाशित 'शान्ति' से भी सम्बद्ध रहे।

३. यहीं रहकर आपने तुलसीकृत 'बरवै-रामायण' की विस्तृत और विवेचनापूर्ण टीका लिखी थी।

४. इसकी रचना पंचम जार्ज के भारत आने के अवसर पर हुई थी। आपकी यह रचना कई स्थानों से पुरस्कृत भी हुई। —'बिहार के नवयुवक-हृदय' (वही), पृ० १९।

५. इनमें प्रमुख ये हैं—(१) श्रीवेंकटेश्वर-समाचार (बम्बई), (२) प्रताप (कानपुर), (३) मर्यादा (प्रयाग), (४) विद्यार्थी (प्रयाग), (५) हिन्दी-चित्रमय जगत् (पूना), (६) रसिकमित्र (कानपुर), (७) रसिक-रहस्य (जौनपुर), (८) देश (पटना), (९) पाटलिपुत्र (पटना), (१०) शिक्षा (पटना), (११) नवशक्ति (पटना), (१२) योगी (पटना), (१३) प्रकाश (पटना और देवघर), (१४) प्रियवदा (गया), (१५) लक्ष्मी (गया), (१६) श्रीकमला (भागलपुर), (१७) गंगा (सुलतानगज), (१८) शान्ति (भागलपुर), (१९) सुरभि (भागलपुर), (२०) बालक (लहेरियासराय), (२१) साहित्य (देवघर) और (२२) सनातन-धर्म (बनारस)।

किरणोदय[1], (२) हमारा सर्वस्व[2], (३) जीवन-प्रभा[3], (४) सती[4], (५) रस-बिन्दु[5], (६) काला पहाड़[6], (७) राष्ट्रीय गान[7], (८) पद्य-पुष्प[8], (९) बिल्वदल[9], (१०) बरवै-रामायण की विवेचनापूर्ण टीका[10] (११) चकवार-चरित[11], (१२) उलूपी[12] और (१३) वीरों की कहानियाँ या वीर-वृत्तान्त[13]। इनके अतिरिक्त आपने लगभग ४० रीडरों की भी रचना की थी।[14]

उदाहरण

(१)

भारत के नैतिक विकास के सत्ययुग में अपने विशाल समाज को एक राष्ट्रीय श्रृङ्खला में चलाने के प्रशस्त उद्देश्य से जो दृढ़ और सुव्यवस्थित योजना तैयार की गई थी वह विश्व के लिए सनातन आदर्श कही जा सकती है। वह महान् योजना थी वर्णाश्रम-धर्म का निरूपण। यह वर्ण धर्म कर्म और भाव के सामंजस्य पर खड़ा किया गया था।

---

१ प्र० स्वयं। सन् १९१२ ई० में दिल्ली दरबार के अवसर पर रची कविताओं का संग्रह।

२ प्रकाशन-काल : सन् १९१४ ई०। प्र० स्वयं। राष्ट्रीय भावनामूलक निबन्ध एवं कविता।

३. प्र० साहित्य-कल्पलता-कार्यालय, भागलपुर। अँगरेजी के 'ऑप्टिमिस्टिक लाइफ' का भावानुवाद।

४ प्रकाशन काल : सन् १९२२ ई०। प्र० वही। पौराणिक आख्यायिका।

५ प्रकाशन काल : वही। प्र० वही कालिदास के नाम से सम्बद्ध 'शृंगारतिलक' का पद्यानुवाद।

६. प्रकाशन-काल सन् १९२३ ई०। प्र० चौधरी ऐण्ड सन्स, बनारस। ऐतिहासिक घटनामूलक उपन्यास। मिश्रबन्धुओं के अनुसार अनुवाद।

७. प्र० आर्य-साहित्य-मन्दिर, भागलपुर। राष्ट्रीय भावना की कविताएँ।

८. प्र० साहित्य-कल्पलता-कार्यालय, भागलपुर। स्फुट कविताएँ।

९. प्र० युगान्तर-साहित्य-मन्दिर, भागलपुर। प्रकाशन-कालः सन् १८३५ ई०। व्रजभाषा में रचित भक्ति-रस की रचनाएँ।

१०. प्र० युगान्तर-साहित्य-मन्दिर, भागलपुर।

११. प्र० राजधानी-पुस्तकालय, छितरौर, मुंगेर। बिहार के चकवार नामक ऐतिहासिक वंश-सम्बन्धी इतिवृत्तात्मक कथाकाव्य।

१२. अप्रकाशित। पौराणिक घटना के आधार पर लिखित नाटक। बँगला से अनूदित।

१३. अप्रकाशित। कहानी के रूप में लिखा गया मेवाड़ का इतिहास। इसकी कुछ कहानियाँ 'बालक' (पटना) में प्रकाशित हुई थीं। मिश्रबन्धुओं ने आपके द्वारा लिखित इन ग्रन्थों की भी चर्चा की है—(१) कृष्ण, (२) घटखर्पर-काव्य, (३) हेमा और (४) राष्ट्रीय गान। —देखिए 'मिश्रबन्धुविनोद' (वही, चतुर्थ भाग, पृ० ३५०) और 'हिन्दीसेवी संसार' (वही, पृ० ९९) भी।

१४. इन्हें इन प्रकाशकों ने प्रकाशित किया है— (१) मिश्र ऐण्ड कम्पनी, भागलपुर, (२) कन्हैयालाल कृष्णदास, दरभंगा तथा (३) पब्लिशिंग हाउस, मुंगेर।

इन दोनों की मिश्रित भित्ति पर ही प्रत्येक वर्ण का कर्त्तव्य और अधिकार निश्चित था। फिर, कर्त्तव्य और अधिकार मर्यादा की साँकल से आपस में इस प्रकार जकड़ दिये थे कि वे किसी प्रकार हिल-डुल न सकें। दो मे से किसी एक के शिथिल पड़ जाने पर स्थिति-विघातिनी विषमता उत्पन्न हो सकती थी। त्रेता में यह व्यवस्था पूर्णत्व को प्राप्त कर चुकी थी। उसके बाद ही उसमे श्रमिक विशृङ्खलता आती गई। त्रेता में लोक-व्यवहार के प्रत्येक क्षेत्र मे मंगलकारी मर्यादा प्रतिष्ठित थी। समाज का प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन में कर्त्तव्य और अधिकार का प्रयोग—कानून और बोझ समझकर नही—धर्म मानकर करता था। कर्त्तव्य और अधिकार चाहे कुछ भी हो, प्रत्येक मनुष्य अपने को समाज का सेवक समझता था। एक धोबी के द्वारा दिये गये अपवाद का स्वागत करने के लिए एक चक्रवर्त्ती सम्राट् तक बाध्य थे। इस व्यवस्था के सबसे प्रमुख उन्नायक राम-चन्द्र जी हुए। उन्होने अपने जीवन की प्रत्येक दिशा में कर्त्तव्य और अधिकार का प्रयोग, मर्यादा पर जितना जोर डालकर किया उतना और किसी ने नही किया। इसीलिए जनता ने अपने श्रद्धेय नेता को 'मर्यादा-पुरुषोत्तम' की उपाधि दे डाली और राम का शासन 'राम-राज्य' के नाम से विघोषित कर दिया गया।'[1]

(२)

जगत् सत् और असत् के संयोग का परिणाम है, इसलिए कविता में भी इनकी मान्यता अनिवार्य हो जाती है। मानवीय वृत्ति में सत्य के लिए आग्रह का होना अपक्षित ही नही, स्वाभाविक भी है। इसी प्रकार अमानव की प्रवृत्ति असत्य की आश्रिता होती है। कवि का उदय मानव-हृदय में हुआ करता है। इसलिये मानवीय वृत्तियों के

---

१ 'माहित्य' (त्रैमासिक, प्राचीन संस्करण, वर्ष १, खण्ड २, ज्येष्ठ, स० १९९४ वि०, 'तुलसीदास और उनकी बरवै रामायण' शीर्षक लेख), पृ० ७४-७५।

साथ सहानुभूति रखता हुआ कवि तदनुकूल व्यक्त होने के लिये बाध्य हो जाता है। एक बहेलिये ने क्रीड़ा-रत क्रौंच के जोड़े मे से एक की हत्या कर डाली। बाल्मीकि पास ही खड़े, इस घटना को देख रहे थे। बहेलिये की क्रूरता और क्रौंच की करुण दशा, दोनों उनकी आँखो के सामने थी। बाल्मीकि मानव थे—कवि थे। उनका हृदय करुणा से द्रवीभूत हो गया। उनके मुख-द्वार से निःसृत कविता-गंगा की एक धारा मानव-हृदय की धरा पर अकस्मात् बह गई। किन्तु बाल्मीकि के स्थान पर कदाचित् कोई व्याधा ही देखनेवाला होता तो वही घटना उसके मन मे आह्लादपूर्ण कौतूहल का कारण बन जाती। व्याधा बहेलिये के हृदय की सजातीय पशुवृत्ति से सहमत होकर हर्षोत्फुल्ल हो उठता। यहाँ हम देखते है कि पाशवी वृत्तियों से कविता के लिए प्रेरणाओं और संभावनाओ का सर्वथा अभाव है। अस्तु, कविता केवल मानवीय वृत्तियों में विहार करनेवाली वह वनदेवी है, जो विश्व-विपिन मे एक साथ बसनेवाले हिंसक पशुओं से मानवता की रक्षा करती है। मानवता को उद्बुद्ध करनेवाले उपकरणों से रहित कृतियों को कविता की संज्ञा किसी भी दशा मे प्राप्त नहीं हो सकती है। यही कारण है कि प्राचीन काव्य-परम्परा में सबकही आदर्श का स्वागत होता आया है। किन्तु, इसका यह अर्थ कदापि नही कि कविता आदर्श की लैला बनी रहकर यथार्थ से बिल्कुल विरोध कर ले। सच तो यह है कि यथार्थ और आदर्श दोनों के संधि-योग से ही कविता की अन्तरात्मा कृतार्थ हो सकती है।[1]

(३)

परियों ने सनेह के आँसुओं से अपने अनुरूप सँवारा तुझे;
मृदु ताप का हाथ उठा के यहाँ गिरि के शिखरों ने उतारा तुझे;

---

१. बिभाग में सुरक्षित आपके द्वारा प्रेषित सामग्री से।

रवि ने दिन, रात मयंक ने भी दुतिमान करों से दुलारा तुझे;
पर बोल, कहाँ लिए जा रही है अब जीवन की यह धारा तुझे।[1]

(४)

रजनी नभ-दीप दिखाती, उषा कर में खड़ी कंचन थार लिए।
अलबेली सहेली समीरण भी चली संग मे सौरभ-भार लिए॥
सुभ-कोष में स्वर्ण सुहाग वहाँ वनदेवी विदा उपहार लिए।
कहो, धन्य बनाने चली है किसे, यह जीवन का प्रिय प्यार लिए॥

(५)

छहरैं सिर पै छवि गंग जटा उनकी वर बेनी गुही लहरैं।
लहरैं कटि केहरि वृत्ति इतै उत सारी मनोहरि सी पहरैं॥
पहरैं इत मुण्ड की मालिका कण्ठ उतै उर पै मनिमाल धरैं।
परमेस सदा यौं उमेस उमा मिलि यों मन-मन्दिर में विहरैं॥

(६)

चरचाय चिता की विभूति हिये अति चाव सो मुण्ड की माल सजावै।
तन धारि भुजंग दिगम्बर ह्वै वृष पीठ पै बैठि बिसान बजावैं॥
अहो, देखिये तो महिमा इनकी यह कैसी अपूरब रीति चलावैं।
परमेस भयंकर भेस किए पर शंकर-शंकर नाम बिकावैं॥

*

---

१. वही। अगले तीन उदाहरण भी वहीं से।

(डॉ०) जनार्दन मिश्र

आप भागलपुर-जिला के 'मिश्रपुर' (पो० कुमैठा, थाना-सुलतानगज) नामक ग्राम के निवासी पं० कौशिकीनाथ मिश्र के पुत्र है। आपका जन्म ७ अगस्त, सन् १८९७ ई० श्रावण कृष्ण-सप्तमी, सं० १९५४ वि०) को हुआ था।[१] आपकी आरम्भिक शिक्षा सुलतानगज (भागलपुर) के एम्० ई० स्कूल मे हुई। आपने सन् १९२० ई मे काव्यतीर्थ' की परीक्षा पास की और सन् १९२२ ई० मे टी० एन्० जे० कॉलेज, भागलपुर से आपने अँगरेजी मे ऑनर्स लेकर बी० ए० की परीक्षा पास की। सन् १९२४ ई० मे सस्कृत मे पटना-विश्वविद्यालय से एम्० ए० करने के एक ही वर्ष बाद आप 'साहित्याचार्य' हुए। सन् १९२७ ई० मे आपने पुनः हिन्दी मे एम्० ए० किया। इसके बाद सन् १९३४ ई० मे आप जर्मनी चले गये। वहाँ 'म्युनिख कोयनिग्स बर्ग' से 'रेलिजस पोयट्री ऑव सूरदास' विषय पर आपने पीएच्० डी० की उपाधि प्राप्त की। जर्मनी मे रहकर आपने भारतीय सस्कृति, वैदिक साहित्य और भाषाविज्ञान का भी अध्ययन किया। जर्मनी से लौटने के बाद आप पटना के बी० एन्० कॉलेज मे संस्कृत-हिन्दी-विभाग के अध्यक्ष-पद पर नियुक्त हुए। आगे चलकर आप पटना-विश्वविद्यालय के सिनेट-सदस्य और हिन्दी-बोर्ड के अध्यक्ष भी हुए। इसके पश्चात् सन् १९४९ ई० मे आप भागलपुर के टी० एन० बी० कॉलेज मे प्राचार्य-पद को अलकृत किया। वहाँ से सन् १९५७ ई० मे अवकाश-ग्रहण करने के बाद आप बिहार-सरकार द्वारा दरभंगा मे स्थापित संस्कृत शोध-सस्थान के निदेशक-पद पर नियुक्त हुए। इन दिनो आपने वहाँ से भी अवकाश ग्रहण कर लिया है।

सस्कृत-हिन्दी के अतिरिक्त अँगरेजी, जर्मन आदि विदेशी भाषाओ और बँगला, मराठी, गुजराती आदि हिन्दीतर देशी भाषाओ मे भी आपकी गहरी पैठ है। आप एक सौम्य एव मृदु-मधुर प्रकृति के स्वाध्यायशील विद्वान् है। अपने इन्ही गुणो के कारण आप आरम्भ मे ही बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् की सामान्य समिति के सदस्य चुने गये थे। आपकी गणना समालोचक, अन्वेषक एवं धर्मनिष्ठ कर्मठ पुरुष के रूप मे की जाती है। अन्य कई संकलित सम्पादित पुस्तको के अतिरिक्त आपके द्वारा लिखित कुछ प्रमुख हिन्दी-पुस्तको के नाम इस प्रकार है—(१) विद्यापति, (२) भारतीय सस्कृति की प्रस्तावना, (३) सूरदास, (४, भारतीय प्रतीक-विद्या,[२] (५) तन्त्र की खोज मे सत्संग आदि।[३]

उदाहरण

(१)

आत्मा जब अविद्या-माया के मोह में पडकर अपने को जड़ प्रकृति अर्थात् शरीर समझने लगता है, तब कर्म-बन्धन में पड़कर यह

---

१ 'बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् का उद्घाटन-समारोह-स्मारक', पृ० ५। इसके अतिरिक्त देखिए, 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ५५३, ६१७), 'हिन्दीसेवी ससार' (वही, पृ० ८३), 'मिश्रबन्धुविनोद' (वही, चतुर्थ भाग, पृ० ६०५) और 'बिहार-शब्दकोश' (वही, पृ० ६६२)।

२. बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् से प्रकाशित।

३. आपकी कुछ पुस्तकाकार रचनाएँ अँगरेजी एव संस्कृत-भाषाओं में भी मिलती हैं।

जीवात्मा हो जाता है। जिस प्रकार किसी घर में रहनेवाला मनुष्य यह समझने लगे कि मैं ही घर हूँ और घर की दीवार के टूटने से यह समझे कि मेरा ही हाथ-पैर टूट गया और रोने-चिल्लाने लगे, उसी तरह जड शरीर की इन्द्रियों के कार्य (काम-क्रोध, सुख-दु.खादि) को जब आत्मा अपना सुख-दुःख समझ कर रोने-हँसने लगता है, और तदनुसार कर्म में लीन हो जाता है तब यह कर्मबद्ध आत्मा, जीवात्मा कहलाता है । इस कर्म-बन्धन से छुटकारा ही मोक्ष (छुटकारा) है। यह तत्त्व-ज्ञान से प्राप्त होता है। तत्त्व (तत् + त्व) का अर्थ है— उपाधि रहित असली रूप। यहाँ जीवात्मा की उपमा उस सिह से दी जा सकती है, जो गदहे की खाल ओढकर अपने को गदहा समझ ले और गदहे की तरह बोलने तथा अन्य व्यवहार करने लगे। किन्तु उसे मालूम हो जाय कि मैं सिंह हूँ तो खाल फेंक कर सिंह की तरह गरजने और अन्य व्यवहार करने लगे, उसी तरह जीवात्मा का, अर्थात् गदहे की खाल मे सिह को अपने यथार्थ रूप का ज्ञान हो जाय तो वह बन्धन से छूट-कर, अपना रूप अर्थात् आत्मा-परमात्मा का रूप ग्रहण कर लेता है। इस बन्धन का मूल कारण अविद्या है। अविद्या से तृष्णा, तृष्णा से कर्म और कर्म से बन्धन होता है। यदि भगवत्कृपा अथवा गुरु-कृपा से साधनाओं द्वारा अविद्या का नाश हो जाय तो तृष्णा और कर्म आपसे आप नष्ट हो जाते है।[१]

(२)

विद्यापति दूसरी श्रेणी के कवि है। इसलिए इनकी रचना में उत्तम पदों की प्रचुरता है। इनके पदों मे कभी-कभी लोगों को अश्लीलता का आभास मिलता है। इसके कारण है। स्त्री-पुरुष के रूप में जीवात्मा और परमात्मा का सम्बन्ध देखने से, उनके वर्णन में,

---

१. 'भारतीय प्रतीक विद्या' (डॉ० जनार्दन मिश्र, सन् १९५९ ई०) पृ० २३।

स्त्री-पुरुष सम्बन्धी भाषा, भाव और अलंकारो के प्रयोग ही उपयुक्त हो सकते है।

जिस प्रकार ईश्वर की मातृरूप मे कल्पना कर भक्त उनके साथ बालकों की सी चेष्टा करता है, कभी रूठता है, कभी मचलता है और कभो उनकी गोद में बैठकर उनके आभूषणों के साथ खेलता है। उन्हें स्नेहमय समझ सांसारिक विघ्न-बाधाओ पर हँसता है; उसी प्रकार पुरुष वा स्वामी के रूप में उनकी कल्पना कर भक्त स्वभावतः वैसी ही चेष्टायें करता है जैसी कोई पतिव्रता स्त्रो अपने स्वामी के साथ करती है।[1]

जयन्तीप्रसाद दुबे 'शंकर'

आप सन्तालपरगना-जिला के 'बन्दनवार' (पो० बन्दनवार) नामक ग्राम के निवासी श्रीमहाराज दुबे के पुत्र है। आपका जन्म फसली साल १३०१ (सन् १८९४ ई०) की आपाढ कृष्ण तृतीया को हुआ था।[2] आपकी शैक्षणिक योग्यता अधिक नही थी। अपने गाँव की पाठशाला से अपर प्राइमरी की परीक्षा पास करने के बाद आप आगे नही पढ़ सके। फिर भी, स्वाध्याय के बल पर आप काव्य-रचना करने लगे। आपकी साहित्य-सेवा का आरम्भिक वर्ष सन् १९१४ ई० बतलाया जाता है। आपने श्रीमद्भगवद्गीता का पद्यानुवाद किया था, जो दुर्भाग्यवश अप्रकाशित ही रह गया। स्फुट रचनाओ के अन्तर्गत आपने मुख्य रूप से कवित्त-सवैयो की ही रचना की है।

उदाहरण

(१)

जो कर्म का आरम्भ ही करता नही वह पुरुष भी।
निष्कर्मता को प्राप्त होता है नहीं उससे कभी॥

---

१. 'विद्यापति' (डॉ० जनार्दन मिश्र, सं० १९८९ वि०), ४४।
२. आपके द्वारा दिनांक ९ अगस्त, सन् १९५६ ई० को प्रेषित सूचना के आधार पर।

परित्याग कर निज कर्म को भगवान को पाता नही।
इस हेतु करना कर्म का है उचित सबको नित्य ही ॥[1]

(२)

निज धर्म के अनुरूप तेरे योग्य जो सब कर्म है।
उस कर्म को तू कर निरन्तर पाथ तेरा धर्म है॥
निष्कर्म होने की अपेक्षा कर्म करना श्रेय है।
इससे न मिलती देहयात्रा इसलिए भी हेय है॥[2]

जवाहरप्रसाद

आप शाहाबाद-जिला के 'चन्दा-अखौरी' नामक गाँव के निवासी मुंशी प्रभुदयालजी के पुत्र थे। आपका जन्म स० १९३१ वि० (सन् १८७५ ई०) की श्रावण शुक्ल एकादशी को हुआ था।[3] आपकी आरम्भिक शिक्षा गाँव के मौलवी की देखरेख मे हुई। उर्दू-फारसी के अतिरिक्त हिन्दी और व्रजभाषा पर भी आपने अच्छा अधिकार प्राप्त कर लिया था। आपका विवाह शाहाबाद जिला के 'कौलोडिहरी' नामक ग्राम मे हुआ था, जो आगे चलकर आपको तरका के रूप मे प्राप्त हो गया। अत, आप अपनी जन्मभूमि छोडकर वही जाकर रहने लगे। आप देवी के उपासक थे। नित्य देवी पूजा के बाद, आप उसी आसन पर बैठकर काव्य-रचना करने के पश्चात् और कोई काम करते थे। आप अनेक दिनो तक शाहाबाद के 'गुण्डी' निवासी बाबू लल्लूजी के यहाँ भी थे। राज-दरबारों मे आपकी कविता की बडी पूछ थी। कई दरबार से आपको पुरस्कार भी मिले थे। आपने अनेक बारहमासाओ की रचना की थी। आपकी 'आम' शीर्षक कविता बहुत प्रसिद्ध बतलाई जाती है, जिसमे संसार-भर के आमो के नाम आ गये है। आपकी पुस्तकाकार एकमात्र रचना 'हनुमानाष्टक' बतलाई जाती है। आप सन् १९४२ ई० मे स्वर्ग सिधारे। आपकी रचना के उदाहरण हमे नही मिले।

---

१. आपके द्वारा प्रेषित सामग्री से।

२. वही।

३. 'गाँव-घर' (वर्ष १, अक ७, १६ जनवरी, सन् १९६१ ई०) पृ० १३ में प्रकाशित सम्पादक श्रीभानुजी की 'पुरखा-पुरनियाँ : जवाहिर कवि'-शीर्षक टिप्पणी के आधार पर। आपके परिचय-लेखन में विभाग में सुरक्षित सामग्री से भी सहायता ली गई है।

जवाहिरमल्ल अग्रवाल 'पोखराज'

आप गया-जिला के 'दाऊदनगर' नामक स्थान के निवासी श्रीझाऊलालजी के पुत्र थे।[1] आपका जन्म सं० १९०८ वि० (सन् १८५१ ई०) की पौष कृष्ण नवमी (बुधवार) को हुआ था।[2] बाल्यकाल से ही आपमे लिखने-पढने की रुचि थी। अत्यल्प वय से ही आपने कविता-लिखना शुरू कर दिया था। प्राचीन कवियो की सैकडो कविताएं आपको स्मरण थी। बाबू सिंगरफलाल नामक एक प्रसिद्ध रामायणी के ससर्ग से आपमे काव्य-रचना की प्रवृत्ति जगी थी। आपकी प्राथमिक शिक्षा घर पर ही हुई। प्रवेशिका (मैट्रिक) परीक्षा पास करने के बाद आपने मुख्तारी की परीक्षा पास की। उसके बाद आप कुछ दिनो तक 'देव' (गया) के पाठशाला मे मास्टर रहे। वहाँ के राजा श्रीभीष्मदेवजी आप पर बहुत प्रसन्न रहा करते थे। स० १९४४ वि० मे औरगाबाद के चन्दरगढ-राज्य मे आप मैनेजर से पद पर नियुक्त हुए। तीन वर्षों के बाद औरगाबाद और दाऊदनगर मे क्रमश आपने मुख्तारी शुरू कर दी। आपके ही प्रयत्न से 'दाऊदनगर' मे नगरपालिका को स्थापना हुई थी।

आप गद्य और पद्य दोनो मे रचनाएँ करते थे। आपको रचनाएँ 'कविवचन-सुधा', 'काव्यविलासिनी', 'रसिकमित्र', 'समस्यापूर्त्ति', बिहार-बन्धु' और 'क्षत्रिय-पत्रिका' नामक पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुआ करती थी। आप भारतेन्दु हरिश्चन्द्रजी की गोष्ठी के प्रमुख सदस्यों मे एक थे।[3] आपके द्वारा लिखित हिन्दी-पुस्तको मे इतिहास-मुकुर'[4], 'उपालम्भ', 'हरगंगा', 'पुलिस-स्तोत्र' आदि प्रमुख हैं।[5] आप सं० १९५२ वि० (सन् १९०१ ई) की श्रावण कृष्ण-नवमी को परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

लालन के उर मैं बिन ही, गुन-माल विलोकि के बाल रिसानी,
जानि जवाहिर जू बिनवैं, मन-मोहन जोरि कै पंकज पानी।

---

१. इनके पूर्वज 'गाजीपुर' से गया व्यापार करने आये थे और उसमें अच्छा लाभ देखकर यहीं बस गये। दो-तीन पीढ़ी तक तो साधारण रीति से काम होता रहा, किन्तु इनके पितामह दमड़ीलाल के समय ये लोग काफी धनाढ्य हो गये।

२ 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० १०८।

३. एक बार आप भारतेन्दु बाबू की बैठक में उनकी अनुपस्थिति में पहुँचे। वहाँ आपने कुछ ही क्षणों में वहाँ के झाड़-फानूसों पर कविता रच दी। जब भारतेन्दुजी आये, तब तो आपकी कविता पर बहुत प्रसन्न हुए और वहाँ की सजावट के समस्त उपादान आपको प्रदान करने लगे। किन्तु, आपने उन्हें स्वीकार नहीं किया।—संस्मरण डॉ० : रामेश्वर प्रसाद (दानापुर कैण्ट, पटना) द्वारा प्रेषित।

४. पहले वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई से प्रकाशित।

५. ये सारी पुस्तकें खड्गविलास प्रेस, पटना से प्रकाशित हुई थीं।—देखिए, 'हिन्दी-पुस्तक-साहित्य' (वही), पृ० ४५३।

दोख क्षमा करु प्राण प्रिया, अरु मोसों लिखाय लै पत्र प्रमानी,
आज तें जौं लौ जियौं रहि हौ, कहिबे महँ रावरे राधिका रानी ।[1]

(२)

कंज प्रहार पहार गिरै कुलिसोपम हीरक बेधिये बारन ।
बाँधि पिपीलिका के पग माहि फिराइये बारन कोस हजारन ।
ऊधव जू ब्रजमंडली मे न कोऊ तन-ताप है जोग अंगारन ।
नन्द के नन्दन ब्रह्मन होहि फिरै बरु अंब कदंब की डारन ।[2]

(३)

कहौं साँच सखा दिन पाँच भए, रुख फेरे तिया इहि ओर लगी ।
पुनि चारि दिना तें बिनाही बकै, रुचि सो दृग सों दृग जोरै लगी ।।
दिन तीन सों मोसो मिले के लिए, करिबे सखियाँ सो निहारै लगी ।
अब तो अधरानि पै दै अधरा, दिन द्वै ते पियूष निचौरे लगी ।।

(४)

एक ओर बीर मरहट्टन चमू अपार,
एक ओर अहमद शाह दल जूटिगो ।
तुपक बँदूकन को मार बेशुमार भई,
काल मृगराज मानो पिंजर ते छूटिगो ।
सदा शिव विश्वनाथ दोऊ वीर-लोक,
साहस बनाय सब सूरन को टूटिगो ।
लूटि गयो हिन्दुन को राज कहै पोखराज,
वाही घरी भारत को भाग जनु फूटिगो ।।[3]

---

१. स्व० श्रीशिवनन्दन सहायजी द्वारा प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री से ।
२. वही । अगला उदाहरण भी वहीं से प्राप्त ।
३. डॉ० रामेश्वर प्रसाद (दानापुर कैण्ट, पटना) से प्राप्त ।

जानकीशरण 'स्नेहलता'

आप गया-जिला के 'दौलतपुर' नामक ग्राम-निवासी प्रसिद्ध सन्त[1] एवं रामायणी श्रीश्यामदासजी के पुत्र थे। आपका जन्म वहीं सं० १९३८ वि० की फाल्गुन कृष्ण-दशमी को हुआ था।[2] किन्तु, आप सदा स्नेह-भवन' (अयोध्या) मे ही निवास करते रहे। आपने एक पुत्र के उत्पन्न होने के बाद ही अपने पिता की अनुमति से, वैराग्य धारण कर लिया था। आपकी शिक्षा विधिवत् किसी विद्यालय मे नही हुई। अपने पूज्य पिताजी से ही आपने बचपन मे काव्यशास्त्र और फारसी, संस्कृत, ब्रजभाषा, अवधी आदि अनेक भाषाओ के महत्त्वपूर्ण ग्रन्थो का अध्ययन किया। आप जब १७ वर्ष के हुए, तब 'बिरनामा' (गया) के रईस बच्चूबाबू के यहाँ चले आये, जहाँ विद्याध्ययन के साथ-साथ धार्मिक-सत्सग का भी आपको सुयोग मिला। यही आपने सगीत-शास्त्र की शिक्षा प्राप्त की। आपके दीक्षागुरु आपके पिता ही थे। जब आप बडे हुए, तब आपने अयोध्या के हनुमन्निवासवासी प्रसिद्ध रामभक्त महात्मा श्रीगोमतीदासजी से 'सम्बन्ध' प्राप्त किया। आपने तीर्थाटन खूब किये और इस सिलसिले मे आपका देश के अनेक विद्वान् सन्त-महात्माओ से सम्पर्क स्थापित हुआ।[3]

आप एक अत्यन्त निश्छल, सरल एव सहृदय रामभक्त के रूप मे समादृत थे। आपकी गणना तुलसी-साहित्य के मर्मज्ञ और विशेषज्ञ के रूप मे होती थी। गोस्वामी तुलसीदासजी की मानसो शिष्य परम्परा मे आपका स्थान आठवाँ था। उदारता आपमे ऐसी थी कि कथावाचक के रूप मे प्राप्त अपने लाखो रुपये आपने सन्तो एव गृहस्थो के लिए लुटा दिये। इसी कारण, काशी और अयोध्या म आपको 'शाही फकीर' तथा 'राजर्षि' की संज्ञा दी गई थी।[4] आपके सत्प्रयत्न से ही अखिलभारतीय तुलसी-साहित्य-सम्मेलन नामक संस्था की स्थापना हुई थी, जिसका उद्देश्य गोस्वामीजी की समस्त रचनाओ के शुद्ध पाठो का अन्वेषण, उनका प्रकाशन एव प्रचार है। अलवर (राजस्थान), रीवाँ (विन्ध्यप्रदेश), बलरामपुर (उत्तरप्रदेश) और बिहार के अमावाँ (पटना), बनैली (पूर्णिया), टेकारी, देव, मकसूदपूर (गया) तथा दरभगा के स्वर्गीय एव वर्त्तमान राजाओ-महाराजाओ से भी आप सम्मानित हुए थे। आपकी रचनाएँ खड़ीबोली ओर ब्रजभाषा के अतिरिक्त भोजपुरी मे भी मिलती है। आपकी प्रकाशित पुस्तकाकार रचनाओ के नाम इस प्रकार है—(१) मानस-मार्त्तण्ड,[5]

---

१ इनका परिचय विस्तार के साथ 'कल्याण' के 'सन्त-अक' में प्रकाशित हुआ था।

२. देखिए, 'साहित्य' (वही, वर्ष ७, अक ४, जनवरी, सन् १९५७ ई०), पृ० ५३—५७ पर श्रीपाण्डेय जगन्नाथप्रसाद सिंह का लेख और 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही), पृ० ६४४।

३ विद्वानों में श्रीभगवानप्रसाद 'रूपकला', श्रीअखिलानन्दजी, श्रीकालूराम शास्त्री, म० म० श्रीलक्ष्मण शास्त्री द्रविड़,प्रो० रामदास गौड़,श्रीलालाभगवान दीन,प०ज्वालाप्रसाद मिश्र,श्रीअयोध्या सिंह आदि हैं

४. आपके द्वारा स्थापित दो मठ हैं—एक आपके जन्मस्थान 'दौलतपुर' में और दूसरा 'स्नेह-भवन' अयोध्या में। दौलतपुर के मठ की देखरेख आपके शिष्य करते हैं। वहाँ आपका अपना प्रेस भी है। 'स्नेह-भवन' में आप स्वय निवास करते थे। वहाँ आप नित्य रामचरितमानस की कथा सन्तों एवं जिज्ञासु भक्तों को सुनाते थे।—देखिए, 'साहित्य' (वही), पृ० ५५।

५. ८ खण्डों में, केवल १ खण्ड (४५० पृ०) हितचिन्तक प्रेस, बनारस से प्रकाशित।

मानस-अभिप्राय-दीपक-चक्षु,[१], (३) श्रीसीताराम-संकीर्त्तन-पदावली[२], (४) विरहानल।[३] अप्रकाशित पुस्तकों की नामावली यह है—(१) श्रीरामनाम कला-कोष-मणिमंजूषा (२) विनयपत्रिका, (३) रामसतसई, (४) श्रीमानस-पूर्वोत्तर-पक्ष, (५) हनुमानबाहुक, (६) शतपच-चौपाई, (७) श्रीसीताराम-नखशिख[४], (८) जयकार-शतक[५], (९) नवीन भक्तमाल[६] (१० श्रीसीताराम-चरित-गीतावली, (११) फुटकर पद, (१२) तुलसी-साहित्य-भूषण (दो खण्डों में)[७] और (१३) श्रीसीताराम-संकीर्त्तन-पदावली, (तीनों भाग संयुक्त)। आप सन् १९५५ ई० के ग्यारह सितम्बर को पटना मे परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

श्रीगुरु भजन ते सुसाध्य सबै साधन ह्वै,
ताते गुरु सेवा सब साधन को सार है।
गुरु की कृपा ते ज्ञान योग औ विराग होत,
होत भक्ति बिरति अनूपम बिचार है॥
बूड़त भवाम्बुधि मे जीवहि स्वकर गहि,
कृपा के निधान गुरु देहि करि पार है।
श्रीगुरु परत्व यश महिमा अकथनीय,
'नेहलता' सब बिधि अगम अपार है॥[८]

---

१. प० शिवलाल पाठक के 'मानस-अभिप्रायदीपक' की टीका, ५५० पृष्ठ। सुलेमानी प्रेस, बनारस से प्रकाशित।
२. उक्त प्रेस से ही प्रकाशित १५० पृ०।
३ खड्गविलास प्रेस (पटना) से प्रकाशित १०० पृ०। 'मिश्रबन्धुविनोद' (वही, चतुर्थ भाग, पृ० २४१) में (१) गणाष्टक तथा (२) श्रीहंसकलाशतक नामक आपके दो और ग्रन्थों की चर्चा है।
४. कवित्त-सवैया-संवलित।
५ छप्पय छन्दों में।
६ छप्पय छन्दों में।
७ अलंकार-खण्ड तथा छन्द-खण्ड दो खण्डों में—प्रथम खण्ड में विस्तार के साथ गोस्वामी तुलसीदासजी की रचनाओं से अलंकारों के उदाहरण, परिभाषा-व्याख्या-सहित। द्वितीय खण्ड में विस्तार के साथ गोस्वामीजी की रचनाओं से छन्दों के उदाहरण, परिभाषा-व्याख्या-सहित।
८. 'श्रीसीताराम-संकीर्त्तन-पदावली' (तीनों भाग संयुक्त, महात्मा कविवर श्रीजानकीशरणजी 'स्नेहलता', सन् १९४७ ई०), पृ० ६।

(२)

आरति भंजन रीति तिहारी।
जब-जब विपति परी भक्तन पर, तब तेहि कहँ प्रभू लीन्ह उबारी।
मेरे दुख सुग्रीव विभीषण, शत्रु बालि दशकंधहिं मारी॥
करि भूपति थापेउ पुर दै, धन कोष सेन आदिक जुत नारी।
गज द्रौपदी आदि रक्षे बहु, चहुँ जुग माहिं वदहिं श्रुति चारी।
दीन पाल शरणागत वत्सल, गुण अम्बुधि प्रणतारत हारी॥
स्वामि अहौ मम श्रीरघुनन्दन, मैं तव चेरो हौं निपट दुखारी।
करुणाकर इत हेरि कृपा दृग, हरहु आसु बड़ विपति हमारी॥
जो अवलोकहुगे मम अवगुण, तो कल्पहु न होइ निस्तारी।
जिय विचारि वात्सल्यता गुणही, 'नेहलता' कहँ करहु सुखारी॥[1]

(३)

धरे हाथों मे सर धनुही, वही दिलवर हमारा है।
सलोना साँवरा छैला, सिया का प्रान प्यारा है॥
लिये संग मे सखाओं को, फिरे सरजू किनारे पै।
लिखा लेता गुलामी, उससे जिसने टुक निहारा है॥
चुराया चित्त को जिसने, श्रीमिथिलेश ज्ञानी का।
जनकपुरवासियों पै जिसने, जादू पढ़के डारा है॥
विधाता, संभु तक जिसकी, सदा करते कदमबोसी।
जिसे वेदों ने निरगुन औ, सगुन कहके पुकारा है॥
लगा के खाक कदमों की, दिया है तार पत्थर को।
गुनहगारों, गरीबों पै मेहर रखता अपारा है॥
नहीं ताकत किसी की, 'नेहलतिका' कह सके कुदरत।
उसीके नूर से कायम, जहाँ रहता ये सारा है॥[2]

---

१. 'श्रीसीताराम-संकीर्त्तन-पदावली (वही), पृ० २४।
२. 'साहित्य' (वही), पृ० ५६।

(४)

हौं तो तुअ कर बिक चुकी, अवध-छैल बिनुदाम।
तुम बिनु घर बन देवपुर लागत है जमधाम॥
तेरी विहँसन - फंद मे, परि निकसन किमि होय।
रसिक राज ढिग राखिये, 'नेहलता' गति जोय॥
विनय सुनेहु बोलत नही, गरबीला दिलदार।
'नेहलता' का सन कहूँ, कौन हरे दुखभार॥
जात जरो सब गात मम, बाड़ी बिरह दवाँचि।
'नेहलता' घनश्याम बिनु, कौन बुझे है राँचि॥
मैं अपनी अँखियान तै, अहौ अधिक लाचार।
'नेहलता' का दोस देऊँ, तोहि पिया दिलदार॥
लगि तन बिरह दवागि कस, अचरज सही दिखात।
दृग-धन नित बरसै सलिल तदपि न रंच बुझात॥[1]

(५)

कैधौ सोभा सर बीच बिकस्यौ सरोज,
कैधौ सोरह कलानि जुत अद्‌भुत सुचन्द है।
कैधौ विधि निज निपुनाई ते मुकुर रच्यौ,
देखि ताहि लियो करि मदन पसन्द है॥
कैधौ अवधेस - फरजन्द मन मोहिबे को,
सुन्दर अनूप पंचबान फेर फंद है।
'नेहलता' कैधौ अदभुत आब भरो,
मिथिलेश-नन्दिनी को मुख आनन्द को कंद है॥[2]

---

१. 'साहित्य' (वही), पृ० ५६।
२. वही, पृ० ५७।

कोउ दूजो कहा करि है सिर पै,
बदनामी की मोट लई सो लई।
गुरु लोगन लाज लिहाज सबै,
जग काजहु त्यागि दई सो दई॥
तन ते सब 'नेहलता' रँग धोई,
उनही रँग माँहि रई सो रई।
सब गाउँ के बासी हँसै तो हँसै,
हम स्याम की चेरी भई सो भई॥[1]

जीवनारायण मिश्र

आप गया-जिला के 'कुरका' नामक ग्राम (पो० देव) के निवासी पं० रामपदारथ मिश्र के पुत्र थे। आपका जन्म स० १६२४ वि० (सन् १८६८ ई०) की चैत्र शुक्ल-द्वितीया को हुआ था।[2] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही आपके पिताजी की देख-रेख मे हुई थी। आगे चलकर जीविका के लिए आप अध्यापन का कार्य करने लगे। एक कुशल अध्यापक के अतिरिक्त आपकी गणना हिन्दी-संस्कृत के विद्वान् के रूप मे भी होती थी। रामचरितमानस के आधार पर 'बलिजारी' नामक पुस्तक लिखने के उपहार मे 'वेणी पोयट्री-प्राइजफण्ड' से आपको प्रथम श्रेणी का पुरस्कार प्राप्त हुआ था। उक्त पुस्तक के अतिरिक्त आपने 'बिहार के गृहस्थो का जीवन' नामक एक और पुस्तक को रचना की थी। आप १५ जुलाई, सन् १६२७ ई० को परलोकगामी हुए। आपकी रचना के उदाहरण नही मिले।

---

१. 'साहित्य' (वही), पृ० ५७।
२. 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० ७८।

जैनेन्द्रकिशोर जैन

आप शाहाबाद-जिला के मुख्यनगर आरा (जैनेन्द्र-भवन) निवासी श्रीनन्दकिशोर लालजी के पुत्र थे।[1] आपका जन्म सं० १९२८ वि० (सन् १८७१ ई०) की भाद्र शुक्ल अष्टमी (रविवार) को हुआ था।[2] जब आप पाँच वर्ष के थे, तभी आपका अक्षरारम्भ करा दिया गया और आप मकतब की विधि से पढने लगे। लगभग नौ वर्ष की अवस्था मे आप आरा जिला-स्कूल मे भरती हुए। लेकिन, सन् १८९१ ई० मे आपने पढना ही छोड दिया। आगे चलकर हिन्दी मे आपकी विशेष अभिरुचि पं० किशोरीलाल गोस्वामी के संसर्ग से हुई। आप उन्हे ही अपना विद्यागुरु मानते थे। छन्द और व्याकरण का विशेष ज्ञान प्राप्त करने मे आरा-नागरी-प्रचारिणी के एक पदाधिकारी भी सहायक हुए। आपने आरा के प्रसिद्ध उर्दू-कवि मौलवी अबुलफजल से उर्दू की शेरो-शायरी का भी ज्ञान प्राप्त किया था। आपकी गणना आरा के प्रतिष्ठित रईसो और आरा नागरी-प्रचारिणी सभा के संस्थापको मे होती है। कहते हैं भारतेन्दुजी ने जिस प्रकार अनेक नाटक लिखकर उनके अभिनय द्वारा हिन्दी-प्रचार को उत्तेजन दिया था, उसी प्रकार आपने भी कई नाटक लिखकर तथा अपने द्रव्य से नाटक-मण्डली स्थापित कर जनता मे साहित्यानुराग उत्पन्न किया था।[3] पं० सकलनारायण शर्मा की तरह आपने भी उस समय मौलिक उपन्यासो की रचना की थी जब हिन्दी मे मौलिक उपन्यासो की संख्या उँगली पर गिने जाने योग्य थी। मिश्रबन्धुओ ने आपको 'नामी उपन्यास-लेखक' बतलाया है।[4] आप काव्य-रचना मे भी कुशल थे।[5] आपके द्वारा लिखित-प्रकाशित पुस्तको के नाम ये है—(१) कमलिनी[6], (२) मनोरमा,[7] (३) प्रमिला, (४) सुलोचना, (५) सोमा सती,[8] (६) चुड़ैल (दो भागो मे)[9], (७) परख[10], (८) सत्यवती,[11] (९) सुकुमाल, (१०) मनोवती,

---

१. इनके पूर्वज पटना-जिला के 'नौबतपुर' गाँव में रहते थे। व्यापारवश आरा आकर बस गये थे। ये आरा-निवासी अग्रवाल जैनों में धर्म-विद्या के पण्डित माने जाते थे। मुख्तारी पास थे, पर उसका व्यवसाय नहीं किया। चिकित्सा पर अधिकार रखते थे और गरीबों को मुफ्त दवा देते थे। बाबू 'जैनेन्द्रकिशोर की जीवनी' (पं० सकलनारायण पाण्डेय, प्रकाशन-काल, वही, पृ० १),

२. आपके पोष्यपुत्र और हिन्दी के सुपरिचित लेखक—श्रीदेवेन्द्रकिशोर जैन द्वारा दिनांक ६ मई, सन् १९५९ ई० को प्राप्त विवरण के अनुसार।

३. देखिए, 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही), पृ० ५४१।

४ 'मिश्रबन्धुविनोद (वही चतुर्थ भाग), पृ० १९६ तथा पृ० २०१।

५. वही, पृ० ५५६।

६. भारत-जीवन प्रेस से प्रकाशित।

७ जैन ग्रन्थ-रत्नाकर, गिरगाँव, बम्बई से प्रकाशित।

८. पहला, प्र० श्रीवेंकटेश्वर मुद्रणालय, बम्बई।

९. एक फ्रांसीसी उपन्यास का आशयानुवाद। सन् १९१० ई० में भारत-जीवन प्रेससे दो भागों में प्रकाशित।

१० मिश्रबन्धुओं ने लिखा है कि इसपर आपको हिन्दुस्तानी एकेडेमी से पुरस्कार मिला था। लेकिन, इस सिलसिले में दिल्ली-निवासी एक दूसरे प्रसिद्ध लेखक जैनेन्द्रकुमार जैन का परिचय भी 'मिश्रबन्धु-विनोद' में अवलोकनीय है। उनकी भी एक रचना 'परख' थी, जिसपर एकेडेमी पुरस्कार मिलने की बात मिश्रबन्धुओं ने लिखी है।—देखिए, 'मिश्रबन्धुविनोद' (वही), पृ० २०१ तथा ५६७।

११. ब्रह्मप्रकाश यन्त्रालय, बिठूर से प्रकाशित।

(११) गुलेनार, (१२) भजन नवरत्न,[1] (१३) सावन-सिंगार[2], (१४) सावन-सोहाग, (१५) होली की पिचकारी, (१६) चैती गुलाब, (१७) हास्य मंजरी[3], (१८) वीर द्रौपदी, (१९) बाबू रामदीन सिंह की जीवनी, (२०) संगीत-मनोरमा (२१) वीरेन्द्र वीर या चाँदो का तिलिस्म, (२२) खगोल-विज्ञान, (२३) बारह भावना और (२४) शृंगार-लता।[4] आप सन् १९०९ ई० को १४ मई (शनिवार) को परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

मोहन खेल-सी राधिका को,
    बिपरीत को चित्र विचित्र बनाय के।
औचक आय बनाय के बात,
    दिखाय दियो छल ते बहराय के॥
देखि 'किशोर' रही मुसकाय,
    तिया मन मे बहुभाँति लजाय के।
जाओ हटो नहिं नीक लगै,
    कहि फारि दियो छबि छीनि रिसाय के॥[5]

(२)

छीन भयो काय हाय माया नाहि छोड़ै संग
    काल अंग-अंग भग करिके बिदारे है।

---

१. इनकी सैकड़ों प्रतियाँ मुफ्त बाँटी गई थीं।

२. इसकी भी अनेकानेक प्रतियाँ बिना मूल्य के वितरित की गई थीं।

३. ब्रह्मप्रकाश यन्त्रालय बिठूर से प्रकाशित।

४ श्रीवेंकटेश्वर मुद्रणालय, बम्बई से प्रकाशित। इनके अतिरिक्त आपने उर्दू में भी कई नाटक लिखे थे, जिनमें प्रमुख हैं—सत्य-हरिश्चन्द्र-नाटक, चन्द्रहास-नाटक तथा हुस्नआरा-नाटक। आपके द्वारा लिखित कुछ अप्रकाशित हिन्दी-रचनाओं के नाम इस प्रकार हैं—(१) सयोगिनी उपन्यास, (२) दुराचारी उपन्यास, (३) शरतकुमारी उपन्यास, (४) कलिकौतुक-नाटक, (५) मनोरमासती-नाटक, (६) श्रीपालचरित्र-नाटक, (७) प्रद्युम्नचरित्र-नाटक, (८) वेश्या-विहार-नाटक, (९) ज्ञानप्रकाश प्रहसन (१०) कृपणदास-प्रहसन, (११) धन, (१२) पहेली, (१३) अजनासती, (१४) सगीतमाला, (१५) रामरम, (१६) श्रावकाचार दोहावली, (१७) सेठ सुदर्शन-पूजा, (१८) श्रीवासुपूज्य को निर्वाण-पूजा, (१९) रोठतीजव्रतकथा तथा (२०) कर्णाटक देश में जैनियों का निवास।

५. 'रसिकमित्र' (कानपुर, वर्ष ५, सख्या १२, फरवरी, सन् १९०३ ई०), पृ० १५।

लंक भयो बंक चाल चलत न जात नेक,
जग के सरोज सुख भयो सब न्यारे है ।।
जोत घटे आँखिन के बदन उदोत घटे,
जीवन खद्योत भयो मनो टिमकारे है ।
मोह मद तृष्णा नित बढ़त किशोर हाय,
जल तो घटोई जात बढ़त फुहारे है ।।[1]

तपेश्वर सिंह 'तपस्वी'

आप गया-जिला के 'कुडवाँ' नामक ग्राम के निवासी बाबू द्वारका सिंहजी के पुत्र थे। आपका जन्म उक्त ग्राम मे ही सं० १९४९ वि० की आश्विन कृष्ण-चतुर्थी, रविवार (अक्टूबर, सन् १८९२ ई०) को हुआ था।[2] सन् १९१४ ई० मे कलकत्ता-विश्वविद्यालय से बी० ए० पासकर आप मुजफ्फरपुर के बी० बी० कालेजिएट स्कूल के प्रधानाध्यापक हो गये। सन् १९२१ ई० मे आपने असहयोग-आन्दोलन मे भाग लिया जिसके कारण उक्त स्कूल से आपका सम्बन्ध-विच्छेद हो गया। सन् १९२५ ई० मे हिन्दू-विश्वविद्यालय, काशी से आपने एल्० एल्-बी० की परीक्षा पास की और गया मे वकालत करने लगे।

आप साहित्य-सेवा की ओर सन् १९१८ ई० मे प्रवृत्त हुए। आगे चलकर आपकी गणना संस्कृत के एक सफल कवि के रूप मे हुई।[3] हिन्दी से आपका विशेष प्रेम था। अपनी सभी संस्कृत-पुस्तकों की भूमिका आपने हिन्दी में ही लिखी है। 'हरिप्रिया' का हिन्दी-अनुवाद तो उसी के साथ प्रकाशित है। हिन्दी मे आपने नैतिक भावनाओ से भरपूर अनेक निबन्ध लिखे हैं, जो तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित है।

उदाहरण

(१)

राधा-कृष्ण, ये दो शब्द माखन-मिश्री जैसेरसना को कोमल मधुर आम के बगीचे की हरी-हरी पत्तियों के बीच से कूकनेवाली अदृश्य

---

१. 'बाबू जैनेन्द्रकिशोर की जीवनी' (वही), पृ० ७ ।

२. आपके द्वारा दिनांक १ मई, सन् १९५९ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सूचना के आधार पर ।

३. संस्कृत में आपकी ये रचनाएँ प्रकाशित हैं – (१) वसन्त-विहार, (२) श्रीहरिप्रिया, (३) पुनर्मिलनम

कोकिला की ध्वनि से कानों को सुखद रमणीय, सुन्दर सघन जंगलों में गोपी कृष्ण की रट लगानेवाली पण्डुक की बोली के समान अन्त:करण को उद्बोधक, नन्हें से बच्चो की तुतलाहट तुल्य माता-पिता के हृदय को सम्मोहक, मधुयामिनी मे प्रियतम के अन्तस्तल को आनन्द विभोर कर देनेवाला मुग्ध वधू का रसमय कलभाषण जैसे श्रवण सुखद, प्रकृति पुरुष के परिचायक मधुर गीत जैसे आत्मग्राह्य, सुदीर्घ कठिन तपस्या के पश्चात् बुद्धदेव को दिव्य ज्योति की झलक के समान आत्मा को शान्तिप्रद, वीर और शृङ्गार रसों के सम्मिश्रण जैसे नयनोत्सव, कविता-कामिनी के अङ्ग-अङ्ग के अलंकार जैसे आकर्षक, पातञ्जल योगसूत्र जैसे उच्चतम गम्भीर भाव के द्योतक और भक्तजन मानस सर्वस्व तथा संसार विषय वृक्ष के दो सुन्दर फल जैसे लोभ्य (ये दो शुद्ध) द्वापर से आजतक न मालूम कितने ग्रन्थ, लेख, प्रबन्ध और कविता के विषय हो चुके है और वर्तमान को छोड़ भविष्य मे कितने होगे।[1]

(२)

रसो में शृङ्गार का स्थान पहला है। इसमे आकर्षण है, उल्लास है और आनन्द है और है अन्तरात्मा की अभिव्यक्ति। इसकी पराकाष्ठा वात्सल्य है। रस की उद्गमभूमि विचार नही है, अनुभाव है जिसका सम्बन्ध हृदय से है। वाह्य पदार्थो के दर्शन से अथवा घटनाओ से जो प्रभाव हमारे हृदय पर पडता है और उससे जिस भाव की सृष्टि होती है, वह रस है। यह आवश्यक नही कि भावों की सृष्टि बराबर वाह्य पदार्थों पर निर्भर करे, वह आभ्यन्तरिक कारणों से भी होती है।

तथा (४) श्रीमधुधारा। इनके अतिरिक्त आपके द्वारा रचित 'श्रीकृष्णचरितम्', 'श्रीपार्वतीमङ्गलम्,' श्रीपंचवटी' आदि कई अन्य संस्कृत-रचनाएँ अभी तक अप्रकाशित ही पड़ी हैं।

१ 'श्रीहरिप्रिया' (श्रीतपेश्वर सिंह 'तपस्वी', सन् १९४९ ई०), पृ० १ (दो शब्द)।

रस सर्वव्यापक है। अतएव यह उच्चकोटि का मनोरथ है और परमतत्व है।[1]

तारकचरण भट्ट 'तारक'

आप गया-जिला के 'कृष्णद्वारका' नामक स्थान के निवासी पं० कृष्णलालजी 'भट्ट' के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९४१ वि० (सन् १८८४ ई०) की अग्रहण शुक्ल-दशमी को हुआ था।[2] आपकी शिक्षा 'इण्ट्रेंस' तक हुई थी। किन्तु, स्वाध्याय के बल पर आगे चलकर आप संस्कृत और हिन्दी के उद्भट विद्वान् एवं मर्मज्ञ हो गये। सं० १९६९ वि० मे गोवर्द्धनपुरी के शंकराचार्य श्रीमधुसूदनतीर्थजी द्वारा आपको 'विद्यावाचस्पति' की उपाधि प्राप्त हुई। आप लोकमान्य तिलक के अनन्य भक्त थे और राष्ट्रीय आन्दोलन के सिलसिले मे कई बार जेल गये थे। एक देशसेवक, धर्मभीरु सुवक्ता के रूप मे भी आपकी अच्छी ख्याति थी।

आपकी रचनाएँ संस्कृत और हिन्दी दोनो भाषाओं मे मिलती है। व्रजभाषा की आपकी शृंगार-प्रधान रचनाओ का कवि-समाज मे अच्छा आदर था। समस्यापूर्त्ति की कला मे भी आप दक्ष थे। आप सं० १९९४ वि० (सन् १९३४ ई०) मे परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

मुकुलित मालती निकुंज अलिपुंज मंजु,
मकरन्द मण्डित महल सुख वर के।
सीतल सुगन्ध मन्द मारुत सरद संग,
सुखमाधिकात गहि गहि गिरिधर के।
राधिका सुहाय गलबाँहि डारि नन्दलाल,
'तारक' नचावै रास - मध्य नटवर के।
कामिनी कुमुद प्रीति पूर करिबे को मनों,
बिकस्यो अवनि पै द्विबिम्ब कलाधर के ॥[3]

★

१. 'मधुधारा' (तपस्वी, सं० २०११ वि०), पृ० ३ (प्रस्तावना)।
२. 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० ८१।
३. समस्यापूर्त्ति' (गया), पृ० १८-१९।

तेजनाथ झा

आप दरभंगा-जिला के 'महरैल' नामक ग्राम के निवासी बाबू कीर्त्तिनाथ झा के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९११ वि० (सन् १८५४ ई०) की आश्विन शुक्ल-तृतीया को हुआ था।[१] प्रसिद्ध पं० मथुरानाथ झा आपके ही पुत्र थे। आपकी आरम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। आगे चलकर आप दर्शनशास्त्र के एक गम्भीर विद्वान् हो गये। आप जब ३४ वर्ष के हुए, तब म० म० पं० चित्रधर मिश्र, पं० परमेश्वर झा और कवीश्वर पं० चन्दा झा के सान्निध्य से आपके हृदय में सहसा भक्तिभाव की गंगा फूट चली और आप विष्णु-भक्ति में लीन हो गये। आप योगाभ्यासी थे और श्रीलक्ष्मीनाथ गोसाईं के शिष्य श्रीरघुवर गोस्वामी (तरौनी, दरभंगा) से दीक्षित थे।

आप मिथिला-नरेश महाराज रमेश्वर सिंह के आश्रित थे। उन्हीं के आश्रय में रहकर आपने अनेक पुस्तकों की रचना की थी, जिनमें कुछ प्रमुख के नाम इस प्रकार हैं—(१) कुण्डलिया-रामायण (कविता)[२], (२) भक्तिप्रकाश (कविता)[३], (३) गौरीशंकर-विनोद (नाटक)[४], (४) रामजन्म (कविता)[५], और (५) सुरराज-विजय (नाटक)[६]। इनके अतिरिक्त आपकी कुछ स्फुट काव्य-रचनाएँ भी यत्र-तत्र प्रकाशित मिलती हैं। ऐसी रचनाओं में गंगास्तुति-परक और राधाकृष्णाश्रयी शृंगार-रस-मूलक रचनाएँ ही अधिक हैं। आप सं० १९९० वि० (सन् १९३३ ई०) की माघ कृष्ण-अमावस्या को परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

गंगे विनति सुनिअ दए कान।
हम सन पतित जतेक जगत में, ताहि शरण नहि आन॥
तोर सुयश के कवि वरनन कर, महिमा अपरम्पार।
पतित उधार करए वसुधा में, अमित वारि बहि धार॥

---

१. पं० शशिनाथ झा (अध्यापक, सरिसबपाही, दरभंगा) द्वारा दिनांक ७ जुलाई, सन् १९५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के आधार पर।

२. इसमें गोस्वामी तुलसीदास-रचित 'रामायण' के 'रामजन्म' से राज्याभिषेक-पर्यन्त सभी दोहों पर कुण्डलिया छन्द में उत्कृष्ट पद-रचना है। इसका प्रकाशन शाके १८३३, तदनुसार सं० १९६९ वि० (सन् १९१२ ई०) में हुआ था।

३. भक्तिमूलक रचनाओं का बृहत् संकलन। इसके इने-गिने पदों को लेकर 'भजनावली' नाम से प्रकाशित किया गया है। इसकी पाण्डुलिपि पं० शशिनाथ झा (वही) के पास सुरक्षित है।

४. प्रकाशन-काल : शाके १८३४, तदनुसार सं० १९७० वि० (सन् १९१३ ई०)।

५. मनबोध-कृत 'कृष्णजन्म' के आधार पर रचित और प्रकाशित।

६. अप्रकाशित। पाण्डुलिपि पं० शशिनाथ झा (वही) के पास सुरक्षित।

जे जन तन त्यागथि तुअ तट में, ताहि विमान चढाए।
त्वरित जाथि लए सुरपुर सबसुर, सुमनमाल पहिराए॥
आढति कर सुरतिअ प्रमुदित भए, निज कर चओर डोलाव।
अमर राज में सुखहिँ वास कए, दिन दिन मोद बढ़ाव॥
'तेजनाथ' मतिमन्द कहाँ धरि, तोहर सुयश करु गान।
अन्तकाल मे हमरो जननी, करब एहि विध त्रान॥[1]

(२)

हे हर कोन गति होयत निबाहे।
तुअ पद-पङ्कज सुरति बिसारल, परसुख देखि उर दाहे॥
दारा सुत सम्पति लखि भुललहु, और सकल परिवारे॥
चारि शत्रुवश रहलहु निशिदिन, कोन परि तरि भवधारे॥
श्रीफल पत्र तोडि नहि तोहि देल, नहि सेवल शिववासे॥
योग जाप नहि करि हम सकलहु, तेँ उर बढ़य तरासे॥
शिवकरुणा-निधि नाम उदित जग, आरत जन धरु आशे॥
तेजनाथ अन्तर बसि शङ्कर हरु, यम किंकर पाशे॥[2]

(३)

उमगि - उमगि अनुराग राग गत हृदय भरत के।
भाइ भरतसम जगत नाहिं अस प्रेम करत के॥
करि प्रवेश परयाग लाग मन पद सिय रघुबर।
तेजनाथ सियराम नाम कहि भरत नयन भर॥[3]

---

१. 'मैथिली-गीत-रत्नावली' (बदरीनाथ झा, सं० २००६ वि०), पद-स० १०१, पृ० ५६।
२. प० शशिनाथ झा (वही,) द्वारा प्राप्त।
३. उन्हीं से प्राप्त। गोस्वामी तुलसीदास-रचित इस दोहा से तुलनीय—
'भरत तीसरे पहर कहँ, कीन्ह प्रवेश प्रयाग।
कहत रामसिय रामसिय उमगि उमगि अनुराग॥'—(अयोध्याकाण्ड) 'रामचरित मानस' दोहा-स० ३८।

करहिं सदा सत्संग सत्संग तजि राम विमुख जन।
भजहु सहित अनुराग त्यागु सभ काम जनित मन।।
नारिनेहवश रहहु नाहि तूँ मन पतंग सम।
तेजनाथ हटि जाहु युवति लखि दीप शिखासम।।[1]

तेजनाथ झा मिहिर'

आप भागलपुर के 'बरारी'-मुहल्ले के निवासी प० जयदत्त झा के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९५० वि० की आश्विन शुक्ल-चतुर्थी, (शुक्रवार, १३ अक्टूबर, सन् १८९३ ई०) को हुआ था।[3] आपकी आरम्भिक शिक्षा भागलपुर मे ही हुई। प्रारम्भिक विद्यालय की परीक्षा में ही आप सर्वप्रथम हुए, जिसके कारण आपको सरकार की ओर से छात्रवृत्ति मिली। जीवन-भर जिस परीक्षा मे आप बैठे, उसमे प्रथम आये। गणित के साथ व्याकरण पढ़ने की भी आपकी विशेष अभिरुचि थी। सन् १९११ ई० से १७ ई० तक आपने कटिहार, गोरखपुर, सोनपुर आदि विभिन्न स्थानो मे रेलवे के विभिन्न पदो पर कार्य किया। सोनपुर मे रेलवे-सेवा के साथ-ही आप हिन्दी-सेवा भी करते रहे। कुछ दिनो तक आप ई० बो० रेलवे-स्कूल मे प्रधानाध्यापक-पद पर भी रहे। सन् १९१८ ई० मे आपने हिन्दी-पत्रकारिता के क्षेत्र मे प्रवेश किया। सर्वप्रथम 'कलकत्ता-समाचार' नामक दैनिक हिन्दी-पत्र के सहायक सम्पादक रहे। इसके बाद, कुछ दिनो तक बगाल-सरकार के सचिवालय मे सहायक हिन्दी-अनुवादक के पद पर कार्य करके आप वाराणसी के दैनिक 'आज' मे चले आये। 'आज' मे सन् १९२१ से ४० ई० तक, बीस वर्षों तक, सहायक सम्पादक के पद पर आप कार्य करते रहे। फिर, सन् १९४१ ई० मे जब पटना से हिन्दी दैनिक 'आर्यावर्त्त' का प्रकाशन हुआ, तब आपही उसके प्रथम प्रधान सम्पादक हुए। सन् १९४४ ई० मे 'आर्यावर्त्त' से आपने अवकाश-ग्रहण कर लिया। सन् १९४२ ई० मे 'काशी-पत्रकार-संघ' की आपने स्थापना की और लगातार पाँच वर्षों तक आप उसके अध्यक्ष रहे। आप एक विलक्षण विचारक सफल पत्रकार तथा हिन्दी एवं बँगला के

---

१. प० शिवनाथ झा (वही) से प्राप्त। 'रामायण' के इन दोहे से तुलनीय—
"दीप शिखाकुल युवतिजन मन जनि होसि पतग।
भजहिं राम तजि काम मद करहिं सदा सतसंग।।"—अरण्यकाण्ड, दोहा–सं० ४०।

२ 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही), पृ० ६७२ (त) में, आपको पूर्णिया (कटिहार)-निवासी बतल य गया है।

३. श्रीपारसनाथ सिंह (पत्रकार, दैनिक 'आज,' वाराणसी) द्वारा प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास विभाग में सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

सुपरिचित विद्वान् थे। आपका सम्बन्ध काशी की अनेक सस्थाओ से था। पत्र-सम्पादन द्वारा हिन्दी-प्रचार के साथ-साथ आपने 'हिन्दुस्तानी' का घोर विरोध किया था। आपके स्फुट लेख सन् १९१४ ई० से ही प्रकाशित होने लगे थे। आपके आरम्भिक लेख 'मिथिला-मिहिर', 'हिन्दी-बिहारी', सरस्वती' और लक्ष्मी' आदि पत्र-पत्रिकाओ मे मिलते है। काशी से प्रकाशित क्रान्तिकारी पत्र 'रणभेरी' के साथ-साथ आपने 'शिवायन' नामक एक बृहत्काय ग्रन्थ का भी सम्पादन किया था। सन् १९६१ ई० के ८ दिसम्बर को साढे आठ बजे प्रात काल हृदय की गति रुक जाने के कारण आपकी इहलीला समाप्त हुई। आपकी रचना व उदाहरण हमे नही प्राप्त हो सके।

त्रिलोकनाथ मिश्र

आपका जन्म सहरसा-जिला के 'गोसपुर' नामक ग्राम मे, फसली सन् १२९६ (सन् १८८९ ई०) का पोप कृष्ण-नवमो (बृहस्पतिवार) को हुआ था।[1] आप भवनाथ (अयाची) मिश्र को वंश-परम्परा[2] के प्रसिद्ध प० पदार्थ मिश्र के पुत्र थे। आपकी आरम्भिक शिक्षा आपके अग्रज पं० बदरीनाथ मिश्र की देखरेख मे हुई। आगे चलकर आपने अँधराठाढ़ी (दरभंगा) के प० हरिशंकर झा और म० अ० र० ल० महाविद्यालय (दरभगा) के प्राचार्य प० चित्रधर मिश्र के निकट रहकर शिक्षा प्राप्त की। 'व्याकरण-काव्यतीर्थ,' 'मोमासारत्न' आदि उपाधियाँ प्राप्त करके आप लगभग १३ वर्षों तक अमृतसर (पजाब) मे रहे। इसके बाद, कुछ वर्षों तक महाराजा दरभगा के निकट रहकर उदयपुर (राजस्थान) के महाराणा सस्कृत-विद्यालय मे प्राचार्य होकर चले गये।

आपकी साहित्य-सेवा सन् १९२१ ई० से आरम्भ होती है। आप सस्कृत के एक प्रकाण्ड पण्डित थे।[3] मैथिली म एक नाटक 'जोमूतवाहन' के अतिरिक्त हिन्दी मे आपने 'शुद्धिरत्न,' 'पथ्यापथ्य-प्रदाप' तथा 'साहित्यदर्पण' की टीका को रचना की थी। आपकी रचना के उदाहरण हमे नही मिले।

त्रिलोचन झा 'लोचन'

आप चम्पारन-जिला के 'बानूछपरा' नामक स्थान के निवासी पं० कुबेर झा के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९३५ वि० (सन् १८७८ ई०) की कार्तिक कृष्ण-नवमी

---

१. आपके द्वारा दिनांक २१ अगस्त, सन् १९५३ ई० को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सूचना के आधार पर।

२ इस वंश में अनेक सस्कृत के विद्वान् हुए।

३. संस्कृत में सायणकृत 'ऋग्वेद-भाष्य-भूमिका' की सस्कृत टीका 'पितृकर्म-निर्णय', सूक्ति-पद्यावली' आदि आपकी रचनाएँ प्रकाशित हैं।

(शनिवार) को हुआ था।[1] बचपन मे अँगरेजी-हिन्दी का आरम्भिक ज्ञान प्राप्त करने के बाद आप पहले बेतिया-राज हाइ-स्कूल और फिर मोतिहारी जिला-स्कूल मे पढने लगे। स्कूली पढ़ाई मे आपका मन न लगता देखकर आपके पिताजी ने 'लघुकौमुदी' आरम्भ करा दी। फिर, भाई राधामोहनजी से आपने सस्कृत की शिक्षा पाने। काव्य रचना की ओर आप बेतिया-राज हाइ स्कूल के हेडपण्डित श्रीमहावीर सिंह से प्रेरित एव प्रभावित थे। उन्ही की प्रेरणासे आप विद्या-विनोद-सभा मे समस्यापूर्त्तियाँ किया करते थे। बेतिया मे जब सुबोधिनीसभा स्थापित हुई, तब आप उसके उपमन्त्री हुए और उसमे भी कविता-पाठ करने लगे। आपका रचना-काल सं० १९५९ वि० (सन् १९ २ ई०) से आरम्भ होता है। आपकी रचनाओ के नाम इस प्रकार है—(१) श्रीमद्गणपतिशतक, (२) आत्मविनोद'[2], (३) श्रीमगलशतक, (४) जनेश्वर विलाप (५) शोकोच्छ्वास, (६) कमलानन्द-विनोद, (७) मिथिला की वर्त्तमान अवस्था और आवश्यक सुधार, (८) सम्मेलन संवाद, (९) शकुन्तलोपाख्यान और (१०) जीवन-चरित विषय।[3]

उदाहरण

(१)

फागुन आइ अरी सजनी,
नहि पीतम को सुधि आवति है।
फूल पलास के हूल उठे लखि,
भोजन पान न भावति है।
तीर समीर लगेहु सदा,
मन ही मन को समुझावति है।
बोलत पापी पपीहा पि - पी,
पर मोहन मैं न जगावति है॥[4]

(२)

लोचन सुन्दर रूप बशी,
मन पीतम माहिं लगावति है।

---

१. 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही), पृ० २९। आपका परिचय (साहित्य-तपस्विनी पं० त्रिलोचन झा चम्पारन-निवासी श्री हरिश्चन्द्र प्रसादजी ने भी लिखकर 'नवराष्ट्र', पटना में प्रकाशित कराया था। दुर्भाग्यवश वह हमें न मिल सका।

२. 'हिन्दी-पुस्तक-साहित्य' (वही), पृ० ४७३।

३. देखिए, 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही), पृ० ६७२ (अ) तथा 'मिश्रबन्धुविनोद' (वही, चतुर्थ भाग), पृ० २६०।

पूजित लेइ सरोज कली,
कि सु तंग उरोज दबावति है।
धौ यह स्वेद चले तन ते,
अथवा करि नेह नहावति है।
यौ विपरीत रमै ललना,
कि मनोज को मंत्र जगावति है ॥[1]

(३)

लोचन मो मन सोच यही अनभिज्ञ अहौ सुभ कारन में।
आसन नेम न जानत नेक हू ना थिति कुम्भक धारन में ॥
और कहाँ लौं करूँ विनती निज बुद्धि न ब्रह्म बिचारन में।
हे प्रभु तोहि परेगो महाश्रम या अधमाधम तारन में ॥[2]

(४)

आइ कहाते धरी मनिहारिनि देखत ही सखि आन दुरी है।
साव लगात मनोहर है अति मंजुलता भलि भाँति पुरी है ॥
लोचन त्यो मुसुकान जु बानहु बेधत है हिय मानों छुरो है।
बैठ इते कछु काल धरी हम हाथ में चाहति चारि चुरी है ॥[3]

त्रिवेणी उपाध्याय

आप गया-जिला के नवादा नामक स्थान के निवासी प० दामोदर उपाध्याय के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९४५ वि० (सन् १८८८ ई०) की माघ शुक्ल-पचमी को

१. 'आत्मविनोद' (त्रिलोचन झा 'लोचन', सन् १९०३ ई०), पृ० १८।
२ वही, पृ० १९-२०।
३. 'रसिकमित्र' (कानपुर, वर्ष ५, संख्या ४, जनवरी, सन् १९०२ ई०), पृ० २३।

हुआ था।[१] सन् १९१६ ई० मे पटना के नार्मल-स्कूल से अन्तिम शिक्षा समाप्त कर नवादा हाइ स्कूल मे आप अध्यापन-कार्य करने लगे।

आप व्रजभाषा और खडीबोली के एक सुयोग्य कवि एव टीकाकार थे। आपकी लिखी अनेक टीकाएँ मिलती हैं। आपकी काव्य-रचनाएँ 'साहित्य-सरोवर', 'साहित्य-चन्द्रिका,' 'रसिक-रहस्य' और 'काव्यपताका' मे प्रकाशित हुआ करती थी।

उदाहरण

पुण्य भरे यहि बागन में
जड चेतन वृक्ष ह्वै भूमन लागी।
चारिहु अर्थ सुमौरि रसाल मे
मत्त अली जहँ कूकन लागी।
चारु चितै ह्वै चमेलि इतै,
गुल ज्ञान गुलाब ह्वै कूकन लागी।
विप्र 'त्रिवेणी' मो आन बसन्त के
जानि कुहू - कुहू कूकन लागी॥[२]

दामोदरसहाय सिंह 'कविकिंकर'

आपकी रचनाएँ 'दामोदर'-उपनाम से भी मिलती है।

आप छपरा-जिला के 'शीतलपुर' नामक स्थान के निवासी मुंशी शिवशंकर सहाय के पुत्र थे। किन्तु, आपका जन्म १४ दिसम्बर, सन् १८७५ ई०, को छपरा-नगर मे हुआ था[३]

---

१ 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० ८२।

२. 'रसिक-रहस्य' (कानपुर, वर्ष ३, अक ६,१५ अप्रैल सन् १९१० ई०), पृ० १९-२०।

३. देखिए, 'शिवपूजन-रचनावली' (वही, चतुर्थ खण्ड), पृ० २८६-२९० तथा ४२४-४२५। इसके साथ ही देखिए, 'सरोज' (मासिक, कलकत्ता, पुष्प १, दल १२, बैशाख, स० १९२५ वि०, सन् १९२८ ई०) तथा 'जागरण' (पाक्षिक, काशी, वर्ष १, अंक १०, ज्येष्ठ, स० १९८९ वि०, जून, सन् १९३२ ई०)। इसके अतिरिक्त, आपके परिचय-लेखन में पाण्डेय श्रीकपिल (शीतलपुर, सारन) द्वारा प्रेषित सामग्री तथा 'मिश्रबन्धुविनोद' (वही, पृ० २१० तथा २६२), 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ६७२ क) तथा 'सुधा-सरोवर' (श्रीदामोदरसहाय 'कविकिंकर', सं० १९६७ वि०, पृ० ७, १२ और १६) से भी सहायता ली गई है।

जहाँ आपके पिना यशस्वी मुख्तारो मे एक थे।[1] आपकी माता तो आपको सातवें माह मे ही छोडकर स्वर्ग सिधार चुकी थी। आपके पिताजी भी आपको ग्यारह वर्ष की उम्र मे अनाथ कर चले गये। इस विपत्ति के बाद आपके लालन पालन एवं शिक्षण का भार आपके पितृव्य मुंशी श्रीहीरालालजी मुख्तार, (छपरा) पर आ पडा। आप बचपन से ही बडे प्रतिभाशाली और होनहार थे। चौदह वर्ष की उम्र मे आपने छात्रवृत्ति के साथ मिड्ल की परीक्षा पास की। तदनन्तर, आपका नाम छपरा जिला स्कूल मे लिखवाया गया। वहाँ से आपने सन् १८६४ ई० मे प्रवेशिका परीक्षा पास की। सन् १८९७ ई० मे पटना के बी० एन्० कॉलेज से एफ्० ए० की परीक्षा पास कर घरेलू झझटों के कारण आपको बी० ए० की पढाई सम्पन्न करने पर भी, उसकी समाप्ति से वचित रह जाना पडा। इसके बाद, सन् १९०० ई० मे आप रिविलगज छपरा) के मिड्ल इगलिश-स्कूल मे प्रधानाध्यापक-पद पर आसीन हुए। कुछ दिनो के लिए आप छपरा-जिला स्कूल मे भी शिक्षक रहे। सन् १९०३ ई० मे आपकी प्रोन्नति सब-इन्सपेक्टर ऑव स्कूलस के पद पर मुंगेर मे हुई। तबसे बिहार के भिन्न-भिन्न जिलो (गया, आरा, दरभगा, छपरा आदि) मे आपने बडी योग्यता से अपना उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य सम्पन्न करके प्रचुर प्रतिष्ठा और यश अर्जित किया। इसी बीच सन् ९१६ ई० मे आपने एल्० टी० की परीक्षा भी पास कर ली और आप डिस्ट्रिक्ट इन्सपेक्टर ऑव स्कूलस हो गये। सन् १९६१ ई मे आपने इसी पद से अवकाश ग्रहण किया।

आप कोमल स्वभाव के सहृदय, सुरसिक, मधुरभाषी, सदाशय ,कर्त्तव्यनिष्ठ और धर्म-परायण व्यक्ति थे। आपने समस्त भारत के प्रमुख तीर्थो का पर्यटन कर पर्याप्त ज्ञान अर्जित किया था। आपने हिन्दी-प्रचार के आन्दोलनों में बराबर भाग लिया। खडीबोली कविता-आन्दोलन के भी आप अग्रणी रहे। आपने अपने निवास-स्थान पर 'हिन्दी-मन्दिर' नामक एक हिन्दी-सेवी संस्था खोल रखी थी, जिसके माध्यम से आपने हिन्दी की बहुविध सेवाएँ की।[2]

आपमे बचपन से ही साहित्यानुराग का बीज अकुरित था। इसका प्रमाण यह है कि तेरह वर्ष की अवस्था से ही आप काव्य-रचना करने लगे थे। प्राय इतिहास, भूगोल आदि पाठ्य-पुस्तक के विषयो को स्वयं पद्यबद्ध बनाकर आप याद किया करते थे। आपकी कुशाग्रबुद्धि और तीक्ष्ण प्रतिभा को देखकर केवल आपके शिक्षक ही सन्तुष्ट न थे, बल्कि तत्कालीन इन्सपेक्टर ऑव स्कूलस प० शिवनारायण त्रिवेदी तो इतने प्रसन्न हुए कि उन्होने आपको सहर्ष पुरस्कार भी प्रदान किया था। आपके वास्तविक साहित्यिक जीवन का सूत्रपात स्वनामधन्य स्व० प० अम्बिकादत्त व्यास 'सुकवि' ससर्ग से हुआ आप जब पटना मे थे,

---

१ आपके पूर्वज मुगल-बादशाह शाहजहाँ के समय राजकीय प्रतिष्ठा पाकर 'चिरैयाकोट' से 'शीतलपुर' (छपरा) में आ बसे थे। 'शीतलपुर' का नाम आपके पूर्वज पाण्डेय श्रीशीतलसिंह के नाम पर पड़ा था। ये भी व्रजभाषा के एक अच्छे कवि थे। आपके पूर्वजों में कई उर्दू-फारसी और व्रजभाषा के अच्छे कवि और संगीतज्ञ हो गये हैं। आपके पुत्र पाण्डेय श्रीजगन्नाथप्रसाद सिंह, पौत्र श्रीपाण्डेय कपिल एवं श्रीपाण्डेय सुरेन्द्र आज भी साहित्य एव कला की प्रभूत सेवा में संलग्न हैं।

२. इस संस्था में आज भी लगभग ६००० महत्त्वपूर्ण प्राचीन और नवीन पुस्तकें एवं पत्र-पत्रिकाओं क फाइलें सुरक्षित हैं। इस संस्था के माध्यम से अनेक पुस्तकें भी प्रकाशित हुई थीं। इस संस्था की ओर से एक रगमंच भी स्थापित था, जिसपर बराबर हिन्दी-नाटक अभिनीत होते थे।

तब वहाँ के वयोवृद्ध साहित्यसेवी आरा-निवासी बाबू शिवनन्दन सहायजी के प्रोत्साहन से आप काशी तथा पटना के तत्कालीन कवि-समाजों मे समस्यापूर्त्तियाँ भेजने लगे। आपकी ऐसी पूर्त्तियाँ और अन्य स्फुट रचनाएँ अनेक पत्र-पत्रिकाओं मे प्रकाशित मिलती है।[१]

आपकी रचनाएँ गद्य और पद्य दोनों में मिलती हैं। आपकी प्रकाशित पुस्तकों के नाम ये हैं—(१) सन्धि-सन्देश[२], (२) सुधा-सरोवर[३], (३) कविता-कुसुम[४], (४) श्रीहरि-गीतिका[५], (५) कल है, (६) उधम-विचार (७) नृप-सूर्यास्त, (८) कालपचासा, (९) चातकचालीसी, (१०) भ्रातृभाव[६], (११) शिक्षा-निबन्धावली[७], (१२) हमारी शिक्षा-प्रणाली, (१३) निगम और आगमन[८] एवं (१४) भक्ति[९]। आपके द्वारा रचित-प्रकाशित कुछ बालोपयोगी पुस्तकों के नाम इस प्रकार हैं— १) रसाल[१०] (२) अंगूर[११], (३) सरल-सितारी[१२], (४) बाल-सितारी, (५) बाल-सकीर्त्तन, (६) धार्मिक वार्त्तालाप[१३] और (७) कबीर : एक लघु जीवनी[१४]। इसके अतिरिक्त, आपकी अनेक पुस्तकाकार रचनाएँ अभी तक अप्रकाशित ही पड़ी हैं। आपकी सम्पूर्ण रचनाएँ 'कविकिंकर-ग्रन्थावली' के नाम से दो खण्डो मे 'हिन्दी-मन्दिर', शीतलपुर, सारन से शीघ्र ही प्रकाशित होनेवाली है।[१५] अपने निधन के कुछ दिन पूर्व आप 'कविता की भाषा'

---

१. इनमें कुछ प्रमुख के नाम ये हैं—'सरस्वती', 'मर्यादा', 'शारदा', 'नागरी-प्रचारक', 'मनोरञ्जन', 'क्षत्रिय-मित्र', 'निगमागम-चन्द्रिका', 'काशी-नागरी-प्रचारिणी-पत्रिका', 'अभ्युदय', 'शिक्षा', 'श्रीकमला, 'महिला-दर्पण', 'साहित्य-पत्रिका', 'नागरी-प्रचारिणी-पत्रिका' (आरा), 'कल्याण', 'माधुरी', 'सुधा', 'गंगा' आदि।

२. खड़ीबोली-काव्य।

३. व्रजभाषा-कविताओं का सर्वांगसुन्दर संग्रह। यह पुस्तक-भण्डार, लहेरियासराय से प्रकाशित हुआ था। इसकी भूमिका में कविवर प० रामनरेश त्रिपाठी ने लिखा है कि "मेरे मित्र श्रीयुत दामोदरसहाय सिंह ने तीस-पैंतीस वर्ष पहले से व्रजभाषा में कविता प्रारम्भ की थी। . श्री दामोदरसहाय सिंह ने अपना हृदय निचोड़कर यह सुधा-सरोवर भरा है। कितने ही भाव तो ऐसे हैं, जो व्रजभाषा के अच्छे-से-अच्छे कवि के भावों के जोड़ के हैं। व्रजभाषा-कविशिरोमणि ने अपने १३ अक्टूबर, सन् १९२८ ई० के अपने एक पत्र में लिखा था—'रचना प्रतिभापूर्ण सुकवियों की-सी है। कोई-कोई कवित्त तो बहुत-ही सुन्दर है और पुराने कवियों का स्मरण कराती है'।"

४. खड़ीबोली-काव्य।

५. व्रजभाषा-काव्य। इसके आगे की नौ सख्या तक की रचनाएँ भी व्रजभाषा-काव्य ही हैं।

६. सामाजिक निबन्ध।

७ शैक्षणिक निबन्ध। अगली रचना भी इसी विषय की है।

८. तर्कशास्त्र।

९. स्वामी विवेकानन्द के कुछ व्याख्यानों का अनुवाद।

१०. बालोपयोगी कविताएँ।

११ बालोपयोगी कहानियाँ।

१२. बालोपयोगी कविताएँ। अगली रचना भी बालोपयोगी कविताओं की ही है।

१३ बालोपयोगी गद्य।

१४. बालोपयोगी जीवनी।

१५ आपकी अप्रकाशित पुस्तकों के नाम ये हैं- (१) कविता-कानन (खड़ीबोली-कविता-संग्रह), (२) सुरभित कानन (व्रजभाषा-कविता-संग्रह), (३) आत्मप्रकाश (व्रजभाषा-कविता-संग्रह), (४) भ्रातृभाव-संगीत (व्रजभाषा-कविता-संग्रह), (५) तुलसी-कविकिंकर (तुलसी के दोहों पर कुण्डलिया), (६) रामायण-

नामक एक विचारपूर्ण समालोचनात्मक ग्रन्थ लिख रहे थे। इसके बाद, आपका विचार हिन्दी के भक्ति-साहित्य पर भी एक विवेचनापूर्ण ग्रन्थ लिखने का था, किन्तु क्रूर काल ने आपका मनोरथ पूरा न होने दिया और सन् १९३२ ई० के ८ जून को, केवल ५७ वर्ष की उम्र मे, आप इस असार संसार से चल बसे।

उदाहरण

(१)

खायो कर अन्न दान देइ कछु जाचक कौं,
न्हायो करै गंगधार माहि प्रातकाल को।
'दामोदर' दायो करै दीन दारिद्री-जन पै,
नायो करै सीस साधु-सन्त महिपाल को।
जायो करै दर्शन निमित्त नित मन्दिर मे,
चन्द्रभाल - सामुहे बजायो करै गाल को।
गायो करै बिसद गोविन्द के गुनानुवाद,
ध्यायो करै सुभग सरूप नन्दलाल को॥[1]

(२)

छिन पै छिन कम्प करै तन में,
पट छोरि सरीर उघार करै।
कच फेरि बिखेरै 'दमोदर' त्यों,
सब ही असिगार सिंगार करै।

कर्म-संगीत (रामायण के कर्म-सम्बन्धी स्थलों पर कविताएँ), (७) गीतामृत (गीता का समश्लोकी अनुवाद), (८) कवितालोचन (आलोचना), (९) मानसावगाहन (आलोचना), (१०) वनिता-विनोद-समालोचना (समालोचना), (११) निबन्ध-निलय (साहित्यिक निबन्ध), (१२) युद्ध का मनोरंजन (साहित्यिक निबन्ध), (१३) समाज और शिक्षा (सामाजिक और शिक्षा-सम्बन्धी निबन्ध), (१४) कर्नल आलकट (जीवनी), (१५) पाश्चात्य और नैतिक दर्शन (दर्शन), (१६) पंचपुरावृत्त (धर्म), (१७) सनातन धर्म (धर्म), (१८) मूर्त्तिपूजा का जन्म (धर्म), (१९) मनुष्य का स्वास्थ्य (स्वास्थ्य), (२०) वर्त्तमान असन्तोष (बर्क की एक पुस्तक का अनुवाद), (२१) ब्रह्मविद्या (एनी बेसेण्ट की पुस्तिकाओं का अनुवाद), (२२) शिक्षा का इतिहास (शिक्षा) तथा (२३) आधारिका (विविध)।

१. 'शिवपूजन-रचनावली' (वही), पृ० २८६।

हिय लावै कबौ गर ते लगि कै,
मुख - चुम्बन बारहि बार करै।
यह 'सीत की बात' अगात बसी,
बर सो सबही व्यवहार करै ॥'[1]

(३)

बहती शीतल वायु स्फूर्ति तन में लाई है।
कमल-कोष से मुक्ति भ्रमर दल ने पाई है॥
तारे धीमे पडे, प्रभा क्षिति पर छाई है।
चकई चकवा-मिलन-हेतु सुख से आई है॥
है चहक उठी चिड़ियाँ सभा बन्दी गुण-गण गा रहे।
समुदित दिनमणि यदुवंशमणि एक संग छवि पा रहे॥[2]

(४)

महलो में थी लगी काम मे जो महिलाएँ।
दौड़ पड़ी सब छोड़, न देखा दायें-बाये॥
अग्रभाग ऊपर अटारियों के सब आयी।
तारावलियाँ यथा गगन मे झिलमिल छायी।
यो उनके मुख एकत्र हो अनुपम प्रभा पसारते।
मानो बहु रजनीकर-निकर कर-समूह बिस्तारते॥[3]

(५)

प्रत्येक हिन्दी भाषा-भाषी प्रान्त मे कुछ ऐसे स्वर्गीय व्यक्ति अवश्य पाये जायँगे, जिनका हृदय सचमुच कवि-हृदय था। उन्हें अपने जीवन-काल में ऐसा अवसर नही मिला कि अपने हृदय के कवि-भावों का

---

१. 'शिवपूजन-रचनावली', वही, पृ० २६०।
२. प्रातःकाल का वर्णन। 'सन्धि-सन्देश' के द्वितीय-सर्ग से। पाण्डेय श्रीकपिल (वही) से प्राप्त।
३. हस्तिनापुर में श्रीकृष्ण के आगमन पर। उन्हीं से प्राप्त।

प्रचार कर प्रसिद्धि प्राप्त करे। शायद उनमें से कितनो को प्रसिद्ध होने की लालसा ही न रही हो। अँगरेजी कवि ग्रे साहब ने बहुत ठीक कहा है कि कितने ही अत्यन्त चमकीले मोती समुद्र के अंधकारमय अगाध तल मे छिपे है; और कितने ही फूल, अदृश्य रूप से, अपना मधुर सौरभ मैदान की वायु पर ही निछावर करने को उत्पन्न हुए है। यही दशा हमारे अनेक सुकवियों की भी है। चिड़ियो की भाँति वे अपने समय में चहक गये। उनकी ध्वनि चाहे कोई सुने वा न सुने, इसकी उनको परवा नही। आज भी युक्तप्रान्त और बिहार के प्रत्येक जिले में कुछ ऐसे ग्रन्थ मिलेगे, जिनमें अच्छी कविता की गयी है, पर सच्ची खोज के बिना उनका पता नही लगता। नवयुवक साहित्यिको का कर्त्तव्य है कि वे ऐसे ग्रन्थो को ढूँढ़ निकाले।[1]

(६)

इष्टदेव सर्वदा परमेश्वर ही हुआ करता है, चाहे वह किसी नाम से पुकारा जाय और किसी रूप मे देखा जाय। परमेश्वर एक है, और सबसे बडा है। इसलिए भिन्न-भिन्न मतों और सम्प्रदायो का इष्टदेव वास्तव मे एक ही है, चाहे उसे कोई किसी नाम से पुकारे और किसी रूप में देखे। इस प्रकार क्रिस्तानों के गॉड (God), मुसलमानों के खुदा और हिन्दुओ के परमेश्वर एक ही परमतत्व या परमब्रह्म के भिन्न-भिन्न नाम है। इसी तरह हिन्दू-धर्म के अन्तर्गत शैवों के शिव, शाक्तों की शक्ति और वैष्णवो के विष्णु एक ही है—यद्यपि उनके अलग-अगल नाम और रूप है। इस रहस्य को भली-भाँति समझ लेने पर मत-मतांतरों का

१. 'गगा' (मासिक, प्रवाह ३, तरंग ६, जून, सन् १९३३ ई०), में प्रकाशित '[illegible]' शीर्षक लेख से।

झगड़ा प्रायः निर्मूल हो जाता है, क्योंकि इस दृष्टि से अपने इष्टदेव की बड़ाई करने पर भी यदि दूसरे के इष्टदेव की निन्दा की जाय तो प्रकारान्तर से अपने ही इष्टदेव की निन्दा हो जाती है, जो बड़ा जघन्य कर्म है।

दिनेशप्रसाद वर्मा

आप भागलपुर-जिला के 'जहाँगीर' (सुलतानगज) नामक स्थान के निवासी मुशी श्रीसुन्दरलालजी के पुत्र थे। आपका जन्म स० १६५३ वि० (सन् १८६६ ई०) की आश्विन शुक्ल-षष्ठी (मंगलवार) को हुआ था।[2] आपकी प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा घर पर ही हुई। इसके बाद आपने पटना-विश्वविद्यालय से बी० ए० और बी० एल्० की परीक्षाएँ सन् १६२० से २४ ई० के बीच पास की। छात्र-जीवन से ही आपमे हिन्दी के प्रति अपार श्रद्धा थी। भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसाद द्वारा प्रकाशित एवं सम्पादित 'यग बिहार' के आप नियमित पाठक थे। सार्वजनिक हित के कार्यों मे आपकी बड़ी अभिरुचि थी। राष्ट्रीय विद्यालय (खड्गपुर, मुँगेर) के लिए आपने भरपूर कार्य किया था। कुछ दिनो तक आप उसके प्रधानाध्यापक रहे। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग की परीक्षाओ के माध्यम से हिन्दी के प्रचार-कार्य मे आपने बहुत बड़ा सहयोग किया था। आप अपने जीवन के अन्तिम दिनों मे आदर्श विद्यालय, तारापुर (मुँगेर) के उप-प्रधानाध्यापक-पद पर आसीन रहे।

आपके द्वारा लिखित हिन्दी-लेख 'सरस्वती', 'विश्वमित्र', 'विद्यार्थी,' 'गगा', आदि पत्र-पत्रिकाओं मे प्रकाशित हुआ करते थे। आपके द्वारा लिखित अनेक पुस्तके बिहार के प्राथमिक विद्यालयो के लिए स्वीकृत थी। आपने इतिहास, भूगोल, स्वास्थ्य आदि कई विषयो पर अपनी लेखनी चलाई थी। हिन्दी-नाटक एवं रंगमंच के लिए आपका कार्य बडा ही प्रशसनीय रहा। आपका एक नाटक 'भँवर मे भारत', अर्थात् 'सिन्ध-पतन-नाटक' बहुत प्रसिद्ध हो गया था।

उदाहरण

(१)

देशवासियों के हृदय में वीरता का संचार करना, आहतो की शुश्रूषा, हमारा धर्म है। हम वीर-कन्याएँ है, हमारा धर्म, देश है—

---

१. 'कल्याण' (मासिक, भाग ६, सख्या ८, मार्च, सन् १६३१ ई०) में प्रकाशित 'इष्टदेव और अन्यदेव' शीर्षक आपके लेख से।

२. आपके द्वारा दिनांक ३० मई, सन १६५६ ई०, को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के आधार पर।

हमारा प्राण स्वाधीनता है। जो देश-प्रेम हमारे सब कर्त्तव्यों में बड़ा कर्त्तव्य है, सब लक्ष्यो में श्रेष्ठ लक्ष्य है—जो हमारे जीवन की सबसे बड़ी शिक्षा है, उसको हम विलास-सुख में भूल बैठी है। पर आज उसके मनन करने का अवसर है। उसे मनन करो—खूब मनन करो—इतना मनन करो कि तुम्हारे हृदय और नेत्रो के सामने देश प्रेम की धारा फूट निकले और उसमें कुछ काल के लिए पति-प्रेम, सन्तान-प्रेम, विलास-प्रेम, सब प्रेम बहते नजर आयें।[1]

(२)

अगर तुम गौर कर देखो, नही कुछ भी हमारा है,
जगत का है वही मालिक, उसी का नाम प्यारा है।
वही मेरा वही तेरा, वही भारत वही फारस,
उसी ने भूल भारी की, कहा जिसने यह मेरा है॥
वही है राम हिन्दू का, मुसलमाँ का वही अल्लाह,
मगर लड़ते है हम फिर भी, दु इने (?) हाथ घेरा है।
न छोड़ेंगे न छोड़ेंगे फटे गर देश चिथड़ों में,
भला यह प्रेम है या प्रेम के भीतर अँधेरा है॥[2]

दीपनारायण प्रसाद

आप मुंगेर-नगर के 'मोगलबाजार' नामक मुहल्ले के निवासी श्रीरामचरणलालजी के पुत्र है। आपका जन्म सं० १६५३ वि० की मार्गशीर्ष-पूर्णिमा (२० दिसम्बर, सन् १८६६ ई०) को हुआ था। आपकी प्राथमिक शिक्षा बी० पी० एच्० ई० स्कूल, मुंगेर मे हुई। सन् १६१५ ई० मे आपने वही से प्रवेशिका (मैट्रिक ' परीक्षा पास की। इसके बाद आपने डी० जे० कॉलेज, मुंगेर से आइ० ए० की परीक्षा सन् १६१७ ई० मे पास की। इन परीक्षाओ के बाद आपने कई विद्यालयो मे अध्यापन-कार्य किया। बहुत दिनो

१. 'भँवर में भारत' (दिनेशप्रसाद शर्मा, सं० १६८७ वि०), पृ० ५८।
२. वही, पृ० ११।

तक अध्यापन-कार्य करने के बाद आपने वकालत की परीक्षा पास की। वकालत करते हुए २४ जून, सन् १६३६ ई० मे आपने 'कैलास-दर्शन' की अभिलाषा से मुंगेर से कैलास यात्रा के लिए प्रस्थान किया। सन् १६३६ ई० की ६वीं अगस्त को आप वहाँ से प्रत्यावर्त्तित हुए। इस यात्रा मे केवल ८७) रुपये आपके पास थे। केवल उतने रुपये से ही आपने वह यात्रा पूरी की थी।

विद्यार्थी-जीवन से ही आप हिन्दी और अँगरेजी मे रचनाएँ करते थे। आपके द्वारा रचित जो पुस्तकें प्रकाश मे आ चुकी है,[1] उनके नाम इस प्रकार है—(१) मेरी कैलास-मानसरोवर-यात्रा,[2] (२) श्रीमद्भगवद्गीता-भावात्मक भाष्य,[3] (३) श्रीरामचरितमानस-भावात्मक भाष्य[4], (४) चर्पटपञ्जरिका-भावात्मक भाष्य[5] तथा (५) आदित्यहृदयम्-भाषा-भाष्य।[6]

सम्प्रति आप मुंगेर-न्यायालय मे वकालत कर रहे है। आपकी रचना के उदाहरण हमे नही मिले।

दुर्गाप्रसाद त्रिपाठी

आप शाहाबाद-जिला के 'कायमनगर' नामक स्थान के निवासी प० देवनन्दन त्रिपाठी के पुत्र है। आपका जन्म सं० १६५६ वि० (सन् १८६६ ई०) की ज्येष्ठ कृष्ण-सप्तमी को हुआ था।[7] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। आपकी उच्चतर शिक्षा सस्कृत के माध्यम से आरा और पटना मे हुई। आपने 'कलकत्ता सस्कृत-समिति' से सन् १६२६ ई० मे, 'काव्यतीर्थ' की उपाधि प्राप्त की थी। इसके बाद पटना-विश्वविद्यालय से आपने आइ० ए० की परीक्षा पास की।

आपने सन् १६२० ई० से ही कविता, कहानी एवं निबन्ध लिखना प्रारम्भ किया था। आपकी विभिन्नविषयक रचनाएँ तत्कालीन मासिक, साप्ताहिक और दैनिक पत्र-पत्रिकाओ मे यथावसर प्रकाशित हुआ करती थी। खड्गविलास प्रेस, पटना से प्रकाशित होनेवाले 'हरिऔध-अभिनन्दन-ग्रन्थ' के सम्पादको मे आप भी रह चुके थे। उक्त प्रेस से प्रकाशित होनेवाली प्रसिद्ध साप्ताहिक 'शिक्षा' के भी आप सन् १६२२ से २६ ई० तक सहकारी सम्पादक और सन् १६२६ से ३८ ई० तक प्रधान सम्पादक रहे। आपने पटना से प्रकाशित होनेवाले 'नव-संसार' (सन् १६४७ ई०), 'प्रवर्त्तक'(सन् १६४६ ई०) और 'जागरण' (सन् १६५३ ई०) नामक साप्ताहिक पत्रो का सम्पादन-कार्य प्रधान सम्पादक के रूप मे किया था।

---

१. परिषद् के साहित्यिक-इतिहास-विभाग में दिनांक १ मार्च, सन् १९५६ ई० को आपके द्वारा प्रेषित विवरण के आधार पर।

२ सन् १६४६ ई० में प्रकाशित।

३. सन् १६४६ ई० में प्रकाशित।

४. सन् १६५३ ई० में प्रकाशित।

५. सन् १६५४ ई० में प्रकाशित।

६. सन् १६५५ ई० में प्रकाशित। इन पुस्तकों के अतिरिक्त अँगरेजी में लिखित आपकी विभिन्न-विषयक नौ रचनाएँ हैं।

७. दिनांक २० मार्च, सन् १९५६ ई० को आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।

आपके द्वारा लिखित (१) 'स्वर्ग-सोपान',[1] (२) 'मंजरी'[2] तथा (३) 'हिन्दू-नारी',[3] नामक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी है। इनके अतिरिक्त आपके द्वारा विभिन्नविषयक चौदह पाठ्य-पुस्तको का प्रणयन और सम्पादन भी किया गया था।[4] सम्प्रति आप अपने घर पर ही निवास कर रहे है। आपकी विभिन्न-विषयक स्फुट रचनाएँ माधुरी', 'गंगा', कल्याण', 'कमला', 'सन्मार्ग', जन्मभूमि', 'आर्यावर्त्त' आदि पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित मिलती हैं।

उदाहरण

(१)

यह विश्वविदित बात है कि वृन्दावन-बिहारी जन मन-हारी सुखकारी बनवारी की विश्व-विजयिनी वंशी मे विमोहकता थी, वशित्व था। तभी तो उसके वशीभूत हो ब्रज की वरवनिताए कभी विमोह-वारिधि में विलीन हो जाती कभी विजित हो बेसुध बनती और कभी विनोदित हो विहँसने लगती थी। और भी, मनमोहन की मोहिनी मुरली पर ही मुग्ध हो मानिनी महिलाएँ उन्हें मन-मन्दिर में छिपा रखने के लिए चाव से चतुरता-चर्चित चालबाजियाँ चला करती थी। ऐसा करे क्यो न ! जानती हैं, भक्तभयहारी भगवान् भव्य-भावना-भूषित भारती के भूप हैं, लास्य लक्षित ललित लीलाओं के लोकोत्तर लोलुप है, और हैं आनन्द के आकर, सरसता के सागर, नवनेह-नागर सुषमा-सुधाकर तथा उमंग-उजागर। वे श्रृंगार के अनूप रूप और मधुरिमा के मत्त मधुप है। वे कमल में कमनीयता, सुमन मे सुवास, व्योम मे विकास, चन्द्रमा में चारु हास और सूर्य मे प्रकाश बन सर्वत्र कविता-कामिनी-कान्त होकर समस्त-साहित्य-संसार में घन-श्याम होते हुए भी कमनीय-कीर्त्ति-कौमुदी से कलाधर बने हुए हैं। उनके गणनीय गुणवालियो का गजरा एवं लोकोपकारी ललित-लीलाओं की लड़ियाँ लगाकर ही कविता-कामिनी कमनीय-कलेवरा बन किल्लोल किया करती है।[5]

---

१. हिन्दुस्तानी प्रेस, भागलपुर से प्रकाशित।
२ रा नराजेश्वरी बुकडिपो, गया से प्रकाशित।
३. क लिका प्रेम, पटना से प्रकाशित।
४. ये पुस्तकें र जराजेश्वरी बुकडिपो, गया तथा कालिका प्रेम, पटना से प्रकाशित हुई थीं।
५. 'हरिऔध-अभिनन्दन-ग्रन्थ' (सम्पादक-मण्डल, स० १९९३ वि०), पृ० २१४।

धन्य है वह मुरली, जिसपर मोहन भी मुग्ध हो मत्त-मयूर सा मचलने लगते थे। जन-जन के तन-मन में नूतन जीवन-ज्योति जगमगा उठती थी। अखिलेश के अलौकिक अधरामृत का अपहरण कर अपने छिद्रों द्वारा बहा-बहा विपुला वसुंधरा के वायुमंडल में विखरित कर विश्व को विमुग्ध कर देती थी। समस्त संसार के मानव मानस मे लहरने विहरने तथा छहरने लगती थी। अतएव कतिपय कविता कानन में क्रीड़ा करनेवाले कलकण्ठ कवि-कोकिल, विचार-वारिधि में विहार करनेवाले बुध-विहंग, तर्क-तरंगिनी को तैरनेवाले त्रिकालज्ञ और गुणग्राहक गायकगण मुरली की महिमा को गाते, चाहते, सराहते हुए अघाते नही। सहृदय शुकदेव, विज्ञानी व्यास आदि महर्षिगण इन लोक-लोचनानन्ददाता जगत्राता की ललित लीला पर लट्टू हो गये थे।[1]

दुर्गाशंकरप्रसाद सिंह 'नाथ'

आप शाहाबाद-जिला के 'दलीपपुर' नामक ग्राम के निवासी श्रीविश्वनाथप्रसाद सिंहजी[2] के पुत्र है। आपका जन्म स० १९५३ वि० (सन् १८९ ई०) की मार्गशीर्ष कृष्ण-एकादशी (सोमवार) को हुआ था।[3] आपकी आरम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई।

---

१. 'हरिऔध-अभिनन्दन-ग्रन्थ' (वही), पृ० ३१६।

२. ये सन् १९२९ ई० में हृदय-रोग से परलोक सिधारे। आपका वश धार के विद्वान् राजा भोजदेव के वंशजों से सम्बद्ध है। धार-पतन (सन् १३१४ ई०) के बाद परमार-राजवश, बिहार-राज्य के भोजपुर-प्रदेश में, महाराज जयदेव के नायकत्व में आ बसा। महाराज जयदेव के पुत्र शान्तनशाह हुए, जिनकी वंश-परम्परा में आपका आविर्भाव हुआ। सन् ५७ ई० के अमर सेनानी बाबू कुँवरसिंह भी आपके ही पूर्वज थे। आपके पितामह बाबू नर्मदेश्वरप्रसाद सिंह 'ईश' प्रसिद्ध विद्वान् एवं कवि हो गये हैं। —देखिए, 'मिश्रबन्धुविनोद' (वही), पृ० १०० तथा ४७१ और 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' (शिवपूजन सहाय, सन् १९६३ ई०), पृ० ५१।

३. आपके द्वारा दिनांक १४ सितम्बर, सन् १९६८ ई० को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।—देखिए, 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही), पृ०, ४७०, 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ'

सन् १९११ ई० मे आपका नाम पटना कॉलेजिएट स्कूल मे लिखवाया गया। सन् १९२१ ई० मे आपने प्रवेशिका-परीक्षा पास की। उसके बाद, असहयोग-आन्दोलन मे पड जाने के कारण आपकी उच्च शिक्षा समुचित रूप मे न हो सकी। किन्तु, स्वाध्याय के बल पर आपने अपनी शिक्षा को उन्नत रूप दिया। सन् १९४२ ई० के आन्दोलन मे आपने अहिंसात्मक ढंग से अपने थाने मे कॉंगरेस-सरकार कायम की। सन् बयालीस के ९ अगस्त से २२ अगस्त तक आप जगदीशपुर थाने की आजाद हिन्द-सरकार के अध्यक्ष रहे। उसी समय आपके घर पर गोरी सेना ने हमला किया और आप हिरासत मे ले लिये गये। जेल से वापस आने के बाद सन् १९४३ ई० के अगस्त मास से सन् १९४५ ई० तक आप फरार रहे। उस समय सरकार ने आपकी गिरफ्तारी के लिए ५०००) का इनाम घोषित किया था। सन् १९४५ ई० मे सरकार के 'वारण्ट' हटा लिये जाने के बाद आप घर लौट आये। घर लौट आने के बाद आप पटना मे रहने लगे और 'नव-साहित्य-मन्दिर' नामक संस्था खोलकर प्रकाशन का काम करने लगे। उक्त कार्य मे सफलता नही मिलने पर आप 'आर्यावर्त्त' (दैनिक) मे सहायक सम्पादक-पद पर नियुक्त हुए। सन् १९४७ ई० मे आपकी नियुक्ति 'जिला-सम्पर्क-पदाधिकारी' के पद पर हो गई। इस पद पर आप नौ वर्षों तक कार्य करते रहे। उसके बाद अवकाश प्राप्त कर आप स्थायी रूप से अपने घर पर ही रहकर अपनी खेती की देखभाल और साहित्य-सेवा करने लगे।

आपकी साहित्य-सेवा का आरम्भिक वर्ष सन् १९२२ ई० बतलाया जाता है। आप सुप्रसिद्ध बॅंगला-लेखक वकिमचन्द्र के साहित्य का अध्ययन कर साहित्य-रचना की ओर आकृष्ट हुए। आपने हिन्दी और भोजपुरी-भाषाओ के प्रचार-प्रसार की दिशा मे महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। शाहाबाद-जिला-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन को सन् १९४७ ई० मे जिन लोगों ने नव-जीवन प्रदान किया, उनमे आपका नाम भी उल्लेखनीय है। कालक्रम से आप क्रमश उसके अध्यक्ष और मन्त्री भी हुए। सन् १९४७ ई० मे आपने शाहाबाद-जिला-भोजपुरी-साहित्य-सम्मेलन की स्थापना की, जो आज भी साहित्य सेवा की दिशा मे सचेष्ट है। आपने कई पुस्तकालयो की भी स्थापना की है। आपका निजी संग्रहालय भी प्राचीन एव महत्त्वपूर्ण माना जाता है। आपने अपने जीवन-काल मे अनेक हिन्दी एवं भोजपुरी-सम्मेलनो के अध्यक्ष-पद को सुशोभित किया है। आपकी साहित्यिक रचनाएँ हिन्दी और भोजपुरी दोनो मे मिलती हैं।

रचनाक्रम की दृष्टि से आपके प्रकाशित ग्रन्थो के नाम ये है—(१) ज्वालामुखी,[1], (२) गद्य सग्रह,[2] (३) हृदय की ओर[3], (४) भूख की ज्वाला[4], (५) भोजपुरी - लोकगीतो मे करुण रस[5] (६) नारी-

(वही), पृ० ५६६ तथा ६५६ 'भोजपुरी के कवि और काव्य' (श्रीदुर्गाशकरप्रसाद सिंह, सन् १९५८ ई०), पृ० २७८-८० ।

१. हिन्दी के आदिगद्यकाव्यों में एक। प्रकाशन-काल सन् १९२६ ई०।

२ प्रकाशन-काल सन् १९३३ ई०।

३. उपन्यास। प्रकाशन-काल सन् १९३६ ई०।

४ शब्द-चित्र। प्रकाशन-काल सन् १९४१ ई०।

५. आलोचनात्मक विवेचन। प्रकाशन-काल सन् १९४

जीवन[१], (७) वह शिल्पी था[२], (८) तुम राजा मे रंक[३], (९) फरार की डायरी (तृतीय भाग)[४], (१०) सामूहिक खेती,[५] (११) कुँअरसिंह · एक अध्ययन,[६] (१२) भोजपुरी के कवि और काव्य[७], (१३) गुनावन,[८] (१४) एटम के युग मे[९] (१५) बाबू कुँअर सिंह[१०] (१६) साहित्य-रामायन[११], (१७) भोज-भोजपुर और भोजपुरी-प्रदेश[१२], (१८) भोजपुरी एक समीक्षा[१३], (१९) साहित्य-रामायन,[१४] (२०) न्याय के न्याय और[१५] (२१) कैकयी का त्याग[१६]। आपकी अप्रकाशित पुस्तकाकार रचनाओ के नाम कालक्रम से ये है—(१) विरही-हृदय या विरह-चालीसा,[१७] (२) अतीत भारत,[१८] (३) तब, जब भोजपुरी पर कोई नही लिखता था,[१९] (४) ससिमाला,[२०] (५) कुँअर सिह की जीवनी,[२१] (६) युवक-युवती क्या जानें काम-विज्ञान,[२२] (७) डैनट्टूट सारस,[२३] (८) भोजपुरी-निबन्धों का संग्रह,[२४] (९) फरार की डायरी (प्रथम भाग),[२५] (१०) भोजपुरी-लोकगीतो मे शृंगार-रस,[२६] (११) भोजपुरी-लोकगीतों मे वीर-रस, (१२) भोजपुरी-लोकगीतों मे शान्त-रस, (१३) भोजपुरी-लोकगीतो मे हास्य-रस, (१४) लेखनी की बहक,[२७] (१५) फरार की डायरी (द्वितीय भाग),

---

१ प्रकाशन-काल सन् १९४५ ई० ।

२ कहानी-संग्रह । प्रकाशन-काल सन् १९४६ ई० ।

३ कहानी-संग्रह । प्रकाशन-काल वही ।

४ प्रकाशन-काल वही ।

५. एकांकी-नाटक । प्रकाशन-काल सन् १९५५ ई० ।

६ प्रकाशन-काल सन् १९५६ ई० ।

७ शोध-ग्रन्थ । बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना से प्रकाशित । प्रकाशन-काल सन् १९५८ ई० ।

८. अध्यात्म-काव्य । प्रकाशन-काल सन् १९६० ई० ।

९ भोजपुरी-काव्य । प्रकाशन-काल वही ।

१०. भोजपुरी-नाटक । प्रकाशन-काल सन् १९६२ ई० ।

११ महाकाव्य—किष्किन्धा एवं सुन्दरकाण्ड । प्रकाशन-काल सन् १९६४ ई० ।

१२. प्रकाशन-काल वही ।

१३. समीक्षा । प्रकाशन-काल वही ।

१४. महाकाव्य—लंकाकाण्ड । प्रकाशन-काल सन् १९६५ ई० ।

१५ भोजपुरी-नाटक । प्रकाशन-काल वही ।

१६. प्रकाशन-काल सन् १९६६ ई० ।

१७ रचना-काल सन् १९३० ई० ।

१८. प्रतीकात्मक-नाटक । रचना-काल वही ।

१९. रचना-काल सन् १९३३ ई० ।

२०. काव्य । रचना-काल सन् १९३६ ई० ।

२१. हिन्दी-नाटक । रचना-काल वही ।

२२. रचना-काल सन् १९४० ई० ।

२३. कहानी-संग्रह । रचना-काल सन् १९४३ ई० ।

२४. रचना-काल सन् १९४४ ई० ।

२५. रचना-काल वही ।

२६ रचना-काल सन् १९४५ ई० । अगली पाँच पुस्तकों का रचना-काल भी वही ।

२७. स्फुट लेख ।

(१६) पद्यांजलि,[१] (१७) भोजपुरी-भाषा के ४० नये आविष्कृत सन्त कवि,[२] (१८) भोजपुरी के गत ५० वर्षों मे विकास का सिंहावलोकन, (१९) धारा के राजा भोजदेव (१००५-१०५५) की भोजपुरी-भाषी प्रदेशो पर विजय तथा १६८ वर्षों का शासन, (२०) साहित्य-रामायन, (अयोध्याकाण्ड), और (२१) साहित्य-रामायन (अरण्यकाण्ड)[३]।

उदाहरण

(१)

भोजपुरी को साहित्यिक भाषा मानने के विपक्ष में सर्वप्रथम दलील यही दी जाती है कि उसमे साहित्य का अभाव है। दूसरी यह कि उसका व्याकरण नही है। यह कहना असंगत है कि भोजपुरी मे साहित्य का अभाव है। भोजपुरी का साहित्य आज से नही, सिद्ध-काल से निर्मित होता आ रहा है। सिद्ध-साहित्य की भाषा मे भी भोजपुरी का अंश स्पष्ट है। हाँ, इसके कण्ठनिहित साहित्य को लिखित रूप देकर विद्वानों के समक्ष लाने का प्रयत्न पहले नही किया गया था। आज ही नही, बहुत पहले से भोजपुरी में अनेक छोटी-छोटी पुस्तकों की रचना होती आई है और वे पुस्तकें प्रकाशित होकर बाजारो मे बिकती भी रही हैं। कलकत्ता और बनारस के कितने ऐसे प्रेस है जो ऐसी ही पुस्तकें छापकर समृद्ध हुए है। व्याकरण के अभाव के कारण भाषा की सत्ता पर सन्देह नही करना चाहिए। वस्तुतः भाषा पहले है, व्याकरण पीछे। व्याकरण के न होने से किसी भाषा के व्यापक अस्तित्व मे अन्तर नहीं आता।

भोजपुरियों का हिन्दी-भाषा के प्रति हार्दिक अनुराग है। उसको राष्ट्रभाषा मानने के लिए वे बहुत पहले से ही तैयार हैं। उसके विकास के

---

१. स्फुट काव्य-संग्रह।

२. रचना-काल सन् १९६८ ई०।

३. रचना-काल वही। उदयपुर (राजस्थान)-विश्वविद्यालय के प्रो० सत्येन्द्र पारीक ने 'नाथ-साहित्य : एक समीक्षा' नामक लगभग ६०० पृष्ठों की एक पुस्तक की रचना की है। पुस्तक नव-साहित्य-मन्दिर, दलीपपुर, शाहाबाद से प्रकाशित है।

लिए वे तन-मन-धन से कार्यतत्पर रहते हैं। किन्तु अन्य जनपदीय भाषा-भाषियों की तरह वे राष्ट्रभाषा हिन्दी के उन्नति-पथ पर काँटे बिछाना नहीं चाहते। वे हृदय से भारतीय और राष्ट्रीयता के समर्थक है। किसी दूसरी भगिनी-भाषा से उनको किसी प्रकार का द्वेष या विरोध नहीं है।'[1]

(२)

महाराज! कैकयी ने महाराज से अधिक महाराज के धर्म और कर्त्तव्य को समझा है और उसकी सदा से जीवन-पर्यन्त रक्षा की है। इस ध्रुव सत्य को वह महाराज के सामने प्रस्तुत करके उनके महाप्रस्थान के पूर्व उन्हें विश्वास दिला देना चाहती है कि कैकयी निष्कलंक है — निष्पाप है; परन्तु इस शुभ कल्पना की सत्यता का प्रमाण और विवरण देने के लिए उसका मुख बन्द है—जिह्वा मूक है। उसके त्याग ने उसके मुँह पर ताला बन्द कर रखा है। आप जिन शब्दो मे चाहे उसे शाप दें, चाहे जिन विषैले वाणों से उसकी सत्यनिष्ठा को बेध-बेधकर मर्माहत करें; परन्तु विश्वास रखें महाराज! कैकेयी अपने धर्म से विमुख कभी नही हुई। अपने कर्त्तव्य के पालन मे उसने महान् से महान् त्याग किया है। संसार भले ही उसे जो कहे, परन्तु वह महान् रघुकुल के परम सत्यनिष्ठ महाराज दशरथ के, लोकनायक राम के सुप्रसिद्ध कोसल गणतन्त्र के धवल कीर्त्तिमान को वहन करनेवाली अदृश्य नीव की ईंट की तरह उत्सर्ग हो गयी है। विधाता जानता है, वशिष्ठ और विश्वामित्र इसके साक्षी हैं महाराज!'[2]

(३)

सीता निकासन राजभवन से भइल हा, अवध समराज से भइल हा, समराट राम का सिहासन से भइल हा, बाकी ओह पुनीत सती

---

१. 'भोजपुरी के कवि और काव्य' (श्रीदुर्गाशंकरप्रसाद सिंह, सन् १९५८ ई०), पृ० १६-१७।
२. 'कैकयी का त्याग' (श्रीदुर्गाशंकरप्रसाद सिंह, सन १९६६ ई०), पृ० १३३।

निसपाप सीता के निरवासन राम का हृदय से ना भइल हा। उहाँ ओकर एही जनम में नाहीं दूसरा जनम मे भी ओसही असथान बा आ रही जइसे आज तक रहल हा। राम के समराट पद के करतब आ बिधान के नियम के बिबेक मातर ही सीता के बनबास देलसि हा—राम के ऊ हाथ आ हृदय ना जे सीता के जनक का भरल सभा मे धनुहा तूरि के अपना हाथ में ओह के हाथ धइले रहे आ अपना हृदय के सिंहासन पर ओह के बइठवले रहे। सीता आजु राम के हाथ धइले अवध के एह सिंहासन का बगल में ओसहीं खड़ा बिआ, आ राम का हृदय-सिंहासन पर ओसही आसीन बाई, आ एह जनम में त रहबे करी ओह जनम में भी हाथ पकड़ले हृदय मे बइठल रही।[1]

(४)

उधो अब नही सुधि तन की।
उतते बहुरि कान्ह मोहि मिलिहैं, यह तो बात कहन की।
कुबरी कूबर से उबरि कान्ह नहि, सुधि लैहैं विरहिन की॥
कर पुट विनती कहियो स्याम सो, सुधि रखिहैं गोपिन की।
हम तौं सकि भर धीर बधैहौं, दसा सुधरिहौ मन की॥[2]

(५)

होइतीं जल के हम मछरिया,
बसतीं जहाँ पिया नहइते।
चुपके चरनन चूमि अघइती,
जनम जनम के साध पुजइती॥

---

१ 'न्याय के न्याय' (श्रीदुर्गाशंकरप्रसाद सिंह, सन् १९६५ ई०), पृ० १३७।

२. आपसे प्राप्त। 'कवि-कौमुदी' की समस्या 'मन की' की पूर्ति। यह पूर्ति श्रीरामनरेश त्रिपाठी को लिखकर भेजी गई थी।

जो मो पइती मोर के पँखिया,

जा गिरती गोकुल के डगरिया।

राधे हाथ मुकुट सिर चढ़ती,

चिर संचित मन साध पुजइती ॥

होतीं जो हम बाँसक बिरवा,

जाइ पनपती नन्दक घरवा।

पिया बजइतें तान अधर धरि,

चूमि अधर मन प्रेम अघइती ॥[1]

दुर्गेशनन्दन 'माणिक'

आप गया-नगर के 'पुरानी गोदाम'-मुहल्ले के निवासी सुकवि श्रीगयाप्रसाद 'माणिक' के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९५८ वि० (सन् १९०० ई०) की आश्विन शुक्ल-द्वितीया को हुआ था।[2] आपकी स्कूली शिक्षा गया जिला-स्कूल मे हुई थी। वही से आपने पटना-विश्वविद्यालय की प्रवेशिका (मैट्रिक) परीक्षा पास की थी। सन् १९२० ई० से ही आपकी साहित्यिक रचनाएँ प्रकाश मे आने लगी थी। आपके स्फुट लेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुआ करते थे। सामाजिक कार्यों मे आपका पूर्ण सहयोग रहता था। गया से प्रकाशित होनेवाली 'रौनियार-बन्धु' नामक मासिक पत्रिका के आप सह-सम्पादक थे। 'रसिक-विनोदिनी'-पत्रिका के भी आप सह-सम्पादक थे। इस पत्रिका के प्रकाशक भी आप ही थे। आपकी कोई पुस्तकाकार रचना नही मिलती, केवल स्फुट रचनाएँ ही प्राप्त होती है। सन् १९५१ ई० के ३० नवम्बर को आप स्वर्गवासी हुए।

उदाहरण

राजीव-लोचन राम के

भुजवाम दिसि श्रीजानकी,

त्यो लखन दाहिनी ओर

सम्मुख मूरति हनुमान को।

---

१. आपसे प्राप्त।

२. परिषद् के साहित्यिक-इतिहास-विभाग में, दिनांक १ मई, सन् १९५९ ई० को, श्रीयुगेश्वरप्रसाद गुप्त (इनकम टैक्स ऑफिस, राँची) द्वारा प्रेषित विवरण के अनुसार।—देखिए, 'गया के लेखक और कवि' (वही, पृ० ९१) भी।

भ्राता भरत रिपु दमन दुरवत
चँवर अविचल प्रेम सो,
ऐसी सुछवि मंगल प्रदायिनी
ध्याइए नित नेम सो।'[1]

देवदत्त त्रिपाठी

आप शाहाबाद-जिला के 'दलीपपुर'-ग्राम (थाना-जगदीशपुर) के निवासी हिन्दी-हितैषी उद्भट संस्कृत-विद्वान् महामहोपाध्याय पं० रघुनन्दन त्रिपाठी के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९३२ वि० की आश्विन शुक्ल-दशमी, शुक्रवार (सन् १८७६ ई० के १० सितम्बर) को हुआ था।[2] आप बचपन से ही कुशाग्रबुद्धि थे। केवल आठ वर्ष की अवस्था मे आपने सम्पूर्ण अष्टाध्यायी' और 'अमरकोश' कण्ठाग्र कर लिया था। इसके बाद काशी मे रहकर आपने यजुर्वेद एवं व्याकरण के प्रमुख ग्रन्थ पढ़े। काशी के 'क्वान्स कॉलेज' मे प्रवेश पाने के बाद महामहोपाध्याय पण्डित-मार्त्तण्ड श्रीगंगाधर शास्त्री से भी आपने व्याकरण और साहित्य पढा। उसी कॉलेज के ऐंग्लो-संस्कृत-विभाग के पं० माधवप्रसाद पाठक से आपने अँगरेजी की शिक्षा पाई और वहीं से आपने प्रथमा-मध्यमा की परीक्षाएँ पास की। इसके बाद, आप अपने पिता के पास 'आरा' चले आये। वहाँ आपने अपने पूज्यपाद पिता से व्याकरण के 'परिभाषेन्दुशेखर', 'शब्देन्दुशेखर' और 'महाभाष्य' आदि महत्त्वपूर्ण ग्रन्थो का अध्ययन किया। लगभग पन्द्रह वर्ष की अवस्था मे आपने 'काव्यतीर्थ' की परीक्षा पास कर ली। इस परीक्षा के पास करने के बाद आपने 'एण्ट्रेंस' की परीक्षा दी, जिसमे आप सर्वप्रथम होकर कलकत्ता विश्वविद्यालय से दस रुपये मासिक की छात्रवृत्ति पाने लगे। उस समय आपको आठ रुपये की मासिक छात्रवृत्ति सूर्यपुरा के राजा श्रीमान् राजराजेश्वरीप्रसादसिंहजी के दरबार से भी मिलती थी। पटना मे आप बी० एन्० कॉलेज के छात्र थे। वहाँ से एफ्० ए० पास करने के बाद अस्वस्थ होने के कारण आपको अपने कॉलेज की पढ़ाई छोड देनी पडी। स्वस्थ होने के पश्चात् आप अपने परमप्रिय मित्र एवं सहपाठी म० म० पं० रामावतार शर्मा के साथ काशी

---

१ श्रीयुगेश्वर प्रसाद गुप्त (वही) से प्राप्त।

२ देखिए,—'साहित्य' (वही, वर्ष ७, अंक ४, जनवरी, सन् १९५७ ई०), पृ० ५७-६० पर श्रीललन पाण्डेय का लेख और 'साहित्य' (वही, वर्ष ७, अंक ३, अक्टूबर, सन् १९५९ ई०), पृ० १ पर आचार्य शिवपूजन सहायजी का सम्पादकीय। 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६५२) में आपका जन्म-काल सं० १९३६ वि० माना गया है। श्रीपारसनाथ सिंह (पत्रकार, दैनिक 'आज', वाराणसी) आपका जन्मकाल सन् १८७४ ई० का १० सितम्बर मानते हैं। प्रस्तुत परिचय-लेखन में उनके लेख 'साहित्य-सुधाकर आचार्य देवदत्त त्रिपाठी' से भी पर्याप्त सामग्री ली गई है।—देखिए, 'आज' (दैनिक, २३ सितम्बर, सन् १९५६ ई०)।

आकर साहित्य-शास्त्र एवं हिन्दी साहित्य का अध्ययन करने लगे। इस प्रकार, अध्ययन समाप्त करने के पश्चात् आप पटना कॉलिजिएट स्कूल मे पच्चीस रुपये मासिक पर नियुक्त हुए। उक्त पद पर छह वर्षों तक कार्य करने के बाद आप पटना-कॉलिज मे संस्कृत-व्याख्याता के पद पर नियुक्त होकर चले आये। कुछ ही दिनो के बाद आप उक्त विभाग के अध्यक्ष भी हो गये। इसके पश्चात् आपकी ख्याति सर्वत्र फैलने लगी और आप प्रान्त तथा प्रान्त के बाहर की अनेक संस्थाओ के सदस्य बने एवं सम्मानित हुए। सन् १९२० ई० मे बिहार-संस्कृत-संजीवन-समाज के मन्त्रिपद पर नियुक्त हुए। सन् १९१५ से १९१९ ई० तक आप बिहारोत्कल संस्कृत काउन्सिल के सदस्य रहे। सन् १९३० ई० मे पटना मे आयोजित अखिलभारतीय ओरियण्टल-कॉन्फरेंस के संयोजक आप ही थे। आप रॉयल एशियाटिक सोसायटी, ग्रेट-ब्रिटेन और आयरलैण्ड के कई वर्षों तक सदस्य थे। सन् १९५५ ई० मे आपके सभापतित्व मे ही अखिलभारतीय संस्कृत-साहित्य-सम्मेलन (दिल्ली) की बिहार शाखा पटना मे स्थापित हुई थी। आप बिहार-पण्डित-सभा के मन्त्रिपद पर भी कई वर्षों तक रहे। इस सभा ने आगे चलकर आपको 'साहित्य-सुधाकर' की उपाधि से विभूषित किया। काशी के पण्डितों ने आपको 'साख्यरत्न' की उपाधि से सम्मानित किया और भारत धर्म-महामण्डल ने आपको 'विद्यालंकार' की उपाधि प्रदान की।

आप एक निरभिमान व्यक्ति थे। ज्ञान के अनेक क्षेत्रो मे आपका समान प्रवेश था, किन्तु आपने उसका आर्थिक-लाभ नही उठाया। अध्ययन-अध्यापन मे आपकी विशेष रुचि थी। अध्यापन के लिए आपने किसी छात्र से कभी कुछ नही लिया। आपके पढाये आज हजारों छात्र उच्च से उच्च पद पर विराजमान है। आपने १० सितम्बर, सन् १९३४ ई० को प्राध्यापक-पद से अवकाश-ग्रहण किया।

संस्कृत[1]-हिन्दी के अतिरिक्त अँगरेजी-भाषा मे भी आपकी गहरी पैठ थी। डॉ० ग्रियर्सन, सी० ई० डब्लू० ओल्डम, सिल्वन लेवी, प्रो० मैकडोनल से आपके जो पत्राचार हुए है, वे इस बात के प्रमाण है। हिन्दी मे सबसे पहले आपने ओल्डम साहब के साथ मुहावरों पर काम किया था। आपने पं० रामदहिन मिश्र के साथ मिलकर भी कई हिन्दी-पुस्तको की रचना की थी। आपके द्वारा लिखित कुछ स्फुट लेख 'शिक्षा' मे मिलते है। आप ३० अगस्त (बृहस्पतिवार), सन् १९५६ ई० की रात को, (श्रीकृष्णजन्माष्टमी के दूसरे दिन) ८२ वर्ष की आयु मे, परलोकवासी हुए।

उदाहरण

(१)

यदि इस संसार में मनुष्य को आदर्श पुरुष बनानेवाला कोई सर्वोत्तम गुण है तो वह सच्चरित्रता है। मनुष्यों की मानसिक सद्-

१. आपने संस्कृत में इन पुस्तकों की रचना की थी—(१) धर्मशास्त्रपुराणवार्त्ता, (२) वेदान्त मत-मञ्जरी, (३) उपनिषद्सुधा, (४) श्रीमद्भगवद्गीता-नवनीतम्, (५) शिवशतकम्, (६) विजयशतकम्, (७) रमेश्वर-कुसुमाञ्जलि, (८) आयुर्वेदीय चर्चा, (९) सांख्यतत्त्वप्रकाश, (१०) संस्कृत-साहित्य-चर्चा, (११) हिन्दी-साहित्य-चर्चा (३६५ श्लोकों में हिन्दी-साहित्य का इतिहास)।

वृत्तियों को सर्वाङ्गीण, समुन्नत और उत्कृष्ट बनाना तथा कर्त्तव्य-निष्ठ होकर महाजनानुमोदित और विवेक-प्रदर्शित पथ से अपना शान्त और सरल जीवन बिताना ही सच्चरित्रता है। तन, मन, वचन और कर्म से दूसरे का अनिष्ट न करने, सबके साथ सहानुभूति तथा अनुग्रह रखने और उपयुक्त पात्र मे दान देने ही को शास्त्रकारों ने सच्चरित्रता कहा है।

मनुष्यों को चाहिए कि सदा सच्चरित्र बनने की चेष्टा करें। छात्रो को तो सर्वोपरि इसका अभ्यास करना उचित है; क्योंकि उनके जीवन का प्रातःकाल छात्रावस्था ही है। सच्चरित्र बनने की चेष्टा करनेवालों को आन्तरिक संकल्प में दृढप्रतिज्ञ होकर समयोचित आत्मसयम और कठोर आत्मशासन करना श्रेयस्कर है।[1]

(२)

जिन कारणों से मनुष्य प्राणियों में सर्वश्रेष्ठ समझा जाता है और जिन गुणों के कारण मनुष्य अपने नाम को सार्थक करता है, उन सबो का एकाधार सच्चरित्रता है। सुचरित्र का बल ही प्रधान बल है। निष्कलक चरित्र ही अमूल्य सम्पत्ति है। सारी उन्नतियों का मूल सच्चरित्रता है। महत्त्व और गौरव का परिचायक सच्चरित्रता है। सच्चरित्र होना ही मानव-जीवन का प्रधान लक्ष्य और श्रेष्ठ कर्त्तव्य है। इससे सबको सच्चरित्र बनने की सबको सदा चेष्टा करनी चाहिए।[2]

देवनारायण मिश्र

आप गया-जिला के 'कुर्था'-थानान्तर्गत 'बारा' नामक ग्राम के निवासी पं० काली मिश्रजी के पुत्र[3] हैं। आपका जन्म सं० १९४७ वि० (सन् १८९० ई०) की अगहन

१. 'गद्य-चन्द्रिका' (स० साँवलियाविहारीलाल वर्मा, प्रकाशन-काल नहीं), पृ० १११।
२. 'गद्य-चन्द्रिका' (वही), पृ० ११३-१४।
३. आपके चाचा श्रीबालगोविन्द मिश्रजी भी कवि थे। उन्होंने 'सत्यनारायण-प्रमोद' नामक एक पुस्तक की रचना की थी।

शुक्ल-पंचमी को हुआ था।[1] आपके बचपन का अधिकाश समय पटना-जिला के 'राघोपुर' (बिहटा) नामक स्थान मे व्यतीत हुआ था। बचपन मे आप खेल-कूद के विशेष प्रेमी थे। इसी क्रीडा-प्रियता के कारण आपकी ऊँची शिक्षा नही हो सकी। शैशव में ही आपका सम्पर्क 'राघोपुर' के तत्कालीन कवि श्रीरघुनाथजी से हुआ। फलस्वरूप, आपके मन मे भी काव्य-रचना की प्रवृत्ति हुई। कुछ ही दिनो मे आपने पिंगल, अलकार आदि का अच्छा अध्ययन कर लिया। उसी समय से आप सरस्वती'-पत्रिका के ग्राहक हो गये और आज भी लगभग एक दर्जन पत्र-पत्रिकाएँ मँगाते है।[2]

आप बडे मिलनसार, उदार प्रकृति के व्यवहार-कुशल व्यक्ति है। गुणियो के आदर-सत्कार मे आपको सुख मिलता है। आप एक सुरुचि-सम्पन्न व्यक्ति है। आप इतने बडे विद्याव्यसनी हैं कि अपना अधिकाश समय लिखने-पढने मे ही लगाते है। अपने घर पर ही आपने एक छोटा-सा पुस्तकालय बना रखा है, जिसमे करीब एक सहस्र दुर्लभ ग्रन्थ सगृहीत हैं।

आप हिन्दी के एक सुयोग्य विद्वान् एवं सरस कवि है। आपकी कविताओ की भाषा वड़ी सरस और सुन्दर है। वीर और शृंगार रस का प्राचीन हिन्दी-कवियो की अनेक कविताएँ आपको कण्ठस्थ है। आपकी स्फुट रचनाएँ गया से प्रकाशित होनेवाली पत्रिका साहित्य-माला' और 'साहित्य-चन्द्रिका' मे प्रकाशित हुआ करती थीं। आप प० अयोध्या प्रसाद सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' और श्रीरामचरित उपाध्याय के काव्यग्रन्थो के बडे प्रशसक हैं।[3]

उदाहरण

(१)

सिसिर के ताप से कराहत हौ रात-दिन,
व्याकुल हूँ प्यारी के वियोग-सर-पीर से।
जीवन अब भार संसार दुखदायी भयो,
पापी प्रान तो पै नाहि निकसत सरीर से॥

---

१ देखिए, 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० ६३।

२ श्रीत्रिवेणी शर्मा 'सुधाकर', मझियावाँ (गया) के पत्र से, जो परिषद् के साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित है।

३. आपकी रचनाओं के अधिकांश उदाहरण नष्ट हो गये हैं। आपने दिनांक १८ मई, सन् १९६१ ई० के अपने पत्र में लिखा है—"मेरी जीवनी किसने भेजी, मुझको भी पता नहीं है। शायद त्रिवेणी शर्मा 'सुधाकर' या उमाशंकर 'ऋषि' ने भेजी हो। ...रही उदाहरण की बात। आज से ३५-३६ वर्ष पूर्व मेरी कविता की कै-एक किताबें बाबू गंगाशरणजी, कचनपुर-खरगपुर, पो० बिहटा (पटना) के द्वारा आपके पास भेजी गई थीं। गत वर्ष इसके विषय में मैंने पटने में जाकर आपसे पूछताछ की। उत्तर मिला कि वे सभी किताबें भूकम्प के प्रकोप में नष्ट हो गईं। मैं पुनः कुछ पूर्त्तियाँ सेवा में अर्पण कर रहा हूँ। ये पूर्त्तियाँ भी पत्रिका में निकल चुकी हैं।"

तापै बसन्त आई मदन-नृप फौज लाई,

बेधत है कलेजा मेरो बार-बार तीर से।

ऐ रे मतिमन्द कामनीति को विचार करू",

युद्ध में युद्धवीर लड़ता है अबीर से ॥[1]

(२)

नवल नवेली अलबेली चली यार गली,

वदन की शोभा सरसत पूनो चान्द की।

मस्तक सिन्दूर शलाका शुभ्र सोहत है,

मदन महीप की सिरोही धरी सान की।

अंजन से कारे कजरारे नयन राजत है,

अधरो पर शोभा लसत है पीक पान की।

कामी युवाजन को फँसाइवे को अस्त्र मानो,

लाल लाल ओठो पर जालो मुसकान की ॥[2]

(३)

होली मे झोली अबीर भरे,

सब यार को साथ गोपाल लई।

गावत गालि बजावत तालि,

चले बनमालि उछाह नई।

जा पहुँचे बरसाने अचानक,

राधिका माधव भेंट भई।

इत काछनी पाग गुलाबि भई,

उत सारी सबै चटकीली भई ॥[3]

---

१. श्रीअम्बिकाप्रसाद, एम० ए० (उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, कुर्था, गया) के सौजन्य से प्राप्त। इस पूर्ति में 'अबीर' शब्द से कवि का तात्पर्य (अ—बीर = अबीर) है।

२ 'लाल-लाल ओठों पर जाली मुसकान की' समस्यापूर्त्ति। यह पूर्त्ति भी उन्हीं से प्राप्त।

३ 'साहित्यमाला' (गया, माला १, पुष्प ८, आश्विन, सं० १९७७ वि०, सन् १९२० ई०), पृ० ६-७।

सुन्दर सुपक्व फल शोभत है कौन रंग,
दन्तक्षत नायिका के कौन थल जानकी ।
मीन और पक्षिन बझाने साधन कौन,
हर्षचित्त जानने का कौन अनुमान की ।
बिम्बाफल होत है निछावर कौन अंग पै,
सन्त डरै कौन कला देख कलावान की ।
नायक निज भाग्य को सराहै कौन ढंग देख,
लाल लाल ओठों पर जाली मुसकान की ॥'[1]

देवकरण शर्मा

आप गया-जिला के 'जहानाबाद' नामक स्थान के निवासी संस्कृत-व्याकरण और साहित्य के पण्डित श्रीबालमुकुन्द मिश्रजी के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९५१ वि० (सन् १८९० ई०) की अग्रहण शुक्ल-एकादशी, (सोमवार) को हुआ था।[2] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा जहानाबाद के 'लक्ष्मी-संस्कृत-विद्यालय' (टोल) मे हुई थी। तदनन्तर, आपने पटना-कॉलेज के प्रसिद्ध विद्वान् पं० श्रीदेवदत्त त्रिपाठी से संस्कृत का अध्ययन किया। उनसे शिक्षा-ग्रहण करने के बाद आपने वाराणसी-स्थित संस्कृत-महाविद्यालय (क्वीन्स कॉलेज) मे अपना नाम लिखवाया। वहाँ से आपने काव्य और पुराण विषयो मे 'तीर्थोपाधि' परीक्षा पास की। उन्हीं दिनों (सन् १९१२-१३ ई०) आपने संस्कृत-शिक्षा-समिति, पटना से भी 'काव्यालंकार' की उपाधि प्राप्त की।

सन् १९०८ ई० से आपने हिन्दी और संस्कृत मे अपनी रचनाएँ लिखना प्रारम्भ किया था। आपके द्वारा लिखित कविताएँ तत्कालीन 'मिथिला-मिहिर', 'मर्यादा' और 'मनोरंजन' नामक पत्रो मे प्रकाशित हो चुकी थी। हिन्दी मे आपने कई पुस्तकें लिखी हैं जो दुर्भाग्यवश प्रकाश मे न आ सकी। आपकी अप्रकाशित हिन्दी-पुस्तकों में ये प्रमुख है—१. भगवद्गीता का पद्यानुवाद २. भागवत के दशमस्कन्ध का पद्यानुवाद और ३ अछूतोद्धार (नाटक)।[3] सम्प्रति आप घर पर ही निवास करते हैं।

---

१. वही। इस समस्यापूर्ति की अन्तिम पंक्ति में ऊपर के सभी प्रश्नमूलक बातों का उत्तर है। इस पूर्ति की यही विशेषता है।

२. परिषद् के 'साहित्यिक-इतिहास-विभाग' को आपके द्वारा प्रेषित विवरण के अनुसार।

३. उपर्युक्त हिन्दी-पुस्तकों के अतिरिक्त आपके द्वारा लिखित संस्कृत की कविताएँ भी पत्र-पत्रिकाओं में छपा करती थीं। पटना से निकलनेवाली तत्कालीन मासिक पत्रिका 'भूदेव' में आपकी ये रचनाएँ प्रकाशित हैं।

उदाहरण

(१)

पटने मे रहकर जब मैं काव्यतीर्थ की परीक्षा के लिए तैयारी कर रहा था, उस समय पं० रामदहिन मिश्रजी, जो पहले से ही अभिन्न मित्र थे एवं बाबू शिवपूजन सहायजी से भी प्रतिदिन साहित्यिक प्रेमालाप होता था। स्वर्गीय पं० रामदहिन मिश्रजी टेक्स्ट-बुक लिखने में व्यस्त रहते थे। बाबू शिवपूजन सहायजी सम्भवतः उनके साथ बराबर रहते थे। मेरा अनुमान है कि वे दोनो हिन्दी-लेखन-कला मे प्रविष्ट होकर अग्रसर हो रहे है।[1]

(२)

है शङ्कर तेरा नाम प्रभो ! सुखकारी,
तो होते क्यो है हाय ! हमे दुख भारी।
करुणाकर ! दीनो पर करते हो करुणा,
तो दृष्टि तुम्हारी क्यो हम पर है अरुणा।
होते है, हमसे यद्यपि दोष अनेक,
है योग्य तुम्हे क्या उस पर रखना टेक।
अज्ञानी बच्चे दोष किया करते है,
माँ-बाप भी उसपर ध्यान दिया करते है ?
हा ! सारे दिन, रोते-रोते जाते है,
तो भी रोने का अन्त नही पाते है।
तुम दीननाथ अनुकूल आज जो होते,
तो क्या पग-पग पर हाय ! आज हम रोते।
आपत्ति-डाकिनी लम्बा मुँह फैलाती,
आकर हमसे ही अपनी भूख भगाती।

१. परिषद् के साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित लेखक के परिचय-पत्रक के संलग्नक से।

जो रोग-भूत है कहीं बास नहिं पाते,

वे हाय हमारे घर में दौड़े आते।

सम्पत्ति हमारी सारी निकली घर से,

है भीख माँगनी पड़ती नीचे नर से।

कुछ भी न माँगने पर अब हा! मिलता है,

जाते हैं जिसके पास देख जलता है।

मूर्खता हमारे घर में राज रही है,

विद्या-विवेक का कुछ भी नाम नहीं है।

हा! सत्कर्मों से छीक हमें है आती,

है बुद्धि हमारी असत्कर्म पर जाती।

विज्ञान-सूर्य्य की प्रभा न भाती हमको,

अज्ञान अँधेरी रात सुहाती हमको,

उत्तम शिक्षा से समझे अपनी हानी,

अधमा शिक्षा से उन्नति अपनी जानी।

× × ×

हो सकल सृष्टि के तुमही करता धरता,

हो तुमही पल भर मे क्लेशों के हरता।

हे प्रभो! हमारी अबकी बार खबर लो,

इन सब क्लेशो को जल्दी से तुम हर लो।

गुणमयी हमारी जन्मभूमि हो जावे,

उत्तम सन्तानो से फिर यह भर जावे।

हों व्यास, युधिष्ठिर, भीष्म हमारे घर मे,

हो राज्य प्रेम का फिर भी नगर-नगर में।'[1]

---

१. 'मनोरंजन' (आरा, सन् १९१४ ई०; भाग २, संख्या ४-५), पृ० १२१-१२२।

देवेन्द्र प्रसाद

आप शाहाबाद-जिला के निवासी श्रीसुपार्श्वदासजी के पुत्र थे। आपका जन्म सन् १८८८ ई० के २७ अक्टूबर को 'आरा-नगर' मे हुआ था।[1] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा आरा मे ही हुई। सन् १९०८ ई० मे प्रारम्भिक शिक्षा के बाद आपका प्रवेश वाराणसी के 'सेण्ट्रल हिन्दू-महाविद्यालय' मे हुआ। वहाँ की शिक्षा समाप्त कर सन् १९०९ ई० मे आपने श्रीस्याद्वादविद्यालय, वाराणसी का कार्य-भार ग्रहण किया। तदनन्तर आप बंगाल चले गये। वहाँ जाकर आपने 'वंगीय सर्वधर्म-परिषद्' नामक एक संस्था की स्थापना की। बंगाल और बिहार-प्रदेश मे आपने इस संस्था के माध्यम से भारतीय संस्कृति का प्रचार-कार्य किया। इस संस्था का एकमात्र उद्देश्य भारतीय संस्कृति का उन्नयन था। इस सिलसिले मे आपने हिन्दी-भाषा के माध्यम से ही अपना कार्यारम्भ किया। हिन्दी-पुस्तको का प्रकाशन आपका व्यसन-सा हो गया था। इस कार्य को दृष्टि मे रखकर कलकत्ता मे आपने 'प्रेम-मन्दिर' और 'सेण्ट्रल जैन-पब्लिशिंग हाउस' की स्थापना की थी। इनमे दूसरी संस्था को अन्तर्देशीय ख्याति प्राप्त हो चुकी थी। इसके माध्यम से अनेक ग्रन्थ-रत्न प्रकाश में आये। डॉ० माताप्रसाद गुप्त-रचित 'हिन्दी-पुस्तक-साहित्य' मे आपकी तीन पुस्तको की चर्चा है, किन्तु वे आपकी लिखी नही है।[2] वस्तुत आपका महत्त्व हिन्दी-पुस्तको के प्रकाशन के सिलसिले मे ही है। हिन्दी मे यदि प्रकाशन-कला का इतिहास लिखा जाय, तो आपको बहुत ऊँचा स्थान मिलेगा। सन् १९२१ ई० के १७ मार्च को कलकत्ता मे, शीतलारोग से आक्रान्त होकर, आप परलोकवासी हुए। आपकी रचना के उदाहरण नही मिलते।

द्वारिका प्रसाद

आप गया-जिला के 'हसुआ' (नारदीगंज) नामक स्थान के निवासी श्रीमुंशी हरंगीलाल के पुत्र है। आपका जन्म स० १९५४ वि० (सन् १८९८ ई०) की आश्विन शुक्ल-प्रतिपद् को हुआ था।[3] वे पुलिस-विभाग मे 'मुहर्रिर' पद पर कार्य करते थे।[4] आपके जन्म के दो साल के भीतर ही आपकी माताजी का देहावसान हो गया था। आपका लालन पालन आपकी सौतेली माँ, जो आपकी मौसी भी थी, ने किया था। उन्होंने अपने अमित स्नेह से आपको इतना सिक्त कर दिया था कि बारह-तेरह वर्ष के बाद ही

---

१. 'साप्ताहिक शाहाबाद' मे 'अमर शाहाबादी' लेखक्रम की १९वी किश्त के रूप मे प्रकाशित श्रीनेमिचन्द्र शास्त्री के लेख के आधार पर।

२. 'हिन्दी-पुस्तक-साहित्य' (वही), पृ० ४८२।

३. श्रीविन्ध्येश्वरी प्रसाद (उप-प्राचार्य, गान्धी-उच्चांगल विद्यालय, नवादा, गया) द्वारा दिनांक २ जुलाई, सन् १९६१ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के आधार पर।

४. इनके पिता और आपके दादा मुंशी हनुमान सहाय पहले नारदीगंज के जमीन्दार थे, पर समय ने पलटा खाया और उनके जीवन-काल में ही सारी सम्पत्ति का विनाश हो गया।

आपको अपनी माँ की मृत्यु का ज्ञान हो सका। आप बाल्यकाल से ही प्रतिभासम्पन्न मेधावी छात्र थे। लोअर प्राइमरी की परीक्षा पास करते ही आपको छात्रवृत्ति (स्कॉलरशिप) मिलने लगी। यह छात्रवृत्ति मिड्ल वर्नाक्युलर-परीक्षा तक मिलती रही। घर की आर्थिक दशा गिर जाने के बाद आपको राँची मे नार्मल की ट्रेनिंग लेनी पडी। यद्यपि आपकी अवस्था उसके अनुकूल न थी, फिर भी पटना-विश्वविद्यालय के तत्कालीन रजिस्ट्रार रायबहादुर श्रीकमलाप्रसादजी की अनुमति से ऐसा करना सम्भव हुआ। प्रशिक्षण की समाप्ति के बाद आपने राँची डिवीजन के कई विद्यालयो मे अध्यापन कार्य किया। आपकी पहली बहाली ओपाचापी अ० प्रा० स्कूल, राँची मे हुई थी। शिक्षक रहते हुए अध्ययन से आपने पूरा लाभ उठाया। सन् १९१७ ई० मे जब आप नवादा ट्रेनिंग-स्कूल मे शिक्षक के पद पर नियुक्त हुए, तब आपके मन मे अँगरेजी पढने तथा प्रवेशिका की परीक्षा पास करने की इच्छा जाग्रत् हुई। स्वाध्याय के बल पर आपने मैट्रिक (सन् १९२२ ई०), मुख्तारशिप (सन् १९२४ ई०) आदि की परीक्षाओ मे सफलता प्राप्त की। इन परीक्षाओं के बाद आपने 'नवादा' मे मुख्तारी शुरू की। कुछ ही दिनो मे आप वहाँ के अच्छे मुख्तारों में गिने जाने लगे। आपका विवाह राँची शहर मे, श्रीदुखभजन लाल की द्वितीय कन्या से सन् १९१४ ई० मे हुआ था।

साहित्य की ओर बचपन से ही आपकी अभिरुचि थी। सन् १९३५ ई० तक आपके द्वारा रचित पुस्तकें प्रकाश मे आ गयी। सन् १९३५ ई० में आपकी एक पुस्तक श्रीभगवत-भजनावली' अथवा 'दीन द्वारिका-दूर्वादल' का मुद्रण एवं प्रकाशन श्रीलाला भगवानप्रसादजी 'रूपकला' ने करवाया। इस पुस्तक के अतिरिक्त आपकी एक दूसरी पुस्तक भी, जिसमे आपके द्वारा रचित एक सौ भजन एवं कुछ गजले हैं, प्रकाश्यमान है। सम्प्रति, आप अपने घर पर ही निवास कर रहे हैं। आपकी रचना के उदाहरण हमे नही मिल सके।

धनंजय पाठक

आप शाहाबाद-जिला के प्रसिद्ध ग्राम 'दलीपपुर' के निवासी पं० महावीर पाठक के पुत्र थे। आपकी माता का नाम वसुमती देवी था। आपका जन्म स० १९१८ वि० (सन् १८६१ ई०) की पौष शुक्ल-पूर्णिमा (गुरुवार) को हुआ था।[1] आपकी आरम्भिक शिक्षा आपके ग्राम मे ही हुई थी। आपके आदि शिक्षक 'वरतियर' (शाहाबाद)-निवासी श्रीआदित्य सहायजो थे। आगे चलकर आपने पं० राजीवराम त्रिपाठी से संस्कृत की शिक्षा ली। तन्त्र, वेदान्त एव शैवमत-सम्बन्धी आपके शिक्षक थे पं० योगेश्वर शर्मा। आपके भाषा-काव्यगुरु श्रीनर्मदेश्वरप्रसाद सिंह 'ईश' एवं श्रीरिपुभजन सिंह थे। आप क्रमश: काव्यशास्त्र के एक मान्य विद्वान् हो गये। कर्मकाण्ड और तन्त्रशास्त्र मे भी आपकी अच्छी पैठ हो गई। शिवभक्त तो आप थे ही। आपके द्वारा लिखित कई हस्तलिखित पुस्तकाकार रचनाएँ थी, जो चोरी चली गईं। अब आपकी केवल कतिपय स्फुट रचनाएँ ही प्राप्त होती हैं।

---

१. साहित्यिक-इतिहास-विभाग में आपके द्वारा प्रेषित विवरण के अनुसार।

उदाहरण

(१)

दामोदर कवि आदि बडे-बड़े विद्वान्, कविगण दिन के ८ बजे से १२ बजे तक सदा हाजिर रहते थे। दरबार में नंगे सिर कोई प्रवेश नही करता था, निसस्त, बरखास्त, रफ्तार, गुफ्तार, सदा के नियमानुसार था। दरबारी सभ्यगण दुजानू या डेढजानू निज-निज दरजे के मोताबिक यथायोग्य स्थान बैठते थे; बिना पूछे कोई उत्तर नही देता था। हँसी-मजाक कोई किसीसे नही करता था। सरे दरबार आम में कोई किसी का चुगली नही करता था। मादक द्रव्य कोई कभी सेवन नहीं करता था। सभी गुणी पारगामी अनुभवी दरबार मे हाजिर थे। यह दरबार क्या था पूर्व आर्य्यो का नमूना था। उसी दरबार में मुझे पितामहजी ने (जो सदा के दरबारी थे) हाजिर किया। दरबारपति बाबूसाहब ने मुझसे विद्या-सम्बन्धी बहुत-सी बातें पूछी। यथायोग्य मैने उत्तर दिया। बाबूसाहब बहुत प्रसन्न हुए और मेरा अभीष्ट भाषा-काव्य पढ़ने का जान, सानन्द पढ़ाना स्वीकार किया। उक्त तीनों महाराजकुमार फारसी, अरबी, संस्कृत, ज्योतिष तथा भाषा-काव्य के पूर्ण पंडित थे और अन्यान्य भाषाओं के ज्ञाता भी थे।[१]

(२)

जल अंजलि हस्ती सु डूब गई।
या जग में जगजीवन को, तन में जलपात्र कहाँ है दई।
सब जीव के माँहि बड़ो सुबली, संसार में कौन बिचार ठई॥
धनंजय सु या पुहुमी की दसा, प्रलयबारि में सोचहु कैसी भई।
न समस्या हिये महँ आवत को, जल अंजलि हस्ति सु डूब गई॥[२]

---

१. साहित्यिक-इतिहास-विभाग में आपके द्वारा प्रेषित सामग्री से।
२. वही।

★

धनीराम बक्सी 'धनी'

आप सिंहभूमि-जिलान्तर्गत 'चाईबासा' नामक स्थान के निवासी श्रीशुक्लनाथ बक्सी के पुत्र है। आपका जन्म सन् १९६६ ई० की १४ जनवरी को हुआ था।[1] आपकी स्कूली शिक्षा चाईबासा जिला-स्कूल मे हुई, जहाँ से आपने सन् १९१५ ई० मे प्रवेशिका की परीक्षा पास की। आगे चलकर आपने 'साहित्यरत्न' और 'हिन्दीरत्न' को उपाधियाँ भी प्राप्त की। आपकी साहित्य-सेवा का आरम्भिक वर्ष सन् १९१४ ई० बतलाया जाता है जब आपने शेक्सपियर के 'टेम्पेस्ट' का हिन्दी-अनुवाद करना आरम्भ किया था। सन् १९ ५ ई० मे 'हो जाति : एक नया सम्प्रदाय' शीर्षक आपका एक लेख पं० श्रीमहावीरप्रसाद द्विवेदी के सम्पादकत्व मे प्रकाशित 'सरस्वती' मे छपा। उसके बाद आपकी स्फुट रचनाएँ अक्सर 'देशदूत' (प्रयाग), 'इन्दु' (काशी), 'हिन्दी' (काशी), चित्रमय जगत्' पूना 'ज्ञानशक्ति' (गोरखपुर) और धन्वन्तरि' (विजयगढ) आदि पत्रिकाओ मे प्रकाशित होने लगी। अपने लेखो एव भाषणो से आपने सिंहभूमि के पिछडे प्रदेश मे हिन्दी-प्रचार करने की भरपूर चेष्टा की है। आपकी अधिकाश पुस्तकाकार रचनाएँ बालोपयोगी[2] है। इनके अतिरिक्त आपके द्वारा रचित पुस्तकों मे प्रमुख के नाम ये हैं—(१) तूफान[3], (२) चित्र[4], (३) अँधेरी बात, (४) भजनमाला आदि।

उदाहरण

(१)

भारतवर्ष के आदिम निवासी अनार्य्य कहलाते है। इन अनार्य्यों की कई जातियाँ है। इन्हीं में से कोल (Kolarian) भी है। पहले-पहल ये जङ्गलो मे रहते और फल, मूल और वन्य पशुओं के मांस से अपना जीवन-निर्वाह करते थे। न तो इनके रहने को घर थे और न पहनने को कपड़े। जहाँ पाते वहीं ये अपना डेरा जमा लेते और वर्षा

---

१. साहित्यिक-इतिहास-विभाग में आपके द्वारा प्रेषित विवरण के अनुसार।—देखिए, 'हिन्दीसेवी संसार' (वही, पृ० ११९) भी।

२. ऐसी रचनाओं के नाम ये हैं—(१) मार्गोपदेशिका (व्याकरण), (२) नागरीबोध (कैथी-सहित), (३) सरल शिशुपाठ, (४) सरल शिशुगणित, (५) बालरामायण, (६) सरल धर्म-शिक्षक, (७) हिन्दी-अंगरेजी-शिक्षक, (८) हिन्दी-बँगला-शिक्षक, (९) वर्णमाला-पहाड़ा, (१०) लाल-बुझक्कड़, (११) हिन्दी-अँगरेजी-हो-भाषा-शिक्षक (दो भागों में), (१२) हिन्दी-अक्षर-बोध (१३) हिन्दी-वर्णबोध, (१४) शिशु-वर्णशिक्षा, (१५) सरल-पत्रबोध, (१६) बाल-हितोपदेश, (१७) ऐंग्लो-हिन्दी-प्राइमर, (१८) त्रिभाषी (हिन्दी-बँगला-उड़िया) और (१९) गिनती पहाड़ा।

३ अनुवाद।

४. वही।

तथा धूप से बचने के लिए छायादार पेड़ों की डालियों से झोपड़ियाँ बना लेते थे। उस समय ये एक प्रकार के पशु थे। पर अब इनकी दशा में सुधार होने लगा है। जब ये कुछ सभ्य हुए, तब घर बनाने और कपड़े पहनने लगे। तभी से ये 'हो' कहलाने लगे। अब इनकी जाति का नाम ही 'हो' हो गया है। इनकी भाषा मे 'हो' मनुष्य को कहते है।[1]

(२)

इस 'हो' जाति में एक नवीन सम्प्रदाय का जन्म हुआ है। बात इसी सिंहभूमि जिले की है। कुछ दिन हुए सिंगसराय नामक 'हो' की स्त्री बीमार पड़ी। इस देश की जैसी चाल है, सिंगसराय ने पहले-पहल ओझाओं की ही शरण ली। ओझाओ ने उसे एक घने जङ्गल से एक बूटी लाने भेजा। सिंगसराय निर्मम होकर वन में घुसा। अपनी प्रियतमा के लिए जङ्गल में वह बूटी की खोज इधर-उधर करने लगा। इतने में एक महात्मा ने उसे दर्शन दिया और उससे वहाँ अकेले आने का कारण पूछा। सिंगसराय ने सब बातें कह सुनाईं। इस पर महात्मा ने उसे पूर्वोक्त बूटी दिखा दी और कुछ उपदेश भी दिया। सिंगसराय बूटी लेकर घर आया। बूटी के प्रभाव से उसकी स्त्री अच्छी हो गई। अब उसे उस महात्मा का वचन स्मरण आया। उसकी आज्ञा के अनुसार उसने एक नवीन मत चलाना चाहा। पहले-पहल इस मत के अनुयायी केवल दो ही आदमी निकले—सिंगसराय और उसकी स्त्री।[2]

---

१. 'सरस्वती' (मासिक, भाग १६, खण्ड २, सख्या ४, अक्टूबर, सन १९१५ ई०), पृ० २२५।

२. वही, पृ० २२६।

धनुषधारीदास

आप श्रीगोपालजीदास के नाम से भी माने जाते थे।

आप दरभगा-जिला के 'कहुआ' नामक ग्राम के निवासी श्रीसूरतिलाल दासजी के पुत्र थे।[1] आपका जन्म सं० १९५२ वि० (सन् १८९५ ई०) की ज्येष्ठ शुक्ल-पंचमी (बृहस्पतिवार) को हुआ था।[2] आप कभी कहीं किसी विद्यालय मे नही प्रविष्ट हुए। किन्तु, स्वाध्याय के बल पर आपने अपनी साहित्यिक योग्यता काफी बढ़ा ली और पर्याप्त यश अर्जित किया। आप बाल्यकाल से ही बड़े निर्भीक, स्वाभिमानी और स्वावलम्बी रहे। अपने जीवन-भर आपने गरीबी को अभिशाप नहीं, वरदान माना। आरम्भ मे, आप दरभगा के महर्षि प्रेस मे एक 'कम्पोजीटर' के पद पर थे। वहाँ से सन् १९२२ ई० मे आप 'मोती प्रेस' मे मैनेजर होकर चले आये। उसके बाद आप मिथिला प्रेस, ललित प्रेस आदि मे भी मैनेजर रहे। सन् १९२३ ई० मे आप भागलपुर से निकलनेवाले हिन्दी-अर्द्धसाप्ताहिक 'शान्ति' के सहायक सम्पादक हुए। उसके तीन वर्षों के बाद आप दरभगा से प्रकाशित हिन्दी-साप्ताहिक 'किसान-केसरी' के सम्पादक-पद पर नियुक्त हो गये। सन् १९३० ई० मे आपने सुलतानगंज (भागलपुर) से प्रकाशित होनेवाले मैथिली-पाक्षिक 'मिथिला-मित्र' का सम्पादन किया और सन् १९३६ ई० मे आप लहेरियासराय से निकलनेवाले हिन्दी-साप्ताहिक 'प्रजा' के सम्पादक हुए। आपने दरभंगा, भागलपुर तथा पूर्णिया-जिलो मे, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के माध्यम से हिन्दी-प्रचार का भी श्लाघनीय कार्य किया। आपके द्वारा लिखित पुस्तकें जो प्रकाशित है, उनके नाम इस प्रकार है—(१) मैथिली मे बिहारी[3], (२) तिलक-पचीसी[4], (३) विद्यापति ओर[5] (४) रुपैया-राज।[6] अप्रकाशित पुस्तको मे

---

१. ये संस्कृत, व्याकरण, साहित्य और ज्यौतिष के अधिकारी विद्वान थे। आपका परिवार बड़ा ही विद्याव्यसनी रहा है। आपके चाचा स्व० नेननदासजी, स्व० रामधारीदासजी, अच्युतलालदासजी तथा स्व० गिरिवरधारीदासजी भी ज्यौतिषशास्त्र के ज्ञाता थे तथा इनका हिन्दी, संस्कृत, मैथिली, अँगरेजी, उर्दू, फारसी आदि भाषाओं पर अच्छा अधिकार था। आपके परिवार में आगे भी विद्वत्ता की परम्परा चली।

२. आपके द्वारा दिनांक २६ अक्टूबर, सन् १९५६ ई०, को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार। डॉ० जयकान्त मिश्र ने आपका जन्म-काल सन् १८९६ ई० बतलाया है। —देखिए, 'A History of Maithili Literature' (Vol II, Dr. Jayakant Mishra, 1950), P. 145.

३. बिहारी-सतसई का मैथिली-पद्यानुवाद। प्रकाशन-काल सन् १९३२ ई०। प्र० मैथिली-मन्दिर, भागलपुर।

४. लोकमान्य-तिलक की मृत्यु पर शोक-प्रकाश। प्रकाशन-काल सन् १९२० ई०। प्र० महर्षि प्रेस, खलीफाबाग, भागलपुर।

५. मैथिली गद्य में महाकवि विद्यापति की जीवनी। प्रकाशन-काल सन् १९२७ ई०। प्र० आदर्श-प्रेस, भागलपुर।

६. मैथिली-पद्यबद्ध राजनीतिक आलोचना। प्र० समन्वय-साहित्य-सदन, लहेरियासराय, दरभंगा।

(१) पाण्डव-गुप्तवास[1], (२) संगठन-सोपान[2], (३) मैथिली-सतसई[3] और (४) कीर्त्तन-कलाप[4] उल्लेखनीय है।

उदाहरण

(१)

दुष्यन्त के मानस की मरालिनी
है ध्यान में मग्न विवर्ण कुन्तला ॥
न ज्ञात है शाप उसे मुनीश का
अरण्य - वाला, सरला, शकुन्तला ॥[5]

(२)

पीड़ित, पतित, दुखी, दलित, नगण्य नीच,
सीदित समाजक सर्वस्व संगठन थीक ॥
विना संगठित भेने, सुखी न कदापि हैब,
संगठन लोकक अमूल्य पैघ धन थीक ॥
'धनुष' युगानुकूल, संगठन नहि केने,
कुशल कदापि नहि, सत्य ई वचन थीक ॥
जहिना शरीर हेतु प्राण आवश्यक बन्धु !
तहिना दुखी दलक, लेल संगठन थीक ॥[6]

(३)

नव उमंग उत्साह ओ ! उद्बोधन उल्लास ।
कला प्रदर्शन सौं बढ़य, जन-मन में नव आस ॥

---

१. हिन्दी-नाटक ।
२ मैथिली-पद्यबद्ध संगठनात्मक पुस्तक ।
३. मैथिली दोहा ।
४. हिन्दी-कीर्त्तन ।
५. परिषद् के 'साहित्यिक-इतिहास-विभाग' में लेखक द्वारा प्रेषित विवरण से ।
६ लेखक द्वारा लिखित 'संगठन-सोपान' (अप्रकाशित) से ।

शिल्पशास्त्र साहित्य ओ ! कला थीक संगीत ।
कलाकार कबथि एकर - ज्ञाता महिमे मीत ।।
काठ, हाड़, पाथर, दशन, अष्टद्रव्य नख रंग ।
मोम माँहि कागज प्रभृति थिक-कलाक प्रिय अंग ।।
स्वाभिमान, निर्भीकता, राष्ट्रप्रेम ई तीन ।
हैब कलाविद् कें उचित, होथि स्वकार्य प्रवीण ।।[1]

धनुषधारी मिश्र

आप गया-जिला के 'कुरका' (पो० देव) नामक स्थान के निवासी पं० शिवपदारथ मिश्र के पुत्र थे। आपका जन्म सन् १८७६ ई० की अनन्त-चतुर्दशी को हुआ था।[2] आपकी आरम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। फिर, आप देव मिडल स्कूल और गया टाउन-स्कूल के छात्र हुए। फिर, आप गया से प्रकाशित होनेवाली मासिक पत्रिका 'साहित्य-सरोवर' के सम्पादक हुए। उक्त पत्रिका के बन्द हो जाने पर आप काशी के बाबू बैजनाथप्रसाद, बुक्सेलर के यहाँ रहकर संस्कृत की पुस्तकों का हिन्दी में अनुवाद करने लगे। ये अनुवाद उन्हीं के यहाँ से प्रकाशित भी हुए। आपके द्वारा अनूदित संस्कृत-पुस्तकों में कुछ प्रमुख के नाम ये हैं—(१) देवर्षि-पितृतर्पण, (२) कार्त्तिकमाहात्म्य, (३) मुहूर्त्तचिन्तामणि, (४) गया-पद्धति, (५) दुर्गापाठ आदि। आपकी अन्य पुस्तकाकार रचनाओं के नाम हैं—(१) सन्ध्या-वन्दन और (२) मनुष्य का मातृत्व-सम्बन्ध। द्वितीय पुस्तक पर आपको 'वेणी पोयट्री-प्राइज-फण्ड' से पुरस्कार भी मिला था। आप व्रजभाषा के एक सुकवि थे। आपका देहावसान सन् १९१७ ई० में हुआ।

उदाहरण

(१)

सकल सिंगार साजि, सब आभरन जुत।
सखिन के संग महामोद मन भरके।

---

१. लेखक द्वारा लिखित 'मैथिली-सतसई' (अप्रकाशित) से।
२. 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० ६५। कुरका (गया) के श्रीमहेश मिश्र के अनुसार आपका जन्म सन् १८६८ ई० में हुआ था। आपके प्रस्तुत परिचय-लेखन में श्रीमहेश मिश्र द्वारा प्रेषित सामग्री से भी सहायता ली गई है।

प्रथम मिलन को महेस पहँ पारबती।
जाति है लजाति बहु लज्या महँ पर के।
कह धनुधारी सिव देखत लगाय उर।
फाँय - फाँय कीन्हें व्याल फुफुकार करके।
बहुत डराय गौरि झकझोरि भागि आई।
लखिके कराल भेष चन्द कलाधर के॥[१]

धर्मनाथ मिश्र 'धर्म'

आप सारन-जिला के 'मझौली' नामक ग्राम के निवासी आशुकवि, भक्तभूषण पं० श्रीरामलोचन मिश्र 'रामायणी' के पुत्र है। आपका जन्म स० १९५३ वि० को भाद्र-पूर्णिमा (सोमवार) को हुआ था।[२] आपकी प्राथमिक शिक्षा घर पर ही हुई। संस्कृत के माध्यम से आपने ऊँची शिक्षा प्राप्त की। सस्कृत के अनेक विषयों का आपने अध्ययन किया था। आपने संस्कृत के सांख्य, वेदान्त, साहित्य और आयुर्वेद मे आचार्य की उपाधियाँ प्राप्त की हैं। संस्कृत के अतिरिक्त आपने हिन्दी का भी बड़े मनोयोग से अध्ययन किया है। हिन्दी मे आपने हिन्दी साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग से विशारद' और 'साहित्यरत्न' की उपाधियाँ प्राप्त की है। विद्वत्समाज की ओर से आपको 'विद्यावारिधि' की उपाधि मिली है। दानापुर, पटना के 'बलदेव उच्चाग्ल-विद्यालय' मे आपने कई वर्षों तक प्रधान पण्डित के पद पर कार्य-सम्पादन किया था। उक्त विद्यालय की सेवा करते हुए भी समाज सेवा को ध्यान में रखकर आयुर्वेदीय-पद्धति से रोगग्रस्त लोगो की सेवा करना, आपके जीवन का लक्ष्य है। अखिल भारतीय वैद्य-सम्मेलन ने सन् १९२८ ई० मे आपको एक स्वर्णपदक प्रदान किया था। आयुर्वेदविषयक आपके निबन्ध यथावसर पत्र-पत्रिकाओ में प्रकाशित हुआ करते हैं। हिन्दी के माध्यम से आयुर्वेदविषयक आपने जितनी पुस्तकें लिखी, उनमे 'आयुर्वेद-संगीत' और नपुंसक-कल्पद्रुम' नामक दो पुस्तकों का बड़ा महत्त्व है। सम्प्रति, आप विद्यालयीय सेवा से मुक्त होकर समाजसेवारत हैं।[१]

---

१. 'समस्यापूर्त्ति' (गया, सन् १९०८ ई०), पृ० २७-२८।

२. आपके द्वारा दिनांक ३ दिसम्बर, सन १९५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।

उदाहरण

(१)

सिद्धि-सदन गजबदन रदन इक अदन सुमोदक,
झुण्ड-झुण्ड शुभ शुण्ड-भृङ्गगण पिबत मदोदक।
सुन्दर-सिन्दुर सजित सुभग सब विघिन विदारन,
सफल सकल मन काम करत मुख नाम उचारन ॥[1]

(२)

श्री पूर्णब्रह्म ईश्वर, सो अनाद्यन्त जो है।
सब विश्वव्याप्त जो है, वह शास्त्र कौन-सा है ?
जिसको स्वयं विधाता, मुख - पद्म से उचारा।
संसार हित प्रचारा, वह शास्त्र कौन-सा है ?[2]

(३)

बासमती कर भातन खात जुरात है गात फुलात हियो है।
शुभ्र शशी सम मोतिन राजत कुन्दकली जनु साज लियो है॥
अर्क गुलाब वो केतकि में बनि सौरभ शुद्ध कपूर दियो है।
भात की बात कहाँ ले कहों जू अलौकिक ही करमात कियो है॥[3]

(४)

दाल परी जब भात के ऊपर राजत है जिमि चाँदि पै सोना।
एक नहीं छिलका शुभ सुन्दर केशर औ हरदी सुसलोना।
हिंगन जीरन छ्यौंक परी अरु अत्तर घीव दई चहुँ कोना।
स्वाद सराहत शारद हारत, साज सभी तब है अनहोना॥[4]

---

१. 'धर्म-कवितावली' (अप्रकाशित) से, पृ० १।
२. 'आयुर्वेद-संगीत' (अप्रकाशित) से, पृ० १।
३. 'धर्म-कवितावली' (वही) से, पृ० १।
४. वही।

धर्मराज ओझा

आप शाहाबाद-जिला के 'देवकुली' नामक स्थान के निवासी पं० संचित ओझा के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९३८ वि० (सन् १८८१ ई०) की आषाढ कृष्ण-प्रतिपदा (सोमवार) को हुआ था।[1] आपकी आरम्भिक शिक्षा आरा और छपरा मे, सस्कृत के माध्यम से हुई। आरा से आपने सन् १८९७ ई० मे संस्कृत की प्रथमा परीक्षा पास की। उसके बाद, आप छपरा चले आये जहाँ से आपने व्याकरण, साहित्य, वेदान्त तथा पुराण की माध्यमा परीक्षाएँ प्रथम-श्रेणी मे प्रथम स्थान प्राप्त कर पास की। वही से संस्कृत-साहित्य की तीर्थ-परीक्षा मे भी आप बिहार मे प्रथम हुए। सन् १९०३ ई० से आपने अँगरेजी और हिन्दी के अध्ययन मे रुचि ली। इसके परिणामस्वरूप, सन् १९१० ई० मे आपने कलकत्ता-विश्वविद्यालय से द्वितीय श्रेणी मे प्रवेशिका परीक्षा पास की। इसी प्रकार, सन् १९१६ ई० मे, आपने आइ० ए०, सन् १९२२ ई० मे बी० ए० और सन् १९२५ ई० मे सस्कृत मे एम्० ए० की परीक्षाएँ पास की। सम् १९२८ ई० मे आपने दर्शन मे एम्० ए० कर लिया। सन् १९०३ ई० मे आपकी नियुक्ति छपरा के सारन सेकेण्ड्री स्कूल में 'हेड पण्डित' के पद पर हो गई। किन्तु, एक वर्ष के बाद ही आप पटना के टी० के० घोष एकेडेमी मे चले आये। सन् १९११ ई० मे आप पटना कॉलेजिएट स्कूल मे हिन्दी-संस्कृत के अध्यापक हुए और फिर सन् १९१७ ई० मे आपकी नियुक्ति मुजफ्फरपुर के धर्म-समाज सस्कृत-कॉलेज मे अँगरेजी के अध्यापक-पद पर हो गई। सन् १९२६ ई० में आप पटना-कॉलेज मे सस्कृत के प्रधानाध्यापक-पद नियुक्त हुए और अन्त मे आपकी नियुक्ति मुजफ्फपुर के धर्म-समाज-संस्कृत-कॉलेज मे प्रचार्य-पद पर हुई, जहाँ से सन् १९४० ई० के १५ नवम्बर को आपने अवकाश ग्रहण किया। अपने कार्यकाल मे आप अनेक संस्थाओ से सम्बद्ध रहे। आपकी महत्त्वपूर्ण सेवाओ के लिए सरकार ने आपको पदक एवं सम्मान-पत्र प्रदान किया था। हिन्दी मे आपकी कोई पुस्तकाकार रचना तो नही मिलती, केवल स्फुट रचनाएँ ही मुख्यरूप से मिलती हैं, जो 'शिक्षा' मे प्रकाशित हुआ करती थी। हमे आपकी रचना के उदाहरण नही मिल सके।

धर्मलाल सिंह

आप 'गोरजा', दरभगा के निवासी बाबू यदुनन्दन सिंह के पुत्र है। आपका जन्म सं० १९५५ वि० (सन् १८९८ ई०) की कार्त्तिक शुक्ल-पंचमी (२० नवम्बर) को हुआ था।[2] आपकी शिक्षा एण्ट्रेंस तक हुई थी। यो, संस्कृत मे भी आप प्रथमा एवं

---

१. आपके द्वारा दिनांक १३ सितम्बर, सन् १९५६ ई० को प्रेषित साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार। —देखिए, 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ६५२) भी।

२. आपके द्वारा दिनांक २४ अप्रैल, सन् १९५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।—देखिए, 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही), पृ० ६७० तथा 'हिन्दीसेवी संसार' (वही), पृ० १९० भी।

मध्यमा परीक्षोत्तीर्ण थे। गो-पालन ही आपके जीवन का व्रत है। गो-सेवाविषयक अनेक सत्कर्त्तव्यो मे ही आपने अपना सम्पूर्ण जीवन लगा दिया है। आप बिहार-राज्य-गोशाला पिंजरापोल-संघ, पटना; कामेश्वरीप्रिया-पूअरहोम, दरभगा, रमेश्वरी महिला-महाविद्यालय, दरभगा; दरभंगा-जिला-साहित्य-परिषद्; कमलेश्वरीचरण-प्रतिष्ठान आदि अनेक संस्थाओ से सम्बद्ध है। आप विश्व पशु-कल्याण-कॉंगरेस (मुख्य-कार्यालय हॉलैण्ड) तथा भारत-सरकार के केन्द्रीय गो-संवर्द्धन-परिषद् के भी सदस्य है। आपको गो-साहित्य के विशेषज्ञ का विशेषण निर्द्वन्द्व भाव से दिया जा सकता है। हिन्दी मे आपने इस विषय पर बहुत कुछ लिखा है।

आपकी स्फुट रचनाएँ 'देश', 'मिथिलामिहिर', 'भारतमित्र', 'विश्वमित्र' आदि विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ में प्राप्त होती है। आपने स्वयं भी हिन्दी की कई पत्र-पत्रिकाओ का सम्पादन किया है। 'दरभंगा-गजट', 'किसान-केसरी', 'गो-धन' तथा 'जीव-दया' एवं 'गो-पालन', 'नन्दिनी' आदि पत्र-पत्रिकाएँ आपके ही सम्पादन मे निकला करती थी। आपने हिन्दी मे गोपालन-विषय पर कई पुस्तको की रचना की है, जिनमे निम्नलिखित पुस्तकें बडे ही महत्त्व की हैं— (१) गोपालन की पहली और दूसरी पुस्तक (२) गोधन और (३) क्षीर-सागर। उपर्युक्त पुस्तको मे प्रथम दो प्रकाश मे आ चुकी है। आपने अपने जीवन का बहुलांश गो-सेवा मे ही बिताया और आज भी आप इसी कार्य मे सलग्न है।

उदाहरण

(१)

गया के 'समानी' नामक गाँव के 'उरुवेला' नामक सेनानी-वंश की कन्या सुजाता ने मन्नत मानी थी कि उसका यदि मनचाहा योग्य वर से ब्याह हो गया तो वह वट-वृक्ष को सहस्र गौओं के दूध की खीर चढ़ावेगी। वैसा ही हुआ। उसने सहस्र गौओं को जेठी-मधु के वन मे चराया। आधी को दूह कर आधी गौओं को पिलाया। फिर उनको दूहा और वह दूध आधी को पिला दिया। इस प्रकार दूहते-पिलाते उसने अन्त मे सोलह गायो को दूहा और उनका दूध आठ गौओं को पिलाया। फिर उन आठों को दूहकर खीर तैयार की। अपनी दासी 'पूर्णा' को उसने वृक्ष की झाड़-बुहार और लीप-पोत करने के लिए भेजा। पूर्णा वहाँ जाकर भगवान बुद्ध के कान्तिमय मुखमण्डल को देखकर दबे पाँवों लौट आई। सुजाता से कहा—

"मालकिन, आपकी भेंट लेने के लिए पहले से ही वटवृक्ष देव साक्षात् रूप मे बैठे है।" सुजाता बहुत प्रसन्न हुई। सोने की थाल मे खीर परसकर वटवृक्ष के पास गई। भगवान् बुद्ध ने खीर खाई। उसी क्षण उनको बुद्धत्व मिला। बौद्ध-ग्रन्थ के सुत्तनिपात में यह प्रसंग आता है—यथा माता पिता भाता, अञ्ञे वापि च आतका।

गावो नो परमा मित्ता यासु जायन्ति ओसधा ॥

अर्थात् जिस प्रकार मा, बाप, भाई और दूसरे सगे-सम्बन्धी अपने मित्र हैं, उसी प्रकार गाय भी हमारी परम मित्र है, जिससे मृतसंजीवनी औषधियाँ निकलती हैं।[1]

(२)

श्रीरामलोचनशरणजी का सम्पूर्ण जीवन अध्यवसाय और आदर्श-पालन का एक ज्वलन्त उदाहरण है। मेरे ही समान वे भी हाई-स्कूल के एक साधारण शिक्षक थे। किन्तु, अपने असाधारण गुणों के कारण वे उन्नति के उच्चतम शिखर पर आसीन हो गये और मै जैसे का तैसा रह गया। हिन्दी-साहित्य-क्षेत्र मे, विशेषतः बाल-साहित्य-निर्माण में, उन्होंने महान् यश पाया है। समस्त भारतवर्ष मे उनका नाम आदरणीय हो रहा है। उनकी श्रमशीलता, मिलनसारी, मिष्ट-भाषिता और दयालुता स्तुत्य है। मेरा सम्बन्ध प्रायः सभी स्थानीय सार्वजनिक संस्थाओं से है। इनके निमित्त मैं जब कभी उनके पास याचना करने गया, उन्होंने नाहीं कभी नही की।

सबसे बढ़कर उनमें क्षमाशीलता है। मैं अपने कड़वे स्वभाव के कारण उनसे बराबर द्वेष रखता था। सन् १९२५ ई० में यहाँ पूज्य राजेन्द्रबाबू के सभापतित्व में बिहार-प्रादेशिक-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन

---

१. 'बिहार का गोधन और उसकी गोशालाएँ' शीर्षक लेख से। —देखिए, 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही), पृ० १५६।

हुआ। उसका सारा प्रबन्ध करीब-करीब मेरे ही हाथ मे था। व्यक्तिगत द्वेष के मारे मैने उनसे सम्मेलन के लिए चन्दा तक नही लिया। खुली सभा मे जब पं० जनार्दन झा 'जनसीदन' ने उनकी प्रशंसा में कविता पढ़ी, तब मेरी ईर्ष्याग्नि और भी भभक उठी। मैंने वयोवृद्ध 'जनसीदनजी' का साधारण स्वागत तक नही किया। यहाँ तक कि जो प्रतिनिधि 'भण्डार' मे ठहरे थे, उन्हें मैं वहाँ से ले आया, और 'भण्डार' ही में रामलोचनबाबू को जली-कटी सुना दी। किन्तु, वाह री महानुभावता! उनके चेहरे पर जरा भी शिकन न पड़ी। मुझे वे पूर्ववत् छोटे भाई की तरह मानते रहे। मैं इतना लजाया कि तब से उनका वशवर्त्ती बन गया। अब सदा उनकी आज्ञा के पालन में तत्पर रहता हूँ।'[1]

(ठाकुर) नन्दकिशोर सिंह 'किशोर'

आप शाहाबाद-जिला के 'ऐमन-डिहरी' (थाना-नोखा)-निवासी ठाकुर बाबू रामकाश सिंह के पुत्र थे।[2] आपका जन्म सं० १९५३ वि० (सन् १८९६ ई०) की मार्गशीर्ष शुक्ल-एकादशी (भौमवार) को हुआ था।[3] अपने गाँव की पाठशाला से लोअर-प्राइमरी की छात्रवृत्ति लेकर सन् १९०९ ई० मे सासाराम किला-अपर-प्राइमरी-स्कूल मे आपने नाम लिखवाया। वहाँ भी आपको छात्रवृत्ति मिली। डिहरी-घाट सरकारी मिड्ल-स्कूल से मिड्ल पास करने के बाद आपने पटना नार्मल-स्कूल मे अपना नाम लिखवाया। इसकी अन्तिम परीक्षा मे, शिक्षण-कला मे, बिहार-भर मे प्रथम होने के कारण आपको सम्मान-पदक मिला था। सन् १९२१ ई० मे आपने काशी के लाला भगवान दीन-साहित्य-विद्यालय-केन्द्र से 'विशारद' की परीक्षा पास की। नार्मल पास करने के बाद ही आप शिक्षक का काम करने लगे, कुछ दिनों तक पटना के नार्मल-स्कूल में ही और कुछ दिनों तक भभुआ

---

१. 'शरणजी की क्षमाशीलता' शीर्षक लेख। —देखिए, 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही), पृ० ७६८।

२. आपके पूर्वज गोरखपुर (उत्तरप्रदेश) के निवासी थे, जो गढ़नोखा-स्टेट के बाबुओं के साथ इधर आकर बस गये थे।

३. आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार। आपके परिचय-लेखन में आपके द्वारा प्रेषित विवरण के अतिरिक्त 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६५५-५६) तथा 'हिन्दी सेवी संसार' (वही, पृ० १२२-२३) से भी सहायता ली गई है।

(शाहाबाद) हाइ-स्कूल एव गया-टाउन-स्कूल मे। इसके बाद, कुछ दिनों तक आप 'किसान-सभा' का प्रचार-कार्य करते रहे। इसी समय आप उक्त सभा के मुखपत्र 'किसान-समाचार' के सम्पादन-विभाग से भी सम्बद्ध रहे। सन् १६२४ ई० मे आपकी नियुक्ति 'मैकमिलन-कम्पनी' के हिन्दी-प्रकाशन-विभाग मे, 'प्रकाशन-पदाधिकारी'-पद पर हो गई। किन्तु, वहाँ भी एक वर्ष रहकर आपने वहाँ से त्यागपत्र दे दिया और होमियोपैथी का अध्ययन करने लगे। सन् १६२७ ई० मे एच० एम० डी० की डिग्री प्राप्त कर चिकित्सा-व्यवसायी हो गये। इस क्षेत्र मे आप एक प्रतिष्ठित व्यक्ति माने गये। कुछ दिनों के बाद, आप कलकत्ता से वापस आकर कॉंगरेस का कार्य करने लगे। सन् १६३२ ई० तक आप सासाराम-कॉंगरेस के सभापति रहे। आप शाहाबाद-जिला-कॉंगरेस के भी अनेक पदो पर रहे, किन्तु सन् १६४४ ई० मे अपने अग्रज के निधन के परिणामस्वरूप आपको ये सारे कार्य छोड़ देने पड़े।

हिन्दी के प्रति आपका सहज-स्वाभाविक अनुराग था। आप जहाँ-जहाँ रहे, वहाँ-वहाँ आपने 'हिन्दी-सभाओ' की स्थापना कर समकालीन हिन्दी-लेखक-कवियो को प्रोत्साहित किया। एक सम्पादक के रूप मे कलकत्ता के 'भारत-मित्र' (दैनिक), 'स्वाधीन' (दैनिक), 'हिन्दू-पंच' (साप्ताहिक), श्रीकृष्ण-सन्देश' (साप्ताहिक) आदि पत्र-पत्रिकाओ से सम्बद्ध रहकर आपने उक्त दिशा मे महत्त्वपूर्ण कार्य किया। आप जिला एव प्रान्तीय साहित्य-सम्मलनो से भी सम्बद्ध रहे। प्रान्तीय सम्मेलन का एक उप-समिति के सदस्य के रूप मे आपने शाहाबाद के नये-पुराने साहित्यकारो की एक बृहद् नामावली तैयार की थी। 'प्रकाशन' की ओर भी आपको अभिरुचि थी और 'भारती-भण्डार' के नाम से सन् १६३७ ई० मे आपने एक अपनी प्रकाशन-संस्था खोल रखी थी। साहित्य-रचना के क्षेत्र मे आपने समस्यापूर्तियो के साथ प्रवेश किया। आपकी समस्यापूर्त्तियाँ मुख्यत. 'श्रीविद्या', 'सुकवि', 'शारदा-सदन' आदि पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुआ करती थी। आपकी स्फुट गद्य-रचनाएँ पहले-पहल साप्ताहिक 'शिक्षा' मे प्रकाशित हुई थीं। आपके द्वारा रचित पुस्तको मे कई की पाण्डुलिपियाँ नष्ट हो गई और कई के प्रकाशन का अवसर ही न मिला। आपकी प्रकाशित पुस्तको के नाम ये हैं—(१) ईश्वरचन्द्र विद्यासागर[१], (२) सतीत्व-प्रभा[२], (३) नारी-हृदय[३], (४) मेवे की झोली[४] तथा (५) बालरस-रग[५]। अप्रकाशित पुस्तको मे जो उल्लेखनीय हैं, उनके नाम इस प्रकार है—(१) बाल-रामायण[६], (२) प्राचीन सभ्यता का इतिहास[७], (३) अरुणा[८], (४) रणजीत सिंह[९]

---

१. बालोपयोगी जीवनी। प्रकाशन-काल सन् १६२३ ई०। प्र० रामनारायण लाल, इलाहाबाद।
२. सती बिहुला-चरित्र। प्रकाशन-काल सन् १६२४ ई०। प्र० उपन्यास-बहार, काशी।
३. कहानी-संग्रह। प्रकाशक और प्रकाशन-काल वही।
४. गद्य-पद्यात्मक-कथा। प्रकाशन-काल सन् १६३७ ई०। प्र० भारती-भण्डार, आरा।
५. बभ्रुवाहन-चरित कथा-काव्य। प्रकाशन-काल सन् १६४० ई०। प्र० वही।
६. सन् १६२४ ई० में कलकत्ता के एक प्रकाशक के लिए रचित।
७. बँगला-पुस्तक का अनुवाद। रचना-काल सन् १६२२ ई०।
८ बँगला-उपन्यास का अनुवाद। रचना-काल सन् १६२४ ई०।
९. वही।

(५) मासफल[१], (६) दश-अवतार-कथा[२], (७) भेषज-दीपिका[३], (८) शिवनन्दन सहाय की जीवनी[४], (९) हिन्दू-संगठन[५], (१०) धर्मवीर प्रह्लाद[६], (११) भाई-भाई[७], (१२) भोजपुरी-गीतावली[८], (१३) भोजपुरी-शब्दकोष[९] और (१४) बलबेर[१०]।

उदाहरण

(१)

दहल उठी थी दिल्ली पातशाही। नाकोदम थी मुगलानी शान; जिस महाराज शिवाजी की आँच से। नाक रगड़ती रह गयी शाही सेना, जिस जिसके मुट्ठीभर मराठों के सामने बार-बार; जो बीड़ा उठा चुका है पत-पानी रखने को हिन्दुओं की हिन्दुआनी की। उसी शिवराज का शिविर राजधानी पूना के अंचल में बासन्ती बहार लूटने के लिये आ पडा है। शिविर से कुछ दूर के गाँव में उसके एक वीरगति पाये सैनिक का आवास-स्थान है। उसके घर का विशाल-काय कंकाल अपने सुनहले दिनो का मूक परिचय दे रहा है। यही तो है दुरंगी दुनियाँ की रंगरेलियाँ; सब दिन होत न एक समान।[११]

(२)

सबजन आँसू कहि रहे, मो कहँ अस दरसात।
उर गिरि झरना सों झरत, भाव बुन्द छहरात॥

---

१ बँगला का अनुवाद मूल लेखक के अनुरोध पर। रचना-काल सन् १९२८ ई०।
२. बिहार-सरकार की 'मास-लिटरेसी'-योजना के अन्तर्गत लिखित। रचना-काल सन् १९२८ ई०।
३ एक प्रसिद्ध अँगरेजी होमियोपैथी पुस्तक का हिन्दी-अनुवाद। रचना-काल सन् १९३५ ई०।
४. रचना-काल सन् १९३८ ई०।
५. पद्य-रचना। रचना-काल सन् १९२३ ई०।
६. पद्य-रचना। रचना-काल सन् १९४१ ई०।
७. लघु उपन्यास, शेक्सपीयर की एक पुस्तक के कथा-सूत्र पर लिखित। रचना-काल सन् १९५४ ई०।
८. भोजपुरी-लोकगीतों का संग्रह। सम्पादन-काल सन् १९५४ ई०।
९. रचना-काल सन् १९४२ ई०। अपूर्ण।
१०. गद्य-पद्य-कथा-पुस्तक। रचना-काल सन् १९५४ ई०।
११. आपसे प्राप्त और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण से।

सिन्धु तनय की गोद में, मीन जुगल अकुलाहिं।
मोतिन को चारा गुनत, गिल गिल उगिलत जाहिं ॥[1]

(३)

धरा भोग सुख स्वर्ग अपारा, चाहे दुहूँ फल चाखें।
आगे चलत-मुडत पुनि पाछे, ध्येय न जो थिर राखें।
दुविधा में कुछ हाथ न आवे, परे रहें दुख भारे।
दुहूँ ओर फैलाय हाथ हम, अधर टँगे जिमि तारे ॥[2]

नरसिंहमोहन मिश्र 'सिंह'

आप भागलपुर-नगर (भारद्वाज-भवन बूढानाथ-पथ) के निवासी है। आपका जन्म सन् १८९७ ई० के १ मार्च को हुआ था।[3] आपकी आरम्भिक शिक्षा भागलपुर मे ही हुई। आगे चलकर पटना-विश्वविद्यालय की स्थापना के प्रथम वर्ष ही आप वहाँ के स्नातक हुए। फिर कलकत्ता-विश्वविद्यालय से सन् १९२१ ई० मे आपने संस्कृत तथा भाषाविज्ञान मे एम्० ए० की उपाधि प्राप्त की। सन् १९२९ ई० मे वही से आप डिप्-इन-एड्० हुए। आपने 'डिप्लोमा इन बेसिक-एजुकेशन' की परीक्षा भी पदक के साथ पास की थी। इसके अतिरिक्त, आपको क्रमश 'काव्यतीर्थ' (सन् १९२१ ई०) 'पुराणतीर्थ' (सन् १९२३ ई०), 'काव्यरत्न' (सन् १९२६ ई०), 'साहित्यभूषण' आदि उपाधियाँ भी प्राप्त है। लगभग बारह वर्षों तक आप भागलपुर तथा मुंगेर में क्रमश स्कूल-सब-इन्सपेक्टर तथा डिप्टी-इन्सपेक्टर रहे। दो वर्षों (सन् १९२९-३० ई०) तक आप पूर्णिया के जिला-स्कूल मे सहायक शिक्षक के पद पर रहे। उसी समय (सन् १९३० ई०) आपने महात्मा गान्धी के आह्वान पर अपनी नौकरी छोड दी। कुछ दिनो बाद, अर्थाभाव के कारण आपको मानभूमि-विक्टोरिया-इंस्टिट्यूट मे सहायक शिक्षक का पद-भार ग्रहण करना पडा। वहाँ आपने अट्ठारह वर्षों तक कार्य किया। आप लगभग तीन मास तक पुरुलिया के जे० के० कॉलेज मे प्राध्यापक-पद पर भी रहे। सन् १९४९ ई० मे आप पुरुलिया के राजस्थान-विद्यापीठ (हाइस्कूल) मे प्रधानाध्यापक हुए। इस स्कूल की स्थापना आपने ही की थी। इसके अतिरिक्त आपने दक्षिण बिहार के धनबाद, टुण्डी,

---

१. वही साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री से।

२. वही।

३. श्री श्रीरंजन सूरिदेव (बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, पटना-३) द्वारा प्राप्त तथा बिहार के साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।

तुलिन आदि स्थानों मे और भी कई हाइ स्कूलों की स्थापना की और उनका सफल संचालन भी किया। आपसे शिक्षाप्राप्त आपके अनेक शिष्य आज ऊँचे-ऊँचे पदों पर है। सम्प्रति, आप सन्त तेरेसा बालिका विद्यालय, दुधानी, दुमका मे अध्यापन-कार्य कर रहे हैं।

अध्यापन ही आपके जीवन का व्रत है। एक सफल हिन्दीभक्त अध्यापक के रूप में आपको स्पृहणीय प्रतिष्ठा प्राप्त है। आपने पुरुलिया-प्रवासकाल मे बिहार-बंगाल-सीमा-विवाद के समय, बिहार सरकार की ओर से अनौपचारिक रूप मे प्रचार-कार्य भी किया था। आप प्राचीन परम्परा के एक बड़े ही मिलनसार एवं हास्य-विनोदप्रिय व्यक्ति हैं। आपकी कोई पुस्तकाकार रचना नही मिलती, केवल स्फुट रचनाएँ ही मिलती है। आप मुख्य रूप से हास्य रस तथा सामाजिक-विषयो के साहित्यकार है। आपकी स्फुट रचनाएँ मुख्यतः 'प्रभाकर' (मुंगेर), 'भूदेव' (पटना), 'शाकद्वीपीय-ब्राह्मण-बन्धु' (बम्बई) आदि पत्रिकाओ मे मिलती हैं।

उदाहरण

(१)

दान दिये तें भक्त नहीं, जात गाँठ को माल।
दान देत सीता हरीं, बलि गवनेउ पाताल॥
राम कष्ट बहुबिध सहेऊ, पिता वचन को काम।
पितु आज्ञा प्रह्लाद तजी, पायेउ अनुपम ठाम॥[1]

(२)

खुले गगन मे चन्द्र सदा निज किरणो को फैलाते है।
खुले हुए सर में ही सरसिज निज शोभा दिखलाते है।
खुले ललाटों पर ही बिन्दी भावुकता सरसाती है।
खुले कपोलों पर के तिल की उत्तमता चित भाती है॥[2]

नवमीलाल देव 'वैद्य'

आप पलामू-जिला के डालटेनगंज-नगर के रहनेवाले है। आपका जन्म सं० १९३४ वि० (सन् १८७७ ई०) की आश्विन शुक्ल-विजयादशमी को 'नन्दपुरा' (पटना) मे हुआ था।[3] आपकी प्राथमिक शिक्षा घर पर ही हुई। उसके बाद आपने वैद्यक का

---

१. आपके द्वारा दिनांक २२ जनवरी, सन् १९५५ ई० को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री से।

२. वही।

३. 'हलधर'-सम्पादक श्रीहवलदारीराम गुप्त द्वारा प्राप्त विवरण के अनुसार।—देखिए, 'हिन्दी सेवी संसार' (वही), पृ० १२४भी।

अध्ययन किया। वैद्यक मे आपने 'वैद्यरत्न' की उपाधि प्राप्त की थी। उक्त अध्ययन मे रत रहकर भी आपने हिन्दी-साहित्य की भरपूर सेवा की। बचपन से ही आपमे हिन्दी के प्रति अपार श्रद्धा थी। आपने हिन्दी को प्राणवन्त बनाने के लिए डालटेनगंज' में पूरी निष्ठा के साथ प्रसार-कार्य किया था। बिहार-प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के उन्नीसवें अधिवेशन (डालटेनगंज) के आपही स्वागतमन्त्री थे। बिहारप्रान्तीय वैद्य-सम्मेलन, जिला कांगरेस-कमिटी (डालटेनगज), आर्य समाज (डालटेनगंज) आदि कई संस्थाओं से भी आप सम्बद्ध थे। डालटेनगंज मे आपने एक 'सार्वजनिक मारवाडी-पुस्तकालय' की स्थापना की थी। यह पुस्तकालय अपने ढंग का अनूठा है। 'डालटेनगंज' के विकास के लिए आपने वहाँ जो सार्वजनिक सेवाएँ की, उनका ऐतिहासिक महत्त्व माना जाता है।

साहित्य-सेवा के क्षेत्र मे आप 'समस्या-पूर्त्ति' और 'सुकवि' के माध्यम से प्रशस्त हुए। इन दोनो पत्रिकाओ मे आपकी कविताएँ प्रकाशित हुआ करती थी। आपके आयुर्वेदविषयक निबन्ध मुख्यत: मासिक 'धन्वन्तरि' और 'सुधानिधि' मे प्रकाशित होते रहे है। वैद्य होकर भी आपने हिन्दी मे कई पुस्तकों की रचना की। आपके द्वारा लिखित पुस्तको मे 'गान्धी-गौरव', 'खादी-महत्त्व', 'दयानन्द-महिमा' आदि प्रकाशित हैं। इन प्रकाशित पुस्तको के अतिरिक्त आपकी दो पुस्तकें 'सुलभ-चिकित्सा' और 'भारतीय न्याय-दर्शन' नामक पुस्तकें अद्यावधि अप्रकाशित हैं। सम्प्रति, आप घर पर ही रहते हैं। आपकी रचना के उदाहरण हमे नही मिले।

नित्यानन्द सिंह 'बुन्देला'

आप पूर्णिया-जिला के 'तमघट्टी' नामक ग्राम के निवासी श्रीठाकुर नेवालाल सिंह के पुत्र हैं, जो भारत-प्रसिद्ध बुन्देल-वश के वंशधर हैं।[1] आपका जन्म स० १९५२ वि० (सन् १८९६ ई०) की माघ शुक्ल तृतीया को हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा ग्राम-पाठशाला मे हुई। प्राथमिक शिक्षा के बाद कुछ दिनों तक उच्च शिक्षा प्राप्त करने का अवसर आपको प्राप्त हुआ। किन्तु, कतिपय कारणवश आपका अध्ययन रुक गया और तब आपने स्वाध्याय के बल पर सरस्वती की उपासना शुरू कर दी। फलत, काव्य-रचना की अभिरुचि आप मे जगी और आप धारा-प्रवाह कविता करने लगे। नये-पुराने कवियो की अनेक कविताएँ आज भी आपको स्मरण है। आप शक्ति के अनन्य उपासक है।

व्यायामप्रियता और पुस्तक-प्रेम ने आपको स्वस्थ एवं विद्याव्यसनी बना दिया। अत्यल्प काल मे ही आपने पुस्तकों का ऐसा संग्रह किया कि आपके द्वारा सकलित पुस्तको से 'शक्ति-पुस्तकालय' नामक एक अच्छा संग्रहालय बन गया। आपका अधिकाश समय प्राचीन एवं नवीन पुस्तको के अध्ययन-मनन मे बीतने लगा। इससे बचे हुए समय मे आप काव्य-रचना किया करते है। आपकी कविताएँ अत्यन्त ओजपूर्ण हुआ करती है।

---

१. आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार। —देखिए, 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही), पृ० ६७२ (त) भी। आपके पूर्वज दो शताब्दि पूर्व बुन्देलखण्ड से बिहार आये। यहाँ आकर उन्होंने अपनी जमीन्दारी बढ़ाई।

बहुधा आप पुस्तको के अध्ययन मे मलग्न एवं व्यायामशाला मे अभ्यास करते हुए पाये गये है। आपने अपनी कविताओ का एक संग्रह 'नित्या-विलास' नाम से 'शक्ति-पुस्तकालय' के द्वारा प्रकाशित कराया है। सम्प्रति, आप घर पर ही रहकर जीवन-यापन कर रहे है।

उदाहरण

(१)

मुझको कुछ लाज न मातु है आज, नहीं अपमान न आन लसी है।
जानत है सिगरी दुनिया, जगदम्ब की किंकरता में फँसी है।
लाज अहै दिल मे ये बड़ो कही, लागै न कारिख नाम जसी है।
याते श्री 'नित्य' पुकारत है यह मेरी हँसी नही तेरी हँसी है ॥[१]

(२)

काट करीर के गाछ की छाँह, वृथा तुम दीन बितावत हौ।
सेमल पुष्प के लागि अहो, मनमूढ क्यो आस लगावत हौ।
मनमूढ़ तजो यह आस वृथा, मम सीख सुनो सुख चाहत हौ।
तौ जगदम्ब के ध्यान धरो, अवलम्ब यही दरसावत हौ ॥[२]

(३)

तेरो मुख-कंज देखि चन्द आसमान जाय,
दंत देखि दाड़िम दहलि दरकतु है।
बाल घुँघुरारे नासिका को देखि भौंरा,
जाय कंज-वनवास कीर कलपत फिरतु है।
देखि तव नैन मृग गेह कीन्हों बन माहि,
भाजैं मृगराज कटि खीन जो लखतु है।
सुन्दर उरोज देखि श्रीफल लजाय भाजैं,
कदली कँपत 'नित्य' जाँघ जो लखतु है ॥

---

१. आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण से।
२. वही। अगले दोनों उदाहरण भी वहीं से प्राप्त।

(४)

आई ऋतु पावस घन घेरत घुमड़ि आई,
चपला चमक सोर दादुर मचावै री ।
मोर करि घोर सब्द पपिहा करत लुब्ध,
रिमझिमि फुहारै बुन्द मन-सरसावै री ।।
निसि अँधियारी प्रान-प्रीतम विदेस प्यारी,
काम तन जारी कैसे धीरज बँधावै री ।
'नित्यानन्द' सोचत बितावत परजंक सूनो,
गुनि निजभाग कान्त आस मन लावै री ।।

निर्भयलाल चौधरी

आप दरभंगा-जिला के 'तारालाही' (लहेरियासराय) नामक ग्राम के निवासी श्रीभागवत चौधरी के पुत्र थे। आपका जन्म स० १९३६ वि० (सन् १८७९ ई०) मे हुआ था।[1] आपकी प्राथमिक शिक्षा गाँव की ही पाठशाला मे हिन्दी और फारसी के माध्यम से हुई; क्योंकि उन दिनो लोग अँगरेजी को विदेशी भाषा समझकर उपेक्षा की दृष्टि से देखते थे। आपने बडी लगन के साथ हिन्दी और फारसी भाषाएँ सीखी। बचपन से ही आपके हृदय मे साधु-सन्तों के प्रति अपार श्रद्धा थी। आप स्वयं एक अत्यन्त उदात्त चरित्र एवं साधु स्वभाव के व्यक्ति थे। सादगी, सत्य-निष्ठा एव भगवत्प्रेम आपके जीवन का मुख्य उद्देश्य था। साधुओं और सन्तो की संगति मे पड़कर आपने तुलसी और सूर के पदो का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया। 'एकमीघाट,' (दरभंगा) के सन्त श्रीबाबा श्यामसुन्दरदास का शिष्यत्व ग्रहण कर आपने अपना जीवन तप कर्म मे लगाया। इन्ही महात्माओं की कृपा से आपने 'अयोध्या' 'मथुरा', 'प्रयाग' आदि तीर्थस्थलो का भ्रमण किया। फलत, साधु-संगति ने आपके भावुक हृदय को जागरण का अवसर दिया। आपका कवि-हृदय जग उठा और आपने राम-कृष्ण-सम्बन्धी भक्तिपरक अनेक पदो की रचना करना आरम्भ किया। सन् १९०३ ई० से ही आपकी रचनाएँ प्रकाश मे आने लगी। गृह-कर्म मे लीन रहकर भी आपने प्रभु-कीर्त्तन और भजन मे अपना समय लगाना अपना मुख्य कार्यकलाप बनाया। भक्तिपरक आपके पदों के लालित्य और माधुर्य पर मुग्ध होकर लोगों ने उसे अपना कण्ठहार बनाया। आपने समाज-सुधार-

---

१. परिषद् के साहित्यिक-इतिहास-विभाग में श्रीसूर्यकुमार चौधरी, बी० ए० द्वारा प्रेषित विवरण के अनुसार।

सम्बन्धी एक मासिक पत्रिका का भी सम्पादन किया था, जिसके कुछ ही अंक निकल पाये। आपके द्वारा रचित सभी पद गेय है। आपके द्वारा रचित चार पुस्तकें प्राप्त हो चुकी है, जिनमे तीन प्रकाशित है और अन्तिम अद्यावधि अप्रकाशित। रचना और प्रकाशन-क्रम से इन पुस्तको के नाम ये है-- (१) 'भजनामृततरंगिणी', (२) 'आनन्दबहार', (३) हरिकीर्त्तन-भजनावली' और (४) भक्त-प्रमोद।[1] सं० १९९७ वि० (सन् १९४१ ई०) की माघ-शुक्ल-चतुर्दशी (सोमवार) को भगवत्-भजन करते आपका परलोक-वास हुआ।

उदाहरण

(१)

रामजी मैं भवतारन सुनि आयो,
हौ अति दीन मलीन पापरत, दुख स्वारथहिं भुलायो।
काम-क्रोध-मद-लोभ-मोह में निशिदिन जन्म गमायो।
हरि-पद-कमल-सुखक नहिं सुमिरत विषमनेह मन लायो।
भक्ति-विरति दृढ़ प्रेम चरण तव, श्रुति सन्तन यश गायो।
सो सब छाड़ि संग विमुखन को, सत्संगति नहिं भायो।
पतित-पुनीत दीन-जनगाहक, वेद पुराण बतायो।
'निर्भय' जानि शरण अस आयो, राखहु प्रण अपनायो॥[2]

(२)

जनमल श्रीनन्दनन्दन, असुर निकन्दन रे।
ललना देव सकल नभ हरषित ब्रजवन दुन्दुभि रे।
आनन्द गोकुल घर-घर, देत निछावरि रे।
ललना नागरि मंगल साजि, नन्दगृह आयल रे।
लखि शिशु अनुपम सुन्दर प्रेम उमगि उर रे।
ललना निज-निज अंकम लाय गावत सब सोहर रे।

---

१. आपके जीवन के अन्तिम दस वर्ष बड़े कष्ट में व्यतीत हुए। आपकी आँखों की रोशनी जाती रही थी। इस कृति की रचना आपने इसी दयनीय स्थिति में की थी।
२. 'भजनामृततरंगिणी' (निर्भयलाल चौधरी, सन् १९२२ ई०)।

प्रमुदित नन्द यशोमति लुटवति सम्पति रे ।
ललना याचक भेल अयाच, गावल यश निर्भय रे ॥[1]

(३)

जागिय राम-सिया भय भोर ।
जगमग ज्योति प्रकाश भानुकर, चन्द्रप्रभा भय थोर ।
जागे सब नर-नारि जीव जग, होत शब्द चहुँ ओर ।
सुरनर-मुनि सब द्वारे ठाढ़े, दरश हेतु, प्रभु तोर ।
उठहु नाथ अब देर न कीजै, निर्भय जन चित चोर ॥[2]

(४)

दिवसनिशि रामचरण मन लाओ ।
जा पद परसि शिला बहु दिन कर, गौतम नारि कहायो ।
करि अस्तुति वर पाय हरषि हिय, कन्तचरण शिर नायो ॥
जा पद तें निकली सुर-सरिता, अघमोचन श्रुति गायो ।
कोटिन पतित तरै मंजन तै, त्रिभुवन मे यश छायो ॥
जा पद-धूरि पखारि प्रेमयुत, केवट नाव चढ़ायो ।
आपु सहित परिवारि तरेउ भव देखि सुरन मन भायो ॥
तरेउ पतित कत सुमिरि चरण रज, कहँ लगि नाम बताओ ।
एक अधम निर्भय जग रहि गय, अब प्रभु पार लगाओ ॥[3]

(५)

जबतें अवनी मँह जन्म दियो, मन मग्न रहै दुख मे नित मेरे ।
व्यापि रह्यो तन व्याधि सदा, बहु यत्न किये नहि होत निवेरे ।

---

१. 'आनन्दबहार' (वही, सन् १९२३ ई०) से ।
२. श्रीसूर्यकुमार चौधरी (दरभगा) के पास सुरक्षित 'भक्तप्रमोद' (हस्तलिखित) से ।
३. 'भजनामृततरंगिणी' (वही) से ।

दीनन के दुख कौन सुनै, जग मे नहि देखि पड़ै कोऊ मेरे।
करुणाकर ताप हरो जन के, निर्भय शरणागत है अब तेरे।[1]

(६)

प्राण जखन तन गृह तैं सिधारल, भेल सपन संसार।
मातु पिता सुत दार सहोदर, छूटल कुल परिवार।
घुरि घुरि हस भवन दिशि हेरत, सुमिरि सुमिरि पछिताय।
जाके हित हम जन्म गमाओल, कोउ नहिं करत सहाय।
भव जल नदिया कठिन घटवरवा, धारा अगम अपार।
जप तप व्रत हरि भक्ति न खेवा, केहि विधि उतरब पार।
सोचत पंथ सहत दुख दारुण, पहुँचल यम दरबार।
निर्भय बिनु सियराम प्रेमपद, सहेउ दुसह दुख भार॥[2]

पंचमसिंह वर्मा

आप गया-जिला के 'जम्होर' नामक ग्राम के निवासी श्रीअहिवरण सिंह के पुत्र थे। आपका जन्म स० १९२८ वि० (सन् १८७१ ई०)[3] की पौष कृष्ण-चतुर्थी (शनिवार) को हुआ था।[3] बचपन से ही आप कुशाग्रबुद्धि थे। आपकी प्राथमिक शिक्षा घर पर ही हुई। आगे चलकर आपने अपनी जीविका एव देशोपकार के लिए 'गया नगर मे एक विशाल औषधालय खोला। इस औषधालय के द्वारा आपने देश और देश के बाहर जैसे—ट्रिनिडाड, मॉरिशस, डच-गायना, फ्रेंच गायना और फिजी देशो के रोगियो का उपचार किया था। उन सभी देशो मे आपके औषधि की माँग थी। आप 'नमक सुलेमानो'-कारखाना, गया के अध्यक्ष भी थे। औषधालय आपकी जीविकोपलब्धि के लिए था, फिर भी आपने अपनी साहित्य-साधना का मार्ग बडा ही सुन्दर ढंग से बनाया था। आपकी साहित्य-सेवा का आरम्भिक वर्ष

१. 'आनन्दबहार' (वही) से।
२. वही।
३. राधामोहन सिंह, जम्होर (गया) के द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।

सन् १९१५ ई० बतलाया जाता है। साहित्य-साधना के इस पथ के लिए भी आप आत्मनिर्भर ही रहे। आपने अपने व्यय से 'श्रीहरिश्चन्द्रकौमुदी' नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन किया था। यह पत्रिका गया-नगर से ही प्रकाशित होती थी। आप ही उसके सम्पादक एव प्रकाशक दोनो थे। साहित्यानुराग के कारण आप अपने अर्जित धन का सदुपयोग इस प्रकार करते थे। औषधालय के द्वारा यदि दीन-दु खियो की सेवा होती थी, तो 'हरिश्चन्द्रकौमुदी' और 'हरिश्चन्द्र-पुस्तकालय' के द्वारा साहित्यिक व्यक्तियो का विपुल साहाय्य होता था। 'हरिश्चन्द्र-पुस्तकालय' गया-नगर के अच्छे सार्वजनिक पुस्तकालयो मे एक था।

'पत्रिका' और 'पुस्तकालय' आपकी साहित्यिक अभिरुचि के प्रतीक थे। पत्रिका-सचालन-सम्पादन के अतिरिक्त हिन्दी मे आपके द्वारा लिखित पुस्तकें भी लोगो के उपकार के लिए प्रकाशित हो चुकी थी। कुछ पुस्तकें तो आप नि शुल्क वितरित किया करते थे। आपके द्वारा लिखित पुस्तको मे (१) 'पुनपुन-गगा-माहात्म्य', (२) 'गया-माहात्म्य-सार',[1] (३ गया श्राद्ध पद्धति' (४) 'गया यात्रा', (५) 'सन्तवचनामृतसार'[2] (६) 'विज्ञान-रूपण दीपिका' आदि कई पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी थीं। स० १९६७ वि० (सन् १९२२ ई०) को श्रावण कृष्ण-पचमी (शुक्रवार) को आपने पंचत्व-प्राप्ति की।

उदाहरण

(१)

कोई साधु रात्रिभर खडा होकर प्रभु का विशेष स्मरण करते रहे। दिनभर व्रत रक्खें—इसी भाँति अपना जन्म व्यतीत किया। एक दिन एक ने पूछा कि क्या तुम रात्रिभर चोर के भय से जागते हो? तब सन्तजी बोले—"हाँ, चोर मन है—उसको कही से आना नही है। वह तो मेरे पास है—जो हम सोवें तो वह मेरा भजनरूपी धन लूट लेगा। ताते यह तीन दण्ड उसको देता हूँ। भूख-प्यास, नंगापन, जागरण इसमें जो सुस्ती करू तो यह ठग मुझको कोई नीच ठौर में बेच डालेगा। इससे सावधान रहता हूँ . प्रीतमान वह है जो बुरे संकल्प उठने न दे और उठते ही दूर करे। संकल्प फूल है—फल

---

१ सन् १९१५ ई० में प्रकाशित।

२. सन् १९०६ ई० में प्रकाशित।

उसका कर्म है। फूल तोड़ देने से फल नहीं होता है, इससे संकल्प न उठने दे।"[१]

(२)

हमारी क्या प्रशंसा थोड़ी है ? भैरवजी के हम वाहन, फिर अँगरेज लोगों के एकमात्र मान्य, हिन्दुओं के यहाँ हमारे अर्थ बलि दिया जाता है।...........संस्कृत अँगरेजी में हमारे दो पवित्र नाम है 'स्वान' और 'डॉग' (Dog)। स्वान में दो अक्षर है 'स्वा' और 'न'। 'स्वा' से स्वामी और 'न' से 'नमः' अर्थात् स्वामी के सम्मुख जाकर दुम हिलाकर नमस्कार करना। अँगरेजी में तीन अक्षर 'डी० ओ० जी० (D. O. G.) है, 'डी' से 'डीयर', 'ओ' से ओनर्स (Cwners) और 'जी' से 'ग्रेटफुल' (Greatful) अर्थात् मालिक का शुक्रगुजार। अहा ! हा ! कामदेव की हम पर कैसी कृपा है, जो बड़े-बड़े अमीरों को नही। ... .हम सिंह के भी सिंह है, क्योंकि बिल्ली इसकी मौसी हमसे डरती है।....... ....हम क्षत्री है क्योकि शिकार खेलते है, ब्राह्मण हैं, दीन होकर टुकडा माँगते है। मनुष्यों से उत्तम है क्योंकि हमारे में एक अग अधिक है अर्थात्—पूँछ······सूम की भूम पर टाँग उठाकर पिसाब करते हैं................. ।[२]।

पतनलाल 'सुशील'

आप गया-जिला के 'दाउदनगर' नामक स्थान के निवासी बाबू जगमोहनलालजी के पुत्र थे। आपका जन्म स० १९१६ वि० (सन् १८५९ ई०) को भाद्रपद कृष्ण सप्तमी को हुआ था।[3] कुछ लोग भ्रमवश आपको पटनासिटी-निवासी बतलाते हैं। आपने नार्मल

---

१. 'श्रीसन्तवचनामृतसार' (पंचमसिंह वर्मा, सं० १९६१ वि०), पृ० १७-१८।
२. 'श्रीहरिश्चन्द्रकौमुदी' (भाग १, संख्या ३, वैशाख, सं० १९५१ वि०), पृ० ३।
३. सुप्रसिद्ध कवि स्व० पाण्डेय शिवप्रसाद 'सुमति' द्वारा दिनांक १ जून, सन् १९२८ ई० को श्रीगंगा-शरण सिंह के पास प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।

स्कूल तक की शिक्षा पाई थी। आप कुछ-कुछ अँगरेजी भी जानते थे। आपने 'दाउदपुर' के बाबू जवाहिरलालजी से 'सतसई', 'रामायण' आदि ग्रन्थो का अध्ययन किया था। स्कूली पढाई छोडने के बाद आप पटना के प्रसिद्ध पूरन मिस्त्री लोहार के मुनीम हुए। उसके बाद अपने भाई गोवर्द्धनलालजी के सरोकार से कलकत्ता मे एक महाजन की कोठी मे बही लिखने का काम करने लगे। अपने जीवन के अन्तिम वर्षों मे आप प्रसिद्ध खड्गविलास प्रेस मे बही-लेखक के पद पर काम कर रहे थे। वहाँ आपने आठ-दस वर्षों तक नौकरी की होगी। आप वैष्णवधर्मावलम्बी थे।

आपके जीवन का अधिकाश समय साहित्य-सेवा मे ही व्यतीत हुआ। आपके सरल शिक्षात्मक दोहो ने खड्गविलास प्रेस के अनेक पाठ्य-पुस्तकों मे स्थान पाया है। समस्या-पूर्त्ति के क्षेत्र मे आपको बहुत यश प्राप्त हुआ था। आपकी पूर्त्तियाँ पटना और बिसवाँ (सीतापुर) के कवि-समाज के पत्रो मे प्रायः छपा करती थी। आपकी गणना पुराने लब्धप्रतिष्ठ रसिक साहित्यकारो मे होती है।[1] आपके द्वारा रचित पुस्तकाकार रचनाओं में ये उल्लेखनीय हैं—(१) रोला-रामायण, (२) जुबली-साठिका,[2] (३) भर्तृहरिशतक, (४) नीतिशतक, (५) साधु, (६) उजाड गाँव, (७) यात्री, (८) देशी खेल (दो भागों मे), (९) ग्रियर्सन साहब की विदाई[3] और (१०) जवाहिरलाल की जीवनी[4]। आप सं० १९८४ वि० (सन् १९२८ ई०) की माघ कृष्ण-अष्टमी (५ जनवरी) को पटना मे ही परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

मुनिन अनंदनीय बिधि हर बंदनीय,
निंदनीय दुति कोटि काम कमनीय की।

आपके परिचय-लेखन में उक्त सामग्री के अतिरिक्त 'मिश्रबन्धुविनोद' (वही, पृ० १३०१), 'हरिऔध-अभिनन्दन-ग्रन्थ' (सम्पादक-मण्डल, सन् १९९३ वि०, पृ० ५५३) 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ,' (वही, पृ० ६४४) तथा 'गया के लेखक और कवि' (वही, पृ० १०३) में आई सामग्री का भी उपयोग किया गया है। एक बार आपने बिसवाँ (सीतापुर) के कवि-मण्डल की छह समस्याओं की पूर्त्तियों में अपनी जीवनी का वर्णन किया था। वे पूर्त्तियाँ वहाँ के 'काव्यसुधाकर-पत्र' के चौथे प्रकाश में, सन् १९०० ई० में छपी थीं।

१ मिश्रबन्धुओं ने भी आपकी काव्य-रचना को उत्तम बतलाया है।

२. महारानी विक्टोरिया के जुबली-जुलूस पर लिखित। खड्गविलास प्रेस, पटना से प्रकाशित। आपने भूदेव मुखोपाध्याय की प्रशंसा में भी एक पद्य-रचना की थी। उदाहरणार्थ एक दोहा—

हिन्दी ससकिरत की उन्नति बहु प्रकार जिन कीनी।
डेढ लाख मुद्रा यदि कारण खास कोष ते दीनी॥

—देखिए 'हरिऔध-अभिनन्दन-ग्रन्थ' (वही), पृ० ५३३।

३. गद्य-रचना।

४. गद्य-रचना। इसके परिशिष्ट से बाबा सुमेरसिंह की ग्रन्थावली का भी पता चलता है।

बालि मद खंडनीय रघुबंस मंडनीय,
दंडनीय दुष्ट खल दल समनीय की ।
भंजनीय भाल दसभाल खर गंजनीय,
जन मन रजनीय राम रमनीय की ।
मूरति सुशील घरी साठ जाम आठ बसै,
मेरे मन माहिं वाहि धनु दमनीय की ॥[१]

(२)

ब्रह्मज्ञान जाने फिर जानिबो रहो है कहा,
हरि गुण गाये फिर गायबो कहा रह्यो ।
मातु पितु मातु बात मानिबो रह्यो कहा,
सत्य के गहे पै और गहिबो कहा रह्यो ।
पर उपकार कीने करिबो रह्यो कहा,
दीने दान विद्या फिर देइबो कहा रह्यो ।
चारों फलदायक अमोल रत्न जो सुशील,
मानुष तन पायो फिर पायबो कहा रह्यो ॥[२]

(३)

कसि कंचुकी में ना दुरावै री सुशील प्यारी,
देखे बिनु याहि मोहि जारत मनोज हैं ।
अहा कैसे नट के बटा से जुग संभु के से,
श्रीफल समान तेरे राजत उरोज हैं ॥
जाऊँ बलिहारी नेकु आँचर उघारि बैठु,
कैसे ये सुडौल गोल मंजु पुंज ओज हैं ।

१. 'काव्य-सुधाकर' से । श्रीरामनारायण शास्त्री (बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना) से प्राप्त ।
२. 'दीनबन्धु' (मासिक, खण्ड १, संख्या ८, मार्च, सन् १८९९ ई०) उन्हीं से प्राप्त ।

प्रान के अधार मेरे यह छबि मानस के,
आँखै करिबे को ठंढ सीतल सरोज है ॥[1]

(४)

आजु सही आगम जनावत पियागम को,
आभरन अंगन के खरकि खरकि उठै।
आनँद अपार त्यो 'सुसील' मन आपै आप,
बँद कंचुकी के तरकि तरकि उठै ॥
उड़ि उड़ि बार बार आय काग बोलत है
उर अनुराग आपै छरकि छरकि उठै।
बाम दृग बाम भुज बाम सब अंग मेरे,
रहि रहि फेरि फेरि फरकि फरकि उठै ॥[2]

(५)

बढ़ै रोजन रोज उरोज लग्यो,
अँखिया बढ़ि कानन कोरै लगी।
कटि खीन भई गति मन्द भई,
कछु लाज भरी मुख मोरै लगी।
सकुचावत ही सकुचात लला,
भनि बैन पियूष निचोरै लगी।
चित चोरै 'सुसील' सुजान लगी,
लखि सौतिनियाँ तृन तोरै लगी ॥[3]

(६)

आये है सुसील प्यारे भौन बड़े भागन तें,
सकल हँसीली हौंस हिय की निकारि लै।

---

१. काशी-कवि-समाज की समस्यापूर्त्ति, चैत्र सुदी १। श्रीरामनारायण शास्त्री (बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद, पटना) से प्राप्त।

२. 'काव्य-सुधाकर' (सन् १८९९ ई०) से। आचार्य शिवपूजन सहायजी द्वारा प्राप्त।

३. वही।

निज नित पूज्य लाज देवी महरानी तासु,
आज उदयापन की साइत बिचारि लै ॥
फेरि कौन जानै या संजोग कौन जोग जुरै
बहती नदी मे अब पायन पखारि लै।
टारि पट घूँघट को सब री निवारि सोच,
साँवरी सलोनी छबि नैनन निहारि लै ॥[1]

(७)

जात है बिदेस मनभावन तिहारे चले,
साइत समै पै भलि खेद न बिचारि लै।
बिरह बिखाद बिथा नित सहबोई तोहि,
प्यारी इहिकाल नेकु चित्त को सँभारि लै ॥
फेरि कौन जानै कौन दिन ये फिरैगे दिन
दिन-दिन रुअै को छिन आंसुन निवारि लै।
भेंट लगि अंक लै सुसील लाज संक मेटि,
आनन मयंक भरि नैनन निहारि लै ॥[2]

(८)

सुनि सखियँन की सीख सुमुखि 'सुसीलजू' पै,
पान देइबे को चली छलकत ओज है।
पैढ्यौ परजंक पिया बीरी लेत बाँह गही,
खैंची निज ओर गयो उघरि उरोज है।
पगी प्रेम प्यारी अंग पुलकि पसीजि उठे,
चकित चितौति चित चाव भरी चोज है।

---

१. 'समस्यापूर्त्ति' (पटना, अप्रैल, सन् १८९७ ई०), पृ० ३।
२. वही।

बढ़ति न आगे नाहि पाछे ही हटति नेक,
एक पद लाज एक खैंचत मनोज है।[1]

पन्नालाल भैया 'छैल'

आप गया नगर के 'ऊपरडीह' नामक मुहल्ला के निवासी श्रीश्यामलालजी भैया के पुत्र थे। आपका जन्म स० १६४१ वि० (सन् १८८४ ई०) की फाल्गुन कृष्ण-अष्टमी को हुआ था।[2] आपकी शिक्षा घर पर ही हुई। घर पर ही रहकर आपने हिन्दी, अँगरेजी और उर्दू की शिक्षा पाई थी। सामान्य शिक्षा प्राप्त करने के बाद आपने काव्य-रचना शुरू कर दी थी। स० १६६० वि० से अपने चचेरे भाई श्रीरामलालजी भैया द्वारा प्रोत्साहित होकर आपने काव्य रचना प्रारम्भ की थी। काव्य-रचना की शिक्षा आपने 'श्रीकमलेश कवि', तथा 'श्रीवासुदेवकवि' से पाई थी। आप हिन्दी-गद्य और पद्य दोनो मे लिखते थे। व्रजभाषा के कवि होने के साथ-साथ आप एक सफल उपन्यासकार भी थे। आपकी विद्वत्ता से प्रसन्न होकर निखिलभारतवर्षीय साहित्य-संघ (कलकत्ता) ने आपको 'विद्याभूषण' की उपाधि से अलकृत किया था। इसी सस्था ने आपको 'साहित्य-सरस्वती' को उपाधि भी दी थी। मलयपुर के राजा श्रीजयप्रकाश सिंह बहादुर ने आपकी काव्य सुषमा से प्रभावित होकर आपको 'साहित्याचार्य' की उपाधि दी थी। इसी प्रकार, श्रीभानु कवि ने आपको 'कविवर' की उपाधि से विभूषित किया था।

आप 'नागपुर' (म० प्र०) में 'राज-उपाध्याय' के पद पर आसीन थे। आपकी रचनाएँ बडी ही सरस एवं भावपूर्ण है। आपके द्वारा रचित पुस्तकाकार रचनाओ के नाम इस प्रकार है—(१) जमाल-माला,[3] (२) कुण्डलिया-कुण्डल, (३) भर्त्तृहरि-भूषण, (४) मेघ मजरी,[4] (५) उर्वशी वा मोहनकुमारी,[5] (६) कजली-विनोद (काव्य), (७) वसन्त बहार (काव्य) और (८) काली घटा (काव्य)। उपर्युक्त पुस्तको के अतिरिक्त आपकी स्फुट रचनाएँ तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित मिलती हैं। 'गया' से प्रकाशित होनेवाली मासिक 'साहित्य-माला' मे आपकी अधिकांश कविताएँ प्राप्त होती हैं। सन् १६३१ ई० के २६ जून को आप परलोकवासी हुए।

---

१. 'समस्यापूर्त्ति' (अक्टूबर-नवम्बर, सन् १८६७ ई०), पृ० १।

२. 'गया के लेखक और कवि' (वही) पृ० १०४। आपके परिचय-लेखन में 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६४५) से भी सहायता ली गई है।

३. जमाल कवि के १०८ दोहों पर रोला-मिश्रित कुण्डलियाँ। जमाल देवली (उदयपुर-राज्य) का निवासी था। जमाल के वंशधर भानुकवि से आपकी भेंट काशी में हुई थी। इन्हीं भानु से जमाल के ये दोहे आपको मिले थे, जिनके लिए आपने भानु को २५ रुपये और एक जोड़ा दुशाला दिया था। पुस्तक सन् १६१५ ई० में प्रकाशित।

४. यह पुस्तक अद्यावधि अप्रकाशित है। इसकी हस्तलिपि आपके वंशधरों के पास सुरक्षित है।

५. चार खण्डों में प्रकाशित इस उपन्यास की गणना विख्यात उपन्यासों में होती है।

उदाहरण

(१)

अब काह दुराव करै सजनी,
रजनी में रमी छवि पीली भई।
दृगखंजन अंजन गंजन कै,
मन रंजन की मनकीली भई।
'छैल' छबीले को आई हहा,
अधरा पिकलीन सकीली भई।
हटकीली भई सटकीली भई,
मटकीली भई चटकीली भई॥[1]

(२)

कहत जमाल प्रवीन पाणि डमरू त्रिशूल वर,
मुण्डमाल विकराल व्याल बिच्छू कराल धर।
जटा जाल बिच छटा गंग की छहरति छिन-छिन,
'छैल' कहत जिहिं नाग चर्म राजहिं लोचन तिन॥
सुकवि जमाल प्रवीन मनहिं महिषासुरमर्दिणि,
कल मय मोषिन किलै कोटि कति रम्य कपर्दिणि।
दुर्दर धर्षिण सबै देव वर वर्षिण छिन-छिन,
सिंहवाहिनी छैल पैज पालति बहु भाँतिन॥[2]

(३)

किंसुक की रसलीन दीनतन दहन हेत तिहिं,
मालति बिरह-बिहाल व्याल सी डस गइ तन जिहिं।

---

१. 'साहित्य-माला' (गया, माला १, पुष्प ८, आश्विन, सं० १९७६ वि०), पृ० १-२।
२. द्र० 'जमाल-माला', (पन्नालाल भैया, सन् १९१५ ई०), पृ० ३। यह पुस्तक गया-नगर-निवासी हिन्दी के अनुसन्धायक-कवि-लेखक श्रीरामनिरञ्जन 'परिमलेन्दुजी' के पास सुरक्षित है।

नाहि परत जिय चैन रैन दिन घूमत तरफर,
कहैं छैल का भैल हाय यह व्याकुल मधुकर ॥
कारण कवन जमाल केहरि कटिवारो छवि,
तड़ित झिपावन अंग-ढंग कोउ का कह सक कवि ।
घुंघराली कच चिबुक चकित चित करत चंद हिक,
छहरत छन छवि छिती बीचि मनु छैल कहैं इक ॥[1]

(४)

पाक प्रीति प्रति पुन्य पुनि पूजन पुरुष प्रमान,
पुत्रोद्भव आनन्दकरणि कामिन सब गुण खान ।
कामिन सब गुण खान कछु ध्यान धरहु जनि,
योग भोग सयोग समै सबमें सामिल सनि,
गैल गैल छित छैल छानि रंगत सबही का,
करहिं मौज सब रोज रमणि जाकी श्री रूपा ॥[2]

(५)

इधर यह पूरी लफ्ज कुमार की ज़ुबान से निकलने भी नहीं पायी थी कि इतने में पुजारियों ने दर्शन करनेवालों को रोका और मंदिर के सदर दरबाजे को बन्द किया । फिर चारो तरफ शोरगुल होने लगा कि राजकुमारी दर्शन के लिए आ रही हैं और देखते-देखते पुजारियो की दपट से मंदिर खाली हो गया । इतने में उधर से कई घोडों के टापों की आवाजें भी आने लगीं, जिसके ऊपर हाथों में नंगी तलवारों को लिए हुए बीस सवार चार पालकियों को अपने पहरे में लिए हुए धीरे-धीरे आ रहे हैं । इन पालकियों में से तीन तो मामूली तरीके से सजी हुई थीं, मगर एक जो सबसे आगे आ रही थी, उसके

१. 'जमाल-माला' (वही), पृ० ३७ ।

२ 'कुण्डलिया-कुण्डल', (पन्नालाल भैया, सन् १९१३ ई०), पृ० ७ । यह पुस्तक भी श्री रामनिरंजन 'परिमलेन्दु' (वही) के पास सुरक्षित है ।

ऊपर कारचोपी का महाफा पड़ा हुआ था और गांगी-जमुनी बघमुँहा बाँसों के सहारे कहार उठाये हुये थे जिसके ऊपर डूबते हुए सूर्य की आखिरी किरणें पडकर आँखों के सामने अजीब सी चकाचौंधी पैदा कर रही थी।[1]

परमेश्वरप्रसाद शर्मा

आप मुँगेर-जिला के 'शिवकुण्ड' नामक ग्राम के निवासी पं० भेषधारी शर्मा के पुत्र हैं। आपका जन्म सन् १८६८ ई० की पहली फरवरी को हुआ था।[2] आपकी आरम्भिक शिक्षा मुँगेर मे ही हुई। सन् १९११ ई० में गाँव मे प्लेग आ जाने के कारण कुछ दिनों के लिए आप अपने एक सम्बन्धी के यहाँ 'मोजमाबाद' (भागलपुर) चले आये। वहाँ रहकर 'वीरबन्ना मिड्ल स्कूल' से आपने छात्रवृत्ति पाकर मिड्ल-स्कूल की परीक्षा पास की। सन् १९१७ ई० में आप मुँगेर जिला-स्कूल से मैट्रिक की परीक्षा मे बैठे, तो सर्वप्रथम हुए और महाराज गिद्धौर का स्वर्ण-पदक प्राप्त किया। आपकी उच्च शिक्षा मुँगेर, भागलपुर और पटना मे हुई। पटना-विश्वविद्यालय से एम्० ए० (संस्कृत , की परीक्षा मे सर्वप्रथम होकर आपने स्वर्ण-पदक प्राप्त किया। आपने वकालत (बी० एल्०) की परीक्षा भी पास की थी और आपको 'साहित्याचार्य', 'व्याकरणतीर्थ', 'विद्यारत्न' एव 'विद्याभूषण की उपाधियाँ भी प्राप्त हैं। आप म० म० पं० रामावतार शर्मा के अत्यन्त प्रिय शिष्यों मे थे। सस्कृत की विशेष शिक्षा आपने उन्ही से प्राप्त की थी और उन्ही की प्रेरणा से आपने सन् १९२४ ई० मे हजारीबाग के सन्त कोलम्बा कॉलिज मे अध्यापक का पद स्वीकार किया।

अपने छात्र-जीवन से ही आप हिन्दी-भाषा एवं साहित्य के प्रचार-प्रसार की ओर उन्मुख हैं। इस सिलसिले मे आपने आगे चलकर कई संस्थाओं की भी स्थापना की। हिन्दी मे लिखे आपके स्फुट लेख 'सुधा', 'माधुरी', 'सरस्वती', 'तरुण भारत', 'पाटलिपुत्र', देश', 'युवक', बालक' इत्यादि पत्र-पत्रिकाओं मे (सन् १९२१ से ३५ ई० तक प्रकाशित हुआ करते थे। इधर आपने हिन्दी मे 'सूर-सागर' की एक सुन्दर टीका लिखी है, जो अप्रकाशित पडी है।[3] सम्प्रति, आप पटना-नगर में ही निवास कर रहे हैं।

---

१. 'उर्वशी वा मोहनकुमारी', (पन्नालाल मैया, सन् १९१८ ई०), पृ० १२। यह पुस्तक भी श्रीरामनिरजन 'परिमलेन्दु' के सौजन्य से अवलोकनार्थ प्राप्त हुई।

२. आपके द्वारा दिनांक १५ मई, सन् १९५६ ई० को प्रेषित एवं बिहार के साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।

३. आपने संस्कृत के 'भट्टिकाव्य' (द्वितीय सर्ग), 'कुमारसम्भव' (पंचम सर्ग), 'नीतिशतक', 'स्वप्नवासवदत्त' इत्यादि ग्रन्थों का सम्पादन किया था।

उदाहरण

(१)

प्राचीन काल से ही भारतीय भावनाएँ काव्य-माध्यम द्वारा व्यक्त होती आई है। भारतीय ललनाएँ तो स्वभाव से ही कलाविद् होती हैं, विशेषतः संगीतकला में तो ये अद्वितीय उतरती ही हैं। भारतीय सभ्यता और संस्कृति के विकास के प्रत्येक युग में हमारी महिलाओं ने काव्य-साहित्य मे प्रचुर योगदान दिया है। वैदिक मंत्र-द्रष्ट्रियों के रूप में, प्राकृत-साहित्य की मधुर एव ललित गाथा की गायिकाओं के रूप में, पाली-भाषा की गाथा-वन्दना की प्रार्थिनी के वेश में, पुनश्च सस्कृत-साहित्य के सुलक्षित श्रृंगारिक श्लोक की रचयित्री के रूप में अथवा हिन्दी-साहित्य के भक्तिपूर्ण भजन या श्रृंगारिक गीतों की गायिका के रूप में—भारतीय साहित्य के विकास की मब भिन्न-भिन्न अवस्थाओ मे भारतीय महिलाएँ अपना भाग योग्यतापूर्वक सम्पन्न करती देखी जाती है। वैदिक ऋषि घोषा के काल से, जिसने वेद के प्रारम्भकाल में ही अपना कृतज्ञतापूर्ण हार्दिक उद्गार स्ववैद्य अश्विनीकुमार के समक्ष उँड़ेल डाला था, जिनकी चिकित्सा से उसे अपना प्रिय प्रति प्राप्त हुआ था; हाँ, उस काल से लेकर राधाप्रिया, अनसूया, कमलाबाई वापट, सरोजनी नायडू तथा महादेवी वर्मा तक हम लगातार भारतीय स्त्री-कवियों की अक्षुण्ण पंक्ति अभंग रूप से चली जाती हुई पाते है, जो पुरुष-कवियों के साथ कंधे-से-कंधे मिलाकर चलने में किसी तरह पीछे पाँव नहीं रखती।[1]

(२)

संस्कृत-साहित्य की काव्य-रचयित्रियों की जैसी वैदिक मंत्र-गायिकाएँ भी स्त्रीजनोचित कामनाओं और मनोभावनाओं से भरी

---

१. 'श्रीकृष्ण-अभिनन्दन-ग्रन्थ' (सम्पादक-मण्डल, सं० २००५, वि०), पृ० ७५।

हुई थीं। वे भी हमारी आधुनिक नारियों जैसी संसार के सुख और सौंदर्य का, हास और विलास का मनभर उपयोग करने को लालायित रहती थीं। उनके लिए भी पतिप्रेम ही संसार में सर्वोत्कृष्ट पदार्थ था और दाम्पत्य सुख ही जीवन का उच्चतम आनन्द। उनकी नजर में धर्म का कोई स्थान ही नही था। अतः, हम देखते है कि उनकी सारी-की-सारी प्रार्थनाएँ पार्थिव प्रसाद पाने के लिए हुआ करती थी। योग्य वर, पति-प्रेम, सांसारिक सुखोपभोग, रोगमुक्ति, संतान-चिन्ता इत्यादि ही उनकी स्तुति के विषय है। कहीं भी, कभी भी, हम आध्यात्मिक उन्नति तथा मोक्ष की भावना उनकी रचनाओं में नहीं पाते। विश्ववारा विवाहित महिला है, वह वैवाहिक सुख-सम्पत्ति तथा निश्चित जीवन-यापन के लिए प्रार्थना करती है। घोषा श्वेतकुष्ठ से पीड़ित है; अतः अश्विनीकुमार की स्तुति इस भयंकर रोग से छुटकारा पाने तथा सुन्दर एव स्वस्थ पति प्राप्त करने के लिए करती है। आगे चलकर काम-कला तथा रति रीति की शिक्षा पाने के लिए प्रार्थना करती है।[1]

प्रमोदशरण पाठक

आप पटना-जिला के 'फतुहा' नामक स्थान के निवासी पं० हरिनारायण पाठक 'भिषग्भूषण' के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९५७ वि० (दिसम्बर, १९०० ई०) की अगहन शुक्ल सप्तमी को हुआ था।[2] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा 'फतुहा' के हिन्दी मिड्ल-स्कूल (सन् १९०३-१९०७ ई०) मे हुई थी। उसके बाद सन् १९१२ ई० तक आप वही की एक संस्कृत-पाठशाला मे पढे। तत्पश्चात् सन् १९१२ ई० में आपने गोरखपुर (उ० प्र०) के 'मिशन-स्कूल' मे प्रवेश किया। वहाँ सन् १९१४ ई० तक अध्ययन करने के बाद आपका नाम पटना के टी० के० घोष स्कूल मे लिखाया गया, जहाँ आप सन् १९१७ ई० तक रहे।

१. 'श्रीकृष्ण अभिनन्दन-ग्रन्थ' (वही), पृ० ७८-७९।

२. साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार। आपके प्रस्तुत परिचय-लेखन में 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ', (वही, पृ० ६४३) तथा स्व० आचार्य शिवपूजन सहायजी की टिप्पणी ('साहित्य', त्रैमासिक, वर्ष १०, अंक १, पृ० १) से भी सहायता ली गई है।

विद्यालयीय अध्ययन के अनन्तर आपने हिन्दू-विश्वविद्यालय, काशी मे (सन् १९१८-२० ई०) उच्च शिक्षा प्राप्त की।

वैद्यक और ज्योतिष-शास्त्र के भी आप ज्ञाता थे। आयुर्वेद की चिकित्सा-पद्धति मे आपका अटूट विश्वास था। आप बड़े ही विनोदी और मधुर स्वभाव के पण्डित थे।

आप उर्दू और फारसी के अच्छे जानकार थे। बँगला तो आपकी मातृभाषा-सी लगती थी। सस्कृत-हिन्दी के ज्ञाता एवं रचनाकार के रूप मे आपने पर्याप्त ख्याति प्राप्त कर ली थी। अन्तिम दिनो मे आपने ही 'भूदेव' का सम्पादन किया था। आपकी लेखनी सदा जागरूक रहती थी। आपके द्वारा लिखित पत्रो के लेख एव सम्पादकीय बडे महत्त्व के होते थे। आप एक सफल पत्रकार थे। पत्रकारिता आपके जीवन का व्यसन थी। 'बिहार-बन्धु' के सम्पादन और प्रकाशन मे आपकी तत्परता देखने योग्य थी। 'बिहार-बन्धु' नाम मे आपकी बड़ी ममता थी। उसके बहुत ही पुराने अको का सग्रह करने मे आपको बडा परिश्रम करना पडा था। किन्तु, देश के स्वातन्त्र्य-समर मे आपके जेल जाने पर वे बहुमूल्य अंक सुरक्षित न रह सके। आपको पुराने अको को सचित करने मे आत्मतोष मालूम होता था।

आपके रचनाकाल का आरम्भ सन् १९१७ ई० बतलाया जाता है। यो, विद्यार्थी-जीवन से ही आपमे काव्य-रचना की प्रतिभा वर्त्तमान थी। आपके द्वारा लिखित हिन्दी की रचनाएँ पटना सिटी से प्रकाशित होनेवाले साप्ताहिक 'प्रजाबन्धु' एवं 'बिहार-बन्धु' मे छपा करती थी। कलकत्ता से निकलनेवाला 'साप्ताहिक' 'हिन्दू-पंच' मे भी आपकी रचनाएँ समादृत होती थीं। हिन्दी के अतिरिक्त आप संस्कृत के भी अच्छे ज्ञाता एवं विद्वान् थे। आपकी संस्कृत-रचनाएँ पटना से ही प्रकाशित होनेवाली सस्कृत हिन्दी-मासिक पत्रिका 'भूदेव' में मुद्रित हुआ करती थी।

उपर्युक्त पत्रों मे स्वतन्त्र और सम्पादकीय लेखों के सिवा आपने कोई पुस्तक नही लिखी। अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे आप 'भूदेवो का भारत' नामक एक पुस्तक लिख रहे थे, जिसकी स्थिति का अब कोई पता नहीं है। सन् १९५९ ई० की २५ फरवरी, को लगभग साठ वर्ष की आयु में आपकी इहलीला समाप्त हुई।

उदाहरण

(१)

कभी, शिक्षा के क्षेत्र में, संसार के सभी देशों से आगे रहनेवाला, भारतवर्ष आज, उसके एकदम विपरीत, सबसे पीछे है। यहाँ तक कि पड़ोसी देश वर्मा भी, जो अभीतक हिन्दुस्तान के साथ है पर शीघ्र

---

१ आर्थिक एव सम्पादकीय सुविधा के लिए 'बिहार-बन्धु' का कार्यालय पटना सिटी से 'फतुहा' स्थानान्तरित हो गया था।

ही अलग भी किया जानेवाला है, शिक्षा की दृष्टि से, हम से आगे बढा हुआ है। इस देश मे शिक्षितों की संख्या सौ-पीछे दो-तीन ही कही जाती है। किसी भी प्रकार की उन्नति मनुष्य तभी कर सकता है जब उसके बीच शिक्षा का प्रचार हो। यही कारण है कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में हम एकदम पिछड़े हुए है; और तबतक किसी प्रकार का भी सुधार नितान्त असम्भ है व जब तक हम इस सर्वप्रधान समस्या को सुलझा नहीं लेते।'[1]

(२)

आज डेढ़ मास होते है—जब एक दिन अपराह्ण में अनायास अनुभव हुआ कि प्रकृति पर विजय पाने का गर्व करनेवाला मनुष्य कितना निराश्रय, निबल, निरीह और पंगु है। दो ही तीन मिनटो के अन्दर विशेषकर बिहार में क्या से क्या हो गया!! हमारे पास न साधन है न स्थान कि हम अपने पाठकों क उसकी विभीषिका का परिचय दे सकें। पर अबतक दैनिक और साप्ताहिक पत्र के सहारे उसकी विकरालता का संवाद देश के कोने-कोने में पहुँच चुका है। कै सहस्र मानव अकाल कालकवलित हुए, कितने करोड की सम्पत्ति नष्ट हो चुकी और कितनी उर्वर भूमि, बालू कीचड़ के नीचे दब गयी, उसकी इयत्ता नही। और उसके बाद आज तक, यह भी नही कहा जा सकता कि कब इसका अवसान होगा। महाकाल का रौद्र ताण्डव कितना भयंकर हो सकता है, इसका परिचय तो उसी दिन मिला और उसी दिन यह भी अनुभव हुआ किसभी सांसारिक सम्बन्ध एकदम 'नहीं' है; यदि है तो वही—'यद्दूरे चान्तिके च तत्।'[2]

---

१. 'भूदेव', (आलोक २, दर्शन २, स० १९९१ वि०), पृ० ५७।
२. वही (आलोक १, दर्शन ५, सं० १९९० वि०), पृ० १९३।

पारसनाथ सहाय

आप हजारीबाग जिला के (गिरिडीह-अनुमण्डल के अन्तर्गत) बेलकुण्डी' (खरकडीहा) नामक स्थान के निवासी स्व० श्रीबोधप्रकाशलाल के पुत्र है। आपका जन्म सं० १९५७ वि० (५ नवम्बर, सन् १९०० ई०) की कार्त्तिक शुक्ल-त्रयोदशी (सोमवार) को हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। नियमित रूप से दो वर्षो तक आपने कही अध्ययन नही किया। फिर भी, मुंगेर जिला-स्कूल से मैट्रिक की परीक्षा बड़ी सफलता-पूर्वक पास की। मैट्रिक पास करने के बाद आपने बी० एन्० कॉलेज, पटना से आइ० ए० और हिन्दू-विश्वविद्यालय, बनारस से बी० ए० की परीक्षाएँ पास की। तदनन्तर, आपने कलकत्ता-विश्वविद्यालय से एम्० ए० की उपाधि प्राप्त की। कलकत्ता मे निवास करते हुए आपने वहाँ के आर्यसमाज की यथेष्ट सेवा की थी। आप बडे कर्मठ एवं सत्य-परायण दयालु व्यक्ति हैं।

बी० ए० की उपाधि प्राप्त करने के बाद सन् १९२६ ई० से आप अपने स्फुट लेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ मे लिखने लगे। आपके द्वारा लिखित निबन्ध साप्ताहिक और मासिक 'विश्वमित्र' मे नियमित रूप से प्रकाशित हुआ करते थे। आपका व्यक्तित्व इतना पुनीत था कि वकालत करते हुए भी जीवन के सत्य, धर्म आदि विषयो पर आपने अच्छे निबन्ध लिखे। इन विषयो की विशद विवेचना जहाँ आप अपनी लेखनी द्वारा करते थे, वही उन्हें अपने जीवन मे परिणत करने को भी सतत व्यग्र रहते थे।

हिन्दी मे आपके द्वारा लिखित पुस्तके ये है—(१) सत्य की खोज मे, (२) क्या आत्मा अमर है?, (३) तर्कशास्त्र का प्रारम्भिक अध्ययन और (४) तर्कशास्त्र के मूल सिद्धान्त। सम्प्रति, आप अपने घर पर ही रहते है।

उदाहरण

(१)

बुद्धिवाद का यह अर्थ नही कि मन और हृदय की सभी वृत्तियों का नाश कर दिया जाय। बुद्धिवाद के मुताबिक सभी वृत्तियों की जरूरत है, केवल उनको बुद्धि के अनुगत होकर रहना चाहिए। यदि भय की वृत्ति का नाश हो जाय तो मनुष्य उद्दण्ड हो जाय और यदि बुद्धि से भी ऊपर भय रहे तो मनुष्य डरपोक कहलाता है। यदि काम-वासना का नाश हो जाय तो सृष्टि लोप हो जाय और काम-वासना

---

१. साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।

२. इनमें प्रथम पुस्तक प्रकाशित है। इनके अतिरिक्त शेष तीन पुस्तकें अद्यावधि अप्रकाशित हैं।

यदि बुद्धि को दबा दे तो मनुष्य, कामी कहाता है। यदि लोभ का पूर्णतया नाश हो जाय तो मनुष्य अकर्मण्य बन जाय और लोभ श्रद्धा का नाश हो जाय तो ज्ञान-प्राप्ति असम्भव है और श्रद्धा यदि बुद्धि को दबा दे तो अन्धश्रद्धा गड्ढे में गिरा देती है। कठोपनिषद् मे 'आत्मानं रथिनं विद्धि...' मन्त्र में ऋषि ने मन को लगाम कहा है और बुद्धि को सारथि कहा है। जिस तरह सारथि के हाथ में लगाम रहने से घोड़े पथभ्रष्ट होकर रथ को खतरे में नही डाल सकते, उसी प्रकार यदि मन, बुद्धि के अधीन रहे तो शरीर को, इन्द्रियाँ खतरे में नहीं डाल सकतीं। सक्षेप में कहने का तात्पर्य यह है कि सत्यासत्य, कर्त्तव्या-कर्त्तव्य का निर्णय केवल बुद्धिवाद ही से हो सकता है।[1]

(२)

विश्व ब्रह्माण्ड की ओर यदि हम दृष्टि डालें और तत्ववेत्ता की आँख से यदि इसे देखें तो पता लगेगा कि विश्व का एक-एक पदार्थ असंख्य पदार्थों के कार्य का परिणाम है। मिट्टी-पत्थर, फल-फूल, घास-लतायें, कीड़े-मकोड़े, पशु-पक्षी सभी के अपने-अपने इतिहास हैं। किसी एक को उठाकर यदि कोई वैज्ञानिक अध्ययन करता जाय तो एक जन्म की कौन कहे, अनेक जन्म होने पर भी थाह नहीं पा सकता, और अन्त में न्यूटन की तरह उसे भी स्वीकार करना पड़ेगा कि इस एक पदार्थ की विद्या अथाह समुद्र है और मै किनारे पर बच्चों की तरह ककड़ चुन रहा हूँ। मनुष्य-समाज की कौन कहे, हिन्दू-समाज की किसी एक उपजाति के किसी खास काम के बारे में यदि सोचें तो शीघ्र पता नहीं लग सकता कि किन विश्वासों और

---

१. दे० 'विश्वमित्र' (मासिक, वर्ष २, अक ३, सन् १९३३ ई०, दिसम्बर, मार्गशीर्ष, स० १९९० वि०), पृ० ३७१।

कैसी-कैसी परिस्थिति के परिणाम मे अमुक उपजाति ने अमुक कर्म किया।[1]

पारसनाथ सिंह

आप सारन-जिला के 'परसा' नामक ग्राम के निवासी थे, किन्तु, आपका जन्म दरभंगा-शहर के 'लक्ष्मीसागर' मुहल्ले मे, सन् १८९६ ई० के २८ दिसम्बर को हुआ था, जहाँ आपके पिता व्यवसाय के सिलसिले मे रहते थे।[2] आपकी आरम्भिक शिक्षा 'गोसी-अमनौर' नामक ग्राम मे हुई थी, जहाँ आपके पूर्वज कभी निवास करते थे। उक्त स्थान से उर्दू, फारसी का अध्ययन करके आप दरभंगा के राज-स्कूल मे चले आये। इसी स्कूल से आपने सन् १९१२ ई० मे छात्रवृत्ति लेकर मैट्रिकुलेशन की परीक्षा पास की। उसके बाद आप काशी के सेण्ट्रल 'हिन्दू-कॉलेज मे प्रविष्ट हुए, जहाँ से सन् १९१६ ई० मे आपने बी० ए० की डिग्री प्राप्त की। बी० ए० की परीक्षा म आपने संस्कृत मे सर्वोच्च स्थान प्राप्त किया था। इसके बाद आपने प्रयाग से एल्० एल्० बी० की परीक्षा पास की। प्रयाग मे रहते हुए आप देश के अनेक महामान्य व्यक्तियो के सम्पर्क मे आये। सन् १९२० ई० मे प० अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी के सम्पादकत्व मे प्रकाशित हिन्दी दैनिक 'स्वतन्त्र' के आप सहायक सम्पादक नियुक्त किये गये। इसी समय पं० श्रीजगन्नाथ-प्रसाद चतुर्वेदी के माध्यम से आपका परिचय श्रीघनश्यामदास बिडला से हुआ, जो आपको अपने अँगरेजी-पत्र 'हिन्दू-एम्पायर' मे ले गये। कुछ ही दिनो मे आपकी कार्य-दक्षता, योग्यता आदि से प्रभावित होकर सन् १९२५ ई० मे उन्होंने आपको अपने 'प्राइवेट-सेक्रेटरी' के पद पर नियुक्त कर लिया। अपनी बुद्धि के चमत्कार और मस्तिष्क की उर्वरता के प्रभाव से आप 'बिडला-परिवार' के अभिन्न अंग बनकर बडे-बडे कारखानों के सफल संचालक हो सके। बिडला-बन्धुओं के साथ आपने अनेक बार अनेक देशों की यात्राएँ की और आधुनिक औद्योगिक पद्धति का विशेष रूप से अध्ययन किया। उक्त परिवार की ओर से उडीसा मे 'ओरियेण्ट पेपर-मिल्स' की जब स्थापना हुई, तब उसके कार्य-संचालन का भार आप पर ही सौंपा गया। पत्रकारिता के क्षेत्र मे स्वतन्त्र' और 'हिन्दू-एम्पायर' के माध्यम से आपको पर्याप्त अनुभव प्राप्त हो चुका था। आगे चलकर महामना प० मदनमोहन मालवीयजी के अनुरोध पर आपने 'हिन्दुस्तान-टाइम्स' का कार्यभार

---

१. देखिए 'विश्वमित्र', (वर्ष १, पूर्ण संख्या ६, भाग १, खण्ड २, जून, सन् १९३३ ई०, ज्येष्ठ १९९० वि०), पृ० २८४-८६।

२ बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् का 'वार्षिक कार्य-विवरण' (सन् १९५२-५३ ई०), पृ० ४०। आपके परिचय-लेखन में उक्त सामग्री के अतिरिक्त 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६७२ ङ), 'हिन्दीसेवी संसार' (वही, पृ० १४०-४१), 'बिहार-अब्दकोश' (वही, पृ० ६६६), 'सर्चलाइट' (१५ अक्टूबर, सन् १९५५ ई०) तथा 'प्रदीप' (१५ अक्टूबर, सन् १९५५ ई०) और विभाग में सुरक्षित विवरण से भी सहायता ली गई है।

सँभाला और 'हिन्दुस्तान'-जैसा हिन्दी-दैनिक भी निकाला। 'हिन्दुस्तान-टाइम्स' के अतिरिक्त 'लीडर', 'भारत' और 'सर्चलाइट' के भी आप एक सफल प्रबन्ध-संचालक थे। बिहार के प्रमुख हिन्दी-दैनिक 'प्रदीप' के प्रकाशन का श्रेय आपको ही दिया जाता है। प्रयाग की प्रकाशन-संस्था 'भारती-भण्डार' आपकी देखरेख मे पुष्पित और पल्लवित हुई। हिन्दी की सुप्रसिद्ध साहित्यिक संस्थाओं, जैसे 'सस्ता साहित्य मण्डल', 'बिडला एजुकेशन ट्रस्ट' और 'भारतीय विद्याभवन', बम्बई से भी आप सम्बद्ध थे।

आप एक बहुश्रुत विद्वान्, पत्रकार, इतिहासकार, शैलीकार, निबन्धकार और ज्योतिर्विद्याविशारद थे। विद्वत्ता और मनुष्यता के संयोग से आपका व्यक्तित्व बडा ही प्रभावशाली हो गया था।[1] आपकी गणना द्विवेदी-युगीन साहित्य सेवियो मे होती है। अपनी छात्रावस्था से ही आप 'दरभंगा' से प्रकाशित 'मिथिला-मिहिर' मे लिखने लगे थे। 'सेण्ट्रल हिन्दू-कॉलेज' में पढते समय श्रीपदुमलाल पुन्नालाल बख्शी के अनुरोध पर आप सुप्रसिद्ध हिन्दी-मासिक 'सरस्वती' मे लिखने लगे। 'सरस्वती' मे लिखते-लिखते आपकी गणना हिन्दी के कुशल लेखकों में होने लगी। 'सरस्वती' सम्पादक आचार्य प० महावीर प्रसाद द्विवेदी की आप पर अनन्य कृपा रहती थी। आपने सुलतानगंज (भागलपुर) से प्रकाशित 'गंगा' और पटना से प्रकाशित 'हिमालय' मे भी लिखा। 'गगा' मे प्रकाशित आपकी 'वैशाली'-सम्बन्धिनी लेखमाला की गुणग्राही साहित्यकारों ने बडी प्रशसा की थी। आपके द्वारा रचित हिन्दी-पुस्तको मे 'जगत-सेठ', 'परिचय', 'रुपये की कहानी, 'विनोद और व्यग्य', 'आँखों देखा युद्ध', 'ज्योतिषचर्चा', 'कुसुमावली' आदि प्रसिद्ध हैं।[2] इस सभी पुस्तको से आपके ज्ञान-क्षेत्र के विस्तार का अनुमान होता है। आपके 'जगत-सेठ' नामक प्रसिद्ध ऐतिहासिक ग्रन्थ पर बिहार-राष्ट्रभाषा परिषद् द्वारा एक सहस्र मुद्राओ का पुरस्कार दिया गया था।[3]

---

१. 'साहित्य' (वही, वर्ष ५, अक ४, जनवरी, सन् १९५५ ई०), पृ० ३।

२. आपने प० पद्मसिंह शर्मा के लेखों को सम्पादित करके 'पद्म-पराग' नामक पुस्तक भी शर्माजी के जीवन-काल में ही प्रकाशित की थी। इसके अतिरिक्त, आपने 'भारतीय-करेंसी' के इतिहास पर अँगरेजी में भी एक पुस्तक लिखी थी।

३. इस सम्बन्ध में परिषद् के तत्कालीन निदेशक आचार्य शिवपूजन सहायजी ने लिखा है कि "बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् से जब उनकी 'जगत-सेठ' नामक पुस्तक पर एक हजार रुपये का पुरस्कार मिला था, तब मैंने परिषद् के कार्य-विवरण में छापने के लिए उनका सचित्र परिचय माँगा था। उन्होंने बहुत अनुनय-विनय करने पर भी अपना परिचय छपवाना स्वीकार नहीं किया।... परिषद् वार्षिकोत्सव में पुरस्कार लेने के लिए आने में वे स्वयं सकुचाते रहे। उस दिन वे पटना-अस्पताल में थे। प्रयत्न करके लाये जा सकते थे। पर आत्म-विज्ञापन उन्हें अभीष्ट न था। आखिर मैं ही पुरस्कार-द्रव्य और ताम्र-पत्र लेकर उनके पास अस्पताल में गया। उस समय की उनकी कारुणिक मुद्रा और सजल दृष्टि आज भी नहीं भूलती। उनके गद्गद कण्ठ से कोई वाणी नहीं निकली। ऐसे निष्काम साहित्यसेवी बहुत कम देखने में आते हैं।"

—'देखिए, 'शिवपूजन-रचनावली' (शिवपूजन सहाय, चतुर्थ खण्ड, सन् १९५९ ई०), पृ० २७२ तथा दैनिक 'भारत' (प्रयाग) और दैनिक 'प्रदीप' (पटना), स्मृति-अक (नवम्बर, सन् १९५४ ई०)।

सन् १९५४ ई० के १५ अक्टूबर को सर्चलाइट-प्रेस में ही आठ बजे प्रातःकाल अकस्मात् आपकी जीवनलीला समाप्त हो गई।[1]

उदाहरण

(१)

बालक की आँखों पर आकर, लेती जो निद्रा विश्राम ।
विदित किसी को क्या है, जग में, उस देवी का पावन धाम ?
निर्जन वन है कोई, होता, जहाँ सदा खद्योत प्रकाश ।
किसी पुष्प की दो कलियों के बीच वही है उसका वास ॥[2]

(२)

बालक के ओठों पर जब तब, देखी जाती जो मुसकानी ॥
बतलावेगा कोई मुझको, उसके उद्गम का संस्थान ?
बाल-शशी की किरण हुई थी, जाकर शरन्मेघ में लीन ।
जहाँ, वही पर, सबसे, पहले, उपजी वह मुसकान नवीन ॥[3]

(३)

जर्मनी में फ्रेडरिक निट्शे (Friedrich Nietzoche) नाम का एक असाधारण विद्वान् हो गया है। उसे मरे अभी सिर्फ १५ वर्ष हुए। तबसे उसके चरित तथा शिक्षाओं से सम्बन्ध रखनेवाली पुस्तकों की संख्या सभी देशों में दिन-पर-दिन बढ़ती ही जा रही है। उसकी शिक्षाओं का लोगों पर, विशेषकर उसके देशवासियों पर, जो असर पड़ा है, उसके सम्बन्ध में विद्वानों मे बहुत मतभेद है। कोई-कोई उसे

---

१. आपकी पुण्य-स्मृति में 'सर्चलाइट' और 'प्रदीप' (पटना) तथा 'लीडर' और 'भारत' (प्रयाग) के जो स्मारक अंक निकले, उन्हें देखकर आपकी लोकप्रियता एवं बहुमुखी प्रतिभा का अनुमान किया जा सकता है।

२. 'सरस्वती' (मासिक, भाग १५, खण्ड २, संख्या ६, दिसम्बर, सन् १९१४ ई०), पृ० ७०३।

३. वही।

जर्मनी का सबसे बड़ा तत्ववेत्ता और और नीतिशास्त्री मानते है, पर कोई-कोई उसे अज्ञानी, मूर्ख, दुराचारी शिक्षक और अव्यवस्थित-चित्त बताते है। कुछ लोगो का यह भी कहना है कि जर्मनी में युद्ध से प्रेम और शान्ति से घृणा पैदा करानेवालों में ट्राइट्रके नाम के लेखक के बाद इसी का नम्बर है। यही कारण है कि जबसे यूरोप में महाभारत मचा है तबसे इसके विषय में सैकड़ों लेख लिखे जा रहे है। इसके विचार-वैचित्र्य की लोगों में यत्र-तत्र चर्चा भी खूब होने लगी है।[1]

(४)

'खाँ साहब' का पूरा नाम तो जरा लम्बा चौड़ा था, पर तिवारी-जैसे लँगोटिया यार को उन्हे 'महबूब' के ही नाम से पुकारने की स्वतन्त्रता प्राप्त थी। उनका जन्म जौनपुर जिले के एक ऐसे पठान-कुल में हुआ था जो गजनी और गोर से सिलसिला मिलाने-वालो में था। पर कुलीन पठान होते हुए भी वह अपना पहनावा बराबर हिन्दुओ का-सा ही रखते—मुसलमानी लिबास मे तो उन्हे लोगों ने इने-गिने मौकों पर ही देखा होगा। उनकी उम्र का बहुत कम लोगो को पता था। तिवारी से पूछने पर भी कोई सन्तोषजनक उत्तर न मिलता। स्वयं 'खाँ साहब' किसीके जिज्ञासा करने पर इतना ही कहते कि मेरी सेहत से—मेरे बालों से पूछ लो। सेहत काफी अच्छी थी और बालों की गवाही यह थी कि उनकी उनकी उम्र पचास से ऊपर न थी। पर तिवारी उनके खिजाब की तारीफ करते हुए कहते कि महबूब की दाढ़ी और जुल्फी का रंग काला देखते-देखते मेरे अपने बाल भी सफेद हो चले।[2]

---

१. 'सरस्वती' (वही, भाग १६, खण्ड २, संख्या ६, दिसम्बर, सन्, १९१५ ई०) पृ० ३५६।
२. 'हिमालय' (त्रैमासिक, अंक ४, सं० २००३ वि०), पृ० ६७-६८।

पाण्डेय पुण्यात्मा 'आत्मा'

आप सारन-जिला के 'बरेजा' नामक ग्राम के निवासी स्व० पं० श्रीरामाज्ञा पाण्डेय के पुत्र हैं। आपका जन्म स० १९५५ वि० (सन् १८९८ ई०) की मकर-संक्रान्ति (बुधवार) को हुआ था।[१] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। तदनन्तर, सन् १९१९ ई० मे आपने मुजफ्फरपुर ट्रेनिंग-स्कूल से वी० एम्० की परीक्षा पास की। सन् १९३१ ई० मे आपने हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग से, 'विशारद' की उपाधि-परीक्षा पास की। इन परीक्षाओ के बाद आपने जीवन-पर्यन्त शिक्षण-कार्य किया। हिन्दी के प्रचार-प्रसार मे आपका सहयोग सदा प्राप्त होता रहा। अखिलभारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के कार्य-कलापो मे भी आपने उत्साहपूर्ण योगदान किया था।[१]

आपकी साहित्य-साधना का आरम्भिक वर्ष सन् १९२३ ई० बतलाया जाता है। उसी वर्ष 'प्रेम' नामक पत्रिका मे आपकी पहली रचना प्रकाशित हुई थी। इस पत्रिका के अतिरिक्त आपको रचनाएँ 'वैशाली', 'आज', 'प्रताप', 'मतवाला', 'ग्राम्य-जीवन', 'यात्री', 'शाकद्वीपीय ब्राह्मण-बन्धु' आदि पत्र-पत्रिकाओ मे मुद्रित एवं प्रकाशित हुआ करती थी। आरम्भ मे आपने कुछ कविताएँ और निबन्ध भी लिखे थे। आपके द्वारा सम्पादित एक पुस्तक (जिसमें राष्ट्रीय कविताओ का संग्रह किया गया था) सन् १९३० ई० मे अँगरेजी सरकार द्वारा जब्त कर ली गई थी।[२] आपके द्वारा लिखित 'आत्म-सस्मरण', 'निबन्ध-निचय' ('नबन्ध-संग्रह) तथा (वेदान्त दर्शन) (दर्शनशास्त्र) नामक तीन पुस्तको की पाण्डुलिपि सन् १९३० ई० मे जीरादेई (सारन) से चोरी चली गई। आपने दो-तीन पुस्तकों का बँगला से हिन्दी मे अनुवाद भी किया है, जिनमे 'उमा' प्रमुख है। सम्प्रति, आप घर पर ही जीवन-यापन कर रहे हैं।

उदाहरण

(१)

मिश्रबन्धुओं ने अपने 'विनोद' की भूमिका में एक स्थान पर पर लिखा है कि "हिन्दी साहित्य के उत्पन्न करने का यश ब्रह्मभट्ट कवियो को प्राप्त है। सबसे प्रथम इन्हीं महाशयों ने नृप-यश-वर्णन के व्याज से हमारे साहित्य की अग पुष्टि की। यही क्यो, उसे जन्म ही दिया।" हमारे चरितनायक भी, सारन जिलान्तर्गत छपरा नगर से

---

१. श्रीपाण्डेय कपिल (शीतलपुर, बरेजा, सारन द्वारा दिनांक २५ मई, सन् १९५९ ई० को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।

२. सन् १९३३ ई० में श्रीसत्यव्रत शर्मा 'सुजन' की एक कविता-पुस्तक 'मौलसिरी' का प्रकाशन आपकी प्रकाशन-सस्था 'आत्मकुटीर' बरेजा, सारन से हुआ था।

प्रायः चौदह मील पश्चिम सरयू के पावन तट पर स्थित ताजपुर नामक ग्राम में, उसी ब्रह्मभट्ट-वंश में पैदा हुए थे। यद्यपि उनके जन्म के निश्चित सन्-संवत् का पता मैं नहीं पा सका, फिर भी उनके पुत्र अथवा उनसे परिचित जो सज्जन अभी जीवित हैं, उनके कथनानुसार, रामफल राय, यही उनका नाम था।

रामफल राय का जन्म भारतेन्दु के जन्म-काल के पाँच-सात वर्ष पूर्व ही हुआ था। जिस प्रकार उनके जन्म के निश्चित संवत् आदि का पता नहीं लगा, उसी प्रकार उनके बाल्यकाल, उनकी शिक्षा-दीक्षा आदि का भी हमें पता नहीं है। उनकी कविताओं का रचना-काल अनुमान से विक्रम संवत् १९२५ से १९४० तक का है। इसी काल के बीच उन्होंने हजारों कवित्त, सवैये, भजन, दोहे आदि लिखे। उनके काव्य-गुरु उनके अपने ही सम्बन्धी दरौल थाने के अन्तर्गत 'पँचबैनियाँ' गाँव के निवासी चन्द्रेश्वरी कवि थे। यह कहना कठिन है कि शिष्य गुरु की अपेक्षा अपनी प्रतिभा से आगे निकल चुका था अथवा पीछे ही रह गया, क्योंकि गुरु की रचनाओं का ज्ञान लेखक को एक तरह से शून्य के बराबर है। एक बार गुरु के एक कवित्त की समस्या शिष्य ने सुनी, उसी पर उन्होंने बत्तीस कवित्त लिखे। इसका नाम उन्होंने 'पावस बतीसी' रखा, जिसका परिचय आगे की पंक्तियों में मिलेगा।[1]

(२)

पं० श्यामजी शर्मा उन दिनों पटना (गर्दनीबाग) हाईस्कूल में संस्कृत के अध्यापक थे। हिन्दी और संस्कृत के प्रगाढ़ विद्वान् थे। बिहारप्रान्तीय आर्यसमाज के उपदेशकों में उनका अपना विशिष्ट स्थान था। ......पं० अखिलानन्दजी काव्यरत्न, जो आर्य-

---

१. 'यात्री' (साप्ताहिक, सन् १९६० ई० का नववर्षांक, १३ अप्रैल), पृ० १५।

समाज के धुरन्धर विद्वान् थे, जब आर्य-समाज को छोड़कर सनातन-धर्म-प्रतिनिधि-सभा में लौट आये तो बिहार की ओर आने पर प्रायः शर्माजी के यहाँ कुछ दिन वास किया करते थे और दोनों में खूब ही तर्क-वितर्क हुआ करता था। ......पं० श्यामनारायणजी से मैं परिचित था ...... वह छपरा-सस्कृत कॉलेज में आयुर्वेद के अध्यापक थे। उनकी व्यंगोक्तियां तीर की तरह सीधे मर्मस्थल को को पार कर जाती थी। ......मेरी छुट्टी के दिन प्रायः वही बीतते। गर्मी की झुलसती हुई दुपहरी, भादो की रिमझिम बूँदोंवाली सघन विभावरी और हेमन्त का हृदय हिला देनेवाला जाड़ा, उस दो-मजिल मकान की उत्तरवाली कोठरी मे मैंने बिताए है। दो-चार दिन ही नही, वरन् मेरे महीने के महीने वहाॅ साहित्य-चर्चा मे बीत गये है। वहाँ रहकर उस सरस वायुमंडल मे मेरे नीरस हृदय में भी सरसता का सचार हो आया है। वहां रहकर पीछे तो वैद्यजी को अधिक निकट से देखने का भी मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ है। उनकी कर्मठता देखकर हमारे जैसे नौजवानों को भी ईर्ष्या हो आती थी और हम आश्चर्य के साथ उनके परिश्रम पर घंटों बाते किया करते थे।[1]

पुण्यानन्द झा

आप पूर्णिया-जिला के 'जहानपुर' नामक ग्राम-निवासी पं० हितनाथ झा के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९४४ वि० (सन् १८९८ ई०) के प्रथम वैशाख को हुआ था।[2] आपकी आरम्भिक शिक्षा अररिया (पूर्णिया) हाइ स्कूल मे हुई। तत्पश्चात्, प्रयाग के कायस्थ पाठशाला से इण्ट्रेन्स करने के बाद आप वही के क्रिश्चियन-कॉलेज मे चले आये,

---

१. अधूरे 'आत्मसस्मरण' से। श्रीपाण्डेय कपिल (वही) से प्राप्त।

२. आपके द्वारा दिनांक ३ मई, सन् १९५६ ई० को प्रेषित और साहित्यक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार। देखिए, 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६७२ त) भी। आपके परिचय-लेखन में दिनांक १८ जून, सन् १९४३ ई० को पूर्णिया-जिला-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के मन्त्री श्रीप्रताप नारायण सिंह द्वारा प्रेषित सामग्री से भी सहायता ली गई है।

जहाँ से आपने इण्टरमीडिएट किया। आपने बी० ए० की डिग्री कलकत्ता-विश्व-विद्यालय से ली। अवसर आने पर आपने स्वदेशी-अन्दोलन मे भी भाग लिया। आगे चलकर आप बिहार-विधान-सभा के सदस्य हुए। आप पूर्णिया-जिला-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सभापति थे। पूर्णिया-कला-भवन के विकास मे आपका सक्रिय सहयोग रहा। पूर्णिया से प्रकाशित 'पूर्णिया-समाचार' आपके ही सम्पादन मे निकलता था। आपके द्वारा लिखित पुस्तकों मे 'मिथिला-दर्पण' (मैथिली) प्रमुख है। आपने 'पीतल की मूर्त्ति' के नाम से 'ब्राँज-स्टैचू' का अनुवाद भी हिन्दी मे किया था। आपकी अन्य अप्रकाशित पुस्तकाकार हिन्दी-रचनाओं मे—(१) एसेम्बली का अध्ययन और (२) मेरी जीवनी उल्लेखनीय हैं।

उदाहरण

(१)

रहु रहु सखिया सुनु जीव हाल,
हुक हुक प्राण करय एहि काल।
धाक धथूर जहर विष खाय,
ककरा कहब दुख डूबि मरि जाय।
कहलो न जाय जीया केर हाल,
लाज लगय मोरा कहत हवाल।
ना मोर लोक नहि परलोक,
थकित हृदय भेल ताहू पर शोक।
काकड़ि सन जीया मोर फाट,
धड़कय हृदय सूझत नहिं बाट।
नहिं भावे भोजन, नहि भावे बात,
हिरदय भरम सालय मोर गात।
लाय जर दुख देल मोहि बोरि,
जनम अकारथ भेल अब मोरि।[२]

---

२. आपके द्वारा प्रेषित सामग्री से।

पृथ्वीनाथ सिंह

आप पटना-जिला के 'तारणपुर' (पो० लखनपार) नामक स्थान के निवासी श्रीसाहबजादा सिंह के पुत्र थे। आपका जन्म सन् १८७३ ई० की श्रावण शुक्ल-सप्तमी को हुआ था।[१] आपकी आरम्भिक शिक्षा गाँव की पाठशाला में ही हुई। आगे चलकर आप बाँकीपुर के प्रसिद्ध 'खड्गविलास प्रेस' मे खजांची के पद पर नियुक्त हुए। उक्त पद पर आप लगभग बीस वर्षों तक रहे। आपकी दो पुस्तकों के प्रकाशित होने का उल्लेख मिलता है—(१) पुनपुन-माहात्म्य और (२) उद्भिज-विद्या।[२] ये दोनों उक्त खड्गविलास प्रेस से ही प्रकाशित हुई थी। आप सन् १९३७ ई० की भाद्र शुक्ल-पचमी को परलोकगामी हुए। आपकी रचना के उदाहरण हमें नही मिल सके।

फूलदेवसहाय वर्मा

आप सारन-जिला के 'कोंड़सर' नामक ग्राम के निवासी स्व० शिवसहाय लालजी के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९४५ वि० की माघ शुक्ल-दशमी (तदनुसार फरवरी, सन् १८८९ ई०) को हुआ था।[३] आपने सन् १९१० ई० मे गया जिला स्कूल से मैट्रिक की परीक्षा पास की। तदनन्तर, आपने पटना-कॉलेज से ऑनर्स के साथ बी० एस्-सी० की परीक्षा पास की और कलकत्ता-विश्वविद्यालय में आपका द्वितीय स्थान रहा। सन् १८१६ ई० मे आपने कलकत्ता-प्रेसिडेंसी-कॉलेज से एम्० एस्-सी० की परीक्षा उत्तीर्ण की तथा कलकत्ता-विश्वविद्यालय में पुनः द्वितीय स्थान रखा। आप विश्वविश्रुत वैज्ञानिक प्रफुल्लचन्द्र राय के छात्र रह चुके हैं। एम्० एस्-सी० पास करने के बाद बिहार-सरकार ने आपको अनुसन्धान-छात्रवृत्ति देकर बँगलोर के 'इण्डियन इंस्टिच्यूट ऑव साइंस' मे दो वर्षों तक अनुसन्धान कार्य के लिए भेजा। वहाँ से सन् १९१९ ई० मे आपने ए० आइ० आइ० एस्-सी० की उपाधि प्राप्त की। तत्पश्चात् सन् १९१९ से १९५१ ई० तक आप हिन्दू-विश्वविद्यालय (वाराणसी) मे कार्बनिक रसायन और औद्योगिक रसायन के प्राध्यापक तथा 'कॉलेज ऑव टेक्नोलॉजी' के

---

१. श्रीपारसनाथ सिंह (दैनिक 'आज', वाराणसी) से दिनांक ५ अगस्त, सन् १९५९ ई० को प्राप्त और बिहार के साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।

२. प्रकाशन-काल सन् १९०६ ई०।—देखिए, 'हिन्दी-पुस्तक-साहित्य' (वही), पृ० ५०५।

३. आपके द्वारा दिनांक ७ दिसम्बर, सन् १९५५ ई० को प्रेषित एवं साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सूचना के आधार पर। 'मिश्रबन्धुविनोद' (वही, पृ० ५१६) में आपका जन्मकाल सं० १९४८ वि० बतलाया गया है। उक्त सामग्री के अतिरिक्त आपके परिचय-लेखन में 'बिहार-विभाकर' (वही, पृ० ४१४), 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६७), 'हिन्दीसेवी संसार' (वही, पृ० १५२), 'बिहार-शब्दकोष' (वही, पृ० ६७०) तथा बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के वार्षिक कार्य-विवरण : सन् १९५२-५३ ई० और परिषद् के पंचम वार्षिकोत्सव (२५ फरवरी, सन् १९५६ ई०) के पुरस्कार-वितरण के समय पठित-विवरण से भी सहायता ली गई है।

प्रिन्सिपल रहे। वहाँ से सन् १९५१ ई० के नवम्बर मे आपने अवकाश ग्रहण किया। सन् १९५२ से १९६१ ई० तक आप बिहार-विश्वविद्यालय के कॉलेज-निरीक्षक रहे। सम्प्रति, आप काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा से प्रकाशित होनेवाले बृहद् हिन्दी-विश्वकोष के सम्पादकों मे है।

हिन्दू-विश्वविद्यालय में आप कई फैकल्टियो, सिण्डीकेट आदि के सदस्य भी रह चुके हैं। वहाँ आप फैकल्टी ऑव सायन्स और फैकल्टी ऑव टेक्नोलॉजी के 'डीन' भी थे। आप बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के आरा और गया-अधिवेशनों में विज्ञान परिषद् के सभापति भी रह चुके है। अखिलभारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के शिक्षण-अधिवेशन (सन् १९३८ ई०) की 'विज्ञान-परिषद्' के सभापति-पद को भी आपने अलकृत किया है। सन् १९४६ ई० मे, अमेरिका मे संसार के २५ हजार प्रमुख व्यक्तियो की एक जीवनी-पुस्तक छपी, जिसके विज्ञान-विभाग मे आपका भी जीवन-वृत्त छपा है।

आपने सन् १९१० ई० से ही हिन्दी में लिखना आरम्भ किया। आपके प्रारम्भिक लेख 'विज्ञान' और 'बालक' में प्रकाशित हुए। फिर, 'अनेक निबन्ध 'स्वार्थ', 'मर्यादा' प्रभा', 'माधुरी', 'सरस्वती', 'शारदा', 'आज' आदि में प्रकाशित हुए। आज भी देश-विदेश की वैज्ञानिक पत्र-पत्रिकाओं में आपके अनेक अनुसन्धानपूर्ण निबन्ध प्रकाशित होते रहते हैं। आप एक कुशल सम्पादक भी है। 'गगा' के प्रसिद्ध 'विज्ञानाक' (सन् १९३४ ई०) का सम्पादन आपने ही किया था। काशी-हिन्दू-विश्वविद्यालय की पत्रिका मे लगभग पच्चीस वर्षों तक आप सह-सम्पादक भी थे। आपके द्वारा लिखित एवं सम्पादित उनतीस-तीस हिन्दी ग्रन्थ हैं, जिनमे कुछ के नाम इस प्रकार है—

(१) प्रारम्भिक रसायन (दो भागों में)[1], (२) साधारण रसायन (दो भागों में)[2], (३) हिन्दी वैज्ञानिक शब्दावली (रसायन)[3], (४) मिट्टी के बरतन[4], (५) अँगरेजी हिन्दी-वैज्ञानिक-कोष (रसायन, दो खण्डो मे)[5], (६) प्रागारिक रसायन[6], (७) रसायन, प्रवेशिका[7] (८) अकार्बनिक रसायन[8], (९) कार्बन रसायन[9], (१०) सामान्य विज्ञान[10], (११) विज्ञान

१. दोनों भागों का प्रकाशन-काल क्रमशः सन् १९२८ ई० और सन् १९३० ई०। प्र० नन्दकिशोर ब्रदर्स, बनारस। इनके संशोधित और परिवर्धित सस्करण सन् १९४२ ई० में चौखम्बा सस्कृत-सीरिज, बनारस से प्रकाशित हुए।

२. दोनों भागों का प्रकाशन-काल सन् १९३२ ई०। प्र० बनारस-हिन्दू-यूनिवर्सिटी।

३. प्रकाशन-काल सन् १९३० ई०। प्र० नागरी-प्रचारिणी-सभा, काशी।

४. प्रकाशन-काल सन् १९३९ ई०। प्र० विज्ञान-परिषद्, इलाहाबाद।

५. प्रकाशन-काल क्रमशः सन् १९४८ ई० और सन् १९५० ई०। दोनों खण्डों का प्रकाशक भारतीय हिन्दी-परिषद्, इलाहाबाद।

६. प्रकाशन-काल सन् १९४८ ई०। प्र० नन्दकिशोर ब्रदर्स, बनारस।

७. प्रकाशन-काल और प्रकाशक वही।

८. प्रकाशन-काल सन् १९५१ ई०। प्र० वही।

९. प्रकाशन-काल सन् १९५२ ई०। प्र० श्रीअजन्ता प्रेस, पटना।

१०. प्रकाशन-काल और प्रकाशक वही।

और वैज्ञानिक[१], (१२) रबर[२], (१३) ईख और चीनी[३], (१४) पेट्रोलियम[४], (१५) प्लास्टिक[५], (१६) विटामिन और आहार[६], (१७) छात्र-जीवन, (१८) कोयला[७], (१९) खाद और उर्वरक, (२०) कार्बोहाइड्रेट और ग्लाइकोसाइड, (२१) लुगदो और कागज, (२२) लाख और चपडा, (२३) मेटेरिया मेडिका का अनुवाद[८], (२४) हिन्दी विश्वकोष (सात-आठ खण्डो मे)।[९]

उदाहरण

(१)

इक्षु से इक्ष्वाकु का कोई सम्बन्ध नही है; पर कुछ कथाओ मे इन दोनों में सम्बन्ध स्थापित करने की चेष्टाएँ हुई है। मनु के पुत्र इक्ष्वाकु एक बडे पराक्रमी राजा हो गये है। क्षत्रियो के सूर्यवश के वे संस्थापक माने जाते है। इक्ष्वाकु की सातवी पीढ़ी में त्रिशकु एक राजा हुए। त्रिशंकु ने सदेह स्वर्ग जाने की वसिष्ठ मुनि से प्रार्थना की। वसिष्ठ मुनि ने ऐसा करना अस्वीकार कर दिया। इसपर त्रिशंकु वसिष्ठ से बहुत रुष्ट हो गये और भला-बुरा कहने लगे। इसपर वसिष्ठ ने उन्हें श्राप देकर चाण्डाल बना दिया। अब त्रिशंकु विश्वामित्र के पास गये। विश्वामित्र और वसिष्ठ में उस समय अनबन थी।

---

१. सम्पादन। प्रकाशन-काल सन् १९५३ ई०। प्र० नोवेल्टी ऐण्ड कम्पनी, पटना।

२ प्रकाशन-काल सन् १९५५ ई०। प्र० बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना। इसपर ७०० रु० का पुरस्कार उत्तरप्रदेश-सरकार से प्राप्त हुआ है।

३. प्रकाशन-काल और प्रकाशक वही। इसपर भारत-सरकार से दो सहस्र रुपये का, उत्तरप्रदेश-सरकार से एक सहस्र रुपये का, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् से एक सहस्र रुपये का और अखिल-भारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन से 'मगलाप्रसाद-पारितोषिक' एवं काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा से डॉ० छन्नूलाल पारितोषिक तथा रौप्य-पदक प्राप्त हुए हैं।

४. प्रकाशन-काल स० २०१४ वि०। प्र० बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना। इसपर ५०० रु० का पुरस्कार उत्तरप्रदेश-सरकार से प्राप्त हुआ है।

५. प्र० अशोक प्रेस, पटना। इसपर ३०० रुपये का पुरस्कार उत्तर-प्रदेश-सरकार से प्राप्त हुआ है।

६ प्र० हिन्दी पुस्तक-भण्डार, पटना।

७ प्रकाशन-काल सन् १९५८ ई०। प्र० प्रकाशन-शाखा, सूचना-विभाग, उत्तरप्रदेश।

८. ह्वेल-ह्वाइट की मेटेरिया मेडिका का हिन्दी-अनुवाद।

९. इन ग्रन्थों के अतिरिक्त ५० से अधिक मौलिक अनुसन्धानात्मक स्फुट निबन्ध हिन्दी, अँगरेजी तथा जर्मन-भाषाओं में अनेक जर्नलों, 'जर्नल ऑव इंडियन केमिकल सोसाइटी', 'जर्नल ऑव अमेरिकन केमिकल सोसाइटी', 'जर्नल ऑव बायोकेमिकल सोसाइटी', 'विज्ञान' आदि में प्रकाशित हुए हैं।

विश्वामित्र ने यज्ञ कराकर त्रिशंकु को सीधे स्वर्ग भेजना चाहा। इन्द्र ने चाण्डाल त्रिशंकु को स्वर्ग आते देखकर उन्हें वहाँ से ढकेल दिया। त्रिशंकु वहाँ से गिरे। त्रिशंकु को गिरते देख विश्वामित्र ने तपोबल से मार्ग में ही उन्हें रोककर उनके लिए एक नये स्वर्ग की सृजना की। इस नये स्वर्ग में ईख और अन्य सुहावने पेड़-पौधे उपजते थे। इस नये स्वर्ग की सृष्टि से इन्द्रदेव घबराये। कुछ समय के बाद विरोध की शान्ति हो गई और वे सन्तुष्ट हो गये। विश्वामित्र के इस महान् कार्य के स्मारक-स्वरूप इन्द्र ने मनुष्यों के लिए ईख को पृथ्वी पर फेंक दिया।[1]

(२)

आधुनिक सभ्यता का रबर एक आवश्यक प्रतीक है। संसार की बड़ी उपयोगी वस्तुओं में रबर का स्थान बहुत ऊँचा है। हमारे जीवन से यदि रबर आज पूर्णतया हटा लिया जाय तो आधुनिक सभ्यता अन्धकार-युग में चली जायगी, इसमें कोई सन्देह नहीं। रबर की आवश्यकता शान्तिकाल और युद्धकाल में समान रूप से होती है। रबर के बने सामानों की संख्या और उपयोगिता इतनी बढ़ गयी है कि आज हम यह सोच ही नहीं सकते कि किसी समय में रबर के सामानों का बिलकुल अभाव था और उनके बिना ही हमारा सारा काम-काज सुचारु रूप से चलता था। रबर की महत्ता का पूरा अनुभव हमें गत विश्वयुद्ध में हुआ, जब कुछ देशों को रबर का मिलना बन्द हो गया था। रबर के बने विभिन्न सामानों की संख्या आज पैंतीस हजार तक पहुँच गई है। केवल हमारे प्रतिदिन व्यवहार के अथवा युद्ध के ही सामान रबर के नहीं बनते, वरन् अनेक उद्योग-धन्धों के विकास में भी रबर का आज पूरा हाथ है।[2]

---

१. 'ईख और चीनी', (फूलदेवसहाय वर्मा सं० २०१२ वि०), पृ० ३-४।
'रबर' (फूलदेवसहाय वर्मा, सं० २०११ वि०), पृ० १।

(३)

ठोस ईन्धन के स्थान में द्रव ईन्धन का उपयोग आज बहुत बढ़ रहा है। द्रव ईन्धन सरलता से गैसों में परिणत किया जा सकता है। वस्तुतः गैसों के रूप में ही सब प्रकार के ईन्धन जलते है। अभ्यन्तर इंजन में भी द्रव ईन्धन का उपयोग हो सकता है। इंजनों के शीघ्र चालू करने के लिए द्रव ईन्धन ही उपयुक्त होता है। जहाँ चंचलता अर्थात् सरल बहाव, त्वरण और तेज चाल की आवश्यकता होती है,वहाँ द्रव ईन्धन ही उपयुक्त और श्रेष्ठ समझा जाता है। पर द्रव के रखने के लिए विशेष पात्रों की आवश्यकता होती है। समुद्र पार इसका ले जाना तो और भी कठिन होता है। इसके लिए अब विशेष प्रकार के टैंकर जहाज बने हैं। द्रव ईन्धन आज ।वशेष रूप से पेट्रोलियम से प्राप्त होता है। पेट्रोलियम के सिवा कुछ अन्य पदार्थों से भी द्रव ईन्धन प्राप्त करने की सफल चेष्टाएँ हुई है। कोयले से भी द्रव ईन्धन प्राप्त करने की सफल चेष्टाएँ हुई है और आज कोयले से कृत्रिम पेट्रोलियम बनता है।[१]

(४)

कोयला और कोयल दोनों संस्कृत के 'कोकिल' शब्द से निकले हैं। कोकिल का एक अर्थ होता है 'अंगारा'। अंगारा का अर्थ है 'दहकता हुआ कोयला।' ...खनिज कोयले का अधिक उपयोग ईन्धन में होता है। बायलर में इसे जलाकर भाप बनाते है। घरेलू जलावन में कोयले अथवा इसके परिष्कृत रूप 'कोमल कोक' का उपयोग बहुत अधिकता से होता है और इसके उपयोग का क्षेत्र दिन-दिन बढ़ रहा है। 'कठोर कोक' का उपयोग धातु-निर्माण में होता है। कोयले के चूर्ण का उपयोग बिजली उत्पन्न करने में होता है। ऐसे चूर्ण से ही आज ईंटें पकाई जाती है।

---

१. 'पेट्रोलियम' (फूलदेवसहाय वर्मा, सं० २०१४ वि०), पृ० ३।

रेलगाड़ियों और जहाजो के इंजन में यही कोयला जलता है। बोकारो (हजारीबाग जिले में) के थर्मल-पावर-स्टेशन में पचास-पचास किलोवाट की मशीनें लगी है, जिनमें निकृष्ट कोटि के कोयले के चूर्ण से बिजली उत्पन्न होती है। कोयले से आज पेट्रोलियम बनता है। ऐसे पेट्रोलियम से पेट्रोल ईथर, पेट्रोल, डीजेल तेल, किरासन, स्नेहक तेल और मोम प्राप्त हो सकते है।[1]

बजरंगदत्त शर्मा

आप गया-जिला के 'मुरारपुर' नामक स्थान के निवासी पं० मोहन तिवारी के पुत्र है। आपका जन्म सं० १९४४ वि० (सन् १८८७ ई०) की वैशाख शुक्ल-नवमी को हुआ था।[2] आपके पूज्य पिताजी का देहान्त आपकी बाल्यावस्था मे ही हो गया। जब आप तेरह वर्ष के हुए, तब आपकी माताजी चल बसी। इन सब कारणो से आपका विद्यार्थी-जीवन बड़ा ही संकटमय रहा और आपको स्कूल की पढाई छोड़ देनी पडी। आगे चलकर क्रमश: टाउन एच्० ई० स्कूल तथा श्रीब्रजभूषण सस्कृत-विद्यालय से आपने उपनिषद्, वेदान्त और योगशास्त्र की शिक्षा प्राप्त की। विद्यार्थी-जीवन समाप्त करने के बाद सन् १९१७ ई० मे आप गया के मॉडल एच्० ई० स्कूल के अध्यापक नियुक्त हुए। फिर, लगभग तीन वर्षों के बाद वहीं एक लोकसेवा-समिति की स्थापना कर आप सार्वजनिक जीवन व्यतीत करने लगे। इसी समय, राजनीतिक संस्थाओ मे कार्य करते हुए असहयोग-आन्दोलन मे भाग लेने के कारण आप जेल गये। आप कई वर्षों तक बिहार प्रान्तीय हिन्दू महासभा के प्रचारक और प्रधान मन्त्री थे।

आप 'माणिक-मण्डली' (गया) के एक प्रमुख सदस्य एवं समस्य-पूर्तिकार थे। सन् १९२३ ई० मे आपके ही सह-प्रयास से हिन्दी-साहित्य-सभा की स्थापना हुई थी। आपकी गणना आलोचना-साहित्य के प्रगतिशील लेखको मे होती है। आप हास्य-रस के भी एक सुलेखक थे।[3] आपकी पुस्तकाकार रचनाओ मे प्रमुख के नाम इस

---

१. 'कोयला' (फूलदेवसहाय वर्मा, सं० १९५८ ई०), पृ० १ और ४।

२ 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० १०९। आपके परिचय-लेखन में 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६४५) की सामग्री का भी उपयोग किया गया है।

३. स्व० आचार्य शिवपूजन सहायजी ने दिनांक १९ सितम्बर, सन् १९६२ ई० की अपनी एक टिप्पणी में लिखा है कि—"शर्माजी मेरे सुपरिचित मित्रों में थे। परम विनोदी और हँसोड़ थे। बड़े मस्त-मौला और शाहखर्च। पं० ईश्वरीप्रसाद शर्मा जब गया में 'लक्ष्मी' के सम्पादक थे, तब इनसे परिचय हुआ, सन् १९१५ ई० में। हिन्दी के बहुत ही ओजस्वी वक्ता थे।"

प्रकार हैं—(१) मिथ्या-कलंक, (२) विजयादशमी, (३) दिवाली में दिवाला, (४) होली में हजामत, (५) प्यारे-प्यारी-संवाद और (६) मैं दुखी क्यों हूँ। आप सन् १९५८ ई० में गया में ही विष्णुपद में लीन हो गये।

उदाहरण

(१)

स कायोत्पादक शक्तिवेष्टित, प्रयोजनसिद्धिकर्त्ता, मनोवांछित फलप्रद यह 'योग' शब्द एक ही दृष्टिगोचर होता है, जिसका अर्थ मेल-मिलाप का एकत्र होना है। इसके गुण और प्रभाव की व्याख्या करने में वाणी की वाणी निर्वाण-पद को प्रस्थान करे तो आश्चर्य नहीं। यह शब्द अपने में कल्पवृक्ष के समान गुण तथा प्रभाव रखकर संसार के चराचर जीवों पर उपकार की मूसलाधार वृष्टि कर सभों की मनोकामना पूर्ण कर रहा है। इस परम रम्य जगत मे हम अपनी मनस्थित नेत्र-किरणों को अनुभव प्राप्त्यर्थ जिस ओर प्रेसित करते है उसी ओर प्रत्येक जीवधरियों की चित्तोत्थित कामनाओं की सिद्धि उक्त शब्द की विद्यमानता पर ही निभर पाते है।[१]

बदरीनाथ झा 'कविशेखर'

आप दरभंगा-जिला के 'सरिसबपाही' नामक ग्राम के निवासी पं० विद्यानाथ झा के पुत्र है। आपका जन्म सन् १८९३ ई० को माघ शुक्ल-द्वितीया (बृहस्पतिवार, १२ जनवरी) को हुआ था।[२] लगभग आठ वर्ष की अवस्था से आपने संस्कृत-भाषा का अध्ययन प्रारम्भ किया और २३ वर्ष की उम्र तक व्याकरण, काव्य, सांख्य, मीमांसा आदि शास्त्रों का अध्ययन समाप्त कर लिया। सन् १९१५ ई० मे व्याकरण-विषयक दरभंगा-राजकीय

---

१. 'लक्ष्मी' (मासिक, भाग ८, संख्या ३, सितम्बर, सन् १९१० ई०), पृ० ८५।

२. आपके द्वारा दिनांक १ सितम्बर, सन् १९५८ ई० को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार। आपके परिचय-लेखन में बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के वार्षिक कार्य-विवरण (अप्रैल, सन् १९६१ ई० से मार्च, सन् १९६२ ई०, पृ० ४५-४६) से भी पर्याप्त सहायता ली गई है।—देखिए 'History of Maithily Literature' (वही, vol, II), P. 71, 86, 87 and 94.

धौत-परीक्षा मे आप सर्वप्रथम हुए। आपने पं० श्रीरविनाथ झा, पं० श्रीमार्कण्डेय मिश्र, महामहोपाध्याय पं० श्रीचित्रधर मिश्र आदि विद्वानो से विविध शास्त्रों की शिक्षा प्राप्त की थी। सन् १९१७ ई० की पहली जनवरी को मुजफ्फरपुर के राजकीय धर्म-समाज संस्कृत-महाविद्यालय में, आप संस्कृत-साहित्य के प्रधानाध्यापक-पद पर नियुक्त हुए। सन् १९२१ ई० मे आपकी काव्य-प्रतिभा से प्रभावित होकर काशी के 'भारतधर्म महामण्डल' ने आपको 'कविशेखर' की उपाधि से विभूषित किया। सन् १९३९ ई० मे विद्वत्समिति (अयोध्या) ने आपको 'साहित्यमहोदधि' की उपाधि भी दी। मुजफ्फरपुर के राजकीय संस्कृत-विद्यालय में आपने लगभग ३१ वर्षों तक कार्य किया। आपकी साहित्य-सेवा के परिणाम स्वरूप सन् १९६२ ई० के मार्च मे बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् ने आपको डेढ सहस्र मुद्राओं के 'वयोवृद्ध-साहित्यिक-सम्मान-पुरस्कार' से विभूषित किया था। संस्कृत मे आपके द्वारा लिखित अनेक मौलिक एवं सम्पादित ग्रन्थ प्रकाशित मिलते है।[1] हिन्दी से सम्बद्ध आपकी इन पुस्तको की चर्चा की जा सकती है—(१) संस्कृत-मिथिला-कोष[2], (२) एकावली-परिणय[3] और (३) मैथिली गीत-रत्नावली[4]। आपके द्वारा मैथिली मे लिखित एक ग्रन्थ 'काव्यविवेक' अभी तक अप्रकाशित ही है। खडीबोली एव मैथिली मे आपके द्वारा रचित स्फुट गद्य-पद्य-रचनाएँ भी मिलती हैं।

उदाहरण

(१)

दिन दिन दोगुन शिशुक बढलो पुन, शशिमण्डल सम देह।
परिजन पुरजन बन्धुवर्ग सँ, परिचय प्रचुर सिनेह॥

---

१ मौलिक ग्रन्थों के नाम ये हैं-(१) प्रमोदलहरी, (२) राजस्थान-प्रस्थानम् (खण्डकाव्य), (३) भागवत-प्रदीप (आलोचना), (४) राधा-परिणयम् (महाकाव्य), (५) अन्योक्तिसाहस्री (काव्य), (६) कश्यपकुल-प्रशस्तिः (खण्डकाव्य), (७) साहित्य-मीमांसा (छन्द शास्त्र), (८) श्लोकाश्लोकशतकम् (काव्य), (९) संस्कृतगीता-रत्नावली (गीतकाव्य), (१०) गुणेश्वरचरितचम्पू (जीवनी), (११) कार्त्तिकशुक्ल-द्वितीयाकृत्य (धर्मशास्त्र)। सम्पादित ग्रन्थ-(१) एकोद्दिष्ट-सारिणी (म० म० रत्नपाणि झा-कृत, धर्मशास्त्र), (२) व्यञ्जनावाद (नैयायिक यदुनाथमिश्र-कृत काव्यशास्त्र), (३) रस-पारिजात (महाकवि भानुनाथ मिश्र-कृत, काव्य), (४) रसतरंगिणी (म० म० रामानन्द ठाकुर-कृत, काव्यशास्त्र), (५) अलंकार-मंजरी (महाकवि वेणीदत्त झा-कृत, काव्यशास्त्र), (६) काव्यप्रकाश-विवरणम् (म० म० प० गोकुलनाथ झा-कृत 'काव्यप्रकाश पर भाष्यसहित)। भाष्य—(१) सुरभि ('रसमंजरी' की टीका), (२) दीधिति-(ध्वन्यालोक-भाष्य), (३) चन्द्रिका ('रसगंगाधर'-भाष्य)। अप्रकाशित—काव्य-कल्लोलिनी (संग्रह-काव्य)।

२. इसका कुछ अंश दरभंगा से प्रकाशित, 'मिथिला-मिहिर' (सन् १९४२ ई०) में छपा था।

३. 'देवीभागवत' के षष्ठ अध्याय पर आधृत। १५ सर्गों में लिखित। (मैथिली-महाकाव्य, राजप्रेस, दरभंगा से सन् १९४२ ई० में प्रकाशित)।

४. विभिन्न कवियों की रचनाओं का संग्रह। समाज प्रेस, दरभंगा से सन् १९५२ ई० में प्रकाशित।

कहुखन दैत ठेहुनिआँ बालक, ओ माइक लग जाथि।
जहिना खूजल वत्स तृषा सँ, गाइक निकट पड़ाथि॥
जननिक कोर पैसि झट हठ सँ, अचल बाल उघारि।
पोउल दूध कमलदृग मुखबिधु, हँसइत तनिक निहारि॥[1]

(२)

माधव हमर कतए चल गेल। दुसह शिशिर ऋतु उपगत भेल॥
मलिन रजनि जनि लखि दुखमोर। हरखि बढलि बिनु नन्द-किशोर॥
अबला बिपति अधिक अबधारि। सुमन सरोज मगन भेल बारि॥
सून सेज अति सतवए शीत। बिरहिनि यामिनि युगसम बीत॥
हरि हरि हरि तनि करथु सनाथ। मन गुनि भन कवि बदरीनाथ'॥[2]

(३)

के हमरो दुख कहतनि रे, तनि मधुपुर जाए।
असन वसन घर आङ्गन रे, तनि बिनु न सोहाए॥
की गोकुल गुन आगरि रे, नहि नागरि नारि।
मनमोहन मन मोहल रे, कूबड़ि सुकुमारि॥
सुरतरुवर बुझि सेवल रे, कएलहुँ कत आस।
लखि विषमय फल मानस रे, भय गेल उदास॥
ऊधव! अचल भुवन भरि रे, ई अपयश भेल॥
माधव बिनु अपराधहि रे, राधहिँ तजि देल॥
धैरज धए रहु गुणवति रे, भन 'बदरीनाथ'।
रस बुझि रसिक रमेश्वर रे, मिथिला महिनाथ॥[3]

---

१. 'A History of Maithily Literature' (वही vol. II), P. 87.
२. 'मैथिली-गीत-रत्नावली' बदरीनाथ झा, स० २००६ वि० पृ० (६३)।
३. वही।

(४)

लगिचाएल दिन सावधान भए, आवहुँ करह विचार, हे मन।
दुर्लभ मानव जनम बितओलह, विरचि प्रपञ्च हजार।
विषय भोगरत रहि पओलह नहि, तृष्णा सागर पार॥
जएबह जतए ततए नहि रहतहु, एकओ गोट चिन्हार।
भीषण यमकिङ्कण-भयवश भए, करवह कोन प्रकार॥
वनिता सन्तति बन्धु विभव नहि करतहु किछु उपकार।
पएबह फल शुभ अशुभ यथोचित, निज कर्मक अनुसार॥
भरमि भरमि व्याकुल भए मरबह, छुटतहु नहि संसार।
'बदरीनाथ' सुमिरि राधाहरि, तरह अगम भवधार॥[1]

(५)

वर्त्तमान 'बिहार' प्रदेश—जो प्राचीन अंग, मगध, मिथिला और करुष नामक देशों के सम्मिश्रण से बना हुआ है—प्राचीन संस्कृत-साहित्य में, विशेषतः संस्कृत-काव्यों में, बहुत छानबीन करने पर भी, नही पाया जाता है। हाँ, 'विहार' शब्द बौद्ध-काल में, बौद्धमतानुयायियों के देवालय-अर्थ में, व्यवहृत होने लगा था। ....यह प्रदेश बुद्धदेव का लीलास्थल होने के कारण, बौद्ध, मन्दिरों से परिपूर्ण रहा होगा। इसीलिए इसका नाम 'बिहार' पड़ा। इस आधुनिकता को देखकर संस्कृत-कवियों ने प्रायः इस संज्ञा की उपेक्षा की है। फिर भी इस प्रदेश के अवान्तर जिन देशों तथा स्थानों की चर्चा संस्कृत-काव्यों में मिलती है, उसी के आधार पर इस अल्पकाय लेख की कल्पना की गई है।[2]

१. 'मैथिली-गीत-रत्नावली' (वही), पृ० ६४।
२. 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही), पृ० २३१।

बदरीनाथ वर्मा

आप गया-जिला के 'अबगील' नामक ग्राम के निवासी श्रीकालीचरणजी के पुत्र हैं। आपका जन्म सन् १८८९ के १० नवम्बर को हुआ था।[१] सन् १८९६ ई० मे एक मौलवी से आपने उर्दू पढना आरम्भ किया था। उसके बाद आप राँची चले आये, जहाँ आपके पिताजी पुलिस-विभाग मे काम करते थे। वहाँ के नार्मल स्कूल मे सम्मिलित मिड्ल स्कूल से सन् १८९८ ई० मे आपने मिड्ल की परीक्षा पास की। फिर, आपने सन् १८९९ ई० मे राँची-जिला स्कूल मे नाम लिखवाया और सन् १९०६ ई० मे उसी स्कूल से प्रथम श्रेणी मे इण्ट्रेंस की परीक्षा पास की। उस समय सम्पूर्ण कलकत्ता-विश्वविद्यालय के परीक्षार्थियो मे तृतीय स्थान प्राप्त कर आपने उच्च वर्ग की छात्रवृत्ति प्राप्त की थी। उसके बाद, हजारीबाग के सेण्ट-कोलम्बा कॉलेज से सन् १९०८ ई० मे आपने एफ्० ए० और फिर कलकत्ता के प्रेसिडेंसी कॉलेज से सन् १९१० ई० मे बी० ए० ऑनर्स की परीक्षा पास की। सन् १९१२ ई० मे पटना कॉलेज से आप अँगरेजी मे एम्० ए० हुए। तत्पश्चात् दो वर्षो तक आप लॉ का लेक्चर पूरा करने मे लगे रहे। लेक्चर पूरा कर आप उसकी परीक्षा न दे सके। कलकत्ता म रहते हुए, सन् १९१३ ई० मे आप वहाँ के हिन्दी-दैनिक 'भारतमित्र' मे सहायक सम्पादक का कार्य किया करते थे। सन् १९१४ ई० मे आपको पटना के बी० एन्० कॉलेज मे प्रोफेसरी मिल गई। वहाँ आप सन् १९२० ई० तक रहे। सन् १९२० ई० मे असहयोग-आन्दोलन मे सक्रिय सहयोग देकर बिहार-विद्यापीठ (सदाकत-आश्रम), पटना के प्रधानाचार्य एव पीठ-स्थविर (रजिस्ट्रार) हुए। सन् १९१५ से २० ई० तक 'बोर्ड ऑव एग्जामिनर्स' और 'फेकल्टी ऑव आर्ट्स' के आप माननीय सदस्य रह चुके हैं। आप बिहार शिक्षा-पुनर्गठन-समिति, हिन्दुस्तानी-कमिटी और बेसिक एडुकेशन-बोर्ड के भी माननीय सदस्य रह चुके हैं। बिहार मे बुनियादी-शिक्षा के प्रवर्त्तन का श्रेय आपको ही दिया जाता है। पटना-विश्वविद्यालय के 'बोर्ड ऑव स्टडीज' के हिन्दी-विभाग के प्रधान-पद को भी आपने सुशोभित किया है। शिक्षा-सम्बन्धी सुधारों मे आपकी बडी गहरी दिलचस्पी रही है। काँगरेस से सम्बन्ध रखनेवाली अनेक सस्थाओ और शाखा-सभाओ के साथ आपका घनिष्ठ सम्पर्क रहा है। आप अनेक वर्षों तक बिहार काँगरेस-कमिटी के कोषाध्यक्ष और उसका कार्यकारिणी समिति के सदस्य थे। आप समय-समय बिहार-सेवा-समिति के क्रमश: मन्त्री, उपाध्यक्ष और अध्यक्ष हुए। सन् १९२२ ई० मे गया-काँगरेस के अवसर पर स्वयंसेवको के प्रधान नायक आप ही बनाये गये थे। सन् १९४२ ई० की प्रसिद्ध क्रान्ति मे लगभग तीन वर्षों तक आप कारागृह मे रहे। आपकी गणना महात्मा गान्धी के कट्टर अनुयायियों मे होती है। अपनी सेवाओ के परिणामस्वरूप १६ अप्रैल, सन् १९४६ से १९५७ ई० तक आप बिहार-सरकार के शिक्षा-मन्त्री पद पर रहे। आपके

---

१. 'बिहार-विभाकर' (वही), पृ० ३८६। आपके परिचय-लेखन में उक्त ग्रन्थ में प्रस्तुत सामग्री के अतिरिक्त 'जयन्ती स्मारक ग्र०' (वही, पृ० ६४१), 'बिहार-अब्दकोश' (वही, पृ० ६७१) तथा बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् की उद्घाटन-समारोह-पुस्तिका में आई सामग्री से भी सहायता ली गई है।

शिक्षा मन्त्रित्व-काल मे ही बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् की परिकल्पना को साकार रूप मिला था और आपही उसके प्रथम सभापति हुए थे।

आपने पत्रकारिता का प्रथम अनुभव 'भारतमित्र' (कलकत्ता) मे, सम्पादन-कार्य करते हुए प्राप्त किया ही था, सन् १९२७ से ३२ ई० तक आप पटना के राष्ट्रीय साप्ताहिक 'देश' के प्रमुख सम्पादक भी रहे। आपने कई वर्षों तक पटना के प्रसिद्ध अँगरेजी दैनिक 'सर्चलाइट' के संयुक्त सम्पादक एव मुख्य अग्रलेख-लेखक के रूप मे भी कार्य किया। बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के शोध-प्रधान त्रैमासिक मुखपत्र 'साहित्य' का भी आपने अनेक वर्षों तक सम्पादन किया है। आपकी गणना 'साहित्य' के संस्थापको मे होती है।

एक सफल राजनेता एव पत्रकार के अतिरिक्त आपकी प्रसिद्धि एक राष्ट्रभाषानुरागी लेखक के रूप मे भी है। सन् १९२७-२८ ई० मे बिहार हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के आठवा महाधिवेशन (गया) के सभापति आप ही चुन गये थे। सन् १९४० ई० मे भी सम्मेलन के सत्रहवें अधिवेशन के स्वागताध्यक्ष भी आप ही थे और आपने अनेक वर्षों तक सम्मेलन के उपाध्यक्ष-पद को भी अलकृत किया है।

आपके द्वारा हिन्दी मे लिखे अनेक स्फुट लेख पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित मिलते है। प्रकाशित पुस्तको मे प्रमुख है—(१) समाज तथा (२) हिन्दी और उर्दू।

उदाहरण

(१)

आज जहाँ-कही जाओ—शहरों में या देहातों में, प्रशस्त राजपथ पर अथवा संकीर्ण पगडंडिया पर, शस्य-श्यामल उर्वर-भूमियों, रेगिस्तानो या बियाबानो मे, पहाड़ो की ऊँची चोटियों पर या नदियो की नीची तलहटियों मे—सभी जगह हिन्दुस्तान में 'महात्मा गाँधी की जय' की ध्वनि तुम्हारे कानों मे सुनाई पड़ेगी। अवसर कोई भी हो, कोई राजनीतिक सभा हो रही हो या समाज-सुधार की बातें छिड़ी हों; किसानों की दु.ख भरी अवस्था की चर्चा चलती हो या मजदूरो और श्रमजीवियों की दयनीय दशा की गाथा गाई जा रही हो, साम्प्रदायिक झगडो का निपटारा सोचा जाता हो या शिक्षा के प्रसार और उसकी प्रणाली को अधिक उपयोगी, अधिक जीवनानुकूल बनानें के प्रश्न पर विचार होता हो; जब कभी और जिस सम्बन्ध में भी दस-पाँच या अधिक आदमियों का जमघट दिखाई पड़ेगा, यह ध्वनि बार-बार नहीं

तो कम-से-कम एकाध बार तो अवश्य सुनने में आयेगी। सड़कों पर और घरों में अबोध बालक-बालिकाओ के मुँह से भी यह ध्वनि अनायास निकलती पाई जायगी। 'हर-हर' और 'बम्-बम्', 'सीतराम' और राधा कृष्ण' की तरह यह ध्वनि भी एक राष्ट्रीय सार्वजनिक ध्वनि, एक कौमी नारा बन गई है। हम इस ध्वनि को सदा निर्घोषित करते है; इस नारे को हमेशा बुलन्द करते है; कभी सोच-विचारकर, कभी-कभी बिना समझे-बूझे भी, केवल अभ्यास के कारण। यह हमें प्रिय लगती है; श्रुति-मधुर जान पडती है; इसका उच्चारण कर हम सुख का अनुभव करते है; इससे हमारे हृदय मे उत्साह उत्पन्न होता है; उमंग उठती है और हम अपने मे आन्तरिक बल का अनुभव करते है।[१]

(२)

अब इसकी उपयोगिता का प्रश्न लीजिए। हिन्दी उर्दू दोनों अनिवार्य रूप से पढ़ाये जाने से कौन-सा विशेष लाभ है कि इस विषय को इतना महत्त्व दिया जाय जैसा कि कमिटी दिया चाहती है। मै जहाँ तक समझ सका हूँ इससे एक ही लाभ की सम्भावना है। सम्भव है कि कमिटी को कुछ और भी लाभ दीख पडे हों पर जबतक उसकी रिपोर्ट नही निकलती हम उन्हे नहीं जान सकते। इस कारण मै अपनी तुच्छ समझ के आधार पर ही इस समय चलता हूँ। हिन्दू-मुसलमान दोनों जातियो के छात्रो के हिन्दी उर्दू दोनों भाषाएँ जानने से सम्भावना है कि वे एक दूसरे की बातों को समझ सकेंगे, उनके लेखों को पढ सकेंगे, उनके धार्मिक ग्रन्थों का अध्ययन कर सकेंगे, उनकी संस्कृति से परिचित हो सकेंगे, उनके विचारों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे तथा उनके आपस के विचार-

१. 'महात्मा गाँधी की जय' शीर्षक लेख से।—देखिए, 'हिन्दी-गद्य-पद्य-संग्रह' (माध्यमिक स्कूल परीक्षा के लिए संकलित, सन् १६६५ ई०), पृ० ६६-१०१।

विनिमय का द्वार खुल जायगा और इस कारण अज्ञान और भ्रम-जन्य वैमनस्य दूर हो जायगा और जातियों मे सहयोग, मिलता तथा मेल का पथ प्रशस्त हो जायगा। अब विचारना यह है कि कमिटी की पूर्वोल्लिखित सिफारिश से उपर्युक्त सम्भावना कहाँ तक ठीक निकलती है। बिहार के हिन्दू मुसलमान इतने भिन्न नहीं है कि वे साधारण बोल-चाल में एक दूसरे की बातें न समझ सकें।[१]

बदरीनारायण मिश्र

आप पटना-जिले के 'नरहन्ना' नामक स्थान के निवासी पं० श्रीनन्दकेश्वर मिश्र के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९५४ वि० (सन् १८९७ ई०) की श्रावण शुक्ल-द्वितीया (शुक्रवार) को हुआ था।[२] आरम्भिक शिक्षा के बाद सन् १९२२ ई० मे आपने बिहार-संस्कृत-समिति, पटना से व्याकरण और साहित्य विषय लेकर मध्यमा की परीक्षा पास की। तत्पश्चात्, बम्बई के श्रीवेंकटेश्वर स्टीम-प्रेस में संशोधक के पद पर आपने लगभग दो वर्षों तक कार्य किया। आपमे बचपन से ही विद्याव्यसन एवं कविता लिखने की प्रवृत्ति थी। आगे चलकर उसमें पर्याप्त विकास हुआ और आपको 'काव्य-भूषण' की उपाधि भी प्राप्त हुई। हिन्दी-भाषा में आपकी लिखी एक पुस्तक 'जगदीश-प्रार्थना-शतक'[३] के नाम से छपकर प्रकाशित हो चुकी है। इसके अतिरिक्त आपने 'आनन्द-सरोवर' तथा 'शिवायन'[४] नामक दो और पुस्तकों की रचना की थी, जो अभी तक प्रकाश मे नही आ सकी है। आप सन् १९६५ ई० के अक्टूबर मास (सं० २२०२ वि०, आश्विन शुक्ल द्वादशी, गुरुवार) मे परलोक सिधार गये।[५]

उदाहरण

(१)

हरे कृष्ण गिरिधर, विश्वम्भर मुरारी।
हरे राम रघुवर, धनुर्धर खरारी॥

---

१. 'हिन्दी और उर्दू' (बदरीनाथ वर्मा, सं० १९८५ वि०), पृ० ५।

२. आपके द्वारा दिनांक २३ मार्च, सन् १९५८ ई० को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।

३. दी तारा प्रेस, मसौढ़ी (पटना) से सं० २०११ वि० में प्रकाशित।

४. स्फुट रचनाओं का संग्रह।

५. युग्म पक्ष नभ युग्म को, आश्विन सित गुरुवार।
तिथी द्वादशी को तज्यो, दादाजी संसार॥
—कवि के पौत्र श्रीमदनमोहन मिश्र-रचित।

बना लो प्रभो दास, चरणों का अपने।
कभी दुर्गुणो को, न दो तू पनपने॥
सुनो नाथ विनती, अहोरात्र मेरी।
सदा मन मे मेरे, बसे मूर्ति तेरी॥
गीध, गणिका, अजमिल, को है तुमने तारा।
अभी तक हमें नाथ, क्यो कर बिसारा॥[1]

(२)

तुमसे विमुख नाथ, रह करके जीना।
अजा गल के थन के, सरिस दुग्ध हीना॥
नीच कहते है, विद्या, विहीनो को कोई।
नीच कहते है, सम्पत्ति, हीनों को कोई॥
पर व्यास कहते है, नीचा वही है।
जिसके हृदय बीच, भक्ति नही है॥
माया में पड़कर, तुझे कुछ न जाना।
परलोक मे क्या करूँगा बहाना॥[2]

बनारसीलाल 'काशी'

आप शाहाबाद-जिला के 'रामडीहरा' (रोहतासगढ़) नामक स्थान के निवासी श्रीमुन्शी रामदयालजी के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९५४ वि० (सन् १८९७ ई०) की माघ कृष्ण-दशमी (गुरुवार) को हुआ था।[3] बचपन मे ही आपकी माताजी का स्वर्गवास हो गया था। आपका लालन-पालन आपकी बड़ी चाची ने किया था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। सन् १९१२ ई० मे आपने तिलौथू (शाहाबाद) के

---

१ 'जगदीश प्रार्थना-शतक' (पं० बदरीनारायण मिश्र, सं० २०११ वि०), पृ० १-२।

२. वही, पृ० ४, ५, और ६।

३. 'साहित्यिक-इतिहास-विभाग' में सुरक्षित विवरण के अनुसार। आपके परिचय-लेखन में 'हिन्दीसेवी संसार' (वही, पृ० १५५) से भी सहायता ली गई है।

माध्यमिक विद्यालय (मिड्ल-स्कूल) से छात्रवृत्ति के साथ मिड्ल की परीक्षा में उत्तीर्णता प्राप्त की थी। सन् १९१५ ई० मे आपने पटना के नार्मल-स्कूल से नार्मल की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे पास की। तदनन्तर, आपने शिक्षक के पद पर कार्य किया। सन् १९२२ ई० में आपने 'साहित्यरत्न' की उपाधि प्राप्त की। इसके पूर्व ही आपने हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग से 'विशारद' की उपाधि भी प्राप्त कर ली थी। अखिल-भारतीय विद्वत्परिषद्, अयोध्या से आपने 'विद्याभूषण' की भी उपाधि प्राप्त की थी। अध्यापन मे रहते हुए आपने समाज-सेवा के अनेक कार्य किये। श्रीहिन्दी-नवजीवन-पुस्तकालय, भभुआ की स्थापना आपके ही अथक परिश्रम से हुई थी। साहित्यिक अभिरुचि को प्रोत्साहन देने के लिए आपने 'रामडीहरा' मे 'काशी-साहित्य-मन्दिर' एवं तिलौथू (शाहाबाद) मे 'तुलसी साहित्य परिषद्' आदि सस्थाओं को जन्म दिया था। बच्चो को समुचित शिक्षा दिलाने की दृष्टि से आपने 'रामडीहरा' मे एक माध्यमिक विद्यालय (मिड्ल स्कूल) की भी स्थापना की थी। ये संस्थाएँ आपके जीवन की ठोस कृतियाँ है। तिलौथू हाइ-स्कूल की भी आपने अमूल्य सेवा की है। भभुआ, सूर्यपुरा और तिलौथू हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के परीक्षार्थियो को भी अवसर निकालकर आप नियमित रूप से पढ़ाते थे।

सन् १९१६ ई० से ही आपने हिन्दी मे लिखना प्रारम्भ किया। आपके द्वारा लिखित जो पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं, उनके नाम इस प्रकार हैं—(१) हिन्दी-पाठमाला[1], (२) अलकार-प्रवेशिका[2] और (३) पिंगल प्रवेशिका[3]। इन पुस्तकों के अतिरिक्त एक पुस्तक 'श्रीभरतचरितामृत' भी है, जिसके संग्रहकर्त्ता आप ही है। हिन्दुस्तानी प्रेस, पटना से इसका मुद्रण-कार्य हो रहा है, किन्तु अभी तक सम्भवतः वह पुस्तक प्रकाश मे नही आया। आपकी काव्य-रचनाओ का एक सकलन 'काशी-कविता-कुंज'[4] के नाम से आपके पास ही सुरक्षित है। अद्यावधि उसका प्रकाशन नही हुआ है। अभी हाल तक आप माध्यमिक विद्यालय, तिलौथू (शाहाबाद) मे अध्यापन-कार्य-रत थे।

उदाहरण

(१)

श्याम घन सरिस जुँ राजै घनश्याम छटा,
विद्युत् समान छवि वाकी मुस्कान की।
आप जो पै जीवन के जीवन अधार हो तो,
वाकी उपमा अपूर्व सोहत है प्रान की।

---

१. दो भागों में। देहाती शिक्षा-मण्डल, तिलौथू, शाहाबाद से सन् १९३१ ई० में प्रकाशित।
२. काशी-साहित्य-मन्दिर, रामडीहरा, शाहाबाद से सन् १९५१ ई० में प्रकाशित।
३. 'हिन्दीसेवी ससार' (वही, पृ० १५५) में आपके द्वारा रचित 'रामायण के उपदेश' नामक एक और ग्रन्थ की चर्चा है।
४. इसमे आपने 'काशी' और 'अघोर' इन दोनों उपनामों का प्रयोग किया है।

ब्रज-नभ-मण्डल के गोप तारकों में आप
चन्द के समान, वह चाँदनी जहान की।
लाड़िले जो नन्द महराज जू के आप हो, तो,
राधिका भी लाड़ली है, नृप वृषभान की ॥[१]

(२)

मरद महान मद्यवान से भी मानवान
रखता हमेश ही जो मान महामानी का।
ज्ञानी था अपार पै गुमान लवलेश नहीं,
शान थी निराली, था नमूना जिन्दगानी का।
लाज पत रखता था, लाज पतवालों की जो,
करता समादर 'काशी' देशाभिमानी का।
हाय ! हाय ! लूट गया दिन ही दहाड़े वह—
लाल पाँच-पानी का, मरद एक पानी का ॥ [३]

(३)

उर के विषाद का काजल, भर काले बादल छाये,
पर्व्वत को गले लगाकर, रोने को जो मिल आये,
फूटे है हृदय फफोले, आँसू बन बहता पानी,
अंकित है इन बूँदों में, प्रेमी की कसक कहानी ॥[१]

(४)

तृन तोरति राई उतारति लोन, सखी सिगरी अफरीसी परें,
परि प्रान को साँसति आजु अरी, सवतीन दुखारी उसाँसी भरें।

---

१. 'काशी-कविता-कुंज' (अप्रकाशित) से साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री में प्राप्य।
२. 'हिन्दूपंच' (सन् १९२५ ई०) से साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री में प्राप्य।
३. 'काशी-कविता-कुंज' (वही) से। परिषद् में सुरक्षित सामग्री में प्राप्य।

निघटे जल नेह नदी को हहा ! अति व्याकुल हो सफरी-सी मरैं,
अँगना मैं दिखाती तऊ अँगना, अँगना हमरी उनई-सी परैं ॥[1]

(५)

आज शरत् पूनो है। देखो, निर्मल निरभ्र नीलाम्बर में शारदीय पूर्णचन्द्र, कैसे उत्फुल्ल दृष्टिगोचर होते हैं, जैसे अम्लान स्वच्छादर्श मे सुन्दरी के अनिंद्य मुख-मण्डल। उनकी नवल-धवल चारु चन्द्रिका दीन की पर्णकुटी से राजप्रासाद तक सर्वत्र, समभावेन सहर्ष-सतत-सुधा-सिंचन करती है, जिससे समस्त वसुमती सद्यःस्नाता सुन्दरी-सी सुसिक्त हो रही है।[2]

बलदेवप्रसाद मिश्र 'नवीन'

आप गया-जिला के 'ग्रामबेल' नामक स्थान के निवासी पं० ईश्वरीप्रसाद मिश्र के पुत्र थे। आपका जन्म स० १९२६ वि० (सन् १८६९ ई०) की अग्रहायण शुक्ल-द्वादशी (शनिवार) को हुआ था।[3]

आप संस्कृत, हिन्दी के साथ-साथ मगही के भी विद्वान् थे। काव्यशास्त्र मे भी आपकी गहरी पैठ थी। समालोचक होने के साथ-साथ आप एक सफल कवि भी थे। आपकी काव्य-रचनाएँ सस्कृत, हिन्दी और मगही-भाषाओ मे मिलती हैं। माडा नरेश श्रीरामप्रसाद सिंहजी की साहित्यिक गोष्ठी मे आपको बड़ी प्रतिष्ठा थी। उन्होने आपको 'कविकुलतिलक' की उपाधि से सम्मानित किया था। आपकी पुस्तकाकार रचनाओ के नाम इस प्रकार है—(१) काव्य-कलानिधि, (२) कुण्डलिया-कुण्डल, (३) सावन-मोहिनी-कविता, (४) सावन-सरोज, (५) श्रीसत्यनारायण-कथा (दोहा-चौपाई), (६) फाल्गुन-तरंगिणी, (७) पावस-बहार, (८) दुर्जन-दैत्य-दर्पेटिका, (९) काव्य-कानन कुठार, (१०) पूर्णानन्द-सागर, (११) रसिक-विनोद, (१२) नायिका-भेद, (१३) शिव माहात्म्य (दोहा-चौपाई) और (१४) खण्डन-खाद्य।

आप सन् १९४७ ई० के आसपास परलोकगामी हुए।

---

१. साहित्य-इतिहासक-विभाग में सुरक्षित सामग्री से।

२. परिषद् में सुरक्षित सामग्री से।

३. 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० ११४।

उदाहरण

(१)

रूप धरि बेद बोलै ब्याह की विधान बैठे,
बिबुध प्रतच्छ पूजा लेहिं आपु करके ।
कहुँ का छबीन बर बिरद बदहिं बन्दी,
बारनारि नार्चाहि अनोखी भाव करके ।
राम सिय सीस पै सिंदूर को उठायो कर,
आयो मन मेरे यहै योग पटतर के ।
लियै लाल मुख में बिसाल ब्याल आतुर ह्वै,
धायो मनों पिअन पियूष कलाधर के ।[1]

(२)

भल भाँवरी होन लागी विधि सों,
सुख भौ चित चारु चराचर के ।
कलगान निसाननि दुंदुभि की,
धुनि पूरि दिगंतन लों करके ।।
दुहुँ की प्रतिबिब छबीन भनै,
मनि खंभनि में परि यूँ सरके ।
छिपि कै तहँ रूप लखै रति-काम
मनों सिय-राम-कलाधर के ।।[2]

*

---

१. 'समस्यापूर्ति' (गया, द्वितीयाधिवेशन, सन १६०८ ई०), पृ० १७-१८ ।
२. वही ।

बलदेव मिश्र

आप सहरसा-जिला के 'वनगाँव' नामक स्थान के निवासी पं० श्रीचुल्हाई मिश्र के पुत्र है।[१] आपका जन्म सन् १८६६ ई० के १२ नवम्बर को हुआ था।[२] आपकी आरम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। सन् १९११ ई० मे आपने कलकत्ता से 'ज्योतिषतीर्थ' की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे पास की। आपने सन् १९२० ई० मे प्रवेशिका (मैट्रिकुलेशन) की परीक्षा मे भी प्रथम श्रेणी प्राप्त की। सन् १९२२ ई० मे आपने वाराणसी के 'सरकारी संस्कृत-कॉलिज' से 'ज्योतिषाचार्य' की परीक्षा पास की। वहाँ पं० सुधाकर द्विवेदी के ससर्ग से आपने प्रभूत ज्ञानार्जन किया। तदनन्तर, आप 'काशी-विद्यापीठ' मे गणित-शास्त्र के अध्यापक के पद पर प्रतिष्ठित हुए। वहाँ कई वर्षों तक रहने के बाद आपने 'व्रजभूषण-संस्कृत-कॉलिज, खुरखुरा, गया मे अध्यापन-कार्य किया। इसके बाद पुन. आप वाराणसी के 'सरस्वती-भवन-पुस्तकालय' मे वर्ग-विश्लेषक (कैटलगर) के पद पर नियुक्त हुए। अपनी सरकारी सेवा के अन्तिम दिनो मे आप पटना के सुप्रसिद्ध 'काशीप्रसाद-जायसवाल रिसर्च-इन्स्टिट्यूट', पटना मे 'डिसाइफर पण्डित' के पद पर प्रतिष्ठित थे।

आपकी साहित्य-सेवा का आरम्भिक वर्ष सन् १९१२ ई० बतलाया जाता है। आप संस्कृत, हिन्दी मैथिली और अँगरेजी-चारो भाषाओं में अपने लेख, नाटक एवं अन्य उपयोगी रचनाएँ लिखते रहे हैं। आपकी गणना मैथिली के उच्च कोटि के लेखकों और आलोचको मे होती है। संस्कृत में आपके द्वारा लिखित निबन्ध संस्कृत की पत्रिकाओ में प्रकाशित होते रहे है। 'मिथिला-मिहिर' आदि पत्रिकाओ मे आपके मैथिली-विषयक निबन्ध एवं कविताएँ अद्यावधि प्रकाश मे आया करती है। आपके द्वारा लिखित एवं सम्पादित ये पुस्तकें प्राप्य है—(१) 'छात्र-जीवन',[३] (२) 'रामायण-शिक्षा',[४] (३) भारत-शिक्षा,[५] (४) संस्कृति,[६] (५) गप-शप-विवेक,[७] (६) कविवर पं० चन्दा झा'[८] (७) मैथिली साहित्यसेवी लोकनिक इतिहास (अप्रकाशित), (८) 'ज्योतिष के नवरत्न (अप्रकाशित), (९) गणित का इतिहास (अप्रकाशित), (१०) वनगाँव का इतिहास (अप्रकाशित), (११) संस्कृत-साहित्य मे मैथिलो की देन (अप्रकाशित), (१२) महान् पुरुषक जीवन-चरित्र (अप्रकाशित) और (१३) समाज अप्रकाशित)। इनके अतिरिक्त आपको सैकड़ो रचनाएँ विभिन्न-पत्र-पत्रिकाओं मे यथावसर प्रकाश मे आई हैं। सम्प्रति, आप अवकाश प्राप्त कर अपने गाँव मे ही निवास कर रहे है।

---

१. ये अयाची मिश्र के पुत्र म० म० पं० शकर मिश्र के वंशज थे।

२. आपके द्वारा दिनांक १ दिसम्बर, सन् १९६० ई० को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार ('A History of Maithili Literature' वही, Vol. II, P. 137) में आपका जन्म-काल सन् १८९० ई० बतलाया गया है।

३. हिन्दी। मास्टर खेलाडीलाल ऐण्ड सन्स, बनारस द्वारा प्रकाशित।

४. मैथिली। प्रकाशक स्वयं।

५. मैथिली। हिन्दी-भवन, प्रयाग द्वारा सन् १९५४ ई० में प्रकाशित।

६. मैथिली। प्रकाशक स्वयं।

७. मैथिली। हिन्दी-भवन, प्रयाग से सन् १९५४ ई० में प्रकाशित।

८. मैथिली। प्रकाशक स्वयं।

उदाहरण

(१)

रामायणक कथा मे हनुमान् एक प्रमुख पात्र छथि । यत्र-तत्र हनुमानक कथा अवैत अछि । हनुमान् सब ठाम अपन कर्त्तव्य उत्तम रीति सँ पालन करैत छथि । ओ परमवीर, शक्तिसंपन्न ओ विनयी छथि, परम बुद्धिमान् छथि । रामभक्ति हुनक रोम-रोम में छैन्हि; इएह कारण थीक जे हनुमान देवतारूपें सवत्र पूजित होइत छथि । यद्यपि हुनक स्वामी सेनापति सुग्रीव रामक परम मित्र छलाह ओ सर्वत्र मित्र-कार्यक यथावत् पालन कएने छथि तथापि लोक मे सुग्रीव ताहि आदरभाव कें नहि प्राप्त कैएलैन्हि जे हनुमान् प्राप्त कएने छथि तैं । हनुमानक चरित्रक थोड़ेक विमर्श आवश्यक अछि ।

सर्वप्रथम हनुमानक बुद्धिक परिचय तखन होइत अछि जखन ओ रामसुग्रीवक मित्रता करबैत छथि ओ रामकें सुग्रीवक परिस्थिति कहैत छथिन्ह । तखन हनुमानक वाक्यकें सूनि लक्ष्मणकें राम कहलथिन्ह जे हनुमान जाहि रूपें बजलाह अछि जे कथा ऋग्वेद, यजुर्वेद ओ सामवेदक वेत्ता छोड़ि केओ दोसर नहि कहि सकैत अछि ।[१]

(२)

(क) पुरु और भीष्म दुनू राजकुमारक पितृनिष्ठा देखबाक थिक जे अपन जीवनक सुखक उत्सर्ग कै पिताक सुखक हेतु अपन जीवन कैं उपयुक्त बुझलन्हि । ई सब दृष्टान्त आदर्श पितृभक्तिक थिक । हुनका लोकनिक मन में अपन आत्मीय सुख अथवा पिताक वैषयिक विचारक प्रति समालोचना नहि अयलन्हि किन्तु अपन थैह कर्त्तव्य बुझलन्हि जे हुनक द्वारा जाहि कार्यें पिता कैं सुख होइन्हि सैह कर्त्तव्य थिक और तकरे साधन कैलन्हि ।[२]

---

१. 'रामायण-शिक्षा', (बलदेव मिश्र, सन् १९५७ ई०), पृ० ८७-८८।

२. 'भारत-शिक्षा' (बलदेव मिश्र, सन् १९५५ ई०), पृ० ८ ।

(ख) भारतीय संस्कृतिक वाच्य अर्थ तँ थिक भारतीय संस्कार, किन्तु अभिप्रेत अर्थ थिक उक्त संस्कारक अनुरूप आचरण अर्थात् प्राचीन भारत, स्वतन्त्र भारत, गौरवान्वित भारतक लोकक मन मे, संस्कारक विषय मे, लोकक विषय में, कर्त्तव्यपरायणता आदि विषय में जे विचार स्थिर भै संस्कार में परिणत भेल अर्थात् जाहि संस्कारक उद्रेक तत्समयक हुनका लोकनिक वाक्यावली तथा कार्य-योजना मे दृष्टि-गोचर होइछ सैह वस्तु भारतीय संस्कृति शब्दक वाच्य अर्थ और ओकर अनुरूप परम्परागत क्रियाकलाप थिक अभिप्रेत अर्थ।[१]

बलदेवलाल 'बलदेव'

आप गया नगर के 'पुरानीगोदाम' नामक मुहल्ला के निवासी श्रीगोपालचन्दजी के पुत्र थे। आपका जन्म स० १९१५ वि० सन् १८५८ ई० की आश्विन शुक्ल पूर्णिमा, (शुक्रवार) को हुआ था।[२] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा मुहल्ले के ही अपर प्राइमरी स्कूल से शुरू हुई। अपर की परीक्षा पासकर आठ वर्ष की उम्र से आप नार्मल स्कूल मे पढने लगे। सन् १८७६ ई० मे आपने पन्द्रह रुपये की छात्रवृत्ति के साथ प्रवेशिका (एण्ट्रेंस) की परीक्षा पास की। एण्ट्रेंस-परीक्षा पासकर सन् १८७६ ई० मे आप पटना कॉलेज मे प्रविष्ट हुए। पटना-कॉलेज से एफ० ए० की परीक्षा मे भी बीस रुपये की छात्रवृत्ति आपको मिली। इसके बाद आपने इसी कॉलेज से बी० ए० परीक्षा सन् १८८० ई० म पास की और तत्पश्चात् आपका अध्ययन बन्द हो गया। छात्र-जीवन के समाप्त होते ही आप पटना के बी० एन्० कॉलेज मे अध्यापक के पद पर प्रतिष्ठित हुए। इस पद पर सन् १८८४ ई० तक कार्य-सम्पादन करने के बाद आपन पुनः गया चले आये और वहीं वकालत करने लगे। सम्भवतः, आपने कॉलेज छोड़कर या इसके पूर्व ही बी० एल्० की परीक्षा भी पास कर ली थी।

हिन्दी के प्रति आपकी विशेष अभिरुचि थी। आप काव्य के बडे प्रेमी और प्राचीन कविताओ के मर्मज्ञ थे। प्राचीन शैली की व्रजभाषा की आपकी कविताएँ बडी ही सरल, सरस और सुन्दर होती थी। गया मे 'काव्य-विलासिनी-सभा' की स्थापना और 'काव्य विलासिनी-पत्रिका' का प्रकाशन आपके ही अदम्य उत्साह और सत्प्रयास का फल था। हिन्दी मे आपके द्वारा लिखित 'नामावली' नामक पुस्तक प्रकाशित मिलती है।[३] इसके

१. 'भारतीय संस्कृति' (बलदेव मिश्र, सं० २००६ वि०), पृ० १।

२. 'गया के लेखक और कवि' वही पृ० ११२-११३।

३. विद्यागुप्त प्रेस गया से मुद्रित और प्रकाशित। इस पुस्तक के मुद्रक और प्रकाशक आपके द्वितीय पुत्र

अतिरिक्त (१) भजनावली, (२) पावसपचासा, (३) भट्टि-महाकाव्य का सवैया छन्दोबद्धानुवाद और (४) व्रजभाषा में स्फुट कविताएँ आपने लिखी थीं। अद्यावधि ये रचनाएँ प्रकाश मे नही आ सकी है। सं० १९८२ वि० (सन् १९२५ ई० की जुलाई) को आषाढ शुक्ल-एकादशी को ६५ वर्ष की उम्र मे आप परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

विमल ज्ञान अरु बुद्धिवर देहु नाथ हिय माहि,
हरि चरचा अरु भजन ते, मन नहि मोर अघाहि ॥

× × ×

योग याग जप तप सबै, होत नही कलि काल।
केवल सुमिरन नाम ते, नर काटत भवजाल ॥
उलटो पुलटो नाम ते, सुख पावत सब कोय।
घी के लड्डू तो भलो, जो टेढ़ोहू होय ॥[१]

(२)

ध्यान धरो गणपति गणनायक,
कृपासिन्धु सबही विधि लायक।
सकल देव महँ अग्र पूज्य प्रभु,
विद्या बुद्धि विमल वरदायक।
गिरिजा सुत षडआनन भ्राता,
मूषक बाहन विश्वविनायक।

श्रीरामनारायणलालजी थे। वे भी काव्य के प्रेमी थे। पुस्तक की समाप्ति की तिथि कवि ने पुस्तक के अन्त में इस प्रकार लिखी है—

"भई लाल बलदेव कृत, नामावली समाप्त।
पढे सुनै सुमिरैं सबै, करैं बहुत सुख प्राप्त ॥
विक्रम सम्वत् सिद्धिशर, निधिशशि लेहु बिचार।
भादव शुक्ल चतुर्दशी, शुक्रवार शुभवार ॥"

इससे सं० १९५८ वि० में इस पुस्तक का लेखन-कार्य समाप्त हुआ जान पड़ता है। इनके प्रथम पुत्र श्रीगयाप्रसाद 'सेठ' भी काव्य-रचना करते थे।

१. 'नामावली' (बलदेवलाल, सं० १९५८ वि०), पृ० २-३।

विघ्नहरण शुभ करण काज के,
मोद भरन अपने गुण गायक।
करिवर वदन सदन शोभा के,
होहु सभा 'बलदेव' सहायक ॥[1]

ब्रजनन्दन सहाय 'ब्रजवल्लभ'

आप शाहाबाद-जिला के 'अख्तियारपुर' नामक ग्राम के निवासी सुप्रसिद्ध साहित्यकार बाबू शिवनन्दन सहायजी के एकमात्र पुत्र थे।[2] आपका जन्म सं० १९३१ वि० (सन् १८७४ ई०) की भाद्रशुक्लाष्टमी को हुआ था।[3] आपने गया जिला-स्कूल से एण्ट्रेन्स की परीक्षा पास की। उसके बाद, पटना के बिहार नेशनल-कॉलेज से बी० ए० तक पढकर आप वकालत की परीक्षा मे उत्तीर्ण हुए। तत्पश्चात, आपने लगभग बयालीस वर्षों तक आरा-नगर मे वकालत की। आरा-नागरी-प्रचारिणी सभा के आरम्भिक काल के प्रधानमन्त्री आप ही थे। आपके समय मे सभा की उत्तरोत्तर उन्नति और प्रसिद्धि हुई।[4] आपके समकालीन प्राय: सभी साहित्यकार आपके परिचित थे।[5]

आपकी साहित्यिक क्षमताओ से प्रभावित होकर तत्कालीन छतरपुर-नरेश ने आपको आदर के साथ आमन्त्रित कर विशेष रूप से सम्मानित किया था। काशी नागरी-प्रचारिणी सभा की स्वर्ण-जयन्ती के अवसर पर सभा की ओर से भी आपका अभिनन्दन किया गया था। बेगूसराय (मुंगेर) मे बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का जो चौदहवाँ महाधिवेशन सन् १९३१ ई० मे हुआ था, उसके आप ही सभापति थे। उस अवसर पर दिया गया आपका साहित्यिक भाषण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माना गया है। आपने आरा के बाल-हिन्दी-पुस्तकालय को अपना विशाल पुस्तकालय दानस्वरूप दे दिया था, जो आपके पूज्य पिता स्व० बाबू शिवनन्दन सहायजी के स्मारक के रूप मे आज भी सुरक्षित है। आरा-नागरी प्रचारिणी

---

१. 'नामावली' (वही), पृ० ३-४।

२. आपकी साहित्यिक वंश-परम्परा आज भी अक्षुण्ण है। आपके चार सुपुत्रों में ज्येष्ठ श्रीरमेशनन्दन सहाय, एम्० ए०, बी० एल्० के लेख प्राय: हिन्दी-पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते हैं।

३. देखिए, मिश्रबन्धुविनोद (वही), पृ० २३७-३८ तथा बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् का प्रथम वार्षिक विवरण (जुलाई, सन् १९५० से जुलाई, ५१ ई०), पृ० ५८-५९ तथा 'साहित्य' (त्रैमासिक, वर्ष ७, अंक ४, जनवरी, सन् १९५७ ई०), पृ० ६१-९२ पर आचार्य शिवपूजन सहायजी का लेख और 'साहित्य' (वर्ष ७, अंक ३, सन् १९५६ ई०), पृ० ११ पर उन्हीं का सम्पादकीय।

४. आपके समय में सभा ने देवनागरी-लिपि और हिन्दी-भाषा के प्रचार का व्यापक आन्दोलन किया था।

५. आपके पुराने साहित्यिक मित्रों में कुछ के नाम विशेष उल्लेख्य हैं—श्रीबालमुकुन्द गुप्त, प० प्रतापनारायण मिश्र ('ब्राह्मण'-सम्पादक) लाला, सीताराम, प० दुर्गाप्रसाद मिश्र ('उचित-वक्ता'-सम्पादक),

सभा द्वारा राष्ट्रपति डॉ॰ राजेन्द्र प्रसादजी को अभिनन्दन-ग्रन्थ समर्पित करने के शुभ-अवसर पर आपको सभा की ओर से प्रमाणपत्र-सहित 'विद्यावाचस्पति' की उपाधि प्रदान की गई थी। आपको सन् १९५० ई० मे, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् का डेढ सहस्र रुपये का वयोवृद्ध-साहित्यिक-सम्मान-पुरस्कार प्राप्त हुआ था।

आपकी गणना कुशल सम्पादकों मे होती थी। अपनी छात्रावस्था मे ही आप 'समस्यापूर्त्ति-पत्रिका' का सम्पादन करने लगे थे। इसके बाद आपने 'नागरी-हितैषी-पत्रिका,' 'समस्यापूर्त्ति', 'प्रकाश' 'शिक्षा', 'प्रेमाभक्तिप्रचार' आदि पत्र-पत्रिकाओ का सम्पादन किया।

आप स्वयं 'बिहारबन्धु' (पटना), 'भारत-भागिनी' (प्रयाग), 'कवि समाज', और 'कवि-मण्डल-पत्रिका' (काशी), 'ब्राह्मण' (पटना) आदि तत्कालीन प्रमुख पत्र-पत्रिकाओ मे बराबर लेख, कवितादि लिखा करते थे। हिन्दी मे आपके द्वारा लिखित लगभग ढाई दर्जन पुस्तकें बतलाई जाती है, जिनमे उपन्यास, नाटक, गद्यकाव्य, प्रहसन अर्थशास्त्र, कविता, जीवनी आदि है। उपन्यास-रचना मे आपको विशेष कीर्त्तिलाभ हुआ। हिन्दी मे सर्वप्रथम मौलिक उपन्यास लिखने का श्रेय आपको ही दिया जाता है। आपके द्वारा लिखित मौलिक उपन्यासो मे (१) सौन्दर्योपासक', [१] (२) 'लालचीन', [२] (३) 'विस्मृत-सम्राट', (४) विश्व-दर्शन', (५) राजेन्द्र मालती, (६) अद्भुत प्रायश्चित, (७) राधाकान्त, (८) अरण्यबाला, आदि मुख्य हैं। अनूदित उपन्यासो मे (१) 'चन्द्रशेखर', (२) 'रजनी', और (३) 'कमलाकान्त का इजहार', उल्लेखनीय हैं।

नाटको में प्रमुख है—(१) सप्तम प्रतिमा (२) उद्धव नाटक, (३) उषागिनी, (४) वरदान,(५) कलंक-मार्जन (कैकयी), (६) बूढ़ा वर और(७) निर्जन द्वीपवासो का विलाप (१) हनुमान-लहरी (२) व्रज-विनोद और (३) सत्यभामा-मगल आपके काव्यग्रन्थ है। 'मैथिल-कोकिल विद्यापति' नामक ग्रन्थ की रचना कर आपने ही सबसे पहले विद्यापति को बँगला-साहित्य से हिन्दी-साहित्य मे लाकर प्रतिष्ठित करने का सफल प्रयास किया था। आपने (१) पं० बलदेव मिश्र, (२) बंकिमचन्द्र तथा (३) राधाकृष्णदासजी को जीवनियाँ भी लिखी थी। आपके द्वारा लिखित एक अर्थशास्त्र की पुस्तक भी मिलती है और आपने 'शिक्षा-विलास' नामक एक बालोपयोगी पुस्तक की रचना भी की थी।

बाबू रामकृष्ण वर्मा (भारत-जीवन), प० जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी, प० किशोरीलाल गोस्वामी, पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय, 'हरिऔध', श्रीजगन्नाथदास 'रत्नाकर,' बाबू श्यामसुन्दरदास, मिश्रबन्धु, पं० पद्मसिंह शर्मा, श्रीमैथिलीशरण गुप्त आदि।

१. इस उपन्यास का अनुवाद मराठी एव गुजराती में भी हुआ है। इसने बीसवी सदी की दूसरी दशाब्दी में बड़ी प्रसिद्धि पाई थी। उस समय उसकी गणना गद्य-काव्य में होने लगी थी। द्विवेदी-युग की 'सरस्वती' में कविवर मैथिलीशरण गुप्त ने उसकी आलोचना करते हुए उसे बँगला-भाषा के उस समय के उत्तम उपन्यासों का समकक्ष बतलाया था।—देखिए, 'साहित्य' (वही, वर्ष ७, अंक ३, अक्टूबर, ५६ ई०), पृ० २।

२. काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा की मनोरजक-पुस्तकमाला में प्रकाशित इस उपन्यास का स्थान भी हिन्दी के तत्कालीन ऐतिहासिक उपन्यासों में उच्च माना गया है। इसका अनुवाद भी गुजराती में हुआ है।—वही

सं० २०१३ वि० की भाद्र शुक्ल-पूर्णिमा, तदनुसार सन् १९५६ ई० की २० सितम्बर को चौरासी वर्ष की आयु मे आरा-नगर के अपने निवास-स्थान पर आप परलोकगामी हुए।[1]

उदाहरण

(१)

क्या तुम्हें अभी तक ज्ञात नही हुआ कि आत्मा का जीवन प्रेम तथा पवित्रता पर निर्भर है। जान रखो, पृथिवी का अतुल धन, रत्न, शरीर का असीम तेजोबल, रतिमानमर्दिनी रूपसी का सहवास, किसी प्रकार अन्तःकरण की ज्वाला नही बुझा सकते, आत्मा को प्रसन्न रखने में सूक्ष्म नहीं हो सकते। शुद्ध प्रेम को प्राप्त किये विना मनुष्य को आनन्द नहीं मिल सकता, प्राण को तृप्ति नही हो सकती, जीवन का सर्वाङ्ग उन्नति नहीं हो सकती। जिस प्रकार सलिल के निकट आरोपित की हुई वृक्ष, लताएँ अपनी श्यामल शोभा, सतेज मसृण भाव एवं सुरसाल सुन्दर फल-फूल पत्रादि के भार से अवनत हो नयन, मन तथा प्राण को मोहित तथा सुखी करती है, उसी प्रकार जो जीवन उस प्रेममय प्रभु के प्रेम-सलिल के निकट रहकर और उस रस द्वारा परिपुष्ट उनके सौन्दर्य, तेज, स्फूर्ति, शक्ति, उनके ज्ञान, स्नेह, अनुराग, लगन, प्रेम, पवित्रता, उनके कार्योत्साह तथा सजीव मधुर-भाव को ग्रहण करता है, उसका नर-जीवन सार्थक होता है।[2]

(२)

हाँ एक बात और कहनी है कि प्रेम बिना मनुष्य रह नहीं सकता। प्रेम के विषय में तो मैंने तुमसे बहुत कुछ कहा है। तुम एक

---

१. आपके अन्तिम दिनों में बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के आद्य-निदेशक आचार्य शिवपूजन सहायजी ने आपसे अनेक महत्त्वपूर्ण संस्मरण सुने थे, जिन्हें संकलित न कर सकने के लिए उनके हृदय में अपार दुःख था। उन्होंने अपने 'साहित्य' के एक सम्पादकीय में लिखा है कि ''मुझे अफसोस है कि आपसे साहित्यिक संस्मरणों को सुनकर न लिख सका। इसी तरह अनेक वयोवृद्ध साहित्यसेवियों के साथ अमूल्य साहित्यिक संस्मरण चले गये।''—'साहित्य' (वर्ष ७, अंक ४, जनवरी, सन् १९५७ ई०), पृ० ६३।

२. 'सौन्दर्योपासक' (व्रजनन्दन सहाय, सन् १९१९ ई०), पृ० ७८।

यही कह सकते हो कि प्रेमपात्र के नही रहने से, प्रेम का आधार-स्वरूप कोई पदार्थ नही पाने से प्रेम क्योंकर सजीव रह सकता है ? सो सुनो मैं इसका दो उत्तर देता हूँ। तुम्हारे मन को बहलाने के लिए नहीं, वरन् तुम्हें यथार्थ मार्ग पर लाने के लिए मैं यह सब कह रहा हूँ। सुनो, मैं प्रथम तो यह कि तुम अपने प्रेम को कुछ अधिक ऊँची श्रेणी का बनाओ। दया प्रेम का ही एक नामान्तर है। सृष्टि का एक अङ्ग अपने को अनुमान करो सृष्टिमात्र पर दया दिखाओ अनन्त सृष्टि के अनन्त सुख-दुख के संग अपने सुख-दुख का योग करो। संकीर्णता को अपने हृदय से हटाकर उदारता को वहाँ स्थान दो। संसारमात्र को अपना प्रेमपात्र बनाकर सबके संग प्रीति करो! तुम्हारा प्रेम उज्ज्वल होगा।[1]

(३)

पेंचा की मा बदजात ने तो हमको बुड्ढा बना दिया। गाँव भर में हल्ला कर दिया है कि उसकी जब शादी हुई तब हम रामलाल के घर गुमास्तगीरी करते थे। कैसी भयानक बात कहती फिरती है !!! हमारा खिज़ाब और सिगार सब व्यर्थ हुआ ! इस बात को मन में सोंचने से भी हानि हो सकती। हे मन ! असली उमर भूल जा, समझ कि हम अभी बीस बरस के छोकड़े है, मटरबूँट अभी तक कड़ २ चबा सकते है, दौड़धूप सकते हैं ? तैर कर नदी पार हो सकते है, षोड़सी प्रेयसी को अनायास गोद मे लेकर घूम सकते है ? उस चुड़ैल को देखते ही हमारा शरीर जल उठता है; —नही तो कुछ रुपया देकर उससे यह कहने को कहें कि जिस दिन पेंचा मरा उसी दिन हमारा जन्म हुआ ![2]

---

१. 'सौन्दर्योपासक' (वही), पृ० १५०-५१ ।

२. 'बूढ़ा वर' (बाबू ब्रजनन्दन सहाय, सन् १९०९ ई०) पृ० ९। यह श्रीदीनबन्धु मित्र-कृत 'बिए पागल बूढ़ा' नामक बँगला-प्रहसन का हिन्दी-अनुवाद है, जो सन् १९०४ ई० में तैयार किया गया था।

(४)

अफीमची कमलाकान्त की बहुत दिनों से हमे कुछ टोह नही मिली थी। हमने बहुत खोज ढूँढ किया था पर कुछ फल नही निकला। एक दिन अचानक फौजदारी कचहरी मे हमने उसे देखा। ब्राह्मण एक पेड के नीचे जड़ पर तकिया किये नारियल पर तम्बाकू पी रहा था। उसकी आँखें झिप रही थी। हमने सोचा कि और कुछ नही ब्राह्मण ने लालच मे पड़कर किसी की बट्टी से अफीम की चोरी की है। हम ठीक जानते है कि दूसरी वस्तु कामलाकान्त कभी नही चुरावेगा। पास-ही काली वरदी पहने एक कान्स्टिबिल भी खड़ा था। हम वहाँ ठहर नहीं सके। डर हुआ, कही कमलाकान्त जामिन होने को न कहे। दूर खड़े हो देखने लगे कि आगे क्या होता है।[1]

ब्रजविहारी शरण

आप शाहाबाद-जिला के बक्सर नामक स्थान के निवासी श्रीशिवनन्दनलाल श्रीवास्तव के पुत्र थे।[2] आपका जन्म सन् १८८७ ई० की २ जनवरी को हुआ था।[3] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा संस्कृत के माध्यम से मोतीहारी (चम्पारन) मे हुई थी। वहाँ से आपके पिताजी की बदली दरभंगा मे हुई। दरभंगा आने पर आपका नाम

---

१. 'कमलाकान्त का इजहार' (बाबू ब्रजनन्दन सहाय, सं० १९६५ वि०), पृ० ३। यह राय बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय-कृत 'कमलाकान्तेर जुबान बन्दी' नामक बँगला-नाटक का हिन्दी-अनुवाद है।

२. आपके पूर्वज बिहार में जमीन की स्थायी व्यवस्था के समय बक्सर के तत्कालीन राजा साहब के द्वारा बुलाये गये थे। सन् १७९३ ई० के लगभग आपके पितामह श्रीमहावीरप्रसादजी उन दिनों भागलपुर में सहायक अफीम-प्रतिनिधि के पद पर आसीन थे। सन् १८५७ ई० के स्वातन्त्र्य-युद्ध के बाद उनका निधन हो गया था। उनके दिवंगत होने के समय आपके पिताजी की उम्र मात्र ५ वष की थी। कुछ वर्षों तक अत्यन्त दुःख झेलकर आपके पिताजी ने शिक्षा प्राप्त की। पढने में वे बड़े ही कुशाग्रबुद्धि थे। फलतः, सन् १८७२ ई० में बी० ए० की परीक्षा पास करते ही सब-डिप्टी-कलक्टर के पद पर वे आसीन हुए। सम्भवतः, बिहारी स्नातकों के प्रथम दल के ही वे सदस्य थे। कुछ ही दिनों बाद उनकी प्रोन्नति डिप्टी-कलक्टर के पद पर हुई। डिप्टी-कलक्टर के पद पर कार्य-रत रह कर भी उन्होंने डॉ० ग्रियर्सन के भोजपुरी-गीतों के संग्रह एवं भोजपुरी-व्याकरण के कार्य-सम्पादन मे प्रचुर साहाय्य प्रदान किया था।

३. साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।

विधिवत् एक स्कूल मे लिखवाया गया, जहाँ आपके पिताजी एस० डी० ओ० के पद पर आसीन थे। दरभंगा-राज्य से सम्बद्ध एक मुकदमे को लेकर वहाँ से भी उनका स्थानान्तरण हाजीपुर (मुजफ्फरपुर) हो गया। प्रवेशिका (इण्ट्रेन्स) तक आपकी शिक्षा वही हुई। बक्सर से सन् १९०२ ई० मे प्रथम श्रेणी मे प्रवेशिका परीक्षोत्तीर्ण होकर आप क्रमश: मुजफ्फरपुर और इलाहाबाद गये। इलाहाबाद के म्यूर सेण्ट्रल कॉलेज से सन् १९०६ ई० मे बी० ए० पासकर आपने पटना-कॉलेज मे अपना नाम लिखवाया। इसी कॉलेज से सन् १९०८ ई० में आपने एम्० ए० की परीक्षा पास की। सन् १९१० ई० मे बी० एल्० करके आप वकालत करने लगे। इन परीक्षाओं के अतिरिक्त स्वाध्याय के बल पर आपने उर्दू, अँगरेजी, बँगला और संस्कृत का गहन ज्ञान प्राप्त कर लिया था। अँगरेजी मे आपकी इतनी पहुँच हो गई कि उस भाषा के प्राय: सभी महान् कवियो की पूरी-पूरी रचनाएँ आपकी जिह्वा पर आ बसी थी। सन् १९०२ ई० मे ही, जब आप मुजफ्फरपुर मे पढ रहे थे; आपने 'साँगा' नामक एक उपन्यास लिखा था। उन्ही दिनो आपने स्व० श्रीबिन्देश्वरी-प्रसाद वर्मा (भूतपूर्व बिहार विधान-सभाध्यक्ष) के साथ हिन्दी मे लिखने का व्रत लिया था। उन दिनो आपकी लघुकथाएँ आरा-नागरी-प्रचारिणी सभा की 'साहित्य पत्रिका' में प्रकाशित हुआ करती थी। सन् १९१३-१४ ई० के आसपास हिन्दी मे आपके द्वारा लिखित कई पुस्तकों का उल्लेख मिलता है। आपके द्वारा लिखित पुस्तकों मे (१) दलित कुसुम (नाटक), (२) अशोक, (३) कुणाल और तिष्यरक्षिता (नाटक), (४) नन्द-पतन (नाटक), (५) इन्दु (उपन्यास), (६) हूण (उपन्यास) और (७) इन्दु आदि प्रमुख हैं।[१] 'चन्द्रगुप्त मौर्य' पर भी आपने एक महाकाव्य की रचना शुरू की थी, जिसे उचित प्रोत्साहन के अभाव मे प्रथम सर्ग के बाद पल्लवित होने का अवसर नही मिला। आपके स्फुट निबन्ध 'बिहार', 'साहित्य-पत्रिका', 'नई धारा' आदि पत्रिकाओं मे यथावसर प्रकाशित होते रहे है। आपने कुछ कहानियाँ भी लिखी थी, जिनमे कुछ तो पत्र-पत्रिकाओं मे प्रकाशित हुई और कुछ का प्रकाशन कही भी नही हो सका। आपने संस्कृत के 'भारवि', भवभूति', 'भास', 'अश्वघोष' आदि कवियों पर भी अपनी लेखनी चलाई थी। एतद्विषयक आपके कई निबन्ध 'नई धारा' के अंको में प्रकाशित हुए हैं।[२] लगभग सन् १९६३ ई० के आसपास आपकी इहलीला समाप्त हुई।

उदाहरण

(१)

भवभूति के अनुसार, उनके नाटक, 'कालप्रियनाथ' की यात्रा के समय खेले गये थे। परन्तु इन नाटकों में ऐसा कोई संकेत नहीं मिलता, जिससे निश्चय किया जाय कि यह शिवमूर्त्ति कहाँ पर थी, और यह स्थान किसके राज्य में था। कुछ लोगों ने इसे उज्जयिनी के

---

१ इनमें कई अभीतक अप्रकाशित हैं।

२. —देखिए, 'नई धारा' (अंक ८, वर्ष ७, नवम्बर, सन् १९५६ ई०, पृ० ३८; अंक १, वर्ष ११, अप्रैल, सन् १९६० ई०, पृ० ३१-४२, और अंक २, वर्ष ११, मई, सन् १९६० ई०, पृ० २४-३२)।

प्रसिद्ध महाकाल का मन्दिर माना है; परन्तु अनेक कारणों से यह धारणा गलत मालूम होती है। अन्य सज्जन 'मालती-माधवम्' में वर्णित पद्मावती-नगरी को ही कालप्रियनाथ का स्थान मानकर उसी की खोज आवश्यक समझते है। राजशेखर के अनुसार पद्मावती, कन्नौज के दक्षिण मे एक नगरी थी। इसमें सन्देह नही कि भवभूति का, कन्नौज के राजा यशोवर्म्मन् के साथ सम्पर्क था, और सम्भावना यही है कि कालप्रियनाथ का मन्दिर उसी राजा के राज्य में था। जिस पद्मावती का वर्णन 'मालती-माधवम्' में इस विस्तार और प्रेम के साथ किया गया है, उससे भवभूति का सम्बन्ध अवश्य रहा होगा। इसलिए राजशेखर का सुझाव ग्राह्य है। परन्तु लेले ने 'कालप्रियनाथ' नाम से सादृश्य दिखाकर, इसे ग्वालियर के दक्षिण में स्थित 'काल्पी' निर्धारित किया है।[1]

(२)

राणा—सरदारो! हमारे विश्वस्त दूतों ने मुझे सूचना दी है कि मुसलमान पवित्र गयाजी पर आक्रमण करने की तैयारी कर रहे हैं।

एक सरदार—श्री जी की खबर ठीक है।

दूसरा सरदार—सुनने में तो यह भी आया है कि उनकी सेनाएँ चल चुकी हैं।

राणा—सरदारो! गयाजी हिन्दू मात्र के लिए पवित्र और प्राणों की आहुति देकर भी रक्षणीय स्थान है। पितरों का अन्तिम श्राद्ध वहीं किया जाता है, और प्राचीन-काल में अनेक महात्माओं ने तपश्चर्या करके वहीं से मुक्ति पाई पाई थी। कौन हिन्दू होगा जो इस पवित्र स्थान की रक्षा नहीं करना चाहेगा?

सब सरदार—अवश्य, अवश्य।

---

१. 'नई धारा' (वही, अंक ६, वर्ष ११, सन् १९६० ई०), पृ० ३-१८।

राणा—हमारा वंश 'हिन्दूआ-सूरज' इसी से कहाता है कि धर्म की रक्षा के लिए इसकी तलवार सदा उन्नत रहती है।

तीसरा सरदार—महाराणाजी ! इस कार्य में आप हमें भी सदा उद्यत पायेंगे।

सब सरदार—हाँ, हाँ।[1]

बाबूलाल शर्मा

आप गया-जिला के 'मानपुर' नामक स्थान के निवासी प० गंगाविष्णु शर्मा के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९५० व० (सन् १८९३ ई०) की आश्विन कृष्ण-प्रतिपदा को हुआ था।[2] आपकी आरम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। आगे चलकर स्थानीय संस्कृत-विद्यालय मे संस्कृत का विशेष ज्ञान प्राप्त कर आपने न्याय, वेदान्त, पुराण, कर्मकाण्ड, ज्योतिषादि विभिन्न विषयों पर अधिकार प्राप्त कर लिया। आपको 'काव्यतीर्थ' और 'व्याकरणतीर्थ' की उपाधियाँ प्राप्त थी। जीविका के लिए आप गया के मॉडल स्कूल में अध्यापन का कार्य करते थे। मूल रूप से आप कवि थे। आपकी अधिकांश कविताएँ व्रजभाषा मे रचित है। आपका रचनाकाल सन् १९१८ ई० बतलाया गया है।

उदाहरण

(१)

निगमागम की चरचा सब गुप्त है, लुप्त है धर्मकथा न बढ़ेगी।
सब व्यास कपास समास हुआ, कवि यूथप की प्रभुता न चलेगी।
अब दाल गलेगी किसी की नही, बिकराल है काल न बात लहेगी।
बस एक भली सबकी हृदयंगम, श्रीतुलसी कवितावलि रहेगी।

(२)

महिमा रचना तुलसी की महीं महँ, मंजुल मंगल धार अमी की।
मधुरादि छवो रस पै तुलसी बिन, भोग लगै नहिं तुष्टि में जी की।

---

१. 'नई धारा', (वही, वर्ष १, अंक ११, अप्रैल, सन् १९६० ई०), पृ० ३७।
२. 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० १२०।

नम लो बहु ग्रन्थन के पुर पत्रन, जो तुम भक्ति चहो सिय पी की।
निगमागम-सार सनातन-पोषण रम्य पढ़ो रचना तुलसी की।[1]

बालमुकुन्द सहाय

आप मुंगेर-जिला के 'रामचन्द्रडीह' नामक स्थान के निवासी श्रीकाशीप्रसादजी के पुत्र है। आपका जन्म सं० १९४७ वि० की आश्विन शुक्ल-षष्ठी (१९ अक्टूबर, रविवार) को हुआ था।[2] कलकत्ता के साउथ सुबर्ण-स्कूल से सन् १९१२ ई० मे मैट्रिक की परीक्षा पास करने के बाद पटना के बी० एन्० कॉलेज से आपने आइ० ए० (सन् १९१६ ई०) और बी० ए० (सन् १९२१ ई०) की परीक्षाएँ पास की। फिर, सन् १९२७ ई० मे पटना लॉ-कॉलेज से बी० एल्० की डिग्री प्राप्त कर आप वकालत करने लगे। वकालत के पेशे मे रहते हुए आप हिन्दी-सेवा भी करते रहे। हिन्दी मे आपने दो पुस्तको की रचना की है—(१) भारत-विजय (पद्य) और (२) मानस-मीमासा (गद्य)। आपकी रचना के उदाहरण हमे नही मिले।

बेचूनारायण

आप गया-जिला के 'नबीनगर' नामक स्थान के निवासी श्रीमित्रजीतलालजी, पोस्टमास्टर, के पुत्र थे। आपका जन्म सन् १८८४ ई० को १३ वी सितम्बर को हुआ था।[3] अपनी प्रखर प्रतिभा के कारण आपने मिड्ल की परीक्षा मे छात्रवृत्ति प्राप्त की। इसके बाद, आपने पटना कालेजियट-स्कूल से प्रवेशिका की परीक्षा पास की और पटना-कॉलेज मे चले आये। एफ्० ए० मे आपको फिर छात्रवृत्ति मिली। पटना-कॉलेज से ही आपने बी० ए० की डिग्री पाई। बी० टी० की उपाधि आपको पटना ट्रेनिंग-कॉलेज से मिली। शिक्षा प्राप्त कर लेने के बाद आप पटना कालेजियट-स्कूल मे सहायक शिक्षक हुए। वहाँ से राँची के ट्रेनिंग-स्कूल में असिस्टेण्ट हेडमास्टर होकर चले गये। वहाँ रहकर आपने सन्ताली-भाषा का अध्ययन किया, जिसके परिणामस्वरूप, सन्तालियो की शिक्षा के लिए आप 'स्पेशल अफसर' बना दिये गये। कुछ दिनों के बाद आप भागलपुर ट्रेनिंग-स्कूल के हेडमास्टर हुए। वहाँ से आपका स्थानान्तरण

---

१. 'रसिकविनोदिनी' (भाद्रपद, सं० १९९२ वि०), पृ० ७-८।
२. दिनांक ३१ अगस्त, सन् १९५६ ई० को आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।
३. 'बिहार-विभाकर' (वही), पृ० १५७। आपके परिचय-लेखन में 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६४२) तथा 'भागलपुर-दर्पण' (वही, पृ० १४०), से भी सहायता ली गई है। 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' में भ्रमवश आपको पटना-निवासी बतलाया गया है।

पलामू जिला-स्कूल और फिर पटना कॉलेजियट-स्कूल में उक्त पद पर ही हुआ। वहाँ आप सन् १९३७ ई० के मार्च तक रहे। सन् १९३७ ई० के अप्रैल मे आप तिरहुत-डिवीजन के स्कूलो के इन्सपेक्टर बना दिये गये। उसी वर्ष सरकार की ओर से आपकी सेवाओ के लिए आपको रायबहादुरी मिली थी। सन् १९३५ ई० में, पचम जॉर्ज की रजत-जयन्ती के अवसर पर आपको 'जुबली-मेडल' और षष्ठ जॉर्ज के सिंहासनारोहण के समय आपको 'कॉरोनेशन-मेडल' प्रदान किये गये थे। आपको सरकार ने 'सेण्ट जॉन अम्बुलैंस कैडेट डिवीजन एसोसियेट' की उपाधि से भी विभूषित किया था। आप 'बोर्ड ऑव स्टडीज', 'बोर्ड ऑव एग्जामिनर्स', 'टेक्स्ट-बुक-कमिटी' तथा 'बोर्ड ऑव सेकेण्डरी एजुकेशन' के भी माननीय सदस्य थे। सन् १९३९ ई० की १६ मई को आपने सरकारी सेवा से अवकाश-ग्रहण किया।

आप सामाजिक-धार्मिक कार्यो मे भी बहुत दिलचस्पी लेते थे। आपकी गणना आदर्श ब्रह्मसमाजियो मे होती थी। अनेक वर्षों तक आप उसके मन्त्री भी थे। ब्रह्म-समाज सम्बन्धी आपके भाषण बड़े ओजस्वी हुआ करते थे। आपके संयमी जीवन का प्रत्येक क्षण पुस्तकावलोकन, भगवद्‌भजन और ग्रन्थ-रचना मे ही व्यतीत होता था। आपने हिन्दी में अनेक धार्मिक और पाठ्य-पुस्तको की रचना की थी। आपके द्वारा रचित पुस्तको के नाम ये है—(१) चिन्तन, (२) शिशु-चिन्तन, (३) ब्रह्मानन्द केशवचन्द्र सेन, (४) राजा राममोहन राय, (५) जीवन-वेद, (६) हिन्दी-व्याकरण, (७) प्रार्थना, (८) पाठ-टीका, (९) अंक-गणित, (१०) सम्राट्-पंचम जॉर्ज और महारानी मेरी। आपकी रचना के उदाहरण भी हमे नही मिले।

भगवतीचरण

आप चम्पारन-जिला के निवासी बतलाये जाते है।[१] आपका जन्म सं० १९५३ वि० (सन् १८९६ ई०) की भाद्र शुक्ल-चतुर्दशी को हुआ था। आपके पिताश्री का नाम श्रीलालजी सहाय था। आपका लालन-पालन एक राजकुमार की तरह हुआ था। आपकी

१. 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही), पृ० ८२ और १०६। 'हिन्दीसेवी संसार (वही, पृ० १६४) मे भ्रमवश आपका जन्मकाल सन् १८९६ ई० बतलाया गया है। आपके पूर्वज मूलतः शाहाबाद-जिला के निवासी थे। बहुत दिनों बाद उनके परिवार के लोग सारन-जिला के 'किसुनबारी' नामक ग्राम में आकर रहने लगे। उस ग्राम से निकलकर श्रीनरसिंह सहायजी उन्नीसवीं शती के उत्तरार्द्ध में मोतीहारी में आकर बस गये। ये (श्रीनरसिंह सहायजी) ही आपके पितामह थे। —देखिए, नवराष्ट्र' (दैनिक, १२ अप्रैल, सन् १९६४ ई०, पृ० ३) में प्रकाशित श्रीहरिश्चन्द्र प्रसाद-लिखित 'चम्पारन के साहित्य-दधीचि श्रीभगवतीचरण' शीर्षक लेख। आपके परिचय-लेखन में मुख्य रूप से इसी सामग्री से सहायता ली गई है। इसके अतिरिक्त, 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही, पृ० ८२ और १०६) 'हिन्दीसेवी संसार' (वही, पृ० १६४), 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ', (वही पृ० ६७२ म) तथा 'साहित्य' (त्रैमासिक, वर्ष १०, अंक ३, अक्टूबर, सन् १९५९ ई०, पृ० २-३) में प्रकाशित सम्पादकीय टिप्पणी से भी सहायता ली गई है।

प्राथमिक शिक्षा फारसी के माध्यम से घर पर ही हुई और जब आप बारह वर्ष के हुए, तब स्कूल मे प्रविष्ट करा दिये गये। उसी समय आप हिन्दी-कविता और उर्दू-शायरी की ओर झुके। सं० १९७५ वि० मे आप कलकत्ता-विश्वविद्यालय से प्रवेशिका-परीक्षा मे उत्तीर्ण हुए। कलकत्ता मे एफ० ए० पढ ही रहे थे कि सं० १९७७ वि० मे असहयोग की आँधी आई और आपकी पढाई छूट गई। आपके जीवन का अधिकाश अध्यापक के रूप मे व्यतीत हुआ। सं० १९७८ वि० मे, मोतीहारी मे जब राष्ट्रीय विद्यालय की स्थापना हुई, तब उसमे आप एक अध्यापक के रूप मे ही नियुक्त हुए। फिर, राष्ट्रीय विद्यालय के टूट जाने पर कई वर्षो तक आप रामगढवा के माध्यमिक विद्यालय और मोतीहारी के गौरीशकर माध्यमिक विद्यालय मे शिक्षक रहे। वही से स० २०१५ वि० मे आपने अवकाश-ग्रहण किया। आप वास्तव मे एक चलते-फिरते 'विश्वकोश' थे। चम्पारन मे आप 'गुरुदेव' के नाम से विख्यात थे।

आपकी जवानी और बुढापे के दिन अभावो मे व्यतीत हुए। अभावो के बीच रहकर आपने जो साहित्य-सेवा की, उसे कभी नही भुलाया जा सकता। आरा-नागरी-प्रचारिणी सभा तथा चम्पारन-जिला-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन से भी आपका निकट का सम्पर्क था। आपने उसके मच को दो बार सुशोभित किया—पहली बार सं० १९९८ वि० की वैशाख कृष्ण-द्वितीया को नरकटियागज-अधिवेशन के कवि-सम्मेलन के अध्यक्ष[१] और दूसरी बार सं० २००४ वि० की अग्रहण कृष्ण प्रतिपद् को सुगौली-अधिवेशन के अध्यक्ष के रूप मे।[२] आपने संस्थाओ के माध्यम से भी हिन्दी के प्रचार-प्रसार मे महत्त्वपूर्ण योगदान किया। आपकी ही प्रेरणा से सं० १९७७ वि० मे मोतीहारी मे एक 'मित्र-मण्डली' की स्थापना हुई थी, जिसके तत्त्वावधान मे उन दिनों गोष्ठियाँ और नाट्य प्रदर्शन हुआ करते थे। पुनः सं० १९९७ वि० मे मोतीहारी मे भारतेन्दु-साहित्य-संघ' की स्थापना होने पर उसके माध्यम से भी आपने अनेक साहित्यकारो को प्रकाश पाने का अवसर दिया। आपने कुछ दिनो तक 'निर्भीक' (साप्ताहिक) का सम्पादन भी किया था।

आपकी ख्याति विशेषत: एक कवि एवं नाटककार के रूप में थी। आपके द्वारा रचित कविताएँ व्रजभाषा, हिन्दी और उर्दू[३]-भाषाओ मे मिलती हैं। आपने अपनी रचनाओं के प्रकाशन की चिन्ता कभी नही की, एकान्तभाव से साहित्य-सेवा करते रहे। शायद इसी कारण आपका एकमात्र खण्डकाव्य 'जमदग्नि का सत्याग्रह'[४] ही प्रकाशित हो सका। आपके लिखे 'यसमा', 'झल्लकण्ठ' और 'मुगलेआजम' नामक मौलिक नाटक छपे तो नहीं, पर अनेक बार रंगमंच पर उस समय सफलतापूर्वक खेले गये, जब हिन्दी मे मौलिक नाटको की कमी थी।[५]

---

१ इस अवसर पर आपने पद्यबद्ध भाषण प्रस्तुत किया था।

२. इन दोनों भाषणों से चम्पारन की साहित्यिक-परम्परा पर सुन्दर प्रकाश पडता है।

३. उर्दू के अनेक मुशायरों में आपने दगल मारा था। आप का तखल्लुस 'शमीम' था।

४. सं० १९७८ वि० में 'मित्र-मण्डली', मोतीहारी से प्रकाशित। यह खडीबोली की प्रारम्भिक रचनाओं में अपना विशिष्ट स्थान रखता है।

५. एक बार 'यसमा' के प्रदर्शन में अभिनेता के रूप में आप स्वयं रंगमच पर उतरे थे।

अपने जीवन के अन्तिम दिनो मे आप 'माया' नामक अपना दूसरा खण्डकाव्य लिख रहे थे जो दुर्भाग्यवश पूरा न हो सका। आपने स्फुट कविताओ की भी रचना कम नही की थी।[1] आप सं० १९१५ वि० (सन् १९५८ ई०) की आश्विन कृष्ण-चतुर्थी (२२ सितम्बर) को इस धराधाम को छोड़कर चले गये।

उदाहरण

(१)

दुखी बाला झोपड़ी में अश्रुमाला है बनाती,
दीपमाला है जलाती।
विवशता से प्राणपति परदेश निकले कुछ कमाने
पर न लौटे आज भी क्या हुआ उनको कौन जाने
भाग्यशाली लगे अब तो घरों में दीपक जलाने
तेल की बात क्या घर मे मिलेगी नही बाती,
अश्रुमाला है बनाती।[2]

(२)

यह स्वार्थबुद्धि कैसे आई ?
जिसके चलते अन्धेर मचा, दुनिया सारी है घबड़ाई।
कोई नन्दन वन का आनन्द, उठाता है उद्यानों में।
जंगल में भी मंगल है, तम्बू तनते है मैदानों में।
जो नित्य सजाता है निज तन को, नये-नये परिधानों में।
जिसके झाड़ो पर जलने की, है होड़ लगी परवानों में।
वह क्या जाने, क्या समझे, कितनों को है कैसी कठिनाई।
यह स्वार्थबुद्धि कैसे आई ?[3]

(३)

वर्षा में बादल झूम रहे।
अंकस्थित बिजली हुई जहाँ, उत्साह उमड़ता चला वहाँ,

१. ऐसी रचनाओं में कुछ आपके शिष्य श्रीयमुनाप्रसाद झुनझुनवाला के पास आज भी सुरक्षित हैं।
२. 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही), पृ० ८३।
३. 'नवराष्ट्र' (वही), पृ० ३।

रसवती हुई है रसा यहाँ, छाया न हर्ष है कहाँ कहाँ,
प्रेमी सुप्रिया को, शलभ समा को, विटप-लता को चूम रहे।
वर्षा में बादल झूम रहे।
घन घहर-घहर घहराते हैं, घिर-घिर घर पर छा जाते हैं,
निज खुले हाथ से अब झर-झर निर्झर सैकड़ों बनाते हैं,
दानी पाते शिक्षा इनसे ताड़ित उर कहते सूम रहे।
वर्षा में बादल झूम रहे।
जग में कृषकों के जान यही, पूरे करते अरमान यही।
रख लेते हैं सब शान यही, वरदान यही वर-ज्ञान यही,
रसमय हो उमड़े हृदय सभी, कोई भी क्यों महरूम रहे।
वर्षा में बादल झूम रहे।'[1]

भगवतीप्रसाद सिंह 'कूर'

आप छपरा-शहर के 'रतनपुरा'-महल्ला-निवासी चौतरिया-राज्य के सर्वस्व बाबू चण्डीप्रसाद सिंहजी के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९५२ वि० (सन् १८९५ ई०) के चार अक्टूबर को हुआ था।[2] आपका बचपन 'कोर्ट ऑव वार्ड्स' की देखरेख में व्यतीत हुआ। लगभग २२ वर्ष की आयु में उससे मुक्त हो जाने पर आपको बनारस क्वींस-कॉलेज की अपनी पढ़ाई छोड़कर अपनी भू-सम्पदा की देखरेख के लिए छपरा आ जाना पड़ा। वहाँ आप इण्टरमीडियट तक ही शिक्षा प्राप्त कर सके थे। स्कूल-कॉलेज में द्वितीय भाषा के रूप में आपने उर्दू-फारसी ही पढ़ी थी। अतः, छपरा आकर आपको नये सिरे से हिन्दी एवं संस्कृत का अध्ययन करना पड़ा। आगे चलकर सं० १९८२ वि० (सन् १९२६ ई०) में आपने हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग से 'विशारद' की उपाधि प्राप्त की।

आप एक कुशल चित्रशिल्पी, सफल संगीत-साधक और छपरा की ऐतिहासिक नाट्यसंस्था 'अमेच्योर-ड्रामेटिक-एसोसियेशन' के सक्रिय सदस्य एवं एक प्रभावोत्पादक अभिनेता रहे हैं। अखिलभारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन और काशी-नागरी-प्रचारिणी

---

१. 'वार्षिकी' (सम्पादक-मण्डल, सन् १९६१-६२ ई०), पृ० ४।
२. 'सारण्यक' (सं० पाण्डेय कपिल, सन् १९६६ ई०), पृ० ६। यह पुस्तक आपको ही सादर समर्पित है। प्रस्तुत परिचय की अधिकांश सामग्री इसी पुस्तक से ली गई है।

सभा के स्थायी सदस्य होने के साथ-साथ आप अनेक साहित्यिक एवं कला-सम्बन्धी संस्थाओं से आज भी सम्बद्ध हैं।

आपने अँगरेजी[1] और उर्दू[2] के साथ-साथ हिन्दी भाषा मे भी गद्य-पद्य रचनाएँ की हैं। हिन्दी मे आपके द्वारा लिखित कुल दो पुस्तके ही अबतक प्रकाशित हो सकी है—(१) फलित स्वप्न' (कथा-काव्य) और (२) देश-वन्दना (कविता)। यह दुर्भाग्य की बात है कि आपका अधिकाश साहित्य अबतक अप्रकाशित ही पडा है।[3] इन दिनों आप छपरा-शहर-स्थित अपने चौतरिया निवास मे ही स्थायी रूप से रहते हैं।

उदाहरण

(१)

गगन पर श्याम घन दरसा रहे हैं।
अहर्निश स्वच्छ जल बरसा रहे है ॥
अवनि के अंक को सरसा रहे है।
मुदित जन राग ऋतु का गा रहे है ॥
छिड़कता जल है यह आकाश-मण्डल।
बना हो जैसे ब्रह्मा का कमण्डल ॥
उपजता इससे है सब खेत जङ्गल।
मनाते हैं सभी आनन्द-मंगल ॥[4]

(२)

सुकवि समस्या देख उठत विचार मन,
'शूर' एक बात सुठि धर्म आचरण की।
सभ्य औ' असभ्य नही वंश ते लखात,
अब टूक-टूक होत जात आछरण की ॥

---

१. अँगरेजी में संस्कृत-काव्य-शास्त्र पर आपने एक बृहदाकार प्रामाणिक ग्रन्थ की रचना की है, जो अभीतक अप्रकाशित ही है। ग्रन्थ का नाम है—'Studies in Sanskrit Poetics'.

२. उर्दू में आप 'हमराज' तखल्लुस से काव्य-रचना किया करते हैं।

३. हिन्दी में आपके द्वारा लिखित ये तीन दर्शन-ग्रन्थ भी अप्रकाशित ही पडे हैं। (१) भारतीय दर्शन का सारांश, (२) योरोपीय दर्शन का सारांश और (३) स्वतन्त्र प्रवाह : भावात्मक-दर्शन।

४. 'सारण्यक' (वही), पृ० ८।

नेम हेम भेद-भाव लाग रहो एक संग,
एक रीति साँच करो नाम के भजन की।
गीध की गुनी थी, गजराज की सुनी थी,
ताते साँचे हरि सुनेंगे पुकार हरिजन की ॥[1]

(३)

क्या खूब शामियाना बादल का छाजता है,
लो पेशवाज़ पहने यह मोर नाचता है।
है सब्ज रंग जिसमे यह नट विराजता है,
अब ताल-स्वर से चातक पी-पी पुकारता है।
निज देश की हृदय से करते है बन्दना हम ॥

× × ×

भारत के रहनेवाले गायो को मानते है,
सेवा है इनकी करते यश भी बखानते है।
धार्मिक कृतज्ञता का ये मर्म जानते है,
है दान-पुण्य करते और यज्ञ ठानते हैं।
निज देश की हृदय से करते है बन्दना हम ॥[2]

(४)

देखिए प्राणी भी कैसा है अधम कैसा अधीन,
पर है ऊपर की दया से कार्य से होता प्रवीण।
क्या कहूँ उस वक्त मैं अपने कुतूहल की दशा,
जा पड़ी उस सुन्दरी पर जब सुधाकर की प्रभा।[3]

★

---

१. 'सुकवि' (वर्ष ६, अंक ६, दिसम्बर, सन् १६३३ ई०), पृ० २१।
२. लेखक द्वारा रचित 'देश-वन्दना' से आपसे ही प्राप्त।
३. लेखक द्वारा रचित 'फलित स्वप्न' से आपसे ही प्राप्त।

भगीरथ झा 'रमेश'

आप मुँगेर-जिला के तारापुर थानान्तर्गत 'कुआँगढी' (संग्रामपुर) नामक ग्राम के निवासी पं० श्रीनाथ झा[1] के पुत्र है। आपका जन्म स १९५१ वि० (सन् १८९४ ई०) की आश्विन शुक्ल-द्वितीया (सोमवार) को हुआ था।[2] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा का श्रीगणेश ६ वर्ष की उम्र मे ही गाँव की पाठशाला मे हुआ। सन् १९१२ ई० में आपने योग्यतापूर्वक माध्यमिक (मिड्ल) की परीक्षा पास की। सन् १९१६ ई० मे आपने भागलपुर के 'फर्स्ट ग्रेड ट्रेनिंग-स्कूल' की फाइनल परीक्षा मे सफलता प्राप्त की। सन् १९१७ ई० से ही आपने अध्यापन-कार्य अपनाया। श्रीगान्धी विद्यालय, गोरगावाँ (सुलतानगंज), मुँगेर की सेवा मे आपने अपने जीवन का अधिकाश समय बिताया। विद्यालय-सेवारत रहकर भी आपने समाज की भरपूर सेवा की। आपके द्वारा स्थापित कई संस्थाएँ आज भी कार्य कर रही हैं। हिन्दी-प्रचार आपके जीवन का व्रत था। इस बात को ध्यान मे रखकर आपने अपने गाँव मे 'भारती-भवन-पुस्तकालय', 'राजेन्द्र पुस्तकालय-वाचनालय' तथा गाँव की महिलाओ की शिक्षा को समुन्नत रूप देने की दृष्टि से कला-पुस्तकालय' का संस्थापन एवं संचालन बड़े ही मनोयोग से किया था। सन् १९५४ ई० मे आपने भारत-सेवक-समाज' की एक शाखा के सचालन का भी भार अपने कन्धो पर लिया था। आपके सचालन एव संरक्षण मे इस सस्था के द्वारा उस इलाके का अधिकाधिक उपकार हुआ था। सन् १९१७ ई० से ही हिन्दी प्रचार की दिशा में आपने रामायण-प्रचार' का भी कार्य किया। 'रामायण' की कथाओ को आप इतनो सरस बना देते थे कि आपके इसी गुण पर प्रसन्न होकर हिन्दी-सभा', भागलपुर ने आपको रामायणाचार्य' की उपाधि से अलकृत किया था।

आपकी साहित्य-सेवा का आरम्भिक वर्ष सं० १९७४ वि० (सन् १९१७ ई०) माना जाता है। अध्यापन-काल के प्रारम्भ से ही आप पत्र-पत्रिकाओं के बड़े प्रेमी थे। उस काल की सुप्रसिद्ध मासिक पत्रिका 'काव्य-कलाधर' मे आपकी रचनाएँ प्रकाशित हुआ करती थीं। आपके द्वारा लिखित पुस्तको मे 'सौरभ' नामक एक कविता संग्रह एवं 'गद्य-कुसुम नामक एक गद्य-संग्रह का उल्लेख मिलता है। सन् १९१७ ई० से अद्यावधि आप शिक्षण कार्य मे रत हैं।

उदाहरण

(१)

जीव जन्तु सब घर फिरि आये, चिड़ियों ने निज नीड़ बसाये।
बादल उमड़ि घुमड़ि नभ छाये, लगी हूक-सी, दिल घबड़ाये।
नाथ नही अजहूँ घर आये ॥१॥

---

१. आपके पितामह श्रीविश्वनाथ झा, अपने सद्व्यवहार एव गुणों के लिए अपने इलाके में बड़े ही प्रख्यात थे। गाँव के आसपास उनकी बड़ी ख्याति थी।

२. आपके द्वारा दिनांक २० अक्टूबर, सन् १९५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।

दीप-शिखा पै सलभ दिवाने, लगे प्रेम से तन झुलसाने।
चातक की रट देख नेह पर, आये स्वाति-जल बरसाये।
नाथ नहीं अजहूँ घर आये ॥२॥[1]

(२)

जब रास रचे नटनागर आगर, साथ लिए वृषभानु लली को,
कटि-काछनि पीत लसै सिर मोर पखा सब गोपिन संग हरी को,
नित धेनु चरावत बेनु बजावत, गोप-सखा मिलि छाह मो नीको,
सोइ मूर्ति बसै मन-मन्दिर मे चहै, लागे 'रमेश' कलंक को टीको।[2]

भवप्रीतानन्द ओझा

आप सन्तालपरगना-जिला के प्रसिद्ध तीर्थस्थल 'वैद्यनाथधाम' से पूर्व-दक्षिण स्थित दो मील की दूरी पर 'कुण्डा' नामक ग्राम के निवासी और वैद्यनाथधाम के सरदार पण्डा श्रीश्रीत्रिपुरानन्द ओझा के पुत्र थे।[3] आपका जन्म सं० १९४३ वि० (सन् १८८६ ई०) की आश्विन कृष्ण-नवमी को हुआ था।[4] जब आप नौ वर्ष के हुए तब आपके पिता असमय

---

१ लेखक से प्राप्त 'व्याकुलता' शीर्षक कविता से।

२. 'काव्य-कलाधर' (मासिक, नवम्बर, सन् १९२६ ई०) से।

३. आपके पूर्वपुरुष श्रीचन्द्रमणि ओझा मिथिलान्तर्गत 'विल्वपंचक'-ग्राम के निवासी थे। श्रीबाबा वैद्यनाथजी के पूजनार्थ वे अपनी-सहधर्मिणी-सहित वैद्यनाथधाम आये। वे एक धर्मनिष्ठ और सदाचारी व्यक्ति थे। कहते हैं कि स्वप्न में शिवजी ने उन्हें वैद्यनाथधाम में प्रधान पूजक के रूप में कार्य करने का आदेश दिया था। मन्दिर के प्रांगण में उनका बनवाया कूप आज भी 'चन्द्रकूप' के नाम से विख्यात है। उनकी मृत्यु के बाद उनके प्रथम पुत्र श्रीरत्नपाणि ओझा सरदार पण्डा हुए, जिन्होंने वैद्यनाथ-मन्दिर में श्रीशंकरजी के मन्दिर के सामने श्रीपार्वतीजी का मन्दिर बनवाकर उसमें जयदुर्गा पार्वतीजी की प्रतिमा स्थापित की थी। कालक्रम से सर्वश्री यदुनन्दन ओझा, देवकीनन्दन ओझा, रामदत्त ओझा, आनन्ददत्त ओझा, परमानन्द ओझा, सर्वानन्द ओझा, ईश्वरीनन्द ओझा तथा पूर्णानन्द ओझा के बाद आपके पितामह श्रीशैलजानन्द ओझा सरदार पण्डा हुए, जो तन्त्र एवं वेदान्त के प्रगाढ पण्डित थे। इन्होंने तन्त्र तथा वेदान्त-विषयक अनेक ग्रन्थों की रचना की। इनकी विद्वत्ता की ख्याति सर्वविख्यात थी। इन्होंने मन्दिर के प्रांगण में तीन मन्दिर बनवाये, जिनमें क्रमशः गौरीशंकर, नर्मदेश्वर तथा मनसादेवी की मूर्त्तियाँ विधिवत् स्थापित कीं। उक्त मन्दिर से संलग्न भीतरी खण्ड में श्रीयन्त्र की स्थापना तो इनकी अमर कीर्त्ति मानी जाती है। इनके पश्चात् इनके प्रथम पुत्र और आपके पिता श्रीत्रिपुरानन्द ओझा सरदार पण्डा हुए। किन्तु, इनकी असामयिक मृत्यु हो गई।

४. आपके द्वारा दिनांक १५ अक्टूबर, सन् १९६२ ई०, को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री के आधार पर।

काल कवलित हो गये। अत्यल्प अवस्था होने के कारण उस समय आप सरदार पण्डा नही हो सके। उस असहाय अवस्था मे आपकी पितामही ने आपको अपना स्नेह दिया। किन्तु, उनकी मृत्यु के बाद आपको दर दर की ठोकरे खानी पडी। अन्त मे, आप अपनी पैतृक सम्पत्ति के रूप मे प्राप्त एक छोटे से घर मे अपने अनुजो के साथ रहने लगे। किन्तु, वहाँ भी अशान्ति उत्पन्न हो गई और अन्त मे आपने अपने हिस्से का मकान केवल पाँच सौ रुपये मे बेचकर देवघर से उत्तर दो मील की दूरी पर रामपुर नामक ग्राम में एक पेड के नीचे कुटी बनाकर आप निवास करने लगे। अर्थाभाव के कारण कुछ दिनो बाद आप अपनी स्त्री को पितृगृह मे रखकर वैराग्य-धारण करने की बात सोच ही रहे थे कि आपको रची कविताओ से प्रभावित होकर लक्ष्मीपुर के घाटवाल श्रीप्रतापनारायण सिंहदेव ने आपको आदरसहित अपने यहाँ बुला लिया।[1] वहाँ आपका विशेष समय प्रकृति की गोद मे विहार करने तथा काव्य रचना करने मे ही व्यतीत होता था। किन्तु, दुर्भाग्यवश इसी बीच आपके आश्रयदाता की मृत्यु हो जाने के परिणामस्वरूप उनसे प्राप्त होनेवाली आपकी मासिक वृत्ति बन्द हो गई और आप पुन कष्ट के दिन व्यतीत करने लगे। इसबार जामताडा-नरेश श्रीश्यामलाल सिंहजी आपके सहायक हुए।[2] फिर, कुछ काल बाद, आपकी काव्य-रचना की प्रतिभा से मानभूम-जिलान्तर्गत पचकोट' राज्य के धर्मनिष्ठ एवं उदार हिजहाइनेस महाराज श्री ज्योतिप्रसाद सिंह बहादुर आपकी सहायता के लिए अग्रसर हुए।[3] मुख्यतः, आपकी ही सहायता से लम्बे संघर्ष के बाद आप वैद्यनाथ-मन्दिर के 'सरदार पण्डा'-पद पर प्रतिष्ठित हुए। अपने पूर्वजो की तरह आपने वैद्यनाथ-मन्दिर के प्रागण मे श्रीतारादेवी के मन्दिर का निर्माण कराकर उसमे प्रतिमा प्रतिष्ठापित की तथा मन्दिर से सलग्न भीतरी खण्ड मे दुर्गा-मण्डप का उद्‌घाटन किया। आपने सुलतानगज मे भी गगा-तट पर एक मन्दिर का निर्माण करवाकर उसमे शिवलिंग की स्थापना की। आपने और भी अनेक मन्दिरो के निर्माण करवाये और इस दिशा मे प्रभूत यश अर्जित किया।

आप एक कर्मनिष्ठ शिवभक्त थे। आपकी दृष्टि मे शिव और विष्णु दोनो एक ही निराकार ब्रह्म के साकार रूप थे। वास्तव मे, आपका व्यक्तित्व वैष्णव, शैव और शाक्ति भावधाराओ का संगम था, इसी कारण आप विशेष श्रद्धास्पद थे। दुर्गा-पूजा

---

१ ये आपकी एक सात्त्विक रहस्यात्मक कविता से बड़े प्रभावित हुए और इन्होंने अपने राज्य में भागलपुर-जिलान्तर्गत बौंसी के निकट 'फागा' नामक ग्राम में बीस बीघा ब्रह्मोत्तर जमीन तथा एक स्वर्णपदक देकर आपको पुरस्कृत किया था, साथ ही आपके लिए एक मासिक वृत्ति भी कायम कर दी थी। उक्त जमीन आज भी आपके परिवार के अधीन है।

२. ये अनन्य कृष्ण-भक्त थे। इन्होंने अपने दरबार में रासलीला के समय आपको आमन्त्रित किया था। दरबार में अनेक राजाओं, कवियों, गायकों आदि के समक्ष कविता में आपने दरबार का जो वर्णन उपस्थित किया, उसीसे ये बहुत प्रभावित हुए।

३. इन्होंने श्रीशिरोमणि हाजरा नामक गायक से आपकी रचनाएँ सुनी थीं तथा उन्हीं से इन्हें आपके वंश तथा आपकी दयनीय अवस्था का ज्ञान प्राप्त हुआ। परिणामतः, इन्होंने पहले आपको देवघर-शहर में वैद्यनाथ-मन्दिर के निकट एक पक्का मकान खरीद दिया, और आपको तीस रुपये मासिक वृत्ति देने लगे। इन्होंने उक्त पद की प्राप्ति के लिए मुकदमे का पूरा खर्च तो दिया ही, कलकत्ता-उच्च न्यायालय द्वारा नियुक्त आयोग के समक्ष आपके लिए साक्ष्य भी दिया।

के अवसर पर आपकी पूजा का आनन्द लेने बिहार तथा बंगाल के विभिन्न क्षेत्रों से लोग उपस्थित हुआ करते थे।

आपको वैद्यनाथधाम के स्थानीय विद्यालय मे बंगला की ही आरम्भिक शिक्षा प्राप्त हो सकी थी। किन्तु आगे चलकर घर पर ही आपने अपने पितामह श्रीश्रीशैलजानन्द ओझा से तन्त्र-वेदान्तविषयक शिक्षा ली और समय आनेपर आप तन्त्र और वेदान्त के निष्णात विद्वान् हुए।

आपकी गणना हिन्दी, अंगिका, मैथिली और बँगला के लोकप्रिय कवियों मे होती है। आप आशुकवि थे।[1] छोटानागपुर, मुँगेर, भागलपुर, सन्ताल परगना तथा पश्चिम बंगाल एव उड़ीसा के कुछ हिस्सो मे आपकी काव्य-रचना, विशेषकर आपके झूमरों का व्यापक प्रचार है। आपने हजारों की संख्या मे गीत लिखे होंगे। उनमें, वास्तव में, एक महाकवि के स्वर की गूँज है। आपकी पुस्तकाकार रचनाओ मे (१) झूमर-पारिजात, (२) झूमर-रसतरंगिणी, (३) झूमर-रसमजरी, (४) घैरा-रत्नमंजूषा और (५) वैद्यनाथ-क्षेत्रसर्वस्व प्रमुख है। आप सन् १६६६ ई० में दिवंगत हुए।

उदाहरण

(१)

देखु योगिया के रंग, देखु योगिया के रंग।
तपसी के भेष धरि नारी अर्धंग।
बिहसित पंचमुख आनन्द उमंग,
कपालें अगिनी, जटाँ गंगतरंग।
हे गौर वरन तिन नयन सुढंग,
जटा पर मुकुट जे, विकट भुजंग।
हे हाथ अभयवर कुठार कुरंग,
भाले सुधाकर गले गरल प्रसंग।
अनका के देथिन भोग-वसन-सुरंग,
निज लागि भाँग - गोला, रहथि उलंग।
भवप्रीता के देव शिव चरण सुभंग,
देहा छाड़ि उड़े बेरि प्राण विहंग॥[2]

---

१. अपने स्वाध्याय के क्रम में, माइकेल मधुसूदन के ग्रन्थों से प्रभावित होकर करीब १८ वर्ष की उम्र में आप काव्य-रचना की ओर प्रवृत्त हुए थे।

२. साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री से।

(२)

जय शिव, जय माधव मधुहारी ।
जय उमाकान्त, जय रमापति ॥
धवल-नील, भैरव मूरति,
कैलास बैकुण्ठ - चारी ।
एक ब्रह्मरूप उभय सरूप,
महिमा-बूझिते नारी हे ।
जय शिव, जय माधव मधुहारी ॥
कभु बाघाम्बर, कभु पीत वास,
वृषासन कभु, कभु फनित्रास (गरुड़)
त्रिताप यातना भारी ।
जय शिव, जय माधव मधुहारी ॥
कभु वा भीषण सिंगार तान,
कभु सुमधुर वंशीर गान,
भवप्रीता भने, उभय चिन्तने,
गोपद भवाब्धि वारी हे,
जय शिव, जय माधव मधुहारी ॥[1]

(३)

गेलैं गगरिया ले जमुना किनरिया,
कदम्ब तरे ।
छैला बसिया बजावे कदम्ब तरे
बसिया बजावै कि हँसिया देखावै,
नैना रऽ बाने ।

१. 'आदिवासी' (वर्ष १२, अंक ५, २२ जनवरी, सन् १९५९ ई०), पृ० १० ।

मोरा हिया डोलावै नैना रऽ बाने ।
बिनती रिझावै कि पिरिती बुलावै,
निकुंज बने ।
भवप्रीता गावै कि हरिसे मनावै,
चरन नैया ।
कि कैसै आखिर पावै चरन नैया ।।[1]

(४)

राधा पाछूं-पाछूं चलै गोपिनियाँ
सोलहु रे हजार, हाय राम सोलहु रे हजार गे ।
जैसे उमतिया सभे जुबतिया
खोजए नन्दकुमार गे ।
कोए मुरुझि खसे कोए उठावै,
कोए करै हाहाकार हाय सभ कोय
जैसन मनियाँ खोजै नगिनियाँ,
तैसन भेलै अकार गे ।
गिरिबन खोजै फूलबन खोजै
खोजै जमुनारऽ धार हाय राम खोजै,
भवप्रीता कहै हृदि कमल में,
काहे नै खोजै गँवार गे ।।[2]

१. श्रीपरमानन्द पाण्डेय, एम्० ए०, बी० एल्० (बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना) से प्राप्त ।
२. वही ।

भवानीदयाल संन्यासी[1]

आपका मूल निवास-स्थान शाहाबाद-जिला के सासाराम सब-डिवीजन का 'बहुआरा'[2] नामक ग्राम है। किन्तु आपका जन्म सन् १८९२ ई० के १० सितम्बर, को दक्षिण-अफ्रिका के 'जोहन्सबर्ग' मे हुआ था। आपके पिता का नाम बाबू जयराम सिंह[3] था, जो शर्तबंदी कुली-प्रथा के शिकार होकर दक्षिण-अफ्रिका चले गये थे।[4] आपकी माता श्रीमती मोहिनीदेवी भी, जिनका मातृगृह युक्तप्रान्त मे, अयोध्या के निकट था, अपने पतिदेव के साथ ही दक्षिण-अफ्रिका गई थीं।

आपकी शिक्षा जोहान्सबर्ग मे ही हुई। वहाँ के 'सेण्ट सिप्रियन' और 'वेस्लन मेथोडिस्टी स्कूल' में आपने अँगरेजी की तथा पं० आत्मारामजी गुजराती की पाठशाला मे हिन्दी की शिक्षा प्राप्त की। किन्तु, स्कूली पढाई से आपने कोई प्रमाण-पत्र नही प्राप्त किया। केवल स्वाध्याय के बल पर आपने अपनी योग्यता इतनी बढा ली कि आपका जीवन प्रगति-पथ पर अग्रसर होता रहा।

सन् १८९९ ई० मे आपकी माताजी का देहान्त हो गया। सन् १९०४ ई० मे आप अपने पिताजी के साथ पहले-पहल भारत आये। अपने गाँव मे आकर आपने हिन्दी का और अधिक अभ्यास किया। सन् १९०५ ई० मे (वंग-भग-आन्दोलन के सूत्रपात के समय) आपके हृदय मे देश सेवा की लगन पैदा हुई और गाँव मे एक राष्ट्रीय पाठशाला खोलकर आप बच्चो को निःशुल्क शिक्षा देने लगे। उस समय गाँवो बाजारों, मेलो मे स्वदेशी-प्रचार-सम्बन्धी आपके व्याख्यान भी हुआ करते थे।

आपका विवाह सन् १९०८ ई में, शाहाबाद-जिले की 'सखरा' ग्राम निवासी श्रीरामनारायण राय की पुत्री जगरानी देवी से हुआ जो आगे चलकर आपके सार्वजनिक

---

१ प्रस्तुत परिचय मुख्यतः आचार्य शिवपूजन सहाय द्वारा मासिक 'सुधा' (वर्ष १३, खण्ड १, संख्या १, सन् १९३९ ई०) में लिखित जीवनी पर आधृत है। इस सिलसिले में साधना-मन्दिर, बम्बई से प्रकाशित 'स्वामी भवानीदयाल सन्यासी' (राजबहादुर सिंह, सन् १९४० ई०) से भी सहायता ली गई है। साथ ही, देखिए 'मिश्रबन्धुविनोद' (वही, ३८४-८५), 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही पृ० ६५१-५२), 'बिहार-दिनाकर' (वही, पृ० ४१६-२६), 'गृहस्थ' साप्ताहिक (२८ जनवरी, १९२३ ई०), पृ० २६ आदि। श्रीप्रेमनारायण अग्रवाल ने इण्डियन कलोनियल एसोसियेशन, इटावा से अँगरेजी में आपकी एक बृहत् जीवनी लिखी थी, जो जब्त हो गई।

२. यह गाँव मुगलसराय से गया जानेवाली ग्रैण्ड-कार्ड लाइन (ई० आर० एल०) के करगहर (थाना) से लगभग पाँच-छह मील उत्तर है।

३. "इन्होंने अपनी श्रमशीलता एवं सदाचारिता से प्रचुर धनोपार्जन किया, साथ ही अपने सद्गुणों के प्रभाव से स्वदेशवासियों में ऐसे सर्वप्रिय हो गये कि ट्रान्सवाल इण्डियन-एसोसियेशन के सभापति निर्वाचित हुए, तथा कर्मवीर गान्धी के विश्वसनीय बन्धु प्रमाणित होकर इतिहास के पृष्ठों में अमर बन गये। इनके विषय में महात्मा गान्धी ने अपनी आत्मकथा में चर्चा की है।"—'सुधा' (मासिक, लखनऊ, वर्ष १३, खण्ड १, संख्या १, सन् १९३९ ई०) तथा 'शिवपूजन-रचनावली' (वही, चतुर्थ खण्ड), पृ० २९९।

४. स्वामी भवानीदयाल सन्यासी (वही), पृ० ४।

जीवन मे बहुत बड़ी सहायिका सिद्ध हुई ।[१] सन् १९०९ ई० में आप आर्यसमाजी बन गये और बहुआरा में आपने आर्यसमाज की स्थापना की। उसके साथ ही एक वैदिक पाठशाला भी खोली गई। धीरे धीरे आपके उद्योग से सासाराम शहर में भी आर्यसमाज की स्थापना हुई। अपनी सामाजिक सेवाओं के परिणामस्वरूप सन् १९११ ई० में आप बिहार आर्य-प्रतिनिधि सभा के अवैतनिक उपदेशक पद पर नियुक्त हुए। उसी समय आपको पटना से निकलनेवाले 'आर्यावर्त्त' नामक मासिक पत्र का सहकारी सम्पादक भी बनाया गया। सन् १९११ ई० में अपने पिताजी के देहान्त के बाद, गृह-कलह के कारण, आप अपनी पत्नी और अपने अनुज श्रीदेवीदयालजी के साथ पुन 'दक्षिण-अफ्रिका' (डरबन) वापस चले गये। वहाँ से प्रवासाधिकार की गडबडी के कारण आपलोगों को ट्रांसवाल चला जाना पड़ा, जहाँ महात्मा गान्धी सेठ रुस्तमजी तथा पोलक साहब की सहायता से प्रवासाधिकार प्राप्त हो गया। वहाँ पहुँचते ही सन् १९१३ ई० मे जर्मिस्टन नगर के युवकों ने 'इण्डियन यंगमेंस एसोसियेशन' की स्थापना कर आपको उसका अध्यक्ष बना दिया। उसी वर्ष भारतीय श्रमजीवियों पर लगे हुए तीन पौंड सालाना टैक्स रद्द कराने के लिए भारतीयों ने संग्राम की घोषणा की, जिसमे आपकी पत्नी भी शामिल हुईं। इधर आपने भी 'जर्मिस्टन' में सत्याग्रह छेडा, पर कुछ ही घण्टे जेल मे रखकर आपको छोड़ दिया गया। इसके बाद सत्याग्रही-सहित आपने नेटाल की सीमा पार की और आप पुन. पकडे गये। रात-भर जेल मे रहने के पश्चात् मुक्त होने के बाद 'न्यूकासल' पहुँचकर आपने उस देशव्यापी हडताल का श्रीगणेश किया, जो दक्षिण अफ्रिका के इतिहास मे एक अमर अध्याय है। उसमें आपको पत्नी-सहित तीन मास का कठोर कारा-दण्ड मिला था। कारा-मुक्त होने के बाद सन् १९१४ ई० में आप महात्मा गान्धी के अखबार 'इण्डियन ओपिनियन' के हिन्दी-विभाग मे सम्पादक हुए। किन्तु, उसी वर्ष महात्माजी के भारत चले आने पर, सन् १९१४ ई० मे 'जर्मिस्टन' की एक सोने की खान मे नौकरी करते हुए आपने वहाँ ट्रान्सवाल-हिन्दी 'प्रचारिणी-सभा' स्थापित की। इसके पश्चात् सन् १९१५ ई० में आपने नेटाल-प्रान्त मे भी हिन्दी-प्रचार का कार्यारम्भ किया और अनेक स्थानों मे हिन्दी-पाठशाला स्थापित की तथा डरबन के निकट क्लेर-इस्टेट मे एक हिन्दी-आश्रम बनाया, जिसमे पाठशाला, पुस्तकालय एवं छापाखाने की व्यवस्था की गई। उसी समय आपने 'दक्षिण अफ्रिका-हिन्दी साहित्य-सम्मेलन' भी स्थापित किया, जिसका प्रथम अधिवेशन 'लेडीस्मिथ' नगर मे हुआ था। इन सब कार्यों के परिणामस्वरूप डरबन से 'कर्मवीर' नामक हिन्दी-साप्ताहिक निकलने लगा, जिसका दो वर्षों (सन् १९१७-१८ ई०) तक आपने अत्यन्त कुशलतापूर्वक सम्पादन किया। इस समय तक आपको लोकप्रियता बहुत बढ गई थी। अत., सन् १९१९ ई० मे आप दक्षिण अफ्रिका के प्रवासी भारतवासियों का प्रतिनिधित्व करने के लिए अमृतसर-कांग्रेस मे भेजे गये। इन दिनों आपने मेवाड के बिजौलिया-सत्याग्रह में भी दिलचस्पी ली। सन् १९२० ई० मे पुनः नेटाल वापस पहुँचकर आपने

---

१. इसके विषय में विशेष जानकारी के लिए देखिए, 'गृहलक्ष्मी' (मासिक, प्रयाग, वर्ष १९, पञ्चम-षष्ठ दर्शन, सन् १९२५ ई०) तथा 'शिवपूजन-रचनावली' (वही, चतुर्थखण्ड, पृ० ३१०-१३) में प्रकाशित स्व० आचार्य शिवपूजन सहाय का लेख 'श्रीमती जगरानी देवी'।

'नेटाल इण्डियन-काँगरेस' को नवजीवन प्रदान किया। आप पहले उक्त संस्था के उप सभापति हुए और फिर सभापति। इसी समय आपने डरबन के निकट 'जेकब्स' नामक स्थान मे अपनी पत्नी के नाम पर 'जगरानी प्रेस' खोला, जिसने सन् १९२२ ई० मे 'हिन्दी'[1] नामक साप्ताहिक पत्र निकाला। इस पत्र का सम्पादन आप स्वयं करते थे। इसके पश्चात् सन् १९२९-३० ई० तक आपने अनेक बार महत्त्वपूर्ण कार्यो से भारत की यात्रा की। सन् १९२२ ई० मे आप इण्डियन काँगरेस के प्रतिनिधि के रूप मे गया-काँगरेस मे सम्मिलित होने के लिए भारत आये। सन् १९२५ ई० मे आप एक शिष्ट-मण्डल के सदस्य के रूप मे भारत आये और कानपुर की काँगरेस मे भी शामिल हुए। इस बार की यात्रा में आपने अपने गाँव में अपने खर्च से एक, प्रवासी-भवन' बनवाया, जिसका पुस्तकालय प्रवासी साहित्य के लिए दर्शनीय था।[2] सन् १९२७ ई० में, रामनवमी के दिन आपने संन्यास ग्रहण किया और सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि-सभा (दिल्ली) की ओर से वैदिक धर्म के प्रचारार्थ दक्षिण अफ्रिका लौट गये। सन् १९२९ ई० में आप पुन: उपनिवेशो मे लौटे भारतवासियों की दशा जाँचने के लिए भारत पधारे। इसी यात्रा मे आपने मद्रास के नेटाल हाउस'[3] का उद्घाटन किया था। उसी समय लाहौर की काँगरेस में स्वाधीनता का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ और आप स्वदेशोद्धार-युद्ध मे सम्मिलित हो गये। आपका कार्यक्षेत्र बिहार बना। शाहाबाद-जिला काँगरेस-कमिटी ने आपको ही अपना सभापति चुना। सन् १९३० ई० के मार्च महीने में आप गिरफ्तार कर लिये गये और आपको ढाई वर्ष का कारावास-दण्ड मिला। वहाँ से आपने 'कारागार'[4] नामक हस्तलिखित मासिक पत्र अपने सम्पादकत्व में निकाला।

---

१. यह हिन्दी और अँगरेजी दोनों में निकलती थी। अपने समय में यह विश्व-भर के प्रवासी भारतवासियों की अत्यन्त प्रिय मुख्य-पत्रिका बन गई थी। इसके अनेक विशेषांक महत्त्वपूर्ण थे और वे पत्रकारिता के इतिहास में चिरस्मरणीय रहेंगे।

२ (क) इसमें एक पाठशाला भी थी, जो नेटाल के श्री ए० दुखन के खर्च से चलती थी। अब उसका सारा सामान दक्षिण-अफ्रिका चला गया। वहाँ डरबन नगर की जेकब्स-पहाड़ी पर आपके पुत्र और भतीजे ने १५ हजार रुपये लगाकर जो 'भवानी-भवन' बनवाया है, उसी में उक्त सारा सामान सुरक्षित है। उसमें उन सब अभिनन्दन-पत्रों का भी संग्रह है, जो देश-विदेश में आपको प्राप्त हुए हैं।

—देखिए 'शिवपूजन-रचनावली' (वही), पृ० ३०५।

(ख) डरबन से सदा के लिए भारत आते समय आप अपने साथ अपने अमूल्य संग्रहालय को भी लेते आये थे, जिसे आपने अजमेर (आदर्शनगर) में एक नये प्रवासी-भवन का निर्माणकर सुरक्षित रखा था। प्रवासी भारतवासियों से सम्बन्ध रखनेवाला साहित्य उतनी प्रचुर मात्रा में लन्दन के ब्रिटिश-म्यूजियम इण्डिया हाउस के सिवा और कहीं भी संसार में एकत्र न होगा।—देखिए 'साहित्य' (वर्ष ६, अंक ३, अक्टूबर, सन १९५८ ई०) तथा 'शिवपूजन-रचनावली' (वही) पृ० ३५०-५१।

३. यह भवन भारत-सरकार की ओर से बना है, जिसमें लूले, लँगड़े और अपाहिज प्रवासियों को आश्रय मिलता है। —वही, पृ० ३०६।

४. इसके व्यवस्थापक मुजफ्फरपुर-निवासी श्रीमथुराप्रसाद सिंह और चित्रकार गिद्धौर के कुमार कालिका-प्रसाद सिंह थे। इसके सत्याग्रह-विशेषांक में बिहार के प्रत्येक जिले के सत्याग्रह का इतिहास दिया गया था।—'शिवपूजन-रचनावली' (वही), पृ० ३०७।

जेल से छूटने के बाद, सन् १९२१ ई० मे आपने अखिलभारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के कलकत्ता-अधिवेशन में होनेवाले सम्पादक-सम्मेलन की अध्यक्षता की। उसी वर्ष देवघर (वैद्यनाथधाम) मे हुए बिहार-प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के दशम अधिवेशन के अध्यक्ष भी आप बनाये गये। उस समय आप 'आर्यावर्त्त'[१] नामक हिन्दी-साप्ताहिक का सम्पादन कर रहे थे। किन्तु यह सब छोडकर उसी समय आपको प्रवासी भारतवासियो से बातचीत कर दक्षिण अफ्रिका चला जाना पडा। दक्षिण अफ्रिका से आप फिजीद्वीप जाना चाहते थे, किन्तु आपको उसकी अनुमति नही मिली। सन् १९३३ ई० में, जब आप दूसरी बार नेटाल आर्य प्रतिनिधि-सभा के प्रधान चुने गये, तब आपने आर्य-धर्म की पूरी सेवा की। उसी समय आपकी अध्यक्षता मे ही दयानन्द निर्वाण-अर्द्धशताब्दी मनाई गई थी। सन् १९३४ ई० मे आप दक्षिण अफ्रिका मे सम्राट् पंचम जॉर्ज के सुपुत्र से मिले। उसके अगले वर्ष आप 'डरबन' नगर के कमिश्नर ऑव ओथ्स' बनाये गये।[२]

आप सन् १९३५-३६ ई० के उत्तरार्द्ध मे 'साउथ अफ्रिकन इण्डियन कॉंगरेस' के प्रतिनिधि बनकर पुन भारत आये। इसी यात्रा मे आपने गया (बिहार) के राजेन्द्र आश्रम' का उद्‌घाटन किया और लखनऊ की कॉंगरेस मे प्रवासी भारतीयो से सम्बद्ध अनेक ओजस्वी भाषण किये थे। सन् १९३६ ई० के अन्त मे आप पुन. दक्षिण अफ्रिका लौट गये। वहाँ से, सन् १९३७ ई० मे, पूर्व अफ्रिका जाकर आपने उसके प्रधान नगर लॉरेन्म मारक्विस, मे 'वेद-मन्दिर' की आधारशिला रखी।[३] इस संस्था के माध्यम से आपने अनेकानेक प्रवासी भारतीय बालक-बालिकाओ को हिन्दी-माध्यम से धार्मिक एव सांस्कृतिक शिक्षा देकर वैदिक धर्म का प्रभूत प्रचार किया। सन् १९४४ ई० मे काशी-नागरी प्रचारिणी सभा की स्वर्ण-जयन्ती के अवसर पर आप ही उसके अध्यक्ष चुने गये थे। उसी समय आपने अजमेर से निकलनेवाले 'प्रवासी' नामक पत्र का संचालन और सम्पादन किया।

आपके जीवन का लक्ष्य था हिन्दी साहित्य का नि:स्वार्थ सेवा। आपकी सेवाएँ केवल साहित्यिक क्षेत्र तक ही सीमित नही रही, राजनीतिक, सामाजिक एव धार्मिक क्षेत्रो मे भी आपकी सेवाएँ स्तुत्य है। स्वामी विवेकानन्द और स्वामी रामतीर्थ परमहंस के बाद आप ही ऐसे भारत-भक्त संन्यासी हुए है, जिन्होने भारत की सीमा के बाहर समुद्र पार के देशो मे हिन्दी, हिन्दू और हिन्दुस्तान के मन्त्र का शंख फूँका। इस दृष्टि से उक्त दोनो आत्माओ की तरह आप भी विशाल भारत के निर्माताओं मे एक थे।

आपके द्वारा लिखित हिन्दी-पुस्तको[४] के नाम इस प्रकार है--(१) दक्षिण अफ्रिका के सत्याग्रह का इतिहास, (२) दक्षिण अफ्रिका के मेरे अनुभव, (३) सत्याग्रही महात्मा गान्धी,

---

१. इसे बिहार की आर्य-प्रतिनिधि-सभा, पटना ने प्रकाशित किया था।

२. डरबन-कार्पोरेशन ने आपके सम्मान में एक सड़क का नाम 'दयाल-रोड' रख दिया था।

३. यह वेद-मन्दिर वहाँ के भारत-समाज की सम्पत्ति है। इसमें पचास हजार से भी अधिक रुपये खर्च हुए हैं। इसमें भारतीय बालक-बालिकाओं को हिन्दी-माध्यम द्वारा धार्मिक और सांस्कृतिक शिक्षा भी दी जाती है।

४. आपके द्वारा लिखित कुछ पुस्तकें सरस्वती-सदन, इन्दौर से निकलकर हिन्दी-संसार में प्रसिद्ध हो चुकी हैं।—देखिए, 'मारवाड़ी-सुधार' (वर्ष २, अंक २, सन् १९२२ ई०) तथा 'शिवपूजन-रचनावली' (वही), पृ० ३९१।

(४) हमारी कारावास-कहानी, (५) ट्रान्सवाल मे भारतवासी, (६) नेटाली हिन्दू, (७) शिक्षित और किसान, (८) वैदिक धर्म और आर्य-सभ्यता, (९) वैदिक प्रार्थना, (१०) भजन-प्रकाश, (११) प्रवासी की कहानी (१२) वर्ण-व्यवस्था और मरण-व्यवस्था (१३) बोअर युद्ध का इतिहास, (१४) स्वामी शकरानन्द की बृहत् जीवनी, (१५) सत्याग्रह का इतिहास, (१६) दक्षिण-अफ्रिका मे आर्य संन्यासी (अप्रकाशित)। इन पुस्तको के अतिरिक्त और बहुत-सी छोटी-छोटी पुस्तिकाएँ भी है। कई हिन्दी-पुस्तको की भूमिकाएँ बडे महत्त्व की है। देश विदेश के पत्रो मे आपने जो लेख लिखे है और अनेक सभा-समितियो मे जो भाषण दिये हैं, उन सबका यदि संग्रह किया जाय, तो एक महाग्रन्थ तैयार हो जाय। आप सन् १९५१ ई० मे, ५९ वर्ष की आयु मे परलोकगामी हुए।[1]

उदाहरण

(१)

इस समय जनाब जिन्ना और उनकी मुस्लिम-लीग पर यह सनक सवार है कि किसी तरह हिन्दुस्तान का अंग-भंग हो जाना चाहिए। उनके ख्याल मे भारत की भौगोलिक, राजनीतिक, आर्थिक और सास्कृतिक एकता मुस्लिम-हित के लिए विघातक है और उसको मिटा डालने मे ही वे मुसलमानो का मङ्गल समझते है। उनकी सबसे बड़ी दलील यह है कि हिन्दुस्तान को स्वराज्य मिलने से मुसलमानो को क्या फायदा होगा ? इस समय वे अँगरेजो के गुलाम है, उस समय उनको हिन्दुओ के बहुमत की गुलामी करनी पड़ेगी। इस गोरखधन्धे मे उनको कड़ाही से कूदकर अँगार मे ही झुलसना पड़ेगा। अँगरेजी विदेशी है, उनकी अधीनता मुसलमानो को उतनी नही अखरती है, जितनी हिन्दुओ की अधीनता अखरेगी। इसलिए वे किसी भी हालत में हिन्दुओ की मातहती मे रहना मंजूर नही कर सकते। उनकी राय शरीफ मे भारत की स्वाधीनता का अर्थ है—हिन्दुओं के बहुमत की हुकूमत और मुसलमानो के गले हिन्दुओ की गुलामी का पडना।[2]

(२)

दक्षिण अफ्रिका मे दरबन अपने ढङ्ग का एक अद्वितीय, अनु-

---

१. 'कलम-शिल्पी' (वही), पृ० १०३। विभाग में सुरक्षित 'विहार अब्दकोश' की एक कतरन के अनुसार, सन् १९५० ई० की ९ मई को प्रवासी-भवन, अजमेर मे आप परलोकगामी हुए।

२. 'सा० विश्वमित्र' (कलकत्ता, पूजा-दीपावली-विशेषांक, सन् १९४४ ई०,) पृ० ११७।

पम और आदर्श नगर है। नगर के निकट ही समुद्र का सिक्का जमा हुआ है जिसके वक्षस्थल पर बड़े-बड़े बेड़े और छोटी-छोटी नावें किलोलें कर रही है। दरबन के विराट् बन्दर पर भू-मण्डल के भ्रमणकारी जहाजो का अपूर्व समारोह बना रहता है। सागर के दुर्घट घाट के समीप ही 'ब्लॉक' नामक विशाल पवत के गगनचुम्बी शिखर पर दृढ़ दुग का दृश्य दर्शनीय और मनोमुग्धकारी है जिस पर स्थित कर्मचारीगण आने-जाने वाले जहाजो की निगरानी किया करते है। नगर के अन्दर दीर्घकाय दालाने तथा ऊँची-ऊँची अटारियाँ आकाश से अठखेलियाँ कर रही है। सडको की सुन्दरता और स्वच्छता सर्वथा सराहनीय है और पथिको के पैदल चलने के लिए सड़कों की दोनों ओर पटरियाँ (Foot-path) बना दी गई है। व्यापारियों का वाणिज्य-विस्तार विलोक कर विस्मित होना पड़ता है और उनके भव्य भवनो मे भाँति-भाँति के पदार्थो की प्रभा निरखते हुए नयन नही थकते। प्राय. यूरोपियन नागरिको के निवास के साथ ही पुष्प-वाटिकाओ की अपूर्व शोभा रहती है जिसमे चम्पा, चमेली, गुलाब, गेंदा, सूर्यमुखी आदि सौदर्यपूर्ण पुष्पो की छटा देखकर स्वर्ग-सुख का अनुभव होने लगता है। कही क्यारियो मे पुष्पों की पुष्कल प्रभा प्रकट हो रही है, कही गमलो में फूलो के पौधे पनप रहे है और कही भव्य भवनों पर पुष्पलतायें पसर रही है।[1]

★

भागवतप्रसाद मिश्र 'राघव'

आप पटना-जिला के 'राघवपुर' (बिहटा) नामक स्थान के निवासी वैद्य शिरोमणि प० रघुनाथ मिश्रजी[2] के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १६४६ वि० (सन् १८६२ ई०)

---

१. 'नेटाली हिन्दू' (श्रीयुत भवानीदयाल, सन् १६२० ई०), पृ० १५-१६।

२. (क) आपके द्वारा दिनांक २८ फरवरी, सन् १६६१ ई० को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।— देखिए 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ', (वही), पृ० ६४० भी।
(ख) ये संस्कृत के भी अच्छे विद्वान् थे और इनकी गणना अपने युग के कवियों में भी होती थी। इनकी काव्य-रचना से प्रभावित होकर तत्कालीन टिकारी (गया) के महाराजा ने इन्हें 'कवीन्द्र' की उपाधि से विभूषित किया था। इनके द्वारा लिखित इन चार पुस्तकों की प्रसिद्धि थी—(१) उद्धवचम्पू, (२) आर्याचारादर्श (३) मुक्ति-विकाम और (४) रस-मंजूषा।

की फाल्गुन कृष्ण-षष्ठी (बुधवार) को हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही आपके पिताजी के द्वारा हुई। तदनन्तर, आपने आयुर्वेद ओर ज्योतिष का गहन अध्ययन किया। १२ वर्ष को उम्र से ही आपमे काव्य-रचना के लक्षण दीख पडते थे।

सन् १९१२ ई० से आपकी कविता प्रकाश मे आने लगी थी। सर्वप्रथम आपने हिन्दी के वरिष्ठ विद्वान् प० श्रीपद्मसिंह शर्मा 'कमलेश जी की प्रेरणा से हिन्दी-काव्य-रचनाओ मे 'विमलध्वनि', 'अमृतध्वनि', 'मधुरध्वनि' आदि कई नये छन्दो का प्रयोग किया है। आपकी कोई पुस्तकाकार रचना प्रकाश मे नही आ सकी है। इधर कुछ वर्षों से आप अपने सभी पारिवारिक सदस्यो के साथ गया-मण्डलान्तर्गत 'दक्षिणेश' नामक ग्राम मे बस गये है। सम्प्रति, आप गया-नगर के 'बहुआर-चौरा' नामक मुहल्ले मे निवास कर रहे है।

उदाहरण

(१)

आजो न अयलन पियरवा घरे,
जाय के दिनमा पतरा मनौलो,
साग दहो तुरते उधारे मँगौली,
कहेला हल केतना से मन मे लगौली,
पुछहूँ न गेलो असगुनवाँ के डरे ॥ आजो० ॥
बेर डूबल जाइत हइ छन छन परइ फुहरिया,
गली कीच भेलई भिजलइ बजरिया,
थकल माँदल राही छोड़ देलकइ डगरिया
केकरा से कहूँ गुंई कउन का करे ॥ आजो० ॥
पूरब पंसोखा उगलइ सतरंग चुनरिया,
पेन्हलक चौवाई के बीचे बदरिया,
मँगिया के मोती नियर चमकइ बिजुरिया,
ठुमुक-ठुमुक नाच चाँद कैलन तरे ॥ आजो० ॥
रोके न रुकऽ हइ अँखिया निगोड़ो,
तिले तिले राह ताके करे बरजोरी,

मनमा के का कहूँ थिर न जताई थइ,
कहही पियरवा के पाँव तर परे ॥ आजो० ॥।[1]

(२)

लाल लाल पल्लव पले, कुसुमित कली रसाल,
पीत पटो काले अली, चूमे कुसुमित भाल।
चूमे कुसुमित भाल, भाले भर भर गाले गोल,
गुलाले मल मल, प्याले तोल मुदाते मोल,
मनाते मान, उठाते तान, लगाते ताल,
रुठे है बैर, उठी है प्रीति, नयन हैं लाल,
लाल लाल पल्लव ... . ।[2]

भिखारी ठाकुर

आपका वास्तविक नाम 'मनजउवी ठाकुर' है। आप सारन-जिला के 'कुतुपुर'[3] नामक ग्राम के निवासी श्रीदलसिंगार ठाकुर के पुत्र है। आपका जन्म उस ग्राम मे ही सन् १८८७ ई० (सन् १२९५ साल फसली) को पोष शुक्ल-पञ्चमी (सोमवार) को हुआ था।[4] आपकी स्कूली शिक्षा नही के बराबर है। बचपन मे आप गायें चराया करते थे। जब बड़े हुए, तब आपने अपना जातीय पेशा (हजामत बनाना) अपना लिया। कुछ दिनो बाद आप खडगपुर (कलकत्ता) जाकर अपने पेशे से जीविकोपार्जन करने लगे। वही राम-लीला देखकर आपके मन मे नाटक लिखने और अभिनय करने का उत्साह हुआ। कहते हैं, वही आपने अपने तथाकथित नाटक 'बिदेसिया' को रचना की, जिसे देखने के लिए हजारों की संख्या मे लोग आने लगे। खडगपुर से आप जगन्नाथपुरी गये। वहाँ आपके मन मे तुलसी-रामायण पढने का अनुराग उत्पन्न हुआ। 'रामचरितमानस' का पाठ आप नियमित

१. आपके द्वारा प्राप्त रचनाकाल सन् १९२८ ई०।

२. आपके द्वारा प्राप्त। अमृतध्वनि में वसन्त-वर्णन।

३. फसली सन् १२९४ के भादों में गंगा के कटाव से 'कुतुपुर' गाँव बह गया और दियारा में बसा, जो छपरा-जिले में पड़ गया। पहले उक्त गाँव आरा-जिले के बड़हरा (डॉ० बबुरा) थाने में था।— देखिए 'देवकीर्त्तन' भिखारी-चौजुगी, पृ० २।

४. आपके द्वारा दिनांक २९ जून, सन् १९५७ ई० को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के आधार पर। आपने स्वय एक स्थान पर अपने विषय में लिखा है—
जाति के हजाम मोर कुतुबपुर मोकाम छपरा से तीन मील दियरा में बाबूजी।
पुरुब के कोना पर गंगा के किनारे पर जाति पेशा बाटे विद्या नाहीं बाटे बाबूजी ॥

रूप से करते है। मानस के नियमित पाठ से ही आप मे काव्य-रचना की प्रेरणा हुई। यों आपमे काव्य-रचना की प्रतिभा जन्मजात थी। अपनी भोजपुरी काव्य-रचना एव अपने नाट्याभिनय के कारण आप उत्तरप्रदेश के पूर्वी जिलों और बिहार के पश्चिमी जिलो मे बहुत प्रसिद्ध है। आपके समाज-सुधार सम्बन्धी नाटकों एव काव्य-रचनाओं का भोजपुरी के सुविस्तृत क्षेत्र की जनता पर अद्भुत प्रभाव देखकर अँगरेजी सरकार ने आपको 'रायसाहब' की उपाधि से विभूषित कर आपसे प्रचार कार्य मे अप्रत्यक्ष सहायता ली। आपको राष्ट्रीय सरकार से भी पदक एवं पुरस्कार प्राप्त हो चुके हे। आप सहस्र मानी मे भोजपुरी के 'जनकवि' है। 'श्रीरामरतन' एव 'देवता-विलाप' के अतिरिक्त 'पुस्तिका-समूह' नामक एक पुस्तिका-संग्रह में आपकी ये पुस्तकाकार रचनाएँ सगृहीत है—(१) हरिकीर्त्तन, (२) शंका-समाधान, (३) भजनमाला, (४) कलियुग-बहार (नाटक) (५) बहरा-बहार (नाटक) (६) देवकीर्तन या भिखारी-चौयुगी, (७ राधेश्याम-बहार ८) यशोदा-सखी-संवाद (९) चीचोर बहार (नाटक), (१०) पुत्रवधू (नाटक), (११) बेटी-वियोग, (१२) विधवा-विलाप (नाटक), (१३) श्रीगगास्नान (नाटक), (१४) भाई-विरोध (नाटक), (१५) ननद-भौजाई-सवाद, (१६ नवीन बिरहा, (१७) कलियुग-प्रेम (नाटक ८ भागों मे), (१८) चौवर्ण पदवी (नाई-पुकार) तथा (१९) बुढशाला का बयान इनके अतिरिक्त आपने (१) बिदेसिया,[1] (२) भिखारी जयहिन्द-खबर, (३, नाई-पुकार आदि और भी पुस्तकों की रचना की है।

उदाहरण

(१)

आठो घरी घेरले बा सिर पर कालवा,
राम कह राम कह मन मतवलबा।
किनके खालऽ दही चांउरा रोटी भात दलवा,
बिनु दाम राम भज कवन बा आकलवा॥
काम क्रोध लोभ मद नरक के नालवा,
ओही मे गिरावत बाटे घरही के जालवा।

---

१. ऐसा प्रसिद्ध है कि अपने उस नाटक के कारण आपको विशेष लोकप्रियता मिली। यह भी कहा जाता है कि उक्त नाटक का सफलता के साथ अभिनय कर आपने एक सम्प्रदाय ही स्थापित कर दिया है। यह सत्य है कि प्रतिभाशाली कवि होने के साथ-साथ आप एक सफल अभिनेता भी हैं। किन्तु, यह भी सत्य है कि बिदेसिया आपकी मौलिक रचना नहीं है। इस सम्बन्ध में डॉ० बजरंग वर्मा ने 'बिदेसिया' के अमरगायक, शीर्षक अपने अनुसन्धानात्मक लेख में पर्याप्त सामग्री एकत्र कर दी हैं। —देखिए भोजपुरी-भाषा और साहित्य (वही), पृ० ४४ और ९१; 'भोजपुरी के कवि और काव्य' (वही), पृ० २२० तथा विभाग में सुरक्षित डॉ० वर्मा का लेख।

पोसत बाड़ऽ देह बरछी माँजत बाड़ऽ भालवा,
हिस्सा खातिर बाजत बाटे झगरा के भालवा ।
कहत भिखारी रहब सरग पतलवा,
नाम चाभी राखऽ खुली सगरो के तालवा ॥[1]

(२)

करेजवा मे लागल बा कुबरी के तीर ।
कर धरी धनुष कृष्ण मुरती के,
हो गइली बड़ा गोबोर ॥ करे० ॥
जहर धार मुसकान मोहन के,
भीजल बा सकल शरीर ॥ करे० ॥
जा ऊधो अतिने सुधी कहिह,
तनिको सहात नइखे पीर ॥ करे० ॥
कहत भिखारी बिहारी ना अइलन,
फूटि गइल तकदीर ॥ करे० ॥[2]

(३)

चलऽ गोरिया करे गंगा असननवाँ ॥ टेक ॥
सारी चोली पन्हऽ करऽ सब अभरनवाँ,
तेही पर सोभी सोना चाँदी के गहनवाँ ॥
गते गते बोलऽ ना तऽ सुनी मरदनवाँ ॥
खाये खातिर बान्धऽ नून सतुआ पिसनवाँ ।
बने तऽ बनालऽ तू झटपट पकवनवाँ,
मिठरस चाहीं कछू राह के भोजनवाँ ।

---

१. 'श्रीरामरतन' (भिखारी ठाकुर), पृ० १६ ।
२. वही, पृ० ११ ।

सुरसरि जल भरि हरि दरसनवाँ,
करिके 'भिखारी' कहे घुरे के मकनवाँ ॥[1]

(४)

तनी बोलऽ बिदेसी तू जइबऽ कि ना ॥ टेक ॥
बहुत दिनन से तू कुमति कमइलऽ,
सुमति के सुपथ चलइबऽ कि ना ।
परतिए संग रति कुम्भी नरक मान,
धरप का कुण्ड मे बहइबऽ कि ना ।
पापिन गिधिनिया के सोझा से दूर करऽ,
गाढ़ मे से गैया बचइबऽ कि ना ।
कहत 'भिखारी' तु कहला के लाज राखऽ,
पुरुषन के नइयाँ बढ़इबऽ कि ना ॥[2]

(५)

केहू कहे कि दस-पाँच गो सिह एकट्ठा देखलीहाँ, झूठ बात ह । चानन के गाछ मे केहू कहे कि पाता देखलीहाँ, झूठ बात । साधु के केहू कहे कि दस-पाँच इकट्ठा देखलीहाँ, झूठ बात । कइसे कि जइसे हीरा हाट में ना बिकाय, हित जे ह से हीरा का मुकाबिला में ह । आज काल के जमाना मे जहाँ दु-चार हित भेंटा जात बाड़न, इ सबकेहु हित ना हउअन । इ मुखालिफ हउअन । हितई आजकाल के जमाना में लउकत बा दूधवो पानी का साथ । कइसे ? जब दूध मे पानी फेंट दियाला तब दूध कहेला कि जब बेचारा हमरा सरन मे आ गइल त एकर इज्जत बढ़ा देवे के चाही तब पानी दूध का भाव मे बिकाये लागेला । जब आग पर धइल जाला त पानी कहेला कि हमार इज्जत बढा देले बा त यह जगहा पर हमरा जरे

---

१ देखिए, 'भिखारी-भजनमाला' (भिखारी ठाकुर, सन् १९५४ ई०), पृ० ३० तथा 'श्रीगंगास्नान नाटक' (भिखारी ठाकुर, सन् १९५३ ई०), पृ० ७ ।

२. देखिए, 'बिरहा-बहार' (भिखारी ठाकुर, प्रकाशन-काल नहीं), पृ० ११-१२ तथा 'कलजुग-बहार-नाटक' (भिखारी ठाकुर, सन् १९३८ ई०), पृ० १६ ।

के चाहीं। त पानी सब जरि जाला, तब दूध बिचारेला कि प्रीतम पानी हमार जर गइल त हम रह के का करब। तब नादा में से दूध उठेला कि आग में कूद के भसम हो जायब। जब कनखा पर दूध जाला त पानी से मार दियाला, तब दूध कहेला कि हमार प्रीतम पानी आ गइल अब ना जरब, नीचे बइठ जाला। हित के हितई इहे ह।[१]

★

भुवनेश्वर झा

आप चम्पारन-जिला के धमौरा' नामक स्थान के निवासी थे। आपका जन्म सं० १९५५ वि० (सन् १८९८ ई०) की चैत्र-पूर्णिमा को हुआ था।[२] आपने सन् १९२५ ई० मे जी० बी० बी० कॉलेज (लगट सिंह महाविद्यालय), मुजफ्फरपुर से बी० ए० की उपाधि परीक्षा प्रथम श्रेणी मे प्रथम स्थान प्राप्त कर पास की थी। इस परीक्षा मे प्रथम आने के कारण आपको एक स्वर्ण पदक एवं दो सौ रुपये नकद दिये गये थे। हिन्दी-निबन्ध-प्रतियोगिता मे सर्वप्रथम आने के कारण आपको बिहारी-छात्र सम्मेलन की ओर से भी प्रथम पुरस्कार दिया गया था। पटना-विश्वविद्यालय से आपने बी० एल० की परीक्षा पास की थी। बी० एल० की परीक्षा पास करने के बाद बहुत वर्षों तक आपने जीविकोपार्जन के अन्य साधनो का उपयोग किया। इसी उद्देश्य से आपने 'न्यू स्वदेशी शुगर-मिल्स' के केन-मैनेजर' के पद पर भी कार्य-सम्पादन किया था। सार्वजनिक जीवन से आपका बडा ही अच्छा सम्पर्क था। हिन्दी-साहित्य की सेवा करना ही आपके जीवन का उद्देश्य था। इसी सन्दर्भ मे चम्पारन जिला हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की जो सेवा आपने की थी उसका बहुत ही महत्त्व है। बहुत वर्षो तक आप चम्पारन-जिला-हिन्दी साहित्य-सम्मेलन के विभिन्न पदो पर प्रतिष्ठित रहे। जिला-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का चनपटिया (चम्पारन) मे जो वार्षिक अधिवेशन हुआ था उसके सभापति आप ही चुने गये थे। इसी तरह केहुनिया परोरहा' नामक ग्राम के सार्वजनिक पुस्तकालय के वार्षिकोत्सव का स्वागताध्यक्ष का पद-भार भी आपने ही अपने ऊपर लिया था, इस पुस्तकालय के सभापति आचार्य शिवपूजन सहायजी थे।

हिन्दी-साहित्य के अनेक विषयो पर आपकी रचनाएँ तत्कालीन विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ में प्रकाशित हुआ करती थी। 'बालक', 'युवक', 'मनोरमा', 'विशाल भारत', 'मैथिली-विभूति', 'कर्त्तव्य' (इटावा) इत्यादि पत्रिकाओं के आप नियमित लेखको मे थे। स्फुट निबन्धो के अतिरिक्त आपने दो पुस्तको की भी रचना की थी। उनके नाम है—(१) 'दिल्ली' और 'एक निबन्ध सग्रह'। आज से कुछ वर्ष पूव आपकी इहलीला समाप्त हो गई।

---

१. 'भिखारी-बहार उर्फ बुढशाला का बयान' (भिखारी ठाकुर, सन् १९३८ ई०), पृ० १५-१६।

२. श्रीपशुपतिनाथ झा (ग्राम रानीपुर, चम्पारन) द्वारा प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार। आपके परिचय-लेखन में 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही), पृ० १११ से भी सहायता ली गई है।

उदाहरण

(१)

संसार का प्रत्येक विद्याप्रेमी नोबेल पुरस्कार से भली भाँति परिचित है। इस पुरस्कार की बहुत बड़ी प्रतिष्ठा है। सरस्वती के जिस पुत्र को यह पारितोषिक मिलता है, उसकी गणना संसार के अग्रगण्य विद्वानो में होती है। यही क्यों, अब तो वह देश भी गौरवास्पद माना जाने लगा है, जहाँ के विद्वान् को नोबेल पुरस्कार प्राप्त होता है। कविवर रवीन्द्र का नाम कुछ दिन पहले बंगालियो के सिवा और कोई नही जानता था। इसी पुरस्कार की महिमा है कि आज संसार का प्रत्येक देश कवीन्द्र रवीन्द्र को सम्मानित करने मे अपनी प्रतिष्ठा समझता है। प्रति वर्ष उक्त नाम के पाँच पुरस्कार, विभिन्न विषयो पर, संसार के सर्वश्रेष्ठ विद्वानों को दिए जाते है। समाचार-पत्र के पाठकों से यह बात छिपी नही है। परन्तु, यह बहुत कम लोगो को मालूम है कि इस जगत्-प्रसिद्ध पुरस्कार का सूत्रपात करनेवाला कौन महापुरुष था। सरस्वती देवी की सेवा में सर्वस्व निछावर कर देने वाले भावुक भक्तों के यश-सौरभ से दिग्-दिगन्त को आमोदित और परितृप्त करने का श्रेय, जिस महापुरुष को प्राप्त है, भला उसकी कमनीय कीर्त्ति का कीर्त्तन करना किसे अभीष्ट नही है।[१]

(२)

समष्टि में व्यष्टि को लीन कर परमानन्द का अनुभव करना मनुष्य का सबसे बड़ा पुरुषार्थ है। मनुष्यों में स्वार्थ की मात्रा प्रचुर परिमाण में विद्यमान है। स्वार्थ-साधन के भावावेश मे मनुष्य कर्त्तव्याकर्त्तव्य का विचार प्रायः नही करता। संसार में सब विषमताओं की जड स्वार्थ-भावना ही है। सभी स्वार्थ-सागर में

१. 'युवक' (मासिक, मई, सन् १९२९ ई०, वर्ष ३. अंक ५), पृ० २७३।

अपादमस्तक निमग्न है। जो एक बार इस सीमा विरहित सागर के गर्भ में गिरा उसके लिए इससे बाहर होना जरा टेढ़ी खीर है। स्वार्थ रूपी प्रगाढ़ अन्धकार से आच्छन्न हृदयाकाश को आलोकित करने के लिए लोकोत्तर तपश्चर्या की आवश्यकता होती है। केवल महाप्रभु की आह्लादकारिणी कृपाचन्द्रिका ही उक्त अन्धकार को दूर करने मे समर्थ है। जिस मनुष्य के ऊपर दयामय की ऐसी दया होती है वह धन्य है। उसकी चरणरेणु पतितों को पावन करती है। वह जगद्-वन्द्य है। वह समष्टि के दुःख को अपना दु.ख और उसके सुख को अपना सुख समझने लगता है। स्वार्थमय संसार इस श्रेणी के पुरुषों से बिल्कुल सूना नही है। आज भी ऐसी अनेक विभूतियाँ है, जो अपने लोकोत्तर चरित से स्वार्थलिप्त संसार को परमार्थ का पाठ पढ़ा रही है।[1]

★

भुवनेश्वर झा 'भुवनेश'

आप दरभंगा-जिला के बल्लीपुर (परसमम) नामक स्थान के निवासी पं० जयानन्द झा के पुत्र थे।[2] आपका जन्म सन् १८७५ ई० के २४ मार्च (सोमवार) को हुआ था।[3] प्राथमिक शिक्षा के बाद आपने संस्कृत के माध्यम से ही शिक्षा प्राप्त की। संस्कृत के पाणिनीय व्याकरण और साहित्य-दर्शन के अतिरिक्त आपने आयुर्वेद की भी शिक्षा प्राप्त की थी। इसके अतिरिक्त, आपने फारसी की भी जानकारी हासिल की थी। शिक्षा के क्षेत्र मे इन सारे विषयो का ज्ञान आपने स्वाध्याय के बल पर प्राप्त किया। पुनः 'संस्कृत'-कार्यालय, अयोध्या से आपने 'वैद्यमनीषी' एवं भिषग्रत्न' की उपाधियाँ प्राप्त की थी। हिन्दी-साहित्य-कार्यालय, झाँसी से आपने 'आयुर्वेदकेसरी' और संस्कृत-साहित्य-मण्डल, अलीगढ़ से 'विद्याविनोद' की उपाधियाँ क्रमश प्राप्त की। इन स्वतन्त्र संस्थाओं से ही उपाधि ग्रहण कर आपने अपने स्वाभिमान का परिचय दिया था। शिक्षा-ग्रहण करने के बाद आपने कही भी सेवावृत्ति कर जीवन-यापन करना श्रेयस्कर नही समझा। अपनी जीविका के लिए आपने पठित विषय आयुर्वेद का माध्यम अपनाया। अपने ग्राम मे ही आपने मिथिलारत्न-औषधालय' नामक एक औषधालय का

---

१. 'युवक', (वही, अक्टूबर, सन् १९२९ ई०, वर्ष १, अंक १०) पृ० ५९७।

२. आपके पूर्वज दरभंगा जिले के ही 'मोहना झंझारपुर' नामक स्थान से वर्त्तमान ग्राम में आये थे। आपके पितामह पं० गोविन्द लाल झा बड़े प्रसिद्ध वैयाकरण और पिता पं० जयानन्द झाजी अच्छे ज्योतिषी थे।

३. श्रीसुरेन्द्र झा 'सुमन' भूतपूर्व सम्पादक 'मिथिला-मिहिर' द्वारा प्रेषित सूचना के आधार पर।

संचालन किया। इस औषधालय के माध्यम से जनता जनार्दन की सेवा करना ही आपका प्रमुख लक्ष्य था। इसके लिए न केवल आयुर्वेद, अपितु आयुर्वेद के साथ साथ 'यूनानी' दवाओं का भी आप सफल प्रयोग किया करते थे।

आपने सन् १९२१ ई० से ही हिन्दी भाषा की अनेक विधाओं पर अपनी लेखनी चलाई। आपने नाटक, पदावली और वैद्यक विषयों पर कई पुस्तकें हिन्दी एवं मैथिली में लिखी थीं। आपके मैथिली-गीत बड़े ही लोकप्रिय हैं। आप मैथिली के प्राचीन सेवकों में थे। आपके कवित्वपूर्ण गीत लोक-प्रचलित हो चुके हैं। 'मैथिली योगवाशिष्ठसार', 'स्वर्णपरीक्षा' (नाटक) और कृष्ण-चरितावली' (पद्य) आपके प्रसिद्ध मैथिली-ग्रन्थ हैं[1] आपके द्वारा लिखित निबन्ध भी प्राप्त हैं। आपकी स्फुट रचनाओं का अबतक प्रकाशन नहीं हो सका है। आपके द्वारा लिखित कई पुस्तकें अद्यावधि प्रकाशित नहीं हो सकी हैं। आपके कुछ नाटक बड़े प्रसिद्ध हैं। प्रकाशित एवं अप्रकाशित कुल पुस्तकों की संख्या नौ है। इनके नाम इस प्रकार हैं—१. 'क्रान्तिकारी बालक प्रह्लाद (नाटक), २ 'सत्यप्रतिज्ञ हरिश्चन्द्र' (नाटक), ३. 'परोपकार वकवध' (नाटक) ४ 'वलि-वामन' (नाटक), ५ कीर्तन-चन्द्रिका' (पदावली) ६. विनय' (पदावली) ७ 'पद्मचेतावनी' ८. पर्वपदावली' ९ 'सुलभयोगमालिका (वैद्यकग्रन्थ)।[2] सन् १९६६ ई० में आपका परलोक-गमन हुआ।

उदाहरण

जिस देश मे वनस्पति की कमी हो उस देश की उपमा मरु देश से दी जाती है। धन्य है वह देश, जहाँ की भूमि वन-उपवन से सुशोभित हो रही हो। यह सौभाग्य इस तीर्थ-भूमि मिथिला को प्राप्त है। जहाँ कोसों फल-फूलों के वन हरी-भरी सब्जी, लहलहे खेत, दर्शकों के चित्त चुराते रहते है।

हिमालय और विन्ध्याचल आदि पर्वत औषधियों के प्रधान स्थान माने गये है, परन्तु योगिराज महाराज जनक के हाथ से स्वर्णलांगूल-युक्त दिव्य हल से जोती हुई पुण्यमय यज्ञभूमि मिथिला, जहाँ शीत,

---

१. देखिए—'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही), पृ० ४१९ तथा 'A History of Maithili literature, Vol, II (वही), P. 72

२. आपके पुत्र श्रीसुरेन्द्र झाजी 'सुमन' भूतपूर्व सम्पादक 'मिथिला-मिहिर' एवं प्राध्यापक मिथिला-कॉलेज, दरभंगा के सूचनानुसार उपर्युक्त सभी पुस्तकों में केवल 'कीर्त्तन-चन्द्रिका' (सं० ५) प्रकाशित है, किन्तु वह भी सुलभ नहीं है। इस पुस्तक के अतिरिक्त सारी पुस्तकें अद्यावधि अप्रकाशित ही हैं।

वर्षा, गर्मी, तीनों मौसमें बराबर है, असंख्य वनस्पतियाँ मिल रही है। उनका उल्लेख करना इस प्रसंग में आवश्यक होगा।

× × ×

ये तो हुईं वनस्पतियाँ। अब इस सुजला सुफला भूमि की शस्यश्यामलता की ओर भी दृष्टिपात करें। आलंकारिको की भाषा में अनुर्वर भूमि को बन्ध्या स्त्री से उपमा दी गई है। मिथिला के खेतो की हरियाली' दृष्टि पार को छूती हुई सस्यावली किसके हृदय को हरा न बना देगी। हम इस उर्वर भूमि को भगवती अन्नपूर्णा का अवतार ही कहेंगे।[1]

★

भुवनेश्वरप्रसाद चौधरी[2] 'भुवनेश'

आप भागलपुर-मण्डल के 'बाथ' नामक स्थान के निवासी श्रीलालजी चौधरी के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १६५० वि० (सन् १८६३ ई०) की कार्तिक शुक्ल नवमी (गुरुवार) को हुआ था।[3] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा हिन्दी, उर्दू और फारसी के माध्यम से हुई। बचपन मे ही आपने बँगला एवं अँगरेजी का भी ज्ञान प्राप्त किया। तदनन्तर आपका अध्ययन-क्षेत्र संस्कृत के माध्यम से पल्लवित हुआ। सस्कृत मे आपने पाणिनीय व्याकरण ज्योतिष तथा वेदान्त का अध्ययन किया। कलकत्ता-संस्कृत-परीक्षा-समिति से आपने संस्कृत के व्याकरण एवं साहित्य मे 'तीर्थ' की उपाधि प्राप्त की।

सस्कृत अध्ययन-काल से ही आपमे अपनी मातृभाषा हिन्दी के प्रति अनन्य अनुराग था। जिन दिनों आप तिलडीहा (भागलपुर) के सस्कृत-विद्यालय मे अध्ययन कर रहे थे, वहाँ के कुछ स्थानीय लोगो ने मैथिली भाषा को लेकर उसके प्रचार के लिए बवण्डर खडा किया था। आपने उन विपरीत घडियो मे ही वहाँ एक 'हिन्दी-सभा' की स्थापना की थी। उस सभा के द्वारा आपने हिन्दी-प्रचार के लिए बडी ही तत्परता से काम किया था। वहाँ से कुछ दिनो के लिए आप भागलपुर के कर्णगढ़ सस्कृत-विद्यालय मे अध्ययन करने चले आये। सन् १६१० ई० मे आपने संस्कृत की उच्च शिक्षा पाने के लिए वाराणसी-वास किया। वहाँ रहकर संस्कृत के उद्भट विद्वानों से आपने शिक्षा पाई। वाराणसी से प्रत्यावर्त्तित होकर आपने भागलपुर की मारवाडी-पाठशाला (हाइस्कूल) मे प्रधान संस्कृताध्यापक के पद पर कार्य-सम्पादन किया। जिन दिनों वहाँ आप अध्यापन कर रहे थे, उन्ही दिनो भागलपुर मे ही अखिल-

---

१. 'मिथिला-मिहिर' (प्राचीन सस्करण, वर्ष २६, मिथिलाङ्क, स० १६६२ वि०), पृ० १४२।

२. मूलतः आप चतुर्वेदी (चौबे) हैं, किन्तु यह उपाधि आपके पूर्वजों को मुगल-शासनकाल में बादशाह की ओर से मिली थी।

३. आपके द्वारा दिनांक १६ अप्रैल, सन् १६५५ ई० को प्रेषित और साहित्येतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।

भारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का चतुर्थ अधिवेशन हुआ था। उस अवसर पर आपने जो सहयोग किया था, उससे तत्कालीन हिन्दी-जगत् के मूर्द्धन्य आलोचक डॉ० श्यामसुन्दर दास ने बडी प्रसन्नता व्यक्त की थी। हिन्दी-प्रचार के साथ साथ आपकी हिन्दी-भाषा-सुधार-सम्बन्धी विचारधारा से वे पूर्ण प्रभावित थे। सन् १६१६ ई० से ही आप हिन्दी एवं संस्कृत दोनो भाषाओं मे समान रूप से अपनी रचनाएँ करते थे। आपकी सस्कृत एव हिन्दी-कविताओ को देखने से ऐसा लगता है कि आपमे निसर्गत: कविता लिखने की प्रतिभा विद्यमान थी। आपके द्वारा लिखित हिन्दी-पुस्तकों के नाम इस प्रकार हैं—(१) ऋतुवैभव-विलास (हिन्दी-पद्य), (२) विनोदवाटिका (स० हिन्दी-समस्यापूर्ति), (३) स्तुति-पुष्पाजलि (हिन्दी-पद्य), (४) ग्रीष्मगरिमा (हिन्दी पद्य), (५) कुलवधू (हिन्दी-पद्य), (६) बिहार-वैभव (हिन्दी-पद्य),(७) मन्दारगुरु-धर्म-प्रशस्ति[1],(८) अम्बाष्टक[2] उपर्युक्त मौलिक ग्रन्थो के अतिरिक्त ये पुस्तकें विभिन्न भाषाओ से अनूदित है—(१) विभूति (बँगला से हिन्दी), (२) आत्मानुसन्धान और अनुभूति (बँगला से हिन्दी), (३) जीवन-सुधा (सस्कृत से हिन्दी-पद्य), (४) किरातार्जुनीय (संस्कृत से हिन्दी), (५) रघुवंश (सस्कृत से हिन्दी , (६) बाल-गीतोपदेश (टीका) तथा (७) सस्कृत-हिन्दी के स्फुट पद्य।[3]

आपके प्राय: सभी ग्रन्थ अद्यावधि अप्रकाशित है। अनूदित पुस्तकों मे 'बालगीतो-पदेश' को छोडकर सभी रचनाएँ प्रकाशित है। सम्प्रति आपकी उम्र करीब ८० वर्ष की है।

उदाहरण

(१)

हे गुणि-गण-गरिष्ठ-ग्रीष्म ! आपकी जय हो ! आपके गहन गुण-गौरव का गान गा गाकर गुणिजन अपनी गुणज्ञता प्रकट करते हैं। यो तो भद्रता भरे भारत की भव्यभूमि के रमणीय रंगमंच पर एक वर्ष मे परम प्रभाव पूर्ण प्रकृति-देवी के भिन्न-भिन्न नामों से क्रमश: छ: अभिनय अनुभूत होते है; उनमे विपुल बल वैभव-विलसित वसन्त के अलौकिक अनुपम अभिनय को लोग अत्यन्त ही मनोहर, ललित-लावण्य-निकेतन, सकल-जन-मनोमुग्धकर आदि बहुविधि विशेषणों से विशिष्ट कहकर मुक्तकण्ठ से उसकी प्रशंसा किया करते है।

---

१. सं० २०११ वि० में प्रकाशित।

२ प्रकाशन-काल वही।

३ सख्या ५ और ६ के कुछ अश 'श्रीकमला' (मासिक) में प्रकाशित। आपके द्वारा रचित संस्कृत-पुस्तकों के नाम ये हैं—(१) जाह्नवीजयन्तीकाव्यम्। (२) स्तुति-कुसुमांजलि, (३) बुद्धिनिधिचरितम्, (४) महाकविकालिदासचरितम्, और (५) महाकविबाणभट्टचरितम्।

किसी ने तो उसके बाहरी आडम्बर पर ही रीझकर उसे 'ऋतु-राज' तक की उपाधि दे डाली है ! परन्तु हे अगम गुणशाली ग्रीष्म ! आपकी बेहद बहार का वर्णन बड़े-बडे बुद्धिमानो की भी बुद्धि के बाहर है ।[1]

(२)

जो शिवरूप सदा करुणामय, आनन आनंदपूर्ण सुहावे ;
पार उतार भवाम्बुधि सो पुनि, ब्रह्मसुधानिधि में अन्हवावे ।
हीतल के तमपुंज-विनाशक, शान्त महान्त स्वरूप लखावे ;
वा गुरु के पद मे प्रणती, जो सुकौशल से भवभीति भगावे ॥

× × × ×

जो अपने वचनामृत सों जन के सब पाप पछारि निकारे ;
हीतल पै पुनि सुस्थिर ज्ञान कृपा करिकै सब भाँति सँवारे ।
पाय जिन्हे भवसागर तैरिबो मे, दुविधा हिय मे न हमारे ,
पाप पहार पछारनिहार उन्ही गुरु के पद मे सिर वारे ॥[2]

(३)

अग्नि के उत्ताप से ज्यों स्वर्ण है सौन्दय पाता ;
त्यो मनुज मे सकटो से ही चरम उत्कर्ष आता ।
इसलिए स्वागत सदा ही संकटों का शूर करते ;
किन्तु कायर, सकटों से सवदा सब भाँति डरते ॥

× × × ×

वर्ष चौदह के लिये जब राम वन भेजे गये थे ;
नृपति-बालक के लिए वे कष्ट अति अद्भुत नये थे ।
पर न दहले राम, मस्तक पर उठाये कष्ट उनने ;
कष्ट में ही नर निखरते, कर दिया सुस्पष्ट उनने ॥[3]

---

१ आपसे प्राप्त ।

२. 'मन्दार-गुरुधाम' (भुवनेश, स० २०११ वि०), पृ० ४-५ ।

३ आपके द्वारा दिनाक ३१ अक्टूबर, सन् १९६६ ई० को प्रेषित ।

(४)

तीव्रतपन - सन्ताप - तप्त सारा भूमण्डल,
धक-धक था जल रहा अवनि आकाश सलिल थल।
त्राहि त्राहि कर रहे कही पर चैन न पाते,
व्याकुल थे सब जीव दिवस निशि अति विललाते !
पर, अब जलदागम के समय, सघन घटा नभ छा रही।
अति मधुर सुधारस से सने, वारि-विन्दु बरसा रही।।

× × ×

गगन सघन घनश्याम श्याम सभ नभ मण्डल मे,
पंक्ति बलाका मुक्त-दाम ज्यों वक्षस्थल में।
दामिनि द्युति पट-पीत, झिल्लि-रव वंशी का स्वर,
दर्शन से करता विमुग्ध मन - मोर मोद भर।
इस शुभ जलदागम के समय, बन आये ब्रजराज घन,
शुचि सिंचित कर भूमण्डल को, किया सुखी सब जगत जन।[1]

(५)

प्राय झूठे कहै छै सुधा स्वर्ग में
खोजला से सुधा ते मिलैछै यहीं।
सत्कवी लोग कविता कहै छत जही,
धार तेखनी सुधा के बहै छै वही।[2]

(६)

जलदसमय अब घहरत नभ पर,
सजल सघन घन;
झमझम झमकत रहत सतत जल,
थल पर छन छन।

---

१. 'ऋतु-वैभव-विलास' (भुवनेश, अप्रकाशित) पृ० ८-९।
२. आपके द्वारा प्राप्त।

चम चम चमकत, ठनकत ठन ठन,
भयद जलद रव ;
खग-गण कत कत करत रहत,
कलरव अब नव नव ।[1]

भुवनेश्वरप्रसाद 'भुवनेश'

आपकी रचनाएँ 'भुवन' नाम से भी प्राप्त होती हैं।

आप छपरा-नगर के 'नबीगंज' नामक मुहल्ला के निवासी श्रीमहेश्वरप्रसादजी भूतपूर्व प्रथम बिहारी रजिस्ट्रार पटना-विश्वविद्यालय के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९५६ वि० की भाद्र शुक्ल-चतुर्थी (६ सितम्बर, सन् १८९९ ई०) को हुआ था।[2] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। आपने सन् १९१६ ई० में कलकत्ता-विश्वविद्यालय से मैट्रिक की परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास की थी। इस परीक्षा के बाद आपने आइ० ए० (सन् १९१८ ई०), बी० ए० (सन् १९२० ई०), बी० एल्० (सन् १९२४ ई०) एवं एम्० ए० (सन् १९२२ ई०) की परीक्षाएँ पटना-विश्वविद्यालय से पास की। बी० ए० और एम्० ए० की परीक्षाओं में आप यूनिवर्सिटी में सर्वप्रथम आये।

सन् १९२४ से ३८ ई० तक वकालत करने के बाद आपने छपरा के राजेन्द्र कॉलेज में अपनी सेवाएँ दी। वहाँ पहले आपने संस्कृत के प्राध्यापक का पद संभाला। तदनन्तर, उप-प्राचार्य के पद को भी आपने अलंकृत किया। सन् १९६४ ई०, अर्थात् गंगासिंह-कॉलेज, छपरा के स्थापना काल से ही आप उसके प्राचार्य हैं। सन् १९१३ १४ ई० से ही आपने हिन्दी मे लिखना शुरू किया था। हिन्दी-कविता के अतिरिक्त आपने व्रजभाषा मे बड़ी ही उत्कृष्ट कोटि की कविताएँ लिखी थी।[3] काव्य-रचना के साथ-साथ संगीत-कला की मर्मज्ञता आपकी विशेषता थी। आप अपनी चमत्कारपूर्ण स्फुट कविताओं के लिए बड़े ही प्रसिद्ध है। इन दिनो आप अपने निवास-स्थान छपरा (नबीगंज) मे ही रहकर साहित्य-सेवा मे सलग्न है।

उदाहरण

(१)

नव नागरि के पट-नीरद को,
जब कन्त समीरन ऐंचि हर्‌यो।

---

१. वही।

२. —देखिए, 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही), पृ० ६७२ (छ) तथा 'सारण्यक' (सं० पाण्डेय कपिल, सन् १९६६ ई०), पृ० ६।

३ आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार। आपके प्रस्तुत परिचय-लेखन में उक्त विवरण के अतिरिक्त 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६७२-६), 'हिन्दीसेवी संसार' (वही, पृ० १७१) की भी सहायता ली गई है।

मुखचन्द की ज्योति अमन्द बढी,
　　　　तहँ लाज पयोनिधिहू उभर्‌यौ ।
जुवती जन के सिख की तरनी,
　　　　'भुवनेश' तेही बिच टूटि पर्‌यौ ।
मन मीन बझावत काम-किरात,
　　　　न जानि पर्‌यौ उबर्‌यौ कि मर्‌यौ ॥ [1]

(२)

सखियान प्रबोधि पठाई तहाँ,
　　　　भरि प्रीतम ने कसि कै गलबाँहीं ।
तब तैं तिन ते रहै रूखी किये,
　　　　रुख देत नही छिन छूवन छाँहीं ।
'भुवनेस' ससंक ससांकमुखी,
　　　　चकि चौंकति पी की परे परिछाँही ।
बकै सोवत नाही औ जागत नाहीं,
　　　　अजानत नाही औ जानत नाहीं ॥ [2]

(३)

हतभाग्य भारतवासियो ! वह पूर्ण गौरव क्या हुआ ?
वह तेज वह शोभा हुई क्या ? हर्ष कलरव क्या हुआ ?
क्यों आज खोकर पूर्वगुण सब भाँति से तुम दीन हो ?
तनछीन हो बलहीन हो अज्ञान सागर लीन हो ?
नरनारि दोनों ब्रह्म के है अंश वेद बखानते

---

१ स्व० आचार्य शिवपूजन सहायजी द्वारा प्राप्त । तुलना कीजिए —

नवीनायाः क्षिप्ते वसनजलदे कान्तमहता
प्रकाशद्वक्त्रेन्दोः प्रविसरति लज्जाजलनिधिः ।
क्वचिन्माना भग्ना युवतिजनशिक्षातरणिका
मनोमीनं विध्यन्मदनशबरो जीवति न वा ॥

— कस्यचित्कवेः ॥

२. उन्हीं से प्राप्त । — देखिए 'सारण्यक' (वही, पृ० २०) भी ।

पर आज भारतवासियो ! तुम हो न ऐसा जानते ॥
तुम नारियों को दासियों से भी समझते हीन हो ।
बस इसी कारण आज तुम सब भाँति दुर्बल दीन हो ॥[1]

(४)

गत हुई रजनी रतिकारिणी,
शयनदा सुखदा श्रमहारिणी,
नखतवृन्द सभी घर को गए
कुमुदबन्धु हतप्रभ हो गए,
हरिप्रिया दिशि पूरब ने किया,
प्रसव पुत्र दिवाकर को अहा
नववधू प्रिय के भुज से छुटीं
कमलिनी गढ़ से भ्रमरावली ॥[2]

भोलालाल दास

आप दरभंगा-जिला के 'कसरौर' नामक ग्राम के निवासी मुंशी चोआलाल दास के पुत्र हैं । आपका जन्म सन् १८६४ ई० की माघ बदी-त्रयोदशी (शुक्रवार) को हुआ था । आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई । कुछ ही दिनों के बाद आपको शिक्षा का प्रबन्ध भागलपुर-जिला के 'उग्रतारामहिषी' नामक स्थान मे हुआ, जहाँ आपका ननिहाल था। प्रारम्भिक शिक्षा के बाद आपने भागलपुर के टी० एन्० जुबिली कॉलेज से बी० ए० की उपाधि प्राप्त की । विधि-विषयक उत्कण्ठा बनी रहने के कारण आगे चलकर आपने प्रयाग-विश्वविद्यालय से एल्० एल्० बी० की उपाधि प्राप्त कर सन् १६२३ ई० मे दरभंगा मे वकालत शुरू कर दी । वकालत करते हुए आपने मैथिली-साहित्य की भरपूर सेवा की । दरभंगा मे 'मैथिली-साहित्य-परिषद्' के संस्थापन के साथ-साथ मैथिली-साहित्य के निर्माण मे आपने हाथ बँटाया । प्रारम्भ में ६-१० वर्षों तक आप ही इस परिषद् के प्रधान मन्त्री तथा सभापति क्रमशः चुने गये । विद्यालयो एवं महाविद्यालयो मे मैथिली-भाषा को समुचित स्थान दिलाने के लिए आपने आन्दोलन चलाया था, जिसके परिणाम-स्वरूप देश के अधिकाश विद्यालयों एव विश्वविद्यालयो मे मैथिली का सफल प्रवेश हुआ ।[3]

---

१. लेखक द्वारा प्राप्त ।

२. वही

३. देखिए—'बिहार अब्दकोश' (वही, पृ० ६७३) । डॉ० जयकान्त मिश्र ने आपका जन्मकाल सन् १८६७ ई० बतलाया है । —देखिए 'A History of Maithili Literature' (वही), P. 148. दिनांक ३ नवम्बर, सन् १६५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित आपके विवरण के अनुसार आपका जन्म फसली १३०१ में हुआ था । आपके प्रस्तुत परिचय-लेखन में उक्त सामग्री के अतिरिक्त 'हिन्दीसेवी ससार' (वही, पृ० १८०), 'मिश्रबन्धुविनोद' (वही, पृ० ५५६) जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ४१६), 'बिहार अब्दकोश' (वही, पृ० ६७३) आदि ग्रन्थों से भी सहायता ली गई है ।

मैथिली-भाषा के समुन्नयन के लिए आपने अनेक महत्त्वपूर्ण कार्य किये है। आप मैथिली भाषा की 'मैथिली' पत्रिका के सम्पादक भी रह चुके है । सन् १९२९-३० ई० मे आपने 'भारती' नामक मैथिली-भाषा की ही दूसरी पत्रिका का प्रकाशन एवं सम्पादन किया था। इसके पूर्व सन् १९२३ ई० मे आपने प्रयाग से प्रकाशित होनेवाली मासिक पत्रिका 'चाँद' का भी कुछ दिनो तक सम्पादन-कार्य किया था । यह पत्रिका हिन्दी-जगत् की एक अनोखी देन थी। सन् १९३७-३८ ई० मे आपने पटना मे 'सिद्धार्थ प्रेस', 'अभिनव ग्रन्थागार' नामक दो महत्त्वपूर्ण संस्थाओ का जन्म दिया। । आप अनेक वर्षों तक इसके अध्यक्ष रहे। 'चाँद' से हटकर आप अनेक वर्षों तक उसके नियमित लेखक रहे ।

'मिथिला-मिहिर', 'चाँद' आदि प्रसिद्ध पत्रिकाओ मे प्रकाशित आपके स्फुट निबन्धो के अतिरिक्त हिन्दी मे आपकी दो प्रमुख पुस्तको की प्रसिद्धि हुई— हिन्दू लॉ मे स्त्रियो का अधिकार'[1] और 'अक्षरों की लड़ाई'[2] । इन दो रचनाओ के अतिरिक्त आपके द्वारा लिखित अनेक पाठ्य-पुस्तकें यथावसर प्रकाश मे आई । आपके द्वारा पाठ्य-पुस्तक के रूप मे लिखित 'भारतवर्ष का इतिहास' एवं 'गद्य-मंजूषा' सर्वथा श्लाघ्य रहा। बहुत वर्षों तक आपने युनाइटेड प्रेस, भागलपुर में रहकर 'हिन्दी-भाषा' की सेवा मे अपना योगदान किया था। हिन्दी और मैथिली दोनो की सेवा ही आपके जीवन का व्रत-सा हो गया है। सम्प्रति, आप अपने ग्राम मे ही जीवन-यापन कर रहे है ।

उदाहरण

(१)

विश्व यह अद्‌भुत नाट्यागार,
पटीयसी वह प्रकृति-नटी है सूत्रधार करतार,
गिरि-कानन भू उदधि आदि ये सुन्दर दृश्य अपार ।
जीव-मात्र सब पात्र यहाँ है ज्ञानी देखनहार,
देखो तनिक ध्यान से इसको यह कैसा उद्‌गार ।
हुआ युगान्तर दृश्य उपस्थित मानो अबकी बार,
यह जो प्रबल लोकमत की है उमड़ी भीषण धार ।
कैसी चली मिटाती नृप की सत्ता अत्याचार,
देश-देश में हुआ प्रतिष्ठित शुभ स्वराज-सरकार ।

---

१. सन् १९२४ ई० में ही आपने इस पुस्तक का लिखना आरम्भ किया था, किन्तु यह पूरी हुई सन् १९२७ ई० में ।

२. सन १९३० ई० में प्रकाशित ।

जलियाँवाला बाग् यहाँ भी खोल दिया वह द्वार,
भारत माता जगा रही है तुम्हें पुकार-पुकार,
बड़ा विशाल क्षेत्र है आगे कूद पड़ो इक बार ।[1]

(२)

कूजित छल जे देस सरस कविता कलाप सँ ।
पूजित छल सभ ठाम प्रबल विद्याक दाप सँ ।
जगमग छल जग बीच नारि आदर्श रत्न सँ ।
घर घर छल शुभ शांति जतै राजाक यत्न सँ ।
से मिथिला शिथिला भेली कायर संतति जन्म सँ ।
हैत हिनक उन्नति पुनः यदि सुधार हो सद्म सँ ।

× × ×

पिता दान कय तजथि मुरुख कर बेचि गमावथि ।
बाल्यकाल मे मातृपदक गौरव पुनि पावथि ।
पति एमे छथि पास पिता छथि पंडित यद्यपि ।
हो नहिं अक्षर ज्ञान बधू कन्या कैं तद्यपि ।
विन वेतन दासी क पद गृहिणी गण पावथि अवश ।
मातृत्वक अछि लोप जै संतति गण तैं छथि विवश ।[2]

(३)

जिस तरह प्रतिक्षण बदलते और बढ़ते हुए शरीर के परिवर्तन का पता नही चलता, उससे कही अधिक मन्द क्रम से भाषा में होनेवाले विकास और परिवर्तन का बोध हमें कुछ नही होता। पर वही क्रम कुछ शताब्दियों तक जारी रहकर कुछ ऐसा भेद उपस्थित करता है जो किसी अंकुरित भाषा को विशाल वृक्ष के रूप में परिवर्तित कर देता है या कभी उससे कोई नया प्ररोह ही पैदा कर देता है। मैथिली की उत्पत्ति और विकास में भी यह क्रम स्पष्ट है ।

---

१ 'मिश्रबन्धुविनोद' (चतुर्थ भाग, वही), पृ० ५५६ ।

२. 'बिहार के नवयुवक-हृदय' (वही), पृ० २६७-६८ ।

विद्वानों का अनुमान है कि वैदिक भाषा से दो भाषाएँ फूटीं, एक संस्कृत और दूसरी प्राकृत, दो उदीच्य, प्रतीच्य, मध्य, प्राच्य और दाक्षिणात्य नाम से प्रथम भाषा वर्ग के रूप में विभाजित हुई। इसी प्राच्य प्राकृत भाषा मे भगवान् बुद्ध ने अपने अमर उपदेश दिये है, जिससे आगे चलकर मागधी और अर्द्धमागधी और दो भाषाओं का जन्म हुआ। ईसा की छठी और सातवीं शताब्दी तक इसका समय रहा। फिर ये अपभ्रंश के रूप में ढली।[1]

(४)

भाषाक उत्पत्ति वा विकास कोना होइछ ? लिखित ओ कथित भाषा में सर्वदा भेद रहैछ, तकर की कारण ? देशकाल आदिक भेदे एके शब्द व स्वरक उच्चारण स्वभावतः भिन्न-भिन्न भए जाइछ, से प्रायः किनकहुँ अस्वीकार नहि होएतैन्हि। लोक जे भाषा बजै अछि, से विद्वान् लोकनिक कृपा सँ क्रमात् साहित्यिक रूप धारण कैलक, ओकरा शुद्ध रखबाक हेतु ओहि में कोष, व्याकरण, छन्दादिक नियमोपनियम बनल। किन्तु सब लोक तँ सब काल में विद्वान् नहि होइछ जे सभकेयो ओकरा ताहि शुद्ध रूप में बाजै, अतः साधारण लोक में ओकर रूप किछु विकृत होमय लगैछ। ई विकार समय ओ प्रान्तक क्रमें बढ़ल जाइछ। क्रमशः ई भेद ततेक बढैछ जे मूल साहित्यिक भाषा सँ भिन्ने-भिन्ने भाषाक विकास भए जाइछ।

आब लेखक गण कै प्राचीन साहित्यिक भाषा भिन्ने बूझि पड़ैछैन्हि, अतः ओ तकरा छोड़ि अपना समयक चलित भाषा कै ग्रहण करै छथि। हुनका लोकनिक उद्योगे पुनः यैह साहित्यिक भाषा बनैछ।[2]

१. मिथिला-मिहिर' (मिथिलाक, सं० १९९२ वि०, वर्ष २९), पृ० १४५।
२. 'मिथिला-'मिहिर' (मिथिलाक, नवम्बर, सन् १९३५ ई०), पृ० ९०।

मथुराप्रसाद दीक्षित

आप सारन-जिला के पिरारी' (वाया—शाहपुर सुतिहार) नामक स्थान के निवासी स्व० श्रीदुन्दबहादुर दीक्षित के पुत्र हैं। आपका जन्म सन् १८९५ ई० (माघ शुक्ल-एकादशी) में हुआ था।[१] आपकी आरम्भिक शिक्षा कटिहार मिड्ल-स्कूल मे हुई, जहाँ से सन् १९०९ ई० में आपने स्कॉलरशिप लेकर मिड्ल की परीक्षा पास की। इसके पश्चात् आपने सन् १९१३ ई० मे मुजफ्फरपुर कालेजियट स्कूल से मैट्रिक और सन् १९ ५ ई० मे वही के जी० बी० बी० कॉलेज से आइ० ए० की परीक्षाएँ पास की। उक्त कॉलेज मे ही बी० ए० के अन्तिम वर्ष मे अर्थाभाव के कारण आपको अपनी पढाई स्थगित कर देनी पडी और अर्थोपार्जन के लिए आप मुजफ्फरपुर-कालेजियट में सहायक शिक्षक के पद पर नियुक्त हो गये। सन् १९१९ ई० मे उक्त स्कूल की नौकरी छोड़ने के बाद आप देशरत्न डॉ० राजेन्द्र प्रसादजी द्वारा सम्पादित 'देश' के सहकारी सम्पादक-पद पर कार्य करने लगे। किन्तु, कुछ ही दिनो बाद असहयोग-आन्दोलन मे सम्मिलित हो जाने के कारण आपको उक्त पद भी छोड देना पडा सन् १९२३ से सन् १९३६ ई० तक आप दरभंगा के महाराजाधिराज श्रीरमेश्वर सिंह के व्यक्तिगत सहकारी के रूप मे कार्य करते रहे।

इसके पश्चात् आप निरन्तर साहित्य समाज तथा देश की सेवा मे सलग्न रहे। सन् १९४२ ई के आन्दोलन में भाग लेने के परिणामस्वरूप आपको चार वर्षो के लिए कारागार भी भोगना पडा था। आपकी गणना बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के प्रमुख सस्थापकों मे की जाती है अपनी साहित्यिक सेवाओ के कारण सन् १९५० ई० मे आप बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सभापति चुने गये और उक्त पद पर तीन वर्षों तक आसीन रहे।[२] इसके अतिरिक्त, आप बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् की सामान्य समिति के सदस्य भी मनोनीत हुए।

आप एक अनुभवी पत्रकार भी है। आपने 'देश' के अतिरिक्त 'तरुणभारत' (पटना) तथा 'नवयुवक' (मुजफ्फरपुर) का भी सम्पादन किया था। आप पुरातत्त्वेतिहास के विशेष अनुरागी हैं। आपके द्वारा रचित पुस्तकों के नाम इस प्रकार हैं—(१) सेवा-क्षेत्र[३], (२) बाबू कुँवर सिंह, (३) नादिरशाह, (४) गोविन्द-गीतावली, (५) वैशाली, (६) सर गणेशदत्त, (७) चाणक्य और (८) पशु-चिकित्सा। इनके अतिरिक्त आपकी दो अप्रकाशित कृतियाँ भी है—(१) वैशाली-दर्शन तथा (२) ज्योतिरीश्वर और वर्ण-रत्नाकर। इन दिनों आप अन्तरराष्ट्रीय-भाषाएँ और हिन्दी के सम्बन्ध मे शोध-अध्ययन कर रहे हैं।

---

१ आपके द्वारा प्राप्त सूचना के आधार पर।

२. आप बिहार-साहित्य-सम्मेलन के वार्षिक महाधिवेशन (सन् १९५६ ई०) के भी सभापति हुए। —देखिए 'साहित्य' (वही, रजत-जयन्ती-विशेषांक, वर्ष ६, अंक ८-१२, नवम्बर, ५५—मार्च, ५६ ई० तथा शिवपूजन-रचनावली (चतुर्थ खण्ड), पृ० ६१०।

३. यह पुस्तक सन् १९१७-१८ ई० में मुजफ्फरपुर से प्रकाशित हुई थी।

उदाहरण

(१)

विद्यापति की विरुदावली पुस्तको और पत्रों मे पर्याप्त रूप से वर्णित हो चुकी है। सच तो यह है कि उनकी अब प्रशंसा करना केवल सूर्य्य को दीपक दिखाना है। पर हाँ, इतनी बात कहे बिना मै नही रह सकता कि विद्यापति की भाषा मे काफी ओज है, विचारों मे पूरी भावुकता है, तथा उनके पद सगीत की तराजू पर बावन तोले पाव रत्ती ठीक उतरते है।

पर विज्ञ समालोचकों अथवा मर्मज्ञ साहित्यिको द्वारा गोविन्द-दास की परख अभी नही हो पाई हैं। ऐसी अवस्था मे उनके पदों के सगठन, शब्दों के आयोजन अथवा विचार की प्रौढता पर अपना विचार प्रगट करना मेरी केवल धृष्टता होगी। फिर भी इतना कहे बिना मैं नही रह सकता कि विद्यापति के समान ही गोविन्ददास के 'गीतों' मे 'ओज' का पूण आभास है, शब्दायोजन का श्रेष्ठ सौरभ है तथा उनके गीत कविता-कानन के कमनीय कुसुम है। बल्कि यदि विचार-दृष्टि से देखा जाय तो कम-से-कम इतना कहे बिना मैं नही रह सकता कि गोविन्ददास की भाषा विद्यापति से विशेष प्रौढ़ है तथा उनके पद अधिक पुष्ट।[१]

(२)

सर गणेश का जन्म भूमिहार-ब्राह्मण कुल में हुआ था। आपके पूर्वज प्रयागराज के पास किसी एक गाँव से आये थे। ये लोग याज्ञिक ब्राह्मण कहलाते थे। मगही अथवा मागधी में याज्ञिक को 'जाजी' और ब्राह्मण को 'बाभन' कहते है। ये लोग अपढ समाज मे 'जाजी-बाभन' और संस्कृत-समाज में 'याज्ञिक ब्राह्मण' के नाम से प्रसिद्ध है

---

१. 'गोविन्द-गीतावली' (मथुराप्रसाद दीक्षित, सं० १९८९ वि०), पृ० २३।

तथा छतिआना और उसके आस-पास के करीब बीस गाँवों में फैले हुए है। इन लोगों का रहन-सहन बिल्कुल सादा और जीविका-निर्वाह के लिए खेती और जमीन्दारी मात्र साधन है। यद्यपि आज भी इन लोगों की प्रधान जीविका यही है, फिर भी इधर विद्या के विकास के कारण विशेषकर अँगरेजी-शिक्षा के प्रचार के कारण इनके लडके यत्र-तत्र नौकरी करते हुए अथवा किसी अन्य व्यवसाय मे संलग्न पाये जाते है। कहते है, याज्ञिक ब्राह्मणो की एक शाखा मुसलमानी काल मे गुजरात से हटकर प्रयाग के पास-पडोस में आकर बस गई थी। वहाँ से जीविका की खोज मे एक शाखा मगध की ओर आई और छतिआना अथवा उसके पास के गाँवों मे बस गई।[1]

मधुसूदन ओझा 'स्वतन्त्र'

आप शाहाबाद-जिला के मटिला (थाना इटाढी) नामक ग्राम के निवासी पं० जगन्नाथ ओझा[2] के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९५५ वि० (सन् १८९८ ई०) की पौष शुक्ल-सप्तमी (शनिवार) को हुआ था।[3] जब आप पाँच वर्ष के हुए, तब गाँव की पाठशाला में पढने गये। उसके बाद आपने बक्सर हाइ स्कूल से सन् १९२० ई० मे प्रवेशिका की परीक्षा पास की। अपने स्कूली जीवन से ही आप तिलक के स्वराज्यान्दोलन और महात्मा गान्धी के असहयोग-आन्दोलन से सम्बद्ध हो गये थे, जिसके परिणामस्वरूप आपकी शिक्षा आगे नही हो सकी।

आपकी साहित्य-सेवा का आरम्भिक वर्ष सन् १९२० ई० के आसपास बतलाया जाता है। आपकी स्फुट गद्य-पद्य रचनाएँ 'प्रताप', 'तरुण भारत', 'सैनिक', 'देश,' 'सुधा', 'माधुरी', 'गंगा', 'सरस्वती' इत्यादि मे प्रकाशित हुआ करती थी। सहायक सम्पादक के रूप में आप 'स्वाधीन भारत' (आरा, सन् १९३६ ई०), 'सैनिक' (सन् १९२८-२९ ई०), भारतमित्र' (कलकता, सन् १९३९ ई०),' 'राष्ट्रबन्धु' (कलकत्ता,

---

१. 'सर गणेशदत्त सिंह : एक परिचय' (मथुराप्रसाद दीक्षित, सन् १९४९ ई०), पृ० ४।

२. इनके पूर्वज सदियों पूर्व मिथिला में निवास करते थे। कालक्रम से संयुक्तप्रान्त के चनवथ ग्राम (जिला-बलिया) होते हुए शाहाबाद जिले में चले आये।

३. आपके द्वारा सं० २०१३ वि० की श्रावण शुक्ल-सप्तमी को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री के आधार पर।—देखिए, 'जयन्ती स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ५५४) भी।

सन् १६३८ ई०) आदि कई पत्रो से भी सम्बद्ध रहे । आपकी पुस्तकाकार रचनाओ मे —(१) कसवध, (२) धर्मवीर मोरध्वज, (३) जालिम जमीन्दार (४) पुण्याश्रवकथाकोष, (५) श्रोणिक चरित्र, (६) काल-पुरुष (७) स्वतन्त्र सोपान, (८) सप्त सोपान और (६) मुक्ति-सघर्ष उल्लेखनीय हैं ।[1]

उदाहरण

(१)

देश पर हो जाओ बलिदान ।
आत्मा अजर अमर है भाई, बेद पुराण निगम ने गाई ।
छोड़ मोह मद मत्सर भाई, कर दो जीवन-दान ।।देश०।।
भारत-माता बिलख रही है, अश्रु नयन से गिरा रही है ।
कृशित गात निज दिखा रही है, उठ भारत-संतान ।।देश०।।
सत्य-अहिसा-व्रत पालन कर, चर्खा-चक्र हाथ धारन कर ।
प्रति-पक्षी का मान-मथन कर, कर भारत उत्थान ।।देश०।।
आशा बल अभिमान तुम्ही हो, भारत की नव जान तुम्हीं हो ।
श्रेष्ठ आर्य-संतान तुम्ही हो, वीर ! लड़ा दो जान ।।देश०।।
पड़ी भँवर में भारत-नैया, बन्दी-गृह को गये खेवैया ।
कर दो माँ-चरनन पै भैया, तन--मन-धन कुर्बान ।।देश०।।[2]

(२)

वे है हिसा युद्ध-पथिक, हम शांति तत्व के शुभ-पोषक ।
वे है स्थापित स्वार्थ पूँजीपति, हम है सह-स्थिति के बोधक ।
वे है शक्ति युद्ध-बल जग में, सत्ता-स्वार्थी से शोषक ।
वे है अणु-उद्जन-सम भीषण, सहारी बल उत्पीड़क ।

---

१. वास्तव में आप एक क्रान्तिकारी लेखक थे । 'भारतीय आकाश में स्वतन्त्रता की गूँज' शीर्षक धारावाहिक एक लेख लिखने के कारण 'तरुण भारत', पटना का प्रेस जब्त कर लिया गया था, सम्पादक को जेल की सजा दी गई थी और आपको एक वर्ष तक नजरबन्द रखा गया था ।

२. 'तरुण भारत' (८ अक्टूबर, सन् १६२२ ई०), पृ० २ । यह 'तरुण भारत' में प्रकाशित सर्वप्रथम कविता है ।

हम हैं शांति - सुधा धारा से, प्राण जिलानेवाले ।
सभी सौख्य जीवन अपनावें, ज्योति जगाने वाले ॥[1]

(३)

वास्तविकता के सच्चे पारखी ! प्रकृति के निरीक्षण में, तुम्हारी सच्ची सहानुभूति सम्मिलित रहती है। प्रातःकालीन बाल-रवि, प्राची-दिशा में, जब अपनी बाँकी-झाँकी दिखलाकर, अखिल संसार को आलोकित करता है, तब माँ वसुन्धरा के वक्षःस्थल, पर लगे हुए घास के ऊपर, शुभ्र मोतियों के स्वच्छ दाने अपनी क्षणभंगुरता का परिचय देते हैं—उस मौन-भाषा को तुम्हीं—केवल तुम्हीं अपनी अन्त-र्वेदना द्वारा प्रकट करते हो ! पवत के अंचल में, दुर्लंघनीय घाटियों की गोद में, कलकल निनाद करनेवाले पवित्र स्रोतों के 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्' की आत्म-सगीत-लहरी को, जिसके अन्तस्तल से अखिल विश्व के प्रति, एक अनिवचनीय भावना, करुणा, शाश्वत - प्रेम, चिरन्तन क्रियाशीलता और विशाल सहृदयता का एक महान् स्वर-पुंज जो मानव हृदय-वीणा के तारों को, कोमल राग-रागिनियों में, गा-गा कर झंकरित किया करता है—उस स्वर्गीय सुधा-तान को तुम्हारे बिना मधुर-स्वर-तालों में सुनाकर हम संसारी, क्षुद्र जीवों को आनन्द-विभोर कराने में कौन समर्थ हो सकता है ?[2]

(४)

माँ गंगा पतितोद्धारिणी है। ऐसा कौन हिन्दू होगा, जो प्रातः-कालीन वेला में, चाहे वह कूप, बावली या नदी में ही स्नान क्यों न करता हो, पापनाशिनी गंगा का नाम स्मरण न करता हो !.... हरएक हिन्दू के दिल में, चाहे वह बाल, वृद्ध या युवा ही क्यों न हो, माँ गंगा के नाम पर ऐसी ही अटूट श्रद्धा है। केवल 'गंगा' नाम की

१. विभाग में सुरक्षित सामग्री से ।
२. देखिए, 'ललित सूक्ति' (नागपुर, अंक ४, जनवरी, सन् १९३४ ई०), पृ० १० ।

रट लगानेवाला व्यक्ति, सैकड़ों कोसों की दूरी पर स्थित होते हुए भी सब पापों (कष्टों) से छुटकारा पाकर विष्णुलोक को प्राप्त कर लेता है—यह कितना भारी विश्वास है ! यह भावना, हिन्दू-समाज के प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में, इस तरह व्याप्त है, जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण प्रतिवर्ष, माँ गंगा के पवित्र जल में स्नान करनेवाले भक्तो के समागम से ही प्राप्त होता है ।

उत्तरी भारत में, पन्द्रह सौ मीलों में, गगा के पवित्र जल ने अपने तटवर्त्ती भू-भागों को इतना उर्वर बना दिया है और अपने जल-माग के द्वारा व्यापार-क्षेत्र का साधन इतना सुलभ कर दिया है, जिससे देश में, धन-धान्य की प्रचुरता हो गयी है। इसीसे, गंगा की उपमा 'माँ' से दी गयी है । माँ हितकारिणी होती है, जो अपने बच्चों को दूध पिलाकर उनका पालन - पोषण करती है । माँ गंगा भी धन-धान्य से भारतीय कृषकों तथा व्यापारियों का भण्डार भरती है । जिस नदी के वक्षःस्थल पर हजारो जलयान चल रहे हों,जिसके जल में स्वास्थ्य-रक्षा की अतुल शक्ति हो उसका नाम. देश के प्रत्येक बच्चे की जबान पर अंकित हो, तो कौन-सा आश्चर्य है ? यही कारण है कि, गंगा का गान वेद, वेदान्त, उपनिषद्, गीता तथा लौकिक कथाओं में इतना गाया गया है ।

---

१. 'गंगा' (मासिक, प्रवाह १, तरंग १०, सन् १०३१ ई०), पृ० ६६४ ।

मनमोहन चौधरी

आप दरभंगा-जिला के प्रसाद-ग्राम (पो० मधेपुर)-निवासी श्रीहनुमानदत्त चौधरी के पुत्र थे। आपका जन्म स० १९०९ वि० (सन् १८५२ ई०) की ज्येष्ठ शुक्ल द्वितीया को हुआ था।[1] आपकी शिक्षा घर पर ही आपके चाचा श्रीभगवानदत्त चौधरी की देखरेख मे हुई। आगे चलकर आप कई कारणवश उच्च शिक्षा से वंचित रहे। स्वाध्याय से आपने साहित्य के अतिरिक्त आयुर्वेद एवं तन्त्रशास्त्र का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था और परोपकार मे सतत संलग्न रहते थे। आपकी स्फुट रचनाएँ अनेक बतलाई जाती हैं; किन्तु उनका पता नही चलता। प्रकाशित पुस्तकें दो हैं—(१) मनमोहन-विलास, अर्थात् भजन-प्रकाश तथा (२) वंशावली महाराजा दरभंगा।[2] आप सन् १३३७ साल (सन् १९३० ई०) के अग्रहण मास मे परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

बितल बसन्त कंत बिनु, लेल ग्रीषम प्रवेश।
आओन अवधि वितित भेल, आन मोहि लागु अन्देस॥
लागु डर जिब दमकि दामिनि, बरिसु जलधर नीर यो।
बिजुलि चमकत हृदय हहरत, बहत कठिन समीर यो॥
कारि रैन भयानु पहु बिनु, सून सेन न भाव यो।
जेठ जीवन भूठ पिया बिनु, पलटि गृह नहि आब यो॥
जीवन धन जन यौवन हे, तन-मन हरि लेल।
भूषण-बसन सयन सुख, सब प्रीतम लय गेल॥
लिन्ह सुख स्वारस समय पहुँ, दिन्ह दुख तन भार यो।
अकेलि कामिनी कारि जामिनी, यौवन जीबक जंजाल यो॥
रैन चैन न होत पिया बिनु, बोलत दादुर मोर यो।
बोलत पिहुआ बिछुड़ि पिया सों, पहु अषाढ़ न आब यो॥[3]

---

१. श्रीदेवनारायणलाल दास (ग्राम-प्रसाद, मधेपुर, दरभंगा) द्वारा दिनांक १ नवम्बर, सन् १९५६ ई० को प्राप्त और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।

२. इन दोनों पुस्तकों की रचना सन् १८७१ ई० के आसपास हुई थी। किन्तु, अर्थाभाव के कारण इनका प्रकाशन समय पर न हो सका। सन् १९१८ ई० में दरभंगा-राज के मैनेजर (सर्कल नारेदिगर, भपटियाही) श्रीअकलेश्वरप्रसाद के प्रोत्साहन से उक्त दोनों पुस्तकों को एक-एक हजार प्रतियाँ युनियन प्रेस, दरभंगा से प्रकाशित कर मुफ्त बाँटी गई।

३. 'मनमोहन-विलास' से। श्रीदेवनारायणलाल दास (वही) से प्राप्त।

(२)

बहुरि श्याम मिलि जइहें, आली रे धीर धरो री।
कुशल संदेश सुनहु प्रियतम के, तुम सबको सुधि लइहे ।
योगिनि भेष विशेष सजो सब, तब हरि दर्शन दइहें ॥
बलकल बसन योग सब साधहु, अन्तकाल गति पइहे।
मनमोहन एहिविधि हरि मिलिहहि, नहि तो फेरि पछतइहें ॥[1]

मनोरंजनप्रसाद सिंह

आप शाहाबाद-जिला के प्रसिद्ध ग्राम 'डुमरांव'-निवासी श्रीराजेश्वरप्रसादजी (भूतपूर्व सब-जज) के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९५७ वि० (१० अक्टूबर, सन् १९०० ई०) की कार्त्तिक कृष्ण द्वितीया को हुआ था।[2] आपकी आरम्भिक-शिक्षा मुजफ्फरपुर, हजारीबाग, लहेरियासराय, हाजीपुर, छपरा आदि अनेक स्थानो मे हुई। सन् १९१६ ई० मे आपने प्रवेशिका की परीक्षा पास की। इसके बाद आपका नाम मुजफ्फरपुर के जी० बी० बी० कॉलेज मे लिखवाया गया। लगभग दो वर्षों तक कॉलेज मे पढने के बाद आइ० ए० परीक्षा के समय अस्वस्थ हो जाने के कारण आप परीक्षा मे सम्मिलित नही हो सके और आप शिमला हरद्वार, मसूरी आदि स्वास्थ्यकर स्थानों मे भ्रमणार्थ चले गये। सन् १९१९ ई० मे आपने आइ० ए० की परीक्षा पास की और पटना कॉलेज के बी० ए० वर्ग मे अपना नाम लिखाया। यहाँ विद्याध्ययन कर ही रहे थे कि सन् १९२० ई० के अक्टूबर में, असहयोग का बिगुल बजते ही आपने अपनी पढाई छोड दी। कुछ दिनो बाद आपकी नियुक्ति गुजरात - विद्यापीठ मे हिन्दी - अध्यापक के पद पर हुई, किन्तु अपने घर के लोगो की राय से आप वैद्यक पढने लगे। उसमें आपका मन नही लगा। अत, सन् १९२४ ई० की जुलाई मे काशी-हिन्दू-विश्वविद्यालय मे आकर आपने फिर से बी० ए० मे नाम लिखाया। यहाँ आपका जीवन बडा ही

---

१ श्रीदेवनारायण लाल दास (वही) से प्राप्त।

२ 'बिहार के नवयुवक-हृदय' (ठाकुर मगलप्रसाद सिंह, स० १९८५ वि०), पृ० ९८)।
आप मूल रूप से 'सूर्यपुरा' - ग्राम के निवासी हैं, किन्तु अब 'डुमरांव' में ही आपका निवास-स्थान हो गया है।—सं०
आपके परिचय-लेखन में 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६५४), 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, पृ० ५५३-५५), हिन्दीसेवी संसार' (वही, पृ० १७८-७९), 'बिहार-अब्दकोश' (वही, पृ० ६७४), 'बिहार-विभाकर' (वही, पृ० २२१-२४ ई०) तथा बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् की 'उद्घाटन-समारोह-पुस्तिका' से भी सहायता ली गई है।

उज्ज्वल रहा। यहाँ आपने अँगरेजी में ऑनर्स लेकर बी० ए० की परीक्षा पास ही नही की, सर्वप्रथम स्थान भी पाया। इसके बाद, उक्त विश्वविद्यालय से ही एम्० ए० पास कर आप इलाहाबाद की कायस्थ-पाठशाला मे प्राध्यापक-पद पर नियुक्त हुए। सन् १९२९ से ३९ ई० तक आप हिन्दू-विश्वविद्यालय मे अँगरेजी के प्राध्यापक रहे। नवम्बर, सन् १९३९ ई० से आप छपरा के राजेन्द्र कॉलेज मे प्राचार्य होकर चले गये। उक्त पद से अवकाश-ग्रहण कर आप देवघर हिन्दू-विद्यापीठ के उपकुलपति-पद पर नियुक्त हुए, जहाँ से आपने सन् १९६७ ई० मे अवकाश ग्रहण किया।

हिन्दी-साहित्य की ओर आप बारह वर्ष की अवस्था से ही झुके। उसी समय बाबू मैथिलीशरण गुप्त की रचनाओं को देखकर आप कविता करने लगे थे। 'प्रताप'-सम्पादक श्रीगणेशशंकर-विद्यार्थी ने भी आपको पर्याप्त प्रोत्साहन दिया। आगे चलकर आपकी पहली रचना सन् १९१० ई० मे 'शिक्षा' मे छपी। इसके बाद, 'शिक्षा' के अतिरिक्त आरा की 'साहित्य-पत्रिका' में भी आपकी रचनाएँ निकलती रही। कुछ ही वर्षों के बाद 'पाटलिपुत्र' 'प्रताप' 'मर्यादा' में आपकी रचनाएँ स्थान पाने लगी। सन् १९२१ ई० के असहयोग-युग मे आपकी 'भोजपुरी-रचना 'फिरंगिया' को पर्याप्त प्रसिद्धि मिली। कहते हैं उन दिनो महात्मा गान्धी बिहार मे जहाँ कही भी भाषण देते थे, वहाँ आपकी 'फिरंगिया' भी अवश्य सुनते थे। साहित्य-जगत् में अपनी प्रसिद्धि के परिणामस्वरूप आप बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के अट्ठारहवें (मोतीहारी) अधिवेशन के सभापति चुने गये और पूर्णिया मे होनेवाले बिहार-प्रान्तीय कवि-सम्मेलन के अध्यक्ष भी बने। आगे चल कर बिहार-सरकार ने आपको बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् की सामान्य-समिति का सदस्य बनाया।

आपकी गणना खड़ीबोली और भोजपुरी के रससिद्ध कवियो मे होती है। सस्वर कविता-पाठ से आप श्रोताओं को आज भी मन्त्रमुग्ध कर देते हैं। खड़ीबोली के 'परोडी' या विडम्बनाकाव्य के रचयिताओं मे भी आपका अच्छा स्थान है। आपके द्वारा लिखित पुस्तको के नाम ये है—(१) राष्ट्रीय मुरली, (२) राजा कुँवरसिंह, (३) उत्तराखण्ड के पथ पर, (४) भगवान हमारे, (५) गौतम बुद्ध, (६) गुन-गुन और (७) संगिना।

उदाहरण

(१)

था बूढ़ा पर वीर बाँकुरा कुँअर सिंह मरदाना था।
मस्ती की थी छिड़ी रागिनी, आजादी का गाना था,
भारत के कोने-कोने में, होता यही तराना था।
उधर खड़ी थी लक्ष्मीबाई, और पेशवा नाना था,
इधर बिहारी वीर बाँकुड़ा, खड़ा हुआ मस्ताना था।
अस्सी वर्षों की हड्डी में, जागा जोश पुराना था,

सब कहते हैं कुँअर सिह भी, बड़ा वीर मर्दाना था ।
नस-नस में उज्जैन वंश का, बहता रक्त पुराना था,
भोजराज का वंशज था, उसका भी राजघराना था ।
बालपने से ही शिकार मे, उसका विकट निशाना था,
गोला गोली, तेज कटारी, महावीर का बाना था,
उसी नींव पर युद्ध बुढ़ापे मे भी उसने ठाना था ।
सब कहते है कुँअर सिह भी बड़ा वीर मर्दाना था ॥[1]

(२)

सुना यही पर बुद्धदेव ने, किया कभी था आप निवास,
महारण्य की पुण्यकुटी में था उनका सुन्दर आवास ।
यही सुन्दरी आम्रदारिका तजकर सारे भोग-विलास,
आयी थी श्रद्धा- समेत, उपदेश ग्रहण को उनके पास ।
विकसी थी वह मृदुल मंजरी, यही आम्र के कानन मे,
मत कह, क्या क्या हुआ यहाँ इस वैशाली के आँगन में ।

× × ×

सुना, यही उत्पन्न हुआ था, किसी समय वह राजकुमार,
त्याग दिये थे जिसने जग के, भोग-विलास साज श्रृंगार ।
जिसके निर्मल जैन धर्म का, देश-देश मे हुआ प्रचार,
तीर्थङ्कर जिस महावीर के, यश अब भी गाता संसार ।
है पवित्रता भरी हुई इस, विमल भूमि के कण-कण मे,
मत कह, क्या-क्या हुआ यहाँ इस वैशाली के आँगन में ॥[2]

(३)

अबहूँ कुहुकिए के बोलेले कोइलिया, नाचेला मगन होके मोर ।
अबहूँ चमेली बेली फूले अधिरतिया, हियरा मे उठेला हिलोर ॥

---

१. 'कुँअर सिंह : एक अध्ययन' (श्री दुर्गाशकर प्रसाद सिंह, सन् १९५५ ई०), पृ० ४७ ।
२. 'वैशाली अभिनन्दन-ग्रन्थ' (सम्पादक-मण्डल, सन् १९४८ ई०), पृ० २८ ।

अबहूँ अँगनवाँ में खेलेला बलकवा, कौआ मामा चील्हिआ-चिल्होर।
अबहूँ चमकिए के चलेले तिरिअवा, ताकेले भुँइअवे के ओर ॥
चोरी-चोरी अबो गोरी करेली कुलेलवा, चोरी-चोरी आवे चितचोर।
भूलि जाला सुध-बुध काम काज लोक-लाज, करेले जवानी जब जोर॥
दुनियाँ के रग-ढंग सब कुछ ऊहे बाटे, ओइसने बा जोर अउरी सोर।
कुछुओ ना बदलल, हमही बदल गइली बदलल तोर अउरी मोर॥
तबके जवान अब भइले पुरनियाँ, देहिया भइल कमजोर।
याद जब आवेला पुरनका जमनवा, मनवा में होखेला ममोर ॥

(४)

सुन्दर सुथर भूमि भारत के रहे रामा, आज इहे भइल मसान
रे फिरंगिया,
अन्न धन-जन-बल-बुद्धि सब नास भइल, कौनो के ना रहल निसान
रे फिरंगिया।
जहँवाँ थोड़े ही दिन पहिले ही होत रहे, लाखो मन गल्ला और धान
रे फिरंगिया।
उहे आज हाय रामा! मथवा पर हाथ धरि, बिलखिके रोवेला किसान
रे फिरंगिया।
हाय दैव! हाय! हाय! कौना पापे भइल बाटे, हमनी के आज अइसन
हाल रे फिरंगिया।
सात सौ लाख लोग दू-दू साँझ भूखे रहे, हरदम पड़ेला अकाल
रे फिरंगिया।
जेहु कुछ बाँचेला त ओकरो के लादि-लादि, ले जाला समुन्दर के पार
रे फिरंगिया।
घरे लोग भूखे मरे गेहुँआ बिदेस जाय, कइसन बाटे जग के व्यवहार
रे फिरंगिया।

१. 'भोजपुरी के कवि और काव्य' (श्रीदुर्गाशंकरप्रसाद सिंह, सन् १९५० ई०), पृ० ३४५।

जहँवाँ के लोग सब खात ना आघात रहे, रुपया से रहे मालामाल
रे फिरंगिया।
उहे आज जेने-जेने अँखियाँ घुमाके देखु, तेने-तेने देखबे कंगाल
रे फिरंगिया।
बनिज-बेपार सब एकउ रहल नाही, सब कर होइ गइल नास
रे फिरंगिया।
तनि-तनि बात लागि हमनी का हाय रामा, जोहिले बिदेसिया के आस
रे फिरंगिया।[1]

(५)

सैकड़ों नर-नारियों की जयध्वनि से आकाश मंडल गूंज उठा। पहाड़ो से टकराती हुई वह आवाज कोने-कोने मे प्रतिध्वनित हो उठी। वह भी एक अजीब दृश्य था। बूढ़े-जवान, स्त्री-पुरुष, अमीर-गरीब, सभी एक ही भाव से अनुप्राणित हो रहे थे। एक ही उद्देश्य था, एक ही ध्येय था, एक ही लालसा थी सबके मन में—भगवान् के दर्शन की। एक ही ओर सभी चल पड़े थे-श्री बदरी-केदार की ओर। आसपास चारों ओर पहाड़-ही-पहाड़ थे-सघन वृक्षों से आच्छादित हरे-भरे। नीचे तीव्र वेग से प्रवाहित हो रही थी भागीरथी—पहाड़ो से टकराती, चट्टानों पर बदलती, पगली-सी अट्टहास करती हुई। जगह-जगह बालू के कण चमक रहे थे—निर्मल उज्ज्वल मोती के समान।[2]

★

१. 'भोजपुरी के कवि और काव्य', (वही), पृ० २५३।
२. 'उत्तराखण्ड के पथ पर'(मनोरंजनप्रसाद सिंह, सन् १९३९ ई०), पृ० २९-३०।

महादेवप्रसाद शास्त्री

आप मुजफ्फरपुर-जिला के 'मथुरापुर' (पो० देसरी) नामक ग्राम के निवासी श्रीयोगेश्वरप्रसादजी के पुत्र है। आपका जन्म सं० १९४८ वि० (सन् १८९१ ई०) को भाद्र शुक्ल तृतीया को हुआ था।[1] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। इसके बाद आपकी शिक्षा मुजफ्फरपुर मे हुई। वहाँ से आपने बी० ए० की परीक्षा पास की। तदनन्तर, आपने, पटना-विश्वविद्यालय से क्रमश. सस्कृत, (सन् १९२७ ई०) और हिन्दी (सन् १९२९ ई०) म एम्० ए० को उपाधि प्राप्त की। इन परीक्षाओ के बाद आपने सन् १९२९ ई० मे कलकत्ता-विश्वविद्यालय को संस्कृत-समिति से 'काव्यतीर्थ' की उपाधि पाई। इसके पूर्व ही सन् १९२४ ई० मे आपने पटना-विश्वविद्यालय से बी० एड्० की उपाधि परीक्षा भी पास कर ली थी। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग से 'हिन्दी विशारद' की भी परीक्षा मे आपने सन् १९३७ ई० मे ही सफलता प्राप्त की था। विद्वत्सम्मेलन, अलीगढ ने आपको 'शास्त्री' की उपाधि (सन् १९३९ ई०) से अलकृत किया था और भारत-धर्म-महामण्डल, काशी की ओर से आपको विद्यालंकार की उपाधि (सं० १९९८ वि०) देकर सम्मानित किया गया था।[2]

अध्ययनोपरान्त आपने पटना-महाविद्यालय की सेवा की। यहाँ से आपका स्थानान्तरण लगट सिंह महाविद्यालय, मुजफ्फरपुर मे हुआ। तदनन्तर, आप राँची-महाविद्यालय मे चले गये। इन तीनो महाविद्यालयो मे आपने सस्कृत और हिन्दी-विभागो मे प्राध्यापन-कार्य किया। अध्यापन-कार्य के बाद बहुत वर्षों तक आप बिहार-संस्कृत-समिति के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष-पद पर प्रतिष्ठित रहे।

सन् १९१६ ई० से ही आपकी साहित्यिक कृतियाँ प्रकाश मे आने लगी थी। आपने सूरदास-कृत 'साहित्य-लहरी' की व्याख्यात्मक टीका लिखी। आपके द्वारा लिखित पद्माकर कृत 'जगद्विनोद' और 'ब्रजमाधुरीसार' की टीकाएँ अद्यावधि अप्रकाशित हैं। आपने आर्यशूर-कृत 'जातकमाला' का हिन्दी-रूपान्तरण किया है। आजतक उसका भी प्रकाशन नहीं हो सका है। आपके द्वारा लिखित लेख यत्र-तत्र पत्रिकाओ मे प्रकाशित होते रहे हैं। सम्प्रति आप मुजफ्फरपुर जिला के (रामभद्र) हाजीपुर मे निवास कर रहे है।

उदाहरण

राधा ने कैसा स्वभाव कर लिया है! प्राणपति कृष्ण के शब्दों में ही इसका चित्त लगा है (अर्थात् वह बड़बड़ाती रहती है)। होठ से हँसी नहीं निकलने पाती। वह क्रोध करना जानती है और काम में चित्त लगाए हुई है। इसका शरीर सुवर्ण के सदृश सरस और दीप्ति-

---

१. आपके द्वारा दिनांक ८ अगस्त, सन् १९५६ ई० को प्रेषित और 'साहित्यिक-इतिहास-विभाग' में सुरक्षित विवरण के अनुसार। आपके परिचय-लेखन में उक्त सामग्री के अतिरिक्त 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६६२) से भी सहायता ली गई है।

२. पुस्तक-भण्डार, लहेरियासराय, दरभंगा से प्रकाशित।

मान है। सूरदास कहते हैं कि श्याम (कृष्ण) चतुर है और राधिका स्वकीया नायिका है और यहाँ पूर्णोपमालङ्कार हुआ। (अथवा सूरदासजी कहते हैं कि कृष्ण स्वकीया नायिका तथा राधा की न घटनेवाली उपमा को भलीभाँति जानते है।) यहाँ कनक (सुवर्ण) उपमान तथा तम उपमेय, सो वाचक और दीपत धर्म है। अतः यहाँ पूर्णोपमालंकार का निर्देश है।

टिप्पणी—'साहित्य-लहरी' के पुराने टीकाकार सरदार कवि ने पाठ को कुछ बदल दिया है। तीसरे पद मे 'भानुवंशी रस' के स्थान में 'मानसरवासी' लिखा है, जिसका अर्थ भी 'हस' या हास्य ही है।[1]

महादेव प्रसाद सिंह 'घनश्याम'

आप शाहाबाद-जिला के 'नचाप' (रघुनाथपुर)[2] नामक ग्राम के निवासी श्रीहरिकृष्ण सिंह के पुत्र हैं। आपका जन्म सन् १८६४ ई० के ५ अक्टूबर को हुआ था।[3] आपकी शिक्षा उच्च-प्राथमिक तक ही रही। आगे चलकर अर्थसंचय के निमित्त आपको सन् १९१० ई० ने कलकत्ता जाकर एक कम्पनी में नौकरी करनी पडी। प्रथम विश्वयुद्ध के छिड़ने पर सन् १९१५ ई० मे आपने फौज में भरती होकर कार्य करना शुरू किया। सन् १९१८ ई० मे जब युद्ध की समाप्ति के बाद सारे देश मे रॉलेट ऐक्ट के विरुद्ध असन्तोष की आग भडकी, तब आपने भी राष्ट्रपिता महात्मा गान्धी के आह्वान पर उस आन्दोलन मे सक्रिय भाग लिया। सन् १९१९ ई० मे आप पुनः कलकत्ता पहुँचे। वहाँ जाकर भी आपने अपने भोजपुरी गीतो के माध्यम से आन्दोलन के प्रचार मे साहाय्य प्रदान किया। गीतो के माध्यम से आपने जो प्रचार-व्रत चलाया, वह बडा ही प्रशस्त हुआ। इस माध्यम से आपने सैकड़ों पुस्तकों की रचना कर डाली। पुस्तको मे अधिकाधिक राष्ट्रप्रेम से ओत-प्रोत गीत हैं।[4] आपके गीतों के कारण ही श्रीभार्गव पुस्तकालय, गायघाट, बनारस की ओर से 'पँवारा कैसरे हिन्द' की उपाधि आपको दी गई थी।

---

१ 'साहित्य-लहरी' की टीका से। आपके द्वारा ही प्राप्त।

२ इस ग्राम में कवियों और लेखकों की परम्परा प्राचीन काल से ही चली आई है। शाहाबाद-जिला के सुप्रसिद्ध सन्त-कवि श्रीबाबा शिवनन्दास का भी जन्म यहीं हुआ था।

३. श्रीकेशव शास्त्री (सोशलिस्ट पार्टी, सासाराम, शाहाबाद) द्वारा प्रेषित सामग्री के आधार पर।

४. आपके इस गाँव का नाम बदलकर, आपकी लोकप्रियता के कारण, आपके नाम पर 'महादेवनगर' कर दिया गया है।

सन् १९२० ई० मे आपने अपने घर पर आकर चौगाई-गोशाला की सेवा मे हाथ बँटाया। सच्ची लगन से गो-सेवा करने की इच्छा रखते हुए भी उन गोशालाओं मे व्याप्त भ्रष्टाचार को देखकर आपने उसका त्याग कर दिया। छह माह बाद आप पुन कलकत्ता चले गये। वहाँ जाकर आपने हिन्दी के गीतों के माध्यम से आर्यसमाज का प्रचार-कार्य करना आरम्भ किया और काकीनाडा, लालकोठी के पास एक आर्यसमाज-मन्दिर की स्थापना की। कई आर्यसमाज-सस्थाओ मे आपने वार्षिक अधिवेशन कराया। इस तरह आपने जीवन-भर मुख्यत देशसेवा का ही कार्य किया।

आपने उन दिनों भोजपुरी तथा हिन्दी मे अनेक पुस्तकें लिखी। सन् १९२४ ई० से ही दूधनाथ प्रेस, सलकिया, हवडा, कलकत्ता से आपके गीतो का संग्रह छापना शुरू हुआ।[1] देखते-ही-देखते आपकी सैकड़ो पुस्तके प्रकाश मे आ गई। 'भारत का गुलाब', 'राष्ट्रीय झंकार' आदि अनेक पुस्तको की आपने रचना की, जिनमे निम्नलिखित प्रसिद्ध हुई — 'भारत का गुलाब', 'बेदर्दी', 'देश-सुधार', 'भारत-पुकार', 'राष्ट्रीय झंकार', 'दीन पुकार', 'देशपतिया', 'अँगरेजवा', 'भारत-सुधार', 'रविदास-रामायण', 'राधेश्याम नाटक', 'शीत-वसन्त', 'वीर कुँअर विजयी (१६ भाग), 'ढोलन का गीत,' 'लोरिकायन' (१-३ भाग,, 'बारह सखी का बारहमासा आदि। आपके रचे गीत लोग बडे प्रेम से गाते हैं। आपके द्वारा लिखित एव प्रकाशित इन पुस्तको को, चाहे वे साहित्य को जिस विधा की भी हो, जनजिह्वा ने अपना लिया था। आपकी एक पुस्तक 'भारत-पुकार' ने देश मे तहलका मचा दिया था। तत्कालीन अँगरेजी-सरकार ने उसे जब्त कर लिया था। सारी बाधाओ को सहकर भी आपने अपना लेखन कार्य कभी बन्द नहीं किया। सम्प्रति, अपने जीवन-यापन के लिए आपको नौकरी करनी पड़ रही है।

उदाहरण

(१)

काठ के कठौता के गोड़ से छुवावेला,
साँचहू का बात केवट अजमावेला।
मन के भरम आपन संशय मिटावेला,
गोड़वा के धइ कर जल में डुबावेला।
हुलसि-हुलसि बड़ा प्रेम से पखारेला,
गोड़ में के धूरि खूब मलिके छोड़ावेला॥[2]

---

१. श्रीशम्भुनाथप्रसाद मिश्र, हरिसन रोड, कलकत्ता, श्रीगुरुप्रसाद केदारनाथ, बनारस, श्रीठाकुर प्रसाद, राजादरवाजा, बनारस तथा भार्गव पुस्तकालय, बनारस आदि ने भी आपके गीत पुस्तकाकार छापकर काफी पैसे कमाये। सबने आपकी कृतियों से पर्याप्त लाभ उठाया। किन्तु, आपकी स्थिति ज्यों-की-त्यों ही रही। आपने अपने प्रकाशकों के व्यवहार पर अपना बड़ा ही कटु अनुभव व्यक्त किया है।

२. 'केवट-अनुराग-कीर्त्तन' नामक पुस्तक से। आपके द्वारा प्राप्त।

(२)

रौलट बिल के काले कानून के कारण सर्वत्र विरोधी सभाएँ होने लगी और सरकारी दमनचक्र भी चलने लगा । उसी समय पंजाब के सूबे 'अमृतसर' स्थित 'जालियानवाला बाग' मे बेरहम और बेदर्द लार्ड डायर की गोलो से जमीन रँग दी गई । हजारो नवजवान शहीद हुए और उस शहादत ने देश मे असंतोष की अग्नि जला दी और सारे देश के नवजवान अपने सर में कफन बाँधकर आजादी के जगे-मैदान मे कूद पड़े । राष्ट्र के सूत्रधार राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी की आँधी में देश के बच्चे, बूढ़े, नवजवान तूफान बनकर आगे बढ़ने लगे । ऐसे अवसर पर अपनी भरी हुई जवानी में मैं भी चुप कैसे बैठ पाता । भारतमाता की पुकार पर आजादी की लड़ाई मे शामिल हो गया । मेरा काम गॉव गॉव मे कॉग्रेस का प्रचार कर जनता मे राष्ट्रीयता की भावना पैदा करना था । आजादी की लड़ाई के जोर पकड़ते ही साम्राज्यवादी शासन के छक्के छूटने लगे । उसकी दीवार की एक-एक ईंट हिलने लगी, और उस ईंट को हिलाने में मुझसे भी जितना बन पड़ा किया ।

महावीरप्रसाद द्विवेदी

आप गया-जिला के 'बहेलिया बिगहा' (टेकारी) नामक स्थान के निवासी प० परमसुख द्विवेदी के पुत्र थे । आपका जन्म सं० १९१३ वि० (सन् १८५६ ई०) की श्रावण शुक्ल त्रयोदशी को शाहाबाद-मण्डलान्तर्गत 'सिहपुर' (प्र० रोहतासगढ मे हुआ था ।[२] यद्यपि आपका जन्म विद्वानो के वश मे हुआ था, तथापि कई कारणो से आप उच्च शिक्षा से वंचित ही रहे । सत्सग के कारण आपने अच्छी हिन्दी का ज्ञान प्राप्त कर लिया था । काल प्रभाव के कारण अँगरेजी का भी सामान्य ज्ञान आपने प्राप्त किया था । आपको

---

१. आपके द्वारा प्रेषित सामग्री से ।

२. 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० १२८ ।

हिन्दी के क्षेत्र मे पदार्पण कराने का सारा श्रेय काशी के प्रसिद्ध राजभट्टवशीय श्रीगिरिधारी कवि को था, जिनके सत्सग मे रहकर आपने हिन्दी के प्राचीन कवियो की कृतियों का गम्भीरतम अध्ययन किया। वस्तुतः उपर्युक्त कवि महाराज ही आपके काव्य-गुरु थे।

आपकी गणना हिन्दी और व्रजभाषा के सफल पूर्त्तिकारो मे होती थी। व्रजभाषा के वीर और श्रृंगार दोनो रसो के आप सिद्धहस्त कवि थे। 'रसिक-विनोदिनी' एवं 'समस्यापूर्त्ति' आदि पत्रिकाओं मे आपकी समस्याएँ बहुधा प्रकाशित हुआ करती थी। टिकारी (गया) के राजा रणबहादुर सिंहजी ने आपकी एक कविता पर प्रसन्न होकर आपके समकालीन श्रीदिनेश कवि की ६१ बीघे जब्त जमीन को लौटा देने का वचन देते हुए आपको एक सौ रुपये नकद और एक जोडा दुशाला प्रदान किया था। सम्भवत. उक्त राजा साहब के निधन हो जाने के कारण वह जमीन आपको नही मिल सकी।[1] आपने आजीवन समस्यापूर्त्ति एवं काव्य-रचना के माध्यम से व्रजभाषा एवं हिन्दी की सेवा मे ही अपना समय बिताया।

उदाहरण

(१)

कहुँ बादर रेख उठै नभ में उन्मत्त मयूर महा हरषै,
कहुँ दादुर शब्द सुनै छिति पै, तब कोकिल को रव को सरसै
'महावीर' जू चातकी टेर सुनो, विरहागि वियोगिन ह्यो झरसै,
मेघन की भल रीति अहै गरजै कहूँ जाय कहूँ बरसै।[2]

(२)

बाँधे जटा जूट माथे सोहत विभूति गहि,
रहत त्रिसूल तिहूँ ताप के हरन है।
भाल में विराजै चन्द शेष लपटाये अंग,
डमरू बजाय जग आनन्द करन है।
थोडे पूजा-पाठ में प्रसन्न ह्वै के वर देत।
देवों के देव ऐसौ औढ़र ढरन है।
मनचित्त लाय कै भजै ना नर ऐसो देव।
शम्भु को चरन सदा सुख को करन है।[3]

---

१. 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० १२६।

२. 'रसिक-विनोदिनी' (गया), भाद्रपद, १९६२ वि०), पृ० ३।

३. आपके द्वारा प्रेषित सामग्री से।

(३)

पाया नाहि सुरसरि नेम कै नहाया तऊ,
वेदहु पुरान मे न पाया श्रुति-थाप में।
काशी मे न पाया जहाँ दासी-सी फिरै है मुक्ति,
वृज में न पाया हरि बाँसुरी अलाप मे।
प्रागराज तीरथ वो द्वारिका सिधाया भले,
निज पिय पाया ना भुलाया तीन-ताप मे।
'महावीर' इत-उत खोजि फिरि आया फेर,
आप ही मे पाया सो न पाया जोग-जाप मे।[१]

(४)

ऊधो आए गोकुल में सीख देन गोपिन को,
कह्यो भोग आस तजि योग तन धारि लै।
नाम बनवारी को जपहु दृढ़ प्रेमकरि,
मोहतम भारी को सुजर ते उपारि लै,
द्यौसनिसि जप-तप - संयम - नियम - व्रत,
करि उपचारि काम-कोह-मद मारि लै,
'महावीर' सबघट बासी सुखराशि श्याम,
बसे उर तेरे ज्ञान नैनन निहारि ले।[२]

*

१. 'रसिकविनोदिनी', (गया, भाद्रपद, सं० १६६१ वि०), पृ० १२।
२ 'समस्यापूर्त्ति' (पटना, जुलाई, सन् १८६७ ई०), पृ०१८। मिश्रबन्धुविनोद (वही, पृ० ६१५) में आप पटना-निवासी बतलाये गये हैं।

महेशचन्द्र प्रसाद

आप गया-नगर के 'नादरागंज' नामक मुहल्ले के निवासी श्रीबाँकेबिहारीलालजी के पुत्र है।[1] आपका जन्म सं० १९४४ वि० (सन् १८८७ ई०) की मार्गशीर्ष शुक्ल-षष्ठी (रविवार) को हुआ था।[2] आपकी प्राथमिक शिक्षा आपके अग्रज श्रीबिसुनप्रसाद जी के सान्निध्य में, पटना में हुई। सन् १९०५ ई० में,इण्ट्रेंस-परीक्षा पास करने पर आप कई स्थानों मे नौकरी करते रहे। आठ वर्षों के बाद आपने पुनः अध्ययन आरम्भ किया। सन् १९१७ ई० मे आपने बी० ए० की परीक्षा पास की। सन् १९१८ से ११ ई० तक आप जिला-स्कूल, मुजफ्फरपुर, छपरा और आरा मे अध्यापक तथा ट्रेनिंग स्कूलों मे उप-प्रधानाध्यापक के पद पर प्रतिष्ठित रहे। सन् १९२६ ई० मे आपने संस्कृत मे और सन् १९२९ ई० मे हिन्दी मे एम्० ए० की परीक्षाएँ पास की। सन् १९३१ ई० मे ही आपकी 'स्वदेशी सतसई' नामक एक पुस्तक प्रकाशित हुई, जो तत्कालीन अँगरेजी सरकार द्वारा जब्त कर ली गई थी। इसी पुस्तक के कारण आपको सरकारी सेवा से वंचित कर दिया गया था। उसके बाद, सन् १९३९ ई० तक आप आरा के प्रतिष्ठित रईस श्रीबाबू निर्मलकुमार जैन के यहाँ अध्यापक रहे। कुछ दिनो तक जैन कॉलेज, आरा मे प्राध्यापक का पद सँभाला। प्राध्यापक जीवन के बाद आपने राजगृह, बबुरा और चिरकुण्डा के हाइस्कूलो मे प्राधानाध्यापक का कार्य-सम्पादन किया। श्रीगणेश आदर्श सस्कृत-उच्च बविद्यालय, खितयारपुर, पटना के प्रधानाध्यापक का पद भी आपने बड़ी सफलता के साथ सँभाला था।[3]

स० १९५७ वि० से ही आपने हिन्दी और संस्कृत मे लिखना शुरू किया था।[4] आपके द्वारा लिखित कुछ पुस्तकें अखिलभारतीय ख्याति की है। पुस्तक-लेखन के अतिरिक्त आपने पटना से निकलनेवाले 'शिक्षा सेवक' नामक पत्र का सम्पादन-कार्य भी किया था। आपही इस पत्र के प्रधान सम्पादक थे।[5]

आपके द्वारा रचित सोलह-सत्रह पुस्तकें काल-क्रमानुसार इस प्रकार प्रकाश मे आई —१. सावित्री नाटिका,[6] २ हर्ष मे विषाद[7] ३. भारत भाग्योदय,[8] ४ शोक-संगीत,[9] ५ भारतेश्वर का सन्देश,[10] ६ संस्कृत-साहित्य का इतिहास[11]

---

१. आपके पितामह श्रीभवानी सहाय पहले दरभगा जिला में रहते थे। वहाँ से आकर उन्होंने गया-नगर में वकालत शुरू की। कालक्रम से आपके पूर्वज वहाँ से भी हटकर पटना चले आये। सम्प्रति, आपके परिवार का स्थायी निवास पटना ही है।

२ आपके निकट सम्बन्धी श्रीब्रजनन्दन प्रसाद, पुस्तकालयाध्यक्ष, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना–४ से प्राप्त सूचना के अनुसार।

३. आपके द्वारा परिषद् के 'साहित्यिक-इतिहास-विभाग' में प्रेषित सूचना के आधार पर।

४. 'मिश्रबन्धुविनोद' (वही), पृ० ६१५।

५. 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही), पृ० ६४२।

६ सन् १९०८ ई० में प्रकाशित।

७. पद्य। सन् १९१० ई० में प्रकाशित।

८. 'Englands work in India' का अनुवाद। सन् १९११ ई० में प्रकाशित।

९. अँगरेजी से पद्यानुवाद। सन् १९१५ ई० में प्रकाशित।

१०. पद्य। सन् १९१६ ई० में प्रकाशित।

११. सन् १९२२ ई० में प्रकाशित।

७ ज्ञान-गंगा[१], ८. स्वदेश सतसई[२], ९. श्रीबाहुबलि शतक[३], १०. प्रबोधचन्द्रोदय[४], ११ मनुष्य सतसई[५], १२. डाह का फल[६] १३. देश दुर्दशा नाटक[७], १४. हिमालय,[८], १५ दुर्गासप्तशती,[९], १६. दण्डीयात्रा।[१०] इन पुस्तको के अतिरिक्त अनेक विषयों पर लिखित आपके स्वतन्त्र निबन्ध 'बालक', 'युवक', विश्वमित्र', 'सरस्वती', 'माधुरी' आदि सभी विशिष्ट पत्र-पत्रिकाओ मे प्राप्त होती है। सन् १९५७ ई० मे आपको बिहार-राष्ट्रभाषा परिषद्,[११] पटना की ओर से १५०० रुपयो का वयोवृद्ध साहित्यिक-सम्मान पुरस्कार दिया जा चुका है। आप इन दिनों पटना मे ही निवास करते हैं।

उदाहरण

(१)

विद्या का उन्माद असुभ की, वारि अहै विपदा की।
दारिद केर देह यह जानो, अघ की जननि सदा की॥
कलि को केवल कांत मार्ग यह, उर को अहै अँधेरो।
कुम्भ मोल लै भला बनौ किन शीघ्र शुम्भ को चेरो॥
जन के होश हेराय हिये महँ हीनभाव उपजावै।
मात, पिता, गुरु, साधु सत कहँ हनै भविष्य न भावै॥
या को सुरा कहै जग मैं, सब अहो सुरात्मा धारी।
गुन को पक्ष गहै नहिं जो नर, लहै याहि दुखकारी॥
जाके सेवत पाप निरत नित होवत है नर-नारी।
पड़ै प्रचंड प्रपात नरक कै, पावैं संकट भारी॥

---

१. संस्कृत-जातकमाला के १० जातकों का गद्य-पद्यात्मक अनुवाद। सन् १९२७ ई० में प्रकाशित।
२. ७५७ बरवै छन्दों में रचित। सन् १९३० ई० मे प्रकाशित।
३. जैनसन्त श्रीबाहुबलि की प्रशसा में रचित। सन् १९३५ ई० में प्रकाशित।
४ संस्कृत से अनूदित। सन् १९३५ ई० में प्रकाशित।
५. ७७७ दोहों में रचित। सन् १९३८ ई० में प्रकाशित।
६. शेक्सपियर के 'ओथेलो'-नाटक का अनुवाद। सन् १९३९ ई० में प्रकाशित।
७. सन् १९४२ ई० में प्रकाशित।
८. काव्य। सन् १९४८ ई० प्रकाशित।
९. संस्कृत से अनुवाद। सन् १९४९ ई० में प्रकाशित।
१० खण्ड-काव्य। सन् १९५४ ई० में प्रकाशित।
११. देखिए, 'बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् का वार्षिक कार्य-विवरण' (सन् १९५७ ई०), पृ० ३३।

पशु सम दीसै दसा प्रेत सम पातर तन दिखरावै।
ता कहँ ताकनहूँ को काकहँ कहो ख्याल उर आवै॥
कितना हूँ लघु होय कुफल मद पान किये को।
सदाचार को नाश करै, मत हरै हिये को॥
नरक 'अवीची' ज्वलित अनल मो वास करावै।
प्रेत और पशुजोनि माहि नर को भरमावै॥
सकुचावत संकोचसील को सुजस नसावत।
दूर बहावत लाज सुमन को मलिन बनावत॥
गुन गन सुभग भगावत औगुन बेगि बुलावत।
महाराज सो सुए भला कैसे तोहि भावत॥[1]

(२)

प्रोफेसर मैक्समूलर कहते हैं—यदि मुझको सम्पूर्ण संसार में ढूँढ़कर कोई ऐसा देश निकालना हो जो प्रकृति के दिये हुए अखिल सम्पद्, शक्ति और सौन्दर्य से सम्पन्न हो, जो किसी-किसी अंश में इस भू-लोक में साक्षात् स्वर्ग हो, तो मै कहूँगा कि वह देश भारतवर्ष है। यदि मुझसे कोई पूछे कि किस गगनमण्डल के नीचे मानव-बुद्धि ने अपनी कुछ उत्तमोत्तम प्रतिभाओं को परमोन्नत रूप से विकसित किया और जीवन के अत्यन्त निगूढ प्रश्नों पर अतिशय गम्भीर स्वरूप से मनन किया और उनमे से कुछ का सम्यक् समाधान भी कर दिखाया, जो उन लोगों के लिए भी पूर्णतया ध्यान देने योग्य है, जिन्होने प्लेटो और कैण्ट का अध्ययन किया है, तो मैं यही कहूँगा कि वह स्थान भारतवर्ष है। और यदि मैं स्वयं अपने आपसे पूछूँ कि हमलोग यहाँ योरोप मे—जहाँ हम एकमात्र

---

१. 'बिहार के नवयुवकहृदय', (ठाकुर मंगलाप्रसाद सिंह, सन् १९२८ ई०), पृ० २९६।

ग्रीक और रोमन विचारों पर ही प्रायः शिक्षित हुए है किस साहित्य के द्वारा उस सुधार को प्राप्त कर सकते है, जो नितान्त आवश्यक है, जिसमे हमलोग अपने आन्तरिक जीवन को अधिक पूर्ण, अधिक विस्तृत, अधिक व्यापक, वास्तव में अधिक मनुष्यवत् बना लें—ऐसा जीवन नही जो केवल इसी जन्म के लिए हो, प्रत्युत जो परिवर्तित हो एवं अनन्तकाल के लिए हो तो मै पुनः भारतवर्ष को ही कहूँगा ।[1]

(२)

महाभारत से पता लगता है कि प्राचीन हिन्दुओ ने यन्त्र-विद्या में भी बहुत उन्नति की थी । माया-सभा के वर्णन मे सूक्ष्म-दर्शक यन्त्र, दूरवीक्षणयन्त्र, घड़ी आदि का उल्लेख पाया जाता है। अमेरिका के एक आलोचक का कथन है कि माया-सभा की, जिसमें हजारों मनुष्य बैठ सकते थे कारीगरी ऐसी थी कि केवल दस आदमी उसे जिस ओर चाहे, घुमाकर ले जा सकते थे ... । उसमें अग्निरथ नाम का एक वायुयान भी था । श्रीयुत हरविलास शारदा 'हिन्दुओं की सर्वोत्तमता' नामक ग्रन्थ में लिखते है कि 'व्यासजी ने इन्द्रप्रस्थ में कुरुक्षेत्र का युद्ध दूर से देखने के लिए सजय को एक दूरवीक्षण दिया था, जो महाभारत के भीष्मपर्व के द्वितीय अध्याय के दसवें श्लोक से प्रकट है ।' 'वनस्पति' विद्या की भी अच्छी वृद्धि हुई थी । बारहवी शताब्दी मे प्रकाशमान हेमचन्द्र के 'निघण्टुशेष' नामक उद्भिद् कोष का होना तथा १८८७ मे, काश्मीर मे तीन भागों में एक वनस्पति-कोष का पाया जाना दोनों इस बात को पुष्ट करते है ।[2]

---

१. 'सस्कृत-साहित्य का इतिहास,' (महेशचन्द्र प्रसाद, सन् १९२२ ई०), पृ०१ ।

२. 'बालक', (वर्ष ४, अंक ११, सं० १९८६ वि०, अगहन), पृ० ६०० ।

महेशनारायण

आप सन्तालपरगना-जिलान्तर्गत राजमहल-अनुमण्डल के 'बभनगावाँ' नामक स्थान के निवासी[1] बहुभाषाविद् श्रीभगवतीचरणजी के पुत्र थे। आपका जन्म सन् १८५८ ई० की पहली अगस्त को हुआ था।[2] आप बचपन से ही बडे होनहार थे। मैट्रिक पास करने के बाद उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए आप कलकत्ता गये। वहाँ आपने बिहार के आत्मसम्मान के लिए अपनी पढ़ाई उस समय छोड दी, जब आप बी० ए० के छात्र थे। कहते हैं, आज हम जिस बिहार-राज्य में निवास कर रहे है उसके प्रथम स्वप्नद्रष्टा आप ही थे। आपने ही कॉंगरेस के जन्म के तीन वर्ष पूर्व ही यह नारा दिया कि बिहार बिहारियो का है। उक्त कार्य के लिए आपने व्याख्यानमालाओ के आयोजन किये, निबन्ध लिखे और अनेक सगठनो की स्थापना की। इसी सिलसिले मे आपने 'वंग-विच्छेद' या 'बिहार का पृथक्करण' विषय पर एक पुस्तक डॉ० सच्चिदानन्द सिन्हा के सहयोग से लिखा जिसमे इस बात की माँग की गई कि बिहारियो के सम्यक् विकास के लिए बिहार का बगाल से अलग होना आवश्यक है। आपने अपने उक्त आन्दोलन को सचालन का माध्यम 'बिहार' नामक एक अँगरेजी पत्र को बनाया, जो सन् १८८४ ई० मे निकाला गया। आगे चलकर सन् १८६४ ई० मे उसका नाम 'बिहार-टाइम्स' कर दिया गया।[3] आपने सन् १८८४ से १९०७ ई० तक उक्त पत्र का सम्पादन किया। उक्त पत्र द्वारा आपने बिहार-निर्माण के आन्दोलन का सचालन ही नही किया, वरन् उसके साथ-साथ बिहार में एक आदर्श पत्रकारिता को भी जन्म दिया।

आपकी गणना अँगरेजी और हिन्दी के सिद्धहस्त लेखको मे होती है। आपकी हिन्दी-रचनाएँ अधिकतर 'बिहार-बन्धु'[4] मे प्रकाशित हुआ करती थीं। आपको 'राष्ट्रभारती के प्रथम महाकवि' की सज्ञा दी गई। कहते हैं, भारतेन्दु बाबू ने जिस समय खडोबोली मे काव्य रचना को असमर्थता प्रदर्शित की थी, उसी समय आपने यह सिद्ध कर दिया कि उक्त भाषा भी काव्य-रचना के लिए सक्षम है। आज हिन्दी-काव्यधारा मे जितने 'वाद' दीख पड़ते हैं, प्राय. उन सभी के बीज आपकी रचनाओ मे प्राप्य है। छन्दो के प्रयोग मे तो आप बेजोड़ थे। महाप्राण निराला के जन्म के पूर्व आपने मुक्तछन्द' की दिशा मे अभूतपूर्व प्रयोग किये थे। आप सन् १९०७ ई० की पहली अगस्त को ४९ वर्ष की आयु मे परलोकगामी हुए।

---

१. 'बिहार-विभाकर' (वही, पृ० २७३) में आपका जन्म-स्थान पटना बतलाया गया है।

२. —देखिए, 'कलम-शिल्पी' (श्रीउमाशकर, सन् १९६१ ई०), पृ० ६५ और 'छात्रसखा' (वर्ष ३, अक ६, जून, सन् १९६८ ई०), पृ० ६। आपके अग्रज श्रीगोविन्दचरण (जन्म सन् १८४३ ई०) एम्० ए० पास करनेवाले पहले बिहारी थे। उनके नेतृत्व में, बिहार में सर्वप्रथम राष्ट्रभाषा का आन्दोलन आरम्भ किया गया था और यह उन्हीं की प्रेरणा का फल था कि हिन्दी का प्रवेश उस समय स्कूलों और कचहरियों में हो सका।

३. सन् १९०६ ई० में आपने उसका नाम 'बिहारी' कर दिया। आज का प्रसिद्ध अँगरेजी दैनिक 'सर्चलाइट' उक्त पत्र का ही परिवर्तित रूप है।

४. यह बिहार का पहला हिन्दी-पत्र है। यह पहले बिहारशरीफ (पटना) से निकलता था। आपके तथा आपके अग्रज श्रीगोविन्दचरणजी की प्रेरणा से उसके तत्कालीन सम्पादक पं० केशवराम भट्ट उसे पटना ले आये। इस पत्रिका के अनेक पुराने अंक सुबुद्ध पत्रकार श्रीरामजी मिश्र 'मनोहर' (पटनासिटी) के संग्रह में आज भी सुरक्षित हैं।

उदाहरण

(१)

करुणामय परमेश्वर की वह पहाड़ी भी
ज्योति प्रकाशक थी ।
अजीब अचेत, अभाष्य, अगर थी तो भी
लाख गुणगायक थी ॥
नही वक्त का डर, नही खौफ अचल
वह पहाड़ी अडी की अड़ी ही रहेगी ।
हजारो मरे है, हजारो मरेंगे,
पहाड़ी खडी की खड़ी ही रहेगी ॥[१]

(२)

एक कुंज
बहुत गुंज
पेड़ों से घिरा था
झरने की बगल में
बिजली की चमक
न पहुँची थी वहाँ तक ।
ऐसा वह घिरा था
जस दीप हो जल में
पानी की टपक
राह भला पावे कहाँ तक ।[२]

★

---

१. 'छात्रसखा' (वही), पृ० ११-१२ ।
२. वही ।

महेश्वरीप्रसाद 'यत्न'

आप मुंगेर शहर के 'श्रीमतपुर' नामक मुहल्ले के निवासी श्रीवैद्यनाथ सहायजी के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९५६ वि० (सन् १८९९ ई०) की आश्विन कृष्ण-तृतीया, (२२ सितम्बर,) शुक्रवार को हुआ था।[१] आपको आरम्भिक शिक्षा मुंगेर मे ही हुई। जब आप सातवें वर्ग मे थे, तभी आपके पिताजी का देहान्त हो गया। फलत, आपकी पारिवारिक स्थिति अत्यन्त दयनीय हो गई। इसी स्थिति मे रहकर सन् १९१८ ई० मे मुंगेर-जिला स्कूल से आपने प्रथम श्रेणी मे मैट्रिक की परीक्षा पास की। डी० जे० कॉलेज, मुंगेर से सन् १९२० ई० मे आइ० ए० की परीक्षा पास कर उच्च शिक्षा के लिए आप भागलपुर चले आये। सन् १९२२ ई० मे बी० ए० की परीक्षा पास कर आप एक स्कूल मे शिक्षक का काम करने लगे। सन् १९३६ ई० तक आपकी जीविका का यही साधन रहा। इस बीच आपने हिन्दी (सन् १९३० ई०) और संस्कृत (सन् १९३४ ई०) मे एम्० ए० की परीक्षाएँ पास की। हिन्दी मे आपको विश्वविद्यालय मे प्रथम स्थान प्राप्त हुआ था। सन् १९३७ ई० मे आपकी नियुक्ति टी० एन्० जे० कॉलेज, भागलपुर मे, हिन्दी-विभागाध्यक्ष के पद पर हो गई। उक्त कॉलेज मे बी० ए० (ऑनर्स) और एम्० ए० की पढाई प्रारम्भ कराने मे आपका भी प्रमुख हाथ रहा।

आपकी साहित्यिक सेवा का आरम्भिक वर्ष सन् १९१३ ई० बतलाया गया है। 'सुसाहित्य-संग्रह', 'बच्चो की कहानियाँ' आदि कुछेक बालोपयोगी पुस्तिकाओ के अतिरिक्त आपने अनेक उच्च कोटि के आलोचनात्मक लेख भी लिखे है। 'सूफी काव्य' पर आपका विशेष अध्ययन है। इसी विषय पर कुछ दिन पूर्व तक आप अनुसन्धान-कार्य कर रहे थे।

उदाहरण

इस त्योहार का दूसरा अर्थ भी है। हम होलिका-दहन के रूप में बीते हुए साल की बुराइयों को जला डालते है और तब नवीन मंगलपूर्ण भावों को अपनाते है। अतीत के सहारे हम नव-निर्माण करने की खुशियाँ मनाते और भेदभाव को भूलकर आगे के लिए 'रंगीन योजना' को अपनाना चाहते है।

× × ×

किसी भी सुदृढ़ भावना के लिए मजबूत नींव चाहिए ही, अन्यथा एक हल्के धक्के से उसकी दीवारों का साबित रहना असंभव

---

१. आपके द्वारा दिनांक १७ जनवरी, सन् १९५७ ई० को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार आपके परिचय-लेखन में 'हिन्दीसेवी संसार' (वही, पृ०५५७) से भी सहायता ली गई है।

नहीं तो कठिन अवश्य है। जब नीव में कोई कोर-कसर न होगी तो भहराई हुई दीवार पुनः उस पर सुदृढ़ बनाई जा सकती है। जीवन का कुशल 'इंजीनियर' नीव की उपेक्षा कभी नहीं करता।[1]

मोहनलाल मिश्र

आप गया-जिला के 'बभनीघाट' नामक स्थान के निवासी पं० रमापति मिश्र के पुत्र थे। आपका जन्म सं०१९३५ वि० (सन् १८७८ ई०) की वैशाख शुक्ल-एकादशी को हुआ था।[2] आपकी आरम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। आगे चलकर आपने काशी-संस्कृत-विद्यालय और सिजुआर-संस्कृत-पाठशाला मे रहकर संस्कृत का ज्ञानोपार्जन किया। आपकी गणना व्रजभाषा के एक रसिक, साहित्यिक और सिद्धहस्त ज्योतिषी के रूप मे होती थी। काशी के श्रीगिरधर कवि आपके साहित्यिक गुरु थे। आपकी रचनाएँ 'प्रियंवदा', 'लक्ष्मी', 'सरस्वती,' 'हिन्दी-बंगवासी,' 'वेंकटेश्वर-समाचार' और 'भारतमित्र' मे प्रकाशित हुआ करती थी। सं० १९८५ वि० (सन् १९२८ ई०) की वैशाख कृष्ण नवमी को आप परलोकगामी हुए। आपकी रचना के उदाहरण हमे नही मिल सके।

(पाण्डेय) यदुनन्दन प्रसाद

आप गया-जिलान्तर्गत 'दाउदनगर' नामक स्थान के 'पटने का फाटक' नामक मुहल्ले के निवासी श्रीमनहरणलालजी के पुत्र हैं। आपका जन्म सन् १८९६ ई० की पहली अक्टूबर को हुआ था।[3] आपकी आरम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। दाउदनगर से मिड्ल इंगलिश-परीक्षा पास करने के बाद आपका नाम सन् १९०९ ई० मे आरा के जिला-स्कूल मे लिखवाया गया। इस स्कूल से सन् १९१३ ई० मे मैट्रिक-परीक्षा पासकर आपने छात्रवृत्ति पाई। इसके पूर्व सार्वजनिक परीक्षाओं मे भी आपको छात्रवृत्तियाँ मिली थी। आपने पटना-कॉलेज से सन् १९१५ ई० में आइ० ए० और सन् १९१७ ई० में बी० ए० की परीक्षा पास की। इसके बाद आप आरा के जे० एकेडेमी और आरा जिला-स्कूल मे क्रमशः शिक्षक रहे। सन् १९२६ ई० मे आपने पटना ट्रेनिंग-कॉलेज से बी० एड्० की परीक्षा पास की और सन् १९२७ ई० मे कलकत्ता-विश्वविद्यालय से आपने हिन्दी मे एम्० ए० किया। एम्० ए० को परीक्षा में आपने प्रथम श्रेणी मे प्रथम स्थान प्राप्त किया था, जिसके परिणामस्वरूप आपको विश्वविद्यालय की ओर से एक स्वर्ण-पदक के अतिरिक्त २०० रुपये का पुरस्कार मिला था। आरा मे रहते समय आप आरा-नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी नागरी-प्रचारिणी सभा और रॉयल एशियाटिक सोसाइटी

---

१. लेखक से प्राप्त।
२. 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० १३९।
३. साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।

के सदस्य निर्वाचित हुए। आरा-नागरी-प्रचारिणी सभा में रहते हुए आपने सभा के वर्त्तमान भवन का निर्माण करवाया था। सन् १९२९ ई० मे आप पटना ट्रेनिंग-स्कूल मे[1] चले आये। बाद में आप चम्पारन-जिलान्तर्गत 'वृन्दावन' नामक स्थान के एक बेसिक ट्रेनिंग-स्कूल की स्थापना और संगठन के लिए भी बुलाये गये। अन्त में, आँखो को ज्योति लुप्त हो जाने के कारण सन् १९५१ ई० मे पटना बेसिक ट्रेनिंग-स्कूल से आपने अवकाश ग्रहण कर लिया।

आपकी साहित्यिक सेवा का आरम्भिक वर्ष सन् १९१९ ई० बतलाया गया है। आप बिहार हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की कार्यकारिणी समिति के अनेक वर्षों तक सदस्य रहे और सम्मेलन को सुन्दर भवन प्राप्त कराने में आपका भी सहयोग रहा है। आपकी साहित्यिक सेवाओ के लिए सरकार ने आपको 'कोरोनेशन मेडल' प्रदान किया था। आपके शिक्षा सम्बन्धी लेख स्थानीय पत्रो मे प्रकाशित हुआ करते थे। आपकी लिखी पुस्तकों मे 'पॉपुलर ट्रान्सलेशन'[2] बहुत ही लोकप्रिय हुआ। इसके अतिरिक्त आपकी निम्नांकित पुस्तक प्रकाशित हुई थी—(१) रचना-तत्त्व (तीन भागो मे),[3] (२) मिडिल रचना-प्रकाश[4] और (३) अपर हिन्दी-व्याकरण[5]।

उदाहरण

छात्रों से हम निम्नलिखित बातों की आशा करते है—उनको मातृभाषा का इतना ज्ञान जरूर होना चाहिए जिसमें (क) वे घटनाओं के बारे में स्वाभाविक रूप से, खुलकर और विश्वास के साथ बातचीत कर सकें। (ख) वे किसी विषय पर स्पष्ट रूप से और ठीक-ठीक बोल सकें। (ग) वे समाचार पत्र-पत्रिकाओं को आसानी से पढ तथा समझ सके। (घ) गद्य-पद्य दोनों को जोर से, साफ-साफ और मतलब साफ करते हुए आनन्द से पढ़ सकें। (ङ) वे विषय-सूची, शब्दकोषों और हवाले की किताबों का व्यवहार जानें और पुस्तकालयों का समुचित उपयोग कर सकें। (च) उनकी लिखावट शुद्ध,

---

१. बिहार-ट्रेनिंग-स्कूलों के लिए प्रकाशित 'नवीन-शिक्षक' नामक त्रैमासिक पत्र का सम्पादन भी आपने कुछ वर्षों तक किया था।

२ सन् १९२३ ई० में, सूरजप्रसाद, तरी-मुहल्ला, आरा द्वारा प्रकाशित।

३, सन् १९३८ ई० में खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुर, पटना से प्रकाशित।

४. सन् १९३९ ई० में खड्गविलास प्रेस से प्रकाशित।

५, सन् १९२६ ई० में खड्गविलास प्रेस, से प्रकाशित। इनके अतिरिक्त 'साहित्य-रत्न-मंजूषा' औ प्रवेशिका नवीन पद्य-संग्रह' का सम्पादन-कार्य भी सम्पन्न किया था तथा 'बिगिनर्स पोपुलर ट्रान्सलेशन, और 'न्यू मेथड हिन्दी प्राइमर' की रचना भी आपने की थी।

सुन्दर और सार्थक हो । (छ) वे घरेलू और कारबारी चिट्ठी-पत्री और कागजों को लिख-पढ़ सकें ।[1]

✱

यमुनाप्रसाद पाठक 'श्याम सलिल'

आप सारन-जिला के 'सुरबल' (पो० जीरादेई) नामक ग्राम के निवासी पं० श्रीरामजी पाठक के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९५४ वि० (सन् १८९७ ई०) की माघ शुक्ल-पंचमी को हुआ था।[2] आपने काशी-हिन्दू-विश्वविद्यालय में बी० ए० तक की शिक्षा प्राप्त की थी। आपकी साहित्यिक सेवा का आरम्भिक वर्ष सन् १९२० ई० बतलाया गया है। आपने मुँगेर में बालिकाओं और महिलाओं को हिन्दी-साहित्य की उच्च शिक्षा देने का महान् कार्य किया है। आप साहित्य-शास्त्र के मर्मज्ञ-विशेषज्ञ बतलाये जाते हैं। एकान्त साहित्य साधना में तल्लीन रहकर आप सतत साहित्य-सेवा करते आ रहे हैं। आपकी गद्य-पद्य-रचनाएँ हिन्दी की 'प्रभाकर' (मुँगेर), 'कल्याण' (गोरखपुर), हिन्दूपंच' (कलकत्ता) आदि प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। एक पत्रकार के रूप में आप उक्त पत्रिकाओं से सम्बद्ध रहे। आपकी रचना के उदाहरण हमें नहीं प्राप्त हो सके।

यशोदानन्दन 'अखौरी'

आप शाहाबाद-जिला के 'हरपुर-रामनाथ' (नवादा-सहार) नामक ग्राम के निवासी श्रीरामानन्दजी अखौरी[3] के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९२६ वि० (सन् १८६९ ई०) को कार्त्तिक शुक्ल तृतीया (शनिवार) को हुआ था।[4] आपकी प्राथमिक शिक्षा घर पर ही हुई। तदनन्तर आपका अध्ययन-क्षेत्र बड़ा ही विस्तृत हुआ। आपने हिन्दी, संस्कृत, बँगला फारसी और अँगरेजी भाषाओं का विद्वत्तापूर्ण ज्ञान प्राप्त किया। इन भाषाओं के अतिरिक्त आपने प्राकृत, पाली, मराठी, गुजराती, उड़िया, नेपाली, तमिल,

---

१ साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री से।

२. आपके द्वारा सन् १९५६ ई० की १५ जुलाई को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

३ आपके पिता और पितामह भी बड़े विद्वान् एवं प्रभावशाली व्यक्ति थे।

४. —देखिए, 'बालक' (मासिक, वर्ष ६, अंक ११, नवम्बर, सन् १९३५ ई०), पृ० ६२६ में श्रीसरयू पण्डा गौड़ (जगदीशपुर, शाहाबाद) का लेख 'श्रीयशोदानन्दन अखौरी'। प्रस्तुत परिचय मुख्यतः इसी लेख पर आधृत है। इसके अतिरिक्त 'बिहार की साहित्यिक प्रगति' (वही, पृ० २७८) तथा 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ५३६ तथा पृ० ६१३) आदि ग्रन्थों से भी सहायता ली गई है।

तेलुगु आदि कई भाषाओं का भी अध्ययन किया था। इतने अध्ययन के बाद आप हिन्दी के अनन्य भक्त हुए।

हिन्दी की उन्नति और विस्तार के निमित्त आपने आजीवन महत्त्वपूर्ण कार्य किये।[1] भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्रजी के समय से ही बिहार की हिन्दी-प्रगति के लिए आप सदा प्रयत्नशील रहे। करीब १२-१३ वर्ष की अवस्था से ही आप हिन्दी मे गद्य-पद्य की रचना करने लगे थे। आपका छात्र-जीवन मुख्यत: गया-नगर मे व्यतीत हुआ। वहाँ जिस वर्ष आप इण्ट्रेन्स के विद्यार्थी थे, उस वर्ष 'सुनीति-सचारिणी सभा' के मन्त्री बनाये गये थे। उन दिनो गया मे 'सनातन-धर्म-संचारिणी सभा' के भी मन्त्री आप ही थे। उसी छात्रावस्था मे आपने अपने गाँव (नवादा) मे भी एक 'हितैषिणी सभा' स्थापित की थी। इस प्रकार, बाल्यावस्था से ही आपके सार्वजनिक जीवन का श्रीगणेश हो गया था। छात्र-जीवन समाप्त होने पर आपने कई वर्षों तक सरकारी और गैर-सरकारी कार्यालयो मे कार्य-सम्पादन किया था, किन्तु अपनी साहित्य-सेवा-भावना के कारण आपका मन उन कार्यों में नही लग सका और अन्त में अपनी अन्त:प्रेरणा से आपने नौकरी छोड़ दी। जिस समय आप गया मे नौकरी कर रहे थे, उस समय वहाँ शारदा-मठ के जगद्गुरु श्रीशंकराचार्यजी का शुभागमन हुआ था। उनके आने पर वहाँ के नास्तिको के द्वारा आचार्यजी से कुछ प्रश्न अखबारो और नोटिसो के माध्यम से पूछे गये थे। यद्यपि स्वामीजी ने इसपर ध्यान नही दिया था, तथापि उनसे अनुमति लेकर तथा 'सनातन-धर्म-सभा' के प्रसिद्ध कार्यकर्त्ता श्रीरामफललालजी[2] से मिलकर आपने जो उत्तर छपवाकर बँटवाया, उससे उन नास्तिकों की बोलती तो बन्द हो ही गई थी, साथ ही उसका सुन्दर प्रभाव 'हिन्दी-बंगवासी' (कलकत्ता) के सम्पादक तथा 'सनातन-धर्म-पताका' (मुरादाबाद) के विद्वान् सम्पादक ऋषिकुमार श्रीरामस्वरूप शर्मा पर पड़ा। उन्होंने आपके इस प्रश्नोत्तर से प्रसन्न होकर अपनी पत्रिका के मुखपृष्ठ पर लगभग पच्चीस वर्षों तक उन पदों को प्रकाशित किया था। इतना ही नही, इसके अतिरिक्त उन्होंने आपके पास बहुत-सी धार्मिक पुस्तकें भेंटस्वरूप भेजी थीं। हिन्दी 'बंगवासी' के सम्पादक श्रीप्रभुदयाल पाण्डेयजी ने कलकत्ता मे बुलाकर आपको 'बडाबाजार लाइब्रेरी' के पुस्तकालयाध्यक्ष-पद पर प्रतिष्ठित करवाया। आपने उनके आदेशानुसार उस कार्य के सम्पादन मे बडी दक्षता से काम किया था। इस सुयोग से आपने अपने अध्ययन के द्वारा पूरा लाभ उठाया। पुस्तकालय-सेवा मे रहते हुए आपने तत्कालीन 'वंगीय-हिन्दी-साहित्य' के प्रकाण्ड विद्वान् पं० केशवप्रसाद मिश्र, पं० दुर्गाप्रसाद मिश्र आदि सज्जनों की संगति पाकर अपनी विद्वत्ता मे अभिवृद्धि की थी। प० दुर्गाप्रसाद

---

१. आपके सम्बन्ध में आपके जमाने के सुप्रसिद्ध विद्वान् राय साहब श्रीसिद्धनाथ मिश्र ने कहा है—"बिहार में कुछ ऐसे व्यक्ति भी हुए है, और हैं भी, जिनका हिन्दी को उन्नत और परिमार्जित तथा परिष्कृत करने में विशेष हाथ रहा है, और आज भी है। श्रीयशोदानन्दन अखौरी उन्हीं व्यक्तियों में से।"—'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही), पृ० ६१३।

२. "ये गया के निवासी एक अच्छे ज्योतिषी एवं दार्शनिक थे। उन्हीं के सत्संग में रहकर अखौरीजी ने दर्शनशास्त्र का ज्ञान प्राप्त किया था। वे संस्कृत, हिन्दी और अँगरेजी के अच्छे विद्वान् थे।"—सं०

मिश्र का आप पर विशेष स्नेह रहता था। आप उन्हे ही अपना साहित्यिक गुरु मानते थे।[1] उनके संसर्ग से आपकी साहित्य और धर्म के प्रति निष्ठा बढती गई। उन्ही की कृपा से आप कलकत्ता के कितने ही अँगरेजों के हिन्दी-शिक्षक हो गये थे। अँगरेजों को हिन्दी-शिक्षा देने मे आपने अपनी उच्चतम योग्यता का परिचय दिया था। कालान्तर मे आपने कलकत्ता के मारवाडो-बन्धुओं के अनुरोध से 'हिन्दी कारनेशन गजट' नामक एक अर्द्ध-साप्ताहिक पत्र निकाला था। आप इसके मुद्रण एवं प्रकाशन मे इतने लीन रहने लगे कि कुछ ही महीनो के बाद आप अस्वस्थ हो गये। स्वस्थ होने पर आपने पुन 'हिन्दी ट्रान्सलेटिंग-कम्पनी' नामक एक संस्था चलाई। उसके साझीदार थे आपके अन्तरंग मित्र श्रीलक्ष्मणदास भण्डारी। इस संस्था के द्वारा आपने अन्य भाषाओं के अच्छे अच्छे ग्रन्थों का हिन्दी मे अनुवाद-कार्य किया था। इसके बाद आपने पं० चतुर्भुज औदीच्यजी के साझे में एक पुस्तक-माला' का श्रीगणेश किया।[2] इसी पुस्तक-माला के अन्तर्गत 'रेनाल्ड-कृत' 'जोजेफ विल्मट' का हिन्दी-अनुवाद क्रमशः प्रकाशित हुआ था। 'हिन्दी-कल्पद्रुम' नामक पुस्तक का भी प्रकाशन मासिक पत्रिका के रूप में यहीं से हुआ था। सन् १९०५ ई० के अगस्त मे हिन्दी-हितैषियो के प्रयत्न से 'एकलिपि-विस्तार-परिषद्' नामक एक सस्था स्थापित हुई, उसी के तत्वावधान मे 'देवनागर'[3] नामक पत्र निकला था जिसके आपही प्रथम सम्पादक हुए। स० १९६५ वि० (सन् १९०८ ई०) मे आपने 'प्रभाकर' नामक एक धार्मिक मासिक पत्र निकाला था। उसके भी प्रधान सम्पादक आप ही थे। इस पत्र के माध्यम से आपने बड़े-बडे विचारको एवं विद्वानो का मण्डन तथा खण्डन किया था।[4] बाबू बालमुकुन्द गुप्तजी के समय आपने सुप्रसिद्ध पत्र 'भारत-मित्र' के प्रबन्धक का काम भी किया था। अपने वार्द्धक्य मे आप कलकत्ता से पटना आये और खड्गविलास प्रेस का काम देखने लगे। बाद, आरा-नगर से 'देशसेवक' नामक एक साप्ताहिक पत्र निकालने लगे। सन् १९३६ ई० मे बिहार-प्रादेशिक-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के त्रयोदश अधिवेशन (पूर्णिया) की आपने अध्यक्षता की थी। आपके लेख 'सरस्वती', 'आज', शिक्षा, 'यंग-बिहार',

---

१. "आपके विद्यागुरु अहिरौली (शाहाबाद) ग्राम निवासी प० श्रीधराचारी थे, जो सन् १९०४ ई० के नवम्बर में गोलोकवासी हुए। वे सस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् और धुरन्धर लेखक थे, हिन्दी के भी मर्मज्ञ पण्डित थे। उनकी लिखी सस्कृत और हिन्दी की पुस्तकें आजतक अप्रकाशित हैं। आप जब दस वर्ष के बालक थे, तभी से आपको उनका सत्संग प्राप्त हुआ। उनकी जीवनी बाबू बालमुकुन्द गुप्त के समय में 'भारतमित्र' में छपी थी। उन्हीं के उपदेश से आप धार्मिक और दार्शनिक साहित्य के अनुरागी बने।" —देखिए, 'बालक' (वही), पृ० ६३४-३५।

२. "इस कार्य के लिए श्रीरेवतीनन्दनजी, गया से आपको प्रेरणा मिली थी। श्रीरेवतीनन्दनजी गया के जिला-स्कूल में सहायक शिक्षक थे। अखौरीजी ने 'सुनीति-सचारिणी सभा' की एक शाखा भी गया-नगर में, 'मादक-द्रव्य-निवारिणी सभा' के नाम से स्थापित की थी। इसके सभापति रेवतीजी ही थे। इस सभा की ओर से एक पुस्तिका छपी थी, उसमें सारे पद्य अखौरीजी के ही थे।"
—देखिए, 'बालक' (वही), पृ० ६३२-३३।

३. विश्वविख्यात विद्वान् श्रीकाशीप्रसाद जायसवालजी ने उस पत्र की बहुत प्रशंसा की थी। भारत के बाहर के देशों (फ्रांस, जर्मनी, इगलैण्ड आदि) में भी इस पत्र की काफी प्रसिद्धि हुई थी। भारत में 'इण्डियन रिव्यू' और 'हिन्दुस्तान-रिव्यू' नामक अँगरेजी-पत्रों में बराबर इसकी समालोचना निकलती रही।

४. 'बिहार की साहित्यिक प्रगति' (वही), पृ० २७८।

'साहित्य,' 'वैदिक सर्वस्व' आदि पत्र-पत्रिकाओ मे यथावसर प्रकाशित होते रहे हैं । आप काव्य रचना मे भी प्रवीण थे । आपकी कविताएँ अनेक पत्र-पत्रिकाओं मे प्रकाशित हैं ।[१] आपके द्वारा लिखित रचनाओ मे (१) 'जोजेफ विल्मट' का हिन्दी-अनुवाद (पाँच भागो मे), (२) 'भगवान् रामकृष्ण देव के उपदेश-शतक', (३) विवेक-वचनावली (स्वामी विवेकानन्द के उपदेश', (४) शिक्षा-विज्ञान की भूमिका, (५) होली की भेंट' (कविता) आदि प्रकाशित हो चुकी हैं। इनके अतिरिक्त आपकी अन्य अनेक रचनाएँ अद्यावधि अप्रकाशित ही हैं।[२] सम्भवत , सं० १९९४ वि० (सन् १९३७ ई०) में आपका परलोकवास हुआ ।

उदाहरण

(१)

अखिल हेय - प्रत्यनीक-कल्याणगुणैकतान-करुणानिधान-श्रीभगवान के अहैतुकी कृपाकटाक्ष का ही यह फल है कि 'देवनागर' अपनी बाल्यावस्था के दो वर्ष निर्विघ्न बिताकर अब तीसरे वर्ष में प्रवेश करता है। यह उसकी अधिष्ठात्री परिषद् के लिए, परिषद् के कार्यकर्त्ताओं के लिए एवं ग्राहक, पाठक और 'देवनागर' के हितैषी सज्जनों के लिए अत्यन्त आनन्द की बात है। एक तो बाल्यावस्था साधारणतः यत्न-सापेक्ष होती है। बाल्यावस्था में नाना प्रकार की विघ्नवाधाएं घेरे रहती है । इन विघ्नवाधाओं के निवारण के निमित्त बड़ी-बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। दूसरे किसी विलक्षण और अपूर्व बालक की रक्षा में तो और भी कठिनाइयों की गणना बढ़ जाती है । ठीक यही बात 'देवनागर' के विषय में भी है ।[३]

---

१. आपकी काव्य-रचनाएँ 'वसुदा', 'यशोदा', 'अकिंचन', 'प्रपन्न', 'किंकर' आदि उपनामों से प्रकाशित बतलाई जाती हैं।

२. आचार्य शिवपूजन सहाय जी के अनुसार आपने फारसी के प्रसिद्ध 'मामकीमा' और 'करीमा' का भी हिन्दी में पद्यानुवाद किया था, जो अप्रकाशित ही रह गया।

३. 'देवनागर' (मासिक, वत्सर ३, अंक १, कल्यब्द ५०११), पृ० १।

(२)

इस विस्तीर्ण संसाररुपी रंगमंच पर जहाँ धन, यश या पेट के लिए अहोरात्र अनवरत प्रयत्न चल रहे है, किसी पुरुष के लिए उच्च प्रतिष्ठा का समादर पैदा करना बहुत कठिन है और उस उपार्जित आदर को मृत्युकाल तक निष्कलङ्क बनाये रखाना उससे भी अधिक कठिन है। कुछ पुरुष जो कीर्तिलाभ करते हैं, स्तुति-पाठकों की मिथ्या प्रशंसाओं में फँसकर अहङ्कार की वलि पड़ते है और यह अहंकार उन्हें अधःपात को ले जाता है। और, कितने ही आदमी ऐसे है, जिनकी कीर्ति लोगों में ईर्ष्या उत्पन्न करती है। इस ईर्ष्या-अग्नि से जलनेवाले शत्रु उनका सर्वनाश कर डालते है और इस प्रकार अपने गले में विजयमाला पहिन लेते है।[1]

(३)

अब देखना चाहिए, सम्मेलन का उद्दिष्ट विषय साहित्य क्या है ? और आज उससे क्या अभिप्राय समझा जाता है। संस्कृत में साहित्य शब्द बड़े ही संकुचित अर्थ में होता आया है। सच पूछिये तो, संस्कृत में यह एक प्रकार का पारिभाषिक शब्द है, जिसका अर्थ रस, अलंकारादि कुछ इने-गिने विषयों के भीतर ही सीमाबद्ध है। अपनी आरम्भिक दशा में हिन्दी-प्रेमियों ने इसी भाव और सिद्धान्त के अनुसार रस और दशा में अलंकार-ग्रन्थों के प्रणयन से हिन्दी-साहित्य की इतनी श्रीवृद्धि की है, जिसकी बदौलत आज प्रान्तीय भाषाएँ अपनी इस उन्नतावस्था में भी उक्त विषयों के सम्बन्ध मे इससे होड़ करने की सामर्थ्य नहीं रखते। यह हमारे लिए अत्यन्त गौरव और

---

१. 'देवनागर' (वरसर ३, अंक ४, कल्यब्द ५०११), पृ० ६९।

गर्व की बात है। अपने पड़ोस की बंगभाषा को आप आज ही इन विषयों के गम्भीर विचारों से विरहित पावेंगे।[1]

यज्ञनारायण चौबे 'रामाणीजी'

आप शाहाबाद-जिला के 'वैना' नामक ग्राम के निवासी प० इन्द्रदेव चौबे के पुत्र थे। आपका जन्म स० १६११ वि० (सन् १८५४ ई०) की आश्विन कृष्ण-द्वितीया को हुआ था।[2] अर्थाभाव के कारण आप उच्च शिक्षा नहीं प्राप्त कर सके। ज्योतिषशास्त्र पर आपका विशेष अध्ययन था। हिन्दी के अतिरिक्त संस्कृत और बँगला-भाषाओं पर भी आपका अच्छा अधिकार था। आपकी साहित्य-सेवा का आरम्भिक वर्ष सं० १६४० वि० (सन् १८८३ ई०) बतलाया जाता है। आपकी कोई पुस्तकाकार रचना नहीं प्राप्त होती, स्फुट रचनाएँ ही मिलती हैं। इतिहास-भूगोल-सम्बन्धी पद्यात्मक रचनाओं के अतिरिक्त आपने पूरी रामायण की कथा को भी पद्य में प्रस्तुत किया था। आप स० १६६१ वि० की आषाढ़ शुक्ल नवमी (२१ जुलाई, सन् १६३४ ई०) को परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

आली रे विनु कृष्ण लला मैं ना जीवो रे।
अषाढ़ मास मनमोहक लागे, उमगि चलै जैसे पवन झकोर,
चलु-चलु सखिया राधे देखन हेतु, उनकी हिया जैसे फाटत जलेस।
सावन में सखि साठी-सेरहा हमरो कंत सवाँ अब बीची
बीची काठी के कुछ नही होय हम अस सुन्दरी छाड़ि के हो जा कुबरी
सँग सीय।
भादो मास घन गरजन घोर, उमड़े मेघ धरनि भरे नीर।
मधुर स्वर जोर कि सुनि-सुनि छाती कडकेला मोर॥
क्वार मास सुधि बिसरत नाही; यज्ञनारायण मन पछताही
कि कोयल गई, पिया आये मोर।

---

१. 'बिहार की साहित्यिक प्रगति' (वही), पृ० २८१।
२. साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।

मैं भई आनन्द-मगन विभोर,
कि मैं ना जीवो रे ॥[1]

(२)

जागऽ हो मनमोहन प्यारे, तुम विना जीवन नही नहीं।
दिनकर उदित मुदित पद-पंकज, कोक शोक तन गई गई।
भरे सरोवर विकल पपीहरा, रहै सेवाती कही कही।
ज्यों जगदेत चेत रजनीपति, त्यों चकई दुख सही सही।
गोकुल के बासी होइ रहवो, परमानन्द पद गही गही।
देववधू धरि वेष गोवालिन, द्वार पर टेरे दही दही।
यद्यपि कोटि उगै तारागन, शशि विनु रजनी नही नही।
जाको ढूँढत फिरौ निसुवासर, सो प्रभु है सँग-ही सँग-ही।
यज्ञनारायण आस चरन के चरन पदारथ गही गही ॥[2]

☆

(ठाकुर) यज्ञेश्वर सिंह 'पामर'

आप मुजफ्फरपुर-जिलान्तर्गत 'जारग' नामक स्थान के निवासी बाबू विश्वेश्वर-प्रसाद सिंहजी के पुत्र थे। आपका जन्म सन् १९८५ ई० की पहली नवम्बर को हुआ था।[3] आपकी शिक्षा संस्कृत, हिन्दी एवं उर्दू के माध्यम से हुई थी और इन भाषाओं का आपका ज्ञान उच्चस्तरीय था। इन्हीं भाषाओं के माध्यम से आपने उच्च शिक्षा भी प्राप्त की। उच्च शिक्षा के क्रम मे आपने कोई विद्यालयीय उपाधि नही प्राप्त की थी। आपके जीवन की सुषमा थी सादगी, प्रियवादिता और स्वधर्मावलम्बिता। आपके जीवन का अधिकतर भाग दीन-दुःखियो की सेवा तथा साहित्यिक-सन्तों की अर्चना मे व्यतीत हुआ। सन् १९३४ ई० के भयानक भूकम्प के सहायता-कार्यों मे आपने सक्रिय भाग लिया था।

आपकी साहित्य-सेवा का आरम्भ सन् १९२१ ई० से माना जाता है। आगे चलकर आप काशी-नागरी-प्रचारणी सभा के स्थायी सदस्य बने। आपकी साहित्य-सेवाओं के परिप्रेक्ष्य में कवि-समाज ने आपको 'साहित्यरसिक' की उपाधि प्रदान की थी। आपके द्वारा लिखित ये पुस्तकें प्रकाश मे आई थी —(१) पामर पुकार,[*]

---

१. 'साहित्यिक-इतिहास-विभाग' में सुरक्षित सामग्री से।

२ उक्त सामग्री से ही।

३ आपके पुत्र कुमार श्रीराजेश्वरप्रसाद सिंह (जारग डेउढी, पो० घरभरा, मुजफ्फरपुर) द्वारा प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग मे सुरक्षित विवरण के अनुसार। आपके प्रस्तुत परिचय-लेखन में 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६६०), से भी सहायता ली गई है।

*. इसमें भगवद्-नाम-महिमा हरिकीर्त्तन, कजली, गजल और खेमटो में संगृहीत है।

(२) पामर-उद्गार[1], (३) यज्ञेश्वर विनोद[2] और (४) क्षत्रिय-तिमिर कुठार[3]। इनके अतिरिक्त आपकी ये कृतियाँ अभी तक अप्रकाशित ही पड़ी हैं — (१) श्रीसीताराम (नाटक), (२) रामरहस्य (नाटक), (३) पामर की आत्मकहानी, (४) पामर-दोहावली और (५) पामर-सतसई। आपकी इहलीला सन् १९४१ ई० के २ अक्टूबर को समाप्त हो गई।

उदाहरण

(१)

जो चाहसि कल्याण निज, भजन करहु सियराम,
तन से, मन से, नेह से, बार बार निष्काम।
समय अकारथ जात है, का भूले धन-धाम,
श्याम श्याम श्यामा जपहु, श्याम श्याम घनश्याम ॥[4]

(२)

पार करो मोरी नैया 'राघव', पार करो मोरी नैया।
इहि नैया में छेद अनेकन, मिलत न कोउ गहैया।
जाको कहत सुने ना मेरी, सबही दाम चहैया ॥ राघव ॥
इह भव नदिया अगम थाह नहि, कोउ नहि पार करैया।
साहस छुटत न मिलत सहायक, तुमही एक खेवैया ॥ राघव ॥
सब ओरन ते हार मानि मै, गही शरन रघुरैया।
नहि खेवन नहि तैरन जानूँ, तुमही बाँह गहैया ॥ राघव ॥
झूठे के सब बाबा भैया, झूठे मैया दैया।
अबहुँ कृपालु दयानिधि दरबहु, पामर पाप हरैया ॥ राघव ॥[5]

---

१ इसमें भगवत्-नाम-महिमा वर्णित है।

२ इसमें श्रीकृष्ण भगवान् और मर्यादापुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्रजी की प्रेम-भक्ति का वर्णन अनेक रागिनी, कवित्त, सवैया तथा दोहों में पदबद्ध है।

३. इसमें क्षत्रिय-जाति की अनेक कुरीतियों का दिग्दर्शन गजलों में कराया गया है।

४. 'पामर-उद्गार' (ठाकुर यज्ञेश्वरसिंह, प्रकाशन-काल नहीं), पृ० १।

५. वही, पृ० ७।

(३)

श्यामरूप हिय धारो, 'हरिजन' श्यामरूप हिय धारो।
नील-कमल-सम चरण मनोहर, नखमणि ज्योति अपारो।
युगल जंघ कदली सम सुन्दर, पीत बसन सुखकारो॥ हरिजन॥
कटि केहरि भुज लम्ब अनूपम, उपमा कहुँ न निहारो।
उर विशाल मणिमाल अलंकृत, सकल सुभग शृंगारो॥
हरिजन॥
कंबु समान ग्रीव रेखा शुभ, आनन छवि आगारो।
सकल छविन कहँ मूल कहिय जेहि, रवि शशि बनत हजारो॥
हरिजन॥
त्रिगुन रंग नासा मणि लखिये, श्वेत श्याम रतनारो।
भौंह कमान बरुनि सर बेधत, रसिकन हिय रस सारो॥
हरिजन॥
तिलक भाल त्रय ताप नसावन, कच कारो घुघुरारो।
क्रीट मुकुट दुति बरनि सकै को, 'पामर' मनहिं विचारो॥
हरिजन॥[1]

(४)

हे दयालु हे कृपालु सुधि मेरी क्यों बिसारी।
मोहि समान अघी नाहिं, तो सम अघहारी॥
बचपन ते पाप करत, पर धन पर नारि हरत,
कहत सुनत उचित नाहिं, अनुचित हिय धारी।
जेते जग दुषित कर्म, कीन्ह, दीन्ह त्याग धर्म,

---

१. 'पामर-पुकार' (ठाकुर यशेश्वरसिंह 'पामर', प्रकाशन-काल नहीं), पृ० ३-४।

अधरम की शरन नाहिं, भूले भ्रम भारी।
है भरोस तेरो एक, मम सम तारे अनेक,
जेते नभ तारे तेते, अति मलीन तारी।
'पामर' अति हीन नीच, फँस्यो नाथ जगत कीच,
तेरो यश भुवन माहिं, दीनन हितकारी॥[1]

युगेश्वर मिश्र 'युगेश'

आप मुजफ्फरपुर-जिला के 'रेवुरा' (पो० विष्णुदत्तपुर) के निवासी पं० भगलू मिश्रजी[2] के पुत्र थे। आपका जन्म सन् १८९८ ई० के ३ नवम्बर को हुआ था।[3] आपकी प्राथमिक शिक्षा हाजीपुर (मुजफ्फरपुर) के संस्कृत-विद्यालय में हुई थी। तदनन्तर, आप धर्म-समाज-संस्कृत-महाविद्यालय, मुजफ्फरपुर मे उच्च शिक्षा की प्राप्ति के लिए प्रविष्ट हुए। वहाँ रहकर आपने कलकत्ता से 'काव्यतीर्थ' एवं बिहारोत्कल-संस्कृत-समिति से क्रमशः सांख्य-मध्यमा और आयुर्वेदाचार्य की परीक्षाएँ पास की। आयुर्वेदाचार्य होने पर आपने जीविका के लिए वैद्य-वृत्ति से अपने परिवार का भरण-पोषण करना शुरू किया। इस वृत्ति के साथ-साथ आपने संगीत का भी अभ्यास किया। संगीत और वैद्यक के माध्यम से आपने अच्छी लोकख्याति प्राप्त की। पौराणिक आख्यानों और साहित्यिक गोष्ठियों के प्रति आपकी गहरी दिलचस्पी थी। साहित्य के अच्छे अध्येता होने के कारण आप यथावसर समस्यापूर्तियाँ भी लिखा करते थे। आप 'भारतेन्दु-साहित्य-समाज' के एक प्रमुख सदस्य थे। आपने अपनी कविता मे प्राचीन और नवीन दोनो शैलियो का निर्वाह किया है। आपकी लिखी एक पुस्तक 'विभूत की चुटकी' नाम से प्रकाश मे आ चुकी है। इसके अतिरिक्त आपके द्वारा लिखित (१) वीणा' (कविता-संग्रह), (२) 'सत्यहरिश्चन्द्र-नाटक' (संस्कृत से हिन्दी-अनुवाद), (३) मदन-दहन' (नाटक) (४) 'भारत-दुर्भाग्य' (नाटक) और (५) 'प्रमुग्ध बाला' नामक पुस्तकें अबतक अप्रकाशित हैं। आपकी इहलीला सं० २००१ वि० की आश्विन कृष्ण-एकादशी को समाप्त हो गई।

---

१. 'पामर-पुकार' (वही), पृ० ३।

२. इनके जीवन के अनेक वर्ष जिहुली (मुजफ्फरपुर) नामक ग्राम में भी व्यतीत हुआ था। उस समय के रईसों में इनकी गणना थी। ये एक अच्छे वैद्य थे और संगीत में इनकी विशेष रुचि थी।

—श्रीभरखन सिंह (जिहुली, मुजफ्फरपुर) से प्राप्त सूचना के अनुसार।

३. साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।—देखिए, 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६६४) भी।

उदाहरण

(१)

विश्वमय प्रकृति प्रकृतिमय विश्व लसै,
ब्रह्ममय ज्ञान ज्ञान ब्रह्ममय सत है।
शब्दमय गगन गगनमय ज्यो शब्द बसैं,
तेजमय पावक कृशानु तेजवत है ॥
रसमय द्रव्य द्रव्यमय ज्यों रस-रसै,
भू-मय भुवन भुवनमय भू भसत है,
जगतमय युगेश त्यों युगेश जगतमय,
जगत युगेशमय युगेशमय जगत है ॥[1]

(२)

उतरा था गगनांगन मे, रजनीकर वैभवशाली।
स्वागत में लुटा रही थी, निशि सोनजुही की डाली ॥
सानन्द निशाकर अपनो, चन्द्रिका बिखेर रहा था।
तिमिरावृत जगतीतल में, उज्ज्वलता गेर रहा था ॥
नीरव थे सभी चराचर, सोई थी कानन-कलियाँ।
उर में ले कसक पड़ी थी, उपवन में अलि-आवलियाँ ॥
मैं ढूँढ़ रहा था प्रिय का, नव नेह रत्न अपना धन।
जब आँख खुली तो देखा, जग का अद्भुत परिवर्तन ॥[2]

---

१. साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री से।
२. वही।

योगेश्वराचार्य

आप चम्पारन-जिला के 'रुपौलिया' (पताही) नामक ग्राम के निवासी श्रीनकछेद पाण्डेय के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९४२ वि० (सन् १८८५ ई०) की श्रावण शुक्ला-दशमी (रविवार) को हुआ था।[1] आप अपने माता-पिता की तीसरी सन्तान थे।[2] बचपन से ही आपके हृदय मे धार्मिक भावना का उदय हुआ। आप शिवलिंग की स्थापना कर सदा उनका भक्तिपूर्वक पूजन किया करते थे। तेरह वर्ष की अवस्था में ही आपकी शादी कर दी गई। अभाग्यवश ६ वर्ष पूरा होते-होते आपकी पत्नी गतायु हो गई। फिर, आपकी दूसरी शादी हुई। उसके बाद आपका गार्हस्थ्य-जीवन शुरू हुआ। किन्तु, आपका मन सासारिक मोह-माया में रमता नही था। अत, आपने एक हठयोगी (श्रीदेवधारी तिवारी) की शरण ली। उन्होंने आपको बहुत फटकारा। उनकी शिक्षा से आप मानस-भक्त बन गये। फिर भी, आपको शान्ति नहीं मिली। एक रात आप अपनी पत्नी और परिवार के सब लोगों को सोये हुए छोड़कर घर से निकल पड़े। माता-पिता की ममता और पत्नी के प्यार से वैराग्य-भावना का अन्तर्द्वन्द्व खूब हुआ। अन्त में वैराग्य-भावना की ही विजय हुई। आप आगे बढ़े। आगे बढ़ने पर आम्रवाटिका मे श्रीअलखानन्दजी[3] से मुलाकात हुई, जिन्होने आपको ६ घण्टे तक शिक्षा-दीक्षा दी। उसके बाद आप एक पूर्ण निर्गुणवादी सन्त हो गये।

आपकी गणना सरभग-सम्प्रदाय के प्रमुख सन्त-कवियो में होती है। आपने अनेक ग्रन्थों की रचना की, जिनमें (१) 'स्वरूप-प्रकाश,' (२) 'स्वरूप-गीता', (३) 'यन्त्रावली' (४) 'शिक्षा-चेतावनी', (५) 'भूकम्प-रहस्य', (६) 'विज्ञान-सार', (७) 'शिवस्तोत्र तथा पूजनविधि', (८) 'फुटकर दोहावली', (९) 'भवानीस्तवन', (१०) त्रिभुवननाथ-महात्म्य आदि उल्लेखनीय है।[4]

---

१. देखिए 'अर्घ्य' (त्रैमासिक, प्रथम अनुष्ठान, चतुर्थ बलि, जून, सन् १९६२ ई०, पृ० ४०) में श्रीहरिश्चन्द्र प्रसाद बी० ए०, का लेख।

२. आपकी माता का नाम श्रीमती महारानी था। आपके जन्म के सम्बन्ध में यह कहानी प्रसिद्ध है कि आपके वरिष्ठ भाई, श्रीफौजदार पाण्डेय के जन्म के बाद एक लम्बी अवधि तक आपके माता-पिता को कोई सन्तान नहीं हो रही थी। उसी अवधि में 'सरभंग-सम्प्रदाय के एक सन्त श्रीभिनकरामजी का वहाँ शुभागमन हुआ। आपके पिता ने उनकी खूब सेवा-शुश्रूषा की और उन्हीं के आशीर्वाद से आपका जन्म हुआ। इस सम्बन्ध में आपने अपनी पुस्तक 'स्वरूपप्रकाश' में इस प्रकार लिखा है—

> एक ही पुत्र रहे पहले, बहुकाल गए पर और न पाई।
> तेहि कारण मातु उदास रहे, पितु सेवत साधु सदा मन लाई ॥
>
> —देखिए, 'अर्घ्य' (वही), पृ० ४०।

३. आपके कनिष्ठ शिष्य, बरजो-ग्राम (मुजफ्फरपुर)-निवासी बाबा बैजूदास देव ने उक्त विश्राम के ५१ पदों को प्रकाशित करवाकर शिष्यों के बीच वितरित करवाया था। उन्हीं के पास इस पुस्तक के शेष अंश सुरक्षित हैं। इस पुस्तक का प्रकाशन सं० २००७ वि० (सन् १९५० ई०) में हुआ। मुद्रित पुस्तकें इन्हीं महात्मा के पास कुछ शेष हैं।—'अर्घ्य' (वही), पृ० ४१।

४. उक्त ग्रन्थों में 'स्वरूप-प्रकाश' प्रथम-विश्राम को छोड़कर अन्य भाग अद्यावधि हस्तलिखित है तथा वे 'मुजफ्फरपुर' के श्रीबैजूदास देव के पास आज भी सुरक्षित हैं। आपकी इस पुस्तक के नाम पर ही

आप श्रौतस्मार्त तथा वेदोपनिषदों के ज्ञान से सम्पन्न थे। बड़े नेम-आचार से रहते थे। 'षड्मुद्रा'-साधन करते थे। आपको अष्टांगयोग तथा 'नेती,' 'बस्ती,' 'धौती,' 'नेउली,' 'त्राटक,' 'गजकरनी' आदि सभी क्रियाओं का अच्छा अभ्यास था।[१]

आपने गृहस्थाश्रम मे रहकर भक्ति और योग-साधना का मार्ग प्रशस्त किया।[२] आपके अनुसार ब्रह्म और जीव मे कोई अन्तर नही, दोनों मुख्यत: एक ही हैं। कबीर की तरह आपने भी 'राम-नाम' को स्मरण करने का उपदेश दिया है। आपका कहना है कि जो राम-नाम लेता है, उसका सदा शुभ होता है। आपके अनुसार जिसे सद्गुरु मिल जाता है, उसका सारा मिथ्याचार ही मिट जाता है।[३] सं० १००० वि० (सन् १९४३ ई०) की श्रावण शुक्ल-द्वितीया को आप गोलोकवासी हुए।

उदाहरण

(१)

टूटे पंचरंगी पिंजड़वा हो सुगना उड़ि जाय,
सुगनू रहेले पिंजड़वा में शोभा बरनी ना जाय।
उड़त पिंजड़वा खाली हो, सब देखि डेराय,
दसो दरबजवा जकीरिया हो, लगले रह जाय।

आपकी धार्मिक भावनाओं के प्रचार और प्रसार के दृष्टिकोण से उन्होंने उक्त ग्रन्थ के प्रथम विश्राम को (मात्र ५१ पद) संगृहीत कर प्रकाशित किया था। उक्त ग्रन्थ के शेष अश श्रीराजेन्द्रदेवजी के पास भी हस्तलिखित रूप में सुरक्षित है। उन्हीं के पास आपकी हस्तलिपि में 'स्वरूपगीता' की पाण्डुलिपि भी है। इस पुस्तक के प्रारम्भ में श्रीबैजूदास देव ने आपकी विद्वत्ता और साधना का वर्णन बड़े ही विशद रूप में किया है। उसके अनुसार आप आजीवन ब्रह्मचारी विविध गुणनिधि-ज्ञानविज्ञानकारी सिद्ध थे।—'सन्तमत का सरभंग-सम्प्रदाय, (डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री, सन् १९५९ ई०) पृ० १९०।

१. आपने अपनी रचनाओं में दरियादास, कबीरदास, नाभादास, दादुल, भरथरी, गोरखनाथ, मलूकदास, नानक, धरनीदास आदि प्रमुख सन्त-कवियों की बार-बार चर्चा की है। इनके अतिरिक्त आपने माधोपुर के भीखनराम, राजापुर के भिनकराम, पण्डितपुर के छतरबाबा, बरहरवा के बालखण्डीदास, झखरा के मनसाराम, ढेकहाँ के कर्त्ताराम, धवलराम आदि सन्तों की चर्चा अपनी कविताओं में बड़ी श्रद्धा से की है। 'स्वरूपप्रकाश' की पद-संख्या १२ के अनुसार वीरभद्र, मदई, सूरज, लालबहादुर, संगट, भगवान, रघुवर, जुगल, तवक्कल, मंगल, नथुनी, नत्थू, बौध, रघुनन्दन अविलाख, बेदामी और बैजू आपके प्रमुख शिष्य थे।—'अर्घ्य,' (वही), पृ० ४१।

२. 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही), पृ० ५५।

३. कबीरदास ने भी इसी तरह गोविन्द से अधिक महत्त्व 'गुरु' को दिया है। अपनी कविता में आपने अपने को प्रियतमा और भगवान् को प्रियतम मानकर एक बड़े ही रहस्य का उद्घाटन किया है। कबीर आदि निर्गुणवादी सन्तों की तरह आपने भी सम्प्रदायवाद का घोर विरोध किया और हिन्दू तथा मुसलमान दोनों को आपसी विरोध-मतभेद भूलकर 'राम' और खुदा' को भजने की शिक्षा दी। आपको जात-पाँत में विश्वास नहीं था।

कवन दुआर होइ गइले हो, तनको ना बुझाय,
सभनी भइले निरदइआ हो, अवघट ले जाय,
सारा रजि धरत पिंजड़वा हो, ओमे अगिन लगाय,
सिरी जोगेसरदास काया पिंजड़वा हो, नित चनन लगाय,
सेहू परले मरघटिया हो आसे अगिन बहाय ॥[1]

(२)

आतम ब्रह्म सनातन, अकथ अखण्ड अनूप,
ताहि ते परगट भया, जीव मन दो भूप।
मन को नारि प्रवृत्त भई, निवृत्ति जीव को जान,
कामपुत्र मन को भया, विवेक जीन पहिचान।
काम नारि की नाम रति, विवेक सुमति नारि,
अपने-अपने पति को, होति भै परम पियारि।
मनोराज नटवर करि, रचा सृष्टि बहु भाँत,
स्वर्ग नर्क सुर असुरही, पुण्य पाप दिन रात।
मेघ नक्षत्र ग्रह पल घड़ी, तिथी मास पक्ष वर्ष,
नारी पुरुष दुख-सुख रचा, कुरूप रूप शोक हर्ष।
लक्ष चौरासी योनि रची, तीन लोक विस्तार,
जीव रुझार कर्म महँ, आपन स्वरूप बिसार ॥[2]

(३)

कुदरत के अकथ कहानी,
जो जन ताहि को ढूढ़न बहरे, जो बिन नाम निशानी,
सो बिनु धड़-सिर बाट चलत है, बिनु मुखड़ा रटे बानी।
दस लकड़ी एक बार चिबावे, दतुअन करत सयानी,

१. चम्पारन की साहित्य-साधना (वही), पृ० ५६।
२. 'सन्तमत का सरभंग-सम्प्रदाय' (वही) पृ० १६२। यह उद्धरण उक्त संत के द्वारा लिखित 'स्वरूप-गीता' की पाण्डुलिपि के १४२ से १२७ संख्यक दोहों से लिया गया है।

तिरबेनिया के घाट नहाए, बिना नदी बिना पानी।
त्रिकुटि महल में ध्यान लगावे, सार शब्द मन आनी,
अनहद शोर घनघोर उठत है, अजपा तान तहाँ तानी।
भव गुफा में अजब झरत है, नैना देख अरुझानी,
जगमग जोत सूरत पर डोले, शोभा न जात बखानी,,
'योगेश्वर' यह सब गति कुदरत के, कुदरत न्यारे जानी
जो जन जाइ, धाइ के मिले, बनलो रूप मेटानी ।।[1]

(४)

खरची नही एक दिनौं घर कै, बाबड़ी महँ तेल चुहावत है,
धोती सोभे रेशमी कोर के, पनही पग में एड़ियावत है।
जाकिट कोट पेन्हे फतुही, जेब में गमछा लटकावत है,
रोड़ी के बून्द लिलार करे, पिठ ऊपर छत्र डोलावत हैं।
मुठ बान्हल बेंत गहे कर में, मुख डालि के पान
चबावत हैं।
बीड़ी सिगरेट धुआँ धधकावत, राह में ठट्ठा मचावत हैं।
कहि बात सहे कहिं लात सहे, कहि जुत्तन मार
गिरावत हैं।
योगेश्वरदास धिक्कार यह चाल के, देश में
गुंडा कहावत हैं ।।[2]

(५)

जागो हिन्दू मुसलमान दौ, रटहु राम खोदाई।
क्या झगड़ा आपस में ठाने, तू है दोनों भाई,

---

१. 'वार्षिकी' (सन् १६६१-६२ ई०, नवयुवक पुस्तकालय, मोतीहारी), पृ० ६२-६३। ये पद श्रीराधाकान्त श्रीवास्तव, (ग्राम—वरजी, डाकघर—मतवल, जिला—मुजफ्फरपुर) के सौजन्य से उक्त पत्रिका को प्राप्त हुए थे।

२. 'स्वरूपगीता' पद-संख्या १९१, जिसे 'संतमत का सरभग-सम्प्रदाय' के पृ० २०६ में देखा जा सकता है।

एके ब्रह्म व्याप है सब में, का सूअर का गाई।
कहँवा तू जनेऊ ले आया, कहँवा तू सुन्नत कराई,
जन्म समान भये दोऊ का, ईहाँ भेष बनाई।
भूख प्यास नींद है एके, रुधिर एक दिखाई,
झूठ बात के रगड़ा ठाने, दोऊ जात बोहाई,
कहत योगेश्वर कहना मानो, जो मैं देत लखाई,
सुषोप्ति में जाके देखो, कहाँ तुरुक हिन्दुआई ॥[1]

*

रंगनाथ पाठक

आप शाहाबाद-जिला के एकौना (बड़हरा) नामक स्थान के निवासी पं० रामजीवन पाठक[2] के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९४२ वि० (सन् १८८५ ई०) की भाद्र पूर्णिमा को हुआ था।[3] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही, अपने पिता एवं सेमरिया ग्राम-निवासी पं० हरगोविन्द पाण्डेयजी के द्वारा, शुरू की गई थी। प्रारम्भ में आपने ज्योतिष ग्रन्थ 'लघुसंग्रह' से अपने अध्ययन का क्रम चलाया। युवावस्था में आपने अपने पिता के गुरु बिनगाँवा-निवासी पं० हरिप्रसाद त्रिपाठी से और उसके बाद उन्हीं के चचेरे भाई तथा उस समय के प्रकाण्ड नैयायिक पं० शिवप्रसादजी से संस्कृत की उच्च शिक्षा प्राप्त की। उक्त नैयायिकजी से आपको टीका-ग्रन्थों के पढ़ने में विशिष्ट सहायता प्राप्त हुई। अत्यल्पकाल में ही आपने अपने गाँव में पढ़ाये जानेवाले संस्कृत के व्याकरण, ज्योतिष, न्याय, वेदान्त, साहित्य आदि विषयों का सामान्य ज्ञान प्राप्त कर लिया था। तदनन्तर आरा में सुप्रसिद्ध शास्त्राचार्य पं० गणपति मिश्रजी से आपने व्याकरण का सांगोपांग अध्ययन किया। इसके बाद काशी के तत्कालीन विख्यात विद्वान् महामहोपाध्याय पं० शिवकुमार शास्त्रीजी के सान्निध्य में भी आपने ज्ञानार्जन किया। काशी में अध्ययन करते समय माध्वसम्प्रदायाचार्य श्रीदामोदरलाल गोस्वामी, म० म० पं० गंगाधर शास्त्री तथा प्रसिद्ध नैयायिक पं० श्रीकर शास्त्री से भी आपने

---

१. 'स्वरूप-प्रकाश', पद-संख्या १७४, जिसे 'संतमत का सरभंग-सम्प्रदाय' (वही), पृ० २११ में देखा जा सकता है।

२ ये संस्कृत के एक प्रसिद्ध विद्वान् थे। ये व्याकरण और धर्मशास्त्र के भी अच्छे विद्वान् थे। इनके पिता पं० हनुमान पाठकजी को भी विद्वत्ता में यश प्राप्त था।

३. देखिए, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना-४ के पंचदश-वार्षिकोत्सव-समारोह (सन् १९६६ ई०) के अवसर पर पुरस्कृत व्यक्तियों तथा निबन्ध-पाठकों का परिचय तथा दिनांक ८ मई, सन् १९५६ ई० को आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री।

विद्याध्ययन किया। उस समय काशी के विद्वानों में शास्त्रार्थ की अच्छी परम्परा थी। आप उनमें जमकर भाग लेते थे। आपकी शास्त्रार्थ-पद्धति को देखकर महामहोपाध्याय पं० हरिहरकृपालुजी द्विवेदी आपपर सदा प्रसन्न रहते थे। आपके विद्यार्थी जीवन में ही आपकी विद्वत्ता की सुरभि चतुर्दिक् फैल चुकी थी। काशी के तत्कालीन संस्कृतज्ञ-समाज में अपने दुराग्रहशून्य शास्त्रार्थ के लिए आप विशेष प्रसिद्ध थे। उपाधि-ग्रहण करने का जहाँतक प्रश्न है, आप अपने पिताजी के आदेशानुसार बहुत दिनों तक उससे दूर रहे। महामहोपाध्याय पं० सकलनारायण शर्माजी के सदुपदेश के बाद आप उसमें शामिल हुए। आपने कलकत्ता-विश्वविद्यालय की संस्कृत-समिति से व्याकरण और दर्शन-विषयों में 'तीर्थ' की उपाधि परीक्षाएँ पास कीं। पटना की पण्डित-मण्डली के शिरोभूषण पं० हरिशंकर पाण्डेयजी को आप भी गुरु मानते रहे हैं। उन्हीं के सत्संग और प्रसाद से आगे चलकर आपकी शास्त्रीय उपलब्धियाँ पल्लवित हुईं और आपने अपने शास्त्रार्थ के क्रम में कवितामय वाक्यावली का भी प्रयोग किया। आप बिहार-संस्कृत-समिति के सदस्य रह चुके हैं।

हिन्दी में लिखित आपकी दो पुस्तकें—(१) 'स्फोटदर्शन' तथा (२) 'षड्दर्शन-रहस्य' बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना के द्वारा प्रकाशित हो चुकी हैं।[१] दोनों ही पुस्तकें अपने विषय की अकेली हैं। सन् १९६६ ई० में उक्त परिषद् के पंचदश-वार्षिकोत्सव के अवसर पर आपको डेढ़ सहस्र मुद्रा के वयोवृद्ध साहित्यिक-सम्मान-पुरस्कार से सम्मानित किया जा चुका है। बिहार-संस्कृत-संजीवन-समाज (पटना) से प्रकाशित होनेवाली मासिक संस्कृत-पत्रिका 'संस्कृत-संजीवनम्' के मान्य सम्पादकों एवं लेखकों में आप रह चुके हैं। सम्प्रति आप चिरैयाटाँड़ (पटना) संस्कृत-विद्यालय के प्रधानाध्यापक हैं।

उदाहरण

(१)

मूल प्रकृति का स्वरूप त्रिगुणात्मक है। सत्त्व, रज, तम—इन तीनों गुणों की जो साम्यावस्था है उसीका नाम प्रधान, मूल प्रकृति और अव्यक्त है। साम्यावस्था होने के कारण ही यह सत्व है, यह रज है, यह तम है, इस प्रकार का व्यवहार इसमें नहीं होता और इसमें क्रिया भी नहीं होती। इसीलिए, ये तीन तत्त्व नहीं माने जाते। यह त्रिगुणात्मक एक ही तत्त्व माना जाता है।

---

१. संस्कृत में लिखे आपके कुछ प्रकाशित निबन्ध बड़े महत्त्वपूर्ण हैं। आपके अप्रकाशित निबन्धों में १. 'मोक्षमीमांसा', २. 'मायावाद', ३. 'स्फोटवाद' आदि प्रसिद्ध हैं। उपर्युक्त निबन्धों में दो बिहार-संस्कृत-समिति से पुरस्कृत हो चुके हैं। आपने संस्कृत में १. 'दर्शन-सिद्धान्त मंजूषा,' २. 'बौद्ध-दर्शन,' ३. 'चार्वाकदर्शन,' ४. 'रामानुजदर्शन', ५. 'वेदान्त-दर्शन' आदि पुस्तकें भी लिखी हैं, जो अबतक अप्रकाशित हैं।

सत्त्व, रज और तम ये तीनों वस्तुतः द्रव्यरूप ही है गुण रूप नही। यहाँ शंका यह होती है कि यदि सत्त्व, रज और तम ये द्रव्यरूप हैं, तो लोक और शास्त्र में इनका गुण-शब्द से व्यवहार क्यो किया जाता है। इसका समाधान यह है कि ये तीनों पुरुष के भोग-साधनमात्र है। इसलिए, गुणीभूत होने के कारण गुण-शब्द से इनका व्यवहार किया जाता है। वस्तुतः गुण नही हैं। क्योंकि ये गुण से भिन्न ही गुणी का स्वरूप होता है। गन्ध से भिन्न पृथिवी का गुण गन्ध होता है। परन्तु, यहाँ ऐसा नहीं है। यहाँ तो सत्त्व, रज, तम इनसे भिन्न प्रकृति का कोई स्वरूप है ही नहीं। ये तीनों प्रकृति के स्वरूप ही हैं, धर्म नहीं। इसीलिए, सूत्रकार ने साख्य-प्रवचन मे लिखा है—'सत्त्वादीनामतद्धर्मत्वं तद्रूपत्वात्' अर्थात् सत्त्वादि तद्रूप होने के कारण प्रकृति के धर्म नही है।[1]

(२)

गौतमसूत्र के अनुयायी नैयायिक तो प्रसिद्ध तार्किक हैं। इनके मत में भी जगत् के मूलतत्त्व के अन्वेषण मे तर्क ही प्रधान है, ऐसा माना जाता है। यद्यपि इनके मत में जगत् के मूलकारण के बोध कराने में स्वतन्त्रतया भी श्रुति-समर्थ होती है, फिर भी ये तार्किक नही है, ऐसा नहीं कह सकते। क्योंकि द्यावाभूमी जनयन् देव एकः आस्ते, (श्वे० ३।३।) इत्यादि श्रुति-जगत् के मूलकारण के बोध कराने में स्वतन्त्रतया प्रवृत्त होती है, फिर भी अनुमान के द्वारा मूलतत्त्व के बोधित होने के बाद ही उसके अर्थ का अनुभव कराने में समर्थ होती है।

एक बात और भी है कि शब्द ऐतिह्य-मात्र से अर्थ को कहता है, इसीलिए श्रवण-मात्र से श्रोताओं के हृदय में अर्थ का अनुभव नहीं कराता। और अनुमान में यह विशेषता है कि प्रत्यक्ष दृष्टान्त के प्रदर्शन

---

१. 'षड्दर्शनरहस्य' (रंगनाथ पाठक, सं० २०१५ वि०), पृ० २१६-१७।

से सूक्ष्म-से-सूक्ष्म अर्थ का भी अनुभव कराने में वह समर्थ होता है। मूलकारण रूप जो सूक्ष्म अर्थ है, उसका बुद्धि पर आरोहण तर्क के ही द्वारा होता है, इस प्रकार मानने से ये भी तार्किक ही हैं, यह सिद्ध होता है।[1]

(३)

शब्द-ब्रह्म के उपासक वैयाकरण शक्ति और शक्त (शब्द और अर्थ) में भेद मानते हैं। इसी आधार पर शक्ति और शक्तिमान् में अभेद माननेवाले तार्किक आदि भो शब्द में पृथक् शक्ति को स्वीकार करते है। यह शक्ति और शक्त का भेद भी अनिर्वचनीय और कल्पित ही है। जिस प्रकार इस लोक मे स्त्री-पुरुष में पार्थक्य होने पर भी पुत्रोत्पादन, अग्निसेवन आदि कार्यों में उनके सहकर्त्तृत्व या समान कर्त्तृत्व के कारण एकात्मत्व को कल्पना की जाती है, उसो प्रकार परस्पर अभिन्न ब्रह्म और शक्ति में दृश्यमान भेद के न रहने पर भी नामात्मक और रूपात्मक भेद से उपादानत्व के विवेचन के लिए भेद की कल्पना भी मान्य होती है।[2]

(४)

जिस प्रकार एक ही विमल द्रव्य उपरंजक उपाधि के भेद से भिन्न-भिन्न प्रतोत होता है, उसी प्रकार गो, अश्व आदि में वर्त्तमान जो ब्रह्मसत्ता है, वही आश्रयभूत सम्बन्धी रूप उपाधि से विद्यमान होकर जाति कही जाती है, अर्थात् वही ब्रह्मसत्ता उपाधि के भेद से जाति शब्द का वाच्य होती है। इसीलिए गोत्व, अश्वत्व भी परमार्थ मे ब्रह्मसत्ता के अतिरिक्त नही है। वही ब्रह्मसत्ता गवादि उपाधि से गोत्व आदि के रूप में भासित होती है और उपाधिभेद से कल्पित भेदवाली सत्ता जाति में ही सकल गवादि शब्द वाचक रूप से

१. 'षड्दर्शन-रहस्य (वही), पृ० ४१।
२. 'स्फोटदर्शन' (रंगनाथ पाठक, सं० २०२४ वि०), पृ० ६।

व्यवस्थित है। इसे दूसरे शब्दों में कहा जाता है कि उसी ब्रह्मसत्ता के वाचक सब शब्द है।[1]

रंगबहादुर प्रसाद 'बहादुर'

आप सारन जिला के नयागाँव ग्राम के निवासी श्री सन्त प्रतापजी के सुपुत्र है। आपका जन्म ३ दिसम्बर, सन् १८९७ ई० को हुआ था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा मोतीहारी और पटने मे हुई। आगे चलकर आपने बक्सर हाई स्कूल से मैट्रिक की परीक्षा पास की। इसके बाद पटना के बी० एन्० कॉलेज में अध्ययन करने लगे। किन्तु, सन् १९१८ ई० के आरम्भ मे ही कॉलेज छोड़कर जर्मन-युद्ध के समय आप कामती (पंजाब) रेजिमेंट क्लर्क के पद पर काम करने लगे। इसके पश्चात् क्रमश. डी० टी० एम्० ऑफिस और सचिवालय मे कार्य कर ही रहे थे कि असहयोग-आन्दोलन' आ गया और आप भी उसमे शामिल हो गये। इस सिलसिले में आप कई बार जेल भी गये। आप बिहार-विधानसभा के सदस्य और शाहाबाद कांग्रेस कमिटी के प्रधानमन्त्री भी रह चुके हैं। हिन्दी और भोजपुरी में आपने जो कुछ भी लिखा है, वह पद्य में ही। आपके द्वारा रचित हिन्दी-पद्यात्मक पुस्तिकाओं के नाम इस प्रकार हैं—(१) गाँधीजी का अल्टिमेटम, (२) माता की पुकार (३) रण-निमत्रण (४) आजादी की पहली लड़ाई, (५) बिहिया की लड़ाई और (६) भोजपुर।[2]

उदाहरण

(१)

बीबीगंज जगदीशपुर में ऐसी हुई लड़ाई थी।
छक्के छुटे गोरो के चेहरे पर उडी हवाई थी।
जहाँ-जहाँ मुठभेड़ हुई रण खेत में काट गिराया था।
तीर तबर तलवारों से भूपर चुपचाप सुलाया था।
निकल गया वह समय हाथ मल-मलकर अब पछताता हूँ।
स्वतंत्रता की लगन लगे वह मस्त रागिनी गाता हूँ।[3]

---

१. वही, पृ० ६४।

२. भोजपुरी भाषा में रचित इस अंतिम पुस्तिका को छोड़कर सभी की रचना अँगरेजी राज में हुई थी जिसके कारण वे जब्त हो गई थीं। पहली तीन सन् १९३० में जब्त हुई थीं और दूसरी दो सन् १९३६ ई० में।

३. आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।

(२)

विजयी वीर बिहारी बाँका अजब लड़ाका था भाई।
आई जब सन्मुख लड़ने गोरी सेना मुँह की खाई।
कोट कचहरी थानों पर फौजी निशान फहराता था।
अटक-कटक तक हिन्दवासियों का झंडा लहराता था।
वही जमाना लाने के हित बार-बार उकताता हूँ।
स्वतन्त्रता की लगन लगे वह मस्त रागिनी गाता हूँ।[१]

(३)

कवन देस कइसन बा जहवाँ नित चमकत तरुआरि रहल।
कवन जगह अइसन बा जहवाँ सस्त्रन के झनकार रहल।
कवन जगह अइसन बा जहवाँ वीरन के हुँकार रहल।
देस धरम पर मरे मिटेला के हरदम तइयार रहल।
रक्त गरम बा केकर अबले जीवन जोस जवानी बा।
लोहू से लदफद जीअत जागत जग में अमर कहानी बा।[२]

(४)

केकरा दुअरे पतित पावनी गंगाजी के धार रहल।
सोनभद्र के मधुर गान गरजत रोहतास पहाड़ रहल।
केकरा घर में हरिश्चन्द्र के किला महल दरबार रहल।
रामलखन के विद्यालय बचपन के बन सिंगार रहल।
जे भोजपुर में आजो तक बक्सर रोहतास निसानी बा।
लोहू से लदफद जीअत-जागत-जग में अमर कहानी बा।[३]

---

१. वही।
२. वही।
३. वही।

(५)

धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः, यह स्वाभाविक नियम है जो वेद शास्त्रोक्त अपने धर्म की अवहेलना करता है वह नाश को प्राप्त होता है। और जो धर्मानुसारी आचरण करता है, उसकी धर्म रक्षा करता है।

आज विद्यालयों में बढ़ती हुई विभिन्न प्रकार की बुराइयों को देखते हुए लगता है कि विचार-शक्ति नही बदलने से कोई प्रयास शायद ही सिद्ध हो सकता है। पाठ्यपुस्तकों के बदल जाने से बच्चों के विचारों में कोई भी विशेष परिवर्त्तन नही होता। उसके लिए तो आचरण-शास्त्र का कोई विषय अनिवार्य होना चाहिए। वह आचरण है हमारे शास्त्रों में। वही सत्य है, वही सार है। संक्षेप में उसे ही धर्म कहते है।[1]

रघुनन्दन त्रिपाठी

आप शाहाबाद-जिला के दलीपपुर[1] (जगदीशपुर) नामक ग्राम के निवासी पं० श्रीराजीवराम त्रिपाठी के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९१२ वि० (सन् १८५५ ई०) की श्रावण शुक्ल-द्वादशी (शुक्रवार) को हुआ था।[2] आपकी आरम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। आपने अपने गाँव के जमीन्दार-साहित्यरसिक महाराजकुमार बाबू नर्मदेश्वर प्रसाद सिंह से साहित्य-रचना की रीति सीखी। उसके बाद काव्य, कोष और व्याकरण (सिद्धान्त-

---

१. 'सकीर्त्तन-संदेश (माला-१, पुष्प-१, २५ अप्रैल, सन् १९६१ ई०) पृ० ६।

२. इस ग्राम का त्रिपाठी-परिवार सदा से अपनी विद्वत्ता के लिए जगदीशपुर-दरबार से प्रतिष्ठा प्राप्त करता रहा। अब भी जगदीशपुर-राजवंश के उज्जैन-क्षत्रियों के यहाँ इस परिवार का उचित सम्मान होता है। उस जमाने में त्रिपाठी-परिवार के पं० तिलक त्रिपाठी नामक एक विद्वान् ने अपनी अपूर्व प्रतिभा से समाज को आलोकित किया था। इन्हीं पण्डितजी के चार पुत्रों में आपके पूज्य पिताजी भी थे। —देखिए, 'बिहार के विद्यासागर' (श्रीकमलनारायण झा 'कमलेश', सन् १९५२ ई०), पृ० १-२।

३. वही, पृ० ३। आपके परिचय-लेखन में 'श्रीहरिश्चन्द्रकला' (मासिक, भाग २६, संख्या ३, ज्येष्ठ शुक्ल-४, सं० १९७२ वि०, पृ० ११०-१३) 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, ६४७) तथा साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित श्रीअक्षयवट मिश्र-लिखित सामग्री से भी सहायता ली गई है। 'श्रीहरिश्चन्द्रकला' (वही) में आपका जन्म-काल अगस्त, सन् १८६४ ई० बतलाया गया है।

कौमुदी) की शिक्षा आपने अपने पूज्य पिता से ही प्राप्त की। घर पर इस प्रकार कुछ व्युत्पन्न होकर टेकारी (गया) के राजगुरु विद्वद्वर पं० विश्वेश्वरदत्तजी तथा डुमरांव-राज्य के सुप्रसिद्ध विद्वान् पं० दुर्गादत्त परमहंसजी महाराज से आपने संस्कृत-व्याकरण एवं साहित्य का पूर्णरूप से अध्ययन किया। डुमरांव में रहकर आपने जगदीशपुर-राजवंश के महाराजकुमार बाबू रिपुभंजन सिंह जो बड़े ही सहृदय साहित्य-प्रेमी और हिन्दी-साहित्य के अगाध विद्वान् थे, से 'बिहारी-सतसई' आदि काव्य-ग्रन्थों का अध्ययन किया। लगभग पाँच वर्षों के भीतर ही आपने व्याकरण, साहित्य एवं न्याय का अध्ययन समाप्त कर उस राज्य की पण्डित-परीक्षा में उत्तीर्णता प्राप्त कर ली। दरबार की ओर से आपको 'पण्डित' की प्रतिष्ठा मिली। छात्रावस्था में ही आपकी स्फूर्त्ति, मेधा, कवित्व-शक्ति तथा शास्त्रार्थ करने की विलक्षणता का परिचय लोगों को मिल चुका था। उस समय आपकी संस्कृत-कविताओं से प्रसन्न होकर डुमरांव-राज्य के तत्कालीन महाराजाधिराज श्रीमहेश्वरबक्श सिंह ने आपको राज्य की ओर से पाप्य प्रतिष्ठा-पुस्तक 'वाल्मीकि-रामायण' की एक प्रति भेंट में दी थी।[1] डुमरांव में कुछ दिन रहने के पश्चात् आप काशी चले गये। काशी मे आपने राजकीय संस्कृत-महाविद्यालय (क्वीन्स कॉलेज) में अपना नाम लिखवाया। वहाँ आपकी शिक्षा म० म० पं० शिवकुमार शास्त्री एवं पं० कैलाशचन्द्र भट्टाचार्य न्यायशिरोमणि, प० गंगाधर शास्त्री आदि के सान्निध्य में शिक्षा हुई। सन् १८८१ ई० मे आपने वहाँ से 'साहित्याचार्य' की उपाधि प्राप्त की। तदनन्तर नवन महाविद्यालय मे आपने क्रमशः व्याकरण और सांख्ययोग में 'उपाध्याय' की उपाधि प्राप्त की। इसके पश्चात् आपकी गणना काशी के प्रतिष्ठित विद्वानों में होने लगी।[2] सन् १८८८ ई० में आप पूर्णिया-जिला-स्कूल में प्रधान-संस्कृत शिक्षक के पद पर नियुक्त हुए। पूर्णिया के बाद आप बिहार के विभिन्न जिला-स्कूलो एवं प्रशिक्षण-विद्यालयों में उक्त पद पर रहे। सरकारी नौकरी करते हुए आपने अनेक लोकोपकारी कार्य भी किये। सरकारी सेवा के कार्यों का सम्पादन करते समय आपने जिन जिन नगरों में पदार्पण किया, वहाँ-वहाँ संस्कृत-भाषा के सम्यक् पठन-पाठन के लिए आपने संस्कृत-विद्यालय स्थापित कर निःशुल्क विद्या-दान की व्यवस्था की। आपके उद्योग से बिहार में संस्कृत का खूब प्रचार हुआ। अतएव पण्डित-समाज में आपकी बड़ी प्रतिष्ठा हुई। आप आजीवन संस्कृत-समाज के सदस्यों मे रहे।[3] ३ जून, सन् १९१३ ई०

---

१. बिहारोत्कल-संस्कृत-समिति के तत्कालीन विद्यालय-निरीक्षक श्रीभूदेव मुखर्जी ने भी आपकी योग्यता देखकर आपको पुरस्कृत किया था।

२. उन दिनों आपके गुरु पं० श्रीगंगाधरशास्त्री ने विद्वद्वर माननीय पं० बालशास्त्री का एक गद्य-पद्यमय जीवनचरित लिखा था। आपने उसपर संक्षिप्त टिप्पणी लिखी, जिसे पढकर उदयपुर (राजस्थान) के नरेश महाराणा सज्जन सिंह ने आपसे साहित्य पढने की इच्छा व्यक्त की, किन्तु अपने पिताजी के आदेश से आपने काशी का त्याग नहीं किया। फलत', आपको काशी विश्वनाथ की ही सेवा में रहना पड़ा। यहाँ रहकर अपने अनुजों कों पढ़ाते हुए आपने अपना अध्ययन भी जारी रखा। —देखिए, 'बिहार के विद्यासागर' (वही), पृ० ६-७।

३. आपने बिहार-संस्कृत-संजीवन-समाज के मंत्री-पद को बहुत वर्षों तक सुशोभित किया। बिहारोत्कल-संस्कृत-कौंसिल के भी आप प्रधान सदस्यों में थे और आचार्य आदि अनेक सर्वोच्च परीक्षाओं के परीक्षक थे।

की तत्कालीन भारत-सम्राट् श्रीपंचमजार्ज के भारत-आगमन के अवसर पर आप 'महामहोपाध्याय' की उपाधि से विभूषित हुए। सन् १९१४ ई० में 'बिहार-पण्डित-सभा ने आपको 'विद्यासागर' की उपाधि दी और भारत धर्ममहामण्डल, काशी की ओर से आपको 'विद्यानिधि' की पदवी मिली।

आपने अपने जीवन में सदैव 'विपदि धैर्यम्' का मन्त्र अपनाया था। धर्म और कर्म के प्रति आपकी जन्मजात निष्ठा थी। वस्तुतः, आपका जीवन एक सन्त की तरह व्यतीत हुआ। सरकारी सेवा से निवृत्त होकर आपने अपने गाँव में राम-जानकी-मन्दिर और शिव-मन्दिर बनवाये और इन दोनों मन्दिरों की व्यवस्था के लिए अपनी आमदनी में से ग्यारह सौ रुपये वार्षिक की जायदाद लिख दी। अध्ययनाध्यापन से निवृत्त होकर अपने अवकाश-काल में आपने देश के तमाम तीर्थों की यात्रा की।

संस्कृत के उच्चकोटि के विद्वान् होकर भी आप हिन्दी-भाषा के बड़े प्रेमी-लेखक थे। आप संस्कृत और हिन्दी दोनों ही भाषाओं में गद्य-पद्य रचना करते थे। समस्यापूर्त्तियाँ तो आप इतनी शीघ्रता से करते थे कि सुननेवाले मंत्रमुग्ध हो जाते थे।[१] आपकी हिन्दी-कविता से डुमराँव के महाराजा श्रीराधाप्रसाद सिंहजी भी बहुत प्रसन्न रहा करते थे। आपने उनकी महारानी के लिए सरल हिन्दी में 'धर्म-चिन्तामणि' नामक एक पुस्तक की रचना की थी। इस रचना के अतिरिक्त और कोई दूसरी पुस्तकाकार रचना आपकी नहीं मिलती।

जीवन के अन्तिम दिनों में आप काशीवास करने लगे थे। वहीं सन् १९३१ ई० (सं० १९८७ वि०) की २० जनवरी (माघ शुक्ल-नवमी, बुधवार) को आप परलोकगामी हुए।[२]

उदाहरण

बरसे रस सावन श्याम घटा,
घनश्याम बिना जिअरा तरसे।
तरसे अति जोर चहूँ दिसि से,
प्रलयानल घोर धुआँ दरसे।

---

१. एक समय सूर्यपुरा (शाहाबाद) के राजा राजराजेश्वरी प्रसादजी के समक्ष कवियों की एक मण्डली लगी हुई थी। उनके बीच उक्त राजासाहब ने 'विष ही बरसे' समस्या रखी। उसकी पूर्त्ति आपने बात-की-बात में ही कर दी। आपके आशुकवित्व से राजा साहब बड़े ही प्रभावित हुए और उन्होंने आपका बड़ा आदर किया।

हिन्दी साहित्यकाश को आलोकित करनेवाले तत्कालीन अनेक साहित्यकार आपके मित्र थे। इनमें प्रमुख के नाम ये हैं—राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द, बाबू भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, पं० बदरीनारायण चौधरी प्रेमघन, पं० अम्बिकादत्त व्यास, राजा कमलानन्द सिंह, राजा राजराजेश्वरीप्रसाद सिंह, अवध-नरेश राजा प्रतापनारायण सिंह शर्मा, पं० विजयानन्द त्रिपाठी 'श्रीकवि', म० म० पं० शशिनाथ झा आदि। इन विद्वानों द्वारा आयोजित साहित्यिक गोष्ठियों में आप बहुधा सम्मिलित हुआ करते थे।

२. आपके अनुज पं० सर्वानन्द त्रिपाठी भी एक बहुत बड़े ज्योतिषी एवं वैद्य थे। आपके पुत्र पं० देवदत्त त्रिपाठी पटना-विश्वविद्यालय के प्राध्यापक और हिन्दी के एक अच्छे लेखक थे।

दरसे नहि नेकु उपाय भटू,
जग में बिन प्रीतम के परसे।
पर सेवक बिंब सुधा छकि के,
अब तो बँसुरी विष ही बरसे।'[1]

★

रघुनन्दन दास 'बबुए'

आपकी रचनाएँ 'रघुनाथ' और 'रघुनन्दन' नाम से भी मिलती हैं।

आप दरभंगा-जिला के 'सखवाड़' नामक ग्राम के निवासी स्व० पलटसिंह दास के पुत्र थे। आपका जन्म फसली सन् १२६८ (सन् १८६१ ई०) को आश्विन बदी-परिवा (रविवार) को हुआ था।[2] आपकी आरम्भिक शिक्षा नानिहाल में हुई थी। भगीरथपुर-निवासी श्रीअमृतलालदास ने आपको हिन्दी की और कबराघाट-निवासी मौ० खुर्शेद अली ने फारसी की शिक्षा दी थी। आगे चलकर मैथिली-साहित्य-परिषद् की ओर से आपको 'साहित्यरत्नाकर' की उपाधि प्राप्त हुई। आपका साहित्यिक जीवन १६ वर्ष की अवस्था से ही आरम्भ हो गया था। व्रजभाषा में रचित आपकी समस्यापूर्त्तियाँ 'कविमण्डल' (काशी), 'समस्यापूर्त्ति' (सीतापुर, बिसवाँ), 'कवि और चित्रकार' (फरुखाबाद) और 'कवि-समाज' (पटना) में प्रकाशित मिलती है। व्रजभाषा के अतिरिक्त आपकी रचनाएँ मैथिली में भी मिलती है। आपके द्वारा रचित पुस्तकाकार रचनाएँ निम्नलिखित हैं —

(१) भर्त्तृहरि-निर्वेद नाटक (संस्कृत) का हिन्दी-अनुवाद, (२) उत्तररामचरित नाटक (संस्कृत) का मैथिली-अनुवाद, (३) मिथिला नाटक (मैथिली), (४) दूतागदव्यायोग (मैथिली), (५) पावस-प्रमोद सट्टक (हिन्दी), (६) सावित्री-सत्यवान नाटक (हिन्दी), (७) सुभद्राहरण महाकाव्य (मैथिली), (८) वीरबालक खण्डकाव्य (मैथिली), (९) राधा-नखशिख (हिन्दी), (१०) अम्बपचीसी (हिन्दी), (११) हरतालो व्रतकथा (मैथिली), (१२) जीमूतवाहन व्रतकथा (मैथिली)।[3]

आप फसली सन् १३५३ की आषाढ़ कृष्ण त्रयोदशी को परलोकगामी हुए।

---

१. 'श्रीहरिश्चन्द्र-कला (वही), पृ० ११२। यह वही समस्यापूर्ति है, जिसकी रचना आपने सूर्यपुरा-नरेश के लिए की थी।

२. साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री के अनुसार। देखिए, 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही)।

३. सं० ५ से १२ तक की पुस्तकें अप्रकाशित हैं। 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही) में आपके द्वारा रचित 'रस-प्रबोध' नामक एक और पुस्तक की चर्चा है।

उदाहरण

(१)

रीति जात कुल की कुपुत्र के जन्म
नीति जात नृप के पिसुन स्रौन लागे ते।
जग में प्रतीति जात झूठ बात बोलत ही
प्रीति जात हित ते प्रपंच रस पागे ते।
कहै 'रघुनाथ' जीति जात बेगि जुद्ध माहिं
सचि के सिलाहरन खेत चढ़ि भागे ते।
भीति जात डर मे गोविन्द के ध्यान किये
और सीत जात उन्नत-उरोजन के लागे ते[1]

(२)

पौन पछांह प्रसून प्रफुल्लित पीक पुकार रसाल की डार।
मौर झरे मकरन्दन मोदित होत अलीगन की झनकार॥
गैलन हूँ रघुनाथ गुनी निगुनी सब गावत राग धमार।
प्यारी संयोगिनी का सुख औ बिनु प्यो दुख देत बसंत बहार॥[2]

(३)

बागें बनी दल मौर सुमौर सजे तरु आस हिय सुखसार।
प्यारी लता परिरम्भन के ललचे रघुनाथ झुके भुजडार।
पुष्पवती लतिका लपटी तरु प्रीतम अंग उमङ्ग अपार।
जागत है जड जीवहुँ के हिय काम बिलोकि बसन्त बहार॥[3]

---

१. 'रसिक मित्र' (सन् १८९८ ई०)। परिषद् के साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री से।
२. 'समस्यापूर्ति (पटना, फरवरी, सन् १८९७ ई०), पृ० २२।
३. वही।

(४)

प्यारे प्रभात द्रिगें अलसात हिये सकुचात मिले निज बाल सों।
यामिनि जागनो जानी तिया लखि अञ्जन होठ महावर भाल सों।
आनि कै आदर तें कर आरसि दै निज रास जनावति ख्याल सों।
लाल के हाथ सों लैके रूमाल सों पोछैं गुलाल है लाल के गाल सों ॥[1]

(५)

कौतुक नेक लखो उत जाइ कै तीर कलिन्दि कला उमगी रहै।
दीठ दलाल के दौर दोऊ दिस रीझ रिझावन मांह लगी रहै।
मोहन को मन मानिक मोल दै गाहक होन की चाह लगी रहै।
आवति ज्योंही अली सखि सग लौ घाट पै रूप को हाट लगी रहै।[2]

रघुनाथप्रसाद मिश्र 'कवीन्द्र'

आप पटना जिला के राघवपुर (बिहटा) नामक ग्राम के निवासी पं० श्री-वैद्यनाथ मिश्र के पुत्र थे।[3] आपका जन्म सं० १६२५ वि० (सन् १८६८ ई०) की कार्तिक कृष्ण-त्रयोदशी (बुधवार) को हुआ था।[4] आपकी प्राथमिक शिक्षा सस्कृत के माध्यम से हुई थी। आपने सभी भारतीय दर्शनों का विधिवत् अध्ययन किया था और काशी के प्रसिद्ध पण्डितो में आपकी गणना होने लगी थी। हिन्दी के प्रति भी आपकी अच्छी अभिरुचि थी। आपके द्वारा लिखित रचनाएँ स० १६५८ वि० से ही प्रकाश मे आने लगी थीं। आपके द्वारा रचित सस्कृत-कविताएँ बड़ी ही सरस एवं शृंगारपूर्ण है। आपने व्रजभाषा में भी मधुर एव ललित कविताएँ लिखी थी जिनमे कवित्त, सवैया आदि छन्दों का प्रयोग किया था।

---

१. 'समस्यापूर्ति' (पटना, मार्च, सन् १८६७ ई०), पृ० ८।
२. वही (पटना, जनवरी, सन् १८६८ ई०), पृ० ७।
३. बादशाह अकबर के चिकित्सक होने के कारण आपके पूर्वजों को इस ग्राम में भूमि (दान में) प्राप्त हुई थी। आपके कुल में एक-से-एक पंडित, ज्योतिषी, चिकित्सक एवं दार्शनिक हो चुके हैं। दिनांक १७ अगस्त, सन् १९६१ ई० को श्रीरजनीशप्रसाद मिश्र (ग्राम—दरवमेर, पत्रालय—परेवा जिला—गया) द्वारा प्रेषित एवं परिषद् के साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित आपके परिचय-पत्र के अनुसार।
४. 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ', (वही), पृ० ६४०।

आपकी पहली कविता-पुस्तक (व्रजभाषा) 'रसमञ्जूषा' बिहारबन्धु-प्रेस, पटना से सं० १९५८ वि० मे प्रकाशित हुई।[1] आपकी दूसरी पुस्तक 'आर्य्याचारादर्श, (संस्कृत) सं० १९६१ वि० प्रकाश में आई। सम्प्रति उक्त दोनो पुस्तकों की केवल दो प्रतियाँ आपके वंशधरों के पास सुरक्षित हैं। इन दो पुस्तकों के अतिरिक्त आपने संस्कृत मे सुभाषित-भूषणम्' (सूक्तिविलास-२०० श्लोक) और २. 'उद्धवचम्पू' (काव्य) भी लिखा था, जो अद्यावधि आर्थाभाव के कारण प्रकाशित नही हो सके। संस्कृत-भाषा मे ही लिखित 'वैद्यमंजरी' नामक आयुर्वेदविषयक एक और ग्रन्थ भी आजतक उसी अवस्था मे है।[2] इस तरह आपका जीवन साहित्य-साधनारत रहा।[3] सं० १९९२ वि० की भाद्र शुक्ल-नवमी गुरुवार को आपका परलोक-गमन हुआ।

उदाहरण

(१)

द्विज होई पढ़ै नर वेद नहीं, कुलनारी चहै नित जार पति,
नृप होइ के जानत नीति नहीं, रघुनाथ बढ़ावत द्रोहमती,
कलि कौतुक और मैं काले कहौं परनारी के लंपट योगी यती
अब चारहूँ वर्ण के धर्म छुटै इमि कारण काँपि उठी धरती[4]

(२)

संग होई सुरासुर के गण के, जब अम्बुधिवारिमथै महिआ
ताते सुधा निसरी घट पूरित, देखि भयो अतिहर्ष हिआ

---

१. 'मिश्रबन्धु-विनोद,' (वही), पृ० २७६।

२. आपकी साहित्य-साधना से प्रसन्न होकर सुप्रसिद्ध साहित्यिक एवं समाजसेवी श्रीगंगाशरण सिंहजी ने 'सम्मेलन-पत्रिका' (प्रयाग) में आपके सम्बन्ध में एक लेख लिखा था। आपको संस्कृत-कविता से वे बहुत ही प्रभावित एवं प्रसन्न थे। उन्होंने स्वय लिखा है कि आप संस्कृत में भी रचना करते थे और हिन्दी से कहीं अच्छी। 'सम्मेलन-पत्रिका' (भाग १४, अंक २, आश्विन, सं० १९८३ वि०) में प्रकाशित 'बिहार के कुछ कवि' शीर्षक लेख।

३. आपके पुत्र श्रीभागवतप्रसाद मिश्र शर्मा, श्रीअवधप्रसाद मिश्र शर्मा तथा श्रीधरप्रसाद मिश्र शर्मा वर्त्तमान है। ये तीनों ही हिन्दी-संस्कृत तथा मगही के प्रशस्त कवि हैं। आपकी अप्रकाशित रचनाओं के साथ ही इनकी रचनाएँ भी अर्थाभाव के कारण अद्यावधि प्रकाश में नहीं आ सकी हैं। श्री रजनीशप्रसाद मिश्र द्वारा दिनांक १७ मई, सन् १९६१ ई० को प्राप्त एवं परिषद् के साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के आधार पर।

४. श्रीरजनीशप्रसाद मिश्र के द्वारा दिनांक १७ अगस्त, १९६१ ई० को प्रेषित विवरण से।

होई के नारी लगै हरि बाँटन, सारे सुरासुर को जहिआ
श्रीरघुनाथ विचारि करै, महि में शशि आनि पैर तहिआ।[1]

(३)

कैरव कदंब ह्वै सराहत सरोवर माँहि तटिनी तटी पै भट्ट हँसिनी समानो है
कुंद की कली ह्वै भले फैले उपबागनमो नागनमो शेख ह्वै विशेष छवि आनो है।
तारापति होके विराजत बीच तारन के, जानो नहि कारण कौन मन्दकवि गानो है।
तीनो लोकगामी रघुनाथ कवि कीरति को तेरो जस जम्बूद्वीप तम्बू अस तानो है॥[2]

(४)

बेरि बेरि आवै घन घेरि घेरि कारो नभ,
आये बरसाने आज आये बरसाने री,
यहाँ कौन आदर वियोगी ढिग बादर के,
बरसो वरठाने जाइ बरसो वरठाने री,
बूझे ना बेदर्दी रघुनाथ जू पराई पीर,
बार-बार मारे तीर अर्ज न माने री,
मर्ज बढ़ाने आज आयो साजि सेना को,
गर्जन जाने मेघ गर्ज न जाने री॥[3]

(५)

नाथ दया करि पार उतारो, औगुन गुन हमरो न विचारो
त्राहि त्राहि करि आयो शरण मो जानि तुम्हें आरतहितकारो।

---

१ वही।
२ वही।
३. वही।

अब तो प्रभु एक आश तुम्हारी जानि अधम तुमहूँ न विसारो
इतनी आश होत हिय मेरो, रघुपति नाम शरण्य तिहारो
जन रघुनाथ बीच भवसागर, डूबत कोटि न कलिमल हारो।[१]

(६)

एहो नाथ पुंज-पुंज गिरते अलि गुंज-गुंज
कंजन के कुंज-कुंज अन्दर अमन्द से
सारे वन चन्द-चन्द कूजै खग मन्द-मन्द
कोकिला सुछन्द-छन्द टेरत अनन्द से
आए है वसन्त सन्त विरही दु:ख अन्त-अन्त
पी कहाँ पपाही की वाणी विलन्द से
शीतल सुख कंद-कंद मारुत अति मन्द-मन्द
लै लै मकरन्द रन्द उड़ते पसन्द से।[२]

(७)

चारे चपलारे चंचलारे चटकारे कारे
काम के कटारे कजरारे कमरारे हैं।
कंज खंज तारे देखि हारे क्षिति सारे नारे
शील के अगारे अगनारे मगनारे है।
सारे मतवारे करि डारे दिलदारे वारे
प्रेम के पुजारे प्यारे नैन मतवारे है।
फूल से फुलारे तापहारे सुकुमारे फिरे
नैन ये तिहारे नाथ गजब गुजारे है।[३]

*

१. वही।
२. वही।
३. वही।

रघुवरदयाल

आप सारन जिला के 'गम्हरिया' नामक ग्राम के निवासी श्रीलालजी सहायजी[1] के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९४५ (वि० सन् १८८९ ई०) की माघ पूर्णिमा को हुआ था।[2] आपका सम्बन्ध अनेक साहित्यिक संस्थाओं से है। आपकी साहित्यिक सेवा का आरम्भिक वर्ष सन् १९१८ ई० बतलाया गया है। अनेक स्फुट कविताओं के अतिरिक्त 'जीवन रसायन-शास्त्र' नामक आपकी एक पुस्तकाकार अप्रकाशित कृति की चर्चा भी मिलती है। आपकी रचना के उदाहरण हमे नही मिले।

रघुवीरनारायण

आप सारन जिला के नयागाँव नामक स्थान के निवासी बाबू जगदेव नारायणजी के सुपुत्र थे। आपका जन्म छपरा-नगर के 'दहियावाँ मुहल्ले में सन् १८८४ ई० के ३० अक्टूबर को हुआ था।[3] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा छपरा-शहर के जिलास्कूल में हुई। निम्न कक्षाओ मे पढते समय से ही आप हिन्दी के साथ-साथ अँगरेजी की भी तुकबन्दियाँ किया करते थे। बचपन मे आपके मस्तिष्क और हृदय पर तुलसीकृत 'रामचरितमानस' और नरोत्तमदास-कृत 'सुदामाचरित' का अमिट प्रभाव पड़ चुका था। सन् १८९५ ई० से आपने अध्ययन के साथ-साथ साहित्य-रचना की ओर भी अपना ध्यान लगाया और उसी काल से आपकी रचनाएँ प्रकाश मे आने लगी थी। पं० अम्बिकादत्त व्यास आपके काव्य-गुरु थे। आपके अध्ययन-काल मे वे छपरा जिलास्कूल मे अध्यापक थे। उनके सम्पर्क मे रहकर आपने हिन्दी की अनेक कविताएँ लिखी। उन्होंने आपकी कवित्व-शक्ति बढाने में पूरा प्रोत्साहन दिया। उन्ही दिनों आपको भारतप्रसिद्ध विद्वान् पं० रामावतार शर्मा

---

१. इनके पूर्वज कश्मीर से सारन आये थे।

२. आपके द्वारा दिनांक २३ जुलाई, सन् १९५९ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।

३. देखिए, 'बिहार-विभाकर' (वही), पृ० ३७०। द्रष्टव्य—डॉ० उदयनारायण तिवारी ने आपका जन्म काल २० अक्टूबर, सन् १८८४ ई० बतलाया है। देखिए—'भोजपुरी भाषा और साहित्य' (उदयनारायण तिवारी, सन् १९५४ ई०), पृ० ४३। आपके परिचय-लेखन में उक्त सामग्री के अतिरिक्त जयन्ती-स्मारक-ग्रंथ (वही पृ० ६७२-ग), 'भोजपुरी के कवि और काव्य' (वही, पृ० २१६) तथा साहित्य (त्रैमासिक, सन् १९५१ ई०, वर्ष २, अंक ३, पृ० ७६) में प्रकाशित श्रीबजरंग वर्मा के 'कविवर रघुवीरनारायण' शीर्षक एक लेख मे भी पर्याप्त सहायता ली गयी है। आपके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर आचार्य मनोरंजन प्रसादजी ने भी एक लेख 'विशाल भारत' में लिखा था जो हमें नहीं मिल सका।

४. आपकी वंशपरम्परा बादशाह अकबर के समय से ही साहित्य-सृजन में वरीयता प्राप्त करती चली आ रही है। आपके पूर्वजों में मुंशी कृपानारायण एवं बाबू रामबिहारी सहाय की फारसी एवं उर्दू कविताओं का बड़ा आदर था। देखिए, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् का वार्षिक कार्यविवरण सन् १९५२-५३ ई०, पृ० ४५-४६।

का आशीर्वाद प्राप्त हुआ। विद्यालयीय शिक्षा प्राप्त करने के बाद आप पटना कॉलेज में उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रविष्ट हुए। यहाँ के प्राध्यापक श्री प्रो० जेम्स ने आपको अँगरेजी मे कविता करने की प्रेरणा दी। कलकत्ता इंस्टिट्यूट मैगजिन' और 'यंग बिहार' मे प्रकाशित आपकी अँगरेजी की कविताएँ देखकर सर यदुनाथ सरकार, डॉ० सी० आर० विल्सन तथा प्रो० चार्ल्स रसेल वेनेभी ने भी आपको प्रोत्साहित किया। आपकी अँगरेजी-रचनाओं मे 'ए टेल ऑव बिहार' (सन् १९०५ ई०) नामक कविता-पुस्तक विशेष प्रसिद्ध हुई।[1]

आपकी प्रकाशित-अप्रकाशित अँगरेजी-रचनाओं मे 'सीताहरण',[2] 'बेसाइड ब्लॉसम्स' (सन् १९२८ ई०), 'लव एण्ड वार,' 'कुँवर विजयमल', 'दि ह्विल ऑव टाइम' विक्टर्स रिटर्न' आदि की उस समय चारों ओर प्रशंसा और प्रतिष्ठा हुई थी। आपने श्रीमती एनीबेसेंट की प्रेरणा से अँगरेजी में गद्य भी लिखना शुरू किया था। उसी का परिणाम था 'फोक टेल्स ऑव बिहार' का प्रकाशन।

अँगरेजी-कविता लिखने में आपकी प्रसिद्धि देखकर ही उस समय के बिहारी नेताओं ने आपको खड़ीबोली हिन्दी और उर्दू भाषा में कविता लिखने के लिए प्रोत्साहित किया। पं० अम्बिकादत्त व्यास के अतिरिक्त पं० रामावतार शर्मा और बाबू शिवनन्दन सहाय भी आपके साहित्यिक गुरु माने जायँगे। वास्तव में, इन्हीं तीनों से आपने काव्य-साहित्य की शिक्षा-दीक्षा ली थी।[3] फलत', 'तरुण-भारत', 'बिहार बन्धु', 'शिक्षा' आदि पत्र-पत्रिकाओं के समर्थ लेखकों में आपकी गणना हुई। 'शिक्षा' के माध्यम से आपकी रचनाएँ विद्यार्थीवर्ग में विशेष रूप से समादृत हुईं। आप उस पत्रिका के तरुण लेखक थे। आपको उसके समर्थ-सम्पादक पं० सकलनारायण शर्मा से पर्याप्त प्रोत्साहन मिला। बिहार के प्रसिद्ध महात्मा श्रीसीतारामशरण भगवानप्रसाद 'रूपकला' जी से भी आपको कम प्रोत्साहन नहीं मिला।[4] उन्होंने भी आपको हिन्दी की ओर आकृष्ट किया। भोजपुरी-भाषा मे लिखित आपका सबसे प्रसिद्ध गीत 'बटोहिया' भारत की सीमा पार करके दक्षिण अफ्रिका और मारिशस तथा ट्रिनीडाड के प्रवासी भारतीयो में भी लोकप्रिय हो गया था। आपका दूसरा लोकप्रिय गीत 'भारतभवानी' असहयोग-

---

१. इस खण्डकाव्य को पढ़कर इंगलैण्ड के तत्कालीन राजकवि अल्फ्रेड ऑस्टीन ने लिखा था—

"आइ रिसीव मेनी वाल्यूम्स ऑव वर्क्स फ्रॉम माइ कन्ट्रीमेन ऐट होम दैट कैन नॉट कम्पेयर इन एक्जिक्युशन विथ योर्स। योर ऐटनमेण्टस इन दिस रेस्पेक्ट डू यू ग्रेट ऑनर ऐण्ड आइ ऑफर माई वार्म ऐण्ड सिम्पैथेटिक कंग्रेचुलेशन्स।'—१६ जनवरी, सन् १९०६ ई० के एक पत्र से। देखिए—बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् का वार्षिक कार्यविवरण, (सन् १९५२-५३ ई०), पृ० ४६।

इनके अतिरिक्त भारत में गाइबोले, वी, हवेक, हियकाट, एनी बेसेंट, गेट आदि ने भी मुक्तकंठ से आपकी काव्य-शक्ति की प्रशंसा की थी। विदेश के अन्य प्रमुख कवियों एवं आलोचकों ने, जैसे लेविस मॉरिस (२६ फरवरी, सन् १९०६ ई० को लिखित पत्र द्वारा), डब्लू० वेडबर्न (१८ अक्टूबर, सन् १९०६ ई० के एक पत्र द्वारा) आदि ने भी अनेक प्रशंसापत्र आपके पास भेजे थे।—देखिए 'साहित्य' (वही) पृ० ७७।

२. सन् १९२८ ई० में प्रकाशित।

३. देखिए, 'साहित्य' त्रैमासिक, वर्ष ५, अंक ४, जनवरी, (सन् १९५४ ई०), पृ० ४।

४. देखिए, 'साहित्य' (वही, पृ० ७६–८०) में श्रीबजरंग वर्मा का लेख।

आन्दोलन से पहले बिहार के सभी तरह के सभा-सम्मेलनों में 'वन्देमातरम्' की तरह आरम्भक गान बन गया। बिहार के कारागारों में क्रान्तिकारी कैदियों के लिए यह तो एक प्रकार से एक विद्रोही-गीत बन चुका था।[1] वास्तव में उन दिनों आपकी रचनाएँ जन-जागृति का निमित्त बन चुकी थीं।

सन् १९११ ई० में आपके द्वारा लिखित, रंभा नामक एक कविता-पुस्तक खूब प्रशंसित हुई। आपका 'रघुवीर-पत्र-पुष्प'[2] 'रघुवीर रस-रंग'[3], निकुंज-कलाप'[4] और 'रघुवीर-रसगंगा' नामक पुस्तकें भी प्रकाशित होकर खूब प्रसिद्ध हुईं।

बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के मुजफ्फरपुरवाले वार्षिक अधिवेशन के अवसर पर होनेवाले कवि-सम्मेलन की अध्यक्षता आपने ही की थी। आप अनेक वर्षों तक बनैली के राजा कीर्त्यानन्दसिंह के निजी-सचिव थे। आपकी नेक सलाह से उक्त राजा साहब ने बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, पटना के भवन-निर्माण के लिए दस सहस्र रुपयों का दान दिया था। सन् १९५२-५३ ई० में आपको बिहार राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना ने डेढ़ सहस्र रुपयों का वयोवृद्ध साहित्यिक सम्मान पुरस्कार देकर सम्मानित किया था।[5]

साहित्यिक परम्परा को आपके वंश ने आपके साथ ही निःशेष हो जाने का अवसर नहीं रहने दिया है।[6] सन् १९५५ ई० के जनवरी मास में आपका स्वर्गारोहण हुआ।

उदाहरण

(१)

सुन्दर सुभूमि भैया भारत के देसवा से,
मोर प्रान बसे हिम-खोह रे बटोहिया।

---

१. सन् १९१२ ई० में जब अखिलभारतीय काँग्रेस का महाधिवेशन पटने में हुआ था, तब 'वन्देमातरम्' के स्थान पर 'भारतभवानी' गीत ही गाया गया था। 'साहित्य' (वही वर्ष ५, अंक ४), पृ० ४।

२. इसकी अनेक कविताएँ राष्ट्रीय भावना पर आधारित हैं।

३. तन्मयता एवं भावप्रवणता से पूर्ण भक्तिरस की कविताएँ। इन्हीं में संगृहीत कविताओं के आधार पर षष्ट बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन (मुजफ्फरपुर, १ नवम्बर, सन् १९२४ ई०) के सभापति-पद से बनैली-नरेश राजा कीर्त्यानन्द सिंह बहादुर ने आपको संयुक्तप्रान्त एवं बिहार में संकीर्त्तन-साहित्य के जन्मदाता के रूप में स्मरण किया था। देखिए, 'अभिभाषण' (वही), पृ० १७।

४. इसमें उर्दू, अँगरेजी तथा हिन्दी के अनेक प्रकार के छन्दों के सफल प्रयोग हैं।

५. देखिए बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् का वार्षिक कार्यविवरण (सन् १९५२-५३ ई०), पृ० ४५।

६. देखिए, 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही), पृ० ६७२ (ग)। आपके ज्येष्ठ पुत्र श्रीहरेन्द्रदेव नारायण और पुत्रवधू श्रीमती प्रकाशवती नारायण बिहार के प्रसिद्ध कवियों में हैं, जिनके द्वारा आज भी हिन्दी-जगत् की सुषमा-वृद्धि हो रही है। इनके अतिरिक्त आपके वंश की साहित्यिक परम्परा को श्रीअवधेन्द्रदेव नारायण, सीतेन्द्रदेव नारायण और प्रो० नीलिमा निकुंज भी अक्षुण्ण रखने का प्रयास कर रहे हैं।

एक द्वार घेरे रामा हिम कोतबलवा से,
तीन द्वार सिन्धु घहराये रे बटोहिया ॥
जाहु-जाहु भैया रे बटोही हिन्द देखि आउ,
जहँवा कुहिंकि कोइली बोले रे बटोहिया।
पवन सुगन्ध मन्द अगर चन्दनवाँ से,
कामिनी विरह-राग गावे रे बटोहिया ॥
विपिन अगम धन सघन बगन बीच,
चम्पक कुसुम रंग देवे रे बटोहिया।
द्रुम बट पीपल कदम्ब निम्ब आमवृक्ष,
केतकी गुलाब फूल फूले रे बटोहिया ॥
तोता तूती बोले रामा बोले भेंगरजवा से,
पपिहा के पी-पी जिया साले रे बटोहिया ॥
गंगा रे जमुनवाँ के झगमग पनियाँ से,
सरजू झमकि लहराये रे बटोहिया ॥
ब्रह्मपुत्र पंचनद घहरत निसिदिन,
सोनभद्र मीठे स्वर गावे रे बटोहिया ॥[1]

(२)

तरल धार सरयू अलौकिक छटा से
सुबह की सुनहली गुलाबी घटा से।
झलक रंग लेती चली बुदबुदाती,
प्रभाकर के बिहँसन तले जगमगाती ॥
पवन मन्दगामी लताओं से खेलत,
कुसुम कुन्द बेली विटप घन झमेलत।

---

१. देखिए—'भोजपुरी के कवि और काव्य' (वही), पृ० २१६-२१७।

प्रसूनों की गंधों को तन में लगाकर,
सुवन के गवैयों को सोते जगाकर।
मृदुल मस्त सीटी इकायक सुनाकर,
सनासन चला ओर सरयू के धाकर।
चली जात सरयू अलौकिक छटा से,
कनक रग लेकर गुलाबी घटा से।
कभी सिर बढ़ाकर तरंगें उठाती,
कभी बुदबुदा करके है मुस्कुराती।
कही बुलबुले कोटि पथ में बनाती,
उन्हे तोड़कर फिर प्रभा राग गाती।
सगुण रंग योंही दिखाती है सरयू,
हरी का अगम भेद गाती है सरयू।[1]

(३)

उत्तर-बिहार में, तिरहुत कमिश्नरी में, सारन (छपरा) जिला है। सन् १९२४ ई० मे मैं लम्बी छुट्टी लेकर छपरा आया। एक दिन अपने घर की प्राचीन पांडुलिपियो को, जिन्हे मेरे पूर्वजों ने सुरक्षित रखा था, देखने लगा। अचानक फारसी की एक हस्तलिखित पुस्तक मुझे मिली, जिसे मुन्शी दिगम्बर लाल ने —जो मेरे दादा के बड़े भाई थे— अपने हाथ से उतारा था। ईस्ट-इंडिया-कम्पनी के शासन-काल मे मुन्शी दिगम्बरलाल परगना कसमर के कानूनगो 'तरफ सारन-बिहार' थे। एक दूसरे कानूनगो बाबू लक्ष्मणसिह और भी इस परगने में थे, जो 'तरफ दान-योगिराज' कहलाते थे। दिगम्बरलाल का इलाका सोनपुर से डुमरी या शीतलपुर तक था। और, शीतलपुर से संठा तक का इलाका बाबू लक्ष्मणसिंह का था। इन-

१. लेखक के प्रकाश्यमान काव्य 'रम्भा' से। —देखिए 'रघुवीर-पत्र-पुष्प' (वही), पृ० ४५ सी।

लोगों की पदवी में जो 'सारग-बिहार' और 'दान-योगिराज' शब्द आये है, उनसे ज्ञात होता है कि ये दोनों स्थल बौद्धकाल के दो प्राचीन संस्मारक थे, जिनके नाम में मुसलमान अमलदारी ने या ईस्ट-इंडिया-कम्पनीवालों ने भी कोई परिवर्तन नहीं किया।

बस मै इसी खोज में लग गया। कई वर्षों के बाद मैं यह पता लगा सका कि सारंग-बिहार का डीह, मही नदी के किनारे डुमरी गाँव में, जो नयागाँव के निकट है, मौजूद है। वहाँ के लोग इस खँडहर को 'सारंगडीह' या 'सारनडीह' के नाम से पुकारते है। इस डीह को एक सज्जन खुदवा रहे थे। उसमें से भगवान बुद्ध की संगमरमर की एक मूर्त्ति निकली, बहुत ही सुन्दर। हजारो वर्ष निकल गये, वह मूर्त्ति ज्यो-की-त्यों है। उस गाँव के लोग उस मूर्त्ति को भ्रमवश भगवान् विष्णु मानकर एक मन्दिर में प्रतिष्ठित कर पूजते है।[१]

(४)

डाक्टर ह्वे (Dr. Hoey) की धारणा थी कि बौद्धकाल का 'चपला-चैत्य' छपरा शहर के पूरबी हिस्से में था। वे पता नहीं लगा सके थे कि 'बोद्धा-छपरा' जो शायद बौद्धकाल में 'कोठिया-नरांव' तक कहा जाता था, गंगा के किनारे संठा के समीप वर्त्तमान था, और 'चपला-चैत्य' का स्थल कहीं कोठिया-नराँव या बोद्धा-छपरा के निकट ही पाया जायगा। बौद्धकाल का 'चपला' बोद्धाछपरा से ज्ञात होता है। यहाँ के घाट का नाम 'चपर घाट' भी 'चपला-चैत्य' के नाम से ही सम्बद्ध है। मालूम होता है, हु-यंग-सांग इसी प्राचीन घाट पर गंगा पार कर उतरा था और अपने सामने नारायण देव के सुरम्य मन्दिर को देखा था, जिसका स्थल अभी तक 'नारायण

१. 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही), पृ० ४२२।

ठाकुर थान' के नाम से विख्यात है और जिसको कारलाइल तथा कनिंघम रिविलगंज की ओर खोज रहे थे, पर पा न सके।

नारायणदेव के मन्दिर का पता लगाने के पहले यह याद रखना होगा कि नारायणदेव के लगभग एक मील उत्तर एक विशाल डीह है। वह यदि 'चपला चैत्य' का डीह है तो अनेकानेक ग्रन्थों के अनुसार वैशाली-नगर भी इससे बहुत दूर नहीं था। चूँकि बौद्ध-ग्रन्थों से ज्ञात होता है कि वैशाली की सीमा पार करने के बाद चपला-चैत्य कुछ ही दूर पर था, इसलिए यह सिद्ध होता है कि इस जगह से पूरब और उत्तर दो-चार कोस पर ही वैशाली नगर था।'[1]

रघुवीर प्रसाद

आप शाहाबाद जिला के मुरार नामक स्थान के निवासी बख्शी रामशरण लालजी के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९३७ वि० (सन् १८८० ई०) की कार्तिक कृष्ण-तृतीया को हुआ था।[2] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। आपने सन् १८९३ ई० में छात्रवृत्ति लेकर मिड्ल की परीक्षा पास की थी। आर्थिक संकट के कारण केवल मैट्रिक तक ही शिक्षा आपने पायी। मैट्रिक पास करने के बाद आपने सन् १८९९ ई० में पुलिस-विभाग में सहायक के पद पर कार्य-सम्पादन किया। इसी विभाग मे कार्य करते हुए आपने साहित्य की भी अच्छी सेवा की थी। सेवा-कार्य की दक्षता के कारण आपको एक बार ५००) रुपये का पुरस्कार भी प्राप्त हुआ। पुलिस-विभाग मे आप अधिक दिनों तक नही रह सके और आपने अपना स्थानान्तरण शिक्षा-विभाग मे करवा लिया। पुलिस-विभाग से स्थानान्तरित होकर आपने पटना ट्रेनिङ्ग-स्कूल मे शिक्षक के पद पर कार्यारम्भ किया। वहाँ रहते हुए आप प्रधान-शिक्षक के पद तक पहुँच गये थे। ट्रेनिङ्ग स्कूल में कार्य करते हुए आपने बी० ए० की परीक्षा पास की। आप अनेक संस्थाओं के सदस्य तथा सभापति रह चुके थे। पटना ट्रेनिङ्ग-स्कूल मे करीब पचीस साल तक आप रहे। सन् १९ ५ ई० मे आप उसके प्रधानाध्यापक नियुक्त हुए। आपके आते ही ट्रेनिङ्ग स्कूल की काया पलट गयी। आपके प्रयास से ही सन् १९२१ ई० से इस स्कूल में सर्वप्रथम मैट्रिक पास लड़कों का प्रवेश हुआ। सन् १९२५ ई० में (सम्राट्

१. 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही), पृ० ४२४–२५।

२. आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री के अनुसार। देखिए, 'बिहार-विभाकर' (वही), पृ० १९३ तथा 'हरिऔध-अभिनन्दन-ग्रन्थ' (वही) पृ० ५४५-४६ भी।

के जन्मोत्सव के अवसर पर) आपको 'रायसाहब' की उपाधि से सम्मानित किया गया ।[1] आप बहुत दिनों तक "बिहार वर्नाकुलर टीचर्स एसोसिएशन' के सदस्य रहे। बिहार मे सर्वप्रथम 'रेडक्रॉस सेंट जॉन एम्बुलेंस कोर' नामक संस्था की नींव आपने ही डाली । बहुत वर्षों तक आप ही इसके सभापति-पद पर आसीन थे । बिहार प्रान्तीय थियोसोफिकल सोसाइटी की प्रान्तीय शाखा के प्रधानमन्त्री और शिक्षा-सहकारिता-समिति के प्रधानमन्त्री भी रह चुके थे ।

बिहार की विभिन्न परीक्षाओं मे हिन्दी को सर्वोच्च स्थान दिलाने मे आपने जिस दिलेरी के साथ कार्य किया था, वह हिन्दी-साहित्य के इतिहास मे उल्लेख्य है । आपके सत्प्रयत्नों से विश्वविद्यालय में हिन्दी को उचित स्थान मिल सका था। अपने व्यस्त जीवन से समय निकालकर आप पुस्तक-रचना भी कर लेते थे । कोर्स की पुस्तकें लिखने में आपने खड्गविलास प्रेस (पटना) की पूरी मदद की थी । बच्चों के लिए आपके द्वारा लिखित एक पुस्तक 'आमोद-पाठ' खूब प्रशंसित हुई। सन् १६०० ई० के प्रारम्भ से यावज्जीवन आप पुस्तकें लिखते रहे । आपने श्री जे० एच० थिकेट-रचित एक अँगरेजी पुस्तक का 'प्राकृतिक पाठ दर्शन' नाम से अत्यन्त सुन्दर अनुवाद भी किया था। १० अप्रील, सन् १६३२ ई० की आधी रात मे आपकी इहलीला समाप्त हो गयी। आपकी रचना के उदाहरण हमे नही मिले ।

रजनीकान्त शास्त्री

आप शाहाबाद जिले के एकौना (बड़हरा) नामक स्थान के निवासी श्री कोमल साहु जी के पुत्र थे । आपका जन्म सं० १६३८ वि० की श्रावण कृष्ण-द्वादशी (शुक्रवार, सन् १८८१ ई०) को हुआ था ।[2] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा मटुकपुर (शाहाबाद) के मिडल इंगलिश स्कूल मे हुई। तदनन्तर आपने आरा नगर के महाजनी मिडल इंगलिश स्कूल से छात्रवृत्ति के साथ मिडल की परीक्षा पास की। मिडल पास करने के बाद आपका नाम आरा के टाउन हाईस्कूल मे लिखवाया गया । वहाँ से आपने सन् १८६६ ई० मे मैट्रिक की परीक्षा छात्रवृत्ति के साथ प्रथम श्रेणी में पास की। इसके बाद पटना के बी० एन्० कॉलेज से बी० ए० की परीक्षा पास कर सन् १६०४ ई० मे आपने आरा जिला-स्कूल मे अध्यापक के पद पर कार्य सम्पादन किया। सन् १६०८ ई० मे आपने वकालत की परीक्षा पास की । आगे चलकर आपको 'ज्योतिषाचार्य', 'विद्या-निधि', 'साहित्य-सरस्वती', 'ज्योतिर्भूषण' आदि अनेक उपाधियाँ प्राप्त हुईं । वकालत

१. 'बिहार-विभाकर', (वही), पृ० १६६ ।

२. आपके द्वारा दिनांक ६ सितम्बर, सन् १६४३ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार । आपके प्रस्तुत परिचय-लेखन में दिनांक २ अगस्त, सन् १६५६ ई० को प्रेषित सामग्री तथा 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही पृ० ६५४), से भी सहायता ली गयी है ।

पास करने पर सन् १९०६ ई० में आपने आरा मे वकालत शुरू की। परन्तु, कतिपय कारणों से आपने वकालत छोडकर पुन: दानापुर (पटना) में एक हाइस्कूल में अध्यापन-कार्य प्रारम्भ कर दिया। आपके अध्यापन-नैपुण्य को देखकर आपको बक्सर हाइस्कूल मे सह-प्रधानाध्यापक के पद पर प्रतिष्ठित किया गया। वहाँ आपने अपने सुन्दर अध्यापन से छात्रों एव अभिभावकों मे अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली थी। आपने वहाँ से १ जुलाई, सन् १९४२ ई०, को अवकाश-ग्रहण किया। स्कूल मे कार्य करते समय ही आप अपने लेखन-कार्य मे सलग्न थे। अतएव वहाँ से अवकाश ग्रहण करते ही आपने करीब दर्जनों पुस्तकें लिख डाली। आपके द्वारा लिखित पुस्तकों मे हिन्दी-व्याकरण की 'सिद्धान्त-कौमुदी'[1] तथा 'मानसमीमांसा' आदि पुस्तकें खूब प्रशस्ति प्राप्त कर चुकी है।

इनके अतिरिक्त, (१) 'नवीन मूल रामायण' (२) 'ज्योतिर्गणितकौमुदी',[2] (३) 'वियाहुत वश का इतिहास'[3] आदि कई उत्कृष्ट पुस्तकें भी आपने लिखी थी। आपके द्वारा लिखित पुस्तकें जो अप्रकाशित रह गई, उनके नाम ये है—(१) हिन्द-जाति का उत्थान और पतन, (२)सत्यार्थ-दर्शन तथा (३) मानस-मीमांसा। पुस्तक-लेखन के अतिरिक्त आपके अनेक स्फुट लेख यदा-कदा 'चाँद' और 'गगा' जैसी प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं मे प्रकाशित होते रहे है। आपकी इहलीला २३ अक्टूबर, सन् १९५१ ई०, को समाप्त हुई।

उदाहरण

(१)

चार्वाक (बृहस्पति) को छोड़कर अन्य सभी भारतीय दार्शनिकों का मत है कि, जीवात्मा अपने शुभाशुभ कर्मो का फल भोगने के लिए बार-बार जन्म लिया करता है; और, यदि किसी एक जन्म का कर्म-फल उसी जन्म में नही भोगा गया, तो उसे भोगने के लिए जीवात्मा को दूसरा जन्म धारण करना पड़ता है। इस जन्म-मरण के झंझट से छुटकारा पा-जाने का नाम मुक्ति है। इसी मुक्ति को कोई मोक्ष, कोई कैवल्य, कोई अपवर्ग तथा कोई निर्वाण नाम से अभिहित करते हैं।

---

१. इस पुस्तक में व्याकरण के प्राय: १००० नियमों की चर्चा है तथा विवादग्रस्त विषयों का सफलतापूर्वक निराकरण किया गया है। मुद्रक एवं प्रकाशक पी० सी० द्वादशश्रेणी एण्ड कम्पनी, अलीगढ़ (उत्तर-प्रदेश)।

२. आधुनिक शैली में लिखित गणित-ज्यौतिष-ग्रन्थ। मुद्रक एव प्रकाशक—गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास, लक्ष्मीवेंकटेश्वर स्टीम प्रेस, बम्बई।

३. इसमें अँगरेजी, सस्कृत एव हिन्दी-ग्रन्थों से प्रमाण सग्रह कर वियाहुत आदि कतिपय वैश्यों का इतिहास प्रस्तुत किया गया है। मुद्रक—श्रीगणपति कृष्ण गुर्जर, श्रीलक्ष्मीनारायण प्रेस, बनारस; प्रकाशक—स्वयं। आपने 'श्रीरामचरितमुक्तावली' के नाम से एक पद्य-ग्रन्थ संस्कृत में भी रचकर प्रकाशित किया था।

जीव, ईश्वर तथा प्रकृति के सम्यक् ज्ञान को तत्वज्ञान कहते हैं। इस तत्वज्ञान का उदय होने पर जीव का कर्म-बन्धन छूट जाता है और वह मुक्त हो जाता है। इस लेख में यह दिखलाया जायगा कि, यह मत केवल भ्रान्त दार्शनिकों की कोरी कल्पना है। इसमे सार कुछ भी नही।

पहले तो इस विषय मे यह प्रश्न उठता है कि सृष्टि के आदि में जो मनुष्यादि प्राणी हुए, उनका जन्म किस पूर्व जन्म के कर्म का फल था ? क्योंकि सृष्टि से पूर्व कोई प्राणी था ही नही, जो अपना कर्म-फल भोगने के लिए, सृष्टि होने के समय, जन्म-मरण-रूपी घोर संकट में न्यायपूर्वक घसीट लाया जाय। अतः जन्म किसी कर्म के अधीन न होकर एक स्वतंत्र वस्तु है।[1]

(२)

जिस समय भूमण्डल की आधुनिक सभ्यताभिमानी जातियों के नग्नप्राय तथा वनचर पूर्वज अपना जीवन पशुवत व्यतीत करते, गिरि-गह्वरों में निवास करते तथा वन्य-पशुओं को मार-मार कर अपनी क्षुधा शान्त किया करते थे; जिस समय वर्त्तमान सभ्यमन्य यूरोप के आदर्श रोमी और यूनानी सभ्यता का अभी अंकुर तक नहीं उगने पाया था; उस समय भारत के विद्वानों ने विज्ञान के ज्योतिष, गणित, चिकित्सा, अर्थशास्त्र, साहित्य आदि विविध विभागों में अपनी सूक्ष्मातिसूक्ष्म बुद्धि द्वारा प्रवेश कर उन तत्वों को ढूँढ़ निकाला था, जिन्हें देख आधुनिक विदेशीय विद्वानों की अक्ल चकरा जाती है। उदाहरण के लिए ज्योतिःशास्त्र को लीजिए। जिस समय अन्य देशवासियों को इतना भी ज्ञान नहीं था कि पृथ्वी, जिसपर हम बसते है, गोली है कि

---

१ 'गंगा' (वही, प्रवाह २, तरंग १२, दिसम्बर, सन् १६३२ ई०), पृ० १३२२।

चिपटी; चल है या अचल; उसी समय यहाँ के विद्वानों ने न केवल पृथ्वी के आकार तथा गति का ही पता लगा लिया था; बल्कि ज्योतिःशास्त्र-सम्बन्धी उन गणितक्रियाओं को, जिनका नाम भी अभी अन्य देशवालों ने नही सुना था, समतल तथा गोलीय त्रिकोणमिति-शास्त्र (Plane and Spherical Trigonometry) एवं चलन-कलन (Differential and Integral Calculus) के जटिल नियमों द्वारा सम्पादन कर सूर्यादि स्थिर तथा चन्द्रादि गगनचारी पिण्डों के गत्यादि का ठीक-ठीक पता लगा लिया था और आधुनिक सूक्ष्म मापक यन्त्र (Micrometer) तथा दूरदर्शक यन्त्र (Telescope) आदि को नही रखते हुए भी केवल बाँस की बनी नलिका के द्वारा ग्रह-वेध कर जिस सूक्ष्मता के साथ गणित-फल निकाला करते थे, उसे देख विदेशियों के मुँह से 'वाह-वाह' बिना निकले नहीं रहता।[1]

रमाप्रसाद मिश्र 'रमेश'

आप गया-जिला के भुनाठी (पो० सरता) नामक स्थान के निवासी पं० श्रीनन्दलाल मिश्र[2] जी के पुत्र थे। किन्तु आपका अस्थायी निवास एक प्रकार से गया नगर का 'पीपरपाँती' नामक मुहल्ला था। आपका जन्म सं० १९४२ वि० (सन् १८९८ ई०) की पौष कृष्ण-नवमी (बुधवार) को हुआ था।[3] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा आपके पूज्य पितामह के सान्निध्य मे घर पर ही हुई। तदनन्तर, संस्कृत के उच्च अध्ययन के लिए आप काशी के प्रसिद्ध विद्वान् पं० शिवकुमार शास्त्री के पास चले गये। वही रहकर आपने व्याकरण, दर्शन, साहित्य, ज्योतिष आदि विषयों का अध्ययन किया। आगे चलकर आपने कलकत्ता-संस्कृत-विश्वविद्यालय से 'व्याकरणशास्त्री' और 'काव्यतीर्थ' की उपाधियाँ भी प्राप्त कीं। इसी समय हिन्दी-काव्यरचना की प्रेरणा एवं शिक्षा आपको पं० श्री बालगोविन्द मिश्र 'कमलेश' जी से मिली और फिर उनके और गया नगर के प्रसिद्ध कवि

---

१. 'चाँद' (मासिक, वर्ष ८, खण्ड २, संख्या ६, अक्टूबर, सन् १९३० ई०), पृ० ४६२।

२. इनके पिता पं० लक्ष्मीचरण मिश्र एक जानेमाने विद्वान् थे।

३ 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० १४१। इसके साथ ही दिनांक ९ फरवरी, सन् १९५९ ई० को प्राप्त और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री भी द्रष्टव्य।

श्रीमन्नूलालजी खण्डखोका गयावाल के सहवास से आप काव्य-रचना करने लगे। आपकी साहित्य-रचना का आरम्भिक-काल सं० १६५६ वि० माना जाता है।

आप 'रसिक-विनोदिनी-सभा' के सभापति एवं गया 'नागरी-प्रचारिणी-सभा' के वर्षों तक अध्यक्ष थे। साहित्य-सेवियों को निःशुल्क शिक्षा-दान करने में आपको विशेष आनन्द मिलता था। 'साहित्य सरोवर' नामक मासिक पत्रिका के सम्पादक के रूप मे आपने अपनी सम्पादन-कला का भी अच्छा परिचय दिया था। आप साहित्य के अतिरिक्त व्याकरण, ज्योतिष एवं धर्मशास्त्र के उद्भट विद्वान् थे। संगीत-कला के भी अच्छे ज्ञाता थे। आपकी संस्कृत-कविताएँ उच्च कोटि की मानी जाती थी।[१] ब्रजभाषा के तो आप एक सुपरिचित कवि थे। आपने चित्रकाव्य की रचना मे भी अपनी प्रतिभा का सुन्दर परिचय दिया था। एक आशुकवि के रूप मे आपकी अच्छी प्रसिद्धि थी। आपकी कोई पुस्तककार रचना नही मिलती, केवल स्फुट रचनाएँ ही मिलती हैं। ये रचनाएँ 'साहित्य-सुधा', 'साहित्य-सरोवर', 'सुकवि', 'प्रियंवदा' आदि पत्रिकाओं मे यथावसर प्रकाशित हुआ करती थी। आप सं० १८६८ वि० (सन् १६४१ ई०) की पौष शुक्ल-पूर्णिमा को परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

कोक कला कौशल नवीन परवीन प्यारी,
　　रति विपरीत रची संग पिय बर के।
केश बेश विथुरे सुहार उर टूटि गयो,
　　उच्च कुच कोर गिरी बेंदी भाल परके॥
कौंधो हेम कुम्भ में खचो है नीलमणि कीधो,
　　कञ्ज कोश बैठ्यो जाय छौना मधुकर के।
मेरे जान कहत 'रमेश' कढ़ि आजु गिर्यो,
　　मेरु गिरिशृंग पै कलङ्क कलाधर के॥[२]

---

१ एक उदाहरण : दार्शनिक समस्या की पूर्त्ति शृंगार-रस में—

यच्चुम्बने परिहृतं वदनं मृगाक्ष्या
　　स्पर्शे कृते च कुचयोः करयोर्निरोधः
नीवीं शये विनिहते ननन्नेति चोक्तम्
　　सर्वं विभाति मम सत्यमसत्यमेतत्॥

—श्रीप्रमोदशरण पाठकजी से प्राप्त।

२. 'समस्यापूर्त्ति' (गया, द्वितीयाधिवेशन, सन् १६०८ ई०), पृ० २१।

(२)

बैठी चित्रसारी बीच वसन विचित्र धारि,
करति सचित्र मन मैन को नजरते।
भाषत 'रमेश' मंजु मुख महताब आब,
हेरत हिराय जात धीरज जिगर ते॥
रोमावली हार उर सुषमा अपार लखि,
बार बार नैन युग टारे हूँ न टरते।
आवत विलोकि भानुजा को मिलिवे को मनौ,
उतरति जाति बेगि गंग गिरिवरते॥[1]

(३)

चमकत चारु पट पीत दामिनी की दुति,
दमकत दिव्य हार वकमाल दरसे।
भाषत 'रमेश' मोर चंद्रिका सुरेश चाप,
वंशीरव पीपी पपिहा की धुनि सरसे॥
जोत जगमगा अंग अंगनि जवाहिरात,
जोगन जमात जुरी मंजु रस बरसे।
गेह से न देह से न कोऊ को सनेह से,
न काम नेह मेरो एक श्याम जलधर से॥[2]

(४)

आजु औसि आवन को सौहनि जतायो मोहि,
याते मञ्जु रचना रचाई चित्रसारी की।
भाषत 'रमेश' वेश विशद बनाय वर,
बैठी साँझ ही सौं लखौं आश मनहारी की॥

१. 'रसिकविनोदिनी, (माघ-फाल्गुन, सं० १८६४ वि०), पृ० ८।
२. 'वही' (भाद्रपद, सं० १६६२ वि०), पृ० ६।

आलि देखु दारिद दुराइवे को द्वार द्वार,
सूपनि अवाज अब होति यह नारी की ।
हौं तो कहा दारिद दुराऊँ वह आयो नहि,
मन्द होन लगी दीप दीपति दिवारी की ॥[1]

(५)

भुजनि मृणाल कर पंकज नितम्ब घाट बार है
सेवार चारु नैन मीन वर है ।
भाषत रमेश त्यों अगाध सुषमा है
वारि चक्रवाक युगल विराजै पयोधर है ॥
मदन कृशानु और ग्रीषम दुहूँ को ताप
हरिबे को विधिना बनायो तोहि सर हैं ।
रैन दिन चैन नाहिं तो बिन लहत काहू
मान करिबे को यह कौन अबसर है ॥[2]

(६)

चपला चमक चारु बसन विराजै पीत
उड़त बलाका छटा मोतिन की लर की ।
भाषत रमेश इन्द्र चाप मोर चन्द्रिका त्यों
कूजत पपीहा धुनि मुरली अधर की ॥
शीतल सुगन्ध मन्द मारुत मनोज्ञ श्वास
जुगनू जमात जगै जोत जवाहर की ।
मन अकुलावै सांवरे की सुधि आवै जब
जब लखि पावै नैन शोभा जलधर की ॥[3]

★

१. वही 'रसिकविनोदिनी' (भाद्रपद, सं० १९९२ वि०), पृ० ६ ।
२. सुकवि (वर्ष ४, अंक २, मई, सन् १९३१ ई०), पृ० ४० ।
३. वही (वर्ष ४, अंक ३, जून, सन् १९३१ ई०), पृ० ४१ ।

रमाकांत मिश्र[1]

आप गया-जिला के 'मुरारपुर' नामक स्थान के निवासी थे। आपका जन्म सन् १८९२ ई० के २ नवम्बर को हुआ था।[2] पं० जगन्नाथ मिश्रजी के पुत्र थे। आपका बाल्यकाल कलकत्ता मे व्यतीत हुआ सन् १९०१ ई० में आप गया के टाउन स्कूल में चले आये। वहीं से इण्ट्रेन्स की परीक्षा पास करने के बाद आपने पटना-विश्वविद्यालय से सन् १९१४ ई० में बी० ए०, सन् १९१६ ई० मे एम० ए० और सन् १९११ ई० मे बी० एल० की परीक्षाएँ पास कीं। सन् १९१८-१९ ई० में आप टिकारी (गया) हाइस्कूल में प्रधानाध्यापक के पद पर नियुक्त हुए। यहीं से आपके साहित्यिक जीवन का आरम्भ होता है। सन् १९२० ई० से अध्यापन का कार्य छोड़कर आप गया मे ही वकालत करने लगे। किन्तु एक वर्ष वकालत करने के बाद ही असहयोग-आन्दोलन मे भाग लेने के कारण आप एक वर्ष के लिए जेल चले गये। कारावास-काल में आपको अनेक हिन्दी-पुस्तकों के अध्ययन करने का सुअवसर प्राप्त हुआ और परिणामस्वरूप आपने बहुत कुछ लिखा भी। हिन्दी के साथ-साथ उर्दू, फारसी और बँगला-भाषाओं पर भी आपका अच्छा अधिकार था। आपके हिन्दी-लेख निम्नलिखित पत्र पत्रिकाओं मे प्रकाशित होते रहे हैं—'प्रभा', 'माधुरी', 'चाँद', 'सुधा', 'कर्मयोगी', 'अभियान', 'हिन्दूपंच' आदि। आपकी कोई पुस्तककार रचना नहीं मिलती।

उदाहरण

(१)

जंगी कैदियों को मार डालने के बदले उनके जिन्दा रहने देने के कारण दास-प्रथा का जन्म हुआ। वहशी-जीवन में भोज्य-पदार्थों की कमी के कारण एक झुंड के लोग दूसरे झुंड के लोगों से जंग करते और दुश्मन के झुंड के प्राप्त लोगों को मारकर खाते थे। परन्तु पशु-पालन के कारण जब भोजन की कमी हट गई, तो लोग जंगी कैदियों को मार डालने के बदले जिन्दा रख छोड़ने और उनके श्रम से लाभ उठाने लगे। आज दास-प्रथा को हम कितना ही

---

१. इसी नाम के एक और साहित्यकार इटौंजा (लखनऊ) के थे, जो 'श्रीपति' उपनाम से रचनाएँ करते थे।—देखिए, 'हिन्दी-सेवी-संसार' (वही), पृ० २०१ और 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही), पृ० ५५९-६०।

२. 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० १४३। आपके परिचय-लेखन में आपके द्वारा दिनांक २८ नवम्बर, सन् १९५५ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण से पर्याप्त सहायता ली गई है।

बुरा कहे, लेकिन शुरु मे यह एक कृपा-युक्त संस्था थी। दास-प्रथा बुरी चीज है लेकिन नर-मास-भक्षण उससे भी ज्यादा खराब है। इतिहास से हमको यह शिक्षा मिलती है कि नर-मांस-भक्षण की प्रथा को हटाकर दास-प्रथा कायम हुई, इसलिए यह ज्यादातर सदाचार-पूर्ण है। सदाचार के कारण सामाजिक तरक्की नही होती है, बल्कि व्यावहारिक सुबीतों के कारण समाज मे तरक्की होती है, और इसी तरक्की के कारण सदाचार का विकास होता है।[1]

(२)

दक्षिण-भारत मे बहुत आधुनिक प्रजा-सत्तात्मक शासन के नमूने पाये जाते है। प्राचीन केरल में १८ वी सदी तक प्रथा-सत्तात्मक संस्थाएँ कायम थी। दक्षिण के शिलालेखों से पता लगता है कि प्रथा-सत्तात्मक आचार वहाँ बहुत थोड़े काल के पहले तक जारी था। चोल देश में बहुत-से ग्राम मिलकर सभा द्वारा ग्राम के स्थानिक कार्यों को चलाते थे। उक्कल तथा उत्तर-मेल्लर के शिलालेखों से प्राचीन ग्रामीण प्रजा-सत्तात्मक शासन-प्रणाली की हालत हम कुछ जान सकते हैं। डॉ० राधाकुमुद मुकर्जी ने मैसूर से एक निहायत अच्छी पुस्तक प्रकाशित कराई है। उससे हमको दक्षिण-भारत का बहुत कुछ हाल मिलता है। आजकल हमारे पास भारतीय प्रजातंत्र के स्मारक के रूप में केवल ग्राम-पंचायतें रह गई हैं। कही-कहीं ये पंचायतें इतनी संगठित है कि १९वी सदी में मेटशाफ साहब ने ग्राम-पंचायत की 'एक छोटे-से प्रजातंत्र' (Little Republic) से उपमा दी थी।[2]

★

---

१. 'सुधा' (मासिक, वर्ष ५, खण्ड २, संख्या ४, (मई, सन् १९३२ ई०), पृ० ४८९।
२. 'माधुरी' (मासिक, वर्ष २, खंड १, संख्या ४, दिसम्बर, सन् १९१३ ई०), पृ० ५९६।

रमेश प्रसाद

आप शाहाबाद-जिला के 'मुरार' नामक ग्राम के निवासी श्रीबक्शी लोकेश्वर प्रसादजी के पुत्र हैं।[१] आपका जन्म सन् १८९९ ई० (सं० १९५६ वि०) के २३ अप्रैल को हुआ था।[२] पटना-विश्वविद्यालय से सन् १९१९ ई० मे बी० एस-सी० की डिग्री प्राप्त करने के बाद आप बिहार नेशनल-कॉलेज मे 'डिमांस्टेटर' के पद पर नियुक्त हुए। फिर, एक वर्ष के बाद कीर्त्यानन्द आयरन ऐण्ड स्टील वर्क्स रूपनारायणपुर (बंगाल) में 'चीफ केमिस्ट' के पद पर रहे। सन् १९२१ से २४ ई० तक सरसातली फौण्डरी मे 'चीफ केमिस्ट' के पद पर कार्य किया और सन् १९२५-२६ ई० में जैन स्कूल, आरा मे विज्ञानाध्यापक होकर चले आये। इसके कुछ ही दिनों बाद, आपने 'रमेश प्रिंटिंग वर्क्स'[३] और 'रमेश मैनुफैक्चरिंग' की स्थापना की। एक पत्रकार के रूप में आपका सम्बन्ध 'बिहार-सहयोग' (सन्१९२५-२७ ई०) और 'बिहार ऐण्ड उड़ीसा फेडरेशन जर्नल' (सन् १९२५-२७ ई०) से रहा।

आपका साहित्यिक जीवन सन् १९१७ ई० से आरम्भ होता है। उसी वर्ष बिहार स्टूडेण्ट्स कानफरेंस के पूर्णिया-अधिवेशन में एक सुन्दर हिन्दी-रचना के लिए आप पुरस्कृत हुए थे। उसीके बाद 'माधुरी', 'सुधा', 'चाँद', 'शारदा', 'प्रभा', 'मर्यादा', सरस्वती', 'भविष्य' आदि पत्रिकाओं के विज्ञान-स्तम्भ के आप स्थायी लेखक बन गये। आपकी रचनाएँ अधिकतर विज्ञानविषयक ही हैं।

उदाहरण

(१)

यदि भू-कंप होने के पहले उसके होने की संभावना का ज्ञान हमें कुछ दिन पहले हो जाय तो बहुत-सी आमानुषिक प्राणहानि तथा अर्थ-क्षय आदि से बचाया जा सकता है। किन्तु इसके लिए भू-कंप होने के कारण को पूर्ण-रूप से जान लेना आवश्यक है। कैलिफोर्निया के डॉक्टर एँड्रूसी लासन ने अबतक भू-कंप-सम्बन्धी जो धारणाएँ थी, उन्हें भ्रांत बतलाकर अपना एक नया सिद्धान्त निश्चित किया है। आजकल जिस

---

१. आपके द्वारा दिनांक २७ जून, सन् १९५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।—देखिए, 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ६५३-५४) 'मिश्रबन्धुविनोद' (वही, पृ० ४८६) तथा 'बिहार-अब्दकोश (वही, पृ० ९७८)।

२. आपके पितामह श्रीनरेन्द्रनारायणजी उर्दू-फारसी के अच्छे विद्वान् और कवि थे।

३ इसी प्रेस से प० कृपानाथ मिश्र लिखित 'प्यास और श्रीकेदारनाथ मिश्र 'प्रभात'-लिखित 'ज्वाला' नामक पुस्तकें प्रकाशित हुई थीं। इस प्रेस के द्वारा हिन्दी-प्रचार-विषयक और भी कई महत्त्वपूर्ण कार्य हुए थे।

प्रकार पहले से वृष्टि का होना, आँधी का आना आदि बतलाया जा सकता है, उसी प्रकार इस सिद्धान्त के अनुसार भू-कंप होने के पहले ही उसका होना बतलाया जा सकेगा। इससे मनुष्य सावधान हो जायँगे, और विपज्जनक स्थान को छोड़कर निरापद स्थान को चले जायँगे, या ऐसे उपायों का अवलंबन करेंगे, जिनसे भू-कंप जनित विपत्ति का परिमाण बहुतकुछ कम हो जाय।

डॉक्टर लासन का मत है कि पृथ्वी की ऊपरी सतह की मिट्टी, पत्थर और धातु के स्तर उत्तर-मेरु के खिंचाव के कारण कुछ-कुछ उत्तराभिमुखी गति से खिसक रहे हैं। इस सचल स्तर की गहराई कहीं कई फीट है और कहीं मीलों तक है। यह चाल इतनी धीमी है कि आँख से देखकर जानलेना कठिन है। दिन-रात अविराम गति से यह स्तर उत्तर की ओर चला जा रहा है। पहाड़, पर्वत, मैदान, उपत्यका, सभी एक अदृश्य शक्ति के खिंचाव से अदृश्य गति से क्रमागत स्थानच्युत हो रहे है। जैसे धनुष की रस्सी (प्रत्यंचा) को खींचकर छोड़ देने से वह अपनी पूर्वावस्था में आ जाती है, उसी प्रकार ये सचल पत्थर, स्तर आदि उत्तरी ध्रुव के खिंचाव से किसी प्रकार, छुटकारा प्राप्त करने के कारण, फिर अपनी पूर्वावस्था में आना चाहते है। तब उस स्तर में एक भारी आन्दोलन उठ खड़ा होता है, जिसका साक्षात् परिचय भू-कंप के रूप में मिलता है।[1]

(२)

इस देश की शिक्षा-पद्धति उन्नतिशील देशों की शिक्षा-पद्धति से सर्वथा भिन्न है। यहाँ के विद्यार्थी जिस विषय को सीखने से दिल चुराते हैं। उसे छड़ी के हाथ सिखलाया जाता है। किन्तु, पाश्चात्य देशों में प्रत्येक विषय इस प्रकार मनोरंजक ढंग से विद्यार्थियों के सामने

---

१. 'माधुरी' (मासिक, वर्ष १, खण्ड २, संख्या १, जनवरी, सन् १६२३ ई०), पृ० ८६-८८।

रक्खे जाते है कि उसे बालक खेल ही समझकर सीख लेते हैं। व्याकरण ही को लीजिए। व्याकरण का हर एक नियम रटने के लिए यहाँ के बालक बाधित किये जाते है। किन्तु, पाश्चात्य देशों में इन्हे खेल ही द्वारा समझाया और सिखाया जाता है। .... एक श्रेणी के बालको का नाम जैसे बालक आसानी से स्मरण कर लेते है, उसी प्रकार व्याकरण के उन नामों को भी वे बात की बात मे याद कर लेते है। बालकों मे कोई-कोई मास्टरनाउन (Noun) बनता है, कोई मास्टरवर्ब, कई मास्टरसेन्टेण्स और कोई मास्टरफ्रेज् या क्लाज् कहिए, व्याकरण सिखाने की अभिनव प्रथा कैसी है ?

भारतवर्ष की शिक्षा-पद्धति बालको के लिए भारस्वरूप है, किन्तु अन्य देशों की शिक्षा-पद्धति वहाँ के विद्यार्थियों के लिए मनोरञ्जन। इस देश की शिक्षा की बागडोर जिन लोगो के हाथ में है, क्या वे न्यूयार्क के 'फारेस्ट-हिल्स' स्कूल से सबक् सीखेंगे ?'[1]

राघवप्रसाद सिंह 'महन्थ'

आप दरभगा-जिला के 'बैनी' ग्राम निवासी स्व० जगदेवनारायण सिंह[2] के पुत्र थे, आपका जन्म स० १९४५ वि० की मार्ग शुक्ल-तृतीया को हुआ था।[3] आपकी आरम्भिक शिक्षा आपके पिताजी की देखरेख मे गाँव की पाठशाला में ही हुई। सन् १९११ ई० मे प्रथम श्रेणी से मैट्रिक पास करने के बाद उच्च शिक्षा के लिए आपने मुजफ्फरपुर के जी० बी० बी० कॉलेज मे नाम लिखवाया, किन्तु अस्वस्थ हो जाने के कारण आपको अपनी शिक्षा का क्रम सदा के लिए भग ही कर देना पडा। इसके बाद कुछ दिनो तक आप मुजफ्फरपुर के कमिश्नरी ऑफिस मे कार्य करते रहे। लेकिन अपनी प्रकृति एवं अभिरुचि के प्रतिकूल

---

१. 'चाँद' (मासिक, वष ६, खण्ड २, सख्या ३, जुलाई, सन् १९२९ ई०), पृ० ३१३।

२. आप एक प्रतिष्ठित जमीन्दार और हिन्दी, उर्दू, फारसी के अच्छे विद्वान् थे।

३. 'बिहार के नवयुवक-हृदय' (वही, पृ० १), 'गगा' (वही, प्रवाह १, तरंग जून, सन् १९३१ ई०, पृ० ७९९), तथा 'उत्तर बिहार' (साप्ताहिक, २ मार्च, सन् १९५९ ई०, पृ० ५)। आपके परिचय-लेखन में उक्त सामग्री के अतिरिक्त 'जयन्ती स्मारक-ग्रन्थ (वही, पृ० ६६७) तथा मिश्रबन्धुविनोद (वही, पृ० ४४२) से भी सहायता ली गई है।

पाकर आपने उसे छोड़ मुजफ्फरपुर में ही एक स्टेशनरी की दूकान कर ली और स्थायी रूप से मुजफ्फरपुर में ही रहने लगे।

आप सहज स्वभाव के एक सरल व्यक्ति थे। हिन्दी, हिन्दू और हिन्दुस्तान के प्रति आपके हृदय में अपार श्रद्धा और स्नेह था। सन् १९२१ ई० के असहयोग आन्दोलन के समय विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार आपने भी खुलकर किया था। आपकी दूकान 'सिन्हा ऐण्ड कम्पनी' में केवल स्वदेशी वस्तुएँ ही बिकने लगी थी।

संस्कृत और हिन्दी के अतिरिक्त आपको उर्दू-फारसी का भी अच्छा ज्ञान था। अपनी छात्रावस्था से ही आप साहित्य-सेवा करने लगे थे। मैट्रिक में पढ़ते समय ही आपकी कविताएँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होने लगी थी। आपकी गणना बिहार-हिन्दी-साहित्य सम्मेलन के जन्मदाताओं में की जाती है। बिहार हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का नवाँ अधिवेशन जो १५,१६ अप्रैल को मुँगेर में हुआ था, उसमें आप सर्वसम्मति से प्रधान-मन्त्री के पद पर निर्वाचित हुए थे। आप अखिलभारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन (प्रयाग) की स्थायी समिति के सदस्य भी थे। इसके अतिरिक्त आपका सम्बन्ध अनेक साहित्यक-सांस्कृतिक संस्थाओं से था। आप एक कुशल चित्रकार थे। आपका बाल-मनोविज्ञान एवं प्रकृति का अच्छा अनुभव था। आपकी रचनाएँ अधिकतर बालोपयोगी ही हैं। आपकी स्फुट रचनाएँ 'प्रताप' 'देश', 'तरुण भारत,' 'पाटलिपुत्र', 'माधुरी', 'बालक', विद्यार्थी' बालसखा,' 'शिशु' आदि पत्रिकाओं में प्रकाशित मिलती है। आपकी कविताओं का एक संग्रह सन् १९१८ ई० में 'राष्ट्रीय संगीत' के नाम से प्रकाशित हुआ था। आपने 'ईसप्स फेबुल्स' के ढंग की एक बालोपयोगी कला-पुस्तक की रचना 'कला-मंजरी' के नाम से की थी, जो पुस्तक-भण्डार से प्रकाशित होनेवाली थी। अपने जीवन के अन्तिम दिनों में आप एक बालोपयोगी 'पद्य बद्ध-रामायण' की रचना कर रहे थे, जो दुर्भाग्यवश पूरी न हो सकी। सं० १९८७ वि० (सन् १९३१ ई०) की चैत्र-पूर्णिमा को आप परलोक सिधार गये।

उदाहरण

(१)

जननी तुअ पद कोटि प्रणाम।

चमकत सुभग मुकुट तव सिर पै, शैलराज हिम-धाम।

सुर-नर-मुनि सबके मन मोहत, सुखकर दृश्य ललाम॥

विष्णुपदी रविजा युग सरिता, मणि-माला सित श्याम।

विलसति कलुष-राशि-विनशावनि, तव उर शोभा धाम॥

बसन-धर्म शुभ-गात अनूपम पूरत सब मनकाम।

अंग-अंग बहुमूल्य-आभूषण, सुर-मंदिर अभिराम॥

सजग भृत्य तब घहरत निसिदिन, हिन्द-महोदधि नाम।
चरण धोइ मृदु चरण-जलज-रज, धरत शीश बसु याम ॥
सिल्प, ज्ञान, विज्ञान, गान अरु, बल, विद्या, सग्राम।
सकल कला तेरो जग छायो, देश देश सब ठाम ॥
विश्वभरणि ! त्रिभुवन-पति-प्यारी, धन भारत गुणधाम।
तब महिमा 'राघव' किमि वरणै निज मुख बरन्यो राम ॥[1]

(२)

जहाँ वेद-ध्वनि नित होती थी रहत। था गूँजत वर व्योम।
थे निष्काम-कर्म-रत सबही नित होते जप, तप, व्रत, होम ॥
वही पुण्य-महि लखो ! आज है कैसी अधरम से भरपूर।
हे आरत-दुख-भंजन केशव ! कब होगा भारत-दुख दूर ॥
जहाँ सरस्वती-धाम बना था, विष्णु-प्रिया का था भंडार।
वही अविद्या आज बसी है, हुआ दरिद्रादेव्यागार।
हाथ पसारत सबके आगे, क्षुत्पीड़ित होकर मजबूर।
हे भारत-दुख-भंजन-केशव ! कब होगा भारत दुख दूर ॥[2]

(ठाकुर) राजकिशोर सिंह[3]

आप शाहाबाद-जिला के 'एमन-डिहरी' (सहसराम) नामक स्थान के निवासी श्रीठाकुर रामप्रकाश सिंह के पुत्र थे। आपका जन्म स० १९५१ वि० (सन् १८९४ ई०) की श्रावण अमावास्या को हुआ था।[4] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा ग्राम-पाठशाला मे

---

१. 'बिहार के नवयुवक-हृदय' (वही), पृ० ४-५ तथा 'मिश्रबन्धुविनोद' (वही, चतुर्थ भाग), पृ० ४४२-४३।
२. वही, पृ० ५।
३. इस नाम के एक और साहित्यकार हो गये हैं, जिनका जन्म सन् १९१९ ई० में हुआ था। —देखिए, 'हिन्दीसेवी संसार' (वही), पृ० २०२-३।
४. आपके द्वारा दिनांक ६ अप्रैल, सन् १९५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री के अनुसार। —देखिए, 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही), पृ० ६५५ भी।

हुई। वहाँ से छात्रवृत्ति के साथ लोअर प्राइमरी की परीक्षा पास करके आप सहसराम (शाहाबाद) चले गये। सहसराम हाइस्कूल से आपने छात्रवृत्ति लेकर 'मिड्ल' की परीक्षा पास की। सन् १९१४ ई० मे उसी हाइस्कूल से आपने एण्ट्रेन्स को परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास की। इस परीक्षा के बाद आपका प्रवेश बी० एन्० कॉलेज पटना मे हुआ। वहाँ से आइ० ए० पास करके आप बनारस-हिन्दू-विश्वविद्यालय में बीस रुपये प्रतिमास की छात्रवृत्ति लेकर पढ़ने लगे। बी० ए० पास करने के बाद् आप पटना-विश्वविद्यालय के एम्० ए० वर्ग और लॉ-कॉलेज' दोनों मे ही प्रविष्ट हुए। इसी समय सन् १९२० ई० मे असहयोग आन्दोलन छिड़ा। अपना अध्ययन छोडकर आप उस आन्दोलन में सम्मिलित हो गये। आन्दोलन मे सम्मिलित होने के कारण आपको एक वर्ष की जेल की सजा हुई। सन् १९२१ ई० में जेल से लौटकर आप कलकत्ता चले गये। कलकत्ता में रहते हुए आपने सन् १९२४ ई० मे कलकत्ता-विश्वविद्यालय से वकालत की परीक्षा पास की। कलकत्ता, आरा आदि स्थानो मे रहकर आपने हिन्दी-प्रचार का कार्य बड़ी तत्परता के साथ किया। कलकत्ता मे रहते हुए आपने 'भारत-मित्र' नामक पत्र के सहकारी सम्पादक का कार्य-सम्पादन बडी सफलता के साथ किया। वहाँ रहकर आप राजनीति मे सक्रिय भाग लिते रहे। तत्कालीन 'गया-कांगिरेस-अधिवेशन' में अपने पत्र की ओर से प्रेस-प्रतिनिधि का भी काम किया था। राष्ट्रीय विचारधारा के साथ-हो-साथ आप मे हिन्दू-संगठन की ओर भी काफी झुकाव था। अतएव, जब हिन्दू महासभा के प्रथम पत्र 'अग्रसर' का प्रकाशन हुआ तो आप ही उसके सम्पादक हुए। सन् १९२४ ई० मे कलकत्ता में हिन्दू महासभा का जो अधिवेशन स्व० लाला लाजपतराय के सभापतित्व में हुआ, उसके संयोजक आप ही थे। उसी समय सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी वीर सावरकरजी के सकेतानुसार आपने हिन्दू-संगठन' नामक एक अच्छी पुस्तक लिखी। हिन्दू-संगठन' के बाद राष्ट्रीय सेवाकार्य करते हुए आपने 'हंगरी का अहिंसात्मक असहयोग' नामक एक पुस्तक लिखी। कलकत्ता से लौटकर सन् १९२६ ई० मे आपने सहसराम' में वकालत शुरू की। आपकी वकालत चल निकली। इसी समय आपने हिन्दू-मुस्लिम-दगा से पोडित हिन्दुओ की ओर से आरा-कचहरी मे मुकदमे की पैरवी की। आपके द्वारा निर्भीक और सुदृढ कदम उठाये जाने के कारण हिन्दुओ की जान बची तथा तत्कालीन अँगरेज स्पेशल मजिस्ट्रेट को बदली हो गई।

आपके द्वारा लिखित एवं प्रकाशित ये पुस्तकें हैं—(१) हंगरी का अहिंसात्मक असहयोग,[१] (२) हिन्दू-संगठन,[२] (३) ब्रिटिश राज-रहस्य[३] (४) एशिया का जागरण[४] और (५) ईची रहस्य (प्रथम भाग)[५]।

सन् १९४४ ई० के ११ दिसम्बर को आपका परलोकवास हुआ।

---

१. सन् १९२१ ई० में रचित।

२. सन् १९२४ ई० में प्रकाशित।

३. सन् १९२७ ई० में भारत-मित्र, प्रेस से प्रकाशित।

४. सन् १९२५ ई० में हनुमान प्रेस, कलकत्ता से प्रकाशित।

५. प्रथम विश्वविख्यात जापानी राष्ट्रीय उपन्यास 'लगवा' का स्वतन्त्र अनुवाद। दुर्भाग्यवश, इसका द्वितीय भाग प्रकाशित न हो सका।

उदाहरण

(१)

'खगवा' जापान का एक बड़ा ही प्रसिद्ध लेखक है। उसने काव्य, नाटक, धर्म और विज्ञान सम्बन्धी पुस्तकें लिखी हैं। प्रत्येक विषय में उसे सफलता प्राप्त हुई है और उसकी किताबें बडे चाव से पढ़ी जाती है। यह उपन्यास उसने कोई सोलह वर्ष पहले लिखना आरम्भ किया था। लेकिन पूरा किये बिना ही छोड़ दिया। १६२० ई० में अपने प्रकाशक की प्रार्थना पर उसने इसे पूरा किया। पुस्तक प्रकाशित हुई तो इसकी मांग इतनी बढ़ी कि एक महीने के भीतर ही इसका दूसरा संस्करण निकालना पड़ा। मुझे इस किताब की खबर सबसे पहले १६२४ ई० के मई महीने में लगी। मैं एक अंगरेजी पत्र में उन किताबों की सूची देख रहा था, जिनकी बिक्री बहुत अधिक है। उसी सूची में मैंने देखा कि 'खगवा' की इस पुस्तक के दो-सौ संस्करण हो चुके हैं। दसवें संस्करण तक डेढ़ लाख पुस्तके बिक चुकी थी। इस हिसाब से कोई तीस लाख पुस्तकें बिकी होंगी; क्योंकि अब भी इसकी माँग कम नहीं हुई है।[1]

(२)

इसी समय उसे स्मरण हो आया कि पिता का भाव उसके प्रति कैसा है। उसके पिता, विमाता और वह स्त्री उसकी बहिन के प्रति क्यों इतने निर्दय हो गये है। विद्वानों का यह कथन कि यह संसार एक समुद्र है और मनुष्य जीवन उस पर बहने वाली एक डोंगी के समान है, ठीक नहीं। उसने सोचा कि यह जीवन टकराती हुई लहरों के समान है, जो हवा के झोंके से प्रतिक्षण उठती और

---

१. 'ईची-रहस्य' (ठाकुर राजकिशोरप्रसाद सिंह, सं० १६८२ वि०), पृ० ७।

गिरती है, शान्ति-सुख कभी भी आने नहीं पाता। वह देखो, समुद्र और आकाश मिले हुए जान पड़ते हैं; पर यदि कोई वहाँ से आकाश छूने के लिए ऊपर उचके तो आकाश फिर भी उतना ही दूर रहेगा। समुद्र की ऊँची लहरें जो हवा के झोंके से और ऊँची उठकर आकाश को छूती जान पड़ती हैं, हवा बन्द हो जाने पर पूर्ववत हो जायँगी और फिर लहरों से दूर वही पुराना आकाश दिखाई देने लगेगा। इसी प्रकार देहात में रहकर अपने आदर्शों को कार्यान्वित करने का जो स्वप्न है वह शीघ्र भङ्ग हो जायगा। रोने के सिवा और कुछ रहेगा ही नहीं।'[1]

राजवल्लभ सिंह 'वल्लभ'

आप सारन-जिला के 'दफ्तरपुर' (डोरीगंज) नामक स्थान के निवासी श्रीशिव-प्रसाद सिंहजी[2] के आत्मज हैं। आपका जन्म सन् १९०० ई० की ९५ जनवरी को हुआ था। आप की प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। तदनन्तर, आपने कलकत्ता-विश्वविद्यालय से सन् १९२३ ई० में मैट्रिक की परीक्षा पास की। इसके बाद संस्कृत-महाविद्यालय, कलकत्ता से सन् १९२५ ई० में आपने आइ० ए० की परीक्षा पास की। इस परीक्षा के बाद आपने बी० ए० तक उसी महाविद्यालय में अध्ययन किया। सन् १९३० ई० में आपने रघुनाथ सेमिनरी स्कूल, गुलटेनगंज (छपरा) में अध्यापन-कार्य शुरू किया। उस समय से अद्यावधि आप वहीं कार्यरत हैं।

आपकी साहित्यिक रचनाएँ सन् १९२० ई० से ही प्रकाश में आने लगी थीं। हिन्दी-प्रचार के प्रति आप बड़े ही निष्ठावान् रहे हैं। छात्रों के द्वारा आपने अपने लिखित एवं अन्य नाटकों का अभिनय करवाकर हिन्दी की सेवा करना अपना व्यसन-सा बना लिया है।[3] आपकी कविताएँ यत्र-तत्र असंगृहीत रूप में बिखरी हैं।

आपके द्वारा लिखित 'राष्ट्रलहरी' (प्रथम भाग), नामक एक पुस्तक का प्रकाशन श्रीसुबोधप्रसाद सिंह, दहियावाँ, छपरा ने किया था। उक्त पुस्तक के अतिरिक्त आपकी ये पुस्तकें अद्यावधि प्रकाश में नहीं आ सकी हैं—

---

१. 'ईंची–रहस्य' (वही), पृ० ५४।

२. इनके पूर्वज राजस्थान के 'मैनपुर' नामक स्थान से आकर यहाँ बस गये थे। — आपके द्वारा दिनांक १ जून, १९५६ ई० को प्रेषित एवं परिषद् के 'साहित्यिक-इतिहास-विभाग' में सुरक्षित विवरण के आधार पर।

३. वही।

१. बल्लभ सतसई,[1] २. राष्ट्रलहरी (द्वितीय भाग),[2] ३. सुलभ बन्धु,[3] ४ बल्लभ-बन्धु,[4] ५. पुत्र-प्रेमाञ्जलि,[5] ६ मोहनमाला (प्रथम एवं द्वितीय भाग),[6] ७ भक्ति-मंजरी,[7] ८. श्याम-स्नेह,[8] ९ हरिजन,[9] १० खादूराम,[10] ११. भाग्यचक्र,[11] १२. होनिहार बहु,[12] १३ बणिबेटो,[13] १४. दूसरा जन्म,[14] १५. होली,[15] १६. भरथरी,[16] १७ आत्मगीता,[17] १८. चरखा-संगीत,[18] १९. प्रकृति-प्रेम,[19] २०. प्रेम-पुकार,[20] २१. प्रेमोपहार,[21] २२. समाज-सेवा,[22] २३. हार-सतक,[23] २४. सनेह-सोपान,[24] २५. प्रेम-पराग,[25] २६. विरह-वेदना[26] २७. प्रेम प्रसून,[27] २८ महँगू-कथा,[28] २९ रणदुन्दुभी[29] तथा ३०. विनोदमंजरी[30]। सम्प्रति आप छपरा के गुलटेनगंज-स्थित विद्यालय में ही प्रधानाध्यापक के पद पर कार्यरत हैं।

---

१. सन् १९२० से ३० ई० तक लिखित दोहों का संग्रह।
२. सन् १९२० से ४७ ई० तक लिखित राष्ट्रीय गीतों का संग्रह।
३. शेक्सपीयर के 'ऐज यू लाइक इट' नाटक का हिन्दी-अनुवाद। सन् १९२७ ई० में लिखित।
४. शेक्सपीयर के 'जूलियस सीजर' नाटक का हिन्दी-अनुवाद। सन् १९२७ ई० में लिखित।
५ अपने प्रथम पुत्र 'सुरेन' की मृत्यु पर सन् १९२९ ई० में रचित।
६ कृष्णप्रेम-सम्बन्धी सवैयों एवं गीतों का संग्रह।
७ भजनों का संग्रह।
८. श्रीकृष्ण के प्रेम में लिखित ५० गीतों का संग्रह।
९. भोजपुरी में लिखित सामाजिक एकांकी नाटक। सन् १९ ७ ई० में लिखित।
१०. भोजपुरी में लिखित राजनीतिक एकांकी नाटक। सन् १९४८ ई० में लिखित।
११. भोजपुरी में लिखित सामाजिक एकांकी नाटक। सन् १९४९ ई० में लिखित।
१२. भोजपुरी एकांकी नाटक। सन् १९५० ई० में लिखित।
१३. वही, सन् १९५० ई० में लिखित।
१४. वही, सन् १९५१ ई० में लिखित।
१५. वही।
१६. सामाजिक एकांकी नाटक। वही, सन् १९४८ ई० में लिखित।
१७ हरिगीतिका छन्द में आध्यात्मिक रचनाएँ।
१८. भोजपुरी-भाषा में रचित चरखा-सम्बन्धी गीत।
१९. प्रकृति-सम्बन्धी गीतों का संग्रह।
२०. भक्ति-सम्बन्धी गीतों का संग्रह।
२१ स्वागत-विदाई-गीतों का संग्रह।
२२. सामाजिक उत्थान-सम्बन्धी गीतों का संग्रह।
२३. खड़ीबोली में रचित।
२४. भक्ति-सम्बन्धी गीतों का संग्रह।
२५. वही।
२६. वही।
२७. वही।
२८. कथा-काव्य।
२९. युद्ध-सम्बन्धी गीतों का संग्रह।
३०. स्फुट रचनाओं का संग्रह। आपने अँगरेजी में 'माइ गॉस्पेल' नामक भी एक रचना की थी।

उदाहरण

(१)

जे न पढ़े कविता कबहूँ, अरु साहित-सागर जे न समाये,
जे न किये हरि-भक्ति कबौं, अरु जे न किये उपकार पराये।
जे न दिये सत संगति को, अरु जे नहि व्यापक प्रेम लगाये,
साँच न भाषण भाषत जे जन, 'बल्लभ' ते जन जन्म गँवाये ॥

× × × ×

साँच सदा सबसे कहते, पर के उपकार में शानति पाते,
प्रेम लगा सबसे रहते, कबहूँ नहि राह कुचाल के जाते।
जो जब हालत हो सहते, सत-सगति में दिनरैन बिताते,
श्रेष्ठन के गुण को गहते, एते 'बल्लभ' सज्जन के गुण गाते ॥[१]

(२)

जो जन चूमे हैं वारि बहु, अरु फूलन के बहु तूरे कली हैं,
पंकज के रस को चूसते, अरु जो जन देखे अनेक अली है।
साहित में जिनका गम है, ललना की लीलाओं के जे अमली हैं,
'बल्लभ' वे जन जानतु है, कविता और कामिनी कौन भली हैं ॥

× × × ×

जे प्रेम मारग पै पगुधारत, स्वारथ सुख ते त्यागे परैंगे,
प्रेमिन के सुख कारन मैं, अपने सब दुःख सहर्ष सहैंगे।
कैसेहुँ बाधक आइ परे, पर पीठ दिखाई न पीछे ढरैंगे,
'बल्लभ' जीवन साँच बनाइके, अन्त समय निरबान लहैंगे ॥[२]

---

१. आपके द्वारा तिथि १ जून, १९५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री से।

२. आपके द्वारा प्रेषित सामग्री से।

(३)

मोहन मोर सुआतम हौ, परमातम हौ मोहि देत दिखाई।
शंकर शेष महेश अहौ, अमरावति के पति जात कहाई।
ईश रमापति राम अहौ, परिपूरन राम हो जात गिनाई।
'बल्लभ' मोर सुमंगल हौ, सुखराशि अहौ मोहि प्रेम लगाई॥

× × × ×

मोहन प्रेम पदारथ को लहिबे को, करौ हम कौन उपाई।
ना कछु गेंठि मे दाम अहै, अरु ना कछु दूसर चातुरताई।
ना बल बुद्धि विशेष अहै, भगति नही भाव न सुन्दरताई।
'बल्लभ' तो फिर कैसे मिले, यह सालत सोच हिये अधिकाई॥[1]

(४)

शक्ति-संचय पुण्य है, दुर्बलता है पाप।
दुर्बलता के त्यागते, सिद्धि पधारे आप॥
शक्ति को अपनाय के, चरित्रवान बनि जाव।
'बल्लभ' अपने आप में, जीवन का सुख पाव॥
स्वारथ दुख का मूल है, परमारथ सुख मूल।
'बल्लभ' ताते तू बनो, परमारथ अनुकूल॥
विना कर्म निष्कर्मता, नहि पावे है कोय।
ताते कर्म करते चलो, 'बल्लभ' निश्छल होय॥[2]

★

---

१. आपके द्वारा प्रेषित सामग्री से।
२. वही।

राजराजेश्वरीप्रसाद सिंह 'प्यारे'

आप शाहाबाद-जिला के 'सूर्यपुरा' नामक स्थान के निवासी थे।[1] आपका जन्म सं० १९२२ वि० (सन् १८६५ ई०) मे हुआ था।[2] आपके पिता का नाम दीवान श्रीरामकुमार सिंह[3] था। आप बचपन से ही बहुत कुशाग्रबुद्धि थे। आरम्भ मे आपको घर पर ही उर्दू, फारसी, अरबी और संस्कृत की शिक्षा दी गई। इसके बाद सुयोग्य शिक्षको की देखरेख मे आपने अँगरेजी-भाषा की भी पर्याप्त शिक्षा प्राप्त की। स्कूल मे आपकी गणना मेधावी छात्रो मे होती थी। अपनी तीव्र बुद्धि एवं विलक्षण स्मरण-शक्ति के कारण आप अपने सहपाठियो मे बराबर सर्वप्रथम होते रहे। सं० १९३७ वि० मे पन्द्रह वर्ष की आयु मे आपका शुभ विवाह परमानन्दपुर (मुजफ्फरपुर) के प्रतिष्ठित रईस दीवान चतुर्भुज सहायजी की कल्याणी कन्या से हुआ। इसके एक वर्ष बाद ही आपके पिताजी का स्वर्गवास हो गया। परिणामस्वरूप, आपके ऊपर आपकी विशाल जमीन्दारी का सारा कार्य-भार आ पडा। भारतेन्दु बाबू से आपकी घनी मैत्री थी। आपके दरबार मे कवियो, गायको और कलाविदों की त्रिवेणी तरंगित होती रहती थी। साहित्यसेवियो और कवियो का आप बडा सम्मान करते थे। आपके यहाँ लछिराम, पद्माकर (प्रभाकर के पौत्र), सन्त, श्यामसेवक आदि कविगण विराजमान थे। मुशायरे और कवि-सम्मेलन तो प्राय होते रहते थे। आपके दरबार मे संगीतकारों का भी बडा आदर था। आप स्वयं एक अच्छे सगीतकार थे। स्वयं पहलवान होने के कारण आपके यहाँ पहलवानो की भी प्रतिष्ठा थी। सन् १८९४ ई० मे आपकी राजभक्ति एवं अन्य सद्गुणो से प्रसन्न होकर तत्कालीन सरकार ने आपको 'राजा' की उपाधि प्रदान की थी। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर, सर रमेशचन्द्र दत्त, महाराजा यतीन्द्रमोहन ठाकुर आदि सम्भ्रान्त व्यक्तियो से आपकी बडी घनिष्ठता थी। आपको जनता के हित का खयाल बराबर रहता था और इसके लिए आपने समय-समय बडी-बड़ी रकमे खर्च की थी।

आपका पुस्तक-प्रेम भी प्रशंसनीय था। आपकी पढ़ी विभिन्न भाषाओ की पुस्तको का एक संग्रहालय-सा हो गया था, जो आज भी वर्त्तमान है। आपको हिन्दी, अँगरेजी, संस्कृत, उर्दू, फारसी, अरबी, बँगला आदि के अतिरिक्त पश्तो, गुरखा, उडिया आदि कई अन्य भाषाओ का भी अच्छा ज्ञान था। आपकी अधिकतर रचनाएँ व्रजभाषा मे मिलती हैं। यो, उर्दू-फारसी और बँगला मे भी आप रचनाएँ करते थे। आपका लिखा एक 'दीवान' था, जिसका अब पता नही चलता। आपकी रचनाओ का एक संग्रह सन् १९३७ ई० मे प्रकाशित हुआ था। इसी सग्रह मे आपके द्वारा अनूदित 'चित्रांगदा', 'वीरबाला' और 'स्वाधीनबाला' के अंश भी संगृहीत है। आप गौर वर्ण और मझोले कद के थे। शरीर

---

१. शाहाबाद-जिला के अन्तर्गत 'सूर्यपुरा' एक प्राचीन-प्रतिष्ठित रियासत है। राजा राजराजेश्वरी प्रसाद सिंह 'प्यारे' उक्त राज्य के ही अधीश्वर थे।

२. 'श्रीराजराजेश्वरी-ग्रन्थावली' (राजराजेश्वरीप्रसाद सिंह 'प्यारे', सन् १९३७ ई०), पृ० ६। 'देखिए, 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० १२५, ३०३, ५४०, ६३० तथा ६४८ भी')।

३. ये शिव-पार्वती के अनन्य उपासक थे। इन्होंने कुमार' उपनाम से भक्तिपक्ष की अनेक रचनाएँ भी की थीं। ये सं०१९३८ वि० की चैत्र-शुक्ल द्वादशी को परलोकगामी हुए।

गठीला, सुडौल, बलिष्ठ और सुदृढ था। बडी-बडी आँखें और काले घुँघराले केश बड़े मनोहर लगते थे।

सं० १९६० की चैत्र शुक्ल-नवमी (सोमवार), तदनुसार दिनाक ६ अप्रैल, सन् १९०३ ई० को, ३७ वर्ष की अवस्था मे, अकस्मात् आपकी जीवनलीला समाप्त हो गई।[1]

उदाहरण

(१)

कैसो जप जोग ब्रत नेम ग्यान ध्यान कैसो,
कैसो प्रानायाम चित्त इनमे न नाखिये।
लहिए अमित सुख, लूटिये अनन्द-रासि,
याहि को हिये मे दृढ़ ध्यान धरि राखिये।
फेंकिये मयूख, ढरकाइए पियूष-घट,
'प्यारे' याही रस को सु बार-बार चाखिये।
भाखिये न और कछु, रहिए सुमौन सदा,
भाखिये जो मुख ते तो प्रेम-प्रेम भाखिये॥[2]

(२)

अति टेढ़ो सनेह को मारग है, बिन जाने कोऊ ना निगाह करै,
बदनाम जो होय तौ होय सखी, पर 'प्यारे' कबौ नहिं आह करै
नहिं नेकहुँ चौचँद सो बिचलै, बरु औरहु यामें उचाह करै,
सुख यामे मिलै कै मिलै दुख ही, पर नेह करै तौ निबाह करै॥[3]

(३)

समुझावन को नहिं काम कछू, मन 'प्यारे' पिया को दियो सो दियो,
मिलि गाँव चवाव करो सिगरो, सुकलंक को टीको लियो सो लियो।

---

१. बिहार में उर्दू-मिश्रित हिन्दी की चलती-चुभती भाषा के अनुपम शैलीकार तथा सुप्रसिद्ध उपन्यासकार राजा राधिकारमणप्रसाद सिंह आपके ही सुपुत्र थे। आपके पौत्र श्रीउदयराजसिंह भी हिन्दी की वर्त्तमान पीढी के प्रमुख उपन्यास-लेखकों मे हैं।

२. 'श्रीराजराजेश्वरी-ग्रन्थावली' (वही), पृ० ३।

३. 'श्रीराजराजेश्वरी-ग्रन्थावली' (वही), पृ० ५।

अब तो कुल नेम बिसारी सखी, छकि प्रेम को प्यालो पियो सो पियो,
गुरु लोग भले ही रिसाइँ हमैं, नँदनन्द सो नेह कियो सो कियो ॥[१]

(४)

केलि कै सोई मयंकमुखी, अलसाने सुगात मनोज मनोहर,
सोहत दाग नखच्छत के, स्रम-सीकर ते अँगियाहू भई तर।
'प्यारे' कपोल पै आनि लुरी लट, एक अमोल अडोल छटा धर,
ऐसी लसै सुखमा तिनकी सु मुयो अहिराज मयंक के ऊपर ॥[२]

(५)

कौन पै रोस करो इतनो, भृकुटी धनु कानन लों तनि जूट्यौ,
खंजन नैन प्रबाल भए, अँसुआ गिरै ज्यों मुकुताहल छूट्यौ।
जाति खिची हौ इती तेहिते, जेहि के सँग माँह सदा सुख लूट्यौ,
प्रेम तो साँचो है काँचो धगा, इत गाँठ परी सजनी उत टूट्यौ ॥[३]

(६)

रूप दियो जु विधाता तुम्हे, तो अनीति के बीजन बोय ना छीजिये,
चाहिये सील दया हु कछू, पिय 'प्यारे' पै नेक मतौ सुभ लीजिये।
होय बिहाल गिरैंगे सबै, यह बात प्रमान कै मेरी पतीजिये,
कीजिये पाप न एतो हहा, इन नैनन में कजरा नहिं दीजिये ॥[४]

(७)

ख्याति मिथ्या है, वीरत्व मिथ्या है, आज जाना। सप्तलोक आज मुझे स्वप्न बोध होता है। केवल तुम्ही पूर्ण, तुम्हीं सर्व्व, तुम्ही विश्व-ऐश्वर्य ! एक स्त्री, किन्तु सकल दैन्य का महाअवसान ! सकल कार्य

१. 'श्री राजराजेश्वरी-ग्रन्थावली' (वही), पृ० ५।
२. वही, पृ० १५।
३. वही, पृ० २४।
४. वही, पृ० ४१।

की सुविश्रामस्वरूपिनी ! न जाने क्यो अकस्मात् तेरे देखते ही मुझे बोध होने लगा वह आनन्द, जो प्रथम प्रत्यूष को तपन की प्रथम किरण से अंधकार महाअर्णव से शतदल की सृष्टि होने पर उठा था दिग्विदिग उन्मेषित होकर मुहूर्तमात्र मे । संसार के और समस्त पदार्थ तो जाने जाते है थोड़ा-थोड़ा, धीरे-धीरे, बहुत दिनो में; किन्तु तुम्हे देखते ही तुम्हारा देख चुका सब कुछ समस्त, तथापि होता नही शेष ![1]

(८)

सैन्यगण, महावीर शिलवच्छ का असीम प्रताप और आश्चयप्रद युद्ध-कौशल तुमलोगो को अविदित नही है । कल तुमुल सग्रामानल प्रज्वलित होगा। आर्य्यकुल के गौरव तुम्ही लोग हो, तुम्हीं लोग भारत के प्रिय पुत्र हो । भारत को जो आशा-भरोसा है, केवल तुम्ही पर है । देश के हितार्थ और पराये सुखार्थ जो शरीर-त्याग करता है वह स्वर्ग को चला जाता है, इस लोक में यशी होता है और परलोक मे अक्षय अनन्त सुख भोगता है । कल यदि समरानल में वृद्धवनिता-पर्यन्त भस्मीभूत होयँ, जगत में यदि आर्य्य नाम पर्य्यन्त लोप हो जाय, तथापि एक मनुष्य भी जीवित रहते इस भूमि को म्लेच्छों के हस्तगत न होने दें, सब आदमियो को यही प्रण करना उचित है ।[2]

राजाराम मिश्र

आप शाहाबाद-जिला के 'चौबेपुर' (ब्रह्मावार) नामक ग्राम के निवासी पं० अवडेर मिश्र के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९५४ वि० (सन् १८५७ ई०) के श्रावण शुक्ल-पचमी (बृहस्पतिवार को हुआ था ।[3] आपकी शिक्षा-दीक्षा ग्राम-विद्यालयो मे ही हुई। आप

१. 'श्रीराजराजेश्वरी-ग्रन्थावली' (वही), पृ० १४७ ।

२. वही, पृ० १७४ ।

३. श्रीसिद्धेश्वरीप्रसादजी द्वारा दिनांक २० सितम्बर, १९३८ ई० को प्रेषित एवं परिषद् के साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री के आधार पर ।

काव्य-रचना मे सिद्धहस्त थे। आपके द्वारा लिखित एक कविता-पुस्तक 'कुँवर-पचासा' का पता चलता है। इस पुस्तक के केवल दो खण्ड उपलब्ध हो सके हे।

उदाहरण

(१)

बाबू कुँवरसिंह वर-बाजि असवार होय,
काटत अरिसेना को तेग तानि छप-छप।
सैनिक रणमत्त होय, गोली चलाय रहे,
गोरो के गात बीच घुस जात घप-घप।
खून के फौवारो से धरती रगीन भयी,
खाय-खाय चोट ज्वान गिर रहे थप-थप।
'राजाराम' गोरों की लाशों को खीच-खीच,
श्वान और श्रृगाल, गीध खाय रहे गप-गप।[१]

(२)

चढ़ि के तुरंग चले जंग बीच कुँवरसिंह,
मारत कृपाण मुण्ड उड़िजात फट-फट।
काहू को अर्द्ध मुण्ड, काहू भुजदण्ड कटे,
काहूँ को रुण्ड बीच से कटाय जात छट-छट।
रुधिर प्रवाह देखि कालिका कँथारी धाईं,
खप्पर मे उठाइ खून घोटि जात घट-घट।
'राजाराम' भूत-प्रेत डाकिनि पिशाच आदि,
मुँह को पसारि माँस लील जात गट-गट॥[२]

---

१. उक्त सामग्री से ही।
२. वही।

राजेन्द्रप्रसाद

आप शाहाबाद-जिला के 'कटेयाँ' नामक ग्राम के निवासी श्रीसन्तविलासलालजी के पुत्र है। आपका जन्म सं० १९५२ वि० (सन् १८८५ ई०) की विजयादशमी (शनिवार) को हुआ था।[1] आपकी प्राथमिक शिक्षा घर पर ही हुई। तदनन्तर, आपने जिला-स्कूल, आरा से मैट्रिक, बी० एन्० कॉलेज, पटना से बी० ए०, लॉ कॉलेज, पटना से बी० एल० तथा पटना-विश्वविद्यालय से एम्० ए० की परीक्षाएँ क्रमश पास की। विद्यालयीय जीवन के बाद आपकी नियुक्ति 'लॉ-टाइम्स', पटना के सहायक सम्पादक के पद पर हुई। सन् १९२२ ई० में आपने पटना-सचिवालय मे कार्यारम्भ किया। सचिवालय के बाद करीब सन् १९२५ से २८ ई० तक आपने आरा-कचहरी मे वकालत की। सन् १९२८ से ३१ ई० तक आप मॉडल स्कूल, आरा मे क्रमश सहायक और प्रधानाध्यापक-पद पर प्रतिष्ठित रहे।

आपकी साहित्य-साधना इस बीच अबाध गति से चलती रही। आपका रचना-काल सन् १९२०-२१ ई० से आरम्भ होता है। आपकी यह साधना जीवन-पर्यन्त चलती रही। आप शाहाबाद-मण्डल साहित्य-सम्मेलन के आदि-सदस्य तथा साहित्य-परिषद्, आरा के दो वर्षों तक सभापति थे। आपके द्वारा लिखित एवं प्रकाशित रचनाओ मे दो के नाम उल्लेख्य हैं—(१) 'गीतामृत-त्रिवेणी' और (२) 'उपनिषत्पीयूष' इन प्रकाशित रचनाओं के अतिरिक्त आपने 'भर्तृहरिशतक' तथा 'महाभारत'[2] दोनो का ही पद्यानुवाद तैयार किया था। शिक्षण-कार्य से निवृत्त होकर भी आपने अपना समय शिक्षा और साहित्य के लिए उत्सर्ग कर दिया हैं।

उदाहरण

(१)

इतिहास केवल महापुरुषों की जीवनी का उल्लेखमात्र नहीं है—व्यक्तिगत जीवन के अतिरिक्त जातिगत जीवन भी एक प्रधान वस्तु है। मनुष्य-जीवन की सभी बातों का समाधान किसी खास महान् पुरुष की जीवनी के द्वारा होना असम्भव है, पर जातीय जीवन के संकीर्ण विषयों का समाधान तो उक्त जीवन के द्वारा होना असम्भव से भी कुछ बढ़कर है। जहाँ जीवनियों का कार्य रुक जाता है, वहीं से इतिहास के कार्य का आरम्भ होता है—यही इतिहास और जीवन-चरित में भेद है।

---

१. आपके द्वारा प्रेषित सामग्री के आधार पर जो परिषद् के साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित है। आपके प्रस्तुत परिचय-लेखन में 'जयन्ती स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६५७) से भी सहायता ली गई है।

२. आपकी यह रचना अपूर्ण और अप्रकाशित है।

जीवन-चरित से किसी विशेष व्यक्ति के जीवन का हाल मालूम होता है, पर इतिहास किसी जाति के जीवन का सार्वभौम वृत्तान्त दिखाता है। अब यह समझने में विलम्ब न होगा कि इतिहास के अध्ययन से क्या लाभ है। जिस प्रकार जातीय समुन्नति हुई है, मनुष्य की बुद्धि का उत्कृष्ट विकास हुआ है, उसी प्रकार इतिहास के लक्ष्य में उत्कर्ष आ गया है। आज इतिहास कोई साधारण वस्तु नही है, प्रत्युत विज्ञान का एक प्रधान अंग है। इस उत्कर्ष का साधक क्रम-विकास के सिद्धान्त का अकुंठित प्रभाव है। उन्नीसवी शताब्दी के क्रम-विकास के सिद्धान्त का योरप में प्रथम जन्म हुआ था और आज कोई ऐसा महत्त्व का विषय नहीं है, जिसमे इस सिद्धान्त ने अपना चमत्कार न दिखलाया हो। इतिहास पर भी इस सिद्धान्त का बड़ा प्रभावशाली विचार पड़ा है। आज इतिहास के लेखक केवल घटनाओं को भाषाबद्ध नही करते, बल्कि उनके तत्त्व की ओर भी ध्यान देने लग गये है, यहाँ तक कि राजनीति और इतिहास में घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हो गया है।[१]

(२)

जो कुछ पाने की आशा है,
तथा प्रतीक्षा है जो कुछ,
यज्ञ तथा उद्यान आदि के
फल, पशु, पुत्र आदि सब कुछ,
नष्ट भ्रष्ट ये हो जाते हैं,
यदि घर में ब्राह्मण आता
और मूर्ख गृह-स्वामी से वह
नही वहाँ भोजन पाता ॥[२]

---

१. 'गद्य-चन्द्रोदय' (वही), पृ० ६३।
२. 'उपनिषत्पीयूष', (राजेन्द्र प्रसाद, प्रकाशन-काल नहीं), पृ० ३६।

(३)

मुझमें मन अविचल रखने का हो न सके यदि सफल प्रयास,
इच्छा करो मुझे पाने की, करते हुए योग-अभ्यास ॥
कर्म करो मुझको पाने का, हो न सके यदि योगाभ्यास,
करते करते इन कर्मों को, होगा तेरा सफल प्रयास ॥
यह भी नही हुआ यदि तुझसे, तब तुम करो हमारा योग,
कर्म फलेच्छा को तज दो तुम, करके आत्मदमन उद्योग ॥[1]

डॉ० राजेन्द्रप्रसाद

आप सारन-जिला के 'जीरादेई' नामक स्थान के निवासी श्रीमहादेवसहायजी[2], के सुपुत्र थे। आपका जन्म पौषकृष्ण-प्रतिपदा (बुधवार) सं० १९४१ वि०, तदनुसार ३ दिसम्बर, सन् १८८४ ई० को हुआ था।[3] बचपन मे आप पढ़ने के लिए अपने गाँव के एक मदरसे मे बैठाये गये। मदरसे की पढ़ाई समाप्त कर आप छपरा जिला-स्कूल मे दाखिल हुए। फिर, जब आपके अग्रज श्रीमहेन्द्रप्रसादजी पटना आये तब आप भी उनके साथ पटना आकर पढ़ने लगे। आपने मिड्ल की परीक्षा यही से पास की। आगे चलकर आप पुन अपने

१ 'गीतामृतत्रिवेणी' (अध्याय-१२, राजेन्द्रप्रसाद, प्रकाशन-काल नहीं), पृ० १०५।

२ इनके पूर्वज सात-आठ पीढी पहले सयुक्तप्रान्त के 'अमोढा' नामक स्थान से बलिया होते हुए, 'रोजगार की खोज में' 'जीरादेई' (सारन) आये थे। 'जीरादेई' आते ही उनका सम्बन्ध हथुआ-राज से हो गया, जो बहुत दिनों तक बना रहा।—'आत्मकथा' (राजेन्द्रप्रसाद, सन् १९४७ ई०), पृ० १।

३ 'बालक' (मासिक, वर्ष २, अंक ७, सावन, सं० १९८४ वि०), पृ० ३५८। देखिए, 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, पृ० ४५९), 'हिन्दीसेवी संसार' (वही, पृ० २०६ २०७), 'बिहार-अब्दकोश' (वही, पृ० ४६२-६३) 'जयन्ती स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० १४८, ५७७, ५७८ तथा ६१६) 'श्रीराजेन्द्र अभिनन्दन-ग्रन्थ' (राधिकारमण सिंह तथा रामदहिन मिश्र, सं० २००६ वि०, पृ०) तथा 'बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्' का वार्षिक कार्य विवरण, (सन् १९५३-५४ ई०) भी। आपके परिचय-लेखन में निम्नांकित सामग्री भी सहायक हुई है—(क) डॉ० राजेन्द्रप्रसाद और उनका जीवन-दर्शन (हरेन्द्रदेव नारायण और श्रीनरेश, सन् १९४९ ई० अभिनव प्रकाशन, पटना), (ख) 'राजेन्द्रबाबू का व्यक्तित्व-दर्शन' (सम्पादक-मण्डल, सन् १९६३ ई०, ज्ञान-मण्डल लि०, वाराणसी), (ग) राजेन्द्रबाबू का व्यक्तित्व' (वाल्मीकि चौधरी, सन् १९५८ ई०, आत्माराम ऐण्ड सन्स), (घ) 'डॉ० राजेन्द्र प्रसाद फिलॉसफी ऑफ लाइफ' (रघुनाथप्रसाद, मजहरुलहक मेमोरियल पब्लिकेशन्स, पटना), (च) 'देशरत्न डॉ० राजेन्द्र प्रसाद' (डॉ० विश्वनाथप्रसाद, सन् १९४० ई० पुस्तक-भण्डार, पटना), तथा 'भारत' (दैनिक, सोमवार, १८ अगस्त सन् १९३० ई० पृ० ६) एवं 'आर्यावर्त्त' (दैनिक, सोमवार, ३ दिसम्बर, सन् १९६० ई०) में प्रकाशित लेख।

अग्रज के साथ छपरा जाकर जिला स्कूल में पढने लगे। वही से आपने प्रवेशिका की परीक्षा सन् १९०२ ई० मे पास की। आपका विद्यार्थी-जीवन असाधारण रूप से समुज्ज्वल रहा। कलकत्ता-विश्वविद्यालय की एम्० ए० (सन् १९०७ ई०) और बी० एल्० (सन् १९१० ई०) छोडकर एम्० एल्० (सन् १९१५ ई०) तक की सभी परीक्षाओ मे आप सर्वप्रथम हुए। आपने कई छात्रवृत्तियाँ प्राप्त की और यथेष्ट सम्मान के भागी बने। आपने जिस वर्ष एम्० ए० की परीक्षा पास की, उसी वर्ष आप मुजफ्फरपुर के जी० बी० बी० कॉलेज में प्राध्यापक-पद पर नियुक्त हुए। उक्त कॉलिज मे कुछ दिनो तक आपने स्थानापन्न 'प्रिंसिपल' का भी कार्य किया। फिर उसके कुछ ही दिनो बाद, अर्थात् सन् १९०९ ई० मे आप कलकत्ता के सिटी-कॉलेज मे चले आये। किन्तु, वहाँ भी बहुत दिनो तक नही रह सके। वकालत की परीक्षा पास करते ही आप कलकत्ता-हाइकोर्ट मे वकालत करने लगे। वकालत करते हुए आप वहाँ के युनिवर्सिटी लॉ-कॉलेज से भी अध्यापक के रूप में सम्बद्ध रहे। बाद में, बिहार के बंगाल से अलग होने पर आप पटना-हाइकोर्ट में वकालत करने चले आये। पटना में सन् १९१६ से २० ई० तक रहकर आपने प्रचुर यश और धन अर्जित किया। इसी बीच सन् १९१७ ई० मे चम्पारन के निलहों के अत्याचार के विरुद्ध जब महात्मा गान्धी ने सत्याग्रह करने की घोषणा की, तो आप अपनी चलती हुई वकालत छोडकर वहाँ पीडितो की सेवा करने चले गये। आगे चलकर, सन् १९२० ई० मे जब 'असहयोग' की आँधी आई तब आपने वकालत से बराबर के लिए सम्बन्ध-विच्छेद कर सेवा, सादगी और सद्भाव का व्रत ले लिया। आप महात्मा गान्धी के पक्के और सच्चे अनुयायी माने गये, जिसके चलते आपकी ख्याति 'बिहार के गान्धी' के रूप मे हुई। असहयोग और सत्याग्रह-आन्दोलनो मे प्रमुख भाग लेने के कारण अल्पकाल मे ही आप भारत-प्रसिद्ध त्यागमूर्त्ति नेता के रूप मे स्वीकृत हो गये। आप अखिल भारतीय कांगरेस के प्रमुख सदस्यो में तो थे ही, अनेक वर्षों तक आपने उसके अध्यक्ष-पद को अलकृत किया। स्वतन्त्रता आन्दोलन के सिलसिले मे आपने अनेक बार जेल-यातनाएँ भी सही। सन् १९२० ई मे हो आपने बिहार-विद्यापीठ की स्थापना की जिसके आप क्रमश 'उपकुलपति' और 'कुलपति' हुए। आपका सम्बन्ध देश-विदेश की अनेकानेक सभा-सस्थाओ से रहा और उन सबसे सम्बद्ध रहकर आपने राजनीति, समाज और साहित्यविषयक अनेकानेक महत्त्वपूर्ण एव उल्लेखनीय कार्य किये। बिहार भूकम्प-कष्टनिवारण-समिति के अध्यक्ष के रूप में आपकी सेवाएँ अविस्मरणीय रहेंगी। सन् १९२८-२९ ई० मे आपने योरप-भ्रमण किया। उसी समय आस्ट्रिया के युद्धविरोधी अन्तरराष्ट्रीय सम्मेलन मे तथा हालैण्ड के विश्व युवक शान्ति-सम्मेलन में आपने भारत का प्रतिनिधित्व किया। २ सितम्बर, सन् १९४६ ई० को, भारत की अन्तरिम-सरकार के खाद्य एव कृषि सदस्य हुए और फिर बाद मे भारत-सरकार के खाद्य और कृषि-मन्त्री। सन् १९४६ से ५० ई० तक आपने भारतीय संविधान-सभा के अध्यक्ष-पद को सुशोभित किया। उसके बाद, आप सर्वसम्मति से इस देश के प्रथम 'राष्ट्रपति' चुने गये और उस पद पर आपने प्रभूत यश और लोकप्रियता प्राप्त की।[1]

---

१. देखिए, सम्बद्ध ग्रन्थ – 'राष्ट्रपतिराजेन्द्र प्रसाद' (सं० शिवपूजन सहाय, स० २००६ वि०, ग्रन्थमाला कार्यालय, पटना), (ख) 'हमारा राष्ट्रपति' (देवकुमारमिश्र, प्रकाशक वही), (ग) 'राष्ट्रपति और राष्ट्रपति-भवन' (वाल्मीकि चौधरी, सन् १९५८ ई०, आत्माराम ऐण्ड सन्स, दिल्ली) ; तथा 'राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद' (सं० श्रीकेदारनाथ, सन् १०५७ ई०, राजेन्द्रचर्चा-मण्डल, छपरा)।

आप दुबारा देश के राष्ट्रपति चुने गये। देश और विदेश के अनेक विश्वविद्यालयों ने आपको 'डॉक्टरेट' की उपाधि से विभूषित किया।[1]

हिन्दी के प्रति आरम्भ से ही आपकी विशेष अभिरुचि रही। हिन्दी को 'राष्ट्रभाषा-पद पर प्रतिष्ठित करने की दिशा मे आप सदैव प्रयत्नशील रहे। स्कूलो मे हिन्दी का प्रवेश, एक प्रकार से, आपकी देन है। आपने ही अखिलभारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के नागपुर अधिवेशन का सभापतित्व किया था। इसके अतिरिक्त कोकनदा, काशी तथा कलकत्ता, इन तीन स्थानो मे विशेष अधिवेशनो के सभापति-पद को भी आपने सुशोभित किया था। आप बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन के कार्यकलापो से भी सम्बद्ध रहे। सन् १९५५ ई० मे लहेरियासराय (दरभंगा) मे हुए सप्तम अधिवेशन की अध्यक्षता आपने ही की थी। आपकी ख्याति एक पत्रकार के रूपमे भी थी। 'पटना लॉ वीकली' के संस्थापक एवं सम्पादक तथा 'सर्चलाईट' के संचालक के रूप मे तो आपने यश अर्जित किया ही था, प्रसिद्ध राष्ट्रीय हिन्दी साप्ताहिक 'देश' के संस्थापक-सम्पादक के रूप मे भी आपको प्रचुर ख्याति मिली।

आपके द्वारा लिखे अनेकानेक स्फुट हिन्दी-लेख तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओ मे भरे पडे हैं। आपकी पुस्तकाकार रचनाओ के नाम ये हैं—(१) चम्पारन मे महात्मा गान्धी,[2] (२) खादी का अर्थशास्त्र, (३) संस्कृत का अध्ययन, (४) साहित्य-शिक्षा और संस्कृति[3], (५) आत्मकथा[4] (६) बापू के कदमो मे,[5] (७) बिहार में महात्मा गान्धी।[6] आपकी साहित्यिक समाजिक और राजनीतिक सेवाओ के कारण, नागरी प्रचारिणी सभा आरा राजेन्द्रचर्चा-मण्डल, छपरा, महिला चर्खा-समिति, पटना द्वारा आपको अभिनन्दन-ग्रन्थ प्रस्तुत कर सम्मानित किया गया था। आपकी 'आत्मकथा नामक पुस्तक पर बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् ने सन् १९५४ ई० मे आपको एक सहस्र मुद्राओ का पुरस्कार दिया था। सन् १९५९-६० ई० मे परिषद् का डेढ सहस्र मुद्राओ का वयोवृद्ध साहित्यिक-सम्मान-पुरस्कार भी आपको प्राप्त हुआ। सन् १९६३ ई० के दिसम्बर माह मे आपका पार्थिव शरीर उठ गया, पर आपकी कीर्त्ति-कौमुदी अमर है।

---

१. इस सिलसिले में, विशेष सूचना प्राप्त करने के लिए पटना म्यूजियम के 'राजेन्द्र-कक्ष' का अवलोकन किया जा सकता है।

२. इस ग्रन्थ का प्रथम संस्करण स० १९७९ वि० (सन् १९२२ ई०) में स्व० श्रीअनुग्रहनारायण सिंह द्वारा प्रकाशित किया गया था और द्वितीय संस्करण सन् १९४४ ई० में आत्माराम ऐण्ड सन्स, दिल्ली द्वारा प्रकाशित हुआ। इसका संशोधित एव परिवर्द्धित संस्करण सन् १९६५ ई० में, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना से प्रकाशित किया गया है।

३ यह आपके द्वारा समय समय पर दिये गये भाषणों का संग्रह है, जो आत्माराम ऐण्ड सन्स, दिल्ली से सन् १९५२ ई० में प्रकाशित हुआ था।

४. सन् १९४७ ई० में साहित्य-संसार, पटना से प्रकाशित।

५. सन् १९५० ई० में श्रीअजन्ता प्रेस (प्राइवेट) लिमिटेड, पटना से प्रकाशित।

६. सर्चलाइट प्रेस, पटना से प्रकाशित। आपके द्वारा अँगरेजी में लिखित पुस्तक 'इण्डिया डिवाइडेड' को अच्छी ख्याति मिली।

उदाहरण

(१)

कलकत्ते में हिन्दी के लेखक, विद्वान्, साहित्यिक और सेवक कई सज्जन रहते थे। उनमें से पंडित जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी बिहार के रहनेवाले थे। बिहारी-क्लब में वह अक्सर आया-जाया करते थे। विशुद्धानन्दसरस्वती विद्यालय के प्रिन्सपल पं० उमापतिदत्त शर्मा भी बिहारी थे। उनसे भी उसी क्लब में मुलाकात हो गयी। इन लोगों के जरिये दूसरे लोगों से भी परिचय हो गया। कलकत्ते में हिन्दी-साहित्य-परिषद् की स्थापना हुई। उसमें मैं काफी दिलचस्पी लेने लगा। उसके जन्म का साल तो याद नही है, पर इतना याद है कि उसके अधिवेशनों में मैंने भी कभी-कभी लेख पढ़े थे, जिनको विद्वानों ने पसन्द किया था। हममें से कुछ के दिल में खयाल उठा कि अखिल-भारतवर्षीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन भी होना चाहिये; और इस विषय के लेख लिखे गये। हिन्दी-साहित्य-सेवियों ने इस प्रस्ताव का स्वागत किया और काशी में पहला अधिवेशन हुआ। मैं भी उसमे उपस्थित था और पूज्य मालवीयजी सभापति हुए थे। इस प्रकार सम्मेलन के साथ मेरा सम्बन्ध उसके आरम्भ से ही हुआ। जब तीसरा सम्मेलन कलकत्ते में होनेवाला था तो मैं स्वागत-कारिणी-समिति का प्रधानमन्त्री बनाया गया। अभी एक साल भी पूरा नहीं हुआ था कि मैंने वकालत शुरू की थी। बहुत लोगों से जान-पहचान भी नहीं थी। तथापि लोगों की ऐसी इच्छा हुई और मुझे यह भार उठाना पड़ा। इस सिलसिले में सम्मेलन के प्रमुख नेताओं से परिचय हो गया। कलकत्ते के बड़ाबाजार के लोगों से तो विशेष परिचय हुआ। १९१२ के दिसम्बर में, कलकत्ते में सम्मेलन बड़ी सफलता से, पं० बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' की अध्यक्षता में हो गया।

यह पहला अवसर था कि मुझे किसी अखिलभारतीय संस्था के अधिवेशन के प्रबन्ध का भार उठाना पड़ा। कड़ा परिश्रम करना पड़ा, पर ईश्वर की दया से सब काम ठीक हो गया।[1]

(२)

सावरमती-आश्रम में जो स्त्रियाँ रहती थीं, उनको हर तरह की आजादी थी। वैसी ही आजादी थी, जैसी पुरुषों की। आश्रम में किसी बात पर राय ली जाती तो स्त्रियाँ भी उसी तरह आजादी के साथ राय देती जिस तरह पुरुष। वे काम भी वैसे ही करतीं जैसे पुरुष। उन दिनों विशेष कर चरखे का ही काम होता था। उसमें वे पूरा भाग लेती। इस तरह स्त्रियों में महात्माजी ने एक अद्भुत जागृति पैदा करा दी। बाद जब कही सत्याग्रह का मौका आया, स्त्रियों ने उसमें निर्भीकतापूर्वक वैसा ही भाग लिया जैसा पुरुषों ने। बारदोली के सत्याग्रह में स्त्रियों ने बहुत बड़ा हिस्सा लिया। उन्होंने अपनी संगठन-शक्ति का भी परिचय दिया। इस देश में सहनशीलता स्त्रियों का धर्म-सा बन गया है। अतः सत्याग्रह के कष्टों को सह लेना उनके लिए पुरुषों से भी अधिक स्वाभाविक था। सन् १९३० ई० में महात्माजी ने जब देशव्यापी सत्याग्रह आरम्भ किया तब उन्होंने विशेषकर शराबबन्दी का काम स्त्रियों के जिम्मे दिया। यह काम कठिन था, खतरे से खाली न था, क्योंकि इसमे नशाखोरों से मुकाबला होता, जो बहुतेरा क्रूर स्वभाव के होते है—होश-हवास तो शायद ही किसी में होता है, इसलिए वे कब क्या कर बैठते, कहना कठिन है। पर इस काम को बहुत ही निर्भीकतापूर्वक बहुत स्त्रियों ने किया। इसका फल यह हुआ कि शराब की दूकानें बन्द हो गईं। ग्राहकों के अभाव में

---

१. 'आत्मकथा' (डॉ० राजेन्द्रप्रसाद, जनवरी, सन् १९४७ ई०), पृ० ८२-८३।

बहुतों की बिक्री भी बहुत कम हो गई। कुछ शराबखोरों ने तो शराबखोरी भी छोड़ दी।[1]

(३)

चम्पारन में नील-सम्बन्धी हलचल, जिसका कुछ भी उल्लेख पाया जाता है, पहले-पहल सन् १८६७ ई० में हुई। इसका आरम्भ लाल सरैया कोठी में हुआ। मौजा जोकठिया के रैयतों ने नील बोना बन्द कर दिया और नील के खेतों में दूसरी फसल बो दी। देखादेखी दूसरे गाँववालों ने भी ऐसा ही किया। कोठी का बंगला भी आग से जल गया। नीलवरों ने उस समय भी सन् १९१७ ई० की तरह दोष किसानों के मत्थे मढ़ना चाहा, किन्तु इसका कोई सबूत नहीं मिला कि आग कैसे लगी। सन् १८६७ ई० में भी रैयतों की ठीक वही शिकायतें थी, जो सन् १९१७ ई० में। इस अशान्ति के कारण बताते हुए पटना कमिश्नर ने सरकार के पास लिखा कि रैयतों को नील की खेती में यही नहीं था कि कोई लाभ नहीं हो, वरन् उन्हें सीधे साफ-साफ नुकसान था, नील का सट्टा उनसे लिखवा लिया जाता था, उनकी सबसे अच्छी जमीन नील के लिए ले ली जाती थी, नील की खेती बड़ी मुश्किल से होती थी, कोठी के मुलाजिम उनके साथ बहुत जुल्म किया करते थे। इस शान्ति-भंग से नीलवरों में बड़ी खलबली मची। नील का बोना बन्द-सा हो गया और मालूम होने लगा कि नील की खेती एकबारगी चम्पारन से उठ जायगी। नीलवरों ने सरकार में बहुत जोर लगाया और गवर्नमेंट ने भी उनकी खूब मदद की। उनके मनोवांछित प्रस्ताव के अनुसार सरकार द्वारा दो जजों की एक छोटी अदालत मोतीहारी में स्थापित की गई। उसका काम यह था कि रैयतों पर जो मुकदमे नील-सम्बन्धी सट्टों की शर्तों को तोड़ने के लिए हरजाने के वास्ते कोठी वाले दायर करें, उनका वह शीघ्रता के साथ फैसला कर दे। इसका

१. 'बापू के कदमों में' (डॉ० राजेन्द्रप्रसाद, सन् १९५० ई०), पृ० १५६।

फल यह हुआ कि विना मुकदमा दायर किये ही नीलवरों का काम बन गया, और बिचारे अशिक्षित असहाय रैयतों की चेष्टा नील के अत्याचारों से छुटकारा पाने में विफल हुई। ऐसा होना भी कोई आश्चर्य की बात न थी। क्योंकि, किसान लोग स्वभावतः डरपोक होते है, और विशेषकर चम्पारन जैसी जगह की रियाया तो और भी सीधी-सादी है।'[१]

(४)

राष्ट्रभाषा सारे देश के लिए चाहिए इसलिए वह ऐसी नही होनी चाहिए और न हो सकती है, जिसे हिन्दी या उर्दू जाननेवाले भी न समझें। इन दोनो को हम अलग मान भी लें तो राष्ट्रभाषा तो ऐसी ही हो सकती है कि इसको हिन्दी और उर्दू वाले दोनो मान लें। ऐसा नही हुआ तो एक मुश्किल को हल करने में एक दूसरी मुश्किल हम पैदा कर देते है। बंगाल, महाराष्ट्र, गुजरात और दक्खिन में हिन्दी या उर्दू का प्रचार करके क्या होगा ? अगर उत्तर में ही लोग एक दूसरे को न समझ सकें और हिन्दी जाननेवालों के लिए उर्दू वैसी ही हो जाय जैसी उनके लिए बंगला है। इसलिए हिन्दी और उर्दू दोनों के के लिए यह जरूरी है कि राष्ट्रभाषा बनने का दावा करते-करते अपने रूप को ऐसा न बना लें कि एक दूसरे को ही न पहचान सकें और उत्तर भारत में भी, जहाँ के लोगों के लिए कोई राष्ट्रभाषा बनाने की जरूरत नही पड़ती है, नई जरूरत खड़ी हो जाय। अगर उत्तर की भाषा ही राष्ट्रभाषा होनेवाली है तो उर्दू और हिन्दी को आपस का झगड़ा इतना तेज नहीं बनाना चाहिए जिससे कि और भाषाओं के जाननेवाले कह बैठें कि इन दोनों में कोई भी राष्ट्रभाषा के लिए मंजूर नही की जा सकती। इसलिए इस विचार से राष्ट्रभाषा का रूप कुछ-कुछ निर्धारित हो जाता है। यह न तो संस्कृत-शब्दों का

१. 'चम्पारन में महात्मा गान्धी', (डॉ० राजेन्द्रप्रसाद, सन् १६६५ ई०), पृ० १४-१५।

वहिष्कार कर सकती है और न अरबी-फारसी के शब्दों को ही निकाल सकती है। जो शब्द आते है, चाहे सस्कृत के हों या फारसी, अरबी और किसी दूसरी विदेशी भाषा के भी क्यों न लें, निकाले नहीं जा सकते है। हाँ, नये अनगढ़ अप्रचलित शब्दो को भरमार भी अनावश्यक और हानिकारक है। हिन्दी-उर्दू के घरेलू झगड़े का निपटारा हमको कर लेना है। तभी हम हिन्दी के लिए राष्ट्रभाषा का दावा कर सकते है।'[1]

राजेश्वरप्रसाद वर्मा 'चक्र'

आप सारन-जिला के 'सुन्दरी' नामक ग्राम के निवासी श्रीरामानन्दप्रसाद वर्मा के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९५६ वि० (सन् १८९९ ई०) की आश्विन कृष्ण-अष्टमी (गुरुवार) को हुआ था।[2] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। आपके जीवन का अधिकाश समय सरकारी सेवा मे ही बीता। आपने बहुत वर्षों तक नरकटियागंज (चम्पारन) मे जिलाबोर्ड के सेक्शनल ऑफिसर-पद पर आसीन रहकर उसकी सेवा की है। आर्थिक कठिनाइयो के बावजूद आपने देवघर से प्रवेशिका के साथ-साथ 'साहित्य-सरोज' की उपाधि प्राप्त की। सन् १९२१ ई० मे आपने गोरखपुर से प्रकाशित होनेवाले साप्ताहिक पत्र 'युगान्तर' का सह-सम्पादन-कार्य सँभाला। सम्पादन-कला मे वैशिष्ट्य प्राप्त करने के लिए आपने काशी के सुप्रसिद्ध दैनिक 'आज' मे सम्पादक-मूर्द्धन्य श्रीविष्णुराव पराडकरजी से पत्रकारिता की शिक्षा ग्रहण की।

आपकी साहित्यिक रचनाएँ सं० १९७४ वि० से ही प्रकाश मे आने लगी थी। आपके द्वारा लिखित पुस्तकों मे केवल एक प्रहसन 'जोरू के बदले जमाई' है, जिसका प्रकाशन सं० १९८५ वि० मे हुआ। इसके अतिरिक्त आपकी 'चम्पारन के खंडहरों मे', 'बाघिन की बेटी', 'मणिमेखला' (उपन्यास), 'अनंगपाल' (नाटक), 'मण्डला', 'अमर सेनापति' आदि पुस्तकें अद्यावधि अप्रकाशित ही हैं। आपके स्फुट लेख 'आज', 'कर्मवीर' (खण्डवा), 'प्रताप', 'विशाल-भारत', 'सरस्वती' आदि पत्र-पत्रिकाओं में यथावसर प्रकाशित होते रहे हैं।

---

१. 'साहित्य, शिक्षा और सस्कृति' (डॉ० राजेन्द्रप्रसाद, सन् १९५२ ई०), पृ० ८०-८१।

२. आपके द्वारा दिनांक २९ मई, सन् १९५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के आधार पर। आपके प्रस्तुत परिचय-लेखन में उक्त सामग्री के अतिरिक्त 'हिन्दी-सेवी संसार' (वही, पृ० २०८), 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही, पृ० १०६) से भी सहायता ली गई है।

उदाहरण

(१)

जय जय विश्ववन्द्य नगराज, धन्य उन्नत सगर्व महिमा विशाल,
जय धवल कीर्तिराका मण्डित, जय जय कुबेर के अन्तराल।
जय प्रकृति सौम्य साधक प्रवीण, जय हिमाच्छन्न यतिवर महान्,
तेरे मस्तक को छू न सकी, अबतक भी मानव की उड़ान।
हे गौरी शंकर! चन्द्रचूड, तुम किस असीम को झाँक रहे,
क्या अबतक भी पाषाण बनी, दक्षिणकन्या को आँक रहे।
हे कांचनजंघा कनक वर्ण, जीवित सुरम्य शोभा ललाम,
जाने कब से तुम ढूंढ़ रहे, निज घोर कल्पना का विराम।[1]

(२)

हाथी हाथी से भिड़े दौड़, घोडे घोड़ों से लिपट गये,
नंगी तलवारें ले-लेकर, पैदल पैदल से चिपट गये।
तक्षक से तीर विषम दौड़े, बिध गये सहस्रों मुकुट भाल,
वह शस्यश्यामला भूमि हुई, पंकिल लोहू से लाल लाल।
कुछ हरे और कुछ लाल, बूटों से घाटी सज आई,
दूर्वादल पटी तराई पर थी, धूपछाँह सी अमराई।
पंकिल हो उठी धरा सत्वर, उद्दाम रुधिर के सिंचन से,
झंकरित हो उठी घाटी वह, अविरल झेलम की झनझन से।
कब कहाँ कौन किस ओर बढ़ा, वह कौन देखनेवाला था,
हर वीर रंग में अपने ही, बन झूम रहा मतवाला था।[2]

---

१. लेखक-कृत हस्तलिखित 'अमर सेनापति' के 'नगराज-नमन' शीर्षक काव्य-रचना से।—लेखक से प्राप्त।
२. उक्त हस्तलिखित पुस्तक के १६ सर्गस्थ 'वरेला का युद्ध' नामक शीर्षक से।—लेखक से ही प्राप्त।

राजेश्वरीप्रसाद वर्मा

आप मुजफ्फरपुर-जिला के 'लखनपुर' नामक स्थान के निवासी श्रीराजवंशीलालजी के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९४० वि० (सन् १८८३ ई०) की अगहन शुक्ल-तृतीया (रविवार) को हुआ था।[1] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। साल भर तक घर पर उर्दू-फारसी पढ़ लेने के बाद आपका प्रवेश धर्म-समाज-संस्कृत-विद्यालय, मुजफ्फरपुर मे हुआ। वहाँ अध्ययन करते हुए, आपने संस्कृत और हिन्दी का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया। सन् १९०३ ई० मे आपने संस्कृत और हिन्दी आदि विषयों के साथ इण्ट्रेंस की परीक्षा पास की। उपर्युक्त परीक्षा के बाद सन् १९०४ ई० मे आपका नियोजन उसी विद्यालय के प्रधानाध्यापक के पद पर हो गया। इसके कुछ दिनो के बाद आप पूसा के 'कृषि-विद्यालय' मे नियुक्त हुए। वहाँ से सन् १९०७ ई० मे आप पुलिस-विभाग मे इन्सपेक्टर के पद पर शाहाबाद-जिला मे चले गये। इसी समय आपका परिचय बक्सर (शाहाबाद) के एक परमहंस योगी श्रीशंकरानन्दजी से हुआ। इनके सत्संग से आपके विचारो मे अभूतपूर्व परिवर्त्तन हुआ। इसी परिवर्त्तन के फलस्वरूप आप सन् १९१७-१८ ई० के बकरीद-रायट से अप्रभावित रहे और आपका थाना पूर्ण सुरक्षित रहा। जनता मे भी आपके प्रति पूर्ण सहानुभूति रही। आपके पुलिस-विभाग मे जाने के पहले आपकी माताजी ने इससे अपनी असहमति प्रगट की थी, फलतः आप ने मुख्तारशिप का कोर्स पूरा कर लिया था। किन्तु, जब आपने वहाँ भी अन्याय और झूठ का बाजार गरम देखा, तब इसी विभाग में रहकर ईमानदारी से कार्य करने का व्रत लिया। सन् १९२०-२१ ई० मे जब देश में पूज्य राष्ट्रपिता महात्मा गान्धीजी द्वारा आन्दोलन छिडा, तब अनेक देश-सेवको पर पुलिस-कार्रवाई आपको भी करनी पडी। इससे आपको विरक्ति हुई और अन्त मे आपने पुलिस-विभाग से त्याग-पत्र दे दिया। तबसे आजतक आप घर पर ही रहकर साहित्य और समाज की सेवा मे जीवन-यापन कर रहे हैं।

आपकी लिखित रचनाओ मे (१) 'कर्म', (२) 'इन्द्रियाँ और मन' तथा (३) 'आत्मोन्नति' नामक तीन पुस्तके प्रकाशित हो चुकी हैं।[2]

उदाहरण

(१)

सद्गुण में बहुत नफा है। सद्गुण आन्तरिक योग्यता है, इसलिए वह अन्तःकरण का एक भाग बन जाता है और अन्तःकरण का भाग

---

१. आपके द्वारा ५ अप्रील, सन् १९५५ ई० को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।

२. आपकी समाज और साहित्य-सेवा के प्रतीक के रूप में लखनपुर में अद्यावधि सार्वजनिक विद्यालय, सरोवर, कूप तथा एक विशाल ग्रामीण पुस्तकालय विद्यमान हैं।

हो जाने की वजह से जो सद्‌गुण एक बार प्राप्त हो जाता है, फिर हटता नही। सद्‌गुण ही से मनुष्य की यथार्थ आत्मोन्नति होती है। इसलिए मनुष्य को सद्‌गुण प्राप्त करने की पूरी कोशिश करनी चाहिए, या यों कहिये कि हमेशा उत्तम-उत्तम (परोपकारी बातें, धर्म-चर्चा परमेश्वर का गुण इत्यादि) भावनाएँ मन में उत्पन्न करनी चाहिये।

× × ×

भला या बुरा आदमी जैसी भावना करता है, सोचता है, संकल्प करता है वैसा उसका भीतरी फायदा, गैर फायदा होता है, यानी आन्तरिक योग्यता बढ़ती-घटती है, सद्‌गुण-दुर्गुण प्राप्त होता है, स्वभाव भला-बुरा हो जाता है।[1]

(२)

जो लोग केवल अच्छे मानसिक कर्म (अच्छी बातें सोचना) करेंगे और शारीरिक कर्म (बाहरी सामान से दूसरों को आराम पहुँचाना) अच्छा नही करेंगे वे ज्ञानी, अच्छी बुद्धिवाले (मानसिक कर्म के बदले में) जरूर होंगे; मगर अच्छे शारीरिक कर्म नही करने की वजह से उनको हमेशा बाहरी सामान की तकलीफ रहेगी। इसीलिए ज्ञानी महात्मा अक्सर निर्धन पाये जाते है।

निर्धन ज्ञानी अच्छे स्वभाववाला (सद्‌गुणप्राप्त) मूर्ख धनवान (दुर्गुणयुक्त) से जरूर ही लाख दर्जे अच्छा है; क्योंकि वह ज्ञान और सद्‌गुण की वजह से हरएक जन्म में अपनी तरक्की करता जायगा और आखिर में ईश्वर-प्राप्ति कर ही लेगा। मगर घमंडी स्वार्थी धनवान फूला बैठा रहेगा और बेवकूफी की वजह से अपने धन को बुरे काम में खर्च करेगा और अन्त में अधोगति को प्राप्त होगा।[2]

---

१. 'कर्म', (राजेश्वरीप्रसाद वर्मा, सन् १९२९ ई०), पृ० ४-५।
२. 'कर्म' (वही), पृ० ३३।

राधाकृष्ण झा

आप भागलपुर-जिला के 'कहलगाँव' नामक स्थान के निवासी पं० रामलोचन झा[१] के पुत्र थे। आपका जन्म सन् १८८८ ई० के ८ अक्टूबर को हुआ था।[२] आप लगभग पाँच वर्ष की अवस्था मे स्कूल मे भरती हुए और उसी समय से अपनी तीव्रबुद्धि का परिचय देने लगे। सन् १९०६ ई० मे टी० एन्० जुबली कॉलेजियट-स्कूल, भागलपुर से आपने छात्रवृत्ति के साथ प्रवेशिका की परीक्षा पास की। सन् १९१० ई० मे टी० एन्० जे० कॉलेज भागलपुर, से बी० ए० की परीक्षा पासकर एम्० ए० के लिए आपने कलकत्ता मे नाम लिखवाया। वहाँ से सन् १९१२ ई० मे कॉबडेन-स्वर्णपदक के साथ एम्० ए० की उपाधि प्राप्ति की। कलकत्ता मे एम्० ए० पढते हुए आप कानून भी पढ़ा करते थे। किन्तु, उस दिशा मे रुचि न होने के कारण आपने कानून की पढाई छोड दी। सन् १९१३ ई० में आप पटना-कॉलेज में अर्थ-शास्त्र के प्राध्यापक हुए। इस पद पर जीवन-पर्यन्त आप बडी योग्यतापूर्वक कार्य करते रहे। बीच में केवल दो वर्षो के लिए (सन् १९२१ से २३ ई०) आप बिहार सरकार के शिल्प-कला-विभाग के सहायक निर्देशक के पद पर आसीन हुए थे। किन्तु, अस्वस्थ होने के कारण आप पुन अपने पूर्व पद पर वापस आ गये। एक प्राध्यापक के रूप मे आपकी बडी प्रशस्ति थी।

राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रति आपकी अन्यतम भक्ति थी। आपने केवल छात्रो में हिन्दी लिखने-पढने का प्रेम उत्पन्न करके ही हिन्दी की सेवा नही की, वरन् इसके लिए आपने अपना सर्वस्व दे रखा था। आपकी हिन्दी-भक्ति को देखकर ही बिहार के हिन्दी-प्रेमियों ने आपको बिहार-प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के दरभगा-अधिवेशन का सभापति मनोनीत किया था। किन्तु, अस्वस्थता के कारण आप उस पद को सुशोभित नही कर सके।[३] आपकी साहित्य-सेवा का आरम्भिक वर्ष सन् १९१३ ई० बतलाया जाता है। उसी समय से आप हिन्दी-पत्र-पत्रिकाओ में लेख लिखने लगे थे। आपके अधिकाश लेख, अर्थशास्त्र, राजनीति और इतिहास-सम्बन्धी हैं। आपकी पुस्तकाकार रचनाओं मे (१) भारतीय-शासन-पद्धति,[४] (२) भारत की साम्पत्तिक अवस्था[५], (३) राजनीतिक अर्थशास्त्र[६] तथा (४) भारत में अँगरेजी राज[७] हैं। आपके द्वारा लिखित 'राष्ट्रज्ञान'[८] नामक पुस्तक कई कारणो से प्रकाशित नही

१ ये बडे ही विद्याप्रेमी थे। उर्दू-भाषा मे इन्हें विशेष प्रेम था। इनके पितामह प० नत्थू झा भी संस्कृत के एक अच्छे विद्वान् थे।

२ देखिए 'बालक' (मासिक, वर्ष २, अक ६, आषाढ, सं० १९८४ वि०), पृ० ३१३ तथा 'बालक' (वही, वर्ष ७, अंक १, माघ, स० १९९३ वि०), पृ० ६२।
आपके प्रस्तुत परिचय-लेखन में, उक्त सामग्री के अतिरिक्त 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६१३ तथा ६१६), 'मिश्रबन्धुविनोद' (वही, पृ० ४५९) तथा 'भागलपुर-दर्पण' (वही, पृ० १३९) में प्राप्त सामग्री से भी सहायता ली गई है।

३ आपके स्थान पर उस अधिवेशन का सभापतित्व डॉ० राजेन्द्रप्रसादजी ने किया था।

४. सन् १९१७ ई० में प्रकाशित।

५. सन् १९१९ ई० में प्रकाशित।

६. —देखिए, 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६१६)।

७. —देखिए, भागलपुर-दर्पण' (वही, पृ० १३९)।

८. सन् १९२२-२३ ई० में लिखित। यह पुस्तक कलकत्ता के 'विश्वमित्र प्रेस' में छप रही थी।

हो सकी । इन पुस्तकों के अतिरिक्त आपने कई छोटी-मोटी पुस्तकें तथा रीडरें स्कूलों के लिए लिखी थीं । आप सन् १९३६ ई० के ३ दिसम्बर को, शिमला के निकट धर्मपुर-पर्वत पर गोलोकवासी हुए ।

उदाहरण

(१)

राष्ट्र की उत्पत्ति क्यों कर हुई इसका निर्णय करना कुछ कठिन है, क्योंकि राष्ट्र किसी चेष्टा या कार्य्यविशेष का परिणाम मात्र नहीं है । इसका उदय अनेक कारणों और अवस्थाओं से धीरे-धीरे अप्रत्यक्ष रूप से हुआ है । जिस प्रकार सामाजिक संस्थाओं ने धीरे-धीरे बदलते-बदलते इतने दिनों में आधुनिक रूप धारण किया है, उसी प्रकार बहुत-सी संस्थाओं के योग से धीरे-धीरे राष्ट्र की सृष्टि हुई है । यह कहना अत्यन्त कठिन है कि किस खास कारण से राष्ट्र का उदय हुआ है । तो भी यहाँ यह दिखाने का प्रयत्न किया जायगा कि विशेषकर किन शक्तियों के संयोग से राष्ट्र का उदय हुआ है ।

वाह्य जगत तथा जनता के अतिरिक्त विशेषकर तीन शक्तियों के संयोग से राष्ट्र की सृष्टि हुई है । वे ये हैं—रक्त-सम्बन्ध धर्म और आभ्यन्तरिक व्यवस्था तथा शत्रुओं से बचने के लिए प्रबन्ध करने की आवश्यकता । इन्हीं उपरोक्त कारणों से उस सहति और एकता के भाव तथा व्यवस्था की सृष्टि होती है, जिनके द्वारा राष्ट्र-सगठन का कार्य संभव होता है ।[1]

(२)

पितरों की पूजा की चाल ने कुटुम्ब, जाति और गण के लोगों को परस्पर एक साथ सहानुभूति के सूत्र में बाँध रक्खा था । एक कुटुम्ब जब बढ़ते-बढ़ते 'गण' के दर्जे को पहुँच जाता था तबतक भी उस आदि पुरुष की पूजा होती रहती थी, जिसने उस गण का जन्म दिया था ।

---

१. 'लक्ष्मी' (मासिक, गया, भाग १६, अंक ३, मार्च, सन् १९१८ ई०), पृ० ७७ ।

आज तक भी हिन्दू मनु-शतरूपा, कश्यप अदिति की पूजा करते है। प्रत्येक जाति का यह विश्वास है कि उसका आदि पुरुष कोई एक महान् व्यक्ति था, उस पराक्रमी महापुरुष की पूजा करना उस जाति का कर्त्तव्य है। यदि उसकी पूजा न हुई, यदि वह किसी प्रकार रुष्ट हो गया तो जातिमात्र पर आफत आवेगी। जिस प्रकार एक मालिक के जितने नौकर होते है, उन सबमें परस्पर एक प्रकार की सहानुभूति रहती है, उसी प्रकार एक ही आदिपुरुष की पूजा करनेवाले कुटुम्बों में एक प्रकार का बन्धन रहता था। और यही उनकी संघशक्ति का मूलमन्त्र था। इस पूजा करने का अधिकार कुटुम्ब में सबसे ज्येष्ठ व्यक्ति को ही था। वही पितरो को प्रसन्न करने का अधिकारी था, इससे उसकी बड़ी प्रतिष्ठा थी। उसी प्रकार जब कुटुम्ब की संख्या बढ़ते-बढ़ते 'गण' तक पहुँच गई तब 'गणपति' भी उसी प्रकार उस 'गण' के आदि पुरुष की पूजा करने का अधिकारी हुआ। इसी अधिकार के कारण उसकी प्रतिष्ठा की वृद्धि हुई। रोमन सम्राटों के विस्तृत अधिकार का यह भी एक कारण था। यहाँ यह स्पष्ट हो गया होगा कि रक्त-सम्बन्ध और पितृ-पूजा तथा धर्म ये तीनों आदिकाल मे प्रायः एक ही मिलती-जुलती चीज थी।[1]

(३)

पुराने जमाने से ही भारत के उद्योग-धन्धों का प्रबन्ध झोपड़ियों में होता आया है। उस समय जब जुलाहा कपड़ा बुनता था तो वह प्रायः सब सामान अपना लगाता था। पूँजी या तो अपनी होती थी या किसी महाजन के यहाँ से कर्ज लेकर लगाई जाती थी। करघा वगैरह सब सामान उसका निज का होता था। सूत कातने से लेकर कपड़ा बुनने तक का सब काम वह जुलाहा अपने घर के सब आदमियों

१. 'लक्ष्मी' (वही, भाग १६, अंक ३, मई, सन् १९१८ ई०), पृ० १३५-३६।

—बाल-बच्चों समेत करता था; इससे उसके कुटुम्ब भर को रोजगार मिल जाता था। परन्तु जबसे विदेश के कल-कारखानों तथा देशी पुतली-घरों के बने कपड़े बाजार में बिकने लगे है, तबसे इनके कपड़ों की कद्र कम हो गई है, जुलाहों का रोजगार बैठ गया है। यही हालत और दूसरे पेशेवरों—बढ़ई, कुम्हार, चमार, सुनार इत्यादि की भी हुई है। अब पुराने व्यवसाय से उनका पेट नहीं भरता। उन्हें या तो घरबार छोड़ 'पूरब कमाने' को जाना पड़ा है, पुतली-घरों में नौकरी करनी पड़ी है या रोजाना काम करनेवाले मजदूरों की श्रेणी में मिल जाना पड़ा है। जहाँ-कही वे लोग पुराने पेशे में ही लगे हुए हैं, वहाँ उन्हे पेशे के साथ-साथ खेती भी करनी पड़ी है। जिन्हें सौभाग्य से काफी जमान मिल गई है, वे तो पूरे खेतिहर बन गये हैं, और जिन्हें ऐसा सौभाग्य न हुआ है, उन्हें सावन-भादों में अथवा खेती से छुट्टी पाने पर थोडा-बहुत अपना पुराना पेशा भी कर लेना पड़ता है, नहीं तो उतनी थोड़ी जमीन की उपज से उनकी उदरपूर्ति नहीं हो सकती।[१]

राधालाल गोस्वामी 'दास'

आप पटना-नगर के गायघाट-मुहल्ले के निवासी श्रीव्रजकिशोर गोस्वामीजी के पुत्र थे।[२] आपका जन्म शाके १७७५, अर्थात् सं० १९१० वि० (सन् १८५३ ई०) की अग्रहण कृष्ण-सप्तमी (बुधवार) को हुआ था।[३] कई कारणो से आपकी शिक्षा बहुत अधिक नहीं हो सकी थी। किन्तु, आपने स्वाध्याय का क्रम बराबर जारी रखा। कहते हैं, आपको लिखने-पढ़ने का एक व्यसन-सा था और आप नित्य आधी रात तक यह कार्य करते थे। आपका व्यक्तित्व बड़ा ही आकर्षक था। आप लम्बे, गौर वर्ण के, स्वस्थ एवं सुन्दर थे। पहनावा था बगलबन्दी, धोती और गोल टोपी। भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र से आपकी बडी आत्मीयता थी। भारतेन्दु-सखा श्रीराधाचरण गोस्वामी तो आपके भाई ही थे। प्राय: इसी सम्बन्ध

१. 'गद्य-चन्द्रोदय' (साँवलियाबिहारीलाल वर्मा, प्रकाशन-काल नहीं), पृ० १०६-७।

२. आपके पूर्वज पहले वृन्दावन में रहते थे। पीछे पटनासिटी आये। आपके पितामह का नाम श्रीगौरकिशोर गोस्वामी था। आपके दो पुत्र हुए—श्रीकृष्णचैतन्यदास और गोवर्द्धनदास।

३. साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

से वे आपके यहाँ बराबर आया जाया करते थे।[1] आप अत्यन्त संग्रही प्रवृत्ति के साहित्य-प्रेमी थे। आपकी इस प्रवृत्ति के स्मारक-स्वरूप आज भी गायघाट (पटनासिटी) में चैतन्य पुस्तकालय विद्या-व्यसनियों की सेवा कर रहा है। इसकी स्थापना आपने ही सन् १८७० ई० में की थी। आप गौड़ीय वैष्णव-सम्प्रदाय के एक प्रमुख कृष्ण-भक्त थे। आपने व्रजभाषा में अनेक ललित पदों की रचना कर भगवान् कृष्ण के सम्मुख अर्पित किया था। 'जन्माष्टमी-राधाष्टमी-बधाई' नामक एक हस्तलिखित पुस्तक, जो आपकी हस्तलिपि में ही है, पटना के चैतन्य पुस्तकालय में सुरक्षित है। इसमें व्रजभाषा के प्रमुख कवियों के साथ-साथ आपके भी अनेक पद संगृहीत हैं। आप सं० १९६८ वि० की फाल्गुन शुक्ल-प्रतिपदा को परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

शची सुवन मेरे प्यारे हो रामा, भए नदिया में।
धर्म ग्लानि देख पृथ्वी पर, श्रीअद्वैत पुकारे हो रामा।
गंगाजल तुलसींदल ले ले, बार-बार हुँकारे हो रामा।
प्रेमपयोधि निरखि गोपिन को, अगम निगम सब हारे हो रामा।
सो रस हेतु गौर वपु धरके, हरि यश जग बिस्तारे हो रामा।
नीच ऊँच सबके संग निर्तत, भेदाभेद बिसारे हो रामा।
दीनबन्धु करुणामय बनके, कोटिन पतित उबारे हो रामा।
भारतवासिन के घर घर जा, श्रीहरिनाम पुकारे हो रामा।
प्रेमामृत की वर्षा करते, ब्रज में आप पधारे हो रामा।
रूप, सनातन, भट्ट आदि से, लुप्त तीर्थ उद्धारे हो रामा।
राधालाल पतित अति भारी, निर्भय चरण-सहारे हो रामा॥[2]

(२)

देखो देखो सखि! झूलें राधे ललित हिंडोर,
ललित घटा चहुँ दिसि तें छाई, चपला चमकै जोर।

---

१. आज भी आपके संग्रहालय में भारतेन्दु बाबू की शतरंज की मुहरें और दो कुर्सियाँ सुरक्षित हैं।
२. 'चैतन्य-चन्द्रिका' (मासिक, वर्ष १, खण्ड २, पूर्णांक ७, सं० १, फाल्गुन, स० १९७७ वि०), पृ० १।

ललित वसन सबके तन सुन्दर, ललित किरन की कोर,
ललित कुञ्ज में पर्‌यो हिंडोरा ललित पटा अरु डोर।
ललितादिक सब ललित भाँति सों, गान करत चित चोर,
दासि निहारी प्राण वारिके, डारत है तृन तोर॥[1]

(३)

नमो नमो जै श्रीराधा रमणम्।
मोर मुकुट कौस्तुभ मणि झलकत, पीताम्बर मुरली धरणम्।
शोभित भाल तिलक केसर को, मकराकृत कुण्डल हलनम्।
कटि किंकिनि पग नूपर बाजै, लटकीली लटकन चलनम्।
श्रीगोपाल भट्ट छवि निरखत थेइ थेइ करत आवत भवनम्।[2]

(४)

नमो नमो जै शची कुमार।
गौड़ देश पाखण्ड दलन कों, नवदीप लीनो अवतार।
जिनकी कृपा वास हम पायो, वृन्दा विपिन भजन रस सार॥
दयाकरन प्रभु पदरज परसत धन्य रहत जेई नर नार॥[3]

(५)

बनी प्रिय साँझी सुन्दर स्वच्छ।
कहि न जात छवि कवि रहि जहँ तहँ, निरखि लुभाने अच्छ॥
पियतिय वपु धरि देखन आवत, सकुचिन होत प्रतच्छ।
अलि संकेत बढत सुख प्रतिदिन, आसिन प्रथमहिं पच्छ।[4]

(६)

गौर हरि हरित हिंडोले राजै।
हरित कुंज में नित्यानन्द सँग हरे भरे सब साजैं॥

१-४ चैतन्य पुस्तकालय (गायघाट, पटना) से प्राप्त।

निरतत भक्त हरें मन चहुँदिसि, खोल झांझ अति बाजे।
हरि प्रेमी किंकर छवि निरखैं, हरि हरि करत समाजे ॥[1]

(राजा) राधिकारमणप्रसाद सिंह

आप शाहाबाद-जिला के प्रसिद्ध ग्राम 'सूर्यपुरा'-निवासी स्व० राजराजेश्वरी प्रसाद सिंह 'प्यारे कवि'[2] के सुपुत्र थे। आपका जन्म १० सितम्बर, सन् १८९० ई० (सं० १९५८ वि०) को हुआ था।[3] आपकी आरम्भिक शिक्षा घर पर ही, पण्डितो और मौलवियों की देखरेख में हुई। स्कूल में प्रवेश पाने के पूर्व ही आपने अँगरेजी, बँगला, फारसी और संस्कृत-भाषाओ का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। सन् १९०३ ई० (६ अप्रैल) में आपके पूज्य पिताजी की मृत्यु हो गई और उनका सारा स्टेट 'कोर्ट ऑव वार्ड्स' के अधीन हो गया। उस समय आप कुल १२ वर्षों के थे। उसी वर्ष आपका नाम आरा जिला-स्कूल मे लिखवाया गया, जहाँ से सन् १९०७ ई० मे आपने इण्ट्रेन्स (प्रवेशिका) की परीक्षा पास की। उसके बाद कॉलेज की पढ़ाई के लिए आपका नाम कलकत्ता के सेण्ट जेवियर कॉलेज मे लिखवाया गया। वहाँ से एफ्० ए० पास करने के बाद आपकी शिक्षा क्रमश स्काटिश चर्च कॉलेज, कलकत्ता (सन् १९०९-१० ई०), आगरा कॉलेज, आगरा (सन् १९१० ई०) म्योर सेण्ट्रल कॉलेज, इलाहाबाद (सन् १९११-१२ ई०) पटना कॉलेज, पटना (सन् १९१३-१४ ई०) आदि शिक्षण सस्थाओ मे हुई। आपने बी० ए० की परीक्षा प्रयाग-विश्वविद्यालय से सन् १९१२ ई० मे और एम्० ए० (इतिहास) की परीक्षा सन् १९१४ ई० मे कलकत्ता-विश्वविद्यालय से पास की। सन् १९१७ ई० में जब आप बालिग हुए, तब आपकी रियासत 'कोर्ट ऑव वार्ड्स' के बन्धन से मुक्त हुई और आप उसके स्वामी हो गये। सन् १९२० ई० के आसपास अँगरेजी-सरकार ने आपको 'राजा' की उपाधि से विभूषित किया। आगे चलकर उसकी ओर से आपको 'सी० आइ०ई०' की उपाधि भी मिली। फिर, जब स्वतन्त्रता का संग्राम छिड़ा, तब आप उसमे भी पीछे न रहे। आरम्भ से ही गान्धीवाद मे आपकी गहरी आस्था थी। उसी समय आप आरा

---

१. चैतन्य पुस्तकालय (गायघाट, पटना) से प्राप्त।

२. ये स्वयं अच्छे कवि थे। जोड़ासाकूँ (कलकत्ता) में टैगोर-बाड़ी के पास ही अपने खास मकान में रहकर इन्होंने रविबाबू की 'चित्रांगदा'-नाटक का, उसी शैली में अनुवाद किया था। इनका परिचय इसी खण्ड में अन्यत्र प्रकाशित है।

३. आपके सुपुत्र श्रीउदयराज सिंहजी से प्राप्त सूचना के अनुसार। आपके इस परिचय-लेखन में 'नई धारा : राजा राधिकारमण-स्मृति-अंक' (मासिक, वर्ष २२, अंक ३-७, जून-अक्टूबर, सन् १९७१ ई०), 'राजा साहब : व्यक्तित्व और कृतित्व (डॉ० कमलेश), 'जयन्ती स्मारक-ग्रन्थ', (वही, पृ० ५५१, ५६१ और ६१९), 'हिन्दीसेवी संसार' (वही, पृ० २०९-१०), 'बिहार अब्दकोश' (वही, पृ० ९७८-७९) तथा दिनांक ६ अप्रैल, सन् १९६० ई० एव ६ अप्रैल, सन् १९६१ ई० के दैनिक 'सर्चलाइट' (अँगरेजी) में प्रकाशित क्रमशः कविवर श्रीकेदारनाथ मिश्र 'प्रभात' और डॉ० शैलेन्द्रनाथ श्रीवास्तव के लेखों से भी सहायता ली गई है।

डिस्ट्रिक्ट-बोर्ड के प्रथम भारतीय अध्यक्ष मनोनीत हुए। सन् १९२७ से ३५ ई० तक आपने मुस्तैदी और कर्म-कुशलता के साथ अनेक सामाजिक एवं प्रशासनिक सुधार किये। आपने गान्धीजी के प्रभाव मे आकर बोर्ड की चेयरमैनी तक छोड़ दी और देशरत्न डॉ० राजेन्द्र प्रसादजी के आग्रह पर बिहार हरिजन-सेवक-संघ की अध्यक्षता स्वीकार कर ली। इस पद पर रहकर आपने अछूतो की भरपूर सेवा की। सन् १९३५ ई० का वर्ष आपके जीवन का सबसे महत्त्वपूर्ण वर्ष रहा, जब अपनी रियासत का सारा भार अपने अनुज श्रीराजीवरंजन-प्रसाद सिंह को सौंपकर आप सरस्वती की आराधना मे तल्लीन हो गये। अपनी साहित्यिक सेवाओं के परिणामस्वरूप ही आप सन् १९२० ई० के बेतियावाले बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के द्वितीय वार्षिक अधिवेशन के अध्यक्ष मनोनीत हुए थे। उक्त सम्मेलन के पन्द्रहवें अधिवेशन (आरा, सन् १९३६ ई०) के आपही स्वागताध्यक्ष थे। आप आरा-नागरी प्रचारिणी सभा के भी सभापति हुए थे। एक सक्रिय सदस्य के रूप मे आपका सम्बन्ध देश की अनेकानेक सस्थाओ से रहा, जिनमे बिहार-सरकार की हिन्दी-समिति, बिहार राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना, नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी, साहित्य-अकादमी, दिल्ली, सगीत-नाटक-अकादमी, पटना, पटना-विश्वविद्यालय, सिनेट आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

आपकी गणना हिन्दी के यशस्वी-कथाकारो एवं विशिष्ट शैलीकारों मे होती है। आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल ने हिन्दी के एक अत्यन्त भावुक और भाषा की शक्तियो पर अद्भुत अधिकार रखनेवाले लेखको मे आपकी गणना की है।[1] आपका साहित्यिक जीवन आपकी छात्रावस्था (सन् १९०५ ई०) से ही आरम्भ हो गया था। आपकी साहित्य-रचना पर महाकवि रवीन्द्र, महर्षि अरविन्द और महात्मा गान्धी की विशेष छाप है। कवीन्द्र रवीन्द्र से तो आपका निकट सम्बन्ध था। बँगला की 'कर्मयोगी' और 'वन्देमातरम् के जैसी प्रसिद्ध पत्रिकाओं ने आपकी राष्ट्रीय-चेतना को प्रज्वलित कर दिया। अपने आरम्भिक जीवन मे आपने व्रजभाषा, बँगला, उर्दू और अँगरेजी मे अनेकानेक स्फुट काव्य-रचनाएँ की। आपकी यह प्रारम्भिक साहित्यिक निधि एक दुर्घटनावश काल-कवलित हो गई। सन् १९१० ई० मे कॉलेज-कहानी-प्रतियोगिता के लिए लिखी गई आपकी एक कहानी 'इन्दु' (मासिक, सं० १९७० वि० या सन् १९१३ ई०) मे प्रकाशित हुई, जिसे देखकर स्व० आचार्य शिवपूजन सहायजी ने आपको हिन्दी की कथा-साहित्य-रचना की ओर प्रवृत्त किया। उसके बाद, आपने 'नये रिफारमर' या 'नवीन सुधारक'[2] (सन् १९११ ई०) नामक एक नाटक, 'कुसुमाजलि' (सन् १९१२ ई०) नामक कहानी-सग्रह और 'नवजीवन' (सन् १९१२ ई०) तथा 'तरग' (सन् १९२० ई०) नामक दो लघु उपन्यासो की रचना की। इसके बाद तो आपकी पुस्तकाकार रचनाओ का ताँता ही लगा रहा और आप क्रमशः यश और लोकप्रियता के शिखर पर चढ़ते ही गये। कथा-साहित्य के अतिरिक्त आप नाटक और

---

१. 'हिन्दी-साहित्य का इतिहास' (पं० रामचन्द्र शुक्ल, स० २०१२ वि० पृ० ५०४)।
इस सन्दर्भ में देखिए, 'दृष्टि' के राजासाहब विशेषांक में प्रकाशित श्रीराजेन्द्रप्रसाद सिंह का 'राजा राधिकारमणजी का शब्द-गुण' शीर्षक लेख भी।

२. इस नाटक का अभिनय पहलीबार डॉ० गंगानाथ झा के निवास-स्थान पर हुआ था और इसके प्रमुख पात्रों में बिहार के स्वनामधन्य महाधिवक्ता स्व० महावीर प्रसादजी भी थे। कालान्तर में वह नाटक कालकवलित हो गया।

संस्मरण लिखने में भी सिद्धहस्त थे। उक्त रचनाओं के अतिरिक्त आपकी विषयानुसार पुस्तकाकार रचनाओं के नाम इस प्रकार हैं—

उपन्यास—(१) राम-रहीम,[1] (२) पुरुष और नारी,[2] (३) सूरदास,[3] (४) संस्कार[4], (५) पूरब और पच्छिम,[5] (६) चुम्बन और चाँटा,[6] (७) माया मिली न राम,[7] (८) मॉडर्न कौन, सुन्दर कौन ?[8] तथा (९) अपनी-अपनी नजर, अपनी-अपनी डगर।[9] कहानियाँ—(१) गान्धी टोपी,[10] (२) सावनी समाँ,[11] (३) नारी क्या एक पहेली ?[12] (४) हवेली और झोपड़ी,[13] (५) देव और दानव,[14] (६) वे और हम,[15] (७) धर्म और मर्म,[16] (८) तब और अब,[17] (९) अबला क्या ऐसी सबला ?[18] तथा (१०) बिखरे मोती[19] (भाग १)। नाटक—(१) धर्म की धुरी,[20] (२) अपना-पराया[21] और (३) नजर बदली, बदल गये नजारे।[22] संस्मरण—(१) टूटा तारा,[23] (२) बिखरे मोती (भाग २ और ३)[24]। बिहार की प्रसिद्ध मासिक हिन्दी-पत्रिका 'नई-धारा' आपके ही संरक्षण में प्रकाशित होती रही। आपको साहित्यिक सेवाओं के परिणामस्वरूप बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् ने सन् १९६४ ई० में आपको डेढ़ सहस्र मुद्राओं का पुरस्कार देकर सम्मानित किया था और मगध-विश्वविद्यालय ने २३ जनवरी, सन् १९६९ ई० को आपको सम्मानक डॉक्टरेट की उपाधि दी थी।

---

१. सन् १९३६ ई० में प्रकाशित।
२. सन् १९३९ ई० में प्रकाशित।
३. सन् १९४२ ई० में प्रकाशित।
४. सन् १९४४ ई० में प्रकाशित।
५. सन् १९५१ ई० में प्रकाशित।
६. सन् १९५७ ई० में प्रकाशित।
७. लघु उपन्यास। सन् १९६३ ई० में प्रकाशित।
८ लघु उपन्यास। सन् १९६४ ई० में प्रकाशित।
९. लघु उपन्यास। सन् १९६६ ई० में प्रकाशित।
१० सन् १९३८ ई० में प्रकाशित।
११. वही।
१२. सन् १९५१ ई० में प्रकाशित।
१३ वही।
१४ वही।
१५ सन् १९५६ ई० में प्रकाशित।
१६ सन १९५९ ई० में प्रकाशित।
१७ वही।
१८. सन् १९६२ ई० में प्रकाशित।
१९. सन् १९६५ ई० प्रकाशित।
२० सन् १९५३ ई० में प्रकाशित।
२१. वही।
२२. सन् १९६१ ई० प्रकाशित।
२३. सन् १९४१ ई० में प्रकाशित।
२४. सन् १९६६ ई० में केवल भाग २ प्रकाशित। भाग ३-४ अभी तक अप्रकाशित है। भाग ४ में आपके भाषणों के संग्रह हुए हैं।

सन् १९६२ ई० मे भारत के राष्ट्रपति ने आपको 'पद्मभूषण' की उपाधि से और प्रयाग-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन ने सन् १९७० ई० मे, 'साहित्यवाचस्पति' को उपाधि से अलंकृत किया था। आप २४ मार्च, सन् १९७१ ई० को परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

नही बेला ! लोक के साथ परलोक का परिशीलन जमीन पर कदम रखे आसमान से सितारे तोड़ना है। तुम लोक के आवर्त्त में रहकर परलोक की सेवा पूरी नही कर सकती। परलोक के चिन्तन में डूबकर दुनिया के जालिमों के सर पर पैर रख यशजटित तख्त पर बैठना मुमकिन नहीं। जबतक तुम्हारे सर पर छत्र और चमर का वितान है, तबतक कोपीन और कमंडल की महत्ता तुम्हारे हृदय में कदापि नहीं धँसती। दोनों को बराबर सँभालकर चलनेवाला विरला ही कोई कर्मयोगी होगा। बल्कल की चादर पर कमखाब की पट्टी नहीं पड़ती, न कोपीन की कोर पर कलाबत्तू का काम मुमकिन है। लोक से परलोक सधता है या नही, भगवान जाने; पर परलोक के साथ लोक को साधना टेढ़ी खीर है। जनक का जिक्र छोड़ो, वे तो देह रहते विदेह थे। यहाँ तो हमारा-तुम्हारा सवाल है। किसी को एक साथ दो लगन नहीं होती। मन की गति ही ऐसी है। दो-तरफी खिंचाव में पड़कर यह किसी का नहीं रहता। वह एक रस है, एक-बग्गा है—'एको देव: केशवो वा शिवो वा, एका नारी सुन्दरी वा दरी वा' इसीलिये बेला ! आज मैं मंजिल के किनारे आकर जब पीछे मुड़ कर देखता हूँ, तो तुम्हारे चेहरे की करुण कोमल कान्ति मेरे जीवन के धूमिल आकाश को उद्भासित कर देती है, और मेरी तमाम पर-लोक की कमाई कानी चित्ती के बराबर नजर आती है।[1]

---

१. 'राम-रहीम' (राजा राधिकारमणप्रसाद सिंह, सन् १९३६ ई०), पृ० २८५-८६।

(२)

वैसे तो कहने सुनने को शरीर का राजा कोई परदानशी मन रहा करे, मगर जाहिरा तो डंके की चोट तूती बोलती है आँखों की ही। मन की ताबेदारी तो दूर रहे मन पर भी सुलतानी चलती है इनकी। ऐसी बेजोड़ है ये आँखें ! ऐसी अनमोल हैं ये आँखें ! अभी हमें लगता है कि जिसने दुनिया में आकर दुनिया नहीं देखी, वह अभागा यहाँ आया ही क्यों ? आ भी गया तो ठहरा क्यो ? और जो दस दिन दुनिया देखकर आँखें खो बैठा, वह जन्म का अन्धा ही क्यों न हुआ ? उसकी तरस बराबर दुनिया में कोई तरस होगी ?

मगर हाय रे जीवन का मोह ! जीते है दोनों। आँख न मिली तो भी, आँख गई तो भी !

भगवन् ! क्या जीना है यह ! ऐसे जीने के ही लिये जीना ! यों जीते तो हैं संडास के कीड़े भी। रेंग-रूँग कर अपनी मियाद की मंजिलें पूरी कर देते है वे भी।

ओफ ! कैसी प्रबल है यह जीने की भूख ! न सही आँख, न सही कान, न सही जबान, पर साँस तो है ! वह है तो सब कुछ है।[1]

(३)

तो उसे कुदरत की देन नींद मिली है, हमें किस्मत की देन पंखा और पलंग ! उसे मिहनत की देन भूख है, हमें अमारत की देन दर्द-सर ! मगर हाय री जमाने की फबती ! वह रोता है, हम हँसते है, वह झोपड़ी में है, हम हवेली में; वह मजूर है, हम अमीर। मगर हाँ, सुखी कौन है—वह या हम ? यह तो अपनी-अपनी आरजू है—अपनी-अपनी नजर। वह समझता है कि हम है—हमारे साथ बेलरों की जोड़ी है और मोटर की हवाखोरी, संगमरमर की हवेली और कार-

१, 'सूरदास' (राजा राधिकारमणप्रसाद सिंह, सन् १९४२ ई०), पृ० ३-४।

चोबी की गद्दी। हम समझते है कि वह है—डेढ़ सेर चूड़ा और सेर भर भैंस का मट्ठा ला महाले आँत की तहों में रख वह ऐसा तानकर सो जाता है जैसे कि बारात की झंझटों से निबटा हुआ कोई बेटी का बाप। मगर कौन कहे, दोनों में कोई नही! मन तो दोनो का बराबर छटपट है। न उधर चैन, न इधर। एक अमारत की सुविधाएँ ढूँढ़ता है; दूसरा रेशमी सुविधाओं के खतरों के भँवर में उबचुब हो रहा है।[1]

(४)

नहीं, प्रेम और बैर बराबरी की उपज है। तुम जिससे बैर नहीं कर पाती, उससे प्रेम भी नहीं कर पाती। जिसे तुम गुरु समझ कर पूजती हो, उसे लपटकर चूमने में तुम्हारी जान उचककर होंठों पर नहीं आती। जो तुम्हें रोटी देता है, वह तुम्हारी नसों में बिजली नही उठा पाता। वह तुम्हारे दिल में आतंक भरता है, तुम्हें निःशंक नही बना सकता। तुम उसे प्यार नहीं करती, सत्कार करती हो। तुम उसे शरीर देती हो, हृदय नहीं दे पाती। जानता हूँ कि शास्त्र का हुक्म है कि तुम उसे तन-मन दोनों दो। मगर हुक्म की तामीली और है, मन की स्वच्छन्द वृत्ति और, 'सुख है तो हमें तुम्हारे सुख में, सुख पाओ जहाँ तहँ छाये रहो!' —सती की यह दीनता कुछ दिल का तकाजा नहीं, शास्त्र की आज्ञा है—धर्म की भावना है। तुम आजीवन सर पर सिन्दूर ढूँढंती हो—इसलिए नही कि सिन्दूर की नींव पर तुम्हारे जीवन का संचार—तुम्हारे हृदय का निखार है; बल्कि इसलिए कि माँग का सिन्दूर आज समाज में, घर में मर्यादा का पासपोर्ट है![2]

★

१. 'हवेली और झोंपड़ी' (राजा राधिकारमणप्रसाद सिंह, सन् १९५१ ई०), पृ० १९९।
२. 'पुरुष और नारी' (राजा राधिकारमणप्रसाद सिंह, सन् १९५० ई०), पृ० १२८।

रामकृष्ण दास (ठाकुरप्रसाद)

आप सारन-जिला के 'जगदीशपुर' नामक ग्राम के निवासी वैष्णवधर्मोपासक बाबू बालमुकुन्द लालजी के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९४४ वि० की भाद्रपद-कृष्णाष्टमी को हुआ था।[1] आपकी शिक्षा केवल मध्यमा तक हुई थी। किन्तु, स्वाध्याय के बल पर आप व्याकरण एवं हिन्दी-साहित्य के योग्य पण्डित बन गये थे। आपकी प्रकाशित पुस्तको के नाम इस प्रकार हैं—(१) ज्ञानरतन-सम्पुट, (२) श्रीरामकथा बतर्ज राधेश्याम (२७ खण्डो मे), (३) श्रीहरिश्चन्द्र-चरित्र, (४) वैराग्य-विनोद, (५) चन्द्रहास-चरित्र, (६) नीतिशतक, (७) लोकोक्ति-संग्रह, (८) षट्ऋतु-वर्णन तथा (९) श्रीवत्सोपाख्यान (राजा श्रीवत्स की कथा)। इनके अतिरिक्त ये कुछ पुस्तके अप्रकाशित ही पडी हैं—(१) शब्द-रत्नाकर (संस्कृत-हिन्दी-कोश), (२) छन्द-अमरकोश (विविध छन्दों मे), (३) श्रीगीताज्ञान-चन्द्रिका (खड़ीबोली) हरि-गीतिका छन्द मे) इत्यादि।

उदाहरण

(१)

सावन महीना मन भावन लगत यारो,
चारो ओर सुन्दर सुहावन ह्वै दरसै।
हरित भई है भूमि भरित नवाम्बु सर,
सरित सरोवर सरोज सुख सरसै॥
संकुल बकुल बन कुसुम कदम्बन कै,
विकसित विविध विलोक हिय हरपै।
'रामकृष्ण' पावस बहार बगर्यो है जग,
मन्द मन्द वारिद बुलन्द बुन्द बरसै॥[2]

(२)

सरित सरोवरन विकसित मञ्जु कञ्ज,
शोभित भ्रमर पुञ्ज गुञ्ज कुञ्ज कौरे की।
लिपटि लता है लगी डार द्रुम दम्पति सी,
लहर लुनाई लेत मारुत झकोरे की॥

---

१ आपके द्वारा दिनांक १४ जून, सन् १९५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री के आधार पर।

२. 'कवि' (वर्ष ४, संख्या ७, श्रावण, सं० १९८३ वि०), पृ० २६।

श्यामा उर श्याम अभिराम प्रतिबिम्ब लसै,
श्याम पर छाई परछाईं तन गोरे की।
'रामकृष्ण' हेरत हरषि हिय हाव भाव,
हँसि-हँसि मिलनि ओ हिलनि हिंडोरे की ॥[1]

(३)

चूनो पोत दीनो जनु पावस की पूनो निशि,
चारो दिशि चमक रही है चारु चाँदनी।
जात है नहान हित गगन सरोवर मे,
सु-चय शिलोच्चय के उड़ि उपमा बनी ॥
निर्मल नीलाम्बर में लसत पयोद-खण्ड,
तापै चन्द्रमण्डल अखण्ड सुखमा धनी।
'रामकृष्ण' ताकी शुभ शोभा सरसात कैसी,
मानो गिरि धौल पर बूटी है सँजीवनो ॥[2]

(४)

धार बहै सरिता सर की,
जल आप पिबै न पिबै जग सारो।
वृक्ष विशाल नमै फल भार तै,
अहै त्याहि? जीव हजारो ॥
स्वारथ हीन यथा घन-मण्डल,
सीचत है महि भूरि पसारो।
रामजु कृष्ण तथा जग में,
पर हेतु धरे तनु संत बिचारो ॥[3]

---

१ परिषद् के साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित हस्तलेख से।
२. वही।
३. वही।

रामचन्द्र प्रसाद

आप आरा-शहर (शाहाबाद) के 'बेगमपुर'-मुहल्ले के निवासी बाबूलाल सहायजी के पुत्र हैं। आपका जन्म १६ जनवरी, सन् १८६० ई० को हुआ था।[१] आपने सन् १६०५ ई० मे, प्रथम श्रेणी मे इण्ट्रेन्स की परीक्षा पास की थी। इसके बाद बी० ए० तक आपको प्रथम श्रेणी ही प्राप्त हुई। बी० ए० मे तो हिन्दी मे आप सम्पूर्ण विश्वविद्यालय में प्रथम रहे। बी० ए० के बाद आपने योग्यता-सहित एल्० टी० की परीक्षा पास की और सन् १६१० ई० मे सरकारी नौकरी मे प्रविष्ट हो गये। सरकारी शिक्षक के रूप मे आप बिहार के अनेक स्कूलो मे रहे। सन् १६३६ ई० मे आप तिरहुत-डिवीजन के स्कूल-इन्स्पेक्टर के पद पर नियुक्त हुए और सन् १६४४ ई० मे आपको 'रायबहादुर' की पदवी प्रदान की गई। 'बिहार-शिक्षणशास्त्री-संघ' के 'सचिव'-पद पद पर रहते हुए आपने कई हिन्दी-पत्र-पत्रिकाओ का प्रकाशन किया था। आपके स्फुट हिन्दी-लेख 'शिक्षा', 'साहित्य-पत्रिका', 'मनोरंजन', 'लक्ष्मी' आदि पत्रिकाओ में प्रकाशित हुआ करते थे। पुस्तकाकार रचना के रूप मे आपकी केवल एक ही कृति मिलती है—'भारतवर्ष का इतिहास', जो स्कूली छात्रो के लिए उपयोगी है।

उदाहरण

(१)

भोर का सुहावना समय था। महाराज की गाड़ी आरा-स्टेशन पर आ लगी। पटना के कमिश्नर मिस्टर मौड और आरा के मैजि-स्ट्रेट मिस्टर जौनसन् ने महाराज का दर्शन तथा स्वागत किया। वहाँ से महाराज गिरजाघर में गये। ईश-पूजा समाप्त कर वे मोटर से जज साहब के कम्पाउण्ड में 'आरा-हाउस' देखने के लिए गये। उसके बाद जब महाराज शहर में निकले तो उनने देखा कि सड़क की दोनों ओर इस प्रकार की रुकावटें खड़ी कर दी गई हैं कि प्रजाओं को उनके निकट जाकर दर्शन करने का मौका नहीं मिलता है। यह देखकर महाराज का दयालु हृदय दया से द्रवीभूत हो गया। उनने विचारा कि महा-राजा और प्रजा के बीच यह रुकावट कैसी ? तुरत आज्ञा हुई कि सभी टाइयों को तोड़ दो ताकि लोग सुगमता से उनका दर्शन कर सकें ! अब क्या कहना था। सारी जनता उमड़ पड़ी और महाराज की मोटर

१. आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के आधार पर।

चूम-चूम कर दर्शन करने लगी। सबों का हृदय आपकी दयालुता से से गद्‌गद् हो गया। सबों ने एक स्वर से महाराज का जय जयकार मनाया। जिन महाराज के हृदय में अपनीप्राणप्रिय प्रजा के प्रति इतना अगाध प्रेम वो दया हो, भला ऐसे उदार महाराज की जय-कामना कौन ऐसा पुरुष है, जो हृदय से नही करेगा।'[1]

(२)

सुन लो भैया सुन लो, मेरे जीवन का कुछ हाल,
कान लगाकर सुन लो, इसको करो न टामलटाल।
सुन्दर कथा सुनाऊँगा।
मनका मोद बढ़ाऊँगा॥
हिन्द-महासागर था मेरा सुन्दर वासस्थान,
सुख से वही विचरता था मैं करता ईश्वर-ध्यान।
निसदिन चैन उड़ाता था।
फूला नही समाता था॥
यहाँ-वहाँ फिरता चलता था हँसी खेल था काम,
जहाँ थकावट हुई वही पर लेता था विश्राम।
यही काम दो करता था।
सोता और टहलता था॥
एक बार दस ग्यारह साथी आये मेरे पास,
कहा, चलो जो चलो टहलने सब मिलकर आकाश।
सुन्दर दृश्य दिखावेंगे।
सार्थक जन्म करावेंगे॥
सूर्य किरण की हुई सवारी चढ़े सभी सानन्द,
वहाँ नभोमण्डल में जाके फिरने लगे स्वच्छन्द।

१. 'शिक्षा' (खण्ड २६, संख्या २, रजत-जयन्ती-अंक, मई, सन् १६२५ ई०), पृ० ३४-३५

हवा उधर से आती थी।
इधर हमें ले जाती थी॥
अहा! अलौकिक दृश्य मनोहर! कैसा सुन्दर देश,
देख नही होगा किसके मन अन्तर्हर्ष विशेष।
यह ईश्वर की माया है।
जिसने जगत बनाया है॥[1]

रामचन्द्र शर्मा 'काव्यकण्ठ'[2]

आप आरा-नगर के 'तरी'-मुहल्ला के निवासी प० श्रीरामलाल पाण्डेय 'धर्मशास्त्री'[3] के पुत्र हैं। आपका जन्म स० १९५५ वि० को मार्गशीर्ष शुक्ल-पंचमी (सोमवार) को हुआ था।[4] आपकी प्राथमिक शिक्षा नगर की पाठशाला मे हुई। आपने व्याकरण, न्याय, वेदान्त तथा साहित्य का सामान्य ज्ञान अपने घर पर ही प्राप्त किया। तदनन्तर, हिन्दू-विश्वविद्यालय, वाराणसी से आपने 'साहित्यशास्त्री' तथा बिहार-सस्कृत-समिति, पटना से अन्य कई परीक्षाएँ पास की। शिक्षा-समाप्ति के बाद आपने राष्ट्रसेवा मे अपना समय देना शुरू किया।

आपके द्वारा लिखित हिन्दी एव संस्कृत की रचनाएँ सन् १९१३ ई० से ही प्रकाश मे आने लगी थी। उस जमाने मे आपकी रचनाएँ दैनिक 'प्रताप' मे बहुधा प्रकाशित होती रहती थी। इसके अतिरिक्त आपकी रचनाएँ 'प्रभा', 'सरस्वती' 'प्रजाबन्धु' 'तरुण भारत', 'कृष्ण-सन्देश', 'माधुरी', 'विश्वमित्र' आदि पत्र-पत्रिकाओ मे यथावसर प्रकाशित हुआ करती थी। इन स्फुट रचनाओं के अतिरिक्त आपके द्वारा लिखित 'शिवा-प्रतिभा' नामक एक

---

१. 'मनोरंजन' (भाग २, संख्या १, मार्गशीर्ष, स०१९७० वि०, दिसम्बर, सन् १९१३ ई०), पृ० ३८।

२ सर्वप्रथम आपने अपना उपनाम 'राष्ट्रीय पथिक' रखा, परन्तु तत्कालीन अँगरेजी शासन से तग आकर आपने उसे बदलकर 'प्रमत्त' कर दिया। अध्ययन का क्रम टूट चुका था। आप सर्वत्र राष्ट्रीयता के जागरण में सहायता पहुँचाने का कार्य करते रहे। हिन्दी और सस्कृत में व्याख्यान देना और कवि-सम्मेलनों में भाग लेना आपका व्यसन-सा हो गया था। ऐसे ही समय 'हिन्दी-साहित्य-परिषद्', जबलपुर ने आपको 'काव्यकण्ठ' की उपाधि दी थी।

३ इनके वश में एक-से-एक विद्वान् हुए। इनके ज्येष्ठ भ्राता प० श्रीरामलगन पाँड़े को काशी के सर्वमान्य पं० शिवकुमार शास्त्री ने 'विद्वन्मुकुटमणि' की उपाधि दी थी। वे बहुत ही विद्वत्तापूर्ण शास्त्रार्थ करते थे। पं० तात्याशास्त्री उन्हें सरस्वती का वरद पुत्र कहा करते थे।

४ आपके द्वारा दिनांक १९ जुलाई, सन् १९५९ ई० को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री के आधार पर। किन्तु, 'मिश्रबन्धु-विनोद', (वही, पृ० ५९१) और 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ', (वही, पृ० ६५५) में आपका जन्म स० १९५८ वि० बतलाया गया है।

पुस्तक प्रकाशित हुई थी, जिसके प्रथम संस्करण के प्रकाशन का भार आपने अपने ऊपर ही लिया था। इसके बाद आपके द्वारा लिखित 'पत्रिका' (महाकाव्य), 'मुरलिका' (कविता-संग्रह) तथा 'हमारी कविताएँ' (स्फुट कविता-संग्रह) आदि पुस्तकें अद्यावधि प्रकाशित नहीं हो सकी हैं। आज भी आप सरस्वती की आराधना में संलग्न हैं।

उदाहरण

(१)

विध्वंस वाटिका हाय! हुई, कोमल कलिकाएँ धूल गिरीं।
सुन्दर सुमनों में गन्ध नहीं, लोनी लतिकाएँ हाय! मरी॥
मालिन! क्यों तेरे केश खुले, मुख की प्रतिभा क्यों क्षीण हुई?
क्यों शोकतप्त आँसू बहते, है सिसिक रही क्यों दीन हुई?
तेरा उपवन है उजड़ गया, यह व्यथा विकल तुझको करती!
था सींचा जिसको प्रणय-सुधा से, वही अनल ज्वाला जलती!
यह दृश्य देखती आँखों से, पर हृदय विदीर्ण हुआ जाता!
मंजुल मधुस्निग्ध पराग पुष्प का, मधुप चूसता मदमाता!
तेरे माली का पता नहीं, क्या घोर नींद उसको आई?
क्रन्दन-ध्वनि से उस निद्रित को, तू सखि न जगा अब तक पाई॥[१]

(२)

काँप उठे सुर लोकप-किन्नर, मन्मथ मूरखता मन ठानी,
खर्व किया जिसने मघवा मद, शेष-महेश धरे सिध-ध्यानी।
मानव मान-न, भ्रान्त अरे सुर, 'कृष्ण अजेय' हुई नभ-बानी।
ग्वालिनियाँ निज प्रेम की डोर में, बाँधे हुई, आज-शारँग-पानी॥

× × × ×

वेद अनादि अनन्त कहैं, भृकुटि लख वक्र सभी सुर काँपे,
तारे इशारे पै नाच रहै निशि, सोभे दिनेश धरातल नाँपे।

१. 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही), पृ० ५६१ तथा 'बिहार के नवयुवक-हृदय' (वही), पृ० २७४-७५।

एक उसाँस में? सन्न शची-पति, अब्ध उतुंग, हिमालय हाँफे,
भाग्यवती ब्रज की वनिता, धरि अंक जिन्हें हरि कुंज में चाँपे ॥[1]

(३)

मुरलीधर ने मुरली से कहा, मुरली! सुन ले यह बात हमारी।
पान कराया तुझे अधरामृत, ओठ पै जीभ की सेज उसारी।
पाँव दबाया सुसेवक सा, मुख चुम्बन-भेद सप्रेम बता री।
प्रौढ़ किया उपकार न भूल, बजो ब्रज में न बजी हो कभी री।

× × ×

हरि की सुन बात लगी मुरली, निज रंध्र अमी बरषा बरसाने।
बूड़े सभी जड़ जंगम जीव, वियोग की आग लगी सुलगाने।
आँच लगी जब गोपिन को, तब व्यग्र हुई निकली बरसाने
रागिनियाँ करजोर खड़ीं सब, राग लगे हरि के गुण गाने ॥[2]

(४)

ऊधो आके निकट नगरी गेह पूछा विशाखा,
बोली वामा इक नतमुखी आ रहे हो कहाँ से?
कोई है क्या प्रबल उससे काम जो ढूँढते हो,
राही बोलो विमल मन से श्याम ने है पठाया ॥
ऊधो बोले तपमद भरे योग गाम्भीर्य मुद्रा,
हाँ है मेरी परिचित सखी—हूँ अतः पूछता मैं।
मैं तो योगी भ्रमण करता—कामनाशून्य भू का,
मेरे जैसे पुरुष जग में—दूत कैसे बनेगा?
तेरे हाथों मुरलीधर ने—पत्र कोई दिया है,
जाके देना ब्रजयुवति को जो मिले कुंज कोई।

---

१. 'मुरलिका' (खण्डकाव्य) से। आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री से।

२. वही।

क्यों तू ऊधो ! अनृत कहते, योग शिक्षा यही है ?
मैं ही देखो महरि-सुत की प्रेमदग्धा विशाखा ।।
देखो बैठी उस तरु तले, जो सखी खिन्नचित्ता,
प्यारी जानो हृद्‌य धन को, मुक्तकेशी कृशांगी ।
मेरा तेरा परिचय नहीं, झूठ तूने बताया,
राही ! तेरा अनृत कहना, खेद की बात मानो ।।
बच्चे वे थे महरि-सुत के मित्र प्यारे सगे से,
तूने जाना गलत उनको, मन्दधी ग्वाल बेटे ।
वे तो तेरे सजग उर की भावना देखतेथे,
ऊधो, मिथ्या-कथन करके भद्रता आप खो दी ।।[1]

रामचरित्र सिंह

आप पटना-जिला के 'तारणपुर' नामक ग्राम के निवासी बाबू झब्बूसिंहजी के पुत्र थे। आपका जन्म सन् १८५९ ई० की माघ कृष्ण-सप्तमी को हुआ था।[2] आपकी आरम्भिक शिक्षा गाँव की पाठशाला मे ही हुई। उसके बाद आपकी स्कूली शिक्षा का क्रम आगे न चल सका। पटना के प्रसिद्ध खड्गविलास प्रेस की स्थापना में आपने भी सहायता की थी। आप महाराजकुमार बाबू रामदीन सिंहजी के वरिष्ठ मित्रो मे थे। आपकी साहित्यिक सेवा का आरम्भिक वर्ष सन् १८७४-७५ ई० बतलाया जाता है। आप हिन्दी के परम हितैषी, सुलेखक एव आशुकवि थे। आपकी लिखी और प्रकाशित पुस्तकें आठ बतलाई जाती हैं, जिनमे एक बिहार-बन्धु प्रेस से प्रकाशित 'नृप-वंशावली' ही तारणपुर के श्रीवेणी पुस्तकालय, मे उपलब्ध है। आपकी अप्रकाशित रचनाओ के नाम ये हैं—(१) चतुर-विलास, (२) दृष्टान्त-विलास, (३) नीति-विलास, (४) हास-विलास (३ भागो मे), (५) मनोरजन-विलास, (६) देशीगणित-क्षेत्र-चन्द्रिका तथा (७) लेखा-प्रदीप। सन् १८८३ ई० के श्रावणमास मे आप परलोकगामी हुए।[3]

---

१. 'पत्रिका' (अप्रकाशित महाकाव्य) से। आपके द्वारा प्रेषित।

२. आपके पौत्र श्रीपारसनाथ सिंह ('आज', वाराणसी) द्वारा दिनांक ५ अगस्त, सन् १९५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार। इनके पुत्र श्रीधीरेन्द्रनाथ सिंह ने दिनांक १ मार्च, सन् १९६४ ई० को प्रेषित सूचना में आपकी जन्मतिथि आश्विन-पूर्णिमा, शाके १२९९ साल बतलाई है।

३. श्रीधीरेन्द्रनाथ सिंह (तारणपुर, लखनपार, पटना) ने सूचित किया है कि आपकी मृत्यु लगभग सन् १८९० ई० में, गया में हुई थी।

उदाहरण

(१)

गुरु गणपति अवधेश पुनि, सुमिरि उदयपुरधीश।
हास विलासहिं रचत है, धरि रसिकन पद सीस॥
मैं बालक सब भाँति सों, तोहिं सब लायक जानि।
श्री सज्जन महराज को, करो समर्पण आनि॥[1]

(२)

एक आदमी भोजपुर से मगह (मगध) में आया और एक आदमी को स्त्री के पुकारने में सुना कि 'कौन हगे'। इस लफ्ज (शब्द) को यादकर लगा मगहियों को चिढ़ाने और सब चिढ़ने लगे। एक उद्योगी मगहिया ने इस बात की तलाश के लिए भोजपुर में गया और उसी सख्स के यहाँ उतरा। खाने गया तो देखता है कि बकरी चावल खा रही है। यह देखकर भोजपुरिया ने अपनी माँ को पुकारा कि 'इयवा छेर छेर' (बकरी-बकरी)। इस बात को सुनकर मगहिया ने कहा, वाह, साहिब, आप तो खूब इयवा को छेराते हैं। यह सुनकर बेचारा लज्जित हो गया और उस दिन से 'कौन हगे' का कहना ही छोड़ दिया।[2]

---

१. 'हास-विलास' से। श्रीवीरेन्द्रनाथ सिंह (वही) से प्राप्त।
२. वही। उन्हीं से प्राप्त।

रामचीज पाण्डेय 'राम'

आप गया-जिला के 'अरवल' नामक स्थान के निवासी पं० उग्रह पाण्डेय[1] के पुत्र थे।[2] आपका जन्म स० १९४२ वि० (सन् १८८५ ई०) की ज्येष्ठ शुक्ल-द्वादशी को हुआ था।[3] जब आप सात वर्ष के थे, तभी आपके पिताजी का देहान्त हो गया। पिताजी के देहान्त के लगभग एक वर्ष बाद माताजी के प्रयास से आपका नाम नगवाँ (बलिया) के एक ग्राम-पाठशाला मे लिखवाया गया। आप अपनी कक्षा मे बराबर प्रथम एवं द्वितीय होते रहे। पाठशाला की पढाई समाप्त होने पर आप पटना ट्रेनिंग-स्कूल मे चले आये। किन्तु, माताजी की अस्वस्थता के कारण आपको बीच मे ही पढाई छोड देनी पडी। इसके पश्चात् आप अपने प्रधानाध्यापक श्रीशरदचन्द्र ब्रह्मचारी के प्रयास से किशनगज (पूर्णिया) में गुरु ट्रेनिग-स्कूल के प्रधान पण्डित के पद पर प्रतिष्ठित हुए। किन्तु, कुछ दिनो बाद ही अपनी माताजी के सेवा-भाव से प्रेरित होकर आप इस पद को त्यागकर डुमरांव (शाहाबाद) चले आये। डुमरांव से आप मुरार मिड्ल-स्कूल मे प्रधान पण्डित के पद पर नियुक्त हुए। वहाँ से दो मास बाद ही अरवल मिड्ल स्कूल मे आपकी बदली हो गई। कुछ वर्ष पूर्व तक आप अरवल मिड्ल इगलिश स्कूल मे थे। आपका साहित्यिक जीवन सन् १९०७ ई० से आरम्भ होता है। स्फुट लेख और कविताओ के अतिरिक्त आपने श्रीईश्वरनाथ सिह के साथ 'चन्द्रकला' नामक एक उपन्यास लगभग दो-सौ पृष्ठो मे, सन् १९०५ ई० मे लिखा था, जो अब अनुपलब्ध है।[4] आपकी अन्य स्फुट रचनाएँ 'बिहार-बन्धु', पाटलिपुत्र', 'लक्ष्मी', 'धर्माभ्युदय', 'भारतेन्दु', 'मनोरजन', प्रियवदा' और 'शिक्षा' मे प्रकाशित मिलती है। आप कुशल कवि होने के साथ-साथ शोधपूर्ण साहित्य के अनुभवी लेखक, हिन्दी के मननशील शिक्षक और प्रचारक हैं। बिहार के पुस्तकालय-आन्दोलन मे भी आपकी सेवाएँ स्मरणीय है। आपकी पुस्तकाकार रचनाओ मे (१) 'बिहारी-वीर', (२) 'ब्राह्मण-रत्नमाला'[5] तथा (३) 'मित्र-वेष मे शत्रु'[6] उल्लेख्य हैं।

उदाहरण

(१)

गया जिले के अरवल से ५ मील दक्षिण, छोटा-सा पुराना 'खयइनी' नाम का एक गाँव है। वहीं सन् १७८५ ई० के जनवरी महीने में

१. 'गया के लेखक और कवि' (वही, पृ० १६१) में इनका नाम 'अनुग्रह पाण्डेय' बतलाया गया है।

२ आपके पूर्वज पाण्डेपुर-बलिया (उत्तरप्रदेश) के एक प्रतिष्ठित सद्गृहस्थ थे तथा विद्वत्ता के लिए ब्राह्मण-समाज में उनका समुचित सम्मान था।

३ आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री के अनुसार।—देखिए, 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ, (वही, पृ० ६४५) भी। 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, पृ० ४५३) में आपका जन्म-काल सं० १९४७ वि० बतलाया गया है।

४ यह उपन्यास 'बिहार-बन्धु' के तत्कालीन सम्पादक श्रीरामनरेशलालजी की असावधानी से कहीं खो गया।

५. 'लक्ष्मी' (गया) में क्रमशः प्रकाशित।

६, वही।

बाबू जीवधर सिंह का जन्म एक साधारण राजपूत किसान के घर में हुआ था। चूँकि इनके पिता एक बल्ली क्षत्रिय थे, इस हेतु इन्हे मातृ-भाषा पढ़ाकर युद्ध-विद्या में शिक्षा देने लगे। थोड़े ही दिनों मे सिंहजी को अश्वारोहण का अच्छा अभ्यास हो गया। गदका खेलते-खेलते इनमें ऐसी फुर्ती और चालाकी आ गई थी कि इसे देखकर दर्शक लोगों को बड़ा आश्चर्य होता था। कुश्ती लड़ने में भी आप एक ही थे। मृगया-आखेट के आप बड़े शौकीन थे। सप्ताह में एक दिन वन्य पशुओं का शिकार अवश्य करते थे। जिस पशु के पीछे ये पड़ते थे अपनी अव्यर्थ गोलियों से जरूर जख्मी करते थे।

२० वर्षों की उम्र में बाबू साहेब महाराजा बेलखरा की रियासत में पुलिस के जमादार नियुक्त हुए और थोड़े ही दिनो में अपनी कार्य-दक्षता, निर्भयता, साहस तथा स्वामी-भक्ति से इन्होने महाराजा का मन मुट्ठी में कर लिया। महाराज यशवन्त सिंह ने आपको कर-विभाग का प्रधान अधिकारी बनाया और ये भी अपने नये काम को नूतन उत्साह से करने लगे।[१]

(२)

बहुत-से लोग महात्मा परशुराम पर मातृ-हत्या और भ्रातृ-हत्या का घोर पातक लादेंगे। परन्तु, जो लोग अपने देश, जाति और कुल को कलंकित नहीं देखना चाहते, जो लोग अपने वंशजों का मस्तक समाज के सामने नत नही देखना चाहते, जो अपनी जाति की ओर अँगुली उठाने का अवसर किसी को नहीं दिया चाहते—वे महात्मा परशुराम पर उक्त दोषारोपण नहीं करेंगे। इसके अतिरिक्त यह भी सम्भव है कि महात्मा-परशुराम को यह विश्वास हो कि मैं पिता की उस आज्ञा का पालन करके जिसकी अवज्ञा चार बड़े भाइयों ने कर दी, पिता को अवश्य प्रसन्न कर लूँगा और मुँहमाँगा वर प्राप्त करूँगा। खैर! जो

१. आपके द्वारा लिखित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री (बिहार-वीर) से।

हो, महात्मा परशुराम अपने इस कार्य द्वारा यह शिक्षा दे रहे हैं कि यदि तुम्हारी परमपूज्य माता भी तुम्हारे देश और तुम्हारी जाति की अप्रतिष्ठा और अपमान करे और तुम्हारा पिता आज्ञा दे तो तुम निःसंकोच उसकी खबर लो।[१]

(३)

अपनाया था राम ने, पशु पक्षिन को धाय।
तुम केवल मनुजात भी, नहीं सके अपनाय ॥
राम गीध को गोद में, सहित नेह भरि लीन्ह।
तुमने अपने बन्धु को, हाय अछूता कीन्ह ॥
करो सछूत अछूत को, बोली बोलो एक।
भेद भाव को छोड़ के, भारतीय होवो एक ॥[२]

(४)

हे हो बजरंग देखो, देश को अनूप हाल,
कष्ट सहते हैं, वीर भारत भलाई हेत।
देस हित कोऊ, देसभासा हित कोऊ हाय,
देसबन्धुहित कोऊ, प्रान हूँ गवाँई देत।
क्षुधित प्रजान नाथ, रहित अभागन की,
राँड़ अबला की कहूँ, आह-सी सुनाई देत।
राम जे धनो ओ मनी, देस के कहानेवाले,
ऐसे दरिया मौज, मारते दिखाई देत ॥[३]

---

१. 'ब्राह्मण-रत्नमाला' से।—देखिए, 'लक्ष्मी' (मासिक, मार्च, सन् १९१४ ई०); पृ० ११५।
२. आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री से।
३. उक्त सामग्री से ही।

रामजीशरण विन्ध्याचल 'कविकिंकर'

आप चम्पारन-जिला के 'हरपुरनाग' (मेहसी) नामक स्थान के निवासी श्रीशिवप्रसाद लाल श्रीवास्तव के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९३९ वि० (सन् १८८२ ई०) की भाद्र शुक्ल-चतुर्दशी (सोमवार) को हुआ था।[1] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। अपने पिता से ही आपने फारसी, अँगरेजी और हिन्दी की शिक्षा पाई। काव्यक्षेत्र मे प्रवेश पाने के लिए आपने पिंगल और संस्कृत के ग्रन्थो का भी अवलोकन किया। यो, बचपन से ही आपकी प्रवृत्ति काव्य-रचना की ओर थी और दस वर्ष की अवस्था से ही आप तुकबन्दी करने लगे थे। काव्य-रचना का व्यसन इतना बढ़ा कि इसके चलते आपकी पढाई भी छूट गई। १७ वर्ष की उम्र मे आपने वैष्णव महात्मा पं० श्रीरामकृष्ण मिश्र शर्मा से 'राममन्त्र' की दीक्षा ली। दीक्षित होने पर आपने सदा तत्त्वज्ञानी योगियो और सद्गुरुओ की संगति मे ही अपना जीवन-यापन किया। आप श्रीमहावीरजी के अन्यतम भक्तो मे थे। जीवन-यापन के लिए आपने कुछ दिनो तक स्कूलो मे शिक्षक का काम किया था, किन्तु बाद मे वैद्य की वृत्ति मे लग गये।

काव्य रचना ही आपके जीवन का प्रमुख व्यसन रहा। आपकी कुछ स्फुट रचनाएं उर्दू और अँगरेजी मे भी बतलाई जाती हैं। आपके द्वारा रचित छोटी-बडी पुस्तकाकार रचनाओं मे 'कृष्णायन'[2] का विशेष महत्त्व है। यह अवधी-भाषा मे लिखा एक बृहत्काय महाकाव्य है जिसकी रचना लगभग नौ वर्पों की साधना के पश्चात् आपने की है। मुख्यत: इसी ग्रन्थ के कारण सन् १९५५ ई० मे आपको बिहार-राष्ट्रभापा-परिषद् से पन्द्रह सौ रुपये का वयोवृद्ध सम्मान-पुरस्कार प्राप्त हुआ था। आपके द्वारा रचित शेष पुस्तको के नाम इस प्रकार हैं—(१) प्रार्थना-मनोरमा[3], (२) हनुमतयश पताका[4], (३) महासंकटमोचन[5], (४) विपत्ति-भंजिनी[6], (५) विनय-रत्नाकर[7], (६) सूर्य-चालीसा[8], (७) तुलसी-चालीसा[9],

---

१ देखिए 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही), पृ० ८१। साथ ही देखिए, 'बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् का वार्षिक कार्य-विवरण, (सन् १९५५ ई०), पृ० १०; जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ (वही, पृ० ६७२), 'मिश्र-बन्धु-विनोद' (वही, पृ० ३५८-५९) तथा दिनांक २५ जुलाई, सन् १९५४ ई० को श्रीरामाश्रयप्रसाद श्रीवास्तव (हरपुरनाग चम्पारन) द्वारा प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री। कहा जाता है कि जब आप दो वर्ष के थे तब नौकारूढ होती हुई अपनी माता की गोद से गण्डकी में डूब गये थे। फिर, किसी मल्लाह ने आपको छानकर आपकी जान बचाई थी।

२. (क) मध्यप्रदेश के सुप्रतिष्ठित साहित्यसेवी पं० द्वारकाप्रसाद मिश्र ने भी इसी नाम का एक विशालकाय काव्य ग्रन्थ अवधी-भाषा में लिखा है।
(ख) आपने अपने 'कृष्णायन' (नौ खण्डों में) का प्रकाशन स्वयं किया था। इसके प्रकाशन में वैष्णवरत्न बाँसघाट-निवासी बाबू विश्वम्भरप्रसादजी विशेष रूप से सहायक हुए थे। इस सिलसिले में आपको अपनी जमीन भी रेहन रखनी पडी थी।

३. सं १९७५ वि० में रचित। ३ अध्यायों में भगवत्स्तोत्र।

४. सं० १९७० वि० में रचित। श्रीहनुमान्‌जी से सम्बद्ध १०५ गीता-छन्द।

५. सं० १९७३ वि० में रचित। ३० सवैया-छन्दों में रचित श्रीहनुमान्-सम्बन्धी पुस्तक।

६. सं० १९६६ वि० में रचित। ३१ चचला-छन्द में रचित श्रीहनुमद्विनय।

७. १०१ अध्यायों और उतने ही श्लोकों में रचित भगवत्स्तुति।

८. रमेश्वर प्रेस, दरभंगा से प्रकाशित। ४०'चौपाइयों में रचित।

९. उक्त प्रेस से ही प्रकाशित। 'हनुमानचालीसा' की तरह ४० चौपाइयों में रचित।

(८) नामयश-दर्पण[१], (९) नामयश-कुटीर[२], (१०) प्रेमवर्द्धिनी[३], (११) मंगलमंजूषा[४] (१२) शारदा-लम्बोदर[५], (१३) विलोम-दोहावली[६], (१४) कलह-मोचिनी-विनय[७], (१५) गीता-पद्यावली[८], (१५) जानकी-विनय[९], (१७) श्रीगुरुचालीसा[१०], (१८ जै महावीरजी[११], (१९) कल्पलतिका[१२], (२०) प्रेमकुसुमाजलि[१३] आदि। इन पुस्तको मे 'कृष्णायन' के अतिरिक्त केवल सूर्यचालीसा' और तुलसीचालीसा' ही अबतक प्रकाश मे आ सकी है। शेष पुस्तकें अप्रकाशित ही पडी है।

उदाहरण

(१)

जो अज अगम अखिलेश अविनाशी अगोचर भ्राजहीं,
निर्गुण सगुण सुअमृत अकल सच्चिदानन्द विराजही,
आत्मा अनाम अरूप ईश अनूप सोहत श्रुति वदत,
तेहि परम पुरुष परेश रामहि वंदना पुनि-पुनि करत।
जो वचन वाचा प्राण प्राण श्रवण श्रोत्र विराजही,
पुनि चच्चु लोचन मन सुमन जग वाह्य भीतर भ्राजही,
पावक पवन सम जासु बहु विधि रूपवर जग श्रुति वदत
तेहि परम पुरुष परेश रामहि वंदना पुनि पुनि करत।
जो मनन मनसा होत नहि ध्रुव ताहि ते है मनन जो,
नहिं होत आविष्कार वाचा प्रगट तासन वचन जो,

---

१. स० १९५९ वि० में रचित। २५ अशोक पुष्पमंजरी-छन्दों में रचित रामनाम-माहात्म्य।
२. स० १९७० वि० में रचित। १८ अध्यायों और ३०० दोहों में वर्णित रामनाम-माहात्म्य।
३. स० १९३९ वि० में रचित। २५ छप्पय-छन्दों में रचित शिवस्तोत्र।
४. स० १९६४ वि० में रचित। रचना श्लोकों में।
५ सं० १९६७ वि० में रचित। ३० रोला-छन्दों में गणेश एवं शारदा-स्तोत्र।
६. सं० १९०५ वि० में रचित। २१ दोहे, जो उलटने से सोरठा बन जाते हैं।
७. सं० १९५९ वि० में रचित। २५ हरिगीतिका-छन्दों में रचित हनुमत्स्तोत्र।
८ पद्यों में श्रीमद्भगवद्गीता का अनुवाद।
९ श्रीजानकीजी से सम्बद्ध पद्य।
१०. स० १९९९ वि० में रचित। ४० सोरठों में गुरुस्तोत्र।
११. सं० १९९४ वि० में रचित। ४१ विष्णुपद-छन्दों में रचित हनुमत्स्तोत्र।
१२. स० १९७२ वि० में रचित। १५ सवैया-छन्दों में हनुमद्विनय।
१३. सं० १९६३ वि० में रचित। दो अध्यायों में रचित; प्रत्येक अध्याय में १०८ अनुच्छेद।—'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही), पृ० ३१ ग्रन्थ की चर्चा है।

दृग श्रुति न देखत सुनत जेहि विपरीत यहि श्रुति वदत
तेहि परम पुरुष परेश रामहिं वंदना पुनि पुनि करत ।
जो हृदय चेतन भाव मन मेधा धृति प्रज्ञान है,
विज्ञान दृष्टि मती मनीषा स्मृति गति अज्ञान है,
पुनि कामना संकल्प वर जो पंच भूतन श्रुति वदत,
तेहि परम पुरुष परेश रामहिं वंदना पुनि पुनि करत ॥[1]

(२)

मरिहहि सकल जानि यह ताता, उठहु करहु अब रण रंग दाता ।
लहहु सुयश जगजीति समाजा, भोगहु सुखद अकंटक राजा ।
प्रथमहिं राखेउ मारि जमाता, होहु निमित्त मात्र तुम ताता ।
मोर हते रण बीरन मारो, इहाँ न कछु दुख हृदय विचारो ।
प्रबल प्रवह प्रभुवश धनु धारो, गद गद कंठ सभीत निहारो ।
पुनि पुनि बंदि चरण भगवाना, विनय करन लागे मतिमाना ।
अस्तुति करि तन मन वर बानी, माँगि क्षमा पुनि पुनि शुभ खानी ।
बोले तात तजहु यह रूपा, सहिन जात प्रभु उग्र स्वरूपा ।
सो अब रूप दिखावहु ताता, जो अति रुचिर श्यामघन गाता ।
तुरत विराट रूप हरि त्यागी, भयउ मनोहर जन अनुरागी ॥[2]

(३)

कपिगणपते ! हनुमान अंजनिसुवन हे विनती करूँ,
वर सुखद रक्षक जानि तोहि सरोज पावन शिर धरूँ ।
समुझत दुखारी दीन सेवक हे कपीश कृपा करो,
तुमही रमा हरि आन सभ घर विविध अशुभ कलह हरो ।
× × × ×
जय जयति जय हनुमान अजनि लाल जय वर वीर
जय महावीर विशाल बुद्धि जयति संगर धीर ।

---
१. 'श्रीकृष्णायन' (श्रीरामजीशरण विन्ध्याचल 'कविकिंकर', सन् १९४९ ई०), पृ० ५-६ ।
२. 'श्रीकृष्णायन' (वही), पृ० ६३७ ।

जय पवन पूत अकूत बलनिधि जयति सुर हनुमान
तुम धन्य त्रिभुवन वीर विजयी कौन तो सम आन ॥

× × × ×

जै हनुमान कृपालु सुकंठहिं संकटते झट दिन्ह छुड़ाई
निर्भय राज्य दिवाइ कियो तेहि सानुज श्रीरघुनाथ मिलाई ।
आपति आगि लगी कपिधाय कलेवर तौ जल धाइ बुझाई,
मोर मनोरथ पूर्ण करो हनुमान तुम्हें सियराम दुहाई ॥'[1]

रामवहिन मिश्र

आप शाहाबाद-जिला के 'पथार' नामक ग्राम के निवासी पं० सिद्धेश्वर मिश्र[2] के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९४३ वि० (सन् १८८६ ई०) की चैत्र-पूर्णिमा को हुआ था।[3] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। तदनन्तर संस्कृत, व्याकरण और साहित्य की शिक्षा डुमराँव (शाहाबाद) मे हुई। वहाँ से आपने संस्कृत के पाणिनीय व्याकरण से प्रथम श्रेणी मे प्रथमा और द्वितीय श्रेणी मे मध्यमा परीक्षा मे उत्तीर्णता प्राप्त की। उसके बाद आपने टिकारी (गया) से 'काव्यतीर्थ' की उपाधि-परीक्षा द्वितीय श्रेणी मे पास की। इस परीक्षा के बाद आपने काशी जाकर न्याय, वेदान्त और अँगरेजी भाषा का अध्ययन किया। छात्र-जीवन से ही आपमें हिन्दी-साहित्य-रचना की अभिरुचि थी। सन् १९०५-६ ई० से ही हिन्दी मे 'गिरिजेश' उपनाम से आप कविताएँ लिखा करते थे। उसी समय आपने 'दशकुमारचरित' का हिन्दी-अनुवाद किया, जो पटना से निकलनेवाले 'बिहार-बन्धु' मे निकलता रहा। सन् १९१० ई० मे आपने अध्यापन-क्षेत्र मे प्रवेश किया। उसी समय पटना ट्रेनिंग-कॉलेज के प्राचार्य श्री जे० एच्० थिकेट और पटना-कमिश्नरी के इन्सपेक्टर श्रीप्रेस्टन साहब के निजी अध्यापक रहकर आपने उन्हे संस्कृत का ज्ञान कराया। सन्

---

१. उपर्युक्त तीनों पद्यांश लेखक द्वारा लिखित क्रमशः तीन पुस्तकों से उद्धृत हैं, यथा प्रथम पद्यांश 'कलह मोचनीविनय' से, द्वितीय 'हनुमद्यश-पताका' से और तृतीय 'कल्पलतिका' से। यह प्राप्ति श्रीरामाश्रयप्रसाद श्रीवास्तव, ग्राम हरपुरनाग (चम्पारन) के सौजन्य से हुई।

२ ये परम प्रसिद्ध ज्योतिषी और कर्मकाण्डी विद्वान् थे। इनका वंश इतिहास-प्रसिद्ध बाबू कुँअरसिंह के दरबार की शोभा बढ़ानेवालों में था। इनकी राजसभा के ज्योतिषी पं० धुरन्धर मिश्रजी, अपनी विद्वत्ता के लिए लोकविश्रुत थे। भाषातत्त्वविद् आचार्य पं० केशवप्रसाद मिश्र (काशी) इनके सहपाठी थे। देखिए, 'बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् का वार्षिक कार्यविवरण' (सन् १९५२-५३ ई०), पृ० ३९। 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६५२), 'हिन्दीसेवी संसार' (वही, पृ० २१८) तथा 'किशोर' (मासिक, श्रद्धांक)।

३. देखिए, 'बिहार-अब्दकोश' (वही), पृ० ९२ तथा परिषद् के साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित एवं श्रीरासबिहारीराय शर्मा द्वारा प्रेषित (साप्ताहिक 'शाहाबाद' में मुद्रित) सामग्री।

१९११ ई० मे आपने 'पार्वती-परिणय' नामक संस्कृत-नाटक का हिन्दी-गद्य और पद्य मे अनुवाद किया। शिक्षक के रूप मे आपको नियुक्ति क्रमश टो० के० घोषेज एकेडमी, पटना, मोतीहारी जिला-स्कूल, पटना-ट्रेनिंग स्कूल और पटना-गर्ल्स स्कूल मे हुई। अध्यापन-काल मे ही आपकी कई पुस्तके स्कूलो के पाठ्यक्रम मे स्वीकृत हो गई थी। सन् १९०८ ई० से ही आपके स्फुट लेख एव कविताएँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होने लगी थी। सन् १९२८ ई० से आपने सरकारी नोकरा को तिलाजलि देकर पूर्णरूप से प्रकाशन के कार्य मे हाथ बँटाया। यो तो, सन् १९१३ ई० मे ही आपने 'ग्रन्थमाला-कार्यालय' की स्थापना कर दी थी।[1] बिहार मे यह अपने ढग की प्रथम प्रकाशन-सस्था थी। आगे चलकर आपने इस सस्था से उच्च विद्यालयो और अन्य विद्यालयो के लिए उपयोगी पुस्तको का प्रकाशन प्रारम्भ किया। इसी बात को ध्यान मे रखकर आपने 'प्रवेशिका-हिन्दी व्याकरण' की रचना की। इस पुस्तक की गणना हिन्दी के छह अच्छे व्याकरणो मे आज भी की जाती है। 'बालमित्र' (मासिक) ग्रन्थमाला के नाम से आपकी अधिकाश लिखित और सम्पादित बाईस पुस्तके, रामनारायण लाल, इलाहाबाद से प्रकाशित हुई।[2] इनकी शिथिलता के कारण उसका प्रकाशन बन्द हो गया। इसी समय एक बँगला-पुस्तक के आधार पर 'साहित्य-मीमासा' नामक आपकी एक पुस्तक निकली, जो बहुत समय तक, काशी-विश्वविद्यालय के बी० ए०-पाठ्यक्रम मे भी स्वीकृत थी। कुछ लोगो ने हिन्दी ससार मे आलोचना की नवीन-शैली को जन्म देने का श्रेय इसी पुस्तक को दिया है। इस पुस्तक की रचना के बाद आपने कविवर रवीन्द्रनाथ टैगोर और अन्य बँगला के लेखको की पुस्तके अनूदित की। इसके बाद आपके द्वारा सम्पादित दो गद्य-पद्य-संग्रह—(१) साहित्य-सुधा और (२) 'साहित्य-सुषमा' नाम से प्रकाशित हुए।

सन् १९२४ ई० मे आपने 'बालशिक्षा-समिति' की स्थापना की। इस समिति के माध्यम से आपने कई बालोपयोगी विद्यालयीय पुस्तको का लेखन एवं प्रकाशन किया। अद्यावधि समिति के द्वारा प्रकाशित पुस्तके समूचे बिहार मे पढाई जाती है। सन् १९३२ ई० मे आपने 'हिन्दुस्तानी प्रेस' के नाम से एक प्रेस काशो मे संचालित किया, जो कालान्तर मे पटना में स्थानान्तरित होकर चला आया। सन् १९३४ ई० मे आपने 'बालशिक्षा' नामक मासिक ग्रन्थमाला का प्रकाशन आरम्भ किया। इस पुस्तकमाला मे आपके द्वारा सम्पादित प्रतिमास एक बालोपयोगी पुस्तक प्रकाशित होती थी। तीन वर्षों तक लगातार यह पुस्तकमाला चलती रही। तदनन्तर, आपने सन् १९३८ ई० मे 'किशोर'[3] नामक एक मासिक पत्र निकाला। आपके सम्पादन मे निकलनेवाली यह पत्रिका हिन्दी के किशोरोपयोगी साहित्य मे अपना विशेष महत्त्व रखती है। इस प्रकार, स्कूली पुस्तकें लिखकर बालको के शिक्षा-विषयक साहित्य के ठोस निर्माण में आपका योगदान सर्वथा स्तुत्य रहा। इसके अतिरिक्त आपने उनकी ज्ञानवृद्धि एवं उनके सास्कृतिक विकास के लिए भी कम प्रयत्न नही किया। सन् १९४१ ई० मे आपने अपने गाँव 'पथार' मे एक संस्कृत-

१. इस सस्ताहित्य-ग्रन्थमाला की स्थापना के बाद आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' में टिप्पणी प्रकाशित कर सारे हिन्दी-संसार को चकित कर दिया था।

२. 'किशोर' (मासिक, वर्ष १६, अंक ४-५, अर्द्धांक, जुलाई-अगस्त, सन् १९५२ ई०), पृ० १३२।

३. इसके कई अक जैसे 'उपकथांक', 'रवीन्द्र-अंक', 'विक्रमांक' और 'कालिदासांक' बड़े महत्त्वपूर्ण हुए।

विद्यालय, एक औषधालय, एक उच्च प्राथमिक विद्यालय तथा 'गढहनी' मे एक उच्चाङ्गल विद्यालय को स्थापना की। इनके व्यय के लिए आपने अपनी जमीन्दारी का एक अश (प्राय. तीम हजार का) इन सभी के नाम कर दिया।

बिहार के द्विवेदीयुगीन साहित्यकारों मे आपका बडा महत्त्वपूर्ण स्थान माना जाता है। सन् १९३९ ई० मे प्रथम शाहाबाद-जिला-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सभापति आप ही चुने गये थे। सन् १९५० ई० मे आप बिहार-प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य सम्मेलन के सभापति हुए। उसी वर्ष आरा-नागरी-प्रचारिणी-सभा ने आपको 'विद्यावाचस्पति' उपाधि से विभूषित किया। सन् १९५२ ई० मे बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् ने आपको ताम्रपत्र सहित पन्द्रह सौ रुपयो के वयोवृद्ध साहित्यिक सम्मान-पुरस्कार' से सम्मानित किया था।

आपने संस्कृत-साहित्य की भी स्तुत्य सेवा की। प्रयाग से प्रकाशित होनेवाली संस्कृत-पत्रिका 'श्रीशारदा' मे आपकी सस्कृत-रचनाएँ सर्वदा प्रकाशित होती रहती थी। आपका लिखा 'भारत-भूगोल' संस्कृत मे सर्वप्रथम भारत का भूगोल है। आपने संस्कृत पुस्तको की सरल टीकाएँ भी की हैं। आपके द्वारा लिखित-प्रकाशित हिन्दी-रचनाएँ दो भागो मे विभक्त की जा सकती हैं—प्रथम प्रौढ साहित्य और द्वितीय विशिष्ट साहित्य और बालोपयोगी साहित्य। प्रौढ साहित्य मे वे पुस्तकें हैं—१. काव्यालोक (द्वितीय उद्योत, सन् १९४४ ई०), २ काव्यदर्पण[१] (सन् १९४७ ई०), ३ काव्य मे अप्रस्तुतयोजना (सन् १९५० ई०), ४. काव्यविमर्श (सन् १९५१ ई०), ५ हिन्दी मुहावरा-कोश, (६) काव्यालोक (तृतीय उद्योत) तथा (७) अन्य फुटकर निबन्ध। इनके अतिरिक्त आपके द्वारा लिखित बालोपयोगी एवं विशिष्ट साहित्यिक कृतियाँ इस प्रकार है—१ पार्वतीपरिणय-नाटक (अनुवाद, सन् १९११ ई०), २. साहित्य ३ साहित्य-मीमासा (अनूदित) ४. मेघदूत-विमर्श (मध्य-भारत हिन्दी-समिति, इन्दौर) ५ साहित्यालंकार ६. साहित्य परिचय, ७. साहित्य-सौन्दर्य, ८ भारत का मैट्रिक्युलेशन इतिहास (सन् १९१३ ई०), ९ रचना-विचार (सन् १९१५ ई०), १० प्रवेशिका हिन्दी-व्याकरण (मन् १९१५ ई०) तथा ११. महाभारतीय-सुनीतिकथा। 'बालमित्र' (मासिक) ग्रन्थमाला के अन्तर्गत आपके द्वारा सम्पादित पुस्तकें ये हैं—(१) बालरामायण, (२) बाल-महाभारत, (३) भारत का प्राचीन-इतिहास, (४) पुराणो की कहानियाँ (१ भाग), (५) पुराणो की कहानियाँ (२ भाग), (६) भारत भूगोल, (७) ईसब्नीति कथा (१ भाग), (८) ईसब्नीति कथा (२ भाग), (९) विज्ञान की सरल बातें, (१०) श्रीबाल-कृष्णकथामृत (१ भाग), (११) श्रीबालकृष्णकथामृत (२ भाग), (१२) रामायण के उपदेश, (१३) राजपूतो की कहानियाँ, (१४) अलादीन, (१५) रॉबिन्सन क्रूसो, (१६) ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, (१७) यूरोप और एशिया का परिचय, (१८) नल-दमयन्ती की कथा, (१९) बालवीर-परिचय, (२०) बाल निबन्धावली (१ भाग), (२१) बाल-निबन्धावली (२ भाग), (२२) मगध का प्राचीन-इतिहास, (२३) कर्मवीर, (२४) बच्चो की कहानियाँ, (२५) बलिदान की कहानियाँ, (२६) मनोरंजक कहानियाँ, (२७) विदेशी कहानियाँ,

---

१. इस ग्रन्थ पर उत्तरप्रदेश-सरकार ने आपको पुरस्कृत किया था और इस पुरस्कार की राशि आपने दान में दे दी थी।—देखिए, 'साप्ताहिक शाहाबाद' (वही), पृ० ६।

(२८) भक्तों के भगवान, (२६) नेपोलियन बोनापार्ट, (३०) ब्रह्मानन्द केशवचन्द्र सेन (३१) राजा राममोहन राय, (३२) बिहार के रत्न, (३३) हरिजनबन्धु, (३४) हवाई जहाज (३५) लामाओं का देश और (३६) अच्छी चाल।[1] इनके अतिरिक्त, आपकी रचनाए इन पत्र-पत्रिकाओ मे बहुधा प्रकाशित होती रही है--'बिहार-बन्धु', 'इन्दु', 'लक्ष्मी', 'सरस्वती', मनोरंजन', 'प्रभा', 'वैशाली', शाकद्वीपीय ब्राह्मण-बन्धु (बम्बई), 'किशोर', 'परिजात', 'नया-साहित्य' (बम्बई) आदि। आप सन् १६५२ ई० के १ दिसम्बर को स्वर्गवासी हो गये।

उदाहरण

(१)

मैंने प्रारम्भ से ही 'सत्साहित्य-ग्रन्थमाला' निकालना प्रारंभ किया, जिसमें तत्कालोन सुप्रसिद्ध कवि रामचरित उपाध्याय और 'हरिऔध' जी प्रभृति कवियों के काव्य निकले। 'सरस्वतो' आदि पत्रिकाओं मे लेख आदि निकलते थे, और साहित्यिक कार्य हो ही रहा था। इस कार्य में बहुत खर्च हो गया, जिसमे 'मेघदूत-विमर्श' आदि को पुरस्कार लेकर अन्य प्रकाशकों को दे देना पडा। शिक्षा-सम्बन्धी स्कूली पाठ्य-पुस्तकों की ओर ध्यान गया और ऐसी ही पुस्तको के लेखन और सम्पादन का कार्य वेग से चल पड़ा। साहित्यिक पुस्तकें—'साहित्य-परिचय', 'साहित्यालंकार' आदि भी पाठ्य-पुस्तकों के दृष्टिकोण से ही लिखी गयी थीं। इसका परिणाम यह हुआ कि कुछ पैसे हो गये। अब 'सुबोध ग्रन्थमाला' के साथ-साथ 'सत्साहित्य-ग्रन्थमाला' का प्रकाशन चलने लगा। अब इधर प्रकाशन भार अपने चिरंजीवी पर सौंप दिया और मृत्यु-मुख से निकलकर आया तो ७-८ वर्षों से साहित्यिक कार्य ही कर रहा हूँ और काशी में एकान्त बैठा हूँ।

संस्कृत के विद्वान् और हिन्दी के सेवक होने के कारण अनेक सुप्रसिद्ध विद्वानों से परिचय हुआ। इनमें डुमरांव से राजपंडित चन्द्र-मणि पांडेय, श्रीशिवकुमार शास्त्री, श्रीगंगाधर शास्त्री और श्रीमाधवा-

---

१. 'किशोर' (वही), पृ० १७५-७६।

चारी का शिष्यत्व प्राप्त है। हरिश्चन्द्रकालीन हिन्दी-संस्कृत के सुप्रसिद्ध विद्वान् प० विजयानन्द त्रिपाठी, श्रीगोविन्दनारायण मिश्र, पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी, श्रीश्यामसुन्दरदास आदि से परिचय रहा और अपनी पुस्तकों पर सम्मति प्राप्त करने का सौभाग्य रहा। श्रीमालवीयजी, श्रीराजेन्द्रप्रसादजी, श्रीटंडनजी आदि से भी परिचय और वार्तालाप का अवसर मिला है।[1]

(२)

कवि शब्दों का चित्रकार होता है। कवि सौन्दर्योपासक होता है। कवि सत्य का साधक होता है। कवि मूक प्रकृति के मर्म का व्यंजक होता है। कवि मानवता का निदर्शक होता है। कवि 'शिव' का सर्जक होता है। कवि सृष्टि के रहस्योद्घाटन मे सक्षम होता है। कवि जीवन के पथ का प्रदर्शक होता है। कवि मानवी भावना का विकासक होता है। कवि जाति में जीवन का संचारक होता है। कविता कल्पना के साम्राज्य में विचरण करनेवाला स्वतंत्र प्राणी होता है। कवि हमारी मनोवृत्तियों को व्यक्त करने का एकमात्र समर्थ साधन होता है। कवि सुवर्ण-रूपी सुवर्ण और अर्थ-रूपी अर्थ का आगार होता है। कवि भावचित्रों का चित्राधार होता है। कवि स्वच्छन्द, निर्द्वन्द्व और निर्बन्ध होता है। कवि अपनी वाणी में रस और चमत्कार रखता है। इसी से कवि क्या-क्या नही होता।—द्विवेदी जी कहते है—सत्कवियों की वाणी में अपूर्व शक्ति होती है। वही श्रोताओ और पाठकों को अभिलषित दिशाओ की ओर खीचती और उद्दिष्ट विकारों को उन्मज्जित करती है। असर पैदा करना, प्रभाव जमाना उसीका काम है। सत्कवि अपनी कविता के प्रभाव से रोते हुए को हँसा सकता है। हँसते हुए को रुला सकता है। भीरुओं को युद्धवीर बना सकता है। वीरों को भयाकुल

१. 'किशोर' (मासिक, वही), पृ० १३२-३४।

और त्रस्त कर सकता है, पाषाण-हृदयो के भी मानस में दया का संचार कर सकता है।[1]

(३)

कविता पढने के सभी अधिकारी नही समझे जाते। काव्यास्वादन के अधिकारी वे है, जो विमल-प्रतिभाशाली है, अर्थात् तेजस्वी कल्पना-शक्तिशाली हृदयवाले है—वस्तु के साक्षात्कार की सामर्थ्य रखनेवाले हैं। कवि-सम्मेलनों के श्रोता जो किसी कविता पर वाह! वाह!! की आँधी उडा देते है, वह इस बात का सूचक नही कि सबके सब कविता के अन्तरंग में पैठकर ऐसा करते हैं। इनके आनन्द का कारण अधिकाश कवि की गलाबाजी और कविता पढने का ढग ही है। जो कविता के मर्म मे पैठते है, वे कभी ऐसा नही करते।

कोई कविता पढकर पाठक या श्रोता तभी आनन्द उपभोग कर सकते है, जबकि वे कवि-वर्णित प्रत्येक दृश्य, शब्द, अभिव्यक्ति, अर्थ को हृदयंगम कर सकें; कवि ने जिस दशा मे कविता लिखी है उस अवस्था की कल्पना करके उसके भाव को प्रत्यक्ष कर सकें। पाठक या श्रोता में ऐसी कल्पना करने की जितनी शक्ति होगी, उतना ही वे आनन्द लाभ कर सकते है। कार्लाइल ने कहा है कि 'अभिनिवेश-पूर्वक कविता-पाठ करने के समय हम कवि ही हो जाते है।' इसी को तन्मयीभवन-योग्यता कहते है, जो सहृदय में ही संभव है।[2]

(४)

काव्य में सरस, कोमल, मधुर और मंजुल शब्द हों जो साथ ही सुबोध, सार्थक, स्वाभाविक और उपयुक्त हो। वाक्य सुगठित, सुसम्बद्ध भावव्यंजक, सरल और स्पष्ट हों। शैली सुचारु, प्रभावोत्पादक

---

१. 'काव्यविमर्श' (प० रामदहिन मिश्र, सन् १९५१ ई०), पृ० १८६।
२. 'काव्यदर्पण', (पं० रामदहिन मिश्र, सन् १९४७ ई०), पृ० २१।

और सामंजस्यपूर्ण हों। सम्मिलित रूप में भाषा चित्ताकर्षक हो, हृदय-द्रावक हो, भाव-प्रकाशक हो, विचारबोधक हो, धारावाहिक हो, रागात्मक हो, लोच-लचकवाली हो, चित्रात्मक हो और ऐसी हो कि संवेदन के स्वरूप को मूर्त तथा ग्राह्य रूप मे उपस्थित कर सके तथा भाव-प्रवणता से रागात्मक वृत्तियो को उच्छ्वसित कर सके। सबसे बड़ी बात यह कि कवि के उच्छ्वसित भावों को भली भाँति प्रकट करने में वह समर्थ हो। ऐसी ही भाषा काव्योपयुक्त होती है।

यों तो उच्चारण किये गये शब्द मात्र का कुछ-न-कुछ अर्थ होता ही है। किन्तु, योग्यता आदि के न रहने से वह निरर्थक ही है। जिस शब्दार्थ में प्रवृत्ति-निवृत्ति का तात्पर्य नही या रागात्मकता नही ऐसे शब्द अर्थ-हीन ही समझे जाते है। इसो प्रकार अर्थ से समझी जानेवाली वस्तुएँ सर्वदा शब्दाश्रय ही नही रहतीं। कहने का अभिप्राय यह कि वस्तुबोधक शब्दों के उच्चारण-श्रवण के बिना भी वस्तुओं के दर्शनमात्र से भी उनका ज्ञान होता है। बहुत-से जो शब्दार्थ-हीन भाव समय-समय पर मूक रहकर भी और विशिष्ट मुद्राओं से भी प्रकाशित किये जाते है, काव्य के संयोजक नहीं हो सकते। अतः काव्य में शब्द और अर्थ का सम्मिलित रूप में रहना आवश्यक है। भामह का 'सहितौ' शब्द इसका द्योतक है।[1]

रामदहिन शर्मा

आप शाहाबाद-जिला के 'पुरानाभोजपुर' (डुमराँव) नामक स्थान के निवासी श्रीज्ञानदत्त शर्मा के पुत्र थे। आपका जन्म सन् १८९० ई० के १८ अप्रैल को हुआ था।[2] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा संस्कृत के माध्यम से हुई। आपने बिहार-संस्कृत-समिति, पटना से संस्कृत मे मध्यमा परीक्षा पास की। तदनन्तर, आपने अखिलभारतवर्षीय आयुर्वेद-महासम्मेलन, प्रयाग से 'आयुर्वेदभिषग्' की परीक्षा पास की। इस परीक्षा के बाद

१. 'काव्य मे अप्रस्तुतयोजना' (पं० रामदहिन मिश्र, सं०२००५ वि०), पृ० २५।

२. आपके द्वारा प्रेषित एव परिषद् के साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के आधार पर।

आपने अपने गाँव मे ही रहकर चिकित्सा का काम शुरू किया। उस जमाने मे आप अपने क्षेत्र के सफल चिकित्सको मे थे। चिकित्सा-कार्य करते हुए आप माँ-भारती के मन्दिर को अपनी भोजपुरी-रचनाओ से सजाया करते थे। अपने गाँव या पास-पडोस के गाँवो मे जब कभी सभा या सम्मेलन का अवसर होता था, आप अपनी भोजपुरी मे रचित देश-प्रेम से ओत-प्रोत कविताओ द्वारा लोगो का मनोरंजन किया करते थे। आपके द्वारा रचित एक कविता-पुस्तक 'देहाती भाइयो से अपील' के नाम से प्रसिद्ध है। किन्तु, अद्यावधि उसका प्रकाशन नही हो सका है। आपकी कविताओ मे समाज की रूढि-भावना के प्रति विद्रोह एव देश-प्रेम के भाव कूट-कूटकर भरे पड़े है। आप भोजपुरी-साहित्य की सेवा के लिए साधारणत सभाओ का आयोजन किया करते थे एवं लोगो से उसके सतत विकास के लिए अनुरोध किया करते थे। भोजपुरी के अतिरिक्त आपकी रचनाएँ खडीबोली मे भी मिलती है। दुर्भाग्यवश आपकी भोजपुरी-रचनाओ क उदाहरण हमे नही मिल सके। सन् १९१४ ई० के २२ अप्रैल को आपका परलोक-गमन हुआ।

उदाहरण

(१)

मन मेरा भर जाता है,
अन्न छाड़ि व्रत को एकादशी, मास और दिन खाता है,
मृत पशु को ही खाकर, हरिजन अस्पृश्य बन जाता है।
गला काट खून को पीकर, जो नित मन्दिर जाता है,
चोर जार लबार बड़ा जो, वही पंच कहलाता है।
वेश्याभक्त बना जो लंपट, हरि मिस नृत्य कराता है,
देख-देख इस जग की लीला, मन मेरा भर जाता है ॥[1]

(२)

दूधमुँहे बच्चों की नाहक, क्योंकर ब्याह रचाते है,
अर्थ हानि अल्पायु सन्तति सर्वनाश करवाते है,
विधवा बन रोती जब घर में, तब वैराग्य सिखाते है,
निज नारी के नष्ट हुए पर, फिर युवती घर लाते है,
कैसी है यह मानवता जी, समझ हृदय फट जाता है।
देख-देख इस जग की लीला, मन मेरा भर जाता है ॥[2]

---

१. आपके द्वारा प्रेषित और परिषद् के साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री से।
२. वही।

(३)

बेंच बालिका दे बूढ़ों को, नेक दया नहि आती है।
फिर भी कन्यादान उसी का, कैसा ढोंगी घाती है।
चन्द रोज के बाद बालिका, वह विधवा बन जाती है।
देख दीनता इन बहनो की, फटती जाती छाती है।
घुसखोरी बढ़ती जाती है, न्याय न होने पाता है।
देख-देख इस जग की लीला, मन मेरा भर जाता है॥[1]

(४)

रक्षक से भक्षक बन बैठे, बातें सारी उलट गई।
त्यागी वे रागी बन बैठे, भोग-वासना नई नई।
तप समाधि स्वाध्याय-साधना, भक्ति-भावना गई गई।
साधु धनी कंगाल कृषक है, यह कैसी है नीति नई।
दयासिन्धु प्रभु दया करो अब, आरत भारत जाता है।
देख-देख इस जग की लीला, मन मेरा भर जाता है॥[2]

रामदीन पाण्डेय

आप पलामू-जिला के 'माधोदिदरी' (लेसलीगंज) नामक स्थान के निवासी प० शिवव्रत पाण्डेयजी[3] के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९४९ वि० (सन् १८९२ ई०) की श्रावण शुक्ल-सप्तमी को हुआ था।[4] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा आपके जन्म के ग्यारहवें वर्ष में शुरू हुई। पाठशाला मे प्रवेश पाने के ठीक नवे मास मे आपने छात्रवृत्ति के साथ लोअर प्राइमरी की परीक्षा पास की। लोअर के बाद मिड्ल परीक्षा तक प्रतिवर्ष आपने छात्रवृत्ति के साथ परीक्षाएँ पास की। मिड्ल की परीक्षा मे आप सर्वप्रथम हुए। उसके बाद छात्रों को पढ़ाकर आपने मैट्रिकुलेशन (प्रवेशिका) तक और तदनन्तर आइ० ए० तक की परीक्षाएँ प्रथम श्रेणी में पास की। आइ० ए० के बाद आपकी नियुक्ति सन् १९१६ ई० मे

---

१. आपके द्वारा प्रेषित और परिषद् के साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री से।

२ वही।

३. ये बड़े शिवभक्त थे। इनके पिता गोरखपुर के प्रसिद्ध ग्राम 'इटार' से पलामू आकर बसे थे।

४. आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री के आधार पर। उक्त सामग्री के अतिरिक्त 'हिन्दीसेवी संसार' (वही, पृ० २१६), 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ६२०) तथा साप्ता० 'हुंकार' (१ अक्टूबर, सन् १९६७ ई०) में प्रकाशित लेख से भी सहायता ली गई है।

हजारीबाग जिला-स्कूल में, शिक्षक के पद पर हुई। वहीं रहकर आपने स्वतन्त्र रूप से सन् १९१९ ई० में बी० ए० तथा सन् १९२२ ई० मे एम० ए० की परीक्षाएँ क्रमश पास कीं। एम० ए० की परीक्षा मे, पटना-विश्वविद्यालय में, आपने द्वितीय स्थान प्राप्त किया और सन् १९२५ ई० मे बी० एड० की परीक्षा मे विश्वविद्यालय मे सर्वप्रथम आये। इस परीक्षा के बाद आपकी नियुक्ति पटना-कॉलेज मे, हिन्दी-संस्कृत के प्राध्यापक के पद पर हुई। उसके बाद आप राँची-कॉलेज के हिन्दी-संस्कृत-विभागाध्यक्ष बनाये गये। वहाँ से सन् १९३४ ई० में आप लंगटसिंह कॉलेज, मुजफ्फरपुर मे हिन्दी-विभाग के अध्यक्ष पद पर प्रतिष्ठित हुए। उसी वर्ष हिन्दी में एम० ए० की परीक्षा भी आपने दी। उस परीक्षा में आपने पटना-विश्वविद्यालय में सर्वप्रथम स्थान ग्रहण कर स्वर्ण-पदक भी प्राप्त किया। अबतक आपको संस्कृत-साहित्याचार्य की भी उपाधि प्राप्त हो चुकी थी। इस तरह आप संस्कृत, हिन्दी, अँगरेजी आदि विषयो के अतिरिक्त पालि, प्राकृत, अपभ्रंश तथा उराँव आदि सात भाषाओ के ज्ञाता हो चुके थे। विदेश जाकर अध्ययन करने के लिए आपको दो बार छात्रवृत्तियाँ मिली, पर आचार-व्यवहार मे कट्टर होने के कारण आपने इन सुयोगो का लाभ नही उठाया। सन् १९५० ई० मे आपने लगटसिंह कॉलेज से अवकाश ग्रहण किया। इसके पश्चात् आपने गणेशलाल महाविद्यालय, डालटेनगज और देवघर हिन्दी-विद्यापीठ मे भी कार्य-सम्पादन किया।

आपने सन् १९३० ई० से ही अपनी रचनाएँ पत्र-पत्रिकाओ में प्रकाशित कराना शुरू कर दिया था। आपका 'विद्यार्थी'[१] नामक एक उपन्यास सर्वप्रथम प्रकाश मे आया। आपने संस्कृत के दो ग्रन्थों का अनुवाद किया है। 'सौन्दरनन्द'[२] तथा 'जानकीहरण'[३] नामक दोनो पुस्तको के अनुवाद अपने समय के प्रसिद्ध प्रयास है। इसके बाद आपका दूसरा उपन्यास 'चलती पिटारी'[४] के नाम से प्रकाशित हुआ। यह पुस्तक पलामू के हरे-भरे जगल, उसकी द्रुतवेगवती सरिताओ तथा वहाँ के मनुष्यो के जीवन के सजीव चित्रो का साक्षात्कार कराती है। आपने 'ज्योत्स्ना'[५] नामक एक नाटक की भी रचना की है। 'प्राचीन भारत की साग्रामिकता' नामक आपकी एक पुस्तक बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना की ओर से प्रकाशित हो चुकी है। यह पुस्तक अपने विषय की अकेली है। इसके अतिरिक्त आपने 'जीवन-ज्योति'[६] (नाटक), 'जीवन-कण'[७], (नाटक) तथा 'काव्य की उपेक्षिता' (आलोचना)[८] नामक पुस्तकें लिखी। आपके द्वारा लिखित 'ग्यारह कहानियो का संग्रह' (कहानी) तथा 'हिन्दी-साहित्य का क्रमबद्ध इतिहास', 'प्रसादजी के नाटकीय साहित्य का विवेचन' और 'प्राचीन भारत के साग्रामिक संगठन का इतिहास' ये चार पुस्तकें अद्यावधि

---

१. सुबोध ग्रन्थमाला, राँची से प्रकाशित।
२. गंगा-पुस्तकमाला, लखनऊ से प्रकाशित।
३. प्रकाशक स्वयं।
४. गंगा-पुस्तकमाला, लखनऊ से प्रकाशित।
५. पुस्तक-भण्डार, पटना से प्रकाशित।
६. किताबघर, पटना से प्रकाशित।
७. ज्ञानपीठ, पटना से प्रकाशित।
८. हिन्दी-साहित्य-भवन, प्रयाग से प्रकाशित।

अप्रकाशित हैं। इन पुस्तकाकार रचनाओ के अतिरिक्त आजतक आपके लिखे सत्रह एकाकी नाटक भी प्रकाशित हो चुके है।

आपके विभिन्न-विषयक ५० निबन्ध 'सरस्वती', 'सुधा', माधुरी', 'विशाल भारत', 'गंगा', 'हंस', 'पाटल', 'साहित्य' आदि पत्र-पत्रिकाओं मे यथावसर प्रकाशित होते रहे हैं। इन दिनों आपने सेवावृत्ति से अवकाश ग्रहणकर अपना समय लेखन-कार्यं के लिए ही अर्पित कर दिया है।

उदाहरण

(१)

जबतक मनुष्य नितान्त बर्बर था, अपने लिए ही वह जीता था; स्वार्थपरता का प्रतिरूप था। उसकी आवश्यकताएँ सीमित और अतिन्यून थी। समय की प्रगति के साथ जीवन में भयावह परिवर्तन हुए। प्रस्तरों की चट्टानों पर अँगड़ाइयाँ लेनेवाला, गिरि-गह्वर में रहनेवाला, नील नभ के असीम वितान के नीचे मूक प्रसन्नता अनुभूत करनेवाला मानव आतप-शीत से अपने अंगों की सरक्षा के लिए झोपड़ों में रहने लगा। कोमलता तथा मधुरता की प्रतीक नारी के सपर्क से वह बाल-बच्चों का अधिपति बन बैठा और कालान्तर में गरोह-जीवन व्यतीत करने लगा। झडे की भावना संभवतः उस समय सजग हुई होगी, जिस समय वह अनेक समुदायों में विभक्त होकर जीवन-यापन मे संसक्त होगा और अपने-अपने गरोह की कल्याण-कामना की भावनाएँ उसके हृदय में हिलकोरें मारती होंगी।[१]

(२)

हिन्दी के प्राचीन कवियों ने विरहिणी बालाओं के चित्रण को वर्णन की पराकाष्ठा पर चढ़ा दिया है। उनने वियुक्त प्रेम की दशाओं का ऐसा मार्मिक उद्घाटन किया है, जिसे पढ़ दाँतो तले अंगुली दबानी पड़ती है। प्रेम की वियोगावस्था में स्थित स्त्री की अभिलाषा, चिंता, स्मृति, गुण-कथन, उद्वेग, सलाप, उन्माद, जडता, व्याधि और मृत्यु का ऐसा खाका उनके कुशल हाथों ने खीचा है, जो स्वाभाविक और सर्वग्राह्य प्रतीत होता है।

---

१. 'प्राचीन भारत की सांमाजिकता' (रामदीन पाण्डेय, सन् १६५७ ई०), पृ० १।

गुप्तजी ने वियोगिनी यशोधरा के वर्णन में इसी प्राचीन रीति का न्यूनाधिक अनुसरण किया है। बुद्धिकौशल और काव्ययुक्ति से गौतम-परित्यक्त गोपा की मनोवृत्तियो की ऐसी सुन्दर और हृदयस्पर्शी तस्वीर खींची है, जो पढ़ते ही बनता है। उदाहरण के लिए वियोगिनी गोपा की अभिलाष मनोवृत्ति को लीजिए। प्रियतम से दूर रहने पर सच्ची प्रेमिका के हृदय में प्रिय-मिलन की इच्छा के अतिरिक्त दूसरी भावना वहाँ स्थान ही कैसे पा सकती है ?[१]

(३)

मानव-जीवन बड़े तप से मिलता है। इसका लक्ष्य खाना, पीना, सोना नही, वरन् विश्व की सेवा है। जिसने अभ्यास, संगति, शिक्षा, संयम से इस जीवन को दूसरों की सेवा के योग्य न बनाया, उसने बहुमूल्य रत्न पाकर भी उसे खो दिया। वही जीवन जीवन है, जो दूसरों के लिए ज्योति का काम करता है। जीवन ज्योति न बनकर यदि अंधकार हुआ, तो मानव और पशु के जीवन मे अंतर ही क्या रहा ?[२]

(४)

देवराज, जीवन मे सुख-दु.ख के झोंके बारी-बारी से आते ही रहते है। जो सुख का आस्वाद लेता है, वही दुःख की तिताई अनुभूत करता है। विश्व का जो खण्ड सूर्य की प्रखर किरणों से तपता है, वही वृष्टि-लाभ करता है। जिसपर लोहे के अस्त्र-शस्त्र चोट करते है, वही मुकट धारण करता है। मेरे अधीश्वर ! धीरज धरें। निराश न हों। आपदाओं का आलिंगन करना और अपने पथ से तनिक भी विचलित न होना मनस्वियों का काम है। बिखरे बल को बटोरें। छिन्न शक्तियों का संगठन करें। विजय-लक्ष्मी करतलगत होगी।[३]

★

१. 'काव्य की उपेक्षिता' (रामदीन पाण्डेय, सं० १९९७ वि०), पृ० १२।
२. 'जीवन-ज्योति' से। आपसे ही प्राप्त।
३. एक अप्रकाशित एकांकी से। आपसे ही प्राप्त।

रामधारीलाल 'प्रेम'

आप चम्पारन-जिला के खिजिरपुरा (थाना-केसरिया) के निवासी श्रीनरसिंहलालजी के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९४६ वि० (सन् १८८९ ई०) की माघ कृष्ण-षष्ठी को हुआ था।[1] आपकी शिक्षा केवल अपर तक की थी, किन्तु स्वाध्याय के परिणामस्वरूप आप साहित्य-रचना करने लगे थे। आपकी दिलचस्पी सार्वजनिक कार्यों मे भी थी। आपने जनता के लाभार्थं सन् १९४८ ई० मे चम्पारन जिला के पोखरियाराय (थाना-चनपटिया) नामक स्थान में श्रीरामाधार-पुस्तकालय की स्थापना की थी। आपके जीवन का अधिकतर भाग पोखरियाराय मे ही व्यतीत हुआ है। आपकी दो पुस्तिकाएँ प्रकाशित हुई थी—(१) शिवमहिम्नछन्दाग तथा (२) अखण्ड शिवस्तोत्र। आपकी एक तीसरी पुस्तकाकार रचना 'प्रेम-प्रवाह' सम्भवत. प्रकाशित नही हो सकी।

उदाहरण

(१)

जग मे गुप्त रहस्य को, प्रेम देत प्रकटाय।
बिना 'प्रेम' कछु प्राप्त नही, कोटिन करो उपाय॥
बिना प्रेम इस जगत का, विषय न कछु दरसाय।
'प्रेम' दृष्टि मह आ पड़े, कछु न शेष रह जाय॥
एक धारना ध्यान हो, कारण हो निष्काम।
वही एक जग में लखे, सोई प्रेम ललाम॥
सूत्रधार संसार का, घनश्यामहि चितचोर।
सही 'प्रेम' घनश्याम ते, नाचत मन बन मोर॥[2]

(२)

दानी दधीचि परमारथ निज पाँजर ते,
दुष्ट दमन हेतु एक हड्डी कढ़वायो है।
शिवि शरणागत रक्ष जीवन कबूतर लिय
मांस निज काटि तौल तुला पर चढ़ायो है॥

---

१. आपके द्वारा दिनांक सन् १९५६ ई० के २५ सितम्बर को प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री के आधार पर।

२. 'प्रेम-प्रवाह' अप्रकाशित से। आपके द्वारा प्रेषित।

हरिश्चन्द्र मानी बानीबद्ध के प्रमाणी,
सुख सम्पत्ति नसाय कर स्वपच के बिकायो है।
अटल अनुराग निज प्रन पै सब वारि डारि
'प्रेम' के प्रवाह नाम अचल जग छायो है ॥[1]

(३)

बालापन सुआ को पढाये सो पढत नित,
पारस छुआये लौह चुम्बक नही गहतु है।
सीतल सुगन्ध मन्द चाँदनी का पवन,
त्यागि कवन ग्रीषम रितु धूप को सहतु है॥
सुखद विनीत मार्ग छाडि कहुँ कंटक पथ,
भूपन को त्यागि रंक द्वारन कोउ गहतु है।
श्याम रंग रँगी उद्धव प्रेम' है अभगी सूधो,
गठरी तपस्या-योग बाँध्यो न तु बनतु है ॥[2]

(४)

मन मत्त गयन्द लिये कब नाथ,
अकुसांकित चरन कबै परसैंगे।
दुविधादि दुरासा दुरैंगे कबै,
करुणा घन श्याम कबै बरसैंगे।
मुकुटादिक पीत पटा की छटा,
हृदया नभ 'प्रेम' कबै सरसैंगे।
मनि रूप नखन मन-मन्दिर में,
कबलों प्रकाशित हो दरसैंगे ॥[3]

★

---

१. 'प्रेम-प्रवाह' (अप्रकाशित) से। आपके द्वारा प्रेषित।
२. वही।
३. वही।

रामनिरीक्षण सिंह

आप दरभंगा-जिला के 'समर्था' (कल्याणपुर-दलसिंहसराय) नामक ग्राम के निवासी श्रीरक्षासिंह के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९४९ वि० (सन् १८९२ ई०) की वैशाख शुक्ल-द्वितीया (बुधवार) को हुआ था।[१] चार मास की अत्यल्पावस्था मे ही आपके पिता आपको छोडकर चले गये। उनके स्वर्ग सिधारने पर आपकी शिक्षा-दीक्षा का भार आपके चाचा एव बडे भाई ने ले लिया। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा गाँव की पाठशाला मे ही हुई। तदनन्तर, आपने नरहन-राज्य' के संस्कृत-विद्यालय मे पढना शुरू किया। वहाँ से आपने माध्यमिक (मिड्ल) परीक्षा दी। उस परीक्षा मे आप जिला-भर मे सर्वप्रथम आये। इसी परीक्षा-फल के कारण आपको छात्रवृत्ति भी मिली। मिड्ल से एम्० ए० तक आपने सभी परीक्षाओ मे छात्रवृत्ति के साथ प्राथमिकता प्राप्त की। प्रवेशिका (मैट्रिक) की परीक्षा मे आपने प्रान्त-भर मे चतुर्थ स्थान प्राप्त किया। सन् १९१८ ई० मे पटना-विश्वविद्यालय की बी० ए० परीक्षा मे और सन् १९३० ई० मे हिन्दू-विश्वविद्यालय, काशी की एम्० ए० परीक्षा मे भी आप सर्वप्रथम आये। उसके बाद आपने बिहारोत्कल-संस्कृत-समिति, पटना से 'काव्यतीर्थ' की उपाधि प्राप्त की। काशी में रहकर आपने संस्कृत की शिक्षा पाई। संस्कृत-साहित्य और न्याय आपके प्रिय विषय थे। काशी के क्वीन्स-कॉलेज से आपने 'सम्पूर्ण मध्यमा' की परीक्षा व्याकरणशास्त्र मे पास की। वही से आपने 'साहित्याचार्य' की परीक्षा भी पास की। संस्कृत-साहित्य का अध्ययन आपने विश्वविख्यात विद्वान् महामहोपाध्याय पं० रामावतार शर्मा के सान्निध्य मे रहकर किया था। सन् १९२० ई० मे सरकारी उपदण्डाधिकारी का पद एव कॉलेजो के प्राध्यापक पद को ठुकराकर डॉ० राजेन्द्र प्रसादजी की राय से आपने पटना के 'सदाकत-आश्रम'-स्थित 'बिहार-विद्यापीठ' मे, संस्कृत और हिन्दी के अध्यापक का कार्यभार सँभाला। अनेक कष्टो मे रहकर भी सन् १९३० ई० तक यह कार्य आपने स्वेच्छया किया। देश-प्रेम के कारण आपने अपने परिवार और अन्य भौतिक सुख-सुविधाओ की कभी कोई परवाह नही की। सार्वजनिक जीवन मे रुपये-पैसो के हिसाब-किताब मे आप सदा सर्वदा सतर्कता और कडाई से पेश आते रहे है आप अनेक वर्षों तक अखिलभारतीय काँगरेस-कमिटी के सदस्य थे। सन् १९३० ई० के सितम्बर मे, देश-सेवा के सिलसिले मे, सत्याग्रह करते समय आपको तत्कालीन सरकार ने गिरफ्तार किया। गिरफ्तारी के कुछ ही दिनो बाद जब आप मुक्त हुए तब पुनः नवम्बर मे आपकी गिरफ्तारी हो गई। उसी वर्ष जून मे आप फिर मिलिटरी-सिपाही और सिविल-सिपाहियो के साथ एस्० पी० और मजिस्ट्रेट के समक्ष अपने घर के सामान की लूट और बरबादी के विरुद्ध लगातार छह घण्टो तक संघर्ष करते रहे। सन् १९३१ से ३४ ई० तक लगातार आप तीन बार जेल-यातना के शिकार बने। सन् १९३४ ई० के भूकम्प मे आपने जन-सेवा का गुरुतर भार अपने ऊपर लिया। सन् १९४२ ई० के देशव्यापी आन्दोलन मे आपने जी-जान लगाकर सहयोग किया। आपकी गिरफ्तारी

---

१. आप और श्रीमहादेवराय, (ग्राम-पो० कल्याणपुर) के द्वारा दिनांक सन् १९५९ ई० की १५ जुलाई को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के आधार पर। आपके परिचय-लेखन में 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ६७०) से भी सहायता ली गई है।

हुई। इस तरह माँ-भारती का सतत वरदान पाकर आपने भारत-माता की सेवा मे ही अपना जीवन लगा दिया। सन् १६३६ ई० मे आप समस्तीपुर की स्थानीय परिषद् (लोकल बोर्ड) के सदस्य निर्वाचित हुए। सन् १६५० ई० मे आप दरभंगा जिला-परिषद् के सदस्य चुने गये। परदा-प्रथा-विरोधी आन्दोलनो से लेकर काँगरेस की हर प्रकार की सेवा मे आप सदा देशरत्न डॉ० राजेन्द्रप्रसादजी के साथ रहे। उनके साथ ही मद्रास काँगरेस मे भाग लेकर आपने भी लंका की यात्रा की थी। काँगरेस के गया, नासिक, लखनऊ आदि सभी अधिवेशनो मे आप जिला-प्रतिनिधि होकर जाते रहे। सन् १६२७ ई० मे आपने 'बिहार-विद्यापीठ' के प्रतिनिधि के रूप मे 'अहमदाबाद-राष्ट्रीय शिक्षा-सम्मेलन' मे भाग लिया था। इस प्रकार, देशसेवा के कार्य मे देश की हर कठिनाई को सुलझाने मे आपने कभी कोई कमी नही की। देशरत्न डॉ० राजेन्द्र प्रसादजी के द्वारा निलहो के विरुद्ध जो अभियान हुआ था, उसमे भी आपने सक्रिय योगदान किया था। आप बडे ही कर्मठ एव सदाचारपालक रहे हैं।

सन् १६२२ ई० मे आपके द्वारा लिखित 'हमारा समाज' और 'पवित्र जीवन'[1] नामक दो पुस्तकें प्रकाश मे आईं। इनके बाद आपकी तीसरी पुस्तक 'स्वतन्त्र भारत के नागरिक' सन् १६४८ ई० मे प्रकाशित हुई। इनके अतिरिक्त आपके द्वारा लिखित विविध-विषयक निबन्ध 'देश', योगी', 'बालक', 'युवक', 'त्यागभूमि', 'चाँद', 'विशाल भारत', 'सरस्वती', 'विश्वमित्र', 'नवशक्ति' आदि पत्र-पत्रिकाओ मे यथावसर प्रकाशित होते रहते थे। अद्यावधि आपकी वह लेखन-निष्ठा वर्त्तमान है।[2] जब 'देश' पत्र पर पटना हाइकोर्ट मे मुकदमा चला था, आपने प्रतिवादी-पक्ष की ओर से सफाई के लिए 'सम्पूर्ण हरिश्चन्द्र' नाटक का हिन्दी से अँगरेजी अनुवाद करके 'सर्चलाइट' मे प्रकाशित करवाया था। शिक्षा-सुधार, स्त्री-शिक्षा-प्रचार एवं हरिजनोद्धार आदि कार्य मे, जिन्हे महात्मा गान्धी ने प्राथमिकता दी थी, आपने तन-मन-धन लगाकर साथ दिया। 'चाँद', 'नवशक्ति' आदि पत्र-पत्रिकाओ में आपके द्वारा लिखित एतद्विषयक निबन्ध बडे ही विख्यात हुए है।

आप हिन्दी और संस्कृत[3] दोनो मे ही बहुत सुन्दर पद्य रचना करते हैं। आपकी गणना संस्कृत और हिन्दी के दिग्गज पण्डितो मे होती है। आप सादा जीवन और उच्च विचार के बडे पक्षपाती है। सम्प्रति, आप अपने गाँव मे ही समाज-सेवारत रहकर जीवन-यापन कर रहे है।

---

१. ये दोनों पुस्तकें नवयुग-ग्रन्थ-मन्दिर, लहेरियासराय से प्रकाशित हुई थीं। प्रथम पुस्तक में गाँवों की आर्थिक तथा नैतिक दशाओं का वर्णन और उनके सुधार के उपाय बतलाये गये हैं और दूसरी पुस्तक मे प्रचीन योग-दर्शन के पाँच यमों और पाँच नियमों के आधार पर स्वास्थ्य-रक्षा के लिए दिनचर्या का वर्णन है।

२. आपके द्वारा लिखित पं० रामावतार शर्मा विषयक जो निबन्ध 'विशाल भारत' में छपा था, उसकी देशव्यापी प्रशस्ति हुई थी। हिन्दी-पत्र-पत्रिकाओं के अतिरिक्त अँगरेजी-पत्रों में भी आप नियमित रूप से लिखते रहे हैं। आपके कुछ निबन्ध बड़े महत्त्व के हैं।

३. आपने भारतीय-समाज-सुधार-सम्बन्धी १४ सर्गों (१६०० श्लोकों) में संस्कृत में पद्यबद्ध भारत का इतिहास भी 'भारतीयमितिवृत्तम्' के नाम से लिखा है, जो अप्रकाशित है। आपकी एक अँगरेजी-पुस्तक (Sanskrit an alternative National language) नाम से 'साहित्य-सदन' से प्रकाशित है।

उदाहरण

(१)

कहने के लिए तो हम आज भी राम और कृष्ण के वंशज है, नित्य प्रातः उठकर राम-कृष्ण की टेर लगाते है। प्रतिवर्ष लाखों की संख्या में उनकी जन्मभूमि अयोध्या और वृन्दावन की यात्रा करते है, नित्य रामायण और श्रीमद्भागवत की कथा सुनते हैं, पर व्यावहारिक जीवन में हम राम-कृष्ण के गुणों का तनिक भी उपयोग नही करते है। एक ओर कहाँ तो राम का भ्रातृ-प्रेम और निःस्वार्थ लोक-सेवा, दूसरी ओर हमारा बन्धु-वैर और अहर्निश क्षुद्र स्वार्थ-चिन्ता। राम ने भरत के लिए और पुनः भरत ने राम के लिए विशाल राज्य को तृणवत त्याग दिया, पर आज हम दो-दो पैसे के लिए अपने सगे भाइयों के साथ जघन्य से जघन्य काम करने से बाज नही आते है। कृष्ण ने स्वयं गायें चराकर अपने कल्याण के लिए हमें गौ-सेवा की जो शिक्षा दी थी, उसे भी हम इस हद तक भूल गये हैं कि आज हमें बूढ़ी गायों को बधिकों के हाथ टके-दो-टके के लिए समर्पण करने में हिचकिचाहट नही होती, गोचर-भूमि को हड़पना तो साधारण बात हो गई है, तो भी नित्य हम अपने सम्बन्धियों के पास पत्र लिखने में 'गो-ब्राह्मण-प्रतिपालक' लिख रहे है। सत्यनारायण की पूजा अधिकांश हिन्दू प्रतिमास अपने घर में किया करते है, पर नित्य खुल्लम-खुल्ला झूठनारायण की उपासना करते है।[1]

(२)

संसार में हिन्दूधर्म के अतिरिक्त जितने भी इतर धर्म है, वे किसी-न-किसी समय किसी-न-किसी मनुष्य के द्वारा प्रवर्तित हुए हैं और उनमें ऐसी बहुत-सी बातें है, जिनको मानने से ही मनुष्य उनके

१. 'त्यागभूमि' (वर्ष २, खण्ड २, अंश ६, पूर्णांश २४, भाद्रपद, सं० १९८३ वि०), पृ० ५४६।

अनुयायी कहे जा सकते है। उदाहरणार्थ खीष्ट तथा मुसलमान-धर्मों को लीजिए। ईसामसीह के द्वारा प्रायः दो-हजार वर्ष पूर्व खीष्ट-धर्म का प्रवर्त्तन हुआ था, तथा साढ़े तेरह-सौ वर्ष पूर्व मुहम्मद साहब के द्वारा मुसलमान-धर्म का प्रवर्त्तन हुआ था। ईसाइयों का विश्वास है कि ईसामसीह में विश्वास करनेवाले मानवमात्र के सारे पापों को उन्होंने पहले ही भस्मसात् कर दिया है एवं मुसलमानों की धारणा है कि मुस्लिम-धर्म में विश्वास नही करनेवाले सारे मानव काफिर (धर्महीन) है और उनके लिए दोजख (नरक) मे स्थान निश्चित है। ईसाइयों के लिए गिरजाघर में और मुसलमानों के लिए मस्जिद में जाकर अमुकामुक समय में प्रार्थना करना, शिखा नही रखना आदि बाह्य पद्धति का अनुसरण करना पक्के तत्तद्धर्माव-लम्बियों के लिए अनिवार्य है। हिन्दू (आर्य सनातन) धर्म इन सारी मनुष्यकृत पद्धतियों से मुक्त है।[१]

(३)

चाँद के देशप्रेमी पाठक-पाठिकाओ को यह जानकर बड़ा आनन्द होगा कि इधर दो महीने से बिहार-प्रान्त में पर्दे की सत्यनाशी प्रथा को समाज से निकाल बाहर करने का आन्दोलन जोर पकड़ रहा है। इस शुभारम्भ का श्रेय दरभंगा जिले के 'पतोर'-ग्राम-निवासी एक उच्चकुलोत्पन्न ब्राह्मण युवक श्रीयुत पं० रामनन्दन मिश्रजी को है। मिश्रजी गन्दे लोकमत की परवाह न करके, असाधारण साहस के साथ अपनी धर्मपत्नी को परदे के पिंजड़े से बाहर निकालने का दृढ़ संकल्प करके, महात्मा गाँधी का आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए सावरमती पहुँचे। समाचार-पत्र पढनेवाले सज्जनो को विदित होगा कि इस कार्य में मिश्रजी को सहायता देने के लिए महात्माजी ने

१. 'ल्याण' (हिन्दू-संस्कृति-अंक, पूर्ण संख्या २७८, संख्या १, वर्ष २४, माघ २००६ वि०, सन् १९५० ई०), पृ० ५७३।

(स्वर्गीय मगनलाल गाँधी की पुत्री) राधाबाई तथा स्वर्गीय दलबहादुर गिरि की पुत्री को उनके साथ कर दिया। गत अप्रैल मास के द्वितीय तथा तृतीय सप्ताह मे मिश्रजी की ससुराल (मझवे गया) में, जहाँ उन दिनो उनकी धर्मपत्नी रहती थीं—उन बालिकाओ के पदार्पण करने से काफी चहल-पहल रही। प्रान्त-भर में इस पुण्य आरम्भ की चर्चा होने लगी।[1]

(४)

महापुरुषों के गुणो की थाह लेखनी-दण्ड से आज तक नही लगाई जा सकी है। संस्कृत साहित्याकाश के सूर्य्य, कर्कश-तर्क-निकष, विचार-स्वातन्त्र्य के सम्राट्, हास्यरस की मूर्ति हमारे पाण्डेयजी ऐसे ही महापुरुष थे, जिनके गुणो की गणना हमारे जैसे अल्पधी जनों के द्वारा सम्भव नही है। तथापि अर्वाचीन युवक सर्वत्र क्रान्ति के उपासक बन रहे हैं और पाण्डेयजी का मस्तिष्क क्रान्तिकारी विचारों से भरा हुआ था, अतएव उनकी विचारधारा से संक्षेप में भी अवगत होना 'युवक' के प्रेमी पाठकों के लिए हितकर होगा।

आपके क्रान्तिकारी विचारो से आपके शिष्यवर्ग तो बहुत दिन पहले से ही परिचित हो चुके थे, परन्तु जनता पहले-पहल सन् १९१२ ई० मे आपकी विचार-पद्धति से परिचित हुई, जब पटने में अखिल-भारतीय समाज-सुधार-परिषद् के अध्यक्ष बनाये गये थे। बिहार सदा से समाज-सुधार मे पीछे रहता आया है। अकस्मात् एक बिहार-निवासी के मुँह से ऐसी बातें सुनकर सारा प्रान्त चौक उठा। पाण्डेयजी ने समाज के खून चूसनेवाले पाण्डे-पुजारी आदि किसी मुफ्तखोर सण्ड-मुसण्ड को नहीं छोड़ा था, साथ-ही इन महामूर्ख धूर्तों को पूजनेवाले हिन्दू-समाज को बजमूर्ख की उपाधि से भूषित

१. '[illegible]' (वर्ष १, [illegible] १, संख्या ७, पूर्णसंख्या [illegible], [illegible], सन् [illegible] ई०), पृ० [illegible]।

कर सतर्क कर दिया था। लोग खूब चिढ़े। आप पर 'नास्तिक', 'भ्रष्टाचारी' आदि उपाधियों की वृष्टि होने लगी थी। पर आप थे पक्के सुधारक और तर्क उपासक। जरा भी नहीं डिगे। सन् १९१३ ई० मे आपका प्रसिद्ध दर्शन-ग्रन्थ 'परमार्थ' प्रकाशित हुआ, जिसमें अर्वाचीन हिन्दुओं की महामूर्खतापूर्ण धर्माचरण की आपने खूब मखौल उडाई है।[1]

★

रामप्रसाद सिंह 'साधक'

आप मुंगेर-जिला के गौरबडीह नामक ग्राम के निवासी ठाकुर नवाबसिंह[2] के पुत्र है। आपका जन्म सं० १९५० वि० (सन् १८९३ ई०) की श्रावण कृष्ण एकादशी (सोमवार) को हुआ था।[3] पटना से नॉर्मल-परीक्षा पास करने के बाद आपने हिन्दी, संस्कृत, बँगला, उर्दू और अँगरेजी-भाषाओं का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया। आप भारतीय काँगरेस के एक सक्रिय सदस्य रह चुके है। आप राष्ट्रीय विद्यालय (हवेली खडगपुर) के अध्यापक रह चुके है। आपने श्रीहरि साहित्य महाविद्यालय की स्थापना की थी। इस महाविद्यालय का संचालन भी आप स्वयं करते है। सम्प्रति, इसके प्राचार्य आप ही है। संगीत में भी आपकी विशेष अभिरुचि है। आपका रचना-काल सन् १९१२ ई० बतलाया गया है। आप परम गान्धीवादी है एवं निरन्तर साहित्य-साधना मे सलग्न रहते है। राष्ट्रीय आन्दोलन के समय आपकी कविताओ से जन-जीवन को पर्याप्त प्रेरणा मिलती रही। हिन्दी में आपकी प्रकाशित पुस्तकाकार रचनाओं के नाम ये है–(१) राष्ट्रीय तरंग (२) उद्बोधन, (३) बाबा से अपील (अनमेल विवाह), (४) निवेदन, (५) गो-माता की पुकार और (६) गान्धी-गुणगान। अप्रकाशित रचनाएँ हैं—(१) विश्व-साहित्य की झलक (सम्पादित) (२) कवि की आँख, (३) हिन्दी कवि और ऋतु, (४) साहित्य-सेवियो का समादर, (५) दिव्य-दर्शन, (६) स्वर्गीय प्रणय और (७) मनमौजी कवि।

उदाहरण

(१)

सूर, तुलसी, कबीर, सेनापति, मतिराम,
केसो पदमाकर की उकती लसानी है।

---

१. 'युवक' (मासिक, वर्ष १, अंक ४, ज्येष्ठ, सं० १९८६ वि०, जून, सन् १९२९ ई०, पृ० ३०८-९।

२. ग्वालियर के तोमर-क्षत्रियों का यह कुल महाराणा प्रताप के साथ मेवाड़ की स्वाधीनता के लिए लड़नेवालों में अपना विशिष्ट महत्त्व रखता था। आपके अनुज श्रीनन्दकुमार सिंह बिहार-प्रान्तीय काँगरेस-कमिटी के अध्यक्ष थे। वे एक अच्छे वक्ता एवं हिन्दी-लेखक भी थे।

३. परिषद् के साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री के आधार पर। देखिए, 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' ([illegible], पृ० [illegible]) भी।

चंदबरदाई, लाल, भूषन, जगनीका की,
वीरता, विवेकता सकल जग जानी है ॥
मैथिली, द्विवेदी, हरिऔध, हरिचन्द, देव,
रसिक बिहारी, रसखान रस साना है।
'साधक' भनत आज, सुनू रे प्रवीन लोग,
सब गुनकारी हिन्दी भाषन की रानी है ॥[1]

(२)

सुख में गाफिल पड़े नरो को, तूही सजग कराती है।
बनकर सत् उपदेशक तू ही, सत्पथ को दर्शाती है।
धन-यौवन-मद-अन्ध-मनुज के, नेत्र-शलाका करती है।
कर अञ्जन मद गञ्जन विपदे! रञ्जन जन का करती है।
या मद मस्त मदन मोहित नर, कुञ्जर मद यों हरती है।
बन यन्ता जनता कुञ्जर को, बिन अकुश वश करती है ॥[2]

(३)

शिक्षा की समस्या तो और भी जटिल और दुरूह है। इस दिशा में सुधार की काफी गुंजाइश है। आमूल परिवर्त्तन की आवश्यकता है। मेकाले की शिक्षा-पद्धति से अब देश को कतई लाभ होने की आशा नहीं। स्कूल तथा परीक्षा-शुल्क के अभाव के कारण जहाँ के करोडों शिक्षा के पुजारी (उपासक) श्रीशारदादेवी के मनोज्ञ मन्दिर तक पहुँचने के अधिकारी तक नही हो पाते, उसके दिव्य द्वार को खटखटाने भी नही पाते हों, वहाँ की शिक्षा की बात पूछना ही व्यर्थ है। दुनियाँ के उन्नत, शक्तिशाली, सुख-सम्पन्न

---

१. परिषद् के साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री है।
२. वही।

राष्ट्र के अन्धे, लँगड़े, पशु और पक्षी भी नसीहत पाते है, वहाँ वे सब भी शिक्षा के अधिकारी समझे जाते, पेट के तथा दुधमुहे बच्चे को छोड़कर ८०/८५ प्रतिशत शिक्षित है। निरक्षरता किस चिड़िये का नाम है, जानते ही नही, सर्वत्र शिक्षा और साक्षरता का साम्राज्य है। सर्वत्र उसी की तूती बोल रही है। उस सभ्य, शिक्षित, उन्नतिशील राष्ट्र के सामने हमारी हस्ती नही के बराबर है, नगण्य है। ८५ और १५ का अन्तर तीर-सा चुभनेवाला है। ओह ! कितनी विषमता है ! कितने शोक और परिताप का विषय है। इस अपार अथाह गहरी खाई को जल्दी-से-जल्दी पाट देने के लिए असीम ताकत लगाने की जरूरत है। देशव्यापी जबर्दस्त आन्दोलन की आवश्यकता है। तभी इस लज्जाजनक अभाव की पूर्ति हो सकती है, अन्यथा नही।[1]

(४)

शरणजी[2] अधिक अंश मे जातीय कवि है, हिन्दू-संस्कृति से उनका काव्य ओतप्रोत है। भावुकता, भाव-प्रवणता, रसार्द्रता की तो बात ही क्या ! मेरे ख्याल से तो साकेत के इने-गिने सर्गो को छोड़ शायद ऐसा कोई सर्ग नही, जिसमे सम्यक प्रकारेण, रस-परिपाक न हुआ हो। अथवा काव्य के अन्य गुणो से वह सर्वथा रहित हो ! विभूषित न हो ! कहने की आवश्यकता नही। इसका ज्वलन्त उदाहरण तो स्वय उनकी लोकप्रियता ही प्रत्यक्ष है। जन-साधारण मे उनका और उनकी अमर कृतियों का जितना समादर है, शायद ही हिन्दी के वर्तमान अन्य कलाकारों को सौभाग्य प्राप्त हुआ हो।[3]

★

१. वही।
२. राष्ट्रकवि स्व० मैथिलीशरण गुप्तजी।
३. वही।

रामप्रीत शर्मा 'प्रियतम'[1]

आपकी रचनाएं 'शिव' उपनाम से मिली है। आप शाहाबाद जिले के 'केसठ' नामक स्थान के निवासी श्री बुद्धिनाथ शर्मा (पं० बुद्धि तिवारी) के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९५३ वि० (सन् १८९६ ई०) की कार्तिक शुक्ल-द्वितीया को हुआ था।[2] आपके माता-पिता बाल्यकाल में ही दिवंगत हो गये थे। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। आपने बी० एम्० की परीक्षा सन् १९१८ ई० मे पास की। सन् १९१९ ई० मे साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग से 'विशारद' और सन् १९३३ ई० मे विद्वत्परिषद्, अयोध्या से 'विद्यालंकार' की उपाधियाँ क्रमश प्राप्त की। अपने घर पर ही आपने संस्कृत, उर्दू एवं बंगला का अध्ययन किया। छात्र जीवन मे जगत्जननी माँ भगवती की कृपा से आप विसूचिकोन्मुक्त होकर पुनर्जन्म पा सके।

आपने सन् १८१८ ई० से ही साहित्य-सेवा का व्रत ले लिया था। आपके द्वारा लिखित लेख शिक्षा', 'सरस्वती', 'माधुरी', 'हिन्दूपंच' 'मर्यादा' आदि पत्र-पत्रिकाओं मे यथावसर अबाधगति से प्रकाशित होते रहते थे। आरा से प्रकाशित होनेवाले पाक्षिक पत्र 'राम' का और पटना ट्रेनिंग स्कूल से निकलनेवाले 'शिक्षासेवक' (मासिक) तथा 'शिक्षक' (मासिक, आरा) का कई वर्षों तक आपने सम्पादन किया। आप आरा नागरी-प्रचारिणी सभा की कार्यकारिणी के प्रमुख सदस्यो मे है। करीब दस वर्षो तक आप इसके प्रधानमन्त्री-पद पर प्रतिष्ठित रहे। सुप्रसिद्ध कवि पं० श्रीअयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔधजी' के अभिनन्दन में प्रकाशित 'हरिऔध-अभिनन्दन-ग्रन्थ' के सयोजन और सम्पादन का श्रेय आपको ही प्राप्त है। आपने 'डॉ० राजेन्द्र प्रसाद-अभिनन्दन-ग्रन्थ' का भी सम्पादन किया था।[3] आप अपने जीवन के प्रारम्भिक काल से ही सच्चे हृदय से हिन्दी के प्रचार-कार्य में लगे रहे। इस कार्य के प्रति आपका विशेष अनुराग है। महामहोपाध्याय प० सकलनारायण शर्मा, पं० ईश्वरीप्रसाद शर्मा और आचार्य शिवपूजन सहाय के आरा से अन्यत्र चले जाने पर आपने ही वहाँ की नागरी-प्रचारिणी सभा के द्वारा हिन्दी के प्रचार मे योगदान किया। 'हिन्दी-साहित्य-परिषद्' और 'कवि-परिषद्' द्वारा आपने नवयुवको में साहित्यिक अभिरुचि पैदा की। वास्तव मे, शाहाबाद जिला-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की स्थापना का श्रेय आपको ही प्राप्त है। आप 'शाहाबाद-पुस्तकालय-संघ' के दो बार अध्यक्ष हुए। आप 'बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन' की स्थायी समिति के सदस्य भी रह चुके है। 'आरा-मनोरंजन-नाट्य-परिषद् के भी आप वर्षो सदस्य एव मन्त्री थे। आप हिन्दी-साहित्यानुरागी पुरुष हैं। हिन्दी के अतिरिक्त सस्कृत तथा अँगरेजी का अच्छा ज्ञान

---

१. 'मिश्रबन्धुविनोद' (वही, पृ० २२७) और 'हिन्दीसेवी संसार' (वही, पृ० ६०८) में यह नाम 'रामप्रीति शर्मा' लिखित है। शर्माजी ने अपना 'प्रियतम' उपनाम खड़ी बोली की कविताओं में लिखा है तथा ब्रजभाषा की कविताओं में अपना उपनाम 'शिव' लिखा है।—देखिए, 'हिन्दीसेवी ससार, 'वही', पृ० २२७।

२. आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक-इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार—'मिश्रबन्धुविनोद', (वही) में आपका जन्मकाल सं० १९५५ वि० है।—देखिए 'मिश्रबन्धुविनोद' (वही, पृ० ६०८)।

३. देखिए 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही), पृ० ६५९।

आपको है।[1] आपके द्वारा लिखित कई पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी है, जिनमे 'नल-दमयन्ती', 'पिंगल-मंजूषा', 'बाल-विनोद' तथा 'राष्ट्रभाषा' प्रसिद्ध हैं। इनके अतिरिक्त, आपके द्वारा रचित एवं सम्पादित 'प्रियतम-विनोद' 'प्रेम', 'व्याकरणशास्त्र', 'रीतिकाल की कला', 'भोजपुरी-सरस रचना-संग्रह' आदि पुस्तकें अद्यावधि अप्रकाशित ही है।[2] सम्प्रति, आप मॉडल इंस्टिट्यूट, आरा मे अध्यापनकार्य-रत हैं।

उदाहरण

(१)

लोहे की कलम कर छूते-छूते जल जाय,
कहै काठ की क्या बात सोच यह भारी है।
मसि-पात्र भाप बन उड़ जाय मसि साथ,
हाय दइ काह कहौं मरजी तिहारी है।
नयनन की ज्योति से ही कागज जल जल जाय,
चलता न एको अब जुगुती हमारी है।
काहि भाँति पाती लिखि भेजिवो कन्हैया पास,
शिव कवि लाखो तदबीर करि हारि है॥[3]

(२)

जिनको बापू अंतरिक्ष से देते रहते नित संवाद,
जिनमें है साकार हो गया, अनुपम पावन गाँधीवाद
जिनके चरणों पर श्रद्धांजलि कोटि-कोटि जन देते आज
जीवन-धन-उत्सर्ग किया है, जिनने भारत माँ के काज,
जो परमेश्वर ओर से मानवता को मिले प्रसाद,
उस देशरत्न राजेन्द्र को प्रियतम मंगल आशीर्वाद।[4]

---

१. देखिए, 'मिश्रबन्धुविनोद' (वही), पृ० ६०८।

२. देखिए, 'हिन्दीसेवी संसार' (वही) स० १९५१ ई०, पृ० २२७।

३. आपके द्वारा प्रेषित और 'साहित्यिक-इतिहास-विभाग' में सुरक्षित सामग्री से।

४. 'राजेन्द्र-अभिनन्दन-ग्रन्थ' (वही)।

रामबालक पाण्डेय

आप सारन-जिला के 'गोविन्दपुर' (थाना—बसंतपुर) नामक ग्राम के निवासी पं० पलक पाण्डेय के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९५५ वि० (सन् १८९८ ई०) की ज्येष्ठ कृष्ण-दशमी (रविवार) को हुआ था।[१] आपकी शिक्षा 'नॉर्मल' तक ही हुई है। आपकी विशेष दिलचस्पी राजनीति मे थी। आपकी गणना असहयोग-आन्दोलन के प्रसिद्ध कार्यकर्त्ताओं में होती है। सं० १९७८ वि० मे आपने अपने पिताजी के नाम पर पलकाश्रम पुस्तकालय की स्थापना की थी। आप आर्य-समाज और रामायण-प्रसार-समिति के सक्रिय सदस्यो में एक रहे हैं। सरकारी कचहरियों मे हिन्दी तथा नागरी-लिपि के व्यवहार के लिए आपके द्वारा किये गये प्रयास स्मरणीय रहेगे। इस सिलसिले में आपने कई बार सरकारी संस्थाओं के सामने सत्याग्रह किया था। सन् १९२२ ई० मे गोरयाकोठी (सारन) से निकलनेवाला हस्तलिखित पत्रिका 'कर्मयोगी' का सम्पादन किया था। सन् १९३० ई० में आप 'सारन सत्याग्रह' से भी, एक सम्पादक के रूप मे, सम्बद्ध रहे। आपके द्वारा रचित दो पुस्तको की चर्चा मिलती है—(१) भक्ति में साहित्य और (२) ढोंढानाथ-माहात्म्य। इनके अतिरिक्त आपने राष्ट्र तथा समाज-सम्बन्धी अनेक स्फुट लेख भी लिखे थे। कहते है, ब्रिटिश-सरकार द्वारा आपकी अनेक रचनाएँ नष्ट कर दी गई। आपकी रचना के उदाहरण हमें भी नही मिल सके।

★

रामरत्न त्रिपाठी

आप मुजफ्फरपुर-जिला के 'अहियापुर' (करनौल) नामक ग्राम के निवासी श्रीब्रजभूषण त्रिपाठी 'मानस-मराल', ज्योतिषाचार्य के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९५३ वि० (सन् १८९६ ई०) की माघ शुक्ल-अष्टमी (गुरुवार) को हुआ था।[२] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा सस्कृत के माध्यम से, घर पर ही हुई। तदनन्तर आपने संस्कृत महाविद्यालय (क्वीन्स कॉलेज), वाराणसी से 'ज्योतिषाचार्य' की उपाधि प्राप्त की। 'वैद्यविशारद' और 'साहित्यरत्न' की उपाधियाँ आपको अलीगढ़ से मिली। सं० १९८२ वि० से आपकी नियुक्ति मधुवन (मुजफ्फरपुर) राज्य में 'ज्योतिष-पण्डित' के पद पर हुई। वहाँ रहते हुए आपने दीन-दुखियो की सेवा के साथ-साथ 'अध्यात्म-रामायण', 'वाल्मीकीय रामायण', 'श्रीमद्भागवत्' तथा 'राधेश्याम-रामायण' की कथा के नियमित कार्यक्रम रखकर जनता को सन्मार्ग-दर्शन कराया। ज्योतिष-फलादर्श के अतिरिक्त निःशुल्क चिकित्सा-कार्य से लोगों के बीच आपकी प्रसिद्धि खूब हुई। इन कार्यों मे व्यस्त रहकर भी कांग्रेस और देश-सेवा के कार्यों का आपने सदा ध्यान रखा। 'अहियापुर' में आपका एक 'ज्योतिष-कार्यालय' तथा 'महावीर औषधालय' आज भी संचालित है।

---

१. आपके द्वारा दिनांक २१ जुलाई, १९५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के अनुसार।—देखिए, 'हिन्दी-सेवी-ससार' (वही, पृ० २३६) भी।

२ आपके द्वारा दिनाक २० फरवरी, १९५७ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।

आपने स० १९७८ वि० से ही सर्जनात्मक साहित्य की ओर कदम उठाया। आपने अपने पिताजी के द्वारा लिखित 'मानस : पूर्वपक्ष और उत्तरपक्ष' नामक ग्रन्थ का प्रकाशन अपने व्यय से किया। आपके अपने पिता के द्वारा लिखित एक दूसरी पुस्तक 'श्रीबजरंग-विनय-पचीसी' के भी प्रचार-प्रसार मे पूरा हाथ बटाया।

उदाहरण

(१)

प्रिय पाठकगण ! इस ग्रन्थ को मुद्रित कराने में जैसी जैसी बाधायें उपस्थित हुई हैं उनको पुनः स्मरण करना सर्वथा अनुचित है। परन्तु उन संकटों को सहन करते हुए और श्री रामजी की कृपा से किसी रूप मे छपकर तैयार भी हो गया। सम्भव है कि इसके प्रूफ इत्यादि में अवश्य त्रुटियाँ होंगी और शीघ्रता करने के कारण टाइप का भी अदल-बदल हुआ है, परन्तु आशा है कि आपलोग उन त्रुटियों को भूलकर केवल विषय के ऊपर ही ध्यान देंगे। इसमें सेमरा-निवासी बाबू भीखम राय ने भी अपने सामर्थ्य के अनुसार हर्षपूर्वक दान दिया है।[१]

★

रामरक्षा मिश्र

आप मुजफ्फरपुर-जिला के 'शिवदहा' नामक ग्राम के निवासी श्रीधनुषधारी मिश्र के पुत्र थे। आपका जन्म सन् १८९९ ई० (१३०६ साल) की भाद्र शुक्ल-चतुर्थी को हुआ था।[२] आपकी आरम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। आप जन्मकाल से ही प्रतिभावान् थे। आपको अधिकाधिक पुस्तकें पढने का शौक था। बचपन से ही आपमे साहित्यिक भावना भरी हुई थी। मिड्ल की परीक्षा पास करके आपने ट्रेनिंग की फाइनल परीक्षा पास की। ट्रेनिंग के बाद आप मिड्ल-स्कूल मे शिक्षक के पद पर प्रतिष्ठित हुए। आपने अपने पडोसी पितृव्य-तुल्य श्रीभवचन्द दास की प्रेरणा से हिन्दी में कविताएँ लिखना आरम्भ किया। कविता पढ़ने और लिखने की आपमे अद्भुत लगन थी। आपकी इसी अभिरुचि के कारण शिक्षक-समाज मे आपको लोगों ने 'साहित्याचार्य' कहना शुरू किया। आपकी

१. इनके पिता श्रीब्रजभूषण त्रिपाठी के द्वारा लिखित 'विजय कम्पनी लिमिटेड, विजय प्रेस, मुजफ्फरपुर' में स० १९७८ वि० मे मुद्रित पुस्तक 'मानस-पूर्वपक्षावली' के प्रकाशकीय निवेदन से।

२. आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।

कविताएँ तत्कालीन समाचारपत्रों में प्रकाशित होती थीं। 'प्रताप', 'वीणा', 'माधुरी', 'मतवाला' आदि पत्र-पत्रिकाओं में आपकी कविताएँ बड़े सम्मान के साथ छपती थीं। कवि-सम्मेलनों में तो आप समा बाँध देते थे। आपकी बहुत-सी बालोपयोगी कविताएँ अप्रकाशित ही रहीं। आपके द्वारा लिखित बालोपयोगी कविताओं का एक संकलन अद्यावधि पुस्तक-भंडार में अप्रकाशित रूप में पड़ा है। सन् १९२९ ई० में आपने हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग से 'विशारद' की उपाधि प्राप्त की। 'सिहवाड़ा' का साप्ताहिक कवि-सम्मेलन आपके हीं अथक परिश्रम का परिणाम था।

आपने 'बिहारी-सतसई' का सवैया-छन्दों में रूपान्तर किया था, जो प्रकाशित नहीं हो सका। आपकी कविताओं की एक पाण्डुलिपि कन्हैयालालजी, दरभंगा के कार्यालय में ही पड़ी रह गई। अद्यावधि उसका प्रकाशन नहीं हो सका। सन् १९२९ ई० के दिसम्बर माह में अचानक आपका स्वर्गारोहण हो गया।

उदाहरण

(१)

गीता की प्रतिज्ञा को याद कर घनश्याम,
नेकु निज हिय में नहीं क्या सुधि लाओगे।
यमुना के कूलन पै रोज रोज प्यारे कब,
टेरि टेरि बाँसुरी की तान को सुनाओगे॥
या कि नग्न नारियों की लज्जा निवारण हेतु,
कर लपकाके कब चीर को बढ़ाओगे॥
डूबता है हिन्द दुख-सागर-तरंग में हा!
इसके उबारन को नाथ कब आओगे।
ब्रज की सुभूमि को निपट तज दई नाथ,
अब क्या वहाँ पै निज रास ना रचाओगे॥
विरहिणी सूरत सनेह पगी गोपियों को,
बारेक मोहन क्या धीरज ना बँधाओगे॥
प्यार पुचकार चुचकार के चराया जिन्हें,
उन धेनुओं पै क्या तरस ना दिखाओगे॥

सत्य ही बताना 'बन्धु' बात न बनाना अहो,
मुखड़ा दिखाने ब्रजनाथ कब आओगे ॥[१]

(२)

शिशिर पराने झरि वृक्ष के पुराने पात,
तिन पै नवीन 'बन्धु' साज सजी अन्यारी ।
चहुँधा चमन में नुकीली कलियान मिस,
मदन-चुभीले बाण हाय नित मारो री ।
कूकि-कूकि कोकिल कदम्बन पै हूकि हूकि,
हियरा हमारो नित निसि दिन जारो री ।
छायो क्षिति मंडल में प्रगट वसंत पर,
मानस वसंत वह अजहूँ न आयो री ॥[२]

रामरूप शर्मा 'स्वच्छ'

आप मुंगेर-जिला के सुप्रसिद्ध ग्राम 'बड़हिया'-निवासी श्रीबुद्धन सिंह के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९५५ वि० (सन् १८९८ ई०) की शुद्ध आश्विन शुक्ल-द्वितीया को हुआ था[३]। आपकी प्राथमिक शिक्षा घर पर ही हुई। तदनन्तर वहीं पर आपने उच्च विद्यालय की शिक्षा प्राप्त की। एकादश वर्ग तक आपने शिक्षा पाई। सन् १९२० ई० में, जिस समय आप पढ ही रहे थे, गाधीजी की पुकार पर आपने विद्यालय का त्याग कर दिया। उसके बाद आपका सार्वजनिक जीवन प्रारम्भ हुआ। सार्वजनिक कार्यों में आपने अपना समय और तन मन-धन लगा दिया। आपके द्वारा समाज-सेवा के अनेक कार्यों में गोशाला-सम्मेलन का प्रचार-प्रसार प्रमुख रहा। उच्च प्राथमिक विद्यालय के पाँचवें वर्ग में जब आप पढ़ते थे, तभी से आप हिन्दी में रचना करने लगे। फलतः आपने हिन्दी में शृंगार, भक्ति, व्यंग्य-विनोद और राष्ट्रीय चेतना विषयक अनेक पद लिखे।

---

१. 'वीणा-वादिनी' (वैशाख, स० १९८३ वि०)। साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री से।

२. 'मतवाला' (वर्ष ५, स० ५, ज्येष्ठ कृष्ण-पूर्णिमा, स० १९८५ वि०)।

३. प्रो० उमाशंकर सिंह (रामदयालु सिंह कॉलेज, मुजफ्फरपुर) द्वारा दिनाक १९ जून, सन् १९६८ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

आपके द्वारा लिखित हिन्दी-पुस्तकों में 'भारत-भ्रमर' और 'होली का हल्ला' प्रकाशित हो चुकी हैं। आपके स्फुट पदों का एक संकलन 'काव्य-कणिका' अद्यावधि अप्रकाशित ही है। सम्प्रति, आप अपने ग्राम 'बड़हिया' में ही 'प्रगति' नामक संस्था का संचालन कर रहे हैं। ग्राम्य-जीवन की सुखोपलब्धि के साथ जीवन-यापन करना ही अब आपका लक्ष्य है।

रामलोचन शरण 'बिहारी'

आप मुजफ्फरपुर-जिला के 'राघाउर' नामक ग्राम के निवासी श्रीमँहगू साहु जी के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९४८ वि० (मार्च, १८९१ ई०) को फाल्गुन कृष्ण षष्ठी को हुआ था।[१] आपकी प्राथमिक शिक्षा घर पर ही हुई। प्राथमिक (अपर प्राइमरी) परीक्षा में आपने छात्रवृत्ति के साथ सफलता प्राप्त की। सन् १९०३ ई० में आपने शिवहर मिड्ल स्कूल से ससम्मान मिड्ल की परीक्षा पास की। तदनन्तर उच्च शिक्षा प्राप्त करने की आपकी अभिलाषा आर्थिक कठिनाइयों के कारण पूरी न हो सकी। कुछ ही दिनों बाद, जब आपका विवाह सम्पन्न हुआ तब जीविकार्जन अनिवार्य हो गया। और, इसी उद्देश्य से आपने पटना नॉर्मल ट्रेनिंग स्कूल की नॉर्मल-परीक्षा सन् १९०७ ई० में दी। उस परीक्षा में आप सर्वप्रथम हुए। तत्पश्चात् आपने क्रमशः मोतीहारी जिला स्कूल, चूड़ामणिपुर (शाहाबाद) स्कूल, सिमरा (मुजफ्फरपुर) स्कूल तथा नॉर्थब्रुक हाई स्कूल, दरभंगा में शिक्षक का कार्य-सम्पादन किया। उपर्युक्त स्थानों में शिक्षण-कार्य करते हुए आपने प्रभूत यश अर्जित किया। कुछ दिनों के बाद आपकी नियुक्ति गया जिला स्कूल में हुई। गया में तीन साल तक रहकर पुनः आप उपर्युक्त नॉर्थब्रुक हाई स्कूल में चले गये। गया में रहते समय आपने हिन्दी-साहित्य के तत्कालीन प्रतिष्ठित विद्वान् लाला भगवानदीन जी का आशीर्वाद प्राप्त किया। लालाजी के प्रोत्साहन के फल-स्वरूप ही आप साहित्य की ओर अग्रसर हुए। सन् १९१६ ई० में आपने लहेरियासराय (दरभंगा) में 'पुस्तक-भंडार' की स्थापना की। इसी समय आपने हिन्दी में एक मौलिक व्याकरण की रचना की। कालक्रम से उत्तर-प्रदेश की तत्कालीन सरकार ने नूतन शैली की इस व्याकरण-रचना के लिए आपको पुरस्कृत किया। उसके बाद ही आपके व्यक्तित्व का विकास और पुस्तक-भण्डार का भाग्योदय हुआ। प्रकाशन के सौविध्य को दृष्टि में रखकर आपने सन् १९२८ ई० में लहेरियासराय में ही एक प्रेस खोला, जिसका नामकरण 'विद्यापति प्रेस' रखा। इस प्रेस के माध्यम से आपने बिहार में पढ़ाई जानेवाली प्रायः सभी कक्षाओं की पुस्तकों का मुद्रण एवं प्रकाशन किया। सन् १९२९ ई० में आपके द्वारा प्रकाशित पुस्तकें पूर्णतया एम० ए०

---

१. देखिए, 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ६८२), 'बिहार-अब्दकोश' (वही, पृष्ठ ६८९), 'बिहार-विभाकर (वही, सन् १९४३ ई०, पृ० ३९७—४०७), 'हिन्दी-सेवी संसार' (वही, पृ० २२९) ने आपका जन्मकाल सन् १८८८ ई० लिखा है। 'मिश्रबन्धु-विनोद', (वही, पृ० ४८७) ने आपका जन्म सं० १९४५ वि० में लिखा है।

तक की कक्षाओ के लिए सरकार से स्वीकृत कर ली गई। इन्हीं दिनों आपने 'पुस्तक-भण्डार' की एक प्रमुख शाखा पटना मे खोली। सन् १९४१ ई० मे पटना की इस शाखा की सहायता के लिए आपने 'हिमालय प्रेस' की स्थापना की। इसका कार्यारम्भ हो जाने पर आपने यथेष्ट साहित्यिक पुस्तको का प्रकाशन किया। इस कार्य मे आचार्य शिवपूजन सहाय, श्रीरामवृक्ष 'बेनीपुरी', श्रीउपेन्द्र महारथी, श्रीदिनकर आदि वरिष्ठ साहित्यकारों एवं कलाकारों का सहयोग आपको प्राप्त हुआ। फलतः एक बहुप्रशसित साहित्यिक पत्रिका 'हिमालय' मासिक का भी आपने प्रकाशन किया, जिसका हिन्दी-ससार मे महत्त्वपूर्ण स्थान रहा। सरस्वती के सच्चे उपासक होने के साथ-साथ आपने अपने अर्जित धन से अनेक संस्थाओ का सृजन कर अपनी दानशीलता का भी परिचय दिया। आपके द्वारा प्रदत्त धनराशि से ही आपके ग्राम राघाउर में एक संस्कृत-विद्यालय, छात्रावास तथा लहेरियासराय (दरभंगा) में कीर्त्तन-भवन आदि संचालित हैं।[१] शिक्षा-सम्बन्धी सर्वोत्कृष्ट कार्य आपने निरक्षरता-निवारण के क्षेत्र में साहित्य और सम्पत्ति के द्वारा इतना सुन्दर किया कि बिहार-सरकार ने आपको सर्वप्रथम स्वर्ण-पदक प्रदान कर गौरवान्वित किया और सन् १९४१ ई० के जून में आप 'रायसाहब' की उपाधि से विभूषित किये गये। सम्राट् पंचम जॉर्ज की रजत-जयन्ती के अवसर पर सहयोग देने के कारण तत्कालीन सरकार ने आपको 'जुबिली-मेडल' प्रदान किया। पुनः सन् १९३६ ई० में सम्राट् षष्ठ जॉर्ज के राजतिलक के उपलक्ष्य मे आपको 'कॉरोनेशन-मेडल' भी प्राप्त हुआ।

बच्चे राष्ट्र के भावी कर्णधार हैं—इस सिद्धान्त को ध्यान मे रखकर आपने सन् १९२६ ई० में ही 'बालक' (मासिक) पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ किया[२], जिसके सम्पादक बाद मे चलकर आप ही बने। बाल-साहित्य की रचना और प्रकाशन मे आपका वही स्थान है, जो गुजराती मे आचार्य गिजूभाई का माना जाता है। आपका सम्पादन-कौशल विलक्षण था। अत्यन्त जटिल एवं क्लिष्ट विषय को भी आप ऐसा प्राजल और प्रसाद-गुणपूर्ण बना देते थे कि साधारण पाठक भी बिना प्रयास उन्हे हृदयगम कर लेते थे। 'बालक' के अतिरिक्त आपने 'होनहार' और 'रौनियार-वैश्य' का भी सम्पादन किया था। शिक्षा-प्रसार और विशेषतः हिन्दी के प्रचार के लिए आपने कुछ भी उठा नही रखा। बिहार के साहित्य-साधकों मे आपकी गणना आदर के साथ होती है। बिहार के साहित्यिक जीवन को उन्नत, परिष्कृत और गौरवान्वित करने में जिन लोगों ने हाथ बटाया है, उनमे आपका स्थान आदरणीय है। सन् १९३८ ई० में वयस्क-शिक्षा-प्रसार के लिए आपको 'राजेन्द्र-स्वर्ण-पदक' से सम्मानित किया गया।[३]

---

१. आपकी दानशीलता के अनेक ससमरण बिहार एव देश के साहित्यिको की जिह्वा पर विराजमान है। बिहार प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन (पटना) के भवन-निर्माण के लिए जब जमीन खरीदी जा रही थी, तब आपने भी मुक्तहस्त हो प्रथम दान दिया था। —'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही) पृ० ६६१।

२. 'यूनेस्को' से जो शिक्षा-सम्बन्धी सूचना हाल मे प्रकाशित हुई है, उसमे २४ पुस्तकों के बीच आपकी भी एक पुस्तक की चर्चा है। वयस्क-शिक्षा के लिए जिन सौ पुस्तको का प्रकाशन आपने सन् १९३६ ई० मे किया था, उनकी भी प्रशसा की गई है।

३. 'जयन्ती-स्मारक ग्रंथ' (वही), पृ० ४०८।

आपने 'पुस्तक-भण्डार' को हिन्दी-विकास के एक प्रमुख केन्द्र के रूप में परिणत कर दिया था। वहाँ से अनेकानेक श्रेष्ठ पुस्तकों का हिन्दी में प्रकाशन होता रहा है। आपने हिन्दी को सुगठित करने के लिए जो व्याकरण सन् १९१४ ई० में ही लिखा था, वह आज भी सर्वमान्य है। यह 'व्याकरण-बोध' आपकी एक उत्तम रचना है। आपने व्याकरण, साहित्य, इतिहास, भूगोल, स्वास्थ्य, विज्ञान, नीति, धर्म, आदि कई विषयों की कितनी ही उत्तमोत्तम पुस्तकें लिखी। लेखन-कार्य के अतिरिक्त दर्जनों पुस्तकों एव पत्रिकाओं का आपने सम्पादन, संशोधन और परिमार्जन किया। आपके द्वारा लिखित पुस्तकें भाषा की शुद्धता, भाव की सुगमता और शिक्षण-पद्धति की रोचकता के लिए आदर्श मानी जाने लगी। नई-नई पाठविधियाँ निकालकर अपरिपक्व मस्तिष्कवाले छात्रों की बौद्धिक चेतना को आपने ऐसा जाग्रत् किया कि स्कूलों के शिक्षक और छात्र आपकी ही पुस्तकों पर सर्वथा निर्भर हो गये। इस दिशा में आपकी सूझ की कोई समता न थी। आपके द्वारा लिखित पुस्तकों के नाम इस प्रकार हैं—१. व्याकरण-बोध, २. व्याकरण-चन्द्रिका, ३. व्याकरण-नवनीत,४ व्याकरण-चन्द्रोदय, ५ बाल-रचना, ६. रचना-प्रवेशिका, ७. रचना चन्द्रिका, ८. रचना-चन्द्रोदय, ९. रचना-नवनीत, १० नीति-निबन्ध, ११. गद्य-साहित्य, १२ गद्यामोद, १३ गद्य-प्रकाश, १४. साहित्य-सरोज, १५. साहित्य-विनोद, १६ साहित्य-प्रमोद, १७. राष्ट्रीय साहित्य, (९ भाग), १८. राष्ट्रीय कविता-संग्रह, १९. काव्य-सरिता, २०. इतिहास-परिचय, २१. प्रकृति-परिचय, २२. प्रतिवेश-परिचय, २३. धर्म-शिक्षा, २४. शिशुकर्म-संगीत, २५. मनोहर पोथी, २६. गणित पढ़ाने की विधि, २७. ऐतिहासिक कथामाला आदि।[१] अपने जीवन के अंतिम वर्षों मे आपने गोस्वामी तुलसीदास-कृत रामचरितमानस का मैथिली-रूपान्तर प्रस्तुत कर अपनी अद्भुत साधना का परिचय दिया। इस कार्य से आपको प्रभूत कीर्ति-लाभ हुआ।[२] सन् १९४२ ई० में आपकी 'स्वर्ण-जयन्ती' मनाई गई। इस अवसर पर आपको एक बृहदाकार अभिनन्दन-ग्रन्थ—'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' समर्पित किया गया। हिन्दी-साहित्य के इतिहास में इस ग्रन्थ का महत्त्वपूर्ण स्थान है। सन् १९५९ ई० में आपको बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना की ओर से डेढ़ सहस्र मुद्रा का वयोवृद्ध साहित्यिक-सम्मान-पुरस्कार दिया गया, जिसे आपने परिषद् को ही लौटाकर 'आचार्य रामलोचनशरण छात्रा-निबन्ध-पुरस्कार' प्रारम्भ कराया। अबतक इस पुरस्कार-योजना के अन्तर्गत कई छात्राएँ 'रामायण' विषयक निबन्ध लिखकर परिषद् से पुरस्कृत हो चुकी हैं। आपने साहित्य-सेवा-मन्दिर के अनन्य पुजारी की तरह माँ भारती की अर्चना में आजन्म लीन रहते हुए, लहेरियासराय (दरभंगा)-स्थित अपने निजी आवास भवन में, सन् १९७१ ई० की १४ मई को १० बजे दिन में साकेत-लाभ किया।[३]

---

१ 'हिन्दी-सेवी संसार' (वही), पृ० २२९-२३०।

२. 'उत्तर-बिहार' (साप्ताहिक, वर्ष ५, अंक ४५, १७ नवम्बर, १९५८ ई०), पृ० २।

३. श्रीउपेन्द्र दोषी (पुस्तक-भण्डार, राँची-शाखा-प्रभारी) से प्राप्त सूचना के आधार पर।

उदाहरण

(१)

विद्या सबसे ऊँची श्रेणी की मन की योग्यता है, जो पुस्तकों और विद्वानों से मिलती है, परन्तु विवेक उससे भी कुछ बढ़कर है या यों कहिए कि विद्या भी है और विद्या के उचित उपयोग की शक्ति भी है। विद्या का निवास मस्तिष्क मे है और यह दूसरों से सीखी जाती है, परन्तु विवेक का स्थान हमारे अपने विचार और बुद्धि मे है और यह अपनी ही आत्मा के अनुशीलन और कार्य-व्यवहार से सीखते है। विद्या रुखड़े और बेढब पत्थरों का पहाड़ है। इन्हीं बेढब पत्थरों को चिकनाकर और काट-छाँटकर विवेक का महल तैयार करते है।

विद्या से हम संसार को पहचानते है। यह बेटा है, यह दूसरा लड़का है, यह हमारी पत्नी है, यह हमारी माता है इत्यादि का परिचय कराती है। परन्तु ऊँच और नीच का निर्णय, गुण और अवगुण का भेद तथा अच्छे और बुरे का विचार हम विवेक से ही कर सकते हैं। किसको किस भाव से देखना चाहिए, संसार ही हमारा कुटुम्ब है इत्यादि का यथार्थ निर्णय विवेक ही से होता है। जिसने केवल पुस्तकों ही से विद्या प्राप्त की है, उसके लिए यह बाह्य-जगत् भी एक मुहर लगी पुस्तक है, परन्तु विवेक की दृष्टि से एक क्षुद्रतर प्राणी भी सारे संसार को अक्षय सत्य के उपदेश सिखा देता है। विवेकी अन्तर्जगत् और बाह्य-जगत् को एक समान देखता है, परन्तु विवेकहीन विद्वान् की अन्तर्जगत् में पहुँच ही नही है।[१]

(२)

कर्त्तव्य-पालन ही यथार्थ में मनुष्यत्व और महत्त्व है। संसार में भिन्न-भिन्न प्रकार के मनुष्य हैं, परन्तु कर्त्तव्य-परायण की संख्या

---

१. 'गद्य-चन्द्रोदय' (सं०—साँवलियाविहारी लाल वर्मा, भाग २ (प्रकाशन-काल अनुल्लिखित), पृ० २०४-५।

बहुत ही कम है। जिसे कर्त्तव्य का ज्ञान नहीं, वह मनुष्य-पद के योग्य नहीं। जिसको इसका ज्ञान है, वही समाज का रक्षक और आदर्श है, वही सबो के सम्मान का पात्र है। इस पृथ्वी में जो जाति जितना ही अधिक कर्त्तव्यपरायण है, वह उसी प्रकार उन्नतिशील है। समाज की उन्नति तभी होती है, जब उसका प्रत्येक मनुष्य अपने-अपने कर्त्तव्य को भलीभाँति पाले।

कर्त्तव्य-पालन के लिए हृदय की दृढ़ता की बड़ी आवश्यकता है। जीवन-संग्राम में नाना प्रकार की विघ्न-बाधाएँ उपस्थित होकर कर्त्तव्य से भ्रष्ट कर देना चाहती है, परन्तु जो कर्मवीर है, वह कभी भी विचलित नहीं होता। जिसका हृदय दृढ़ नहीं है, वही लज्जा, घृणा और भयवश कर्त्तव्य-पालन नही कर सकता है; परन्तु जिसने यह समझ लिया है कि अमुक कार्य हमारा आवश्यक कर्त्तव्य है, उसे कोई भी लक्ष्य-भ्रष्ट नहीं कर सकता। इसी कर्त्तव्य-ज्ञान ने प्रातः-स्मरणीय महात्मा ईश्वरचन्द्र विद्यासागर से वह-वह कार्य कराये, जिनके करने के लिए कच्चे दिलवाले तैयार ही नही होते। यही कर्त्तव्य-ज्ञान था, जिससे काजी ने अपने बादशाह 'गयासुद्दीन' को कचहरी में बुलाया। कर्त्तव्य-ज्ञान के ही कारण हिन्दूधर्म-रक्षक महाराणा प्रताप का मान मुगल-सम्राट् अकबर ने शत्रु होकर भी किया और यही कर्त्तव्य-ज्ञान था कि इंगलैंड के 'गैसकाइन' जज ने अपने राजा के बेटे को कारागार का दण्ड दिया।[१]

★

१. 'गद्य-चन्द्रिका' (वही, भाग २), पृ० १८-१९।

रामशरण उपाध्याय

आप दरभंगा-जिला के 'हाशा' (समस्तीपुर) नामक ग्राम के निवासी श्रीवृज-बिहारी उपाध्याय[१] के पुत्र है। आपका जन्म सं० १९४८ वि० (१ जनवरी, १८९१ ई०) की माघ कृष्ण-नवमी को हुआ था।[२] अल्पवय में ही आपके पिताजी का स्वर्गवास हो गया। आपके भावी जीवन का सारा दायित्व आपकी माताजी ने लिया और उनकी अहर्निश शुभाकांक्षा के फलस्वरूप आप एक शिक्षाप्रेमी सिद्ध हुए। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा गाँव की पाठशाला में हुई। सं० १९५६ वि० से सं० १९६१ वि० के बीच आपने 'हायाघाट' (विलासपुर) के दरभंगा-राज मिड्ल स्कूल से छात्रवृत्ति के साथ मिड्ल-परीक्षा पास की। उसके बाद आपका प्रवेश दरभंगा नॉर्थब्रुक हाई स्कूल में हुआ। कुछ दिनों के बाद आप मुजफ्फरपुर जिला स्कूल में प्रविष्ट हुए। सं० १९६७ वि० में आपने वहाँ से इण्ट्रेन्स (प्रवेशिका) की परीक्षा पास की। इस परीक्षा में आप तिरहुत-कमिश्नरी-भर में प्रथम आये और पुनः आपको छात्रवृत्ति मिली। मैट्रिक पास करने के बाद आपका प्रवेश जी० बी० बी० कॉलेज (वर्त्तमान लंगटसिंह महाविद्यालय), मुजफ्फरपुर मे हुआ। वहाँ आइ० ए० की परीक्षा में आपने प्रथम स्थान प्राप्त किया। सं० १९७२ वि० में उसी कॉलेज से आपने बी० ए० की परीक्षा पास की। सं० १९७५ वि० मे आपने पटना ट्रेनिंग-कॉलेज से बी० टी० की शिक्षा प्राप्त की और कलकत्ता-विश्वविद्यालय से उक्त परीक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त किया। इसके उपरान्त आपने सेवाग्राम, वर्धा से 'नई तालीम' मे प्रशिक्षण प्राप्त किया। इस प्रशिक्षण के बाद आपने विभिन्न हाई स्कूलों में अध्यापन-कार्य किया। सन् १९३४ ई० में आप पटना ट्रेनिंग स्कूल में मुख्याध्यापक के पद पर प्रतिष्ठित हुए। तत्पश्चात् सन् १९३८ ई० मे आप बिहार-प्रान्तीय शिक्षा-बोर्ड के सेक्रेटरी बनाये गये। सन् १९४२ ई० में आपने 'बिहार-प्रान्तीय ब्वॉय-स्काउट-एसोसिएशन' के कमिश्नर-पद को भी अलंकृत किया।

सरकारी काम-काज के अतिरिक्त आप सार्वजनिक कार्यों से इस प्रकार सम्बद्ध थे कि आप सरकार और जनता दोनो के सम्मान-भाजन हुए। अतएव सन् १९३६ ई० में तत्कालीन सरकार ने आपको 'रायसाहब' की उपाधि से विभूषित किया तथा 'कोरोनेशन-मेडल' दिया। आपकी प्रशस्ति के कारण ही आपको 'स्लीमैन एसोसिएट सेविंग ब्रदर' तथा सन् १९३९ ई० में बिहार गेवर्नर ने 'एसोसिएट-पदक' प्रदान किया था। सन् १९३६ ई० में आप 'हिन्दी बोर्ड ऑव स्टडीज' के सदस्य तथा सन् १९३७ ई० में पटना-विश्वविद्यालय के फेलो नियुक्त हुए थे। सन् १९५० ई० में आप प्राइमरी और बुनियादी शिक्षा के उपनिदेशक-पद पर प्रतिष्ठित हुए।

---

१. इनके पूर्वज पहले 'मुख्तेयारपुर-सलखनी' (दरभगा) मे रहते थे। —दिनाक २० सितम्बर, १९५६ ई० को आपके द्वारा प्रेषित एवं साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री के आधार पर।

२. देखिए, 'हिन्दी-सेवी-संसार' (वही, पृ० २३१-३२) तथा 'जयन्ती-स्मारक ग्रंथ' (वही, पृ० ७२३)। 'बिहार-विभाकर' (वही, पृ० २२२) तथा 'बिहार-अब्दकोश' (वही, पृ० ६८२) में आपकी जन्मतिथि २ जनवरी, १८९३ ई० बतलाई गई है।

बिहार-प्रान्तीय शिक्षा में बुनियादी शिक्षा के द्वारा क्रान्तिकारी परिवर्त्तन करने का अधिकाधिक श्रेय आपको ही दिया जाता है। आपने इसी परिवर्त्तन को दृष्टि-पथ में रखते हुए, पटना से 'नवीन शिक्षक' नामक एक हिन्दी मासिक पत्रिका का संचालन भी किया, जो वर्षों तक प्रकाशित होती रही।

हिन्दी के प्रति आपकी अनन्य निष्ठा है। आपके लेख हिन्दी-पत्र-पत्रिकाओं में यथावसर प्रकाशित होते रहे हैं। स्फुट लेखों के अतिरिक्त आपके द्वारा लिखित निम्न-लिखित पुस्तकें भी प्रकाशित हो चुकी हैं।

१. मगध का प्राचीन इतिहास, २. भारत का इतिहास, ३. इंगलैण्ड का इतिहास और ४. इंगलैण्ड का भूगोल। सम्प्रति, आप बिहार-सरकार की सेवा से निवृत्त होकर घर पर ही निवास कर रहे हैं।

उदाहरण

(१)

सन् १९१४ की जुलाई की पहली तारीख। मैं कॉलेज से निकलकर पहले-पहल, शिक्षण-कार्य के लिए, सहायक शिक्षक के रूप में, दरभंगा के नॉर्थब्रुक स्कूल में पहुँचा। मेरी जन्मभूमि दरभंगा जिले में है; लेकिन दरभंगा शहर में निवास करने का सुअवसर मुझे कुछ महीनों के लिए ही सन् १९०५ ई० में मिला था—मिड्ल वर्नाक्युलर की छात्रवृत्ति-परीक्षा में उत्तीर्ण होने पर। इसलिए परिचय वहाँ बहुत कम लोगों से था। स्कूल में प्रविष्ट होने पर तत्कालीन प्रधानाध्यापक श्रीयुत (अब रायसाहब) ज्ञानदाचरण मजुमदार ने बहुत ही आह्लाद तथा उत्साह के साथ मेरा स्वागत किया।

मैं उस समय इक्कीस वर्ष का था। लड़कों में बहुत-से मेरी उम्र के थे। शिक्षकों की मंडली में जब मैं पहले-पहल जाकर बैठा तब उन लोगो ने कुछ विनोदपूर्ण भाव से, किन्तु प्रेमपूर्वक, मुझे अपने मे सम्मिलित किया। श्रीरामलोचनशरण जी से वही भेंट हुई।

अवस्था में शरणजी मुझसे कुछ ही बड़े थे; शिक्षा-विभाग में भी केवल कुछ ही वर्ष पहले सम्मिलित हुए थे। उन दिनों स्कूलों में हिन्दी की तरफ प्रायः अल्पसंख्यक छात्रों तथा अभिभावकों का

झुकाव था। इन्होंने इस क्षेत्र में लहेरियासराय तथा नॉर्थब्रुक स्कूल में कुछ कार्य का श्रीगणेश किया था।[1]

(२)

सम्राट् पंचम जॉर्ज के शासन-काल से बिहार-प्रान्त का बहुत ही गहरा सम्बन्ध है। बिहार का भूतकाल गौरवपूर्ण है। किसी समय में सारे भारतवर्ष के शासन का केन्द्र होने का श्रेय इसे प्राप्त था। किन्तु समय-चक्र के फेर से अँगरेजी शासन में आने के समय यह अपने पड़ोसी बंगाल प्रान्त के अन्तर्गत मान लिया गया था। फल यह हुआ कि लगभग डेढ़ सौ वर्षों तक इसके अस्तित्व का पता भी सुदूर देशों में बहुत कम लोगों को रह गया था। सन् १९११ ई० के १२ दिसम्बर को जब सम्राट् पंचम जॉर्ज ने सम्राज्ञी मेरी के साथ दिल्ली में विशेष दरबार कर अपनी भारतीय प्रजाओं के प्रति अपूर्व प्रेम का परिचय दिया, उन्होंने देश की भलाई के लिए कुछ महत्त्वपूर्ण घोषणाएँ की। उनमें एक के द्वारा बिहार को पुनः भारतवर्ष के अन्य प्रान्तों के मध्य स्वकीय शासन के द्वारा समकक्ष स्थान प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

उस समय बिहारियों के हृदय में कितना उत्साह तथा आनन्द हुआ, इसका वर्णन करना कठिन है। इतना ही नहीं, सम्राट् ने उस समय की भारत-यात्रा में बिहार के कतिपय स्थानों में भ्रमण किया। बिहारवासी उस समय अपने श्रद्धेय सम्राट् के दर्शनों से कृतार्थ हुए।[2]

(३)

अशोक बहुत ही साहसी और परिश्रमी पुरुष था। वह कहता था कि सर्वसाधारण के लिए कार्य करना मेरा कर्त्तव्य है और सर्वसाधारण

---

१. 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही), पृ० ७१३।

२. 'शिक्षा' (मासिक, खण्ड ३९, संख्या २, रजत-जयन्ती-अंक, मई, १९३५ ई०), पृ० ८।

के लिए उसने बहुत-कुछ किया भी। संसार उसके परिश्रम का सुख अबतक भोग रहा है और इतनी शताब्दियों के बाद भी उसके शब्दों से महदाकांक्षाओं की सत्यता तथा सरसता टपकती है। उसके परिश्रम का तो कहना ही क्या है। अपनी प्रजा की दुःख कथा सुनने और उनके निवारण के लिए वह सदैव तत्पर रहता था। किन्तु इतना परिश्रम करने पर भी उसे अपने कार्य से तृप्ति नहीं होती थी। उसके कर्त्तव्य का आदर्श बहुत उच्च था और वह बिना फल की इच्छा किये हुए निष्काम कर्म करनेवालों में था। उसके शिलालेखों से प्रकट होता है कि धार्मिक तथा व्यावहारिक ज्ञान का उसमें असाधारण सम्मिश्रण था। उसकी धारणा यह थी कि प्रत्येक आदमी अपने जीवन को बना या बिगाड़ सकता है। अतएव वह सबको यह शिक्षा देता था कि प्रत्येक आदमी अपनी उन्नति, अपने उद्योग तथा परिश्रम से आप करे। श्रद्धा, दया, सत्यता और सहानुभूति के गुणों का वह सत्कार करता था और अश्रद्धा, निर्दयता, असत्य-भाषण और असहनशीलता का वह कट्टर विरोधी था।[१]

(४)

पाटलिपुत्र का शासन-प्रबन्ध तीस सदस्यों की छः पंचायतों के हाथ में था। उनके कार्य इस प्रकार विभक्त थे—

प्रथम पंचायत को शिल्पकलादि के निरीक्षण का भार दिया गया था। मजदूरी का दर-निर्णय करना, स्वच्छ तथा असली पदार्थों के निर्माण तथा विक्रय के लिए व्यापारियों को प्रेरित करना तथा उचित मजदूरी पर उचित कार्यकाल निश्चय करना इत्यादि कार्य भी इन्हीं को सौंपे गये थे। शिल्पकलादि के जाननेवाले राज्य के एक विशेष प्रकार के सेवक समझे जाते थे तथा उनके प्रति ऐसे अत्याचार

---

१ 'मगध का प्राचीन इतिहास' (रामशरण उपाध्याय, स० १९७८ वि०), पृ० ५३।

करनेवालों को, जिनसे उन्हें अपने कार्य-सम्पादन में बाधा पड़े, प्राण-दंड दिया जाता था।

दूसरी पंचायत अपनी बुद्धि तथा शक्ति विदेशी प्रवासियों तथा यात्रियों की देख-रेख तथा उनके सुख के साधनों को उपस्थित करने में लगाती थी। इन दिनों पाश्चात्य देशों में इनके कार्य विदेशों में अपने-अपने देश के प्रतिनिधियों के द्वारा, जो कन्सल कहलाते है, सम्पादित होते हैं।[१]

★

रामसकल पाठक 'द्विजराज'

आप शाहाबाद-जिला के 'सहनीपट्टी' (बक्सर) नामक ग्राम के निवासी पं० श्रीरामनेवाज पाठक 'कविराज' के पुत्र थे। आपका जन्म स० १९२६ वि० (सन् १८६९ ई०) के भाद्र-कृष्ण ३० को हुआ था।[२] दुर्भाग्यवश आपके पिता का निधन आपकी अल्पावस्था (सात वर्ष) में ही हो गया। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। आपने मिड्ल तक हिन्दी का अध्ययन किया। उसके बाद आपने संस्कृत का अभ्यास किया। उसी सिलसिले मे आपने सभी पुराणो का यथोचित अध्ययन कर लिया। १६ वर्ष की अवस्था में ही आपने हिन्दी और सस्कृत दोनो मे काव्य-रचना का अभ्यास किया। दोनों भाषाओ मे आपकी समान गति थी। 'धर्मोपदेश' और 'हिन्दी-सेवा' आपके जीवन का व्यसन था। आपकी गणना हिन्दी, व्रजभाषा एवं भोजपुरी के मर्मज्ञ कवियो में होती है।

आपके द्वारा सन् १९०६ ई० मे लिखित एक पुस्तक 'सती-सर्वस्व' के नाम से गया से प्रकाशित हुई। उसके बाद 'सुन्दरी-विलाप'[३] और 'भारतभूमि-विलास' नामक आपकी दो और पुस्तकें मुजफ्फरपुर से प्रकाशित हुईं। इन पुस्तको के अतिरिक्त आपके द्वारा लिखित अधस्तन पुस्तकें अद्यावधि अप्रकाशित हैं। उन पुस्तको के नाम है —(१) 'स्त्री-शिक्षा', (२) 'बक्सर-माहात्म्य' (१४ अध्यायो में), (३) 'विधवा-विलाप', (४) 'विद्या-महिमा' आदि। आपकी कवित्व-शक्ति से तत्कालीन 'रीवाँ', 'डुमराँव' और 'दरभंगा' के नरेश बड़े ही प्रभावित थे। आपकी कविता से प्रसन्न होकर इन रियासतो के स्वामियो ने आपको पुरस्कृत किया था।

---

१. 'गद्य-चन्द्रोदय' (स०—साँवलियाविहारीलाल वर्मा, प्रकाशन-काल अनुल्लिखित,), पृ० ९८-९९।
२ परिषद् के 'साहित्यिक इतिहास-विभाग मे' सुरक्षित लेखक की पाण्डुलिपि के अनुसार।
३. स० १९५३-५४ वि० में देश-भ्रमण के सिलसिले मे आप आसाम मे थे।

अखिलभारतीय राष्ट्रीय चेतना से सम्बद्ध सत्याग्रह में आपने भी सक्रिय भाग लिया। उस समय आपने 'भारत-पुकार' नामक एक पुस्तक लिखी। इस पुस्तक ने देशवासियों के हृदय में देश-सेवा की चिनगारी धधका दी। सारे प्रान्त में इसकी चर्चा रही। फलतः तत्कालीन ब्रिटिश-सरकार ने इस पुस्तक को जप्त कर लिया। यह पुस्तक एक्सप्रेस प्रेस, पटना से प्रकाशित हुई थी। सं० १९८६ वि० की माघ कृष्ण-अष्टमी (रविवार) को आपका स्वर्गारोहण हुआ।[१]

उदाहरण

(१)

सोहै शुभ गंग को तरंग जटाजूट मध्य,
मोहै मन बाल विधु शिखर अमन्द पै।
त्योंही 'द्विजराज' पंच वदन त्रिलोचन है,
भुवन भुजंग के विराजें भुजबन्द पै।
व्याल विधु दोऊ विभु अंग में विराजे तातें
छाई है अनूठी छटा आनन्द के कन्द पै।
मानिके मिताई ऐसो समय अनोखे पाई,
लाभ ते अमी के अहि बढ़्यो जात चन्द पै॥[२]

(२)

श्याम घन हारे नवश्यामता निहारे जासु,
हिय हर हारे हिये हीर हार हारे हैं।
पीतवर वसन बनाये कटि काछे आछे,
अंग अंग कोटिन अनंग छवि धारे हैं।
कवि 'द्विजराज' नाम जपत महेश शेष
सारद गणेश वेद पावत न पारे हैं।
नन्द के दुलारे सारे ब्रज के अधारे जोइ,
मोर पक्ष धारे सोई मोर पक्ष धारे हैं॥[३]

---

१. सम्प्रति आपके उत्तराधिकारी ज्येष्ठ पुत्र श्रीगिरजादत्त पाठक आपकी परम्परा के संरक्षक हैं।
२. परिषद के साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित आपकी पाण्डुलिपि से।
३. वही।

(३)

दिनवाँ बितेला तोरे बटिया निरेखत,
रतिया बितेला जागि-जागि रे बिदेसिया।
घरि राति गइलो, पहरि राति गइली से,
लहरे करेजवा में आग रे बिदेसिया।।
अमवाँ मोजरि गइले, लगले टिकोरवा से,
दिन पर दिन पियराइ रे बिदेसिया।
एक दिन बहि जइहें जुलुम की अँधिया से,
डाढ़े पाते जइहें भहराइ रे बिदेसिया।।[1]

(४)

तोरी धनि बाड़ी राम अंगवा के पतरी से,
लचकेली छतिया के भार रे बिदेसिया।
केसिया त बाड़ी जइसे काली रे नगिनियाँ से,
सेनुरन भरेला लिलार रे बिदेसिया।
अँखिया त हवी जइसे अमवा के फँकिया से,
गालवा सोहेला गुलनार रे बिदेसिया।।
बोलिया त बाड़ी जइसे कुहुके कोइलिया से,
सुनि हिय फाटेला हमार रे बिदेसिया।।[2]

★

१. 'सुन्दरी-विलाप' से।—डॉ० बजरग वर्मा (बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद, पटना-४) से प्राप्त
२. वही।

रामाजी

आप सारन जिला के 'खेढाँय' ग्राम-निवासी श्रीरामयाद लाल जी (श्रीरामप्रियाशरण) के पुत्र थे।[1] आपका जन्म सं० १९२६ वि० (सन् १८६९ ई०) की भाद्रपद कृष्ण सप्तमी को हुआ था।[2] पठन-पाठन में आपकी कोई रुचि नहीं थी। इस कारण एण्ट्रेन्स की परीक्षा में असफल होने पर आपकी शिक्षा समाप्त हो गई। केवल साधु-संतों की सेवा में आपका मन लगता था। बाल्यावस्था में ही आपके विलक्षण गुणों को देखकर कुछ महात्माओं ने आपके सम्बन्ध में भविष्यवाणी की थी कि 'यह बालक परम ईश्वर-भक्त होगा।' आगे चलकर हुआ भी वही। आप समस्त चराचर को, प्रभु-रूप से उपासना करते हुए, 'दूलहा'-रूप श्रीराम के परम भक्त हो गये। आप शृंगार-मिश्रित दास्य अथवा मधुर दास्य भाव के रूपासक्त भक्त थे। सांसारिक प्रपंचों से अपने को अलग रखकर आप प्रत्येक क्षण भगवत्स्मृति में मग्न रहते थे। आप पटना के प्रसिद्ध संत बाबा भीषमदासजी के शिष्य थे। बाबा भीषमदासजी की तरह आपके जीवन से सम्बन्धित अनेक चामत्कारिक घटनाओं के संस्मरण भक्तों के बीच प्रचलित है।[3] हिन्दी और भोजपुरी में लिखित आपकी भक्ति सम्बन्धी स्फुट रचनाएँ यत्र-तत्र प्राप्त होती है। आप सं० १९८५ वि० (सन् १९२८ ई०) की ज्येष्ठ कृष्ण-द्वितीया (रविवार) को स्वर्गवासी हुए।

उदाहरण

(१)

अवध नगर से जनकपुर आये दुलहा सुन्दर हे।
मदन मोहन छवि निरखत लिये हिये अन्दर हे॥
अनुपम सोहे शिर मौर भूषण पितम्बर हे।
अलक कुटिल भहुँवा धनुसम कमल नयन सर हे॥
साजि साजि कंचन थार लिये सब मिली जुथ नारी हे।
आरती उतारैंली सुनैना रानी बीरी दे दे जादू डारै हे॥

---

१. 'रामभक्ति में रसिक-सम्प्रदाय' (वही), पृ० ५३२। आपकी माताजी का नाम रामप्यारी देवी था। आपके पिताजी पटना की कचहरी में नकलनवीस थे और बाकरगंज मुहल्ले में बाबा भीखमदासजी के स्थान पर रहते थे। इसी कारण आपकी बाल्यावस्था पटना में ही बीती।

२. 'संकीर्त्तन-सन्देश' (माला १, पुष्प २५ अप्रैल, १९६१ ई०), पृ० ८। डॉ० भगवती प्रसाद सिंहजी ने आपका जन्मकाल सं० १९२८ वि० (सन् १८७१ ई०) बतलाया है।—देखिए, वही।

३. ऐसी घटनाओं में से कुछ के लिए देखिए, 'संकीर्त्तन-सन्देश' (वही) में श्रीरघुवीर प्रसाद (आरा) का 'नाशेषकुंज रसिक-भक्त गोस्वामी महाराज' शीर्षक लेख।

जोगी जन जतन करत हारे बस नाही भये हरि हे ।
से हरि नाथ के नाथ सियावर बस भैले हे ॥[1]

(२)

सुन्दर पलकिया के कामदार छहियाँ, सुनबे सजनी ।
सुन्दर लगलबा कहार, सुनबे सजनी ॥
ताहि पर चढ़ल बाटी रामचन्द्र दुलहा, श्रीलखनलाल दुलहा,
भरतलाल दुलहा, शत्रुघनलाल दुलहा, सुनबे सजनी ।
सोभा अमित अपार, सुनबे सजनी ॥
आसा सोटा बल्लम लाये सब परिकरगन, सुनबे सजनी ।
'रामाजी' महली चमर ढार, सुनबे सजनी ॥[2]

[३]

मचिया बइठल रानी कोसिला, बालक मुँह निरखेली हे ।
ललना, मोरा बेटा प्रान के अधार, नयन बिच राखबि हे ॥
कोसिला के भइले श्रीरामचन्द्र, केकई के भरतनु हे ।
ललना लछुमन शत्रुहन सुमित्रा के घर-घर सोहर हे ॥
गाई के गोबर मँगाई के, अँगना लिपाइल हे ।
ललना गजमोति चउका पुराइल, कलसा धराइल हे ॥
पनवा अइसन बबुआ पातर, सुपरिया अइसन ढुरहुर हे ।
ललना फुलवा ऐसन सुकुमार, चन्दनवाँ ऐसन गमकेला हे ॥
'रामा' जनम के सोहर गावेले, गाई के सुनावेले हे ।
ललना जुग-जुग बाढ़े एहवात, परम फल पावेले हे ॥[3]

---

१. 'राम-भक्ति में रसिक-सम्प्रदाय' (वही), पृ० ५३५ ।
२. वही ।
३. 'सकीर्त्तन-सन्देश' (वही), पृ० ११ ।

रामानुग्रह लाल 'मेंहीदास'[१]

आप पूर्णिया जिला के 'सिकलीगढ़ धरहरा' (बनमनखी) नामक ग्राम के श्रीबबुजनलाल दास जी[२] के सुपुत्र हैं। आपका जन्म स० १९४१ वि० (सन् १८८४ ई०) की वैशाख शुक्ल-चतुर्दशी को हुआ था।[३] जब आप केवल चार वर्ष के थे, तभी आपकी माताजी का देहावसान हो गया। तदुपरान्त, आपका लालन-पालन आपके एक चाचा ने किया। उनके मधुर वात्सल्य-भाव के कारण आपका शैशव बड़े लाड़-प्यार में बीता। मातृ-स्नेह के अभाव की छाया तक आपपर नहीं पड़ सकी। पाँच वर्ष की आयु में, संस्कृत के श्लोकों के माध्यम से आपका अक्षरारम्भ हुआ। ग्यारह वर्ष की अवस्था में आप पूर्णिया जिला स्कूल के चतुर्थ वर्ग में प्रविष्ट हुए। यहाँ आने पर आपने नागरी-लिपि और राष्ट्रभाषा (हिन्दी) का पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया। हिन्दी के ज्ञान के साथ ही आपमें रामायण-पाठ को अभिरुचि हुई और प्रतिदिन अबाध गति से रामायण-पाठ आपके जीवन का व्रत हो गया। स्कूल में अध्ययन करते हुए ही आपने 'रामायण', 'सुखसागर', 'महाभारत' आदि धार्मिक ग्रंथों का अध्ययन-मनन शुरू कर दिया था। विद्यालयीय जीवन में आपको भागलपुर के श्रीजगमोहन तिवारी (मुख्तार साहब) से पर्याप्त सहायता मिली थी। आपकी भक्ति-विषयक तल्लीनता से घबराकर घरवालों ने आपको तान्त्रिक कुल-गुरुदेव से दीक्षित करा दिया। यद्यपि वे शाक्त थे, फिर भी आपके संस्कार की सात्त्विक दीप्ति से प्रभावित होकर उन्होंने जीवहिंसा एवं आखेट करने की आपपर रोक लगा दी।[४] आप स्वयं भी बचपन से ही निरामिष भोजन के पक्षपाती थे।

विद्यार्थी-जीवन से ही योग के प्रति आपका आकर्षण इतना अधिक था कि कई बार आप अध्ययन छोड़कर योग-साधना में लीन हो गये थे। लगभग १७ वर्ष की

---

१ आपके द्वारा घर छोड़कर दीक्षा लेने के बाद आपके गुरुदेव 'श्रीबाबा देवीसाहब' ने यह कहकर कि 'इसकी बुद्धि बड़ी मेंही है; अतः इसका मेंहीदास नाम ही सर्वोपयुक्त है', आपका नामकरण किया।—देखिए, 'मेंही-अभिनन्दन-ग्रन्थ' (सम्पादक-मण्डल, सन १९६१ ई०), पृ० ४। —देखिए, 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही; पृ० ६७२ त) भी।

२. आपके पूर्वज वर्त्तमान ग्राम मे आने के पूर्व पूर्णिया जिला के ही 'काझी' नामक ग्राम में रहते थे। सन् १८८४ ई० मे वे उक्त गाँव को छोड़कर 'सिकलीगढ़' में आ बसे। आपके पितामह श्रीनशीबलालजी 'बनैली-राज्य' के प्रधान कर्मचारी थे। आपके पिता भी उनके स्थान पर कार्य-सम्पादन कर चुके थे। —वही, पृ० ४।

३ आपके द्वारा दिनांक २३ जुलाई, १९५६ ई० को श्रीउदितनारायण चौधरी (माध्यमिक विद्यालय, झंडापुर, भागलपुर) की कृपा से प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के आधार पर। आपके परिचय-लेखन मे उक्त सामग्री के अतिरिक्त 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही; पृ० ६७२ त), 'हिन्दीसेवी-संसार' (वही, पृ० १९१ त) तथा परिषद् द्वारा षोडश वार्षिकोत्सव के अवसर पर प्रकाशित पुरस्कृत साहित्यकारों के परिचय (पृ० क) से भी सहायता ली गई है।

४. 'मेंही-अभिनन्दन-ग्रन्थ' (वही), पृ० ५।

अवस्था में ही आपने योग-साधना के पथ को प्रशस्त किया। आपने सन् १९०९ ई० में 'दृष्टि-साधन' की दीक्षा ली।[१] सन् १९०४ ई० में प्रवेशिका (मैट्रिक) परीक्षा के अंगरेजी-पत्र में केवल 'निर्माता' (Builders) शीर्षक कविता की आध्यात्मिक व्याख्या लिखकर आप परीक्षा-भवन से निकल गये। परीक्षा-भवन से निकलकर आप अकस्मात् सीधे 'दार्जिलिंग' की ओर निरुद्देश्य चल पड़े। सद्गुरु की खोज में अनेक कष्टों का सहन करते हुए, आप अनेक स्थानों का पर्यटन करते रहे। अन्त में, अपनी अथक साधना के बल पर ही आप सन्तमत के सफल प्रवर्त्तक हुए। आपने इस दिशा में आगे चलकर अनेक ग्रन्थों का प्रणयन किया।[२]

आपके प्रथम गुरु एक दरियापंथी साधु बाबा रामानन्द स्वामी (श्रीविष्णुचन्द भगतजी) थे। उन्हीं से आपने योग-साधना 'बाह्य दृष्टि-साधन' और 'मानस-जप' की दीक्षा ली। उसके बाद आपने परमपूज्य बाबा देवीसाहबजी के शिष्य श्रीधीरजलालजी गुप्त से सम्पर्क स्थापित किया। उनसे सन्तों के विषय में आपके जो प्रश्नोत्तर हुए, उनसे आप अत्यन्त प्रभावित हुए। अतएव आपने उन्हीं से सत्संग करना शुरू कर दिया। इस कार्यक्रम में रात-दिन किसी भी समय की कोई पाबन्दी नहीं रही। उन्होंने 'भजन-भेद' के लिए आपको 'काढागोला'-निवासी बाबू रामदासजी से मिलने को कहा। उनसे पंजाब में पत्राचार के द्वारा आपने सम्पर्क स्थापित किया।[३] श्रीरामदासजी ने विजयादशमी के अवसर पर बाबासाहब के भागलपुर पधारने की सूचना लिख भेजी। आप उनके आगमन की प्रतीक्षा करते-करते अधीर हो उठे। योग-साधना के लिए 'भजन-भेद' का ज्ञान अत्यन्त अपेक्षित था। अतएव उनके आगमन में विलम्ब देखकर आपने श्रीधीरजलालजी की संगति से बाबासाहब के शिष्य एवं भाई भागलपुर के एडवोकेट श्रीराजेन्द्रनाथ सिंह जी से दृष्टियोग का 'भजन-भेद' प्राप्त किया।

तदुपरान्त सं० १९६६ वि० (अगस्त, १९०९ ई०) में आप पुनः अपने पिताजी के पास लौट आये। पिता ने आपको पाकर परम सन्तोष प्राप्त किया। घर पर ही उन्होंने आपकी साधना के लिए एक अलग कमरा बनवा दिया। उसीमें रहकर आप भजन एवं ग्रन्थों का मनन करने लगे। उसी वर्ष विजयादशमी के समय आप बाबा देवीसाहब के दर्शन के लिए भागलपुर गये। बाबासाहब ने आपसे अनेक प्रश्न किये। उन्होंने आपको स्वावलम्बी बनने की शिक्षा दी और साथ ही 'गुरु-रूप' का ध्यान धरने का आदेश भी दिया। आपने अपने गुरु 'रायसाहब'[४] का ध्यान धरना शुरू किया; क्योंकि

---

१. देखिए, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना के षोडश वार्षिकोत्सव-समारोह (सन् १९६८ ई०) के अवसर पर पुरस्कृत साहित्यकारों का परिचय, पृ० 'क'।

२. 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही), पृ० ६७२ (त)।

३. 'म० मेंहीं-अभिनन्दन-ग्रन्थ' (वही), पृ० ६—१०।

४ श्रीउदितनारायण चौधरी (जो बाबासाहब के परम शिष्य थे) के अनुसार। 'राय शालिग्राम साहब बहादुर' राधास्वामी-मत के द्वितीय आचार्य थे।

उनके सत्संग से भी आप अधिक प्रभावित थे। कुछ दिनों बाद आप बाबासाहब के साथ मुरादाबाद चले गये। वहाँ जाकर आपने उनकी संगति के प्रभाव से स्वावलम्बी साधु बनने की शिक्षा पाई। बाबासाहब के आदेश से आपने वहीं के सबजज साहब[1] से नागरी और गुरुमुखी लिपियाँ सीखी। कुछ दिनों बाद बाबासाहब ने आपको अपने पिता के पास जाने का आदेश दिया। बाबासाहब की आज्ञा पाते ही आपने ग्राम 'जोतरामराय' के श्रीधीरजलाल को पत्र दिया। उन्होंने आपके पास धनादेश (मनीऑर्डर) द्वारा कुछ रुपये भेजे, जिससे आप लौटकर आ सकें। वहाँ से लौटकर आपने अपने दरियापंथी गुरु के गृहस्थ शिष्य श्रीमहावीर राय के यहाँ आकर एक मास तक भजन-सत्संग किया। उन्हें भी आपने 'भजन-भेद' बतलाया। उन दिनों 'जोतरामराय' गाँव में 'पूर्णिया-जिला संतमत-सत्संग' का वार्षिक अधिवेशन हो रहा था। आपने उसमे पूरा सहयोग प्रदान किया।

इस अधिवेशन के बाद आप संत श्रीबाबासाहब के आदेशानुसार सीधे अपने पिताजी के पास गये। पिताजी से आपने बाबासाहब के आदेश की चर्चा की। उन्होंने आपके रहने और भजन-सत्संग की पूरी व्यवस्था कर दी। आपके प्रभाव से गाँव-गाँव में सत्संग की धूम मच गई। गाँववालों ने आपके इस उत्साह को देखकर आपके घर से अलग एक 'सत्संग-मन्दिर' का निर्माण करवा दिया। आपके पिताजी ने आपकी राय से ही पौने दो बीघा जमीन इस मन्दिर को दे दी। इसके अतिरिक्त आपने दो बीघा जमीन और खरीदी। इसपर भी जब मन्दिर के कार्य में अभावग्रस्तता के कारण बाधा पड़ने लगी, तब आपने विद्यार्थियो को विद्या-दान करके अपना कार्य चलाना शुरू किया। इस तरह सन् १९०९ ई० से ही आपके हृदय में सत्संग की जो लहर चली आ रही है, वह अद्यावधि संतकवियों के साहित्य के अध्ययन का केन्द्र[2] एवं शिष्य परम्परा के लिए प्रेरणा का स्रोत बनी हुई है।

सं० १९६९ वि० (सन् १९१२ ई०) में बाबा देवीसाहब ने आपको 'शब्द-भेद' बतलाया। इसके पूर्व ही उन्होंने आपको 'दृष्टियोग' की शिक्षा दी थी। आजतक आप 'दृष्टियोग' का अभ्यास करते चले आ रहे हैं। सन् १९१४ ई० में आपको 'नादानुसन्धान-शब्दयोग-साधना' का ज्ञान प्राप्त हुआ। आपने सन् १९३३-३४ ई० में कुप्पाघाट (भागलपुर) की गुफा मे ध्यानाभ्यास भी किया था।[3]

सन् १९५२ ई० में पूर्णिया-जिला हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के वार्षिक अधिवेशन के आपही सभापति थे। सन् १९६० ई० में आपके ही प्रयास से 'पूर्णिया में अखिलभारतीय संतमत-सत्संग-केन्द्र' की स्थापना हुई। सन् १९६८ ई० में आपको 'बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना-४ की ओर से १५००) रुपयो का वयोवृद्ध साहित्यिक-सम्मान पुरस्कार

---

१ सबजज साहब का नाम लाला ईश्वरीप्रसाद साहब था। ये एक अवकाश-प्राप्त बड़े सत्संगी व्यक्ति थे। ये बाबा देवीसाहब के मित्र और शिष्य दोनों ही थे।

२ देखिए, 'हिन्दीसेवी-संसार' (वही), पृ० १९१।

३. बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद, पटना-४ के षोडश वार्षिकोत्सव-समारोह के अवसर पर पुरस्कृत साहित्यकारो तथा निबन्धकारो का परिचय, पृ० 'क' से।

दिया गया था। आपकी रचनाएँ सन् १९२६ ई० से ही प्रकाशित होने लगी थी। उसी समय सर्वप्रथम आपकी एक पुस्तक 'संतमत-सिद्धान्त और गुरु-कीर्त्तन'[१] नाम से प्रकाशित एव प्रशस्त हुई। सन् १९३० ई० मे आपने 'रामचरितमानस-सार' का लेखन एव प्रकाशन किया। इसके द्वारा 'भक्तियोग' के प्रचार मे काफी सहायता मिली।[२] इसके बाद सन् १९३१ ई० में आपने 'विनयपत्रिका-सार' लिखकर प्रकाशित किया। सन् १९३८ ई० मे आपने 'घटरामायण'[३] की 'भावार्थ-पदावली' लिखी। इसकी भूमिका से आपके गम्भीर अध्ययन एव पाण्डित्य का पता चलता है। सन् १९४० ई० में आपने 'सत्संग-योग' (चार भागों मे) नामक पुस्तक लिखी। यह पुस्तक अपने ढंग की अकेली है। इन पुस्तकों के अतिरिक्त (१) 'गीता-योग-प्रकाश', (२) मेंहीदास-वचनामृत, (३) मेही-पदावली,[४] (४) 'ईश्वर का स्वरूप और उसकी प्राप्ति', (५) 'वेद-दर्शन-योग', (६) सतवाणी सटीक, (७) सत्संग-सुधार (दो भागों मे), (८) मोक्ष-दर्शन, (९) ज्ञानयोग-युक्त ईश्वर-भक्ति आदि कई पुस्तकें आपके द्वारा लिखित एवं प्रकाशित हो चुकी हैं। आपके व्याख्यानो का सग्रह 'व्याख्यान-सग्रह' नाम से अद्यावधि प्रकाश में नही आ सका है।[५] 'अ० भा० संतमत-सत्संग-महासभा, पूर्णिया की ओर से एक पत्रिका, जिसका नाम 'शान्ति-सन्देश' है, आपके ही संरक्षकत्व में आजतक निकल रही है। इसमे और सुप्रसिद्ध मासिक 'कल्याण' में आपके निबन्ध एवं विचार आज भी प्रकाशित होते रहते हैं। सम्प्रति, आप 'श्रीसंतमतसत्सग' की सेवा में साधना-रत हैं।

उदाहरण

(१)

संसार में कैसे रहोगे ? अब यह भी सुनो। संसार में महात्मा गांधीजी के समान रहो। अर्थात् संसार के भी सब काम को करो और परमार्थ के साधन को भी निभाते जाओ। महात्माजी के निधन होने पर सब राष्ट्रों ने अपना-अपना झण्डा झुकाया। अमेरिका, इंगलैंड तथा रूस आदि सभी राष्ट्रों ने झण्डा गिराया। हमलोगों को स्वराज्य

---

१. इसमें 'संतमत-सिद्धान्त-विवेचन' के अतिरिक्त आपके द्वारा रचित ७५ पद्य संगृहीत है।

२. श्रीउदितनारायण चौधरी (शिक्षक) के द्वारा दिनाक २३ जुलाई, '५९ को प्रेषित और 'साहित्यिक इतिहास-विभाग' में सुरक्षित विवरण के अनुसार।

३. तुलसी साहब (हाथरसवाले) के द्वारा रचित प्रसिद्ध पुस्तक, जिसका प्रकाशन बेलवेडियर प्रेस, प्रयाग से हुआ था।

४. इसमें आपके द्वारा रचित सम्पूर्ण पद्यो को छह भागो में बाँटा गया है— (१) ईश-स्तुति, (२) संत-स्तुति, (३) गुरु-कीर्त्तन, (४) ध्यानाभ्यास, (५) सतमत की बातें और (६) आरती।

५ देखिए, 'हिन्दीसेवी-ससार' (वही), पृ० १९१।

मिला है, किन्तु सुराज्य नहीं। यहाँ घूसखोरी, चोरी और नैतिक पतन आदि वर्त्तमान है, जिनसे जनता में दुःख फैला हुआ है। इससे बचने के लिए सन्तमत-उपदेश करता हूँ। कानून से नैतिक पतन छूट नहीं सकता। कानून चलता ही है और घूस-फूस चलते ही है। जहाँ झूठ नहीं, वहाँ घूस कहाँ से आवे? इसलिए सदाचार का पालन करो। सदाचार के पालन से स्वराज्य में सुराज्य हो जायगा। हमारा देश द्रव्य के लिए महाकंगाल है। लाचारी है, कमाओ, जमा करो, किन्तु सच्ची कमाई करो। हम देखते है कि शब्द के लिए भी हम कंगाल हो गये है। अपनी भाषा से अपने भावों को प्रकट नहीं कर सकते। अपने शब्द को भूल गये। हमलोग हिन्दू नहीं, हमारी भाषा हिन्दी नहीं और हमारा देश हिन्दुस्तान नहीं। हिन्दू, हिन्दी और हिन्दुस्तान—ये तीनों शब्द हमारे देश की भाषा के शब्द नही है। दूसरी बात है कि अपनी भाषा में दूसरे को भाषा फेंटकर नहीं बोलो।[1]

(२)

जितने मनुष्य हैं, सब लोग सुख पाना चाहते है, यह स्वाभाविक है। जो मन और इन्द्रियों को सुहाता है, उसे सुख कहते हैं। जो मन और इन्द्रियों को नही सुहाता है, उसे दुःख कहते है। मन और इन्द्रियो को सुहानेवाले पंच विषय हैं। विषय-सुखों के अन्दर लोग जितने बढते हैं, उनकी तृष्णा भी उतनी ही बढ़ती है। फल यह होता है कि अतृप्त रहकर ही वे शरीर छोड़ते हैं। देवलोक में जाने पर भी वे ही विषय वहाँ मिलते है, जो यहाँ मिलते थे। जो इन्द्रियाँ यहाँ सताती थी, देवलोक में भी वे ही वहाँ सताती है। इन्द्रियों के कारण ही देवताओं को भी कलंक

---

१. श्रीउदितनारायण चौधरी द्वारा दिनांक २३ जुलाई, '५६ को प्रेषित तथा परिषद के 'साहित्यिक इतिहास-विभाग' में सुरक्षित सामग्री से।

लगा। इन्द्रिय-सुख स्वल्प है और दु.ख परिणामी है। यह सुख कभी तृप्तिदायक नही, क्षणभंगुर है। मन और इन्द्रियो के सुख के अतिरिक्त और कोई सुख है, जिसे इन्द्रियाँ नही जानती है। वह आत्म-सुख है। सर्वसाधारण मे इसकी चर्चा तो कभी-कभी होती है, किन्तु आत्म-सुख कैसा होता है, बहुत लोग जानते नही है। आत्म-सुख नित्य, पूर्ण और तृप्तिदायक है।[1]

(३)

अपने देश की संस्कृति कितनी अच्छी थी! दशरथजी श्रीरामजी को युवराज बनाना चाहते थे। कैकेयी को यह बात पसंद नही आई। उन्हें श्रीराम को चौदह वर्ष वनवास देना पसन्द था। दशरथजी वचनबद्ध थे, किसी समय उन्होने दो वरदान देने का वचन दिया था। कैकेयी ने वही वरदान माँगे, जिनमे एक मे श्रीराम को वनवास और दूसरे में भरत को राज्य। राजा दशरथ तो मुँह से नही बोले, किन्तु श्रीराम को यह बात मालूम होने पर वे जंगल जाने के लिए तैयार हो गये और वे जंगल चले गये। पिता के दिये वचन का पालन किया। राजा दशरथ बोल नही सकते थे कि वरदान नही दूँगा; क्योंकि वे वचनबद्ध थे। पिता का वचन टरे नही, इसलिए श्रीराम वनवास करने जाते है। वह कैसा समय था! कैसी संस्कृति थी कि लोग झूठ बोलते नही थे! अपने की तो बात क्या, गुरुजन की दी हुई बात झूठी नही होने पावे, इसलिए श्रीराम जंगल गये।[2]

(४)

जीव जब जाग्रत से सुषुप्ति-अवस्था मे आता है, तो उसकी जाग्रत अवस्थावाली चेतन वृत्ति बदलकर दूसरी दशा में हो जाती है।

---

१. 'सत्संग-सुधा' (प्रथम-भाग, मेंहीदास, सं० २०२३ वि०), पृ० ३६।
२. वही (वही, द्वितीय भाग), पृ० ८४।

फिर जब वह स्वप्नावस्था से छूटकर सुषुप्ति-अवस्था में आता है, तो उसकी चेतन वृत्ति जाग्रत और स्वप्न अवस्थाओं की वृत्ति से बदलकर तीसरी दशा में प्राप्त होती है। ये स्वभाव से ही सबको नित्य प्राप्त होती रहती हैं। सब-के-सब इनके विषय मे जानते है। इन तीनों अवस्थाओं को लेकर 'तुरीय' नाम की चौथी अवस्था है, जो भक्तिमान अभ्यासी को प्राप्त होती है। जिसमें जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति की भिन्न-भिन्न दशाएँ बदलकर चौथी एक विलक्षण दशा प्राप्त होती है। जैसे जो कोई स्वप्न-अवस्था को प्राप्त नही हुआ है, तो वह उस अवस्था में प्राप्त होनेवाली दशा का ज्ञान कुछ नहीं रखता है; उसी तरह जो तुरीय अवस्था को कभी प्राप्त नही कर सका है, उसे उस अवस्था में प्राप्त होनेवाली दशा का ज्ञान कुछ नही हो सकता है। वह तुरीय अवस्था ही है, जिसमें योगी भक्तजन निद्रा छोड़कर सो जाते हैं अर्थात् निद्रा की अवस्था को त्यागकर स्थुल बाहरी जगत् से बेसुध हो जाते हैं और सूक्ष्म अन्तर जगत् में सचेत रहते हैं।[1]

(५)

तुम साहब रहमान हो, रहम करो सरकार,
भवसागर में हौं पड़ो, खेई उतारो पार।
भवसागर दरिया अगम, जुलमी लहर अनन्त।
षट् विकार की हर घड़ी, ऊठत होत न अन्त।
इन लहरों की असर तें, गई सुबुद्धी खोइ,
प्रेम, दीनता, भजन-संग, तीनहु बने न कोइ।
आप अपनपौ सब भूले, लहरों के ही हेत,
सो भूले कैसे लहौं, सुख जो शान्ती देत।

---

१ 'रामचरितमानस-सार' (व्याख्याकार—मेंहीदास, स० २०२१ वि०), पृ० २५०-५२।

तेहि कारण अति गरज सों, अरज करौ गुरुदेव,
भव-जल लहरन बीच में, ५कड़ि बाँह मम लेव।
बुद्धि-शुद्धि कुछ भी नहीं, कहै क्या 'मेंहीदास',
सतगुरु खुद जानैं सभे, बेगि पुराइय आस ॥

(६)

आरति तन-मन्दिर मे कीजै,
दृष्टि युगल कर सनमुख दीजै।
चमके बिन्दु सूक्ष्म अति उज्ज्वल,
ब्रह्मज्योति अनुपम लख लीजै।
जगमग जगमग रूप ब्रह्मण्डा,
निरखि निरखि जोती तज दीजै।
शब्द सुरत अभ्यास सरलतर
करि करि सार शब्द गहि लीजै।
ऐसी युगति काया गढ़ त्यागी,
भव भ्रम भेद सकल मल छीजै।
भव-खण्डन आरति यह निर्मल,
करि मेंही अमृत रस पीजै।
आरति परम पुरुष की कीजै,
निर्मल थिर चित्त आसन दीजै।
तन-मन्दिर महँ हृदय सिहासन,
श्वेत बिन्दु मोती जड़ दीजै।
अविरल अटल प्रीति को भोगा,
बिरह पात्र भरि आगे कीजै।

---

१. 'महर्षि मेंही पदावली' (महर्षि मेंहीदास, सं० २०२३ वि०), पृ० ११।

जत सत संयम फूलन हारा,
अरपि-अरपि प्रभु को अपनीजै ॥[1]

रामानुग्रह शर्मा 'नवनिधि'

आप गया जिला के 'मैंगरा' नामक ग्राम के निवासी प० हरिवंश शर्मा के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९४० वि० (सन् १८८३ ई०) की चैत्र शुक्ल-रामनवमी को हुआ था।[2] आप पं० चन्द्रशेखर भट्ट तथा प० उमादत्त मिश्र के प्रिय शिष्यों में हैं। 'साहित्याचार्य' की उपाधि प्राप्त करने के बाद आपने दूसरी परीक्षा नहीं दी। आपकी गणना व्रजभाषा के एक सफल पूर्तिकार के रूप में होती है। आपकी स्फुट रचनाएँ 'जाह्नवी' (चुनार), 'रसिक-मित्र' (कानपुर), 'साहित्य-सरोवर' (गया) और 'पूर्त्ति-पत्रिका' (पटना) में प्रकाशित हुआ करती थी। अपने जीवन के अंतिम दिनों में आप मैंगरा (गया) की सस्कृत-पाठशाला के प्रधानाध्यापक थे। आपकी एकमात्र प्रकाशित कविता-पुस्तक का नाम 'पुहुप-कविता-सग्रह' है। आपकी रचना के उदाहरण हमें नहीं मिल सके।

रामावतार नारायण

आप मुजफ्फरपुर जिला के सीतामढी नामक नगर के निवासी श्रीछट्टूलालजी के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९५७ वि० की आषाढ कृष्ण-द्वादशी (२४ जून, १९०० ई०) को हुआ था।[3] आपका आरम्भिक जीवन पूर्णिया में ही व्यतीत हुआ। आपकी आरम्भिक शिक्षा भी वही हुई। आपकी शिक्षा इण्ट्रेन्स तक हुई थी। सन् १९२०-२१ ई० के असहयोग-आन्दोलन में भी आपने सक्रिय रूप से भाग लिया था। सन् १९२६ ई० मे आप पुलिस-विभाग में दारोगा के पद पर नियुक्त हुए। आप एक बालवैष्णव, धर्मभीरु और सात्त्विक प्रवृत्ति के व्यक्ति थे। आप परमहंस श्रीरामकृष्ण के जीवन से कई अंशों में प्रभावित हैं। हिन्दी-भाषा एवं साहित्य के प्रति आपकी अपार श्रद्धा है। आपके द्वारा रचित निम्नलिखित पुस्तकाकार रचनाएँ बतलाई जाती हैं—(१) ललकार, (२) रत्नप्रकाश, (३) स्वर्णकार-परिचय, (४) भगवती मीरा का विषपान और (५) उत्तर-भारत का भौगोलिक इतिहास। इनमे अंतिम दोनों पुस्तकें अभी तक अप्रकाशित हैं।

---

१. 'मेंही-पदावली' (वही), पृ० २०५-२०६।

२ 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० १४७।

३. आपके द्वारा प्रेषित और 'साहित्यिक इतिहास-विभाग' में सुरक्षित सामग्री के आधार पर।

उदाहरण

(१)

प्रभो ! तुम्हारा अनन्त अधिकार है, जो दण्ड देना चाहोगे दोगे, कोई रोक-टोक नही कर सकता, यदि मेरा भय हो, तो लो, मैं यह भी लिख देता हूँ कि मैं भी नहीं रोकूँगा, बस, यह बात तै हो गई कि तुम दर्शन दोगे और मै आत्मसमर्पण करूँगा । आगे और पीछे के प्रश्न पर यदि कुछ सुनना चाहते हो, तो सुनो । मै कभी आगे नहीं बढा, सदा से तुम्हीं आगे रहे हो । सृष्टि के आगे से तुम चले आते हो तो आज मेरे लिए पीछे पाँव न दो । आगे बढ़ो । संदेह न करो । शक्की भगवान् न बनो । और इतने झंझट उठाने की भी आवश्यकता नही, जब प्रत्येक दशा में तुम मुझे आत्म-समर्पण करने के लिए विवश भी कर सकते हो । यदि तुम मेरे मन को ही अपनी ओर खीच लो तो इस प्रकार के बखेड़े का अन्त ही समझो ।

(२)

हिन्दू-कुल-गौरव प्रातःस्मरणीय, वीर-शिरोमणि महाराष्ट्र-केसरी छत्रपति शिवाजी ने अपने राजकुमार का नाम साहू रखा था । आज के प्रपंच भरे जमाने में दूर-दूर के व्यापारी किसी नगर के स्वजातीय दूकानदारों के यहाँ हजारों रुपये के आभूषण चुपचाप उनके यहाँ यों ही धरकर निश्चिन्त जहाँ-तहाँ घूमा करते है । बहुमूल्य आभूषणों को बिना मूल्य चुकवाये बेचने के लिए एजेन्ट दूकान पर दे जाया करते हैं और अपने सुविधानुकूल अथवा वर्षान्तर में अपना हिसाब-किताब करते हैं । लोग बहुमूल्य-रत्नों और सोने चाँदी के ढेर बिना किसी लिखा-पढ़ी अथवा साक्षी रखे

---

१. 'ललकार' (रामावतार नारायण, सन् १९५४ ई०), पृ० २६-२७ ।

एक पवित्र विश्वास के ही आधार पर दे जाया करते है। कितने संतोष की बात है कि इस अनूठे विश्वास की मर्यादा आज तक सुरक्षित है। 'थाप' को ही अपनी पूँजी मानते हैं। ऐसे लोग बिना पूँजी के भी चमकता हुआ व्यापार करते है और देखते-देखते नगर के धनाढ्यों में उँगली पर गिने जाते हैं। इस उदाहरण की भी कमी नहीं है कि स्वत: कुछ लोग अपने रुपयों को, घर से अधिक सुरक्षित रखने के अभिप्राय से, इस जाति के श्रीसम्पन्न सज्जनों के यहाँ जमा कर दिया करते हैं। उन्हें अपने बैंक का श्रेष्ठ स्थान देते है।[१]

रामावतार प्रसाद

आप छपरा शहर के 'दहियावाँ' मुहल्ले के निवासी श्रीअलखसुन्दर सहाय के पुत्र थे। आपका जन्म २३ दिसम्बर, १८७३ ई० को हुआ था।[२] सन् १८९० ई० मे प्रयाग-विश्वविद्यालय से 'इण्ट्रेन्स' की परीक्षा पास कर आप सरकारी नौकरी करने लगे। गोपालगंज (सारन) के प्रसिद्ध 'राम-जानकी-मन्दिर' के पुनरुत्थान का पूर्ण श्रेय आपको ही दिया जाता है। आप एक पहुँचे हुए राम और हनुमान-भक्त थे। आपके जीवन मे अनेक चमत्कारपूर्ण घटनाएँ घटी बतलाई जाती है। आपकी साहित्यिक सेवा का आरम्भिक वर्ष सन् १९१३ ई० बतलाया जाता है। उर्दू और फारसी के अतिरिक्त आपका हिन्दी-ज्ञान भी अच्छा था। आपकी कुछ स्फुट रचनाएँ उर्दू, फारसी और अंगरेजी मे भी मिलती हैं। हिन्दी में आपके द्वारा लिखित पुस्तकों के नाम ये हैं—(१) धर्मप्रकाश[३], (२) कृष्ण-भजनावली (भोजपुरी)[४] तथा (३) हनुमत्-चरित[५]। सन् १९४३ ई० के नवम्बर मास मे आप परलोक सिधारे। आपकी रचना के उदाहरण हमें नहीं प्राप्त हो सके।

---

१ 'स्वर्णकार-परिचय' (रामावतार नारायण, सन् १९५६ ई०), पृ० ५७।

२. श्रीजानकी प्रसाद (दहियावाँ, छपरा) द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

३ सनातन धर्म-प्रकरण। प्रकाशन-काल सन् १९१३ ई०।

४ प्रकाशक स्वय।

५ इसका कुछ अंश ही मुद्रित होकर रह गया। रचना-काल सन् १९४० ई०।

रामावतार मिश्र 'राम'

आप गया जिला के 'बेनीपुर' (टेकारी) नामक ग्राम के निवासी पं० बंशीधर मिश्र के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९५५ वि० की पौष कृष्ण-नवमी (शुक्रवार) को हुआ था।[1] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा ग्राम-पाठशाला में ही हुई। तदनन्तर आप टेकारी-राज के संस्कृत-विद्यालय में प्रविष्ट हुए, जहाँ आपको २३ वर्ष की आयु तक शिक्षा मिली। उसके बाद आपने पं० श्रीदेवतावरण मिश्र तथा पं० श्रीरमाप्रसाद मिश्र से संस्कृत के साथ-साथ हिन्दी-साहित्य का अध्ययन किया। सन् १९२१ ई० में आपने 'संस्कृत-साहित्योपाध्याय' की उपाधि प्राप्त की।

आपने सं० १९७२ वि० से साहित्य-रचना की ओर कदम बढ़ाया। अत्यल्प काल में ही आप संस्कृत और व्रजभाषा के प्रतिभावान् कवियों और मननशील विद्वानों में गिने जाने लगे। आपकी कविता का मुख्य विषय श्रीकृष्णलीला का वर्णन है। आपकी कविता की भाषा ललित छन्दों से युक्त भावपूर्ण होती है। आपने दो वर्षों तक गया से निकलनेवाली 'रसिक-विनोदिनी' नामक मासिक पत्रिका का सम्पादन किया है।[2] आपके द्वारा लिखित (१) विनायक-जन्म (नाटक), (२) दमयन्ती-प्रलाप, (३) दिलीप की गो-सेवा, (४) सिद्धार्थ-जन्म, (५) मनुस्मृति, द्वितीय अध्याय का पद्यानुवाद, (६) कुब्ज-मिलन, (७) हितोपदेश-टीका, (८) मालविकाग्निमित्र का अनुवाद, (९) फाल्गुन-महिमा, (१०) तुलसी-पद-पुष्पाञ्जलि, (११) लघुबालिका-साहित्य, (१२) स्तोत्र तथा पूर्त्ति आदि पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।[3] इनके अतिरिक्त आपके द्वारा लिखित संस्कृत की लगभग २५ पुस्तकों का पता चलता है।[4] सम्प्रति, आप गया नगर के 'श्रीकान्यकुब्ज संस्कृत-विद्यालय' में अध्यापन का कार्य कर रहे हैं।

---

१. आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री के अनुसार। देखिए, 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० १४४ और 'हिन्दीसेवी-संसार' (वही), पृ० २३७ भी।

२ देखिए, 'हिन्दीसेवी-संसार' (वही), पृ० २३७।

३ रचना-काल क्रमश सन् १९२८ ई०, सन् १९३२ ई०, सन् १९३३ ई०, सन् १९३४ ई०, सन् १९३३ ई०, सन् १९४० ई०, सन् १९५० ई०, सन् १९५० ई०, सन् १९५० ई०।

४. इन पुस्तकों के नाम ये है—(१) भारतेतिहास (सन् १९३० ई०), (२) गणेश-जन्म (सन् १९३५ ई०), (३) रुक्मिणी-परिणय (वही), (४) शिव-विवाह (वही), (५) अशोकवर्तिनी सीता (वही), (६) दक्ष-यज्ञविध्वंस (वही), (७) कीचकवधः (वही), (८) श्मशानवासी हरिश्चन्द्रः (वही), (९) मानिनी राधिका (वही), (१०) कृष्णाभिसारिका (वही), (११) मदनमंजरी-नाटिका (सन् १९२२ ई०), (१२) श्रीगुरुवंशवर्णनम् (सन् १९३४ ई०), (१३) देवीचरितम् (सन् १९३९ ई०), (१४) रस-चन्द्रिका (सन् १९३८ ई०), (१५) सुर-भारती (सन् १९३६ ई०), (१६) मातृ-सप्तपञ्चाशिका (सन् १९३८ ई०), (१७) व्यञ्जनानिरूपणम् (सन् १९४६ ई०), (१८) श्रीकृष्ण-सन्देश (सन् १९४६ ई०), (१९) रुक्मिणीमङ्गलम् (अपूर्ण, सन् १९४४ ई०), (२०) स्तोत्र, (२१) स्फुट, (२२) सकरचारतम् (एकांकी, सन् १९३६ ई०), (२३) मनुस्मृति, द्वितीय अध्याय की टीका (सन् १९५५ ई०), (२४) वधूसवामाहात्म्य।

उदाहरण

(१)

ऊधव स्याम सो जाय जताइयो गौवै सबै तुमही को पुकारै ।
कुंज कुटी में पखेरु बिहाल है रैन दिना तव नाम उचारै ॥
वा मगवा यमुना तट या ब्रज वीथी जहाँ फिरते हरवारैं ।
जा चढ़ि वंशी बजाते हो हरि सूनी परी वे कदम्ब की डारैं ॥
जो मुँहि छाड़ि गये तो गये कहियो कबहूँ न यहाँ पगु धारैं ।
सौत के संग विहार करै सुख से सुधि ह्याँ को भले ही बिसारैं ॥
ह्यां बिरहानल ज्वाल जरै यही को सहिहो रहिहों मन मारे ।
आइ करेगी नही टुक 'राम' चहै सर काम के मारियो डारै ॥[१]

(२)

आली कोकिलान की असासि जो अलाप्यो राग,
अलिन को न्योत्यो कुञ्ज शोभा अधिकाई है।
प्यारी चाँदनी की कर जोरि कह्यों यों मुख ते,
रिनी हौ रहूँगी सदा कीनी जो भलाई है।
दक्ष पौन दम्पति को सुखिन सदा हि करै,
रति अवियुक्त हो जो काम सरसाई है।
नाह को विदेश जाइबे ते जो सहाय हो,
रोकि राख्यो 'राम' वा वसन्त की बधाई है॥[२]

(३)

सुभग सयानी सखी साथ लै सलोनी राधा,
चलिभे सनेहसनी ओर नन्दलाल की ।

---

१. 'विधु' (कला १, किरण ३, आश्विन-शुक्ल २, स० १९८४ वि०)। विभाग मे संगृहीत सामग्री से ।
२. 'विधु' (कला १, किरण ४, पौष शुक्ल २, स० १९८४ वि०) —वही ।

इत ग्वालबाल संग साजि ब्रजपाल रंग,
झूमत मतंग से उमंग भरे चाल की ।।
जुरि आई दुहुन जमात मग माहि 'राम',
लोक सुखधाम मची धूम बेमिसाल की ।
केशर से कुंकुम से अबिर गुलालहूँ से,
क्षिति व्योम दिशि विदिशान लाल लाल की ।।[1]

(४)

सुमन गुलाब पै मकरन्द चाखिबे को हेतु,
मानो कहूँ वारिज बिहाय भौर आयो है ।
कोऊ धौं अनन्य भक्त इष्टदेव सालिग्राम,
मानिक सिंहासन पै प्रेम ते बिठायो है ।।
कैधों नेह वारो काम नेह की पिटारी 'राम',
अपने सुरंग केर छार यों लगायो है ।
कैधों रसिकान दीठि ऐंचिबे को चुम्बक है,
कामिनी कपोल पै धौ तिल ये सुहायो है ।।[2]

(५)

भरि जात अंग-अंग माहि गुणराशि रम्य,
दिशि विदिशान में सुकीरति फहरि जात ।
हरि जात कुमति कुचाल तम तोम तिमि,
सुजन जमात जुरे जौहर बगरि जात ।।
गरि जात गर्व गुरु हरि जात आपु अरि,
सरि जात काज सबै नाम अति करि जात ।
करि जात मातृ-कृपा-कोर ते सुकर्म 'राम'
भक्त मौन भव्य भूति-भार भूरि-भूरि जात ।।[3]

---

१. 'रसिक-विनोदिनी' (आषाढ़-श्रावण, स० १९९२ वि०), पृ० ५।
२. वही (भाद्रपद, स० १९९२ वि०), पृ० १३।
३. साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित लेखक द्वारा लिखित 'मातृ-स्तुति' कविता से ।

(६)

जनम तुम्हारो बड़ अंश रतनाकर ते,
करम तुम्हारो ताप वारन विख्यात है ।
वास थल तेरो भाल तल महादेव जू के,
लोक सुखदायी रम्य सुधामय गात है ॥
नातेदार जगदीश जात द्विजराज की है,
साथी औ' समाज सुर राज की लखात है ।
तौहू चन्द दैव के झपेटे पड़ि जात कबौं,
लेख विधिना के 'राम' घट घट जात है ॥[1]

रामेश्वरीप्रसाद 'राम'

आप पटना-जिला के 'बाढ़' नामक स्थान के निवासी श्रीयुगेश्वरीप्रसाद अम्बष्ठ[2] के पुत्र थे । आपका जन्म सं० १९५६ वि० की आषाढ़-पूर्णिमा (२२ जुलाई, सन् १८८९ ई०) को हुआ था ।[3] आपकी शिक्षा पटना में हुई । आपने टी० के० घोष एकेडेमी, पटना से 'मैट्रिकुलेशन' की परीक्षा पास की । उसके बाद सन् १९२१ ई० में आपका प्रवेश बी० एन० कॉलेज, पटना मे हुआ । वहाँ जब आप पढ़ रहे थे, तब देश में गांधीजी के आदेश से असहयोग-आन्दोलन चल पड़ा । आई० ए० मे पढ़ते समय ही आपने अपना अध्ययन छोड़ दिया और उस असहयोग-आन्दोलन मे सम्मिलित हो गये । पढना छोड़कर आपने राष्ट्रीय कार्यों में सहयोग देना शुरू किया । राष्ट्रीय आन्दोलन के कार्यों में, विशेषतः हिन्दी-प्रचार में, आपने अपने जीवन को लगा दिया । साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग; नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी तथा बिहार-प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के कार्यों में आप सदा अग्रसर रहे । वर्षों तक आप हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, पटना की स्थायी समिति के सदस्य रहे । हिन्दी-प्रचार ही आपके जीवन का व्रत था । आपही के अथक परिश्रम से

---

१. लेखक द्वारा लिखित 'चन्द्रमा' कविता से ।

२. ये बाढ (पटना) मे सरकारी वकील थे । हिन्दी के बडे प्रेमी एव भगवद्भक्त । इन्होने सस्कृत के 'रामस्तोराज', 'जानकीस्तोराज' आदि का हिन्दी मे अनुवाद कर भक्ति-प्रचारार्थ वितरित किया था ।

३. प० श्रीरामदीन पाण्डेय (देवघर, बिहार) और आपके द्वारा दिनांक २६ अप्रैल, सन् १९५५ ई० को प्रेषित और सहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के अनुसार ।—देखिए, 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ (वही), पृ० ६४२

'बाढ' में 'नागरी-प्रचारिणी सभा' की स्थापना हुई थी। आप अखिलभारतीय और प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनों की स्थायी समिति के भी सदस्य रहे। १२ वर्ष की उम्र से ही आप हिन्दी-नाटकों का अभिनय करते एवं लोगों के द्वारा उनका अभिनय करवाते थे। शनैः-शनैः आपने हिन्दी में अपनी मौलिक नाट्य-रचनाएँ भी लिख डालीं। हिन्दी-नाटकों का प्रचार आप स्वयं अभिनय के माध्यम से करते थे।

आपके द्वारा लिखित, प्रकाशित और अप्रकाशित करीब दर्जनों पुस्तकें हैं। उनमें नाटक, प्रहसन, एकांकी, रूपक एवं कविताएँ प्रमुख रूप से आती हैं। आपकी निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हैं—१ प्रेम-योगिनी (सामाजिक नाटक), २ पीयूष-सागर (राष्ट्रीय कविताओं का संग्रह), ३ राम-संगीत-विनोद (कविता संग्रह), ४ आनन्द-भण्डार (कविता-संग्रह), ५. अछूतोद्धार (सामाजिक नाटक)। आपकी अप्रकाशित रचनाओं के नाम ये हैं—(१) आदर्श भारत (नाटक), (२) रामावतार (नाटक), (३) वीर छत्रसाल (नाटक), (४) बीसवीं सदी (नाटक), (५) मनोराज (नाटक), (६) गणतंत्र भारत (नाटक), (७) स्वदेश (एकांकी), (८) संग्राम (एकांकी), (९) शरणार्थी (एकांकी), (१०) हजरते कण्ट्रोल (प्रहसन), (११) म्युनिसिपल वार्ड-कमिश्नर (प्रहसन), (१२) मोख्तार साहब (प्रहसन), (१३) घंटालगुरु (प्रहसन), (१४) मानव-धर्म (रूपक), (१५) भूख (रूपक), (१६) रोटी (रूपक), (१७) जमीन्दार साहब (रूपक)।

इनके अतिरिक्त आपकी स्फुट रचनाएँ 'लक्ष्मण' (लखनऊ), 'देश', 'महावीर', 'बिहार-बन्धु' (पटना), 'स्वतन्त्र' (कलकत्ता), 'प्रताप' (कानपुर) आदि पत्रों में यथावसर प्रकाशित होती थीं। आप १२ जून, सन् १९५७ ई० को परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

यही आदर्श भारतीय वीरों तथा विजयी सम्राटों के थे। भारत स्वाधीन है और स्वाधीनता उसका जन्मसिद्ध अधिकार है। भारत को विजय चाहिए और उसे चाहिए दानवता पर मानवता की सच्ची विजय। और यही विजय हम भारतीयों की एक मौलिक परम्परा है, जिसे सदैव उज्ज्वल रखना चाहिए। युद्ध कभी-कभी अनिवार्य है, परन्तु स्मरण रहे कि भारत ने कभी भी युद्ध को उन्माद नहीं बनाया एवं भारत का विजेता कभी भी उत्पीड़क नहीं बना।[१]

---

१. 'गणतन्त्र भारत' (वही) की अप्रकाशित पाण्डुलिपि से, आपके द्वारा प्रेषित।

[२]

गुरुदेव ! यह क्या हो रहा है ? यह मैं क्या देख रहा हूँ ? भारत-वसुन्धरा में जहाँ दूध की नदियाँ बहती थीं, वहाँ आज रक्त की धाराएँ बह रही है । शोक ! महाशोक !! मनुष्य मनुष्य का भक्षक बन रहा है । दया, धर्म और न्याय, पैरों से ठुकराये जा रहे है । हाय ! ऐसा घोर परिवर्त्तन ! धनी कंगाल हो रहे हैं । घरवाले बेघर हो रहे है, दुधमुँहे बच्चे तड़प-तड़पकर मर रहे है । यह अमानुषिक व्यवहार, ऐसा घोर अत्याचार और दानवता का मानवता पर ऐसा प्रहार सहा और देखा नहीं जाता ! गुरुदेव ! आज्ञा हो तो में अहिंसा-व्रत का अवलम्ब छोड़कर दुर्जनों का संहार कर मानवता की रक्षा करूँ ।[१]

(३)

हमारी हिन्दी है मातृ-भाषा, इसे पढेंगे पढ़ायेंगे हम ।
इसी के हित में हृदय से अपने, सहर्ष जीवन बितायेंगे हम ।।
हमारे प्राणों की प्यारी हिन्दी, है राष्ट्रभाषा हमारी हिन्दी ।
इसी के बल पर स्वतन्त्र है हम, इसी पै तन-मन लुटायेंगे हम ।।
सरल है सुन्दर है वर्ण इसके, मधुर है रचना अपूर्व शैली ।
करेंगे सेवा इसी की निशिदिन, इसीका डंका बजायेंगे हम ।।
हो प्रेम हिन्दी का हिन्द-जन को, विनय यही है हे राम ! तुमसे ।
करेंगे इसका प्रचार घर-घर इसी की जय-जय मनायेंगे हम ।।[२]

(४)

चाह नहीं है नेता बनकर सभा-भवन में जाऊँ ।
चाह नहीं है जनता की मैं पूजाशीश चढ़ाऊँ ।।

---

१. 'आदर्श भारत' (वही) की अप्रकाशित पाण्डुलिपि से, आपके द्वारा प्रेषित ।
२ राम सगीत-विनोद' (वही), आपके ही द्वारा प्रेषित ।

चाह नही कपट-हृदय से त्यागवीर कहलाऊँ ।
चाह नही है योगी बनकर तन में भस्म रमाऊँ ॥
चाह यही है जीवन की मेरे दुखियों का दुख शान्त करूँ ।
चाह यही है भारत माँ का बेड़ा हिलमिल पार करूँ ॥[१]

रूद्रप्रसाद 'रूद्र'

आप सारन-जिला के 'कटेयाँ' (दयालपुर) नामक ग्राम के निवासी श्रीप्रयागदत्त श्रीवास्तव[२] के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९१६ वि० (सन् १८५९ ई०) की आषाढ़ शुक्ल-द्वितीया (शनिवार) को हुआ था।[३] प्रारम्भ में आपकी शिक्षा अरबी और फारसी के माध्यम से हुई। बाद में आपने हिन्दी और संस्कृत की भी अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली। बाल्यावस्था से ही आप पढने में बडे तीक्ष्ण तथा होनहार थे। अध्ययन के बाद आपने नीलहे साहबों के विरुद्ध खूब कार्य किया और उसमें अँगरेजों को मात होना पड़ा। अपनी जमीन्दारी के कामों से बचे हुए समय में आप पुस्तक लिखा करते थे। सर्वप्रथम आपने फारसी की एक पुस्तक 'करीमा' का हिन्दी में अनुवाद किया। फारसी, अँगरेजी, पंजाबी, खडीबोली और मैथिली—इन सभी भाषाओं में आपने रचनाएँ की थीं। संगीत-शास्त्र का ज्ञान प्राप्त करने के बाद आपने उसमें भी तीन पुस्तकें लिखी—(१) आनन्दमाला, (२) विनोदमाला और (३) प्रमोदमाला। उपर्युक्त तीनों पुस्तकें प्रकाशित हैं। इन तीनों के बाद आपने क्रीड़ा-विषयक कुछ पुस्तको की भी रचना की। 'रुद्र कौतुक-विचित्र' नामक आपकी एक पुस्तक खूब प्रशस्त हुई। समाज-सुधार को दृष्टि-पथ में रखते हुए आपने 'कुचाल-सुधार' और 'व्ययव्यर्थ-निवारण' और 'नवीन होली' नामक पुस्तकें लिखीं। जीवन के अन्तिम काल में आपने 'वेदान्ती कचहरी' नामक एक नाटक लिखा। सन् १९२६ ई० की १२ मई (शुक्रवार) को करीब सात वर्ष तक काशी-वास के उपरान्त आप कैलासवासी हुए।

---

१. 'हृदय-ध्वनि' (वही), आपके द्वारा प्रेषित।

२ इनके पूर्वज मुगलकालीन भारत मे दिल्ली के दीवान और कानूनगो के पद पर रहे। ये अपनी कार्य-पटुता से दिल्ली-दारबार मे बहुत प्रतिष्ठित थे। इन्हें बादशाह की ओर से जागीर भी मिली थी। सन् १८५७ ई० के गदर के समय इनके पूर्वज श्रीगणेशदत्त कानूनगो को दिल्ली छोड़ देनी पड़ी। उसके बाद,आगरा होते हुए ये सारन-जिला के कटेयाँ ग्राम मे आ बसे।

३. श्रीगोविन्दशरण वर्मा, शरफुद्दीनपुर (मुजफ्फरपुर) द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री से।

उदाहरण

(१)

रे मन कतह कतह छुछुआइछे।
बितल जाइ छउ वयस अकारथ,
माया में कथिला भुलाइछे।
पर धन ला छल बल तू करइछे,
पर तिया देख लुभाइछे।
ई माया तोर काजो न अतऊ,
कूकर सन बउड़ाइछे ॥[1]

★

रूपनारायण गुप्त

आप पटना-नगर (पटना सिटी) के 'कमंगर-गली' नामक मुहल्ले के रहनेवाले श्रीमिश्रीलाल गुप्त के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९४७ वि० (सन् १८९० ई०) की आषाढ़ शुक्ल-अष्टमी को हुआ था।[2] आपकी शिक्षा प्राय' घर पर ही हुई। सन् १९१४ से १९१८ ई० तक आपने दैनिक 'भारतमित्र' (कलकत्ता) में कार्य सम्पादन किया। उसके बाद सन् १९१९ से १९२० ई० तक आपने 'पाटलीपुत्र' के सम्पादकीय विभाग में कार्य किया। सन् १९२१ ई० से सन् १९२३ ई० तक आप 'तरुण भारत' में व्यवस्थापक-पद पर रहे। आपके द्वारा लिखित निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं—(१) अकबर-बीरबल-विनोद, (२) व्यापार-शिक्षा, (३) आदर्श शिक्षा और (४) हिन्दी-अँगरेजी-शिक्षा। सम्प्रति, आपके परिवार के लोग व्यापार आदि कार्यों में संलग्न हैं।

★

रूपनारायण सिंह 'चूड़ामणि'

आप गया-जिला के 'अहियापुर'[3] नामक ग्राम के प्रतिष्ठित जमीन्दार बाबू रामरक्षा सिंह के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९३१ वि० (सन् १८७४ ई०) की कार्त्तिक-पूर्णिमा को हुआ था।[4] आपकी आरम्भिक शिक्षा हिन्दी के साथ-साथ उर्दू और फारसी

१ परिषद् के साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री से।

२. आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित विवरण के अनुसार।

३. आप गया-जिला के 'तेतपा' नामक स्थान के निवासी भी बतलाये गये हैं। देखिए, 'सम्मेलन-पत्रिका' (भाग १४, अंक २, आश्विन, सं० १९८३ वि०), पृ० ५१।

४. 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० १६३।

में भी हुई। लगभग पन्द्रह वर्ष की अवस्था से ही आप काव्य-रचना करने लगे। आपके काव्य-गुरु थे पं० छात्रानन्द मिश्र। आपकी गणना 'साहित्य-सरोवर', 'साहित्य-चन्द्रिका' और 'रसिक-मित्र' के कुशल पूर्त्तिकारो में होती थी। एक सफल कवि के रूप में आपका सम्बन्ध दरभंगा और सूर्यपुरा (शाहाबाद) के राज-दरबारों से था। अपने जीवन के अन्तिम दिनो में एक दिन आप अपना घर छोड़कर कहीं गये तो फिर नही लौटे। आपकी पुस्तकाकार रचनाओं के नाम ये है—(१) रामलीला-प्रभाकर (सातो काण्ड), (२) शंभु-शतक तथा (३) रामचरित-स्मरण।[१]

उदाहरण

मुसकाननि में दुति चाँदनि सी, अरु बैन सुधा सम माधुरियाँ।
दृग चंचल खंजन की रुचि हैं, सुचितौन में जादुन की पुरियाँ॥
बरनै कोन री लघु किन्नरी की, समता न लहै अरु आसुरियाँ।
लखिये छवि अंग ही अंग सबै, मृदु मंजु गुलाब की पाँखुरियाँ॥[२]

ललितकुमार सिंह 'नटवर'[३]

आप मुजफ्फरपुर-नगर के 'सरैयागंज' नामक मुहल्ले के निवासी श्रीमहादेव प्रसाद सिंहजी[४] के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९५५ वि० (सन् १८९८ ई०) की ज्येष्ठ कृष्ण-अमावास्या (गुरुवार) को हुआ था।[५] आपकी प्राथमिक शिक्षा घर पर ही हुई। सन् १९०८ ई० में आपका नाम उच्च प्राथमिक विद्यालय में लिखवाया गया। प्राथमिक शिक्षा के बाद

---

१ आपकी एक हस्तलिखित कविता-पुस्तक आज भी आपके उत्तराधिकारियो के पास सुरक्षित है।

२. 'सम्मेलन-पत्रिका' (भाग २४, अक २, आश्विन, सं० १९८३ वि०), पृ० ५१।

३. आपका वास्तविक नाम 'ठागा सिंह' था। किन्तु, जब आप प्राथमिक विद्यालय मे आये तब वहाँ के शिक्षको ने आपका नाम 'लतीफ हुसैन' रख दिया। १८ सितम्बर, सन् १९२७ ई० को आप पुन हिन्दू-धर्म-रीति से शुद्ध होकर हिन्दू-धर्मानुयायी हुए। शुद्धीकरण के बाद आपका यह नाम पड़ा।

४. ये मूलतः शाहाबाद के 'महुआर' नामक ग्राम के प्रसिद्ध उज्जैन-राजपूत थे। मुजफ्फरपुर-नगरपालिका में कुछ दिनो तक तहसीलदार और पीछे चलकर सब-ओवरसीयर के पद पर प्रतिष्ठित हो चुके थे। इनकी पत्नी मुजफ्फरपुर-जिला के 'सिसौला' (शिवहर) नामक ग्राम के शेख मदारू मियाँ की लड़की थीं। —देखिए, 'बिहार के नवयुवक-हृदय' (वही), पृ० ७६।

५. आपके द्वारा दिनाक १ अप्रैल, सन् १९५५ ई० को प्रेषित और परिषद के साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित विवरण के आधार पर। आपके परिचय-लेखन मे, इस विवरण के अतिरिक्त 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ६६३), 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, चतुर्थ भाग), पृ० ४००, और 'बिहार के नवयुवक-हृदय' (वही, पृ० ७६) से भी सहायता ली गई है।

आपका नाम मिड्ल स्कूल में लिखवाया गया। तत्पश्चात्, आपका अध्ययन न हो सका। आपकी पारिवारिक स्थिति का आपके अध्ययन पर गहरा प्रभाव पड़ा।[१] पिता की सत्संगति और माता की पवित्रता ने भी आपके जीवन को प्रभावित किया। फलत: कभी भी आपने सामिष भोजन नहीं किया। बचपन से ही आपका जीवन एक पवित्र हिन्दू की तरह व्यतीत हुआ। हिन्दू-धर्म से आपका अगाध प्रेम था। स्वभाव से आप बड़े ही विनोदी तथा रसिक व्यक्ति थे। सहृदयता तो आपमें कूट-कूटकर भरी थी। सन् १९१५ ई० में आपके पिता का निधन हो गया, फिर भी अपनी माताजी के सम्पर्क में आपने पूर्ण सात्त्विक जीवन व्यतीत किया। सन् १९१९ ई० के नवम्बर मास में आपकी माताजी का भी देहान्त हो गया। उनका शव दफनाया गया। माँ के निधन के बाद भी आपका सम्पर्क जीवन-पर्यन्त आपके ममहर से ही बना रहा। देश-सेवा के कार्यों को लेकर आपने कई बार जेल-यातनाएँ भी सही। आपने मुजफ्फरपुर नगर-काँगरेस कमिटी के प्रथम प्रधानमंत्री के पद को भी सुशोभित किया। आपको कोकोनाडा-काँगरेस' में बिहार का प्रतिनिधित्व करने का भी सुअवसर प्राप्त हुआ। आपका सम्पूर्ण जीवन साहित्य और देश की सेवा में व्यतीत हुआ।

विद्यालयीय शिक्षा के बाद आपने स्वाध्याय के बल पर हिन्दी, अँगरेजी, संस्कृत, बँगला, गुजराती, उर्दू आदि कई भाषाओं का अध्ययन किया। पन्द्रह वर्ष की अवस्था में आप मुजफ्फरपुर की 'हिन्दी-प्रचारिणी सभा' के पुस्तकालयाध्यक्ष-पद पर नियुक्त हुए। पुस्तकालय की इसी सेवा ने आपके हृदय में साहित्य-प्रेम का बीजारोपण किया और शनैः-शनैः आपकी रचनाएँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होने लगीं। मुजफ्फरपुर में आपने बिहार की पहली सेवा-समिति 'भारतीय नवयुवक-समिति' के नाम से संचालित की थी। इस समिति के अन्तर्गत एक 'नाट्य कला-समिति' नामक उपसमिति भी संचालित थी, जिसके आप ही अध्यक्ष थे। आप रंगमंच और फिल्मी जगत् के एक सफल अभिनेता के रूप में थे।[२] कविता पढ़ने का आपका ढंग भी अनूठा था। बिहार-प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के संस्थापकत्रय में आप भी एक थे।[३] श्रीरामधारी प्रसाद एवं श्रीमथुराप्रसाद दीक्षित के साथ आपने भी बिहार-प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, पटना के संस्थापन में अभूतपूर्व योगदान किया था। इस पुनीत कार्य के लिए आपको श्रीपीरमुहम्मद मुनीस से प्रेरणा मिली थी। सन् १९५० ई० में आपने कलकत्ता में 'बंगीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन' की स्थापना की। करीब तीन वर्षों तक आप उसके मंत्री-पद पर आसीन रहे। बिहार-प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के राँची-अधिवेशन के अवसर पर होनेवाले 'कवि-सम्मेलन' का आपने ही सभापतित्व किया था। अपने जीवन में आपने अनेक संस्थाओं का सृजन, संरक्षण और प्रतिपालन किया। मरण-पर्यन्त आप बिहार प्रान्तीय हिन्दी-सेवा-समिति के सदस्य एवं उसके प्रतिष्ठित पदों पर रहे।[४]

---

१. देखिए, 'बिहार के नवयुवक-हृदय' (वही), पृ० ७७।
२. 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही), पृ० ६६३।
३. 'बिहार-अब्दकोश' (वही), पृ० ६८४।
४. आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के आधार पर।

सन् १९१७-१८ ई० में आपने अपना जीवन 'रत्नाकर प्रेस' (मुजफ्फरपुर) की एक मासिक पत्रिका के प्रबन्ध-कार्य में लगाया। तदनन्तर करीब २-३ वर्षों तक आपने 'रमणी-रत्न-माला' नामक पत्रिका का सम्पादन किया। यह प्रकाशन 'बर्मन कम्पनी' की ओर से संचालित था। सन् १९२२-२३ ई० में आपने 'किसान-समाचार' नामक पत्र के संयुक्त सम्पादक के रूप में कार्य किया। इसके बाद मुजफ्फरपुर से प्रकाशित होनेवाली मासिक पत्रिका 'आशा' के आप प्रधान सम्पादक रहे। इस तरह आपके जीवन का अधिकांश साहित्य-सेवा में ही व्यतीत हुआ।[१]

आपके द्वारा हिन्दी में पुस्तकें लिखने का कार्य सं० १९७१ वि० में आरम्भ हुआ।[२] उसी समय से आपने अनेक पुस्तकों का प्रणयन किया। आपकी रचनाएँ 'माधुरी', 'प्रताप', 'हिन्दू-पंच', 'बालक' आदि पत्र-पत्रिकाओं में यथावसर प्रकाशित हुआ करती थी। आपके द्वारा लिखित पुस्तकों में (१) ललित राग-संग्रह (सन् १९३१ ई०), (२) गुलाल (सन् १९१८ ई०), (३) बाँसुरी (कविता, सन् १९२८ ई०), (४) धनुर्धर (नाटक, सन् १९२६ ई०), (५) दाव-पेंच (व्यंग्य, कहानी, रूपक; सन् १९५४ ई०), (६) 'दीपिका' (कविता, सन् १९५१ ई०), (७) चतुर चर (स्काउट), (८) आदर्श शासन आदि पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। (१) 'भूतों की गिरफ्तारी' (जासूस), (२) 'कलंक' (उपन्यास) और (३) 'खुदीराम बोस' (जीवनी) नामक आपकी पुस्तकें अद्यावधि प्रकाश में नहीं आ सकी हैं। उपर्युक्त मौलिक पुस्तकों के अतिरिक्त आपकी दर्जनों विद्यालयीय एवं साहित्य-सम्बन्धी पुस्तकें बर्मन-कम्पनी, मुजफ्फरपुर द्वारा प्रकाशित हुई थीं। आप बिहार-प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, पटना के प्रतिष्ठित आजीवन सदस्यों में रहे। आप ४ दिसम्बर, सन् १९६८ ई० को अपने मुजफ्फरपुर-स्थित निवास-स्थान पर दिवंगत हुए।[३]

उदाहरण

(१)

ढीली सी हो रही नसें थी, हृदय चूर था,
वह आशा उत्साह, बहुत हो रहा दूर था।
सूख गया था रक्त, मुखों छाई पियराई,
असमय में ही हाय ! झुर्रियाँ-सी पड़ आई ॥
ठंढक ऐसी छा गयी, अंग शिथिल से हो गये।
अवयव-संचालन-नियम, मानो थे सब खो गये ॥

---

१. 'बिहार के नवयुवक-हृदय' (वही), पृ० ७९ ।
२. 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही), पृ० ३९९ ।
३. 'उत्तर-बिहार' (साप्ताहिक, २५ दिसम्बर, सन् १९६८ ई०), पृ० ३ ।

होकर उष्णविहीन, दुखित थीं वृक्ष-लताएँ,
बनी हुई थीं मूक, विहंगम-वर-वनिताएँ।
इसी तरह से अन्य जीव-गण भी आकुल हो।
शीतत्रास से छिपे हुए से थे व्याकुल हो॥
पर इस काल-कुनाट्य का दृश्य हो रहा अन्त है।
जड़, चेतन में, जीव में, छाया पुनः वसंत है॥
पपिहा, पिया-गुहार, कुइलिया धुन से प्यारी,
थिरक थिरक गा रही आज फिर डारी-डारी।
सननन किन्तु मन्द, वायु की गति भी न्यारी।
पुष्पों के ढिग नाच जा रही बारी-बारी॥
तरु लतिकाएँ लहलही, हरी भरी दिखला रहीं।
कलियाँ विकसित हो अहा! यौवन-सुरभि लुटा रहीं॥
रक्त खलबला उठा, नसों में बिजुली धाई,
पीलापन मिट रहा, मुखों पर लाली आई।
नव उत्साह, उमंग, हृदय में फिर है छोई,
जभी वसन्ती-सु-छवि 'मोहनी' पुनः लखाई॥
रे वसन्त! बस अन्त कर घड़ी हेमन्त कुराज की।
सुखद-छटा छिटका यहाँ, अपने सरस स्वराज्य की॥[१]

(२)

सदियाँ बीतीं किन्तु न बतियाँ उन दिन रतियाँ की भूलीं,
जिनमें प्रकृति पिया रसिया की रंगरलियाँ पर थीं फूली।
कली-कली विकसित हो जिस पर करती थी यौवन का दान,
उस नटखटी-माधुरी-मुरली पर उत्सुक हैं अब भी कान॥
सखी सखाओं की वह क्रीड़ा, गैया मैया का आह्वान,

१. 'गुलाल' (ललितकुमार सिंह 'नटवर', सं० १९८३ वि०), पृ० ६।

करते है हिम-पट पर मेरे आँखमिचौनी के अनुमान।
ब्रजवनिता की विरह-व्यथा से गूँज रहा अब भी आकाश,
किस छलिया की मधुर मूर्ति का आता है अभिनव आभास॥
जड़ चेतन वृक्षों पत्तों में रजकण में एक गुप्त प्रकाश,
प्रकटित करता है तू! सत्य बता दे क्या है, यह सब माया है।
री वृन्दा! तू सत्य बता दे, क्या है, यह सब माया है,
या स्मृति है! अथवा कवि की कल्पित विस्मृत छाया है॥

× × ×

छिपी हुई आँखो से ही मैने उस ओर निहारा था,
किन्तु न यह थी खबर कि इतने ही में सब कुछ वारा था।
आकर्षण ही था कुछ ऐसा या मेरी आँखों का दोष,
अथवा इन्ही खिड़कियों द्वारा लुटा दिया हिय ने ही कोष॥[1]

(३)

यह कैसा पवित्र मन्त्र है। इसका प्रयोग कभी असफल नहीं होता। इसके साधक कभी निराश नही होते--कभी चिन्तित नही होते। और यह जीवन भी कितना मधुर, कितना पवित्र, कितना सरल तथा कितना कठिन भी है। जिसने इसे अपनाया, उसके सम्मुख स्वर्ग भी तुच्छ है। यह वही जीवन है, जिसे शिवि, दधीचि, राम, कृष्ण, लक्ष्मण, हनुमान, बुद्ध, ईसा, मुहम्मद, तिलक और गांधी ने अपनाकर संसार को अपने असली धर्म्म-मूल मानव-धर्म्म पर चलने का आदेश किया है। संसार का कोई धर्म्म इसकी बराबरी नहीं कर सकता। यह योग और तपस्या से भी कहीं विशाल तथा पवित्र है। योगी और तपस्वी अपनी मुक्ति की लालसा से ही योग और तपस्या करते है, उनकी उस साधना में स्वर्ग पाने और आवागमन से मुक्त होकर ईश्वर में लीन होने का

---

१. 'बिहार के नवयुवक हृदय' (वही), पृ० ७७-७८

स्वार्थ छिपा हुआ है। किन्तु, यह सेवा-धर्म्म निष्काम है, निःस्वार्थ है और निर्लोभ है। इसके पुजारी किसी प्रकार के भी पुरस्कार नहीं चाहते।[१]

(४)

मेरी राय में सर्वोत्कृष्ट मेक-अप कला है—विना किसी नकली सामान के, केवल भावों के जोर से चेहरा बदलना। अन्तर्तम में जिन भावों की मूर्तियाँ गढी जायँ, उन्हें बाहरी स्थूल मूर्ति में भी प्रकट कर देना, सबसे सूक्ष्म कला है। स्टेज से स्क्रीन की यही विशेषता है कि भावों का प्रकटीकरण इसमें खूब होता है। परन्तु यह साधारण अभिनेता के वश की बात नहीं है। यह वही कर सकता है, जो अभिनय-कला के सबसे प्रधान अंग—भाव प्रकाशन—पर पूरा अधिकार रखता हो। इस समय संसार में कुछ ही चुने हुए खेलाड़ी इसका प्रदर्शन कर सकते हैं। यह असम्भव तो नहीं है, पर महाकठिन अवश्य है। और सच तो यह है कि चाहे किसी प्रकार का मेक-अप हो, यदि अभिनेता उसीके अनुसार भाव-भंगी, बोल और चाल-ढाल नहीं बदलता, तो असफल होता है। सच्चा अभिनेता वही है, जो रूप-परिवर्तन में अन्तर्विम्ब को भी मिला दे।[२]

★

लक्ष्मणशरण 'मोदलता'

आप मुजफ्फरपुर-जिला के 'खँगुरा-पहसौल', ग्राम के श्रीरघुनाथ लालजी के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९३५ वि० (सन् १८८८ ई०) की वैशाख जानकी-नवमी को हुआ था।[३] आपकी प्राथमिक शिक्षा घर पर ही हुई। उसके बाद आपने समस्तीपुर (दरभंगा) के मिड्ल स्कूल से मिड्ल की परीक्षा पास की। अभिभावक की मृत्यु हो जाने तथा किसी प्रकार की सुविधा नहीं प्राप्त होने के कारण आप आगे नहीं पढ सके। आपके जीवन में अनेक कठिनाइयाँ आईं, जिनका सामना आपने साहसपूर्वक किया। आपकी बुद्धि विलक्षण थी।

---

१. 'चतुर-चर', (ललितकुमार सिंह 'नटवर', स० १९८३ वि०), पृ० ४८।
२ 'विश्वमित्र' (साप्ताहिक, दीपावली-विशेषाक, सन् १९३९ ई०), पृ० ९६।
३. 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही), पृ० ६६३।

माध्यमिक (मिड्ल) परीक्षा के बाद आपने तीस वर्षों तक माध्यमिक कन्या-विद्यालय, पहसौल में अध्यापक का कार्य किया।[1]

अपने जीवन के सोलहवें वर्ष से ही आपने हिन्दी और मैथिली में लिखना प्रारम्भ किया। आगे चलकर आपने हिन्दी में 'भगवद्भजन से सम्बन्धित अनेक पदो की रचना की और स्वाध्याय के बल पर हिन्दी और संस्कृत के सारे आध्यात्मिक ग्रन्थों का मन्थन किया, जिससे आपकी उपदेश-शैली निखर गई। आपने स्थान-स्थान पर जाकर समाज की धार्मिक भावनाओ को जगाने के लिए उपदेश दिये। उपदेश के क्रम मे आपने सदा राष्ट्रसेवा को महत्त्व दिया। आपकी रचनाओ में लौकिक और पारलौकिक अभ्युत्कर्ष के तत्त्व निहित हैं।[2] राम-नाम के प्रचार के माध्यम से लोगों में आध्यात्मिक उपदेश से भरे भाषण देना और काव्य सुनाना आपकी दिनचर्या थी। अखिलभारतीय संकीर्त्तन-सम्मेलनो में आप बहुधा जाया करते थे। रामायण और गीता के सद्वचनों का प्रचार आपके जीवन का उद्देश्य था। हिन्दी-भाषा के माध्यम से आपने जो प्रचार-कार्य किया, उससे हिन्दी-साहित्य-भाण्डार की अपरिमित वृद्धि हुई। अपनी हिन्दी-रचनाओं में आपने जहाँ आध्यात्मिक भावनाओं को उभारा है, वही वर्त्तमान पीढ़ी की सामाजिक बुराइयों पर भी कलम चलाई है। आप हिन्दी-साहित्य के प्रति बडे ही निष्ठावान् रहे।

हिन्दी एवं मैथिली भाषाओं में आपकी गद्य-पद्य-रचनाएँ मिलती हैं। इन दोनों भाषाओ में लिखी आपकी रचनाओं का संत-समुदाय ने बडा स्वागत किया और उनके प्रयास से वे रचनाएँ वृन्दावन, चित्रकूट, काशी आदि प्रसिद्ध धार्मिक स्थानों में प्रचारित हुईं।[3] आपके द्वारा लिखित 'मोदलता-पदावली' का प्रकाशन पुस्तक-भण्डार से हुआ है।[4] इसके अतिरिक्त (१) 'संतचरित्र-दोहावली', (२) 'रामगौनोत्सव-झूला', (३) 'भादो-झिझरी', (४) 'एकादशी-रहस्य' आदि आपकी लिखी कई पुस्तकें अद्यावधि प्रकाशित नही हो सकी हैं। आपकी स्फुट रचनाएँ 'संकीर्त्तन-संदेश' आदि पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं।[5]

उदाहरण

(१)

हो, बधैया देने सब धाई।
श्री महाराज कौशल नरेन्द्र घर आनन्द आनन्द छाई।
श्री अवध सहर गलि-गलियाँ
चली सोहिलो गावति अलियाँ

---

१ दिनाक २० सितम्बर, सन् १९५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।

२. उक्त विवरण के आधार पर।

३. देखिए, 'रामभक्ति मे रसिक-सम्प्रदाय' (वही), पृ० ५५४।

४. इसके अबतक चार-चार संस्करण हो चुके हैं।—देखिए, 'जयन्ती स्मारक ग्रन्थ' (वही), पृ० ६६३।

५. 'सकीर्त्तन-सन्देश' (मासिक, माला १, पुष्प १, २५ अप्रैल, १९६१ ई०), पृ० ९।

नृप छोना छवि दृग छाकि-छाकि
तन मन सुध बुधि विसराई ।।
कोई देवैं नील दिठोना,
कोई वारैं भूषण सोना ।
सुरतरु प्रसून सुर वार्षि वार्षि
जय जयति 'मोद' ध्वनि छाई ।।
हो, बधैया देने सब धाई ।।[१]

(२)

प्रिय पाहुन रुचि सें जेम लिय,
छमि भूल चूक गुनि अबुध तिय ।
अहाँक जोग कछु बनल न व्यंजन,
अस विचारि सकुचइय जिय ।।
भावक भूखल स्वभाव प्रभुक सुनि,
पुनि पुनि मोर हुलसइय हिय ।
समुझब तखन कहब अहाँ जखने,
अमुक वस्तु कनैं अउर दिय ।
जनि लजाहु निज कुलाचार पर,
संत सुखद सदा अबध तिय ।।[२]

★

लक्ष्मीनारायण

आप मुंगेर-जिला के 'उलाव' (बेगूसराय) नामक ग्राम के निवासी थे। आपका जन्म सं० १६५४ वि० (फरवरी, सन् १८६८ ई०) की फाल्गुन कृष्ण-चतुर्थी को हुआ था।[३] आप अपने पिता[४] की सबसे छोटी सन्तान थे। गाँव में आरम्भिक शिक्षा होने

---

१. 'सकीर्त्तन-सन्देश' (मासिक, आरा, माला १, पुष्प १, २५ अप्रैल, सन् १९६१ ई०), पृ० ६ ।
२. श्रीपरमानन्द पाण्डेय (बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद, पटना-४) से प्राप्त ।
३ देखिए, दैनिक 'नवराष्ट्र', (पटना, ९ मई, सन् १९६१ ई० (मगलवार) का अक । साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री । साथ ही, देखिए 'बिहार अब्दकोश', (वही, पृ० ६८३) तथा 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ६६२) ।
४ ये मुजफ्फरपुर के एक बडे जमीन्दार और महाजनी-व्यवसाय करनेवाले धनाढ्य व्यक्ति थे। इसी व्यवसाय के लिए ये अपने पूरे परिवार के साथ मुजफ्फरपुर में जा बसे थे ।

के बाद, सन् १९०७ ई० में मुजफ्फरपुर जिला स्कूल के सातवें वर्ग में आपका नाम लिखवाया गया। सन् १९१४ ई० में आपने छात्रवृत्ति के साथ प्रथम श्रेणी में मैट्रिक (प्रवेशिका) की परीक्षा पास की। उसके बाद आपने बी० एस्-सी० की परीक्षा में प्रथम श्रेणी में सर्वप्रथम स्थान प्राप्त किया। जिस समय आप कलकत्ता-विश्वविद्यालय में एम० एस्-सी० के विद्यार्थी थे, उस समय आप नियमित रूप से 'इण्डिपेण्डेण्ट' पत्र पढ़ा करते थे। यह देखकर आपके एक प्रोफेसर 'कॉडवेल साहब' ने ऐसा करने से आपको रोका, जिसके परिणामस्वरूप आपने अपनी पढ़ाई अधूरी छोड़ दी। उसी समय सन् १९१९ ई० में पंजाब के जालियाँवाला बाग के हत्याकाण्ड ने सारे देश में क्षोभ और रोष फैला रखा था और महात्मा गांधी का सामूहिक असहयोग एवं सत्याग्रह-आन्दोलन भी घोषित हो चुका था। ऐसे ही समय में आपने पढ़ना छोड़कर इस आन्दोलन में भाग लेने का व्रत लिया और आप राष्ट्रीय संघर्ष में सम्मिलित हो गये।[१] सन् १९२२ ई० में, 'बेजवाडा' (दक्षिण-भारत) की कॉंगरेस में जो बीस लाख चरखे बनवाने और चलवाने के लिए एक करोड़ रुपये जमा करने का निश्चय किया गया था, उसे बिहार में कार्यान्वित करने के लिए मुजफ्फरपुर-जिले के प्रभारी आप ही बनाये गये थे। बिहार में खादी-आन्दोलन के मुख्य उन्नायकों में आप एक थे। सन् १९२५ ई० के कॉंगरेस-अधिवेशन में जिस अखिलभारतीय चरखा-संघ की नींव डाली गई थी, उसके आप ही प्रधान-मंत्री थे। उसी समय से आपने आजीवन उस रचनात्मक कार्यक्रम को सफल बनाने में ही अपना गौरव समझा और निष्ठापूर्वक उसी व्रत पर चलते हुए, देश की सेवा की। सन् १९३४ ई० के भीषण भूकम्प में आपकी पत्नी दीवार के नीचे दबकर मर गईं। ऐसी भयंकर दुर्घटना के बावजूद आप सेवा-कार्य में लगे रहे और कार्यकर्त्ताओं को जनता की सेवा में लगे रहने का आदेश देते रहे। आप अपना परिवार देखने तभी गये, जब सभी मुहल्लों का निरीक्षण-परीक्षण कर लिया। सन् १९४२ ई० के 'भारत छोड़ो' आन्दोलन में भी आपका उल्लेखनीय सहयोग रहा। आपको जेल की यातनाएँ सहनी पड़ी। 'कस्तूरबा-स्मारक न्यास' का काम भी आपके ही उत्साह से बिहार में सफल हुआ। 'भूदान-आन्दोलन' में भी आपका योगदान बड़ा प्रभावकारी सिद्ध हुआ। 'सेवापुरी-सम्मेलन' में आपने ही सन्त विनोबा भावे को बिहार में आने का निमन्त्रण दिया था। आपने अपनी सम्पत्ति के तीन हिस्से कर, एक हिस्सा अपने पुत्र को, एक हिस्सा अपनी पुत्री को और एक हिस्सा 'भूदान' को अर्पित कर दिया था। आपके ही उद्योग और प्रभाव से खादी-ग्रामोद्योग-संघ के कार्यकर्त्ताओं का समवेतन-सिद्धान्त कार्यान्वित हुआ, जिसके फलस्वरूप प्रत्येक कार्यकर्त्ता का वेतन प्रतिमास एक सौ रुपये हो गया। आप सेवा और तपस्या की मूर्त्ति तथा दीनबन्धु सन्त थे।

आपने 'भूदान' के माध्यम से साहित्य की भी सेवा की। आपकी रचनाएँ मुख्यतः 'भूदान' और 'खादी-आन्दोलन' से सम्बद्ध हैं। आपने वर्षों तक चरखा-संघ के मासिक मुखपत्र 'खादी-सेवक' के जन्मदाता और संचालक के रूप में कार्य-

१. आपके पूर्वजों ने भी सन् १८५७ ई० के विप्लव में सहयोग किया था, जिसकी कहानी बहुधा आपने सुनी थी। —दैनिक 'नवराष्ट्र' (पटना, ९ मई, १९६१ ई०)।

सम्पादन भी किया था। खादी के अर्थशास्त्र तथा उसकी उपयोगिता पर आपके अनेक महत्त्वपूर्ण निबन्ध प्रकाशित हुए हैं। आपके निबन्ध बहुधा 'अग्रवाल-सेवक', 'भूदान-यज्ञ', 'बिहार' आदि पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ करते थे। सन् १९५८ ई० की ६ मई को एक बजे रात में आपका स्वर्गारोहण हो गया।[1]

उदाहरण

(१)

चरखा-संघ की तरफ से जो खादी का काम हो रहा है, वह खास मकसद को निगाह में रखकर ही हो रहा है। पिछले २५ वर्षों में खादी के काम का तजुर्बा हासिल करते-करते खादी कार्यकर्त्ताओं का ख्याल तिजारत की तरफ ज्यादा चला गया था। इसलिये अब भी चर्खासंघ के काम की शकल ज्यादातर तिजारती है, गर्चे यह तय हो चुका है कि तिजारती कार्यों को मौजूदा हद से बढाना नहीं चाहिए और खादी के तालीमी कामों को ही बढ़ाना चाहिए। लेकिन आज खादी की बुनाई की समस्या कुछ ऐसी मुश्किल हो गयी है कि खादी की तिजारत की छोटी हद भी सिकुड़ते-सिकुड़ते छोटी ही होती जाती है। इस हालत से हम चाहे तो खूब फायदा उठा सकते हैं। हमने जब यह तय कर लिया है कि खादी क्रिया की तालीम का काम बढ़ाया जाये और जब खादी की एक मुख्य क्रिया के करनेवाले बुनकर नफे की लालच में खादी की बुनाई छोड़ रहे है तो हमारे लिए यह जरूरी हो पड़ा है कि खादी-कार्यकर्त्ता केवल कुशल सूतकार ही न रहें, बलिक कुशल बुनकर भी बन जायें।[2]

(२)

तौलडंडी के हिसाब जानने के पहले डंडी पर जो ताकत लगायी जाती है, उसका असर डंडी पर क्या पड़ता है, यह जान लेना जरूरी है।

---

१. दैनिक 'नवराष्ट्र' (मगलवार, ९ मई, सन् १९६१ ई०) मे प्रकाशित तथा श्रीस्वराज बिहारी-लिखित 'श्रीलक्ष्मीनारायण' शीर्षक संस्मरण।

२. 'खादी-जगत्', वर्धा, वर्ष ३, अक २४, मई, सन् १९४६ ई०, पृ० ४०८।

किसी लटकी हुई समान डंडी पर अगर कोई ताकत लगाई जाती है तो एक ही ताकत का असर डंडी के अलग-अलग बिन्दुओं पर अलग-अलग होता है। अगर तराजू की डंडी के सिरे पर एक सेर का वजन बांधा जाये तो डंडी वजन की तरफ झुक जायेगी। अगर एक सेर का वजन उसके उसी सिरे और डंडी के आधार बिन्दु (Fulcrum) के बीच में लटकाया जाये तो डंडी उस हद तक नही झुकेगी जितना कि उसके सिरे पर एक सेर का वजन डालने से वह झुकी थी। ठीक मध्य बिन्दु पर वजन लटकाने से डंडी बिल्कुल नहीं झुकेगी। मतलब यह कि डंडी पर बाहरी वजन का असर सिर्फ वजन पर ही निर्भर नही करता, बल्कि उसके आधार बिन्दु याने जहाँ पर डंडी लटकायी गयी है, उससे वजन की दूरी भी निर्भर करता है।[१]

★

लक्ष्मीनारायण सिन्हा

आप मुजफ्फरपुर-जिला के 'सुन्दरपुर' (शिवहर) नामक ग्राम के निवासी श्रीहीरालाल सिन्हा के पुत्र है। आपका जन्म सन् १८९५ ई० की १२ जनवरी को हुआ था।[२] आपकी प्राथमिक शिक्षा घर पर ही हुई। सन् १९१७ ई० में आपने आइ० ए० की परीक्षा पास की। उसके बाद आपकी नियुक्ति एक माध्यमिक विद्यालय के प्रधानाध्यापक-पद पर हुई। शिक्षक रहते हुए, सन् १९२० ई० के देशव्यापी असहयोग-आन्दोलन में आपने सक्रिय भाग लिया। सन् १९२८ ई० में आपने वकालत की परीक्षा में सफलता प्राप्त की। सन् १९३५ ई० में आपने 'ऊख की खेती' से देश-सेवा का कार्य प्रारम्भ किया। उसी समय से जीविकार्थ विद्यालय से त्याग-पत्र देकर आपने वकालत शुरू कर दी। वकालत करते हुए आपने ग्रामोद्योग और खादी के प्रचार का कार्य बड़ी लगन से किया। वकालत में व्यस्त रहते हुए आपने हिन्दी में कई पुस्तकें लिखी। आपके द्वारा लिखित पुस्तको में (१) 'चरखा-शास्त्र', (२) 'कपास की खेती'[३], (३) 'ऊख की खेती'[४] और

---

१. 'खादी-जगत्' (वही, वर्ष ३, अक २७, अगस्त, सन् १९४६ ई०), पृ० ५६६।

२ आपके द्वारा दिनाक २७ जून, , सन् १९५६ ई० को प्रेषित एव साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री के आधार पर। आपके परिचय-लेखन मे 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ६६२) में प्रकाशित सामग्री से भी सहायता ली गई है।

३. इसका प्रथम संस्करण सन् १९५० ई० मे प्रकाशित हुआ था। अबतक इसके दो-दो संस्करण हो चुके है।

४. यह पुस्तक पहली बार सन् १९३५ ई० मे प्रकाशित हुई थी।

४. 'साग-तरकारी की खेती'[१] नामक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। सम्प्रति, आप अपने गाँव में ही रहकर समाज-सेवा-कार्य में संलग्न हैं।

उदाहरण

(१)

हर मौसिम में तरह-तरह की तरकारियाँ पैदा होती है और उनके बोने वा रोपने का समय और तरीका भी अलग-अलग होता है। इसलिये उनके बोने वा रोपने में एक ही नियम लागू नही होता। लेकिन सब तरकारियों के लिए खेत की अच्छी जोताई, कोड़ाई और जो तरकारी उपजाना हो, उसके लायक उचित वजन में खाद देना जरूरी है। फिर भी, उनकी आबादी के बारे में आगे चलकर हर तरकारी के साथ विस्तारपूर्वक लिखा जायगा। आम तरह से सब भाजी और कुछ तरकारियों के बीज खेत में छाँटकर बो दिये जाते है और कुछ तरकारियों के बीज पहले बिड़ार (नरसरी) में गिराकर कुछ बड़े होने पर वे खेत में रोप दिये जाते हैं। कोई २ ऐसी भी तरकारी है, जो दोनो तरह से आबाद की जाती है। जिस बीज को पहले बिड़ार में बोना हो, उसके लिये जमीन को अच्छी तरह जोत-कोड़ कर और खाद देकर मिट्टी को खूब बारीक कर देना चाहिए। साथ-ही-साथ खेत में हाल (नमी) भी रहनी चाहिए, जिसके बल पर बीज उग सके।[२]

(२)

कपास की रूई के समान इसका बिनौला (बीज) भी कम उपयोगी नही है। इससे तेल, घी, साबुन, मक्खन बनाये जाते है। इसकी

---

१. इसका प्रथम सस्करण सन् १९४९ ई० मे प्रकाशित हुआ था। इसके भी अबतक दो सस्करण हो चुके है।

२. 'साग-तरकारी की खेती' (लक्ष्मीनारायण सिन्हा, सन् १९४९ ई०), पृ० २६।

खल्ली खेत के लिये और खासकर कपास के खेत के लिये बहुत ही फायदेमद खाद है। इसकी खल्ली दुधार मवेशियो को खिलाने से, वे बहुत दूध देती हैं। लेकिन ज्यादा नही खिलाना चाहिये। अढाई मन बिनौले से अट्ठारह सेर तेल निकलता है। यह औसत विदेशो का है। भारतवर्ष में इतना नही निकलता है; क्योकि इन्हे उतना दबाकर तेल नही निकाला जाता और इससे यहाँ भी १० सेर खल्ली मे प्रायः १ सेर तेल रह जाता है। बिनौले का तेल बहुत ही पुष्ट होता है। इसीसे वनस्पतियों का घी भी बनता है। इसके साफ तेल को दूध में मिलाकर मक्खन भी बनता है, जो असली मक्खन-सा होता है। इस तरह बिनौले भी बहुत काम में आते है।[१]

लालजी सहाय

आप मुँगेर-जिला के 'मेंहुस' (शेखपुरा) नामक स्थान के निवासी श्रीजगदेव सहायजी के पुत्र हैं।[२] आपका जन्म सन् १८९७ ई० के १३ दिसम्बर (पौष कृष्ण-पंचमी, सं० १९५४ वि०) को हुआ था। आपकी शिक्षा का आरम्भ सर्वप्रथम अपने गाँव की पाठशाला में हुआ। तदुपरान्त आप उर्दू के माध्यम से, 'मधेपुरा' (सहरसा) से, राजकीय छात्रवृत्ति के साथ उच्च प्राथमिक परीक्षा में उत्तीर्ण हुए। माध्यमिक शिक्षा ग्रहण करने के बाद आपने मुँगेर के श्रीदुर्गास्थान संस्कृत-विद्यालय से संस्कृत के व्याकरण, काव्य आदि विभिन्न अंगोपांगों का अध्ययन किया। मुँगेर में संस्कृत पढ़ते हुए आपने अपने पिता से घर पर ही अँगरेजी, गणित आदि विषयों का ज्ञान प्राप्त किया। आपने सन् १९१६-१७ ई० में संस्कृत-व्याकरण और काव्य में क्रमशः मध्यमा-परीक्षाएँ पास की। उसी समय अपने गाँव के सम्बन्ध में पुरातत्त्व-विषयक एक विवेचनात्मक निबन्ध संस्कृत में लिखकर आपने 'शारदा' नामक संस्कृत-पत्रिका में प्रकाशित करवाया, जिसका विद्वानों में बड़ा आदर हुआ था। उस वर्ष प्लेग से आक्रान्त होने के कारण आपके पिता अकस्मात् काल-कवलित हो गये। तबतक आपने मैट्रिक की परीक्षा भी पास नही की थी। पिता के निधन के बाद, स्वभावतः आपको अपनी पढ़ाई छोड़कर नौकरी

---

१ 'कपास की खेती' (लक्ष्मीनारायण सिन्हा, सन् १९५० ई०), पृ० ७४।

२. आपके द्वारा दिनाक २५ मई, सन् १९५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के आधार पर।

करनी पड़ी। नौकरी करते हुए आपने अपने अध्ययन एवं अध्यवसाय के बल पर क्रमशः मेट्रिक, आई० ए० और बी० ए० की परीक्षाएँ पास की। इन परीक्षाओं के अतिरिक्त आपने अखिलभारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग से 'हिन्दी-विशारद', कलकत्ता-संस्कृत-समिति से 'काव्यतीर्थ'; बिहारोत्कल-संस्कृत-समिति से 'साहित्य-शास्त्री' एवं पटना-विश्वविद्यालय से बी० ओ० एल० की परीक्षाएँ पास को।

आपने सर्वप्रथम मुँगेर जिला-बोर्ड द्वारा संचालित तेघड़ा तथा खड्गपुर के माध्यमिक विद्यालयों में शिक्षक के पद पर रहकर कार्य-सम्पादन किया। तदनन्तर खड्गपुर हाई स्कूल में कुछ दिनों तक सेवा करने के उपरान्त आप केशवपुर बिहारी मिड्ल स्कूल में प्रधानाध्यापक-पद पर प्रतिष्ठित हुए। पुनः आपने बी० ए० की परीक्षा पासकर बिहार-सरकार के शिक्षा-विभाग में 'अवर विद्यालय-निरीक्षक' के पद का कार्यभार सँभाला। आपकी यह नियुक्ति डिहरी-ऑन-सोन (शाहाबाद) में हुई थी। इन्हीं दिनों आपकी नियुक्ति आर० डी० ऐण्ड डी० जे० कॉलेज, मुँगेर में हो रही थी, किन्तु आपने उस स्थान में न जाकर दार्जिलिंग के राजकीय उच्चांगल-विद्यालय में प्रधान संस्कृताध्यापक का पद-भार ग्रहण किया। वहाँ २६ वर्षों तक रहकर आपने जीवन के अनेक उत्कृष्ट कार्य किये। सेण्ट पॉल्स यूरोपियन स्कूल और राजकीय डिग्री कॉलेज के प्राध्यापक-पद को भी आपने विभूषित किया।

दार्जिलिंग में रहकर आपने हिन्दी के विकास के लिए अनेक महत्त्वपूर्ण कार्य किये। यह पर्वतीय अंचल ही मुख्य रूप से राष्ट्रभाषा हिन्दी की सेवा के लिए आपका कार्य-क्षेत्र बना। आप ही की प्रेरणा तथा सतत प्रयत्न के फलस्वरूप इस जिले के यूरोपियन स्कूलों में एक अनिवार्य विषय के रूप में हिन्दी के अध्यापन की व्यवस्था की गई। सन् १९३१ ई० में आपके ही सत्प्रयत्न से दार्जिलिंग में एक छोटे-से हिन्दी-पुस्तकालय के रूप में 'हिमाचल-हिन्दी-भवन'[1] नामक संस्था की नीव डाली गई, जो पीछे चलकर राष्ट्रभाषा-प्रचार के प्रमुख केन्द्र के रूप में परिणत हो गई। इस भवन की कई शाखाएँ अद्यावधि हिन्दी-प्रचार के साथ-साथ समाज-सेवा में लगी हैं।

दार्जिलिंग में रहकर आपने विभिन्न अहिन्दी-भाषी व्यक्तियों को हिन्दी का ज्ञान कराया। उनके बीच राष्ट्रभाषा के प्रति रुचि एवं प्रेम उत्पन्न हुआ। सन् १९५३ ई० में, जब आप बंगाल-सरकार की सेवा से निवृत्त हो रहे थे, बिहार के तत्कालीन मुख्य सचिव श्रीललन प्रसाद सिंह ने आपकी सेवाओं से प्रभावित होकर आपको पुरुलिया (मानभूमि) में शिक्षोपाधीक्षक के पद पर प्रतिष्ठित किया। इस पद से प्रोन्नत होकर चाईबासा तथा धनबाद मे आपने कई वर्षों तक अपर शिक्षोपाधीक्षक का कार्य-सम्पादन किया। इस अवधि में आपने राज्य-सरकार द्वारा संचालित हिन्दी-प्रशिक्षण-केन्द्रों का समुचित विकास किया।

---

१ दार्जिलिंग मे 'हिन्दी-भवन' का एक अपना अलग पक्का भवन है, जिसका निर्माण लगभग ६ लाख रुपये की लागत से हुआ है। इसके निर्माण मे भारत, नेपाल, सिक्किम तथा अन्यान्य देशो से भी साहाय्य प्राप्त हुआ।

दार्जिलिंग के अतिरिक्त आपने अपने गाँव में भी शिक्षा-प्रसार के क्षेत्र में पूरे उत्साह के साथ काम किया। माहेश्वरी-पुस्तकालय, मेहस; मेहस मिड्ल स्कूल तथा 'मेहस उच्चाङ्गल विद्यालय इसके ज्वलंत प्रमाण हैं।

आपने संस्कृत, हिन्दी, बँगला, उर्दू और नेपाली-भाषाओं का यथेष्ट अध्ययन-मनन किया है। सुप्रसिद्ध इतिहासकार डॉ० यदुनाथ सरकार की प्रेरणा से आपने ऐतिहासिक पुरुष अमरसिंह थापा[1] के जीवन-चरित्र का हिन्दी-रूपान्तर कर हिन्दी-साहित्य के भाण्डार की पुष्टि में विशिष्ट योगदान किया। इन दिनों आप पटना के राजेन्द्रनगर-स्थित अपने आवास में, धार्मिक ग्रन्थों के अनुशीलन-मनन में, अपना शेष जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

उदाहरण

(१)

सिंह प्रताप शाह की मृत्यु होते ही बहादुर शाह बेतिया से काठमांडू लौट आये और शिशु रणबहादुर शाह के नायब बने। किन्तु शीघ्र ही रणबहादुर शाह की नायबी लेकर सिंह प्रताप शाह की रानी राजेन्द्रलक्ष्मी के साथ उनका विरोध हो गया। बहादुर शाह को कैद कर राजेन्द्रलक्ष्मी स्वयं नायब बन गयीं। फिर भी, राजगुरु गजराज मिश्र के कहने-सुनने से राजेन्द्रलक्ष्मी ने, नारी-सुलभ करुणा से प्रेरित हो, बहादुर शाह को जेल से मुक्त कर दिया। किन्तु बहादुर शाह ने राजेन्द्रलक्ष्मी को कैद कर तथा स्वयं रणबहादुर शाह का नायब बनकर इस उपकार का बदला चुकाया। रानी राजेन्द्रलक्ष्मो भी कोई साधारण स्त्री नहीं थी। इनपर राज्य के अधिकारियों का बहुत बड़ा विश्वास था और अपार श्रद्धा भी थी। अधिक संख्या में अधिकारियों को इनके पक्ष में देख बहादुर शाह इन्हें शीघ्र ही कैद से मुक्त करने के लिए बाध्य हुए। राजेन्द्रलक्ष्मी के स्वतन्त्र होने के कुछ समय बाद, इनके दल को शक्तिशाली देखकर

---

१. 'हिमाचल-हिन्दी-भवन', दार्जिलिंग से सन् १९५१ ई० मे प्रकाशित। "नेपाल के उज्ज्वल, पर रक्त-रंजित इतिहास मे 'अमरसिंह थापा' को वही स्थान प्राप्त है, जो भारत के इतिहास मे मेवाड़ के महाराणा प्रतापसिंह को।" उक्त सस्था से आपने हिन्दी की कई पुस्तिकाएँ प्रकाशित करवाई थीं, जिनमें प्रमुख ये हैं: (१) राष्ट्रनिर्माण मे हिन्दी का स्थान (ललिता प्रसाद सुकुल) तथा (२) हमारी राष्ट्रवाणी (गोपालसिंह नेपाली)।

बहादुर शाह नौ दो ग्यारह हुए और बेतिया आकर बस गये। इतना होने पर ही देवर-भौजाई का विरोध शान्त हुआ। यह गृह-कलह तीन वर्षों या उससे भी कुछ अधिक समय तक चला।[१]

(२)

संसारचन्द तथा रणजित सिंह के प्रति अमरसिंह थापा का क्रोध अभी तक शान्त नहीं हो पाया था। सतलुज के इस पार आकर टिकने के बाद ही वे कांगड़ा पर आक्रमण करने का विचार करने लगे। उन्होंने शीघ्र ही इस अँगरेजी इलाके के हाकिम कर्नल औक्टरलोनी के साथ लिखा-पढ़ी आरम्भ कर दी। उनका प्रस्ताव यह था कि अँगरेजों के साथ मिलकर सिन्ध नदी तक पंजाब जीत लिया जाय तथा जीता हुआ राज्य अँगरेजों और नेपालियों के बीच बाँट लिया जाय। पर इस समय कम्पनी की सरकार रणजित सिंह के साथ युद्ध करने के लिए तैयार न थी, नहीं तो सन् १८०९ ई० की सन्धि ही क्यों होती? पर रणजित सिंह पर क्रुद्ध अमरसिंह थापा ने इस बात की कुछ भी परवाह न की। उधर अँगरेजों के साथ अमरसिंह थापा के पत्र-व्यवहार करने का समाचार पा रणजित सिंह भी एक बार घबड़ा उठे और उन्होंने गवर्नर जेनरल के पास इस आशय का पत्र लिखा कि 'मुझे सतलुज पार कर पहाड में जाकर नेपालियों के साथ युद्ध करने की आज्ञा दी जाय।' इसके उत्तर में गवर्नर जेनरल ने सन् १८११ ई० में उन्हें यह लिखा कि आपको सतलुज पार कर नेपालियों के साथ युद्ध करने के लिए जाने की आवश्यकता नहीं है।[२]

---

१. 'अमरसिंह थापा' (मू० ले०—सूर्य्यविक्रम ज्ञवाली; अनुवादक—श्रीलालजी सहाय, सन् १९५१ ई०), पृ० ८-९।

२. 'अमरसिंह थापा' (वही), पृ० ५४-५५।

(अखौरी) वासुदेवनारायण सिन्हा

आप शाहाबाद-जिला के 'धमार' नामक ग्राम के निवासी श्रीअखौरी रामप्रकाश सिन्हा के सुपुत्र थे। आपका जन्म सं० १९४४ वि० को फाल्गुन कृष्ण-चतुर्दशी (११ फरवरी, सन् १८८८ ई०) को हुआ था।[1] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। तदनन्तर आपका नाम कॉलेजिएट स्कूल, पटना में लिखाया गया। सन् १९०३ ई० में आपने पटना कॉलेज से आई० ए० की परीक्षा पास की। उसके बाद कलकत्ता-विश्वविद्यालय के अन्तर्गत सेंट जेवियर्स कॉलेज में आपने शिक्षा पाई। सन् १९०९ ई० में आप पटना लॉ कॉलेज में प्रविष्ट हुए। कलकत्ता रहते हुए आपने 'अमृत-बाजार-पत्रिका' के सम्पादकीय विभाग में चार महीने तक 'सहकारी' का कार्यभार सँभाला। उन्हीं दिनों 'अरविन्द घोष' के 'वन्दे-मातरम्' में भी दो-तीन मास तक आपने 'सहकारी सम्पादक' के रूप में कार्य-सम्पादन किया। सन् १९१० ई० में आपने पटना से प्रकाशित होनेवाले अँगरेजी अर्द्धसाप्ताहिक 'बिहारी' का सम्पादन-कार्य प्रारम्भ किया। उसके बाद अँगरेजी की मासिक पत्रिका 'मॉडर्न रिव्यू' बहुत दिनों तक आपके ही सम्पादकत्व में प्रकाशित होती रही। सन् १९११ ई० में बिहार से एकमात्र पत्रकार-प्रतिनिधि के रूप में आप दिल्ली-दरबार में आमन्त्रित हुए। सन् १९१३ ई० में आपने 'बिहारी' का सम्पादन-कार्य छोड़कर प्रयाग से प्रकाशित होनेवाले अँगरेजी साप्ताहिक 'लीडर' के सहकारी सम्पादक का पदभार ग्रहण किया। उस पत्र के सम्पादक श्रीचिन्तामणि के अवकाश-काल में आपने ही करीब आठ माह तक सम्पादन-कार्य किया। सन् १९२३ ई० से सन् १९४४ ई० तक आपने बिहार-सरकार के अनुवाद-विभाग में अनुवादक का कार्यभार सँभाला। सन् १९५३ ई० में 'ज्योतिष-शास्त्र' नामक विषय पर लखनऊ-विश्वविद्यालय में आपका एक भाषण हुआ। आपकी गणना सफल ज्योतिषियों में होती थी। सन् १९५५ ई० में स्वामी शिवानन्दजी की 'योग-वेदान्त-युनिवर्सिटी' से 'मास्टर ऑफ फिलॉसोफी' और सन् १९५६ ई० में 'युनिवर्सिटी-फेलोशिप' की उपाधियाँ आपको क्रमशः प्राप्त हुईं। उसके पूर्व आपको 'ज्ञानभास्कर' की उपाधि भी प्राप्त थी। बहुत वर्षों तक 'अमृत-बाजार पत्रिका', 'इण्डियन क्रॉनिकल', 'बंगाली' (कलकत्ता), 'लीडर' और 'पायोनियर' (प्रयाग), 'हिन्दू' (मद्रास), 'बम्बई-क्रॉनिकल' (बम्बई) आदि पत्रों में आप बिहार की चिट्ठी लिखा करते थे। मुजफ्फरपुर से प्रकाशित होनेवाले 'बिहार स्टैण्डर्ड' में आप प्रतिसप्ताह सम्पादकीय अग्रलेख लिखा करते थे, जिसके लिए आपको पुरस्कार-स्वरूप केवल सात रुपये मिलते थे। आपने बिहार सहकारिता-संघ की मासिक पत्रिका 'गाँव' का सम्पादन भी बहुत दिनों तक किया था। आपने हिन्दी और अँगरेजी दोनों

---

१. आपके द्वारा दिनाक २७ जून और ३० जुलाई, सन् १९५६ ई० को प्रेषित एवं साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के आधार पर। आपके प्रस्तुत परिचय-लेखन मे उक्त सामग्री के अतिरिक्त 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ६५४) तथा 'बिहार अब्दकोश' (वही, पृ० ६८४) मे प्रकाशित सामग्री से भी सहायता ली गई है।

भाषाओं में बहुत-सारी पुस्तकें लिखी। अँगरेजी में आपने दस उपनिषदों का अनुवाद किया था, जिनमें छह उपनिषदों के अनुवाद मुद्रित एवं प्रकाशित हो चुके हैं। आपने वैष्णव-धर्म का इतिहास भी अँगरेजी में लिखा है। स्वामी शिवानन्दजी की एक जीवनी आपने अँगरेजी में 'द प्रोफेट ऑफ द न्यू एज' के नाम से लिखी है। इसी प्रकार, तुलसीदास का भी जीवन-परिचय अँगरेजी में 'पोएट, सेण्ट ऐण्ड सोशल-रिफॉर्मर' नाम से लिखकर स्वयं प्रकाशित करवाया है। सन् १६१६ ई० में आपने 'श्रीरूपकला : हिज लाइफ ऐण्ड टीचिंग्स' नामक पुस्तक की रचना कर खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुर, पटना से मुद्रित एवं प्रकाशित करवाई थी। सन १६५६-६० ई० में 'भगवान रूपकला ऐण्ड हिज मिशन' नामक पुस्तक, रूपकला-कुटीर, भगवान रोड, मीठापुर, पटना-१ से प्रकाशित हुई थी।[१]

हिन्दी में आपके द्वारा लिखित एक मौलिक उपन्यास 'रूपवती' नाम से सन् १६२० ई० में प्रकाशित हुआ। उसके बाद आपने 'श्रीरूपकलाजी : एक झाँकी' नामक जीवनी हिन्दी में लिखी थी। उपर्युक्त दोनो पुस्तकों का आपने अँगरेजी में भी अनुवाद कर दिया था। डॉ० सच्चिदानन्द सिन्हा की जीवनी आपने हिन्दी में लिखी है। सन १६६६ ई० की १ फरवरी को २ बजकर दस मिनट पर आप परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

धन्य है ऐसा परिवार, जिसमें किसी रामभक्त का जन्म हुआ। हमारे सरकार के पितामह तथा पिता तो परम भागवत थे। मुन्शी केवलकृष्ण आपके पितामह एक नील की कोठी में कर्म्मचारी थे। यह कोठी आलमचन्द्र-ग्राम में थी, जो प्रयाग से दस कोस पर है। आपके तीन पुत्र थे और समस्त परिवार रामभक्त थे। उनके मँझले पुत्र मुन्शी तपस्वीराम अपने समय के अच्छे लेखक थे। उनकी उर्दू में लिखी हुई पुस्तकें 'वाकया देहली' तथा 'रुमूज मेहरेवफा' बड़े चाव से पढ़ी जाती थीं। उनकी हिन्दी की पुस्तकें श्रीअयोध्या-माहात्म्य, कथामाला, श्रीभागवतसूची, प्रेम-गंगतरंग और सीताराम-चरण-चिह्न हैं। प्रेम-गंगतरंग के विषय मे हरिश्चन्द्र ने लिखा था—'प्राञ्जल भाषा में लिखी गई है। भक्ति का सर्वस्व है। ग्रन्थकार

---

१. इनके अतिरिक्त आपने श्रीगोखबोले साहब, सर अली इमाम, स्वामी शिवानन्द, श्रीहसन इमाम, रायबहादुर कृष्णबहादुर (कौंसिलर) आदि की जीवनियाँ भी लिखी है।

की अनन्य भक्ति ग्रन्थ से दृष्टिगोचर होती है।' सर जार्ज ग्रियर्सन ने भी इस किताब की अच्छी आलोचना की थी।[1]

(२)

श्रीरूपकलाजी एक बड़े विद्वान् और अच्छे लेखक थे। आप एक उच्च सरकारी पद पर रह चुके थे। आपने यथाशक्ति कितनों को आर्थिक सहायता दी थी। आप किसी नये धर्म के प्रचारक नहीं थे। संतान किसी को देने का दावा नहीं रखते थे। कोई विशेष शक्ति अपने में नहीं बतलाते थे और न आप किसी को शिष्य ही बनाया करते थे। किन्तु, आज भी कितने है, जो उन्हें अपना गुरुदेव मानते है, उनके उपकार को सदा गाते रहते है और उनके नाम पर अपना सिर झुकाते हैं। इसका कारण केवल एक ही है और वह है श्रीरूपकलाजी का प्रेम। वह परमात्मा को प्रियतम कहकर पुकारते थे और मनुष्य-मात्र को प्रेम की दृष्टि से देखते थे। उनका प्रेमभरा हृदय किसी दीन को कर जोड़े नहीं देख सकता था। भक्ति के पथ मे चलनेवाले कृपापात्र को वे लौकिक सहायता भी बराबर प्रदान किया करते थे। श्रीसीताराम से प्रार्थना कर वे अपने सेवक की सदा रुचि रखते थे। आज भी कितने है, जो अपनी धार्मिक तथा सांसारिक उन्नति के लिए श्रीरूपकलाजी के पूर्णरूप से आभारी है।[2]

वासुदेव पाठक 'कवि'

आप गया-जिला के 'इस्माइलपुर' (खिदरसराय) नामक स्थान के 'पं० गदाधर पाठक' के सुपुत्र थे। आपका जन्म सं० १९३० वि० (सन् १८७३ ई०) की आषाढ़ शुक्ल-चतुर्दशी (बुधवार) को हुआ था।[3] सात वर्ष की आयु से एक ग्राम-पाठशाला द्वारा

---

१ 'श्रीरूपकलाजी : एक झाँकी' (श्रीअखौरी वासुदेवनारायण सिन्हा, प्रकाशन-काल अप्राप्य), पृ० ६-७।

२. वही, पृ० २६

३. 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० २७०-७१।

आपकी शिक्षा का श्रीगणेश हुआ। तत्पश्चात् आपने संस्कृत का अध्ययन किया।[1] इसी बीच गया के विख्यात कवि श्रीरामलाल भैया के सत्संग से आपके हृदय में हिन्दी में काव्य-रचना की अभिरुचि उत्पन्न हुई और पं० विश्वनाथ 'कविजी' से आपने विधिवत् काव्य-रचना-सम्बन्धी निर्देश लेना आरम्भ कर दिया। साथ-साथ साहित्य का अध्ययन भी चलता रहा। धीरे-धीरे अध्ययन समाप्त कर आप अपनी पूर्त्तियाँ पत्रिकाओं में भेजने लगे। आगे चलकर आप ब्रजभाषा-काव्य-साहित्य के उद्भट विद्वान्, भावुक और प्रतिभाशाली कवि हुए। कविवर पं० पद्मसिंह शर्मा आपकी कविताओं के विशेष प्रशंसक थे। बिहार के बनैली, श्रीनगर (पूर्णिया), डुमराँव, हथुआ, गिद्धौर आदि रजवाड़ों में भी आपका विशेष सम्मान था। उपर्युक्त दरबारों की साहित्यिक गोष्ठियों में आपने कविता-पाठ कर अपनी विद्वत्ता का अपूर्व परिचय दिया था, जिसके उपलक्ष्य में आपको पर्याप्त पुरस्कार भी मिले थे।

आपके द्वारा लिखित अधस्तन नौ पुस्तकों में केवल एक 'गीता-रत्नावली' हिन्दी पुस्तक एजेन्सी, कलकत्ता से प्रकाशित है। आपकी अप्रकाशित पुस्तकों के नाम इस प्रकार हैं—(१) अनङ्गप्रिया-नायिका-भेद, (२) विद्याभूषण-अलंकार, (३) बिहार-भास्कर[2], (४) गीता-रत्नावली, (५) कन्हैया कुंज-विहार, (६) भक्ति-शतक,[3] (७) राधा-चन्द्रिका, (८) अन्योक्ति-लतिका और (९) साहित्य-शृंगार[4]। इनके अतिरिक्त आपकी रचनाएँ 'श्रीविद्या', 'समस्यापूर्त्ति' आदि पत्रिकाओं में यथावसर प्रकाशित होती रही हैं। आपकी रचना का केवल एक ही उदाहरण हमें प्राप्त हो सका।

उदाहरण

झपटत कीर बार-बार लखि ओठन को,
चोचन चलावत चकोर परगट में।
त्योंही भौंर भीर वीर भावरी भरत रहै,
चहुँओर तन पै सुगन्ध की लपट में।

---

१. संस्कृत के अध्ययन में आपके अतिरिक्त आपके परवर्त्ती तीनों पुत्रों—क्रमशः श्रीमथुरा पाठक, श्रीजगन्नाथ पाठक और श्रीलखनलाल पाठक—ने संस्कृत का विस्तृत अध्ययन किया था। ये तीनों संस्कृत के पूर्ण पण्डित थे।

२ 'बिहारी-सतसई' का पद्यात्मक अनुवाद। इसपर सेठ ज्वाला प्रसादजी ने ५०० रुपये का पुरस्कार दिया था।

३ श्रीरामचन्द्रजी के गुणानुवाद पर सौ कविताओं का संग्रह। इसपर सेठ मोतीरामजी ने आपको १०० रुपये पुरस्कार-स्वरूप दिये थे।

४. नायिका-भेद।

वासुदेव कहैं नेक मानत न मोरै मोहिं
अरुझै परत मयूर लट-लट में।
काहू के कहे न जैहो न्हायवे को कल्हि
राम की दोहाई भूलि यमुना के तट में॥[१]

✽

विक्रमादित्य श्रीवास्तव 'आदित्य'

आप शाहाबाद-जिला के 'महिला' (इटाढ़ी) नामक ग्राम के श्रीनन्दकिशोर प्रसाद श्रीवास्तव के सुपुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९५४ वि० (सन् १८९२ ई०) की आश्विन शुक्ल-चतुर्दशी (शनिवार) को हुआ था।[२] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। तदनन्तर, आपने ८वीं श्रेणी तक अँगरेजी की शिक्षा पाई। उसके बाद, आपने 'नॉर्मल' की परीक्षा पास की। नॉर्मल तक पढने के कारण आपकी हिन्दी अच्छी हो गई। सन् १९१३ ई० में आपके पिता का देहान्त हो गया। अतः अध्ययन का क्रम आगे नही बढ़ सका। सन् १९१८ ई० से ही आपकी रचनाएँ प्रकाश में आने लगी थी। आपके द्वारा लिखित रचनाएँ हिन्दी की 'देश', 'कर्मवीर', 'प्रताप', 'आर्य-महिला', 'स्त्री-दर्पण', 'विश्वमित्र' आदि पत्र-पत्रिकाओं में यथावसर प्रकाशित होती रहती थी। इनके अतिरिक्त आपने हिन्दी में 'कुँअरसिंह',[३] 'अमरसिंह',[४] 'पंचरोग'[५] आदि पुस्तकों की भी रचना की थी, जो अद्यावधि अप्रकाशित ही हैं। आपकी रचनाएँ देशप्रेम, समाज-सेवा तथा धार्मिक भावनाओ से ओत-प्रोत हैं। सम्प्रति, आप घर पर ही जीवन-यापन कर रहे हैं।

उदाहरण

(१)

गन और गोलियाँ हैं मूर्च्छित मैदान पड़ी,
चर्खा का चक्र सारा जगत हिलाया है।
बड़े-बड़े सेनापति हाथ मलते है बैठ,
उनके दिमाग में न कोई यत्न आया है।

---

१. 'श्रीविद्या' (भाग ६, अक १-२, ज्येष्ठ-आषाढ़, स० १९७९ वि०, जून-जुलाई, सन् १९२२ ई०)। श्रीरामनारायण शास्त्री (क्षेत्रीय अनुसन्धान-पदाधिकारी, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद, पटना-४) से प्राप्त।

२. आपके द्वारा दिनाक २४ फरवरी, सन् १९५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

३. काव्य-रचना।

४. कहानियो का संग्रह।

कर्मचन्द मोहन में तेज कितना है भरा,
देख उसे हिंसासुर अधम थर्राया है ।
भारत को कौन कहे जग की विभूति हैं ये,
'आदित' समान तेज चारों ओर छाया है ।[1]

(२)

तड़क-तड़क उफ ! तड़ित तड़ाका करे,
चमक-चमक चारु चक्षु चमकावेना ।
मोद मदमाते मग मण्डूक मचावें शोर,
मोह मन मध्य मेरे मदन उमगावेना ।
पपीहा पुकारे पीर पावड़ा पसारे उर,
पीड़ा-परिदान-पत्र प्रीतम पठावेना ।
बालम विदेश वास 'आदित' विलोकी विज्जु,
बार-वीर बार-बार विरह बढ़ावेना ॥[2]

(३)

सीता साथ कनक-भवन आप बैठे राम !
भाग्य-बल पाके आज दर्श तव पाया हूँ ।
नीचों से नीच अति अधमों से अधम मैं हूँ,
काम क्रोध लोभ की मैं गाँठ बाँध लाया हूँ ।
अवधविहारी बस विनय हमारी यही,
लीजिये सौगात मेरी, तेरे घर आया हूँ ।
'आदित' उबारो कुछ और न विचारो नाथ,
भिक्षुक तुम्हारो, शीश चरण झुकाया हूँ ।[3]

---

१ आपसे प्राप्त सामग्री से ।

२. वही ।

३. वही ।

(४)

कालीदह जाके निज गेंद को डुबाके और,
नाग को जगा के जिन नाच किये बाँके है।
शत्रु जो अघा के, बका के पूतना के प्रबल,
राधे हियरा के राके बाँके रूप जाके है।
लाल यशुदा के कहलाके मथुरा के बीच,
बदन दबाके कुबजा के प्रेम छाके है।
'आदित' की रक्षा करें वही कृष्ण वंशीधर,
पति कमला के हैं जो स्वामी वसुधा के है ।।[१]

(५)

पर्वत प्रदेश से झरने का झर-झर कर नीचे गिरना,
मोती-कण जल का बनकर के और वायु में मिलना,
रात चान्दनी, गन्ध सुमन को लूट समीर बहावे,
जलविहार पक्षी का सर में सरिता ध्वनि हर्षावे,
मुसकाना सरसिज का हिय मे भर देता रसधार,
कितना सुखकर और रम्य है दुनिया का यह कार ।।[२]

(६)

स्वर्ण-सिकड़ी से सुसज्जित पैर तेरा कीर है,
और पिंजड़े में पड़ा किशमिश चिरौंजी खीर है,
कौनसा दुख है तुझे, झरता नयन से नीर है,
सर्वसुख तो देख पड़ता, रो रहा क्यों कीर है ?
मेरे लिये यह स्वर्ण सिकड़ी भोथरी शमशीर है,
खीर किशमिश यह चिरौंजी तेज फरसा तीर है।

---

१. आपसे ही प्राप्त।

२. वही।

परतंत्रता से बढ़ कहो उफ ! कौन सा वह पीर है,
कहना पड़ेगा और 'आदित' रो रहा क्यों कीर है ?[1]

ब्रजभूषण त्रिपाठी

आप मुजफ्फरपुर-जिला के 'अहियापुर' (पो० करनौल) नामक ग्राम के निवासी, हिन्दी-संस्कृत के विद्वान्, संगीताचार्य पं० दुर्बल त्रिपाठी के सुपुत्र थे। आपका जन्म सं० १९१९ वि० (सन् १८६२ ई०) की कार्त्तिक शुक्ल-पंचमी (गुरुवार) को हुआ था।[2] दीनता के कारण आपकी शिक्षा बहुत बाद आरम्भ हुई। लगभग २० वर्ष की आयु में आप ज्यौतिष-शास्त्र का अध्ययन करने काशी चले गये। काशी में रहते हुए आपने वहाँ पं० जीवानन्द शर्मा से असीघाट-स्थित गोस्वामी तुलसीदास के मन्दिर में ज्यौतिष की शिक्षा प्राप्त की। आगे चलकर आपको 'ज्यौतिषाचार्य', 'ज्यौतिषकलाधीश' आदि उपाधियाँ प्राप्त हुईं। सं० १९७३ वि० में अयोध्या के महात्माओं की ओर से आपको 'मानस-मराल' की उपाधि प्राप्त हुई। उसके पूर्व सं० १९५८ वि० में आप मधुवन-नरेश के दरबार में राज पण्डित के रूप में नियुक्त हुए थे। वहाँ रहकर, अपनी ज्यौतिष-विद्या के कारण आप काशी-नरेश के सम्पर्क में आये। आपके जीवन का अधिकांश समय राजा-महाराजाओं के सत्संग में व्यतीत हुआ।

असहयोग-आन्दोलन के समय 'चर्खा-शतक'[3] इत्यादि अनेक स्फुट हिन्दी-कविताओं की रचना कर आपने काँगरेस की सेवा की। जब आप ३२ वर्ष के हुए, तब आपने हिन्दी में लिखना आरम्भ किया। आपके द्वारा लिखित दो पुस्तकाकार रचनाओं के नाम इस प्रकार हैं—(१) मानस-पूर्वपक्ष का उत्तरपक्ष[4] और (२) बजरंग-पचीसी।[5] आप सं० १९८१ वि० की माघ शुक्ल-पंचमी (गुरुवार) को परलोकगामी हुए।

---

१. आपसे ही प्राप्त।

२. प० श्रीरामरत्न त्रिपाठी (अहियापुर, मुजफ्फरपुर) द्वारा दिनाक ८ फरवरी, सन् १९५७ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

३. इस शतक का पहला दोहा इस प्रकार है—

चर्खा चर्खा होय रहा, चर्खा है एक योग।
चर्खा सुनि चर्खा भये, सबै बिदेशी लोग॥

४. प० घनश्याम त्रिवेदी की 'मानस पूर्वपक्षावली' में उठाई गई शकाओ के समाधान के लिए आपने 'उत्तरपक्ष-दोहावली' की रचना की। यह पुस्तक स० १९७८ वि० (२७५ पृष्ठ) में मुजफ्फरपुर के विजय प्रेस से प्रकाशित हुई थी।

५. इसकी रचना आपने अपने पुत्र (पं० रामरत्न त्रिपाठी)) के प्लेग-रोग से ग्रसित हो जाने पर की थी। इसका प्रकाशन खड्गविलास प्रेस, पटना से हुआ था।

विजयानन्द त्रिपाठी 'श्रीकवि'

आप शाहाबाद-जिला के 'बेलौटी' (बिहिया) नामक ग्राम के पं० महादेव त्रिपाठी[१] के सुपुत्र थे। आपका जन्म सं० १९१३ वि० (सन् १८५६ ई०) की पौष शुक्ल-प्रतिपदा (रविवार) को हुआ था[२]। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। आगे चलकर आपने अपने पिता से ही 'सारस्वत चन्द्रिका', 'सिद्धान्त-कौमुदी', 'रघुवंश', 'शिशुपाल-वध' आदि ग्रन्थों का अध्ययन किया। आपने अपने घर पर जो शिक्षा पाई, उसी के परिणामस्वरूप आपमें काशी जाकर अध्ययन करने की पूर्ण क्षमता उत्पन्न हो गई। लगभग १२ वर्ष की अवस्था में आप काशी के क्वीन्स कॉलेज (संस्कृत-महाविद्यालय) में प्रविष्ट हुए। वहाँ तेरह वर्षों तक अध्ययन करने के उपरान्त संस्कृत-वाङ्मय के अनेक विषयों का सांगोपाग ज्ञान प्राप्त कर आप पूर्ण पण्डित हो गये। व्याकरण, साहित्य और दर्शन-शास्त्र में आपकी अच्छी गति हो गई। अध्ययन-काल में आपने अनेक पुरस्कार तो प्राप्त किये ही, 'विद्यारत्न' की उपाधि से भी आप अलंकृत हुए। अध्ययनोपरान्त सन् १९३५ ई० में आप 'बड़हर' महारानी के दरबार (काशी) में 'दानाध्यक्ष' के पद पर प्रतिष्ठित हुए। उसी समय आप काशी ब्राह्मण-सभा के प्रधान मन्त्री भी चुने गये। प्रधान मंत्री होने के नाते आपको काशी के प्रसिद्ध 'राम-मन्दिर' वाले विवाद में पड़कर लगभग १५ वर्षों तक 'कुलहड़िया' में अज्ञातवास करना पड़ा। उसके बाद 'हनीफ' नामक एक गुप्तचर के बतलाने पर आप कुछ दिनों तक जेल में भी रहे। जेल से निकलने के बाद आप पहले बी० एन० कॉलेजिएट स्कूल के प्रधान संस्कृत-अध्यापक और बाद में बी० एन० कॉलेज के संस्कृत-विभाग के प्राध्यापक-पद पर प्रतिष्ठित हुए। आपका व्यक्तित्व बडा सरल एवं उदार था। आपके निवास-स्थान पर संस्कृत के विद्यार्थियो की भीड़ लगी रहती थी। आपकी गणना भाषणकला-प्रवीण व्यक्तियो एवं संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डितों में होती थी। आपकी संस्कृत-कविताओं का एक संग्रह 'अन्योक्ति-मुक्तावली' के नाम से 'बिहार-बन्धु' में धारावाहिक रूप से प्रकाशित हुआ था। आपके द्वारा लिखित 'नीति-मुक्तावली' संस्कृत-पत्रिका 'शारदा' में क्रमश. प्रकाशित हुई थी। आपकी स्फुट संस्कृत-रचनाएँ

---

१. ये एक बहुभाषा-भाषी और सस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् थे। आपके दो छोटे भाइयो में एक पं० शिवनन्दन त्रिपाठी (डॉ० नगेन्द्रपति त्रिपाठी के पिता) ने 'साहित्य-सरोज' के नाम से साहित्य का निर्माण किया था और कुछ समय तक 'बिहार-बन्धु' का सम्पादन एव उसका प्रकाशन भी किया था। दूसरे, प० हरिनन्दन त्रिपाठी ज्यौतिष-शास्त्र के प्रकाण्ड विद्वान् थे।—देखिए, 'कलम-शिल्पी' (श्रीउमाशकर, सन् १९६१ ई०), पृ० ४२ और 'छात्रसखा' (मासिक, वर्ष ४, अक १, अक्टूबर, सन् १९६८ ई०), पृ० १३।

२. देखिए—'सरस्वती' (मासिक, सितम्बर, सन् १९१७ ई०, भाग १८, सख्या ३, खंड २), पृ० १३—१६। आपके प्रस्तुत परिचय-लेखन में 'कलम -शिल्पी' (वही), 'छात्रसखा' (वही), 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ६४७-४८), 'हरिऔध, अभिनन्दन-ग्रन्थ' (वही), पृ० ५२५ तथा पं० रामदहिन मिश्र (हिन्दुस्तानी प्रेस, पटना-४) द्वारा प्रेषित सामग्री से भी सहायता ली गई है।

'संस्कृत-चन्द्रिका' में मुख्यत: प्रकाशित हुआ करती थीं। आपने लाला श्रीनिवास दास-कृत 'रणधीर-प्रेम-मोहिनी' नामक नाटक का सस्कृतानुवाद भी किया था। बिहार में संस्कृत-हिन्दी पाठ्य-पुस्तकों के प्रणयन की दिशा में भी आपका महत्त्वपूर्ण योगदान था।

आपने अनेक संस्कृत एवं बँगला-ग्रन्थों का अनुवाद-कार्य भी किया। आपके 'महामोह-विद्रावण' नामक संस्कृत-ग्रन्थ तथा 'सच्चा सपना' नामक एक बँगला ग्रन्थ का हिन्दी-रूपान्तर, जो भारत-जीवन प्रेस से मुद्रित हुआ था, की काफी चर्चा रही। आपने 'रत्नावली नाटिका' का भी पद्यमय अनुवाद पूरा किया था।[१] इसी प्रकार, संस्कृत के 'विक्रमोर्वशीयम्', 'मालविकाग्निमित्रम्' एवं 'प्रियदर्शिका' नामक पुस्तकों का भी गद्य-पद्यानुवाद आपने किया। आपके द्वारा लिखित 'भारतीय इतिहास-पञ्जिका' नामक एक पुस्तक बड़ी ही प्रशस्त हुई। आपने 'मेघदूत' का समवृत्त एवं समश्लोकी हिन्दी-अनुवाद अपने जीवन की तुरीयावस्था में किया था।[२]

आपका हिन्दी प्रेम अध्ययन काल से ही परिलक्षित हो गया था। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र उन दिनों साहित्य-चर्चा के माध्यम से काशी को मधुर वातावरण दे चुके थे। गोष्ठियाँ और साहित्यिक सभाएँ वहाँ बहुधा हुआ करती थी। आप उन सबमें भाग लिया करते थे। इस कारण अच्छे से-अच्छे साहित्यकारों एवं प्रतिष्ठित लोगों से आपका परिचय अनायास हो गया। इनमें पं० रामकृष्ण शास्त्री, पं० रमाशंकर व्यास, पं० जयदेव मिश्र आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेख्य हैं। बड़हर-दरबार में रहते हुए, तत्कालीन प्रतिष्ठित व्यक्ति बाबू रामकृष्ण वर्मा के साहाय्य से आपने बहुत-से प्राचीन हिन्दी-ग्रन्थों का प्रकाशन किया। साथ ही, 'भारत-जीवन'[३] नामक एक साप्ताहिक पत्र भी प्रकाश में आया, जिसके आप नियमित लेखक रहे। पटना में आयोजित अखिलभारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के दसवें अधिवेशन के स्वागताध्यक्ष आप ही थे।

हिन्दी में आपके दो उपन्यास[४] आरम्भ-काल में ही 'बिहार-बन्धु' में क्रमश: प्रकाशित हो चुके थे। आगे चलकर आपने महाअंधेर नगरी'[५] नामक एक प्रहसन लिखा, जिसकी खूब प्रशंसा हुई। आपकी स्फुट हिन्दी-गद्य-पद्य-रचनाएँ 'बिहार-बन्धु',

---

१. इसके प्रस्तावना-भाग का गद्यानुवाद बाबू भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने किया था।

२. इसके आरम्भिक बावन अकों मे आपने छप्पय-छन्द मे कविता लिखी थी। बाद में भारतेन्दु बाबू लिखने लगे।

३ 'भारत-जीवन' के अतिरिक्त आप सस्कृत-हिन्दी-मासिक 'उद्योग' के भी बहुत वर्षों तक सम्पादक रहे।

४ वे दोनो उपन्यास रूसी-भाषा के उपन्यासो पर आधारित थे।

५ इस नाटक की रचना आपने भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र-लिखित प्रहसन 'अंधेर नगरी' पर, उस समय भारत-जीवन प्रेस और खड्गविलास प्रेस के बीच चल रहे मुकदमे से प्रेरित होकर की थी।

'सरस्वती', 'उचित वक्ता', 'सारसुधा-निधि', 'कविवचन-सुधा', 'धर्म-दिवाकर[1]', 'वैष्णव-तोषिणी', 'हिन्दी-प्रदीप', 'मनोरंजन', 'पीयूष-प्रवाह' आदि पत्रिकाओं में बराबर प्रकाशित हुआ करती थी। आपकी काव्य-रचनाएँ खड़ीबोली और ब्रजभाषा में मिलती हैं। इन दोनों भाषाओं पर आपका समान अधिकार था। अपने जीवन के अन्तिम दिनों में आप 'प्रेम-साम्राज्यादर्श' नामक एक पुस्तक की रचना कर रहे थे जो पूरी न हो सकी। आप सं० १६८२ वि० (सन् १६२६ ई०) में, सत्तर वर्ष की आयु में परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

आर्य्यलोग पहले उत्तरी ध्रुव के पास मेरुप्रदेश में रहते थे। वहाँ देवताओं के एक दिन और रात का वर्ष प्रचलित था, सदा वसन्त ऋतु रहती थी, न शीत की, न उष्ण की बाधा थी, वहाँ बड़े सुख से आर्य्यलोग निवास करते थे। दैवी शक्ति-सम्पन्न बड़े-बड़े उग्रतपस्वी ऋषियों में वही वेद का प्रादुर्भाव हुआ। वे लोग वैदिक याग करते, आर्य देवताओं की स्तुति करते और वहाँ के प्राकृतिक मनोहर दृश्यों से आनन्दित हो, बहुत दिनों तक वहीं निवास करते रहे।

किसी समय मेरुप्रदेश में बरफ का एक बड़ा भारी तूफान आया। जब वह मनुष्यों के रहने योग्य न रहा, तो आर्य्यलोग दक्षिण की ओर चले, अनेक पहाड़ और नदी आदि को लाँघते और बीच की अनार्य्य जातियों को जीतते वे चारों ओर फैल गये। उनमें से कुछ लोग हिमालय को लाँघ पश्चिमी और उत्तरी भारत में आये और वहाँ के अनार्य्य निवासियों को जीतकर अपना दास बना, वहाँ सभ्यता का प्रचार पहले पहल उनलोगों ने किया।[1]

(२)

कांचुकीय—जय हो महराज की। हमारे महाराज दर्शक ने आपको कहा है कि आपके मन्त्री रुमण्वान बड़ी भारी सेना लेकर आरुणि को मारने के लिए चल पड़े हैं। मेरी भी हयदल, गजदल,

रथदल और पैदल चारों तरह की सेना सजधज कर तैयार हो गयी है। इससे आप भी अब तैयार हो जायँ और भी—आपके शत्रुओं में भेद बीज बो दिया गया है। जो पुरवासी आपके गुणों से आपके वशीभूत हैं उन्हें तसल्ली दे दी गयी है। जो सेना आपके पीछे-पीछे जायगी उसका भी प्रबन्ध कर दिया गया है। इस प्रकार शत्रु-संहार के लिए जो जो आवश्यक कर्त्तव्य है उन्हें कर दिया गया है। यहाँ तक कि मेरी सेना गंगा पार कर चुकी है। आप समझ रक्खें कि वत्सदेश भी आपके हाथ में ही है।

राजा—अच्छा। मैं तैयार ही हो गया। क्रूर बड़े-बड़े सर्पों के समान हाथियों और घोड़ों से भरे हुए तथा चलाये हुए बाण रूपी लहरों से उमड़े हुए महासमुद्र के सदृश युद्ध में पहुँच कर मैं मेरे राज्यहरण करनेवाले आरुणि को जरूर मारूँगा।[1]

(३)

पाद प्रहार सो जाइ पताल न भूमि सबै तनु बोझ के मारे।
हाथ नचाइबे सों नभ में इत के उत टूटि परैं नहिं तारे॥
देखन सों जरि जाहिं न लोक न खोलत नैन कृपा उरधारे।
यों थल के बिनु कष्ट सों नाचत शर्व हरौ दुख सर्व तुम्हारे॥[2]

(४)

सम्भु के लालची लोचन सामुहे आईं उमा गुनि औसर प्यार सों।
सीस पै देबै को एड़ी उठाय लफी कई बार नई कुचभार सों॥

---

१ 'स्वप्नवासवदत्तम्' का हिन्दी-अनुवाद, (अनु० विजयानन्द त्रिपाठो 'श्रीकवि'), स० १९८२ वि०, पृ० ३६।

२ स्व० आचार्य शिवपूजन सहायजी द्वारा दिनाक २८ जनवरी, सन् १९४४ ई० को प्रदत्त और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री से।

मूल सस्कृत-श्लोक . पादस्याविर्भवन्तीमवनतिमवने रक्षतः स्वैरपातैः
सकोचेनैव दोष्णा मुहुरभिनयतः सर्वलोकातिगानाम्।
दृष्टिं लक्ष्येषु नोग्रा ज्वलनकणमुच बध्नतो दाहभीते-
रित्याधारानुरोधात् त्रिपुरविजयिनः पातु वो दुःखनृत्यम्॥

देखि लजानी कँपो पुलकी औ पसीजी सकी बिखरी न सँभार सों ।
बीचहिं छाड़ि दई सुभ अंजलि हो सब ही जग को सुखसार सों ॥[१]

(५)

जो नर सुख की करत कामना,
अरु तेहि लगि सौ सौ व्यापार,
ताको वह सब विषयवासना,
तजि दीबो हो भलो विचार ।
सुनि सुकदेव यथारथ कहिगे,
जो होवै जन-पूरन-काम ।
अरु जो त्यक्तकाम को दुहुँ में,
भलो वही जो हो निष्काम ॥
है दुष्पूर वासना तेहिकर,
कबहूँ भरत न पेट भण्डार ।
अस को है जगवीर बाँकुरो,
जो तेहिको भरि पावै पार ॥
पात-पात करि छान चुके जो,
यह सारा भूगोल खगोल,
वे भी यहि पापिन के मारे,
खाक छानते डावाँडोल ॥
हे मन ! तू था बना लोभ का,
अबलों जो बेदाम गुलाम ।

---

१. वही । मूल सस्कृत-श्लोक :

पादाग्रस्थितया मुहुं' स्तनभरेणानीतया नम्रतां
शम्भो' सस्पृहलोचनत्रयपथ यान्त्या तदाराधने
ह्रीमत्या शिरसीहित' सपुलकस्वेदोदगमोत्कम्पया
विश्लिष्यन्कुसुमाञ्जलिर्गिरिजया क्षिप्तोऽन्तरे पातु व' ॥

तासों आज मिला छुटकारा,
अब तू जरा लहै आराम ॥[१]

★

विपिनबिहारी वर्मा

आप चम्पारन-जिला के 'शिकारपुर' नामक ग्राम के निवासी श्रीआशाप्रसाद वर्मा के पुत्र हैं। आपका जन्म सन् १८९२ ई० की २६ फरवरी को हुआ था।[१] आपकी आरम्भिक शिक्षा 'बेतिया' (चम्पारन) में हुई। तदनन्तर आपने 'बार-ऐट-लॉ' तक की शिक्षा प्राप्त की। शिक्षा-प्राप्ति के बाद आपने महात्मा गांधी द्वारा चलाये गये देश-विश्रुत 'चम्पारन-सत्याग्रह' में तन-मन-धन लगाकर साथ दिया। कुछ ही वर्ष बाद आप 'चम्पारन-जिला-बोर्ड' के चेयरमैन के पद पर प्रतिष्ठित हुए। वर्षों तक आप बेतिया-राज के 'प्रबन्धक' के पद पर आसीन रहे। आपने राष्ट्र और समाज की सेवा में भी कम समय नही लगाया। कई वर्षों तक आप बिहार-प्रान्तीय काँगरेस-कमिटी के अध्यक्ष एवं अखिलभारतीय काँगरेस-कमिटी के सदस्य रहे। राजनीतिक कारणों से कई बार आपने जेल की यातनाएँ भी सहीं। अनेक वर्षों तक आप लोक-सभा और राज्य-सभा के सदस्य रहे। बेतिया-राज के 'प्रबन्धक'-पद पर कार्य करते हुए ही आपने कई कवि-सम्मेलनो का आयोजन किया था, जिससे आपका हिन्दी-प्रेम प्रकट हुआ। आपके ही अदम्य उत्साह और परिश्रम के फलस्वरूप बेतिया-राज की ओर से तत्कालीन कई साहित्यकारों को पुरस्कार दिये गये। आपने उस समय बेतिया के महाराजा श्रीनवलकिशोर सिंह के नाम पर बेतिया में एक साहित्य-परिषद् की भी स्थापना की थी, जिसके संरक्षक आप ही थे। तत्कालीन बिहार-प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के तत्त्वावधान में, राज की ओर से आपने २०००) रुपये की राशि पुरस्कारार्थ दिये जाने की घोषणा की थी।[२] अपने प्रशासन के माध्यम से बेतिया-राज में आपने साहित्यकारो का उचित सम्मान किया था। आपके द्वारा लिखित राजनीतिक निबन्ध तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ करते थे। सम्प्रति, आप बेतिया (चम्पारन) में ही निवास कर रहे हैं।

उदाहरण

मैं बिहार-केसरी श्रीकृष्ण सिंह को आज पच्चीस बरसों से भी अधिक से जानता हूँ, जब से हमलोग महात्मा गांधी के नेतृत्व में देश की स्वतन्त्रता के लिए काम करने लगे थे। शुरू से ही मेरी उनके प्रति श्रद्धा रही है और उसी प्रेम-भाव के नाते मै बराबर 'मालिक'

---

१ 'मनोरञ्जन' (मासिक, भाग २, सख्या १, मार्गशीर्ष, स० १९७० वि०), पृ० ५७-५८।

२ देखिए, 'हिन्दी-सेवी-ससार' (वही), पृ० २६२ तथा 'बिहार अब्दकोश' (वही), पृ० ६८५।

कहकर संबोधन करता आया हूँ और उनका भी मेरे प्रति बराबर प्रेम बना रहा है। श्रीबाबू बिहार के इने-गिने व्यक्तियों में एक हैं जिनके त्याग, ज्ञान-भंडार, लगन और राजनैतिक कुशलता ने हमारे प्रान्त को आगे बढ़ाया है। काँगरेस के कामों में जैसे वे आगे रहे, वैसे ही शासन चलाने में भी आगे रहे हैं। उनकी शासन-कुशलता का परिचय तभी से लोगो को मिलने लगा था, जब उन्होंने मुंगेर जिलाबोर्ड की चेयरमैनी का भार अपने ऊपर लिया। श्री बाबू ने बड़ी खूबी से इस प्रान्त के प्रधान मन्त्री के पद को निबाहा है। सब तबके के लोग इनको प्रेम की दृष्टि से देखते हैं। हमारे प्रान्त के सार्वजनिक जीवन में इनकी जनप्रियता बहुत बढ़ी हुई है। आपने महात्माजी को नेता मानकर उनके बताये हुए मार्ग पर चलने की बराबर चेष्टा की है और बहुत सफलता के साथ अपनी जवाबदेही को निभाया है।[1]

विन्ध्येश्वरीप्रसाद शास्त्री

आप छपरा-जिला के 'विलासपुर' (वसन्तपुर) नामक ग्राम के निवासी पं० कोदई मिश्र के आत्मज थे। आपका जन्म सं० १९५३ वि० (सन् १८८६ ई०) की माघ शुक्ल-द्वितीया को हुआ था।[2] आपकी प्राथमिक शिक्षा घर पर ही हुई। तदनन्तर आपने 'बेतिया' (चम्पारन) और काशी में शिक्षा पाई। आपकी शिक्षा मुख्यतः संस्कृत के माध्यम से हुई। संस्कृत-वाङ्मय के अनेक विषयों पर आपके पूर्वजों को प्रसिद्धि प्राप्त है[3] और आपने भी संस्कृत के अध्ययन में अद्वितीय

---

१. देखिए, 'श्रीकृष्ण-अभिनन्दन-ग्रन्थ' (सम्पादक-मण्डल, सं० २००५ वि०), पृ० ३६४।

२. आपके द्वारा कार्त्तिक-शुक्ल १५, स० २०१२ वि० सन् १९५६ ई०) को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित परिचय के आधार पर। आपने अपने वश का परिचय अपने 'कर्णार्जुनीयम्' नामक महाकाव्य के अन्त में सस्कृत के ही उपेन्द्रवज्रा-छन्द मे ९ श्लोको मे लिखा है। उसके अध्ययन से आपके पूर्ववर्त्ती और समकालीन लोगो का पूरा पता चल जाता है। देखिए, 'कर्णार्जुनीयम्-महाकाव्यम्' (विन्ध्येश्वरीप्रसाद शास्त्री), पृ० १७४ के बाद एक पृथक् पृष्ठ।

३. आपके पिता प० कोदई मिश्र एव पितामह प० उजागर मिश्र ज्यौतिषशास्त्र के प्रसिद्ध विद्वान् थे। आपके पितृव्य प० तुलसी मिश्र, प० मनहरण मिश्र तथा पितामह-भ्राता प० गोपाल मिश्रजी भी व्याकरण एव दर्शन के उदभट विद्वान् थे।

अभिरुचि दिखलाई। गम्भीर अध्ययन के बाद सन् १६१८ ई० में आपने 'बिहारोत्कल-संस्कृत-समिति' पटना से 'साहित्यतीर्थ' की उपाधि प्राप्त की। उसके बाद काशी में ही रहकर आपने शास्त्रों का अध्ययन किया। सन् १६२५ से १६२८ ई० के बीच 'अखिल भारत-धर्म-महामण्डल', काशी के द्वारा आप 'शास्त्राचार्य' और 'विद्यानिधि' की सम्मानोपाधियों से अलंकृत हुए। उसी समय आपने 'बिहारोत्कल-संस्कृत-समिति' से 'धर्मशास्त्राचार्य' की उपाधि-परीक्षा में भी सफलता प्राप्त की।

अध्ययनोपरान्त आपने 'भारत-धर्म-महामण्डल', काशी के उपदेशक-पद पर कार्यारम्भ किया। तत्पश्चात् आप 'रणवीर-संस्कृत-पाठशाला' (हिन्दू-विश्वविद्यालय, काशी) के प्राचार्य-पद पर प्रतिष्ठित हुए। फिर, आपने 'सेण्ट्रल हिन्दू-कॉलेज', काशी के 'धर्माचार्य'-पद को भी अलंकृत किया। कुछ ही दिनों के बाद आपकी विद्वत्ता की ख्याति पं० मदनमोहन मालवीयजी तक पहुँची, जिनके अनुरोध पर आपने हिन्दू-विश्वविद्यालय के संस्कृत-महाविद्यालय में साहित्याध्यापक के पद पर कार्य करना आरम्भ किया।

आपकी साहित्य-सेवा का श्रीगणेश सन् १६२० ई० से ही हुआ। आपने साहित्य के विभिन्न अंगों पर अपनी लेखनी चलाई। अध्यापन-कार्य के अतिरिक्त संस्कृत-साहित्य की सेवा के लिए अपने सम्पादकत्व में आपने वाराणसी से 'सूर्योदयः' पाक्षिक और 'सुप्रभातम्' मासिक संस्कृत-पत्रिकाओं का प्रकाशन किया।[1] आपकी लेखनी से सम्पादित होकर ये दोनों ही संस्कृत-पत्रिकाएँ विद्वत्समाज में बहुप्रशंसित हुईं। अपने जमाने में इनके समान दूसरी कोई भी संस्कृत-पत्रिका नहीं निकल सकी। उपर्युक्त संस्कृत-पत्रिकाओं के अतिरिक्त आपने हिन्दी की 'निगमागमचन्द्रिका', 'आर्यमहिला' आदि पत्रिकाओं का भी सम्पादन किया था। आपके द्वारा हिन्दी में लिखे हुए लेख तथा काव्य यथावसर विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे हैं।

आपने संस्कृत[2] के अतिरिक्त हिन्दी में भी पुस्तकों की रचना की है। हिन्दी में आपके द्वारा लिखित 'बालोपयोगी जीवनियाँ', और 'सनातनधर्म' (चार भागों में) प्रकाशित हो चुके हैं। 'व्रात्य-संस्कार' नामक आपका एक निबन्ध-संग्रह अद्यावधि अप्रकाशित ही पड़ा है। सन् १६६८ ई० की १५ फरवरी को काशी में ही आपकी इहलीला समाप्त हो गई।[3]

---

१. 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही), पृ० ६७२ (च)।

२. सस्कृत-पुस्तको मे, 'कर्णार्जुनीयम्' और 'श्रीज्ञानानन्दचरितम्' नामक दो महाकाव्य है। अर्वाचीन सस्कृत-कवियो में आजतक ऐसे महार्घ महाकाव्य सम्भवत किसी ने नही लिखे। इन ग्रन्थो के अतिरिक्त 'विज्ञानमञ्जरी' (दो भागो मे), 'वाणी-विलासम्' (नाटक), 'गोत्र-प्रवरविवेक', 'सस्कृत-रचना-शिक्षा', 'शिक्षादर्शनम्', 'आपत्कालानुसारिणी व्यवस्था', 'अद्वैताभ्युदयम्' (नाटक), 'प्रायश्चित्तप्रदीपक', 'धर्म-कर्म-मर्म', 'शिखासूत्रम्', 'सद्गुरुस्तुति' आदि मुख्य है। ये सारी पुस्तकें शास्त्रिमण्डल, लक्ष्मीकुण्ड, काशी से प्रकाशित है।

३. आपके भ्रातृज श्रीदामोदरप्रसाद मिश्र (बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना-४) द्वारा प्राप्त सूचना के आधार पर।

उदाहरण

(१)

आज यह भारत अपने उद्धार के लिये स्निग्ध करुणामय अश्रुपूर्ण नेत्रों से अपने नवयुवकों की ओर ही सतृष्णभाव से देख रहा है। अत. भारत की उन्नति के विचार से सबसे पहले नवयुवकों की ओर ध्यान देना चाहिए। क्योंकि उन्नति बीजवृक्षन्याय से हुआ करती है। बीज के भीतर जो सूक्ष्म रूप से वृक्ष का अङ्कुर विद्यमान रहता है, उसका पूर्ण वृक्ष के रूप में परिणत हो जाना ही बीज की उन्नति है। परन्तु वट-बीज के अंकुर से औदुम्बर तैयार किया जाय, तो उससे वटवृक्ष की उन्नति नहीं होगी। इसी प्रकार भारतीय नवयुवकों को भी भारतीय होकर अपनी उन्नति करनी चाहिए। रोमन जाति आज भी किसी न किसी आकार में विद्यमान है और उन्नति के शिखर पर भी आरूढ़ है, परन्तु क्या कोई कह सकता है कि रोमन जाति की उन्नति हुई है? कभी नही। भारतीय अपनी सत्ता को रक्खेंगे, तब तो इनकी उन्नति होगी, परन्तु यदि ये अपनी सत्ता नष्ट करके विजातीय बन गये तो इनकी उन्नति नही हो सकती।[१]

(२)

जिस जाति में यह वर्णाश्रम रूपी बन्धन नहीं है, वह जाति चिर-काल तक जीवन धारण नहीं कर सकती। इस विषय में संसार की अनेक जातियों का उदाहरण इतिहास स्वयं दे रहा है। प्राचीन ग्रीक, रोमन, बेबीलोनियन, इजिप्सियन आदि अनेक जातियों का पता तक नहीं रहा है। दुनिया के इतिहास में चार हजार वर्ष के

---

१. 'आर्यमहिला' (मासिक, भाग ४, संख्या १, पूर्ण सख्या १३, वैशाख—आषाढ़, सं० १९७८ वि०), पृ० ७८।

पहले की कोई जाति नहीं है; किन्तु अनन्तकाल से लेकर आज पर्यन्त सनातन धर्मावलम्बिनी आर्यजाति जीवित है और भविष्य में भी इस वर्णाश्रम बन्धन की रक्षा करनेवाली और आर्यजाति को एकमात्र जीवित रखनेवाली हमारी सतीशिरोमणि आर्यमातायें है। यदि इनके अन्त.करण से सतीत्व का संस्कार नष्ट हो जाये तो यह आर्यजाति जीवित नहीं रह सकती। एक कुल में यदि कोई पुरुष व्यभिचारी बन जाये, तो उस कुल में वर्णसंकरता नहीं हो सकती; परन्तु उस कुल में यदि कोई स्त्री व्यभिचारिणी बन जाय, तो उसमें अवश्य ही वर्णसंकर पैदा होने लगेंगे। गीता में देख सकते है, कि पुरुषों के बिगड़ने से वर्णसंकर पैदा होंगे, ऐसा नही कहा गया है। वहाँ लिखा है कि—'स्त्रीषु दुष्टासु वार्ष्णेय ! जायते वर्णसंकर:' अर्थात् स्त्रियों के बिगड़ जाने से कुल में वर्णसंकर पैदा होते है। जिस जाति में वर्णसंकरता आ जाती है, वह जाति अवश्यमेव नष्ट हो जाती है।[१]

विश्वेश्वरदयाल 'सुखशान्ति'

आप पटना-जिला के 'गोरावाँ'[२] (सिलाव) नामक ग्राम के निवासी श्रीमुंशी गोपालजी के सुपुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९५१ वि० (सन् १८९४ ई०) की चैत्र शुक्ल-षष्ठी (बुधवार) को हुआ था।[३] आपकी प्राथमिक शिक्षा घर पर ही फारसी के माध्यम से हुई। उसके थोडे ही दिनों के बाद आपकी माताजी का स्वर्गवास हो गया। आपकी देख-रेख आपकी चाची के द्वारा हुई, जिसके बाद आपकी माध्यमिक शिक्षा, पटना के डायमंड-जुबली-स्कूल में हुई। कुछ वर्षों के बाद, आप बिहारशरीफ (पटना) की

---

१. 'आर्यमहिला' (मासिक, भाग १०, सख्या ५-६, भाद्रपद-आश्विन, सं० १९८४ वि०), पृ० २३३।

२. यह 'गोरावाँ' आपके पूर्वजो को मुगल बादशाहो के समय ही कानूनगो के कार्य-सम्पादन के लिए मिला था। आपके प्रपितामह ने इसे प्राप्त किया था और आपके पितामह के समय मे ही यह दूसरे लोगो के अधिकार मे चला भी गया।

३. श्रीबलभद्र प्रसाद (शिक्षक, गाधी-विद्यालय, नवादा) द्वारा दिनाक १० जुलाई, सन् १९६१ ई०, को प्राप्त और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सूचना के आधार पर।

कचहरी में ताईदी करने लगे। किन्तु, सरल-प्रकृति होने के कारण उक्त कार्य में आपको सफलता नहीं मिली। कचहरी के दायरे में आपका भावुक मन नहीं रम सका। आप गीत-नाट्य आदि में बडे चाव के साथ भाग लेते थे। कठिन पक्के गानों को आप सहज भाव से गाकर लोगों को मुग्ध कर देते थे। नाटकीय कार्यक्रमों की सफलता में उस समय आपका कोई जोड़ नहीं था। सन् १९१५ ई० में आपका विवाह हुआ। विवाहोपरान्त आप जीविकोपार्जन के निमित्त कलकत्ता चले गये। वहाँ आप प्रतिदिन नियमित रूप से 'रामचरितमानस' की कथा सुनते-सुनते परम रामभक्त हो गये। कलकत्ता से वापस आने पर आपने बिहार-शरीफ में श्रीबदरीप्रसादजी (वकील) के साथ कचहरी जाना प्रारम्भ किया। कचहरी के कार्यों में लगे रहने पर भी आपकी चित्तवृत्ति सदा ईश्वराराधन की ओर लगी रहती थी। फलतः आपके हृदय की उत्कट अभिलाषा कविता के रूप में प्रस्फुटित होने लगी। साधारण हिन्दी के माध्यम से आपकी रचनाओं का प्रादुर्भाव हुआ। आपकी रचनाओं में अध्यात्म के अतिरिक्त और किसी सांसारिक वस्तु का सम्मिश्रण नहीं हो सका। आपके जीवन में ब्रह्म-साक्षात्कार की स्थिति लानेवाले सज्जन 'गंगटी'-ग्राम-निवासी श्रीआलम महतो हैं। आपने अपने पदों में इन महात्मा की सर्वत्र चर्चा की है। आडम्बर या दिखावे से दूर आपका जीवन बड़ा ही सरल है।

आपकी रचनाओं की भाषा हिन्दी, मगही और उर्दू है। इन्हीं भाषाओं में आपके पद रचे गये हैं। आपके दस-बीस पदों का एक संग्रह प्रकाशित होकर भक्तों के बीच वितरित किया गया था। कवित्त आदि छन्दों के अतिरिक्त आपने गजलें भी लिखी हैं। सम्प्रदाय और मतवाद से दूर आपने एक परमसन्त की तरह अपने पदों में केवल ब्रह्म का ही निरूपण किया है। सम्प्रति, आप 'बहोड़' नामक ग्राम (पत्रालय—भागनबिगहा, जिला पटना) में निवास कर रहे हैं।

उदाहरण

(१)

चितवहु चन्द्र चकोर सखी री।
इंगला पिंगला सुखमन घाटी, जहाँ वसत चितचोर।
मोहन वंसी टेरत निसिदिन, खैंचत अपनी ओर।
जनम जनम के बिछुड़ल हेरत, धावत अमृत ओर।
होत प्रतीत मन थिर पावत, खोज मिटत कति ओर।
आशा तृष्णा औरहू जारत, काम ही क्रोध की छोर।
ज्ञान वैराग विवेक आवत, पावत निज गति ठौर।

नाम अलख अगम अनाम की, आवत शुद्धमति ओर।
'सुखशान्ति' सुखशान्ति आवत, आगम निगम बटोर ॥[1]

(२)

चलूँ री सखी भरने गगरी,
गगन मंडल में कूप मनोहर, जल भरन चलूँ बीचे डगरी।
चित्त-गगरी गिरा कर डोरी, जल-विश्वास भरु गगरी।
सुख-शान्ति अमृत-रस-ज्ञान ही, भींज गई सगरी चुनरी।
चलूँ ए री सखी! भरने गगरी ॥[2]

[३]

आनन्द छायो रह्यो सघन गगन घन।
बरसत गगन सुधारस वाणी भक्ति परदान सुमंगल खानी।
तनमन बिसरत जियरा हुलसत हरि हिय हेरत आप हेरावत।
मन चंचल चकोर सम निरखत सुनगान रस पान मुदित मन।
राम रमा कछू भेद न जानत, जाति पाँति कलि कलुष नसावन।
आवागमन नसावन आवत 'सुखशान्ति' मन-भावन सावन ॥[1]

(४)

अहो अहो रामा करि लेहू अपन सिंगरवा रे की।
विरथा ही वयस गवइलूँ पियवा के सुध विसरैलूँ,
अहो अहो रामा गौना के दिन नियरैले रे की।
बचपन खेल खेलैलूँ, युवा मतवार हो गैलूँ,
अहो अहो रामा कामिनी कंचन भूलैलूँ रे की।
इन्द्रिय बस मैं भइलूँ, नैहरा में भूल गँवैलूँ,
अहो अहो रामा आखिर देखि पछतैलूँ रे की।

---

१ श्रीबलभद्र प्रसाद (शिक्षक, गाधी-विद्यालय, नवादा, गया) द्वारा प्राप्त सामग्री से।
२. उन्हीं से प्राप्त।

मूरति सुरति विसराइ, आपही आप भुलाई,
अहो अहो रामा सुखशान्ति घट में ही पैलू रे की।[1]

विष्वक्सेनाचार्य[2]

आप गया-जिला के 'अमारी'[3] (टिकारी) नामक ग्राम के निवासी श्रीदीपनारायण शर्मा के कनिष्ठ पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९५० वि० (सन् १८९३ ई०) की वैशाख शुक्ल-पूर्णिमा को हुआ था।[4] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा गाँव की ही पाठशाला में हुई। बारहवें वर्ष की आयु में ही आपका विवाह हो गया। जीवन के आरम्भ-काल में आप एक अच्छे रामायणी थे और गाने-बजाने का भी आपको साधारण शौक था। ज्योंही आप बीस वर्षों के हुए, आपकी पत्नी का स्वर्गवास हो गया। उसके बाद आपकी रुचि सद्ग्रन्थो और धार्मिक कार्यों की ओर स्वभावतः बढ़ गई। आपके घरवालो ने आपको गृहस्थी में फँसाये रखने के लिए आपका पुनर्विवाह करना चाहा। इसी बीच घरेलू अड़चनों को ध्यान में रखकर आपने बाईस वर्ष की उम्र में गृहत्याग कर दिया।[4] उसके पश्चात् आप बक्सर, बनारस, अयोध्या तथा वृन्दावन में विचरते हुए नासिक-जिला में 'पंचवटी' नामक स्थान पर पहुँचे। वहाँ आपके पूर्व-परिचित श्रीस्वामी परांकुशाचार्य जी से आपकी भेंट हुई। आपने वहाँ स्वामीजी से शिष्य बना लेने को कहा। किन्तु, स्वामीजी ने आपको अपने बडे गुरुभाई श्रीस्वामी वासुदेवाचार्यजी से दीक्षा लेने की सलाह दी।

---

१. श्रीबलभद्र प्रसाद जी से प्राप्त।

२, आपके बचपन का नाम 'वासुदेव शर्मा' था, जो आपके वैष्णव-सम्प्रदाय में दीक्षित होने के बाद बदल गया।

३. आपके भक्तो द्वारा २७ फरवरी, सन् १९५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित विवरण के अनुसार। यह ग्राम गया-जिला के टिकारी थाने मे है। साधु-सन्तों की परम्परा का सम्यक् निर्वाह करनेवाला यह ग्राम आज के युग मे भी अपने वैभव के लिए प्रसिद्ध है। इसी ग्राम मे एक सौ वर्ष पूर्व एक महात्मा श्रीजोरी शर्मा हो गये है। किवदन्ती है कि विदेह-तुल्य इस महात्मा के द्वारा साधुओ के आतिथ्य-सत्कार की पूर्ति के निमित स्वय भगवान् को इनका स्वरूप धारण करना पडा था। देखिए, 'श्रीस्वामी वासुदेवाचार्य' (श्रीरामप्रसाद सिंह 'पुण्डरीक', सन् १९६१ ई०), पृ० ३७।

४. किसी दिन अपने कैशोर्य-काल मे आप अपने गाँव के जिज्ञासुओ मे धर्म एवं ज्ञान की चर्चा कर रहे थे। धर्मचर्चा मे आप इतने तल्लीन हुए कि आपको घर-गृहस्थी-सम्बन्धी कार्यों का ध्यान नहीं रहा। इसी बीच, आपके बडे भाई श्रीत्रिवेणी शर्मा ने, आपके द्वारा गृहस्थी के कार्यों की उपेक्षा किये जाने पर कुछ कडवी बाते कहीं। तभी से आपका मन घर-ससार के बन्धन से और उचट गया और आप २२ वर्ष की ही अवस्था में गृह त्यागकर साधु हो गये। देखिए, 'प्रेम-प्रवाह' (विष्वक्सेनाचार्य, सन् १९५२ ई०), पृ० (ग)।

उनके मतानुसार ही आपने उक्त स्वामीजी से नासिक-मन्दिर में दीक्षा ली।[१] दीक्षा लेने के बाद उक्त दोनों महात्माओं ने आपको विद्याध्ययन की ओर प्रवृत्त होने का आदेश दिया। अपने गुरुजनो का आदेश पाकर आपने यथाशक्ति विद्याध्ययन का अभ्यास करना चाहा। किन्तु, इस कार्य में अपनी प्रवृत्ति न देखकर आप हताश हो गये और भारत-भ्रमण के सिलसिले में आपने स्वामीजी का साथ देना शुरू किया। इसी समय आपने बोपदेव की प्रसिद्ध कथा सुनी और तभी आपके हृदय-तलमें पड़ी हुई तेजस्विता जाग उठी। आपने संस्कृत-साहित्य और धर्मशास्त्रों के अध्ययन का दृढ़ निश्चय किया तथा सस्कृत-वाङ्मय का गम्भीर अध्ययन किया। संस्कृत के व्याकरण, न्याय, वेदान्त (शांकर और विशिष्टाद्वैत-सहित), मीमांसा, योग, सांख्य और साहित्य का भी आपने सांगोपांग अध्ययन किया। आपने न्याय तथा वेदान्त का विधिवत् अध्ययन मद्रास के प्रतिवादि-भयंकराचार्य श्रीस्वामी अनन्ताचार्यजी महाराज से किया था।

अपने दक्षिण-भारत-भ्रमण[१] के सिलसिले में आप विष्णु-काञ्चीपुरी में जाकर तत्रस्थ 'उत्तराधिश्रीवैष्णव मठ' के महन्थ के पद पर आसीन हुए। वहीं रहकर आपने भारत-प्रसिद्ध दार्शनिक श्रीआसुरिरामानुजाचार्य (विद्वान् स्वामी) से अद्वैत एवं विशिष्टाद्वैतादि वेदान्त-सिद्धान्तों का सम्यक् रूप से अध्ययन किया। दक्षिण-भारत की वेदान्त-शिरोमणि-परीक्षा में आप सर्वप्रथम आये और पुरस्कार प्राप्त किया। अखिलभारतीय भूमिहार-ब्राह्मण-महासभा के ३४वें अधिवेशन के सभापति-पद को भी आपने सुशोभित किया था। शाहाबाद-जिला के एकवारी ग्राम में आपके द्वारा स्थापित 'ब्रह्मर्षि-विद्या-मन्दिर' नामक संस्कृत-विद्यालय आज भी संचालित है। दक्षिण-भारत के विद्वत्समाज से आपको 'कवि-कथक-पञ्चानन' की उपाधि प्राप्त थी। प्रयाग में हुए अखिल-भारतीय श्रीवैष्णव-सम्मेलन के सभापति-पद पर आसीन होकर आपने उस सम्मेलन की गरिमा बढ़ाई थी।

यद्यपि आप प्रधानतया संस्कृत के विद्वान् एवं कवि थे, तथापि भावुकता में आकर आपने हिन्दी में जो कुछ भी लिखा, वह आपके हिन्दी-प्रेम एवं मातृभाषा-प्रेम का परिचायक है। सन् १९२१ ई० से ही आपकी हिन्दी-रचनाएँ प्रकाश में आने लगी थीं। सस्कृत और हिन्दी, दोनों भाषाओं में आपकी रचनाएँ पढ़कर लोग आपके उज्ज्वल भविष्य की कामना करते थे। खड़ीबोली की कमनीय कविताओं का आपके हृदय पर बड़ा ही अच्छा प्रभाव पड़ा। आपके द्वारा लिखा हुआ हिन्दी का एक काव्यग्रन्थ प्रेम-प्रवाह' प्रकाशित होकर प्रसिद्धि प्राप्त कर चुका है।[२] आप हिन्दी-सेवा का

---

१. एक समय बम्बई में, समुद्र-तट पर आप सस्कृत में व्याख्यान देने का अभ्यास कर रहे थे। मधुर सस्कृत मे आपके धारा-प्रवाह भाषण से एक संस्कृतज्ञ जर्मन विद्वान् इतना प्रसन्न हुआ कि उसने आपको एक हजार रुपये पुरस्कार मे दिये। आपने दक्षिण-भारत की अपनी यात्रा पुरस्कार के इन्हीं रुपयों से की थी।

२ इसके अतिरिक्त आपने 'वेदान्त-चम्पू', 'समाधान-बडवानल' (प्रथम तथा द्वितीय ज्वाला) नामक ग्रन्थो का प्रणयन किया था। ये ग्रन्थ सस्कृत मे ही लिखे गये है। —'श्रीस्वामी वासुदेवाचार्य' (वही), पृ० ३८।

व्रत लेकर दक्षिण-भारत में अपनी कविता-स्रोतस्विनी का अजस्र प्रवाह प्रवाहित कर ही रहे थे कि असमय ही सन् १९४५ ई० में आपका परलोकवास हो गया।[1]

उदाहरण

(१)

धवल धाम धरातल मध्य में, अवध नाम पुरी अति सुन्दरी,
बलय सी लसती सरयू नदी, अवनि मेखलिता अति माधुरी।
स्फटिक फाटक विद्रुम वज्र से, रचित कोट समुन्नत सोहता,
विपुल धाम हिमालय से बड़े, लसित चित्र विचित्र अनूप थे।
उदधिजोत्तम रत्नसमूह से, विरचितोत्तम धाम सहस्र थे
लसित शुभ्र विमान समान थे, गगन चुम्बित पुष्पक से बने।
असित दिव्य सुलोहित दीप्तियाँ, छिटकतीं सुगवाक्ष-मयूख की,
किरण-पुञ्ज चलीं सब व्योम को, जलवनावनि को रँगने चलीं।[2]

(२)

प्रकटित हुए कृपया कृपालु निजायुधोज्ज्वल से लसे,
विकसे विमल नव नील पंकज अजनृपज सम थे लसे
सुन्दर अधर अन्दर दशन-छवि दामिनी-दमनीय थी
अतसी-कुसुम मरकत गगन घन सी सुवपु कमनीय थी
भूषण रुचिर वनमाल भाल तिलक धवल रंजित रहा
युग श्रवण से मिलने चले मानो नयन लम्बित रहा
शोभा-जलधि-कल्लोल से लावण्य माधुरिमा लिए
मुनि-मन अचंचल डूबता गुणगण विगाहन के लिए
निज कर-कमल-सम्पुट सुहावन फण समान किये अहो
मानो युगल वर नागिनी नभ खेलती मणि के लिए
किस विधि अनन्त !

---

१. 'प्रेम-प्रवाह' (वही), पृ० 'च'।
२. 'प्रेम-प्रवाह' (वही), पृ० ४।

अनन्त गुण ! तुमसे करूँ स्तुति मैं अहा !
माया-रचित-गुण से रहित अतएव तुम निर्गुण महा।
करुणा वरुण आलय ! महानंद अम्बुनिधि गुण-सिन्धु हो,
श्रुति सन्त सरस वसन्त वन्दित रूप गुण-निधि इन्दु हो
हम दम्पती हित अवतरित, तुम दीनबन्धु अनन्त हो
मुनिगण विमल गुण-गण-निधे ! कहते तुम्हीं जग-दन्त हो।
ब्रह्माण्ड-गण गुल्लर विपुल फल तरु तलान्तर तू अहो
माया कभी फलती नहीं संकल्प बीज न तू रहो
श्रुति सकल हिलमिल ढूँढ़ती तव रोम कूप किनार हो
वह शारदा-शिर भी झुका तुझको निहार अपार हो।[1]

(३)

दुर्गुण रहित निर्गुण बहुत गुण युक्त तुम अद्वैत हो
चिदचित् प्रपंच कलाप कर तुम कृकल एक अनन्य हो।
उडुगण प्रदीपावलि लगी तव गगन में भगवन्त हो
तुम दिव्य मरकत दीप सम वपु से लसे श्रीकन्त हो।
दिनकर तथा हिमकर लगा दो हण्डिकाण्ड कराह में
क्रम से चलें निज चाल से तव दण्डनीति विधान से।
यों पवन सनसन बह रहा उच्छ्वास छन छन दे रहा
तव पद्मकोश पलाश ईक्षण को निहार सिहा रहा।
अवतरण तव यह चरण का जो नित्य शुद्ध सुरूप है
अविकार है परिणाम इसका कर्म से होता न है।
सावयव का परिणाम चेतन कर्म बन्धन से हुआ
बस है अनित्य सही वही यह स्वयं इच्छा से हुआ।

---

१. 'प्रेम-प्रवाह (वही), पृ० ३१-३२।

यह अजड़ स्वयं प्रकाश चिदचिद् भिन्न है इक रूप है
यह दीप सम इक से अनन्त बने सभी नहि ऊन है।
निज अनुज दिव्य स्वरूप में यह रूप सुन्दर सभुज है
अवतार एक अनेक में भुज चार युग अनगणित है।
हे राम ! नारायण तुमी नहि भेद तुम उसमें कही
भुज अवलि दीपावलि समान अभेद तुममें है सही।
श्रित शुचि निहार अहो ! विलक्षण रूप देते हो इसे
मुझसे अनात्म चिदादिक थन असार करते है इसे।[1]

(४)

निज करकमल से वल्लियों को कुछ छुड़ाते जा रहे।
मानो कलम युग सुण्ड को सचमुच घुमाते आ रहे।
हा ! जन्म उन नवलता में क्यों नहि हुआ किस पाप से !
शरणार्थियों की राह में यों शरण ढलती आप से ॥
नृपभवन में हलचल हुआ मुनि सहित उड़ुगण-राज दो
नृप बाग बादल में छिपे मरकत कनक रंग राज दो।
ज्योत्स्ना युगल विलुलित हरित उद्यान में हैं खेलती
मानो हरिन्मणिजाल में उलझी हुई है चेल सी ॥
यों इन्द्रमणि-नवचन्द्रकान्त अनेक मणिमय धाम थे
शुभ दिव्य देश विचित्र रचना रचित शुभ्र विमान थे।
प्राकार गोपुर में जहाँ प्रतिकोण गरुड़ महान थे।
मन्दिर विलक्षण में जहाँ पर जानकी के प्राण थे
उसमें अलौकिक दीप्ति थी जो थी जनक हृद्धाम में
जिससे सदेह विदेह बन आनन्द करते ध्यान में।

---

१. 'प्रेम-प्रवाह' (वही), पृ० १६६।

श्यामल सुकोमल कान्तियाँ श्रीराम की पड़तीं वहाँ;
हँसते जभी श्रीराम थे मानो हँसी मूरति वहाँ ॥[१]

वेदांग मिश्र

आप दरभंगा नगर के 'मिश्रटोला' नामक मुहल्ले के स्वनामधन्य वैद्यप्रवर पं० मन्नू मिश्रजी के सुपुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९५७ वि० (सन् १९०० ई०) की चैत्र कृष्ण-पंचमी (रविवार) को हुआ था।[२] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। तदनन्तर आपने एल० एम० पी०, आयुर्वेदाचार्य और विद्यालंकार की उपाधियाँ प्राप्त कीं। आयुर्वेद के माध्यम से दीन-दुखियों की सेवा करना ही आपका व्यसन था। जीविका के इस माध्यम से आपका सारा समय रोगियों की देख-रेख में ही चला जाता था।

आपने सं० १९७७ वि० से ही हिन्दी में साहित्यिक लेखन प्रारम्भ किया। आपके द्वारा लिखित निबन्ध 'विहार-बन्धु', 'बालक', 'आर्यावर्त्त', 'राष्ट्रवाणी', निर्वाण', 'उदय', 'मजदूर-आवाज', 'पंचायती राज' आदि पत्र-पत्रिकाओं में यथावसर प्रकाशित हुआ करते थे।[३] आपके द्वारा लिखित 'मंजूषा' नामक एक पुस्तक नवरत्न पुस्तकालय, मिश्रटोला, दरभंगा से प्राप्त हो सकती है। आप इन दिनों दरभंगा-स्थित अपने निवास-स्थान पर रहकर दीन-दुखियों की सेवा करते हुए, जीवन-यापन कर रहे हैं।

उदाहरण

(१)

चौरासी लाख योनियों में घूमते-फिरते जीव मनुष्य योनि में जन्म लेता है। भगवान जब बहुत प्रसन्न होते हैं, तब कहीं जीव को मनुष्य योनि में जन्म लेने का सौभाग्य प्राप्त होता है। ऐसा मौका संयोग से मिलता है। इस सुअवसर को पाकर मनुष्य को उचित है कि जिस जगन्नियन्ता ने उसकी सृष्टि की है, उसको स्मरण करता रहे और अपने जीवन को सफल बनाकर परब्रह्म में लीन हो जाय।

---

१. 'प्रेम-प्रवाह' (वही), पृ० १८१।
२. आपके द्वारा दिनांक २६ अप्रैल, सन् १९५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

यह विषय कहने और लिख देने में जितना ही सहल है, उसको कार्यरूप मे परिणत करने मे उतना ही कठिन है। पर असम्भव कदापि नही है।

उदाहरण मे महात्मा गांधी को लीजिए। गोडसे झुकता है, महात्माजी समझते है कि पैर छूने के लिए झुकता है, किन्तु वह झुक नही रहा है, ठेहुनियाँ मार रहा है और पिस्तौल से तीन लक्ष्य महात्माजी के मर्मस्थल हृदय में वेधता है, उस निमिष में भी श्रद्धेय बापू के मुख से 'हे राम', 'हे राम' निकल ही तो पड़ता है। उपयुक्त वाक्य बोलने में अथवा लिखने में कितना समय निकल पड़ा। किन्तु, उक्त घटना के घटने में कितना अल्प समय लगा होगा, तथापि महात्माजी का जीवन सफल हो जाता है। अभी-अभी दो वर्ष इस घटना को घटे हुए हैं।[१]

(२)

काम, क्रोध और लोभ नरक का द्वार है, बड़ी बुरी चीज है, हम समझते हैं; समझकर भी उनको एकबारगी नही छोड़ते और न उनको छोड़ने की पूरी कोशिश करते हैं। क्यों, अपनी गरूर में, घमण्ड में। जहाँ हालत बदली, आवश्यकता से अधिक पैसे हाथों में पड़े अथवा उच्च पदासीन हुए, अपना पहिले का समय, दुःख की हालत, जानबूझ कर भुला देते हैं। सब धान बाईस पसेरी समझने लगते हैं। क्या यह पशुता नही है? क्या हम वृक्ष से भी गये गुजरे हैं? आम के वृक्ष में जितने अधिक फल लगते हैं, वह उतना ही अधिक नम जाता है और मनुष्य, मनुष्य तो 'क्षुद्र नदी बहि चली उतरायी, जस थोड़ेउ धन खल बौड़ाई' वाली कहावत का ताण्डव नृत्य करने लग जाता है। ज्ञान की बातें लीजिये तो जान पड़ेगा कि

---

१. 'उदय' (साप्ताहिक, दरभगा) में प्रकाशित 'सफल जीवन' शीर्षक लेख से। आपके द्वारा ही प्रेषित।

साक्षात् वेदव्यास जी उपदेश कर रहे हैं, किन्तु जैसे तह में प्रवेश कीजिये, खोखलापन प्रत्यक्ष देखिये 'परोपदेशे पाण्डित्यम्' के अतिरिक्त और कुछ नहीं मिलेगा।

आज की दुनिया पूर्वकाल से एकदम विपरीत है, झूठ का बाजार गर्म है। स्वार्थपरता पराकाष्ठा पर है। परोपकार की भावना प्रायः लुप्त हो गयी। किसी को ठग लेने में बड़ी बहादुरी शाबशी समझी जाती है, पूर्वकाल में भारत की व्यवस्था, कदापि ऐसी नही थी, इसके लिए इतिहास साक्षी है।[१]

शशिनाथ चौधरी

आप दरभंगा-शहर के 'मिश्रटोला' नामक मुहल्ले के निवासी स्व० पं० बलदेव चौधरी[२] के पुत्र है। आपका जन्म सं० १९५६ वि० (सन् १८९९ ई०) की चैत्र कृष्ण-त्रयोदशी (मंगलवार) को हुआ था।[३] आपकी आरम्भिक शिक्षा म्युनिसिपल लोअर प्राइमरी पाठशाला और राज हाई स्कूल में हुई थी। सन् १९१६ ई० में आपने प्रथम श्रेणी में, मैट्रिक की परीक्षा पास की। इसके पश्चात् भागलपुर के टी० एन्० जे० कॉलेज से आई० ए० और बी० ए० की परीक्षाएँ पास कर आप हिन्दू-विश्वविद्यालय से एम्० ए० पास करने के लिए काशी चले आये। किन्तु, कुछ ही दिनो में अस्वस्थता के कारण, आपको काशी छोड देनी पडी। काशी छोडने के बाद, सन् १९२४ ई० में पटना ट्रेनिंग-कॉलेज से आपने बी० एड्० की परीक्षा पास की और इसी वर्ष आप स्कूल-सब-इन्सपेक्टर के पद पर नियुक्त हो गये। इस पद पर सन् १९२९ ई० तक काम करते रहे। उसके बाद आप शिक्षण-क्षेत्र में चले आये। कई हाई स्कूलों में काम कर 'हेडमास्टर' के पद पर भी नियुक्त हुए।

---

१. 'उदय' (साप्ताहिक, दरभगा) मे प्रकाशित 'आगे का कदम' शीर्षक लेख से। आपके द्वारा ही प्रेषित।

२ ये पं० शीबन चौधरी के पाँच पुत्रो मे एक थे।

३. आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के आधार पर। आपके पूर्वज लगभग डेढ़-दो सौ वर्ष पूर्व मधुबनी-सबडिवीजन के अन्तर्गत 'पौना'-ग्राम में रहते थे। वे उक्त ग्राम से ही दरभगा-शहर के 'मिश्रटोला' नामक मुहल्ले मे आये थे।

आपके प्रस्तुत परिचय लेखन मे उक्त सामग्री के अतिरिक्त, 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ६७१) तथा 'हिन्दी-सेवी-संसार' (वही, पृ० २८१) मे प्रकाशित सामग्री से भी सहायता ली गई है।

किन्तु, इस पद को भी त्यागकर आप नेपाल के एक स्कूल में चले गये। वहाँ भी आप बहुत दिनों तक नही रह सके और सिक्किम के एक हाईस्कूल में चले आये। आप जहाँ कही भी रहे, सभा-समितियो से सम्बद्ध रहे।

हिन्दी में लिखने-पढने की रुचि आपमें सन् १९१४ ई० में, 'सरस्वती' के माध्यम से जगी। आपकी पहली 'प्रोत्साहन' शीर्षक रचना स्व० पं० रामजीलाल शर्मा द्वारा सम्पादित 'विद्यार्थी' में छपी थी। उसके बाद, 'मर्यादा', 'सरस्वती', 'मिथिला-मिहिर', 'आज', 'गंगा', 'बालक', 'किशोर' आदि में आपकी रचनाएँ छपती रही। एक सम्पादक के रूप में आप 'मिथिला-मित्र', 'मिथिला-मिहिर', 'मार्त्तण्ड' आदि पत्रिकाओं से सम्बद्ध रहे। हिन्दी में आपके द्वारा लिखित पुस्तको के नाम इस प्रकार है—(१) भगवान बुद्ध,[१] (२) सौन्दर्य-विज्ञान,[२] (३) सदाचार-सोपान,[३] (४) सौन्दर्य-साधन,[४] (५) मिथिला-दर्शन,[५] (६) प्रेम-विज्ञान या प्रेम-तत्त्व, और (७) चरित्र-गठन या सदाचार-सोपान। इनके अतिरिक्त आपके द्वारा लिखित हिन्दी में लगभग एक दर्जन कोर्स की पुस्तकें भी मिलती हैं।

उदाहरण

(१)

शास्त्रों में प्राचीनकाल से ही, हमारे यहाँ सडक और पहियेवाली गाड़ियों का उल्लेख मिलता है। सभ्यतापूर्ण शासन-काल में ही अच्छी सड़कें और व्यापार आदि के पारस्परिक व्यवहार के सहज साधन प्राप्त हो सकते है। पुरातत्त्व-विभाग द्वारा जो नवीनतम अनुसन्धान हुआ है, उसमें भारतवर्ष की सभ्यता के चिह्न का अस्तित्व, कम-से-कम पाँच हजार वर्ष पूर्व पाया जाता है।[६]

(२)

गत शताब्दी में, रेल के प्रचार होने के पूर्व, कितनी ही बड़ी पक्की सड़कें बनायी गयी, जिनमे पुल भी बने थे। इनका

१. पुस्तक-भण्डार, लहेरियासराय से प्रकाशित बालोपयोगी पुस्तक।

२. पुस्तक-भण्डार द्वारा ही प्रकाशित।

३. इस पुस्तक की पाण्डुलिपि भी पुस्तक-भण्डार को ही प्रकाशनार्थ दी गई थी, किन्तु भूकम्प के समय वह कहीं खो गई।

४ अप्रकाशित।

५. श्रीमान् महाराजा बहादुर कीर्त्यानन्द सिंहजी के द्रव्य से मुद्रित और प्रकाशित।

६. 'गङ्गा' (प्रवाह १, तरग १०; श्रावण, स० १९८८ वि०, अगस्त, सन् १९३१ ई०), पृ० ६ ३९।

निर्माण फौजी इञ्जिनियरों द्वारा हुआ था। सड़कों का सम्बन्ध फौजी और व्यापारिक केन्द्र के साथ रहता था। लार्ड बीलियम बेण्टिक (१८२८—३५) तथा लार्ड डलहौसी (१८४८—५६) के समय में सड़कों की अधिकाधिक उन्नति हुई। मिलिटरी बोर्ड के स्थान में पब्लिक वर्क्स डिपाटमेन्ट की स्थापना हुई। सड़क-सम्बन्धी कार्य में बहुत उन्नति हुई और ग्रैण्ड ट्रंक रोड जैसे मार्गों का निर्माण हुआ।[१]

(३)

मिथिला सब दिन सँ धर्म-प्रधान देश अछि। शक्तिक उपासना एहि देश में होइत अछि। जगन्माता जानकीजीक उपासक स्त्री-पुरुष सबक्यो छथि। परन्तु एहिसँ नहि बुझबाक चाही जे अन्यान्य देवताक उपासना नहि होइत छैन्ह। प्रत्येक मैथिलक घर में विष्णु (शालिग्राम) रहैत छथि जनिक पूजा नित्यप्रति होइत छैन्ह। सत्यनारायणक पूजा विशेष-विशेष अवसर पर होइत छैन्ह। शिवक उपासना कम नहि होइत छैन्ह। प्रायः प्रत्येक धार्मिक व्यक्ति शिवक पूजा नित्य करैत छथि। बहुधा ई देखल जाइत अछि जे अवसर पड़ला पर दस-दस लाखक सङ्कल्प ग्रामवासी लोकनि करैत छथि। मिथिलाक ई व्यवहार अछि जे मृत्युक काल में लोककीत गङ्गा लाभक हेतु इच्छुक रहैत छथि अथवा शिवालय मे जाय शरीर-त्याग करबाक हेतु अभिलषित रहैत छथि। मिथिला मे विष्णुक मन्दिरसँ शिवालयक संख्या कतहु अधिक भेटत।[२]

१. 'गङ्गा' (प्रवाह १, तरग १०, श्रावण, स० १९८८ वि०, अगस्त, सन् १९३१ ई०), पृ० ६४२।
२. 'मिथिला-दर्शन' (प० शशिनाथ चौधरी, सन् १९३१ ई०), पृ० १०८-९।

शशिभूषण राय

आप संतालपरगना के सिमरा-ग्राम-निवासी श्रीसुचाँद रायजी[1] के पुत्र थे। आपका जन्म १ नवम्बर, सन् १८८६ ई०, को हुआ था।[2] आप बचपन से ही मेधावी थे। आगे चलकर आपने पटना-विश्वविद्यालय से प्रथम श्रेणी में मैट्रिक की परीक्षा पास की। बी० ए० की परीक्षा आपने कलकत्ता-विश्वविद्यालय से पास की। कानून की पढाई में आप डॉ० राजेन्द्र प्रसादजी के शिष्य रहे। अपनी शिक्षा समाप्त कर आप देवघर के एक स्कूल में अध्यापन-कार्य करने लगे। सन् १६२० ई० में उस पद से त्यागपत्र देकर आप राष्ट्रीय आन्दोलन में जुट गये और तबसे सन् १६३६ ई० तक काँगरेस की ही सेवा करते रहे। संतालपरगना में राजनीतिक जागरूकता के आप जनक बतलाये जाते हैं। अपने राजनीतिक-जीवन में चार बार जेल जाकर आपने लगभग छह वर्षों की सजा काटी। पूज्य बापू और डॉ० राजेन्द्र प्रसादजी के आप अत्यन्त ही प्रिय पात्रों में रहे। सन् १६३६ ई० में 'मकौड' निर्वाचन-क्षेत्र से आप निर्विरोध रूप से बिहार-विधान-सभा के सदस्य चुने गये। आपके द्वारा लिखित एक पुस्तक 'संथालपरगना का इतिहास' के नाम से उल्लिखित है।[3] आप सन् १६३६ ई० के अप्रैल मास में परलोकगामी हुए।[4] आपकी रचना के उदाहरण हमें नहीं प्राप्त हो सके।

शार्ङ्गधर सिंह

आप पटना-नगर के निवासी और बिहार के सबसे पुराने हिन्दी-प्रेस (खड्गविलास प्रेस) के संस्थापक भारतेन्दु-सखा बाबू रामदीन सिंहजी के पुत्र हैं। आपका जन्म सन् १८६६ ई० की ६ फरवरी को हुआ था।[5] आपने १४ वर्ष की अवस्था में ही राममोहन राय सेमिनरी, पटना से सन् १६१७ ई० में प्रथम श्रेणी में मैट्रिक की परीक्षा पास की। सन् १६२० ई० में अँगरेजी में एम्० ए० और फिर बी० एल्० पास कर आप पटना-हाईकोर्ट में वकालत करने लगे। अपने कलकत्ता-प्रवास के समय एक उत्साही प्रधान मंत्री के रूप में, बिहारी-एसोसियेशन में, आपका सक्रिय सहयोग रहा। सन् १६२० ई० से आप सर्वान्तःकरण से काँगरेस की सेवा में संलग्न हो गये। उसी वर्ष आपने असहयोग-आन्दोलन में भाग लिया। काँगरेस से सम्बन्ध होते ही आपकी वकालत

---

१. ये सिमरा-स्टेट के एक प्रतिष्ठित जमींदार थे। इन्हें सतालपरगना में 'घटवाल' कहा जाता था। इनकी जमीदारी का बन्दोबस्त वीरभूमि के नवाब द्वारा सन् १७६० ई० मे किया गया था।

२. श्रीसुधीरकुमार राय (आपके पुत्र, नेताजी रोड, वैद्यनाथधाम, देवघर) द्वारा दिनाक १६ दिसम्बर, सन् १६५८ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के आधार पर। —देखिए, 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ६७२ थ) भी।

३. आपके तीन पुत्रो मे, ज्येष्ठ हिन्दी के एक लब्धप्रतिष्ठ नाटककार है।

४ देखिए, 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही), पृ० ६७२ (थ)।

५ देखिए, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद की उद्‌घाटन-समारोह-पुस्तिका। प्रस्तुत परिचय के तैयार करने में 'बिहार अब्दकोश' (वही, पृ० २४६) तथा 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ (वही, पृ० ६४३) से भी सहायता ली गई है।

छूट गई, प्रेस और प्रकाशन का व्यवसाय उपेक्षित हो गया और आपने अनेक बार जेल की यात्राएँ की। सन् १९३४ ई० में, बिहार के भीषण भूकम्प के अवसर पर देशरत्न डॉ० राजेन्द्र प्रसादजी ने आपको बिहार-रिलीफ-कमिटी के कोषाध्यक्ष-पद पर नियुक्त किया। इस पद को आपने प्रशंसनीय योग्यता के साथ सँभाला। सन् १९३७ ई० में, प्रथम कॉंगरेस-मंत्रिमण्डल के बनने पर आप बिहार-विधान-सभा के सदस्य और फिर 'पार्लियामेण्टरी सेक्रेटरी' बने। सन् १९४७ ई० में आप पुनः बिहार-विधान-सभा के सदस्य हुए और सन् १९५२ ई० तक रहे। सन् १९५२ ई० में ही आप भारतीय संसद् की लोकसभा के सदस्य चुन लिये गये। इसी समय आप ईस्ट इण्डियन रेलवे की सलाहकार-समिति के सदस्य बने और अपने बिहार-जेल सुधार-समिति की अध्यक्षता भी की। सन् १९२५ से १९३० ई० तक और पुनः सन् १९४७ ई० में आप पटना-विश्वविद्यालय के 'सिनेट' के तथा सन् १९४८ ई० में उसके 'सिण्डिकेट' के सदस्य रहे। सन् १९४९ ई० में आप 'बिहार चेम्बर ऑफ कॉमर्स' के अध्यक्ष हुए। सन् १९४९ ई० के २४ जून को आप पटना-विश्वविद्यालय के उपकुलपति बनाये गये। इस पद पर रहते हुए ही आपने न्यूजीलैंड में होनेवाले कॉमनवेल्थ-युनिवर्सिटी-कॉन्फरेंस में, सन् १९५० ई० में भारत का प्रतिनिधित्व किया था।

आपकी गणना हिन्दी के अनन्य प्रेमी विद्वानों में होती है। आपके इसी हिन्दी-प्रेम के कारण प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन से आपका घनिष्ठ सम्बन्ध रहा। आपने उसकी स्थायी समिति की सदस्यता तो स्वीकार की ही थी, उसके कोषाध्यक्ष-पद को भी सुशोभित किया था। बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का पाँचवाँ महाधिवेशन, जो पटना में हुआ था, उसके आप ही स्वागत-मंत्री थे। हिन्दी में आपकी कोई पुस्तकाकार रचना तो नहीं मिलती, केवल स्फुट लेख मिलते हैं, जो मुख्यतः 'हरिश्चन्द्र-कला' में प्रकाशित हुए थे। आपकी रचना के उदाहरण हमें नहीं मिल सके।

शालिग्राम सिंह

आप मुँगेर-जिला के 'सुपौल-जमुआ' (थाना—तारापुर, पो०—बढौनिया) नामक ग्राम के निवासी ठाकुर चन्द्रभान सिंहजी के पुत्र हैं।[1] आपका जन्म सन् १८९१ ई० की २१ जनवरी को हुआ था।[2] आपकी शिक्षा अधिक न हो सकी। सन् १९०३ ई० में प्राइमरी-प्रतियोगिता-परीक्षा सम्मान के साथ पास करने के बाद सन् १९०५ ई० में आप एक और प्रतियोगिता-परीक्षा में बैठे। इन दोनों परीक्षाओं में आपको छात्रवृत्ति मिली। उसके बाद, आप स्कूलों में अध्यापन का कार्य करने लगे। हिन्दी-प्रचार और प्रकाशन-सम्बन्धी कार्यों में आप सन् १९०७ ई० से ही दिलचस्पी लेने लगे थे। आपकी गणना रामायण के अच्छे पण्डितों में होती है और जन-समुदाय के बीच आप 'रामायणाचार्य' के रूप में प्रसिद्ध है। आपने हिन्दी में 'कविता-कामिनी' नामक एक

---

१. आपके पूर्वज ग्वालियर (मध्य-प्रदेश) के 'बडी भरौली' नामक स्थान से आकर बिहार मे बसे थे।
२. आपके द्वारा २२ अक्टूबर, सन् १९५६ ई० को प्रेषित और परिषद् के साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

काव्य-पुस्तक की रचना की है, जो कई भागों में विभक्त है।[१] अर्थाभाव के कारण आप अभीतक इसका प्रकाशन नहीं करा सके हैं।

उदाहरण

(१)

कृष्ण प्राणप्यारी राधा मैया हमारी है तू,
सोई है सवासिन सुमतिया जगाय दे।
पूज्य पाद-पंकज की दे दे पराग नेक,
आँजैगी आँख, देह नेह चूनरी रँगाय दे।
रोकैंगे राह षड्रिपु वो डोकरी अनोखी एक,
कथामृत पिलाय भक्ति शक्ति सँग लगाय दे।
रोवैगी और केतिक वियोगिनी यह शालिग्राम,
पिया ढिग पठाय सर्व भीतिहू भगाय दे।[२]

(२)

हे हो सुजान कान्ह विनती महान मेरी,
दीन जान दीनबन्धो दयादीठि हेरियो।
माया के नाह आप, माया मिलैगी राह,
करैगी चढ़ाई तब बरजि ताहि हेरियो।
जंगल में दंगल करेंगे काम कोहादिक,
चहूँगा सुदरशन सुदर्शन को फेरियो।

---

१. विभिन्न भाग ये हैं— —(१) यमुना (राधा-स्तोत्र), (२) गगा-छंद एव कवित्त (कृष्ण-स्तोत्र), (३) सरस्वती-छद (ब्रह्मज्ञान), (४) भक्त एवं भगवान् की भक्तवत्सलता, (५) दोहा आदि छदो मे विनोद-शतक, (६) गूढार्थ-दोहावली, (७) शिव-स्तोत्र, (८) अनुरागवाग (विविध कोटि के भजन), (९) कवित्त मे पचदशी प्रेम-हिंडोला, (१०) गजलो मे काल का हाल, (११) गजलो में कुणाल की वीरता-धीरता, (१२) आध्यात्म रामायण, (१३) भक्ति और ज्ञान-मार्ग (विविध-छन्दो मे)।

२. आपके द्वारा प्रेषित सामग्री से।

यम से लड़ाई मचैगी खूब शालिग्राम,
करना सहारा जरा बैठे नाहि हेरियो ॥[१]

(३)

यशोदा गर आती खोज खोज मर जाती,
भेद नेक ना बनाती यों श्याम कूँ छिपाती री
नैंन चातक बनाती जीउ पी पी रटाती,
अधरामृत पिलाती बाग झूला झुलाती री ।
बरसाती हवा आती बस ठहाका लगाती,
फिर ऐसा राग गाती कि कोइलिया लजाती री ।
प्रेम मदमाती पिया प्रेम राग गाती,
ऐसी नाचती कि शालिग्राम थैथै मचाती री ।[२]

(४)

अरे काल-विकराल का हाल है यह,
कि गिनना किसी को न कुछ माल है यह ।
यह चाहे जिसे खूब ऊँचे चढा दे ।
यह चाहे जिसे खूब नीचे गिरा दे ।
कहूँ क्या अरे इसकी महिमा बड़ी है,
घड़ी हर घड़ी हाथ जोड़े खडी है ।
सुना होगा हरिश्चन्द राजा बड़ा था,
उसे भोगना कष्ट कैसा पड़ा था,
रानी को बेचा स्वयं भी बिके थे,
न छोड़ेंगे सत को धरम-मद छके थे ।[३]

★

१. आपके द्वारा प्रेषित सामग्री से ।
२. वही ।
३. वही ।

शिवकुमार लाल

आप शाहाबाद-जिला के 'मॅझवारी' (डुमराँव-थाना) नामक ग्राम के निवासी मुन्शी अवधबिहारी लालजी के पुत्र और स्वनामधन्य वैद्यराज श्रीप्रेमलालजी के पौत्र थे। आपका जन्म सन् १८६५ ई० की पहली जून को हुआ था।[१] आपकी आरम्भिक शिक्षा डुमराँव हाईस्कूल में हुई। उसके बाद आप पटना चले आये। वहाँ सन् १६१८ ई० में बी० एस-सी० की परीक्षा आपने विशेष योग्यता के साथ पास की। सन् १६२५ ई० में आपने बी० एड्० भी कर लिया। अपनी शिक्षा समाप्त कर लेने के बाद लगभग एक वर्ष तक आप एक मिड्ल स्कूल के हेडमास्टर के पद पर रहे। उसके बाद आप स्कूल-सब-इन्स्पेक्टर हो गये और उस पद पर सन् १६२५ ई० से लेकर सन् १६२६ ई० तक कार्य करते रहे। फिर एक शिक्षक के रूप में हाईस्कूल से सम्बद्ध हो गये। आरा जिला स्कूल और पटना ट्रेनिंग स्कूल में विज्ञान-शिक्षक के पद पर कार्य करने के पश्चात् सन् १६३० ई० में आप पटना प्रैक्टिसिंग-स्कूल के हेडमास्टर-पद पर नियुक्त हो गये और उस पद पर सन् १६३८ ई० तक कार्य करते रहे। सन् १६३८ ई० में बिहार-सरकार द्वारा मनोनीत होकर बुनियादी शिक्षा की वर्धा-बैठक में सम्मिलित हुए। वहाँ से वापस आकर आपने बिहार में बुनियादी शिक्षा के आयोजन एवं विकास में महत्त्वपूर्ण हाथ बँटाया। सन् १६४६ ई० में नेपाल-सरकार के निमंत्रण पर आप बिहार-सरकार द्वारा नेपाल में बुनियादी शिक्षा के आयोजन के लिए दो सहयोगियों के साथ नेपाल भेजे गये। सन् १६४६ से १६४८ ई० तक आप पटना बेसिक ट्रेनिंग-स्कूल के प्रिंसिपल रहे और सन् १६४८ से १६५० ई० तक बिहार सरकार के शिक्षा-विभाग में सहायक सचिव और सहायक निरीक्षक के पदों पर क्रमशः कार्य करते रहे। सन् १६५०-५१ ई० में आप पटना-डिवीजन के बेसिक एडुकेशन के 'सुपरिण्टेण्डेण्ट' के पद पर रहे।

आपकी साहित्यिक सेवा का आरम्भिक वर्ष सन् १६३३ ई० है। आपने हिन्दी मे लगभग ३०-४० विभिन्न विषयक पाठ्य पुस्तकों का प्रणयन या सम्पादन किया था। ये पुस्तकें हिन्दुस्तानी प्रेस, पटना; खड्गविलास प्रेस, पटना; पुस्तक-भण्डार, पटना; हिन्दुस्तानी तालीमी संघ, सेवाग्राम, वर्धा; अशोक प्रेस, पटना, अजन्ता प्रेस, पटना; वयस्क शिक्षा-बोर्ड, पटना; बिहार-टेक्स्टबुक-कमिटी, पटना आदि द्वारा प्रकाशित हुई थीं। इन पुस्तकों के अतिरिक्त 'नवीन शिक्षक' और 'बुनियादी शिक्षक' पत्रिकाओं में आपके द्वारा लिखित शिक्षा एवं शिक्षण-विधि-सम्बन्धी स्फुट लेख भी मिलते हैं। आपने बच्चों के लिए विभिन्न विषयों पर सैकड़ों रोचक तुकबन्दियाँ भी की थीं, जो अभी तक अप्रकाशित हैं। हिन्दुस्तानी और भोजपुरी शब्दों के संग्रह का कार्य भी आपने आरम्भ किया था, किन्तु वह कार्य अधूरा ही रह गया।

---

१. आपके द्वारा सन् १६५७ ई० के २० मार्च को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

उदाहरण

(१)

सुखद प्रेम सुख मूल विश्व का।
जड-चेतन चर-अचर सृष्टि का ॥
प्रेम ब्रह्म है, प्रेमी पूजक।
प्रेम महामंत्रों का बीजक ॥

× × ×

प्रेमी पिता दसरथ का मरना।
प्रेम राम का तापस बनना ॥
प्रेम बेर जूठा शबरी का।
प्रेम शाक अवशिष्ट विधुर का।
प्रेमव्रती का 'पी-कहँ' रटना।
प्रेम अमर का बंदी बनना।[1]

(२)

हमलोगों की दुनिया कितनी अनोखी है ? देखने में यह चिपटी मालूम पडती है, लेकिन है यह एकदम गेंद-सी गोल। फिर भी इसकी सतह एकदम चिकनी या समतल नही है। इसपर बहुतेरे ऊँचे-ऊँचे पहाड़ सर उठाये आसमान से बाते करते है। बहुतेरी नदियाँ पानी से लबालब भरी समुन्दर की ओर दौडी जाती है। कही ऊँचे पहाड़ है, कही गहरी खाइयाँ है। कही समतल मैदान है और कही ऊँची पथरीली पठार और मरुभूमि। एक ओर ऊँचे-ऊँचे पेड खड़े है और दूसरी ओर चौरस रेतीला मैदान पडा है। उसी तरह यह एकदम अचल या खडी मालूम पडती है। लेकिन असल मे यह सूरज के चारों ओर जोरों से चक्कर काट रही है। देखो तो मालूम पडेगा कि सूरज

---

१. आपके द्वारा प्रेषित सामग्री से।

घूम रहे है, किन्तु घूम रही है धरती। सूरज इसका दोस्त मालूम पडता है। वह इसे गरमी देता है, रोशनी देता है और शक्ति देता है।[1]

शिवदुलारे मिश्र 'मधुकर'

आप भागलपुर-जिला के 'लालूचक' नामक स्थान के निवासी श्रीबनवारी लालजी मिश्र 'भगलू' के पुत्र थे।[2] आपका जन्म सन् १८९७ ई० के १२ जून, शनिवार, सं० १९५४ वि० की ज्येष्ठ सुदी-द्वादशी, को हुआ था।[3] आपकी प्राथमिक शिक्षा घर पर ही हुई। सन् १९१३ ई० में आपने भागलपुर के जिला-स्कूल से मैट्रिक की परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास की। उसके बाद सन् १९१५ ई० में भागलपुर के टी० एन्० जे० कॉलेज से आपने आइ० ए० की परीक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त किया। सन् १९१७ ई० में बी० ए० की परीक्षा पास करने के बाद, पटना लॉ-कॉलेज से आपने बी० एल्० की परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास की। इन शिक्षणोपाधियों के अतिरिक्त आपने 'साहित्यभूषण', 'काव्य-मनीषी' एवं 'रामायणाचार्य' की उपाधियाँ भी प्राप्त की थी। सन् १९१९ से १९४३ ई० तक आप काँगरेस के प्रमुख कार्यकर्त्ताओ में थे। जब आप भागलपुर में वकालत कर रहे थे, तब सन् १९५२ ई० में आप भागलपुर किसान-मजदूर-प्रजा-पार्टी के सभापति-पद पर आसीन हुए। आपकी वक्तृत्व-कला बडी ही प्रशंसनीय थी। सार्वजनिक कार्यों में आप सदा अग्रसर रहे।

आपमें बचपन से ही साहित्य-प्रेम था। आगे चलकर अखिलभारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनों में आपने सक्रिय भाग लिया। सन् १९१२ ई० से आपने हिन्दी में लिखना प्रारम्भ किया। आपके द्वारा लिखित स्फुट रचनाएँ विविध पत्र-पत्रिकाओं में यथावसर प्रकाशित हुआ करती थी। आपने जिन पुस्तकों की रचना की थी, उनके नाम ये हैं—(१) विश्वामित्र,[4] (२) तुलसी-सतसई की टीका,[5] (३) तरुण-तरंग,[6] (४) तिलक-तरंग, (५) उमंग तथा (६) बंधक-विधान।

---

१. 'जीवन और विज्ञान' (शिवकुमार लाल, तृतीय भाग), पृ० २०३।

२. आपका वश प्राचीनकाल से साहित्य-प्रेमी कहा जाता है। सुप्रसिद्ध कवि भूषण से भी आपका वश सम्बद्ध था। आपके पूर्वज उत्तरप्रदेश के 'फतेहपुर'-मण्डलान्तर्गत 'टिकरा' नामक स्थान के निवासी थे।

३. साहित्यिक इतिहास-विभाग में उपलब्ध सामग्री के अनुसार। आपके परिचय-लेखन में 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही पृ० ६७२) से भी सहायता ली गई है।

४. गद्य, सन् १९२७ ई० मे प्रकाशित।

५. सन् १९१६ ई० में प्रकाशित।

६. प्रकाशन-काल ज्ञात नहीं। शेष तीनो पुस्तके अप्रकाशित है।

उदाहरण

(१)

गया में काँग्रेस की धूम थी। महात्मा गाँधी कारागार की कठिन दीवालो के अन्दर बैठा भारत के उद्धार का चर्खा चला रहा था। स्व० देशबन्धु दास उनकी अनुपस्थिति मे अपने मार्ग से भारतीयों को स्वराज्य की ओर ले जाने की अथक चेष्टा मे निमग्न थे और त्यागी नेहरू भी उनकी मदद पर डटे थे। ऐसे ही समय हमे महर्षि मालवीय का हिन्दू-सभा के मंच पर दर्शन हुआ। हमने देखा, इस कोमल-हृदय ब्राह्मण के हृदय पर, मानव द्वारा मानव पर किये गये अमानुषिक अत्याचार, गहरी छाप दे गये है और उसके बाहु फड़क रहे थे उनके उद्धार करने को। उनकी वाणी मे प्रचण्ड शक्ति थी और हृदय मे अद्भुत उत्साह। आँखों से अजस्र अश्रुधारा बह रही थी करुणा की और दमक रहा था मुख-मण्डल पर अलौकिक तेज।[१]

(२)

मंजुता मृणालन की माधुरी रसालन की,
तालन की तरंग सुखकारी है।
बालन की कलित किलोल लोल लोचन की,
मद भरी सरस चितौनि चमकारी है।
मधुकर कृपानन की तेजोज्वाल मालन की
प्रीति ग्वाल-बालन की रीति अनियारी है।
मानस मरालन की लीक नेम पालन की,
तुलसी तिहारी कविता पै वारि डारी है।[२]

---

१. साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री से।
२. वहीं।

(३)

पावनता प्रेम सो पसीजि पुष्प वर्षा करै,
भावुन का सहस मुख रीझि जस गायो करै।
सरस सहृदयता हूँ हँसि-हँसि बलैया लेय,
शील-मर्यादा पद बंदी सुख पायो करै।
महिमामई मानवता पुनीत जाति गौरव को,
कुसुम कदम्ब कमनीय हूं चढायो करै।
लोक हितकारी सुरसरि-सी पवित्र धार,
तुलसी कवितार्ई सदा सबको रिझायो करै।'[1]

शिवनन्दनप्रसाद सिंह 'युवक-विहार'

आप गया-जिला के 'मीरगंज' (वजीरगंज) नामक स्थान के निवासी श्रीदेवकी-नन्दन सिंह के प्रथम पुत्र थे। आपका जन्म सं० १६५१ वि० (सन् १८९४ ई०) की श्रावण शुक्ल-द्वितीया (गुरुवार) को हुआ था।[2] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हिन्दी-उर्दू के माध्यम से हुई। उसके बाद, आप समीप के एक स्कूल में प्रविष्ट हुए। किन्तु, शिक्षकों से मतभेद होने के कारण आपने पढ़ना छोड़ दिया और अपने घर पर आकर आप काव्य-साहित्य-सम्बन्धी स्वाध्याय में लग गये। सन् १९२३ ई० में आपने बिहार-प्रान्तीय किसान-सभा में प्रवेश किया। इस सभा के कारण आपको टिकारी-राज से एक बड़े संघर्ष में उलझ जाना पड़ा, जिसमें अन्ततोगत्वा आपकी ही विजय हुई। आप बडे पराक्रमी, वीर और सुगठित शरीरवाले बलशाली पुरुष थे। मुख्यतया उक्त संघर्ष के चलते आपका साहित्यिक जीवन पूर्णतया नहीं विकसित हो सका। यों, आपका साहित्यिक अध्ययन बड़ा गम्भीर माना जाता था। आपकी साहित्यिक सेवा का आरम्भिक वर्ष सन् १९१८ ई० माना जाता है। आप मुख्यतया ब्रजभाषा और खड़ीबोली में समस्या-पूर्त्तियाँ करते थे। आपके द्वारा लिखित भक्ति और वीर-रस की कविताएँ प्रसिद्ध थी। सन् १९३० से १९४५ ई० तक के प्रायः सभी प्रमुख कवि-सम्मेलनों में आपने भाग लिया था।

---

१. साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री से।

२. आपके पुत्र कुमार विजयरत्न सिंह द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के अनुसार आपके प्रस्तुत परिचय-लेखन मे 'गया के लेखक और कवि' (वही, पृ० २७६) तथा 'हिन्दी सेवी-संसार' (वही, पृ० २८७) से भी सहायता ली गई है।

हिन्दी में आपके द्वारा लिखित एक पुस्तक 'शिवनन्दन-पचासा' (कविता) प्रकाशित बतलाई जाती है। आपने श्रीमद्भागवत का हिन्दी-अनुवाद भी किया था, जो अद्यावधि अप्रकाशित ही है। आप सन् १९५४ ई० के ३० अक्टूबर को काशी में परलोकगामी हुए। आपकी रचना के उदाहरण हमें नहीं मिल सके।

शिवनन्दन मिश्र 'नन्द'

आप शाहाबाद-जिला के 'सोनबरसा' (उपाध्या-पाण्डेपुर) नामक ग्राम के निवासी प० श्रीसत्यनारायण मिश्रजी[१] के पुत्र थे। आपका जन्म सन् १८८७ ई० की ६ जनवरी (बृहस्पतिवार) को हुआ था।[२] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा खगौल (दानापुर, पटना) में हुई। उसके बाद आपका प्रवेश वहीं के रेलवे उच्चांग्ल-विद्यालय में हुआ। लगभग सोलह वर्ष की उम्र मे आपने वहीं से प्रवेशिका (मैट्रिक) की परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास की। तत्पश्चात् आपका नाम पटना के बी० एन्० कॉलेज में लिखवाया गया। उक्त कॉलेज से बी० ए० (ऑनर्स) की परीक्षा पास करने के बाद आपकी नियुक्ति बी० एन्० कॉलेजियट स्कूल में गणिताध्यापक के पद पर हो गई। उसके कुछ दिनों बाद आप सब-रजिस्ट्रार के पद पर नियुक्त हुए। आप गणित के साथ-साथ फलित ज्यौतिष के भी अच्छे ज्ञाता माने जाते थे। आपकी दिलचस्पी चिकित्सा में भी थी और आप होमियोपैथी के एक अच्छे जानकार थे। हिन्दी के अतिरिक्त अँगरेजी, संस्कृत आदि भाषाओं का आपको अच्छा ज्ञान था। भोजपुरी तो आपकी मातृभाषा थी ही। इन सभी भाषाओं में आप काव्य-रचनाएँ करते थे। आपकी ये रचनाएँ उस समय की प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ करती थीं। आपने हिन्दी में दर्जनों पुस्तकों की रचना की थी, जो बाँकीपुर के प्रसिद्ध खड्गविलास प्रेस से प्रकाशित हुई थीं। आपके द्वारा लिखित (१) 'उषा-अनिरुद्ध', (२) 'द्रौपदी-चीरहरण', (३) 'मोरध्वज', (४) 'केशरगुलबहार', (५) 'अन्धेरनगरी' और (६) 'शकुन्तला' अपने ढंग की निराली कृतियाँ हैं। आपने 'लीलावती' और 'सुन्दरकाण्ड'-रामायण का मैथिली में अनुवाद भी किया था। सन् १९२० ई० की दूसरी फरवरी को आपकी इहलीला समाप्त हो गई।

उदाहरण

(१)

देह को मरोड तोड पकडेगा प्राण को,
शाम के कमलसम आँख को मुदावेगा।
झाँक-झाँक कान के झरोखों से देखकर,
गला बीच बैठकर गरदन दबावेगा।

---

१. ये ईस्ट इण्डियन रेलवे-कम्पनी के एक उच्च पदाधिकारी थे।

२. साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

मूरख मन डोल रहा पीपल के पात-सा,

डमरू बजाकर तुझे बंदर बनावेगा।

'नन्द' मत चूर रहो देखकर जवानी को,

रहो सचेत एक रोज काल आवेगा ॥[१]

(२)

समय रूप रुपइया लेइके अइली हम बजरिया हो

खरीदे खातिर ना कुछ सुघर सउदवा हो।

खरीदे खातिर ना······॥

घुमत घुमत एहिजा गाँठि दुबरइली हो,

फिकिरिया लागलि ना, माथे चढल भारी बोझा बा।

खरीदे खातिर ना······॥

चमके बजरिया बीच लाह आ कँचुइया हो,

भोराबे खातिर ना······ ॥

सभ बड़ छोट लोगवा खरीदे खातिर ना······।

नीमने जोहत 'नन्द' बितली उमरिया हो,

उलटि के देख ना—

उर मे निरमल सोनवाँ खरीदे खातिर ना······॥[२]

शिवनन्दन सहाय[३]

आप शाहाबाद-जिला के 'अख्तियारपुर'[४] नामक ग्राम के निवासी श्रीकाली सहायजी के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९१७ वि० (सन् १८६० ई०) की आश्विन

---

१ साहित्यिक इतिहास विभाग मे सुरक्षित सामग्री से।

२. वही।

३. (क) आपके व्यक्तित्व और कृतित्व पर श्रीदेवेन्द्र प्रसाद सिंह ने जुलाई, सन् १९६३ ई० में एम्० ए० मे शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत किया था।

(ख) इसी नाम के एक दूसरे लेखक धरहरा (मुजफ्फरपुर)-निवासी हुए हैं, जिन्होंने 'कैलाश-दर्शन' और यात्रा-सम्बन्धी अन्य पुस्तको की रचना की है।

४. आपके पूर्वज श्रीधरणीदासजी की देखभाल के लिए 'अख्तियारी' नामक एक दाई थी, जिसके नाम पर इस ग्राम का नामकरण हुआ।

शुक्ल-द्वितीया, सोमवार को हुआ था।[1] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा लगभग १३ वर्षों तक आरा-नगर में, उर्दू-फारसी के माध्यम से हुई। लगभग पाँच वर्ष की अवस्था से ही आप मकतब जाने लगे थे। आपके पहले शिक्षा-गुरु मौलवी करामत अली थे। प्रारम्भिक शिक्षा के बाद आपका नाम पटना कॉलेजियट स्कूल में लिखवाया गया, जहाँ से सन् १८८० ई० में, आपने द्वितीय श्रेणी में प्रवेशिका की परीक्षा पास की। पारिवारिक स्थिति ठीक नहीं रहने के कारण आप उस अध्ययन से वंचित रहे। अध्ययनोपरान्त जीवन-निर्वाह के लिए लगभग २१ वर्ष की उम्र में, आप पटना उच्च न्यायालय में द्वितीय श्रेणी के लिपिक के पद पर नियुक्त हुए। उस पद पर कुछ दिन काम करने के बाद आप प्रोन्नत होकर पहले 'लेखापाल' और फिर 'प्रधान लिपिक' के पद पर प्रतिष्ठित हुए। अपनी कर्त्तव्यपरायणता के परिणामस्वरूप वहीं फिर आप अनुवादक के पद पर चले आये। अपने जीवन के अंतिम दिनों तक आप इसी पद पर रहे। इस पद से आप सन् १९१५ ई० में सेवा-निवृत्त हुए।

आप यद्यपि न्यायालय के कार्यों में व्यस्त रहा करते थे तथापि आपकी साहित्यिक अभिरुचि ने आपको बचपन से ही साहित्यानुरागी बना दिया था। अपने छात्र-जीवन से ही आप साहित्य-रचना की ओर प्रवृत्त थे। उस समय आप अँगरेजी और उर्दू में लिखा करते थे। आपके द्वारा लिखित अँगरेजी-लेख पटना के 'इण्डियन क्रॉनिकल' तथा 'बिहारी' और कलकत्ता के 'लाइफ ऑफ दि ईस्ट' में नियमित रूप से प्रकाशित हुआ करते थे।[2] उसी समय आपकी मुलाकात पं० अम्बिकादत्त व्यास, श्रीमद्राजकुमार बाबू रामदीन सिंहजी और

---

१. देखिए, 'बिहार की साहित्यिक प्रगति' (वही), पृ० ४८; 'शिवपूजन-रचनावली' (वही, चतुर्थ-खण्ड, पृ० १३४—३९) तथा 'पारिजात' (मासिक, जनवरी, सन् १९४८ ई०) मे प्रकाशित स्व० आचार्य शिवपूजन सहायजी का सस्मरण; 'विशाल भारत'; (कलकत्ता, सितम्बर, सन् १९३२ ई०, पृ० ३२१—२४) मे प्रकाशित श्रीयशोदानन्द अखौरी का लेख और 'बिहार-विभाकर' (वही), पृ० २६९। आपके प्रस्तुत परिचय-लेखन मे उक्त सामग्री के अतिरिक्त दिनाक १ नवम्बर, सन् १९५८ ई० को आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री, 'गोस्वामी तुलसीदास' (शिवनन्दन सहाय, स० २०१७ वि०) का भूमिका-भाग; 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ५३९), 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, तृतीय भाग, पृ० १२६४); 'हरिऔध-अभिनन्दन-ग्रन्थ' (वही, पृ० ५१३—१८ और ४४७), 'हिन्दी-कोविद-रत्नमाला' (दूसरा भाग, श्यामसुन्दर दास, सन् १९२१ ई०) तथा साप्ताहिक 'शाहाबाद' (वही, पृ० ९) मे प्रकाशित लेखो से भी सहायता ली गई है।

श्रीउमाशकरजी ने आपका जन्म स० १९१८ वि० के आश्विन मास के सोमवार को बतलाया है।—देखिए 'कलम-शिल्पी' (वही), पृ० ७३।

२. आपके द्वारा लिखित 'हिस्ट्री ऑफ अख्तियारपुर' सन् १८८५ ई० मे बाँकीपुर के बिहार-बन्धु प्रेस से प्रकाशित हुआ था। इसके अतिरिक्त आपने प० अम्बिकादत्त व्यास-कृत 'गोरक्ष-विजय' का भी अगरेजी-अनुवाद किया था।

उर्दू-फारसी में आप शायरी भी करते थे। आपके लेखो, समालोचनाओ और ग्रन्थो मे कहीं-कही उर्दू-फारसी के शेर प्रकरणानुसार मिलते है। बातचीत के प्रसग मे शेखसादी की 'गुलिस्ताँ-बोस्ताँ' के शेर प्राय. कहा करते थे। 'करीमा' और 'खालिकबारी' को तो मानो कण्ठाग्र ही कर डाला था।

बाबू साहबप्रसाद सिंहजी से हुई। इन्ही सज्जनों की प्रेरणा से आपने अँगरेजी-उर्दू को छोड़कर हिन्दी में लिखना प्रारम्भ किया। आपकी लेखन-प्रवृत्ति देखकर बाबू रामदीन सिंहजी ने आपको खड्गविलास प्रेस जैसे सम्पन्न पुस्तकालय के पूर्ण उपयोग का अवसर प्रदान किया। धीरे-धीरे आप पटना-सिटी-स्थित हरमन्दिर के महन्थ और सुप्रसिद्ध हिन्दी-सेवी बाबा सुमेरसिंहजी के सम्पर्क में आये। उनके सम्पर्क से आपकी प्रवृत्ति हिन्दी-कविता की ओर हुई। उन्ही की प्रेरणा से आप काव्यशास्त्र-सम्बन्धी ग्रन्थों का अध्ययन कर काव्य-रचना करने लगे। आपने बाबा सुमेरसिंहजी को ही अपना काव्य-गुरु माना है। काव्यशास्त्र के साथ-साथ आपने पं० दामोदर शास्त्री से संस्कृत का अध्ययन किया, जिसके परिणामस्वरूप आपके ज्ञान-क्षितिज का और भी विस्तार हुआ।

आपकी स्मरण-शक्ति ईर्ष्या की वस्तु थी।[1] अपनी इस शक्ति का उपयोग कर आपने एक पुस्तक ही लिख डाली थी—'पिछले पचास वर्षों में बिहार में हिन्दी की अवस्था'। सन् १९२१ ई० में आप बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के तृतीय अधिवेशन (सीतामढी) के जब सभापति हुए, तब अपने सुदीर्घ लिखित भाषण में आपने बिहार के हिन्दी-साहित्य का सारा इतिहास ही लिख डाला। आज भी उसी के जगमग प्रकाश में अतीत के अन्धकार-युग को टटोलना पडता है।[2]

बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के अतिरिक्त आप अन्य अनेक संस्थाओं से भी सम्बद्ध रहे। सन् १९२४ ई० में आपने बिहार-प्रान्तीय कवि-सम्मेलन का सभापतित्व किया। कई वर्षों तक आप पटना-धर्म-समाज के सभापति रहे। सिक्खों के सम्प्रदाय से तो आप जीवन-भर सम्बद्ध रहे। विभिन्न संस्थाओं में दिये गये आपके व्याख्यान बडे ही रोचक और विद्वत्तापूर्ण बतलाये जाते हैं। आपके द्वारा दिये गये व्याख्यानों का एक संग्रह भी प्रकाश में आ चुका है।

---

१. आपके पास साहित्यिक संस्मरणो का कुबेर-कोश था। इसके अतिरिक्त कवियो की वशावली, काव्य-ग्रन्थो की छन्द-सख्या, साहित्यकारो की लिखी पुस्तको की नामावली, देश-भर के पत्रो और उनके सम्पादको का इतिवृत्त, साहित्यिक स्स्थाओ का विवरण-सहित परिचय—सब कण्ठस्थ। तुलसी-कृत रामायण के प्रत्येक काण्ड मे कौन छन्द कितने है, सब आपकी जबान की नोक पर।

२ स्व० आचार्य शिवपूजन सहायजी ने एक बार आपसे साहित्य-सम्मेलनवाले उपर्युक्त भाषण के अतिरिक्त बिहार के साहित्यिक इतिहास से सम्बन्धित सामग्री के लिए प्रार्थना की तो आपने एक भारी पुलिन्दा ही भेज दिया। शिवपूजनबाबू ने अपने एक सस्मरण मे लिखा है—"दुर्भाग्य की बात, मुजफ्फरपुर-निवासी श्रीभुवनेश्वर सिंहजी 'भुवन' उसे अपनी वैशाली' पत्रिका मे प्रकाशित करने के लिए आग्रहपूर्वक ले गये। आखिर उन्होने उसका कोई उपयोग भी नही किया और कई बार उसे लौटाने का अनुरोध करने पर भी यही कहकर क्षमा माँगते रहे कि कुछ बातें नोट करके शीघ्र भेज दूँगा। 'भुवनजी' मृत्यु-भवन छोड़कर चले भी गये, मगर वह अमूल्य सामग्री नसीब न हुई।"

—देखिए, 'शिवपूजन-रचनावली' (वही), पृ० २३८ तथा 'पारिजात' (वही, जनवरी, सन् १९४८ ई०)।

धार्मिक विचारों से, आप नानक-पंथी थे। आपके जैसा अध्ययनशील व्यक्ति भी विरले ही मिलता है। अपने जीवन के अत-अंत तक आपने ग्रंथों का अध्ययन करना नही छोड़ा। आपके द्वारा संगृहीत ग्रंथो से एक समृद्ध पुस्तकालय ही बन गया है।

आप बडे ही सरल एवं आडम्बरहीन व्यक्ति थे। घिसा स्लीपर, घुटनों तक की धोती, गाढ़े का कुरता और मामूली दुपलिया टोपी, उलझी हुई दाढ़ी, कभी-कभी पेबन्द लगा हुआ कुरता और उसके बटन भी खुले हुए! वेष-भूषा, भाषा, स्वभाव, बोलचाल—सबमें सादगी। सरलता और साधुता की साक्षात् मूर्त्ति ही समझिए।

आपके द्वारा की गई हिन्दी-सेवा बहुत ही महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। आपकी गणना बिहार के उन साहित्य-साधकों में होती है, जिनके सतत प्रयत्न एवं सेवा के बल पर आगे चलकर खडीबोली की नीव मजबूत हुई। आपकी निरन्तर और अथक साहित्य-साधना से बिहार की गौरव-श्री की जो वृद्धि हुई, उसे बिहार का साहित्यिक-समाज कभी भूल नही सकता। आप भारतेन्दु-युगीन परम्पराओं के अन्यतम पालक थे। प० प्रतापनारायण मिश्र तथा बाबू राधाकृष्णदास आपके समकालीन लेखक थे और कविवर पं० अयोध्यासिह उपाध्याय 'हरिऔध' आपके पुराने मित्र।

हिन्दी में आपका प्रवेश काव्य-रचनाओं, विशेषतः समस्या-पूर्त्तियों के साथ हुआ था। काशी के 'कवि-मण्डल' और 'कवि-समाज' तथा कानपुर के 'रसिक-मित्र' नामक पत्रिकाओं में आपकी आरम्भिक रचनाएँ प्रकाशित हुआ करती थी।[१] आगे चलकर आपके द्वारा लिखित स्फुट कविताओं का एक संग्रह 'कुसुम-कुज'[२] के नाम से प्रकाशित हुआ। आपने 'चयनिका'[३] के नाम से 'भारतेन्दु' की उक्तियों का एक संग्रह तो सम्पादित किया ही था, 'विचित्र संग्रह' नामक लॉर्ड टेनिसन के 'लक्सले-हाल' तथा अँगरेजी की अन्य कविताओं का अनुवाद भी प्रस्तुत किया था। इसके अतिरिक्त 'कविता-कुसुम'[५] नाम से शेली और टेनिसन की कविताओ का पद्यानुवाद भी आपके नाम पर मिलता है। आपने बहुत-सारी जीवनियाँ भी लिखी। प० रामचन्द्र शुक्ल ने आपको सबसे पहला सफल जीवनी-लेखक माना है।[६] आपके द्वारा लिखित जोवनियो के नाम इस प्रकार हैं—(१) सच्चरित्र

---

१. आपके ही अध्यवसाय से आगे चलकर पटना मे 'कवि-समाज' की स्थापना हुई, जिसकी ओर से 'समस्या-पूर्त्ति' नामक मासिक पत्रिका निकली। इस पत्रिका का सम्पादन-भार आपके सुपुत्र सुप्रसिद्ध हिन्दी-सेवी बाबू ब्रजनन्दन सहाय 'ब्रजवल्लभ' पर था।

२. खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुर से सन् १९२५-२६ ई० मे प्रकाशित।

३. वही।

४. उक्त प्रेस से ही सन् १९०८ ई० मे प्रकाशित।

५. उक्त प्रेस से ही सन् १९०६ ई० मे प्रकाशित।

६. 'हिन्दी-साहित्य का इतिहास' (रामचन्द्र शुक्ल)।

हरिश्चन्द्र का जीवन-चरित्र,[१] (२) श्रीसीताराम भगवानप्रसादजी की जीवनी[२], (३) बाबू साहब प्रसाद सिंह की जीवनी,[३] (४) गोस्वामी तुलसीदास[४], (५) गौराग महाप्रभु[५], तथा (६) मीराबाई की जीवनी[६]। आपने दो नाटकों की भी रचना की थी—(१) सुदामा-नाटक[७] और (२) उद्धव-नाटक[८]। इनके अतिरिक्त आपकी जो अन्य रचनाएँ मिलती हैं, उनके नाम ये हैं—(१) गत पचास वर्षों में हिन्दी की दशा[९], (२) बंगाल का इतिहास[१०], (३) दयानन्द-मत-मूलोच्छेद[११], (४) सनातनधर्म की जय[१२], (५) आशुबोध-ज्योतिष[१३], (६) डाली[१४] और (७) साहित्य-वातायन[१५]। अपने जीवन के अन्तिम दिनों में आप पक्षाघात-रोग का शिकार हो गये थे। आप सन् १९३२ ई० की १५ मई (वैशाख शुक्ल-दशमी) को आरा-नगर में, लगभग ७२ वर्ष की आयु में, परलोकगामी हुए।[१६]

---

१. खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुर से सन् १९०५ ई० मे प्रकाशित। इसके लिए आपके मित्र और भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के फुफेरे भाई बाबू राधाकृष्णदास ने आपकी बड़ी सहायता की थी। वे स्वय कभी-कभी कहा करते थे कि इसके लिए जितनी सामग्री इकट्ठी की गई थी, उतनी यदि प्रकाश मे आ पाती तो पुस्तक तिगुनी मोटी हो जाती। जब खड्गविलास प्रेस के स्वामी और भारतेन्दु-सखा बाबू रामदीनसिंहजी ने इससे सम्बन्धित शेष सामग्री लौटा दी तब उसे प० अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' सब समेटकर काशी ले गये। उसके बाद, आगे चलकर सारी सामग्री दुर्लभ हो गई। इस पुस्तक पर आपको नागरी-प्रचारिणी सभा, आरा की ओर से स्वर्ण-पदक प्राप्त हुआ था।

२. बाबू गोविन्ददेवनारायण शरण द्वारा स० १९१२ वि० मे प्रकाशित।

३. खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुर से सन् १९०७ ई० मे प्रकाशित।

४. सर्वप्रथम नागरी-प्रचारिणी सभा, आरा से सन् १९०५ ई० मे प्रकाशित। इसका दूसरा सस्करण बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्, पटना की ओर से प्रकाशित हुआ। यह हिन्दी मे, गोस्वामी तुलसीदासजी की पहली और सबसे अच्छी जीवनी मानी जाती है।

५. खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुर से सन् १९२७ ई० मे प्रकाशित।

६. इसमे प्रकाशन-काल अनुल्लिखित है।

७. खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुर से स० १९०७ ई० मे प्रकाशित।

८. देखिए, 'गोस्वामी तुलसीदास' (वही, भूमिका, पृ० ७)।

९. आरा-नागरी-प्रचारिणी सभा से स० १९७७ वि० मे प्रकाशित।

१० देखिए, 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही), पृ० ६१।

११. खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुर से प्रकाशित।

१२. वहीं से स० १९८७ वि० में प्रकाशित।

१३. 'विचित्र सग्रह' के साथ प्रकाशित।

१४. देखिए, 'बिहार की साहित्यिक प्रगति' (वही), पृ० ४८।

१५ वही।

१६. देखिए, 'बिहार की साहित्यिक प्रगति' (वही), पृ० ४८ और 'शिवपूजन-रचनावली' (वही, चतुर्थ खण्ड), पृ० ४२२ तथा 'जागरण' (पाक्षिक, वर्ष १, अक ६, जून, सन् १९३२ ई०) मे आचार्य शिवपूजन सहायजी का और 'प्रताप' (साप्ताहिक, मई, सन् १९३२ ई०, पृ० १२) मे आरा के श्रीशुकदेव सिंह का सम्पादकीय।

उदाहरण

(१)

सौन्दर्य ही कविता का क्या, जगत का प्राण है। इसमें बड़ी भारी चित्ताकर्षिणी शक्ति है। वैष्णव कवियो ने इसीसे श्रीकृष्णचन्द्र रामचन्द्र में पराकाष्ठा की सुन्दरताई दिखलाई है। सौदर्य्य सृष्टि करना ही प्रकृत कवि का कर्त्तव्य है। कवि को ऐसी रचना की सृष्टि करनी चाहिए जिससे पाठकवृन्द आनन्द में निमग्न होने लगें; प्रेम तथा करुणा से पाषाणवत् हृदय भी पिघल जाय, मूढत्व, जड़त्व, पशुत्व खोकर लोग सच्चरित्र हो एवं मनुषत्व लाभ करें; ऐसा आदर्श दिखलाना चाहिए कि उसका अवलोकन मात्र मंत्र और टोने का प्रभाव दिखलावे; ऐसा सदुपदेश देना चाहिए कि मनुष्य प्राणी मात्र से स्नेह करता हुआ, बन्धुत्व प्रगट करता हुआ, अपना लोक परलोक दोनो सुधार ले। इसी ढंग से नीतिधर्म्म का उपदेश हो, चाहे ज्ञान भक्ति का हो, सफल होता है। कोरे करिमस्तक सदृश कुच, काली घटा ऐसे कच, कुरंग के समान नेत्र निरूपण ही से काम न चलेगा। आप किसी रंग की नायिका लाइये, पर सच्चा रसिक उसका आदर नही करेगा। पूर्वोक्त गुण हम हरिश्चन्द्र की कविता में विशेष पाते हैं। इनका आदर्श अत्युत्तम है। अपनी रचना में इन्होंने महात्मा, क्षुद्र, सज्जन, कपटी, राजा, प्रजा, स्वामी, सेवक, ऊँच, नीच सभी का उत्तम चित्र खीचा है। आर्यवीर, रणवीर, दानवीर सभी का निदर्शन दिखलाया है। पविश्रता, पतिप्रेम-विह्वला, वीरबामा, सबों के उत्तम आदर्श इनकी रचना में देखते है। इसीसे हमको हरिश्चन्द्र के प्रकृत सत्कवि होने में कुछ सन्देह नही होता।[१]

---

१ 'सच्चरित्र हरिश्चन्द्र का जीवन चरित्र'। शिवनन्दन सहाय, सन् १९०५ ई०), पृ० २३५-३६।

गोस्वामी तुलसीदासजी हिन्दी साहित्याकाश के सर्वोत्कृष्ट नक्षत्र हुए है, यह बात सब लोग स्वीकार करते है। इस नक्षत्र को अस्त हुए आज, ३०६ वर्ष हो गये, परन्तु इसकी स्वच्छ सुखद कौमुदी आज भी इस जगत् मे चतुर्दिक् फैल रही है एवम् नित्य उत्तरोत्तर आनन्ददायिनी हो रही है। इस अलौकिक चन्द्र के अस्त होने पर भी केवल इसकी सुकीर्ति चन्द्रिका की ओर दृष्टिपात करने से हरिजनों तथा काव्यानुरागियों का गम्भीर हृदय तरङ्गित होने लगता है एवम् रसिक चकोर उसी की ओर टकटकी बाँध देते हैं और कर्म्मजनित त्रयतापों से सन्तप्त कितने ही व्यक्ति इसका आश्रय ग्रहण कर सुख पाते तथा असाध्य मानसिक रोगों से मुक्तिलाभ करते हैं। इस अलौकिक कलाधर के प्रताप से श्रीरामयश गर्भित महामनोहारिणी कविता कुमुदिनियों ने अपने विकास से ग्रंथ सरोवरों को ऐसा आच्छादित कर रखा है कि उधर एक बार देखने ही से मन मुग्ध हो जाता है। उन कुमुदों की मधुर सहज सरस सुगन्ध भारतवर्ष में ही नही फैल रही है वरन् सुख्याति पवन के पंखों पर चढ़कर अन्य देशों मे भी पहुँच वहाँ के निवासियों को मोहित तथा आह्लादित करती है। तीव्र समालोचना का प्रचण्ड मार्तण्ड इन कुमोदनियों को शुष्क तथा नीरस करने की सामर्थ नही रखता; कुतर्कों की कुझटिका भी इन्हें छिन्न-भिन्न नही कर सकती; द्वेष का तुषार भी इन्हें नष्ट नही कर सकता। जबतक हिन्दी साहित्य का गौरव बना रहेगा, जबतक हिन्दुओं की हिन्दी भाषा में ममता रहेगी, इनकी सहज छटा की नित्य प्रति वृद्धि होती रहेगी।[१]

---

१. 'गोस्वामी तुलसीदास' (शिवनन्दन सहाय, सन् १९१२ ई०), पृ० १२१।

(३)

चन्द को है भास नाहीं मुख को प्रकास यह,
नीलिमि अकास नाही सारी नील बोरी की।
नखत उदोत नाही भूषन की जोति होति,
तारा है गिरे ना खंसे वेदी भाल गोरी की ।।
पुष्प खस बास नाही स्वांस को मुबास जानों,
कोकिला न बोलै बानी स्यामचित चोरी की।
चाँदनी न फैली सिव भाखत है साँच साँच,
अंगदुति फैलि रही कीरति किसोरी की ।।[१]

(४)

दोऊ बडे भागे प्रेम पागे अनुरागे,
दोऊ दिये कर काँधे फिरै पास फूल क्यारी के।
एकै रंग एकै ढंग एकै भाव,
कहै सिव भूषन वसन एक न्यारी के।
एकै राग एकै तान एकै रीति,
एकै प्रीति एकै मन बस दोय देह छबि न्यारी के।
प्रानप्यारी बसत हिये मे,प्रानप्यारे,
तैसे प्रानप्यारे बसत हिये मे प्राणप्यारी के।[२]

(५)

राम ही राम उच्चारन कै, करते बहु लोग सुदंड प्रनाम है।
शूद्र यही कह आदि ही में, बनिकादि अरम्भत तौलन काम है ।।
संत महंतरु भक्त सबै, जपते निशिवासर त्यों सोइ नाम है।
सर्वं सहायक सर्वधनी सिव, व्यापक सर्व सु राम ही राम है ।।[३]

---

१. 'समस्या-पूर्त्ति' (पटना, जनवरी, सन् १८९७ ई०), पृ० ६।
२. स्व० बाबूशिवनन्दन 'सहाय द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री से।
३. 'सुकवि' (वर्ष ३, अंक ८, नवम्बर, सन् १९३० ई०), पृ० ३३।

(६)

जात हुती आली संग जमुना नहाइबे को,
कुंजन ते आते कहूँ साँवरो दरसिगो।
हँसिगो नचाय नैन मार मूठ बसीकर्न,
अतुलित ओप दृग दोउन में बसिगो ॥
अँग अंग 'सिव' जू अनंग बान धसिगो,
पै आलिन की लाज मन कामिनी मससिगो।
आगे पाँव परत न पाछे ही फिरत बनै,
चुम्बक जुगल बीच मानो लोह फँसिगो ॥[१]

(७)

रचि कै बिधि मोको रूपवती, कियो मोपै कहा उपकार भला है।
डिग झौरत भौर को झुंड सदा, कच खोच कै मोर करै विकला है ॥
सिव आनन चोर चकोर करै, सुक ठोढी पै जान रसाल फला है।
अरु छाँह सी संग मो डोलो करै, बरजे नही मानत नन्द लला है ॥[२]

(८)

कहुँ बैर सुपारी नरंगो लसै, कहुँ श्रीफल की सुछटा उमगी रहै।
सुठि सेव रसाल कहूँ दरसै, कहुँ दाने अनार की जोति जगी रहै।
लखि मीन कहूँ अरु बिम्ब कहूँ, मति भोरहिं ते 'सिवजू' कि ठगी रहै।
दिल दाम दियेहुँ न वस्तु मिलै, जँह घाट पै रूप की हाट लगी रहै ॥[३]

---

१ श्रीबाल-हिन्दी पुस्तकालय, आरा से बाबू शिवपूजन सहायजी द्वारा श्रीशिवपूजन सहायजी के पास प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री से।—देखिए, 'काव्य-सुधाधर' (सन् १८९६ ई०) भी।

२. 'समस्या-पूर्त्ति' (वही, जनवरी, सन् १८९७ ई०), पृ० ७।

३. वही (जनवरी, सन् १८९८ ई०), पृ० १।

शिवनाथ मिश्र 'व्यास' 'कविमणि'

आप शाहाबाद-जिला के 'पिटरा' (पो० लहठान) नामक स्थान के निवासी पं० जगन्नाथ मिश्रजी 'दैवज्ञ' के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९५६ वि० (सन् १८९९ ई०) की भाद्र-शुक्ल-पंचमी (रविवार) को हुआ था।[१] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई थी। आगे चलकर सं० १९९६ वि० में आपने 'संस्कृत-कार्यालय', अयोध्या से 'काव्य-भूषण' की उपाधि प्राप्त की। अपनी पैतृक सम्पत्ति के रूप में आपको वैद्यक का अच्छा ज्ञान प्राप्त था और उसी आधार पर प्रसिद्ध डाबर-कम्पनी ने आपको वैद्य के रूप में नियुक्त कर लिया था।

हिन्दी-भाषा और साहित्य के प्रति आपको विशेष अनुराग था। हिन्दी-भाषा के प्रचार के लिए आपके प्रयास श्लाघनीय हैं। आपकी साहित्य-सेवा का आरम्भिक काल सन् १९२९ ई० माना जाता है। उसी वर्ष से आपके लेख और आपकी कविताएँ प्रकाश में आने लगी थीं। आपकी काव्य-रचनाएँ मुख्य रूप से 'साहित्य-सुधा', 'सुकवि', 'काव्य-कलाधर' आदि पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ करती थी। सन् १९३४-३५ ई० में, आजमगढ के कवि-सम्मेलन ने आपको रजत एवं स्वर्ण-पदकों से विभूषित किया था। आपके द्वारा रचित दो पुस्तकें—(१) हिरण्यकशिपु-वध और (२) प्रम-पंचक—आज भी अप्रकाशित हैं।

उदाहरण

(१)

भारी श्रम करके चलाते हल खेतन में,
सहते विपत्ति सब भाँति शीत-घाम की।
लेके उधार दूसरों से सब बोते बीज,
मन हरषाते छटा देखि शस्य श्याम की।
पावस ग्रीषम बनि तपित किया है भूमि,
दुखित किसान गति देखें विधि वाम की।
त्राहि-त्राहि विकल पुकारते है बार-बार,
काहे कृपा नेकु नहिं होती घनश्याम की।[२]

---

१. आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

२. साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री से ही।

(२)

घेरि घेरि चारों ओर बरसन लागे बूँद,
डूब गई भूमि सब भाँति उस ग्राम की।
ताहि समय झंझानिल बहि के कँपाया गात,
विकल वधूटी टेर लाई हरि नाम की।
सुनके पुकार वनमाली गिरधारी बनि,
कीन्हीं आइ रक्षा गोप गोपी ब्रजधाम की।
शंकित पुरन्दर चरण शीश नायो अरु भाग्यो,
घनश्याम शक्ति देखि घनश्याम की।[१]

शिवप्रसाद चतुर्वेदी

आप मुँगेर-जिला के 'मलयपुर' नामक स्थान के निवासी पं० देवीप्रसादजी के पुत्र थे। आपकी माता का नाम सुभद्रादेवी था।[२] आपका जन्म सं० १९४४ वि० (सन् १८८७ ई०) की फाल्गुन कृष्ण-चतुर्दशी (शिवरात्रि) को हुआ था।[३] आपने केवल 'मैट्रिक' तक की शिक्षा प्राप्त की थी। आगे चलकर आपने दर्शन, वेदान्त, आयुर्वेद, ज्यौतिष एवं साहित्य का, स्वाध्याय द्वारा पर्याप्त ज्ञान प्राप्त कर लिया। विभिन्न शास्त्रों, पुराणों तथा उपनिषदों का भी आपने गम्भीर अध्ययन और मंथन किया। आपको 'साहित्य-सरोरुह' की उपाधि प्राप्त थी। आप बहुत दिनों तक कलकत्ता के मारवाड़ी-एसोसियेशन से सम्बद्ध रहे। वहीं कार्य करते हुए, आपने सारस्वत खत्री-विद्यालय की स्थापना की और आरम्भ में उसके प्रधानाध्यापक भी रहे। सन् १९०५ ई० से आपने स्वदेशी का व्रत लिया और सन् १९२१ ई० से आप काँगरेस के एक कर्मठ कार्यकर्त्ता हो गये। काँगरेस में आपका प्रवेश देशरत्न डॉ० राजेन्द्रप्रसादजी की प्रेरणा से ही हुआ था और अन्तिम दिनों तक आप निर्लिप्त-निष्काम रहकर उसी का अलख जगाते रहे। सन् १९२२ ई० में गया-काँगरेस-अधिवेशन के आप जी० ओ० सी० थे। काँगरेस में आपकी सेवाएँ अमूल्य मानी जाती हैं।

---

१ साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री से।

२. हास्यरसावतार प० जगन्नाथप्रसादजी चतुर्वेदी आपके मामा थे।

३. श्री दा० दा० चतुर्वेदी (लश्कर, मध्यभारत) के द्वारा दिनाक १८ मई, सन् १९५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

आपको संगीत, मल्ल-क्रीड़ा, व्यायाम, शतरंज, घोड़सवारी, तैराकी आदि से भी बड़ा प्रेम रहा। पाकशास्त्र और वनस्पतियों की पहचान में भी आप सिद्धहस्त थे। इन सब गुणों के साथ-साथ आप मृदुल, मिलनसार तथा उदार प्रकृति के व्यक्ति थे। आपको हिन्दी के अतिरिक्त संस्कृत, उर्दू, बँगला, अँगरेजी आदि भाषाओं का भी अच्छा ज्ञान था।

हिन्दी में साहित्य-रचना का व्यसन आपको बाल्यकाल से ही रहा। पं० गोविन्दनारायण मिश्र, श्रीचन्द्रधर शर्मा गुलेरी, बाबू बालमुकुन्द गुप्त, श्रीअम्बिकाप्रसाद वाजपेयी, म० म० पं० सकलनारायण शर्मा आदि आपके साहित्यिक मित्रों में थे। सन् १९११ ई० के लगभग ब्रजभाषा का आपका प्रथम कविता-संग्रह[१] प्रेस में प्रकाशनार्थ गया और वहीं गुम हो गया। तबसे आपको कुछ ऐसा आघात पहुँचा कि इस दिशा में आपकी प्रगति ही अवरुद्ध हो गई। आपको उनमें से जो कुछ छन्द याद रह गये, वे ही अब प्राप्य हैं।

उदाहरण

(१)

मोर के पखौवन को माथै पै मुकुट चारु,
काछनी सुपीत श्याम तन में सुहावती;
अधर अरुनारे पै विराजै हरित वंशी,
माला उर अति ही विचित्र छवि छावती।
सघन घुँघरारी कारी कारी अलक औलि,
गुंज अलिपुंज कैसी मंजुता दिखावती;
मोद मन लावती लुभावती न भावती,
सु पैजनी कहो तो काहि छुंछुं पद गावती॥[२]

(२)

नीलकंठ भूतेश वसन दिक् अंग विराजै,
उर मुण्डन की माल शीश भागीरथि राजै;

---

१. यह संग्रह स्व० पं० जगन्नाथप्रसादजी चतुर्वेदी के द्वारा उनके 'संसारचक्र' के साथ ही छपने गया था। सर्वश्री लछिराम, भगवन्त तथा यज्ञराज आदि कवियों ने उसे सुना और सराहा था। उसकी अधिकांश रचनाएँ दोहे, घनाक्षरी, सवैया, छप्पय, कुण्डलिया आदि छन्दों में थीं।

२. श्री दा० दा० चतुर्वेदी (वही) द्वारा प्रेषित सामग्री से।

धधकत नैन प्रचण्ड काम जारन के काजै,
क्रीड़ाथल सम साज जहाँ डमरू नित बाजै।
संग लियै गिरिजा सदा, अनगिन जित क्रीड़ा करत;
ऐसे प्रभु मदननारि की 'द्विज माथुर' विनती करत ॥[१]

★

शिवप्रसाद पाण्डेय 'सुमति'[२]

आप पटना-नगर-स्थित 'रानीघाट' (महेन्द्रू) नामक स्थान के निवासी शिवभक्त पं० संजीवन पाण्डेयजी के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९३३ वि० (सन् १८७६ ई०) की फाल्गुन कृष्ण-त्रयोदशी (रविवार, शिवरात्रि) को हुआ था।[३] पिता के असमय काल-कवलित हो जाने के कारण आपका पुत्रवत् लालन-पालन आपके विद्वान् अग्रज पं० रामप्रसाद पाण्डेयजी के द्वारा सम्पन्न हुआ। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही उन्हीं की देखरेख में हुई। आगे चलकर आपने साहित्यशास्त्र का विधिवत् अध्ययन पं० अम्बिकादत्त व्यास 'सुकवि' के निर्देशन में किया। आपने संस्कृत-साहित्य एवं व्याकरण की शिक्षा तो कई प्राध्यापकों से प्राप्त की, किन्तु काव्य, पुराण, उपनिषद् आदि का विशेष ज्ञान पटना-कॉलेज के तत्कालीन संस्कृत-प्राध्यापक पं० कन्हैयालाल त्रिपाठी[४] की देखरेख में प्राप्त किया। आप उक्त विषयों में कलकत्ता-विश्वविद्यालय की अनेक परीक्षाओं में बैठकर प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए थे। संस्कृत की परीक्षाओं में सर्वोच्च स्थान प्राप्त करने के कारण आपको कई सरकारी वृत्तियाँ प्राप्त हुई थीं। संस्कृत और हिन्दी के अतिरिक्त आपको बँगला और अँगरेजी का भी अच्छा ज्ञान था।

आपने बिहार के कई हाई स्कूलों में संस्कृताध्यापक के रूप में कार्य किया। सन् १९०६ से १९१५ ई० तक आप बेतिया-राज के हाई इंगलिश स्कूल में हेडपंडित के पद पर रहे। उसके बाद, सन् १९२० ई० तक आप 'पाटलिपुत्र' नामक साप्ताहिक पत्र

---

१. श्री दा० दा० चतुर्वेदी (वही) द्वारा प्रेषित सामग्री से।

२ आपके पूर्वज शाहाबाद-जिला के 'बेदउली' ग्राम से आकर पटना मे बसे थे। आपके पूर्वजो मे कई विद्वान् हुए है। आपके अग्रज प० रामप्रसाद पाण्डेयजी संस्कृत, हिन्दी और उर्दू के अच्छे ज्ञाता तथा विख्यात कथावाचक थे।

३. प० श्रीरामेश्वर पाण्डेय (रानीघाट, महेन्द्रू, पटना) द्वारा दिनाक १९ जनवरी, सन् १९५९ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित विवरण के अनुसार।—देखिए, 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ६४१) और श्रीपरमानन्द पाण्डेय (अनुसन्धान-पदाधिकारी, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्) द्वारा लिखित "कविकुलभूषण पाण्डेय शिवप्रसाद 'सुमति'" शीर्षक लेख।

४. इन्ही के अग्रज पण्डितप्रवर सुखवासी त्रिपाठीजी ने आपको १४ वर्ष की अवस्था मे ही उत्तम पद्य-रचना करते देखकर आपका उपनाम 'सुमति' रख दिया था। आपकी काव्य-रचनाएँ 'भट्टकवि' के नाम से भी मिलती है।

में सहायक सम्पादक के पद पर कार्य करते रहे। सन् १९२१ ई० से आप पटना के सुप्रसिद्ध खड्गविलास प्रेस में 'प्रधान पण्डित' की जगह पर चले आये।

छात्र-जीवन से ही आपको काव्य-रचना का अभ्यास हो गया था। समस्या-पूर्त्ति में आरम्भ से ही आप बडे सिद्धहस्त थे। आगे चलकर, बिहार के सुकवियो में आपका नाम गिना जाने लगा। सन् १८९७ ई० में, संस्कृत की 'काव्योपाधि'-परीक्षा पास कर आपने 'काव्यतीर्थ' की उपाधि प्राप्त की। सन् १९०० ई० में रसिक-सभा, कानपुर से आपको 'कविकुलतिलक' की उपाधि प्रदान की गई। सन् १९०२ ई० में 'बिसवाँ' (सीतापुर) के कवि-मण्डल ने आपकी विलक्षण काव्य-प्रतिभा के लिए आपको 'बिहार-भूषण' की उपाधि से विभूषित किया।

आप बिहार के अतिरिक्त उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश आदि के अनेकानेक कवि-सम्मेलनो एव साहित्यिक गोष्ठियो में समादृत हो चुके थे। पिलकिछा (जौनपुर) के कवि-समाज ने आपको घड़ी, पगडी आदि देकर आपका बडा सम्मान किया था। सन् १९३३ ई० में भागलपुर के एकादश बिहार-प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के अवसर पर आयोजित कवि-सम्मेलन के सभापति आप ही थे, जब कविवर 'दिनकर' ने सर्वप्रथम 'हिमालय'-शीर्षक अपनी कविता का पाठ किया था। सभापतित्व का यह भार आपने प० अक्षयवट मिश्र एवं पं० देवदत्त त्रिपाठी के विशेष आग्रह पर स्वीकार किया था। कानपुर, सीतापुर, लखनऊ आदि अनेक स्थानो मे होनेवाले इस प्रकार के कवि-सम्मेलनों का सभापतित्व करने का आग्रह आप स्वीकार नही कर सके थे।

सन् १९१५ ई० में अपने अग्रज के स्वर्गवासी हो जाने के कारण आपकी साहित्य-साधना में बाधा तो अवश्य पड़ी, किन्तु उसका क्रम रुका नही, चलता ही रहा। ब्रजभाषा और खड़ीबोली की आपकी गद्य-पद्य-रचनाएँ मुख्य रूप से 'पीयूष-प्रवाह', 'हिन्दोस्थान', 'पाटलिपुत्र', 'शिक्षा', 'रसिक-मित्र', 'रसिक-रहस्य', 'काव्य-सुधाधर', 'काव्य-सुधानिधि' आदि पत्र-पत्रिकाओ में छपती रही। आपके द्वारा लिखित पुस्तकाकार प्रकाशित एवं अप्रकाशित रचनाओं के नाम इस प्रकार हैं—(१) सुमति-विनोद (दो भागो में)[1], (२) संस्कृत 'ऋतुसंहार' का हिन्दी-गद्य-पद्यानुवाद[2], (३) शिवमहिम्नस्तोत्र—विशुद्ध मूलपाठ, अन्वयार्थ एवं टीका-सहित[3], (४) शिवताण्डव तथा वेदसार-शिवस्तोत्र—हिन्दी-टीका तथा अन्वय-सहित,[4] (५ अलकार-दर्पण[5], (६) मानव-जीवन[6], (७) साहित्य-प्रसंग[7], (८) प्रार्थना[8], (९) प्रेम-परिचय[9], (१०) सुकवि-सतसई के दोहों पर कुण्डलियाँ अर्थात् श्रीकृष्ण-रसायन

१. इसका प्रथम भाग सन् १९१० ई० मे बाबू रामदयालु सिंहजी को लेखक ने दिया था, जो प्रकाशित भी हो चुका है। द्वितीय भाग अभी भी अप्रकाशित है।

२. सन् १९१७ ई० मे एक्सप्रेस प्रेस, पटना द्वारा प्रकाशित।

३. सन् १९७२ ई० मे एक्सप्रेस प्रेस, पटना द्वारा प्रकाशित।

४. उक्त प्रेस से ही प्रकाशित। प्रकाशन-काल अज्ञात।

५. काव्यालकार-निरूपण का बृहद ग्रन्थ (अप्रकाशित)।

६. एक बँगला-उपन्यास का अनुवाद (अप्रकाशित)।

७. प्रो० एन० सी० मित्र के लिए बंगला से अनुवाद (अप्रकाशित)।

८. उक्त प्रोफेसर साहब के आदेश पर ब्राह्मभक्तों के लिए रचित (अप्रकाशित)।

९. प्रेम पर लिखित एक गद्यलेख (प्रकाशित)।

अथवा सुमति-सतसई[१], (११) विनयपत्रिका की टीका, (१२) रामचरितमानस की टीका, (१३) छप्पय-रामायण की टीका, (१४) जानकी-मंगल की टीका[२], (१५) तुलसी-भूषण, (१६) अलंकार-परिचय (पद्य मे)[३], (१७) वैदिक-सन्ध्या-पद्धति[४], (१८) गौतमाश्रमोपाख्यान-काव्य[५], (१९) दुर्गापूजा-पद्धति[६], (२०) श्रीरघुवर-गुण दर्पण[७], (२१) श्रीचित्रगुप्तकथा (सटीक)[८], (२२) नित्य-तर्पण-पद्धति, (२३) नूतन साहित्य तथा (२४) विनय-पद्य-संग्रह[९]। आप सन् १९३८ ई० के ३१ अक्टूबर (गोपाष्टमी) के दिन स्वर्गवासी हुए।[१०]

उदाहरण

(१)

गुंजा री तू धन्य है, बसत तेरे मुख स्याम।
यातें उर लाये रहत, हरि तोकों बसु जाम॥
हरि तोकों बसु जाम गुनत ज्यों निजरँग आला।
लाल रंग तुहू राखति निज अंग निराला॥
सुमति स्यामतन बसै बर भूषण पुंजा।
पै तूही तिहि रंग रँगी री! धनि धनि गुंजा॥[११]

---

१ भक्ति-रसमय (खण्डकाव्य)। बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद, पटना-४ द्वारा प्रकाशित 'सुमति-ग्रन्थावली' मे सगृहीत।

२ सख्या ११ से १४ तक की पुस्तकें खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुर, पटना को प्रकाशनार्थ दी गई थी। इनमे प्रथम दो तो यन्त्रस्थ भी हो चुकी थीं। पता नही, उनका क्या हुआ।

३. १५ और १६ सख्यक पुस्तकें बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद, पटना-४ द्वारा प्रकाशित 'सुमति-ग्रन्थावली' मे सगृहीत है।

४. हिन्दी मे नैतिक आचार एव मन्त्रार्थ-सहित। इसका प्रकाशन-कार्य भी आरम्भ हुआ था।

५. अप्रकाशित।

६. बँगला से हिन्दी मे अनूदित (अप्रकाशित)।

७. अनुवाद (प्रकाशित)।

८. खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुर, पटना से प्रकाशित।

९. सख्या २२ से २४ तक की पुस्तकें उक्त प्रेस से ही प्रकाशित। इनमे अधिकाश पुस्तके श्रीरामेश्वर पाण्डेय (वही) के पास आज भी उपलब्ध है।

१०. आपके भ्रातृज उक्त श्रीरामेश्वर पाण्डेय तथा श्रीपरमानन्द पाण्डेय के प्रयास से आपके जन्म-स्थान, रानीघाट, पटना में आपके नाम पर 'सुमति-साहित्य-गोष्ठी' नामक एक संस्था संचालत है।

११. 'सुमति-ग्रन्थावली'—श्रीकृष्ण-रसायन अथवा सुमति-सतसई (शिवप्रसाद पाण्डेय 'सुमति', सन् १९७३ ई०), पृ० ३४२।

(२)

अरी ! कौन तै तप कियो, मुरली ! तुअ बड़ भाग ।
हरिहूँ चाँपत चरन है, चूमत कै अनुराग ॥
चूमत कै अनुराग रागरागिनी-रँग राचैं ।
तो मुख में मुख मेलि 'सुमति' नटवर से नाचैं ॥
धन्य तौन तुअ बंस, धन्य थल, धन्य जौन तै ।
मोहन-मोहनि बनी मुरलिया ! अरी कौन तै ॥[1]

(३)

मुक्ति पाइबे की हरि-भक्ति पाइबे की,
योग-युक्ति पाइबे की सुरति जगी नही ।
दीन दुखी दलित दरिद्रन के त्रान हेत,
प्रान-प्रन हूते जपै मति उमगी नहीं ।
बीती तरुनाई यो बुढ़ाई अब आई,
मूढ जो पै अबौ भूरि भव-भावना भगी नहीं ।
व्यर्थ ही सुमति सारी उमर सिरानी हाय,
नन्दलाल जू सों जुपै लगन लगी नहीं ॥[2]

(४)

यमुना निकट तट विटप कदम्ब चारु,
चामी वर रचित खचित रत्न जोरे में ।
झूलन को झूला लाल लाडिली लगायो आजु,
ताहि लटकायो लाल रेशम के डोरे में ॥
पीत पट ओढ़े घटा धूप सों सुहात श्याम,
दीसति ललीहू दामिनी ज्यो घन घोरे में ।

---

१. 'सुमति-ग्रन्थावली'—श्रीकृष्ण-रसायन अथवा सुमति-सतसई (वही), पृ० ३४२ ।
२. 'सुकवि' (वर्ष ४, अंक १, अप्रैल, सन् १९३१ ई०), पृ० ३३ ।

हरित लता सों ललिता सों सुखमा अथोर,
भूमि-भूमि देखों 'भट्ट' भूलत हिंडोरे में ॥[१]

(५)

काहे तेरे उरज अलेप है दिखात दोऊ,
काहे तजे बंधन सुकेश हूँ तिहारे है।
काहे निरगुनी भई कर्धनी तिहारो वीर,
काहे ते निरंजन नसीले नैन प्यारे है॥
काहे तेरो अधर सुरागहू तज्यो है निज,
परम अनन्द अङ्ग तेरे तिमि धारे है॥
कोऊ गुरू ज्ञानी काम तत्त्व को सुतेरे गात,
चेरे करि रात कहा प्रात ही सिधारे है॥[२]

(६)

गजरथ जूथ-जूथ रेलपेल हेलै चलैं,
तरल तुरंग तीखे तरकि-तरकि उठैं॥
दुन्दुभी धमक बिजै डंका की डमक होत,
हीयरा अधीरन के धरकि धरकि उठैं॥
सेना चतुरंगिनी निरखि रघुबीर जू की,
बैरिन बिषाद बहिन भरकि-भरकि उठैं॥
जंगी रनरंगी अरिभंगी बर बीरन के,
तेगा तीरपूरे अङ्ग फरकि फरकि उठैं॥[३]

---

१. 'समस्या-पूर्त्ति' (पटना, जुलाई, सन् १८९७ ई०), पृ० ३।

२. वही (दिसम्बर, सन् १८९७ ई०), पृ० ३।

३. 'काव्य-सुधाधर' (सन् १८९९ ई०) मे प्रकाशित। बाल-हिन्दी-पुस्तकालय (आरा) के शिवनन्दन-सग्रहालय से प्राप्त।

(७)

जो सकल संसार को करता औ हर्ता, पालता,
जो सदा सब ठौर अपनी शक्ति अद्भुत डालता।
अपने भक्तों पर सदा रखता है करुणा दृष्टि जो,
सज्जनों पर सर्वदा करता सुमति सुख वृष्टि जो।
नामधाम अनेक जिसके जो अनाम अधाम है,
उस अगम अखिलेश को मम कोटि-कोटि प्रणाम है ॥[३]

(८)

सन् १९०३ ई० के आषाढ में बी० एन० डब्लू० आर० सोनपुर और बनवारचक स्टेशनों के बीच मे दस बजे रात को ऐसी दुर्घटना घटित हुई थी। मैं गोल्डिनगंज से एक कुटुम्ब की बरात करके लौटा आ रहा था। वह ट्रेन वहाँ से आठ बजे रात को खुली थी। उस दिन कई-एक दस्त हो जाने से मैं पहले ही से सुस्त था। गाडी मे कुछ भीड़ न रहने के कारण मैं अपने बेंच पर लेट गया। उसमे एक देहाती सिपाही—'जेठ बइसखवा के तलफी भँभुरिया रे छयेलवा' इत्यादि गा रहा था। कर्कश होने पर भी कानों में उसकी मधुरता टपक रही थी और मुझे झपकी-सी आ रही थी। इतने में अचानक सीटियाँ सुनाई देने लगी। गाड़ी अभी सोनपुर नहीं पहुँची थी। यात्री सीटियों का कारण तजबीज करने और झाँकने लगे। एक मालगाड़ी पूरब से भी आती देखी गई। अब तो सबके देवता कूच कर गये। सबके हृदय में हड़कम्प समा गया। काटो तो खून

३. 'सुमति-विनोद' (प्रथम भाग, पृ० १)। श्रीपरमानन्द पाण्डेय (वही) से प्राप्त। आपकी यह प्रार्थना एक समय बिहार की सभी पाठशालाओ मे अत्यन्त प्रचलित थी।

नहीं। सब लोग जीवन से हाथ धो बैठे। मालगाड़ी तो रुक गई, पर पसिंजर-ट्रेन नहीं रुकी। उसका ड्राइवर उतर भागा, पर इसका नहीं। गाड़ियाँ लड़ने लगी। मुझे नींद आ गई थी। पहला धक्का बड़े जोर से लगते ही मैं मूर्च्छित हो गया। बाद की सुध नही कि कैसे-कैसे क्या-क्या हुआ।'[1]

शिवप्रसाद सिंह 'शिव'

आप मुँगेर-जिला के 'नवगाईं' (तारापुर) नामक ग्राम के निवासी श्रीगणपति सिंहजी के पुत्र थे[2]। आपका जन्म सं० १९४९ वि० (सन् १८९२ ई०) की फाल्गुन कृष्ण-चतुर्दशी को हुआ था।[3] आपकी शिक्षा घर पर ही हुई थी। आपका साहित्यिक जीवन सं० १९७४ वि० की विजयादशमी से शुरू हुआ था। श्रीहुबलाल झा आपके साहित्यिक गुरु थे। इनके सान्निध्य में रहकर आपने ब्रजभाषा की कविताओं का अध्ययन किया था। तुलसी, सूर, भूषण, बिहारी आदि कवियों की कविताओं का आद्योपान्त चिन्तन-मनन करने के बाद आप ब्रजभाषा में काव्य-रचना करने लगे। किसी भी समस्या की पूर्त्ति आप बड़ी शीघ्रता से कर लेते थे। हिन्दी में आपने दो पुस्तकों की ही रचना की थी। दोनों पुस्तकें अद्यावधि अप्रकाशित है। 'ब्रजविहार' और 'शिव-शतक' नामक दोनों ही प्रस्तकें पद्य-बद्ध हैं। सं० २००७ वि० की अग्रहायण शुक्ल-दशमी को आपका परलोक-गमन हुआ।

उदाहरण

(१)

सबै सुखकारी नित, सबै दैन्य दुखहारी,
हृदय बिहारी भक्त, रसिक विहारी के।
परम अनूप रूप मंगल भवन भूप,
अमल कमल पद कान्ह की पियारी के।

---

१. 'गद्य-चन्द्रिका' (स० साँवलियाविहारीलाल वर्मा, प्रकाशन-काल वही), पृ० २७-२८।

२. आपके पूर्वज बल, बुद्धि और विद्या मे विख्यात थे। आप स्वय अपने शील-स्वभाव के लिए गाँव में समादृत थे। आपके पौत्रो मे श्रीरामयतन सिंह 'करुण' खड़ीबोली के यशस्वी कवि है।

३. श्रीउग्रमोहन झा 'धवल' (साहित्य-सदन, सोन्हौली, पो० कदुआ, जि० मुँगेर) द्वारा दिनांक १ जुलाई, सन् १९६२ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

विमल विभूति दाता भव भय भूरि त्राता,
वसुधा पै सुधा सम राधा सुकुमारी के।
विमल कमल पद बंदौ 'शिव' बार बार,
नेह में अगाधा वृष-भानु के दुलारी के ॥[१]

(२)

चहु दिसि सोभा छायो, रितुराज मुद आयो,
सब जन सुख पायो, सुषमा अपार है।
सुमन फूलन लागे, भौरन गुंजार लागे,
क्वैलिया कूकन लागे, नित डार-डार है।
सरस समीर मंद मंद सरसन लागे,
गाने लग्यो गली-गली सुन्दर धमार है।
अवनी अकास 'शिव' दिग औ दिगन्तन में,
कुंजन निकुंजन में वसन्त-बहार है ॥[२]

(३)

अहो ! मम प्यारे सारे, नर तन धारे जेते,
चित्त मों विचारि सत्य, मानहु प्रमान के।
काम क्रोध लोभ मोह, आदि जे जहानन मो,
सबै बिलगायो झट, अति तुच्छ जान के।
अगम निगम थके नेति-नेति कही-कही,
अंत नही पायो, कोउ ऋषि-मुनी गान के।
ऐसो है प्रतापी 'शिव' गुनवंत रघुनाथ,
अनुदिन राम-राम, जपो मन मान के ॥[३]

---

१. उक्त सामग्री से ही। 'ब्रज-विहार' (अप्रकाशित) से।

२. वही।

३. वही। 'शिवशतक' (अप्रकाशित) से।

शिवपूजन सहाय

आप शाहाबाद-जिला के 'उनवाँस' (रामनगर) नामक ग्राम के निवासी श्रीवागीश्वरी दयालजी[1] के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९५० वि० (सन् १८९३ ई०) की श्रावण कृष्ण-त्रयोदशी (बुधवार) को हुआ था।[2] आपकी आरम्भिक शिक्षा गाँव के ही एक देहाती मदरसे में हुई। सन् १९०३ ई० से आप आरा-नगर के कायस्थ-जुबली-एकेडेमी नामक स्कूल में शिक्षा ग्रहण करने लगे और वहीं से सन् १९१२ ई० में आपने मैट्रिक की परीक्षा पास की। अपनी छात्रावस्था में ही आप आरा-नागरी प्रचारिणी सभा के प्रमुख अधिकारी सर्वश्री सकलनारायण शर्मा, शिवनन्दन सहाय, ईश्वरीप्रसाद शर्मा आदि विद्वानों के सम्पर्क में आये। इनके अतिरिक्त उसी समय आपने अपने पिता श्रीवागीश्वरी दयालजी से तुलसीकृत रामायण और अपने बहनोई श्रीकालिकाप्रसादजी से 'महाभारत', 'रस-कुसुमाकर', 'काव्य-चन्द्रिका' आदि पुस्तकें पढ़ीं। प० ईश्वरीप्रसाद शर्मा ही आपके साहित्यिक गुरु थे, जिनसे आपने शुरू-शुरू में सम्पादन-कला सीखी। जीविका के लिए आरम्भ में आप आरा की कई शिक्षण-संस्थाओं में हिन्दी-शिक्षक भी रहे। मैट्रिक की परीक्षा पास करने के बाद ही सन् १९१४ ई० में आप आरा टाउन-स्कूल में शिक्षक के पद पर नियुक्त हुए थे। सन् १९२० ई० मे आरा टाउन-स्कूल से असहयोग करके आपने राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लिया। असहयोग-काल में लगभग एक वर्ष तक आप आरा के 'राष्ट्रीय विद्यालय' में अध्ययन करते रहे। उसके पश्चात् सन् १९२१ ई० में आप आरा से निकलनेवाले 'मारवाड़ी-सुधार'[3] नामक मासिक पत्रिका के सम्पादक हुए। इस सिलसिले में आपने देश के अनेक प्रमुख स्थानों का भ्रमण किया।

सन् १९२३ ई० में आप कलकत्ता के 'मतवाला-मण्डल' में सम्मिलित हुए। उसी समय आप महाकवि निराला के निकट-सम्पर्क में आये। 'मतवाला-मण्डल' से अवकाश प्राप्त कर आपने क्रमशः 'मौजी', 'गोलमाल', 'आदर्श', 'उपन्यास-तंरग', 'समन्वय' आदि पत्र-पत्रिकाओं का सम्पादन किया। तत्पश्चात् सन् १९२५ ई० में आप मासिक 'माधुरी' के सम्पादकीय विभाग में चले आये। फिर, शीघ्र ही, सन् १९२६ ई० में 'मतवाला-मण्डल' में शामिल होने के लिए आप पुनः कलकत्ता चले गये। वहाँ रहकर एक वर्ष तक आपने पुस्तक-

---

१. ये एक बड़े अच्छे रामायणी थे। दोनो जून विधिवत् 'रामचरितमानस' का पाठ तो करते ही थे, उसे सम्पूर्ण रूप से कण्ठाग्र भी कर रखा था। इनके पूर्वज गाजीपुर के 'शेरपुर' नामक स्थान से आकर 'उनवाँस' मे बसे थे।

२. 'बिम्ब-प्रतिबिम्ब' (आनन्दमूर्ति, मंगलमूर्ति, सन् १९६७ ई०, परिशिष्ट १), 'साहित्य' (त्रैमासिक, शिवपूजन-स्मृति-अंक, वर्ष १३-१४, जनवरी, सन् १९६४ ई०), पृ० ७० तथा 'नई धारा' (मासिक, शिवपूजन-स्मृति-अंक, वर्ष १४, अंक १-४, अप्रैल—जुलाई, सन् १९६३ ई०), पृ० ३८९। इनके अतिरिक्त आपके परिचय-लेखन में 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ (वही, पृ० ६२३), 'हिन्दीसेवी-संसार' (वही, पृ० २८८-८९), 'बिहार-अब्दकोश' (वही, पृ० २४७) तथा 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, पृ० ४१६) से भी सहायता ली गई है।

३. यह पत्रिका यद्यपि आरा से निकलती थी, तथापि इसके मुद्रणादि कार्य कलकत्ता के बालकृष्ण प्रेस (शंकर घोष लेन) मे होते थे। आप प्रायः वहीं रहकर उक्त पत्र का सम्पादन करते थे।

भण्डार (लहेरियासराय) द्वारा प्रकाशित 'बालक' का सम्पादन किया। वहाँ से कुछ दिनों बाद, 'बालक' और पुस्तक-भण्डार के ग्रन्थों के सम्पादन के लिए आपको काशी चला जाना पड़ा।[1] इसी बीच सन् १९३० ई० में आपको सुलतानगज से प्रकाशित 'गंगा' (मासिक) के सम्पादन का सुअवसर प्राप्त हुआ। काशी में रहकर एक सम्पादक के रूप में आप पाक्षिक 'जागरण' से भी सम्बद्ध रहे। उन्ही दिनो आप महाकवि श्रीजयशंकर प्रसादजी और औपन्यासिक-सम्राट् मुशी प्रेमचन्दजी के निकट-सम्पर्क में आये। आगे चलकर आप इन दोनो व्यक्तियों के बडे कृपापात्र हुए। काशी में आप नागरी-प्रचारिणी सभा के एक सक्रिय सदस्य रहे। उक्त सभा की ओर से जब 'द्विवेदी-अभिनन्दन-ग्रन्थ' के सम्पादन का कार्यक्रम बना, तब उस कार्य के लिए आप ही चुने गये। सन् १९३४ ई० में आप पूर्ण रूप से 'बालक' के सम्पादक बनकर लहेरियासराय (दरभंगा) चले आये। सन् १९३९ ई० में आप छपरा-स्थित 'राजेन्द्र-कॉलेज' में हिन्दी-प्राध्यापक के पद पर नियुक्त हुए, जहाँ सन् १९४९ ई० तक रहे। इसी बीच एक वर्ष की छुट्टी लेकर आपने पुस्तक-भण्डार से प्रकाशित सुप्रसिद्ध हिन्दी-त्रैमासिक 'हिमालय' का सम्पादन किया। 'हिमालय' के बाद, सन् १९५० ई० से अपने जीवन के अन्तिम समय तक आपने बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के मुखपत्र शोध-प्रधान त्रैमासिक 'साहित्य' का सम्पादन कर सम्पादन-कला की दिशा में एक नया मानदण्ड स्थापित किया।[2] उस समय तक आपकी गणना हिन्दी-संसार के शीर्षस्थ सम्पादकों में होने लगी थी।

सन् १९४१ ई० में आपने बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के १७वें अधिवेशन के सभापति-पद को और सन् १९४४ ई० में, अखिलभारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के जयपुर-अधिवेशन में साहित्य-परिषद् के अध्यक्ष पद को सुशोभित किया था। सन् १९५० ई० में जब बिहार-सरकार के शिक्षा-विभाग द्वारा संस्थापित-संचालित शोध-प्रकाशन-संस्थान बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् का कार्यारम्भ हुआ, तब उसी वर्ष की १९ जुलाई से आप ही उसके सर्वोच्च पद मन्त्री-पद पर प्रतिष्ठापित किये गये। सन् १९५३-५४ ई० में आप राजयक्ष्मा-रोग के शिकार होकर पटना-जेनरल अस्पताल में भरती हुए। लगभग एक वर्ष बाद स्वस्थ होकर जब आपने पुनः परिषद् के निदेशक-पद का कार्य-भार सँभाला, तब कुछ ही दिनो बाद, परिषद् के संचालक-मण्डल ने आपको, परिषद् की ओर से १५०० रुपये का वयोवृद्ध साहित्यिक सम्मान-पुरस्कार प्रदान किया।[3]

---

१. 'बालक' के प्रथम अक का सम्पादन आपने कलकत्ता मे रहकर ही किया। जब उसके मुद्रण की व्यवस्था 'ज्ञानमण्डल' मे हो गई, तब आप कलकत्ता से काशी चले आये।

२. आपकी सम्पादन-कला पर गया-निवासी सुपरिचित हिन्दी-कवि श्रीसिद्धिलाल 'माणिक' ने अनुसन्धान कर मगध-विश्वविद्यालय से पी-एच्० डी० की उपाधि प्राप्त की है। यह अनुसन्धान-ग्रन्थ तीन खण्डो और तेईस अध्यायो मे है। इसमे आपकी सम्पादन-कला से सम्बद्ध आठ चित्र भी है। इसके पूर्व श्रीरामकृष्ण कुमार ने भी अपनी एम्० ए० परीक्षा के लिए 'शिवपूजन सहाय : कृतित्व और शैली'-विषय पर अधिनिबन्ध प्रस्तुत किया था।

३. आपने अपने पुरस्कार की यह राशि बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन को दे दी, जिससे आपकी दिवगता पत्नी के नाम पर 'बच्चन देवी-साहित्य-गोष्ठी' की स्थापना की गई है।

सन् १९६२ ई० में आपने बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् से अवकाश ग्रहण किया। परिषद् में रहकर हिन्दी-जगत की आपने जो सेवा की, उसकी प्रशंसा देशी-विदेशी विद्वानोंने मुक्तकण्ठ से की है। आपके द्वारा किये गये अनेक महत्त्वपूर्ण कार्यों में एक प्रमुख कार्य है—'हिन्दी-साहित्य और बिहार' के नाम से बिहार के साहित्यिक-इतिहास का निर्माण-कार्य। इसके दो खण्ड आपके सम्पादकत्व में ही प्रकाशित हुए हैं। आगे के खण्डों पर भी आपकी बताई लीक पर ही कार्य हो रहा है।

हिन्दी-भाषा पर आपका जितना अधिकार था, उतना कम ही लोगो का देखा गया है। भाषा-शैली के साथ-साथ अपने व्यक्तित्व की सरलता से आप सबको आकृष्ट कर लेते थे। आप सही मानी में एक 'आचार्य' थे। आपके प्रोत्साहन एवं दिशा-निर्देश से अनेकानेक साहित्यकार यशस्वी हुए। इस दृष्टि से हिन्दी के अनेक नामी-गिरामी साहित्यकार आपके ऋणी हैं। आपके इन्हीं गुणों एवं साहित्यिक उपलब्धियों के परिणामस्वरूप सन् १९६० ई० में भारत के राष्ट्रपति ने आपको 'पद्मभूषण' की उपाधि से विभूषित किया। सन् १९६१ ई० में, पटना-नगर-निगम की ओर से आपका नागरिक अभिनन्दन किया गया तथा सन् १९६२ ई० में भागलपुर-विश्वविद्यालय के द्वारा आप डी० लिट्० की मानद उपाधि से भी अलंकृत किये गये।

आपकी प्रारम्भिक रचनाएँ 'शिक्षा', 'लक्ष्मी', 'मनोरंजन', 'पाटलिपुत्र' आदि पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ करती थी। आगे चलकर प्रेमचन्दजी द्वारा सम्पादित 'हंस' और जागरण' में भी आपने काफी लिखा। यों, आपकी रचनाएँ देश की प्रायः सभी प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ करती थी। आपकी प्राय समस्त रचनाएँ 'शिवपूजन-रचनावली' के नाम से चार मोटे-मोटे खण्डों में बिहार-राष्ट्रभाषा परिषद् से प्रकाशित हैं। प्रथम खण्ड में आपकी तीन पुस्तकाकार रचनाएँ संगृहीत है—(१) बिहार का विहार,[१] (२) विभूति[२] और (३) देहाती दुनिया[३]। द्वितीय खण्ड में आपकी जो पुस्तकाकार रचनाएँ संगृहीत हैं, उनके नाम इस प्रकार हैं—(१) भीष्म,[४] (२) अर्जुन,[५] (३) ग्राम-सुधार,[६] (४) दो घड़ी,[७] (५) माँ के सपूत,[८], (६) अन्नपूर्णा के मन्दिर में,[९] (७) महिला-महत्त्व,[१०], (८) बालोद्यान,[११] (९) आदर्श परिचय,[१२] तथा (१०) सेवा-

---

१. बिहार का ऐतिहासिक, प्राकृतिक एव भौगोलिक परिचय (सन् १९१९ ई०)।
२. स्वरचित १६ कहानियो का सग्रह (सन् १९२२ ई०)।
३. ११ अध्यायो मे हिन्दी का सर्वप्रथम आचलिक उपन्यास (सन् १९२६ ई०)।
४. जीवनी (सन् १९२३ ई०)।
५, वही (सन् १९२३ ई०)।
६. गाँवो की स्थिति का दिग्दर्शन और उनके सुधार के सुझाव-सम्बन्धी २३ लेखो का सग्रह (सन् १९४७ ई०)।
७ व्यंग्य-विनोदपूर्ण १४ मनोरजक रचनाएँ (सन् १९४९ ई०)।
८. बालोपयोगी शिक्षाप्रद ९ जीवनियाँ (सन् १९४८ ई०)।
९. ग्राम-समस्या का विवेचन (१९ शीर्षको मे)।
१०. महिला-समाज की स्थिति, समस्या एव समाधान पर विचारपूर्ण १४ लेख।
११. बालोपयोगी शिक्षाप्रद २७ रचनाएँ।
१२. राम, कृष्ण, भारत, भरत और आदर्श साहित्यिक पर शिक्षाप्रद निबन्ध।

धर्म (अनुवाद)[१]। इनके अतिरिक्त इस खण्ड में आपकी कुछ साहित्यिक भाषणावली तथा पुस्तकों के विभिन्न संस्करणों की भूमिकाएँ आदि भी संगृहीत हैं। रचनावली के तृतीय खण्ड में विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित आपकी स्फुट साहित्यिक रचनाएँ और चतुर्थ खण्ड में आपके द्वारा लिखित जीवनियाँ और संस्मरण एवं सम्पादकीय लेख संकलित हैं। उक्त रचनावली के चार खण्डों में आपकी समस्त रचनाएँ समाहित हो गई हैं, ऐसा नहीं कहा जा सकता।[२] आपकी कुछ शेष रचनाएँ 'बिम्ब-प्रतिबिम्ब' नामक पुस्तक में भी संगृहीत हैं। आपकी कुछ स्फुट पुस्तकाकार रचनाओं में, 'मेरा बचपन', 'वे दिन, वे लोग' और 'अमर सेनानी बाबू कुँवरसिंह' की चर्चा की जा सकती है। 'हिन्दी-साहित्य और बिहार' के अतिरिक्त आपके द्वारा सम्पादित कुछ प्रमुख ग्रन्थों के नाम इस प्रकार हैं —(१) द्विवेदी-अभिनन्दन-ग्रन्थ,[३], (२) राजेन्द्र-अभिनन्दन-ग्रन्थ,[४] (३) बिहार की महिलाएँ,[५] (४) रजत-जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ[६] (५) श्रीराजराजेश्वरी-ग्रन्थावली,[७] (६) राजा कमलानन्दसिंह-ग्रन्थावली,[८] (७) संसार के पहलवान, (८) प्रेमकली, (९) प्रेम-पुष्पांजलि, (१०) देशरत्न राजेन्द्र प्रसाद, (११) त्रिवेणी, (१२) सारिका, (१३) खत्री-स्मारक ग्रन्थ, (१४) मंगल-कलश, (१५) गद्य-कलश, (१६) साहित्य-सरिता, (१७) उर्दू-शायरी और बिहार आदि।

आप १६ जनवरी, सन् १९६३ ई० को सहसा अस्वस्थ हुए और २१ जनवरी, (माघ कृष्ण-एकादशी) को साकेतवासी हुए।

उदाहरण

(१)

आज उदयपुर के चौक में चारों ओर बड़ी चहल-पहल है। नवयुवकों में नवीन उत्साह उमड़ उठा है। मालूम होता है कि किसी ने यहाँ के कुँओं में उमंग की भंग घोल दी है। नवयुवकों की मूँछों में ऐंठ भरी हुई है, आँखों में ललाई छा गई है। सबकी पगड़ी पर देशानुराग की कलँगी लगी हुई है। हर तरफ वीरता की ललकार सुन पड़ती है। बाँके लड़ाके वीरों के कलेजे रणभेरी

---

१. जॉर्ज सिडनी अरण्डेल-कृत 'The Way of Service' का भावानुवाद—सेवाधर्म पर २०१ सुचिन्तित सूक्तियाँ (सन् १९२१ ई०)।

२. देखिए, 'साहित्य' (वही), पृ० ९-५९।

३. आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी को समर्पित (सन् १९३२ ई०)।

४. देशरत्न डॉ० राजेन्द्रप्रसादजी को समर्पित (सन् १९५० ई०)।

५. डॉ० राजेन्द्रप्रसादजी द्वारा प्राप्त और आपके द्वारा सम्पादित अन्तिम अभिनन्दन-ग्रन्थ (सन् १९६२ ई०)।

६. पुस्तक-भण्डार की रजत-जयन्ती के अवसर पर प्रकाशित (सन् १९४२ ई०)।

७. राजा राजराजेश्वरीप्रसाद सिंह 'प्यारे' की रचनाओं का चित्रमय संग्रह।

८. राजा कमलानन्द सिंह की रचनाओं का संग्रह।

सुनकर चौगुने होते जा रहे हैं। नगाडों से तो नाकों में दम हो चला है। उदयपुर की धरती धौसे की धुधुकार से डगमग कर रही है। रण-रोष से भरे हुए घोड़े डंके की चोट पर उड़ रहे हैं। मतवाले हाथी हर ओर से, काले मेघ की तरह उमड़े चले आते है। घंटों की आवाज से सारा नगर गूँज रहा है। शस्त्रों की झनकार और शंखों के शब्द से दसों दिशाएँ सरस-शब्दमयी हो रही है। बड़े अभिमान से फहराती हुई विजय-पताका राजपूतों की कीर्त्तिलता-सी लहराती है। स्वच्छ आकाश के दर्पण में अपने मनोहर मुखड़े निहारनेवाले महलों की ऊँची-ऊँची अटारियों पर चारों ओर सुन्दरी सुहागिनियाँ और कुमारी कन्याएँ भर-भर अंचल फूल लिये खड़ी हैं। सूरज की चमकीली किरणों की उज्ज्वल धारा से धोये हुए आकाश में चुभनेवाले कलश, महलों के मुँड़ेरों पर मुस्कुरा रहे है। वन्दीवृन्द विशद विरुदावली बखानने मे व्यस्त हैं।'[1]

(२)

बहुत-से लड़के ऐसे थे, जो कभी चावल लाते थे तो गुड़ और पैसा नहीं, कभी पैसा तो चावल और गुड़ नही, कभी गुड़ तो चावल और पैसा नहीं। उनके यहाँ गुरुजी का दरमाहा और सीधा भी बाकी पड़ा रहता था। कभी-कभी किसी लड़के का बाप आकर कहने लगता था—गुरुजी, इस साल पैदा बहुत नरम है। भदई और अगहनी ने कमर तोड़ दी। चैती का भरोसा है। खेत कमाते-कमाते तो पीठ की रीढ़ धनुही हो गई, मगर करम गवाही नहीं देता तो क्या करूँ? और कोई धंधा भी तो नहीं है! आप तो घर के आदमी हैं, हालत देखते ही है। आपसे क्या परदा है? आप तो सब रत्ती-रत्ती जानते हैं। मगर चैत में सब बाकी बेबाक कर दूँगा। दाम-दाम जोड़कर ले लीजिएगा। भगवान की दया से

---

१. 'मुण्डमाल'-शीर्षक कहानी से।—देखिए, 'शिवपूजन-रचनावली' (खण्ड १, शिवपूजन सहाय, सन् १९५६ ई०), पृ० २०३।

क्या हरदम सूखा ही पड़ेगा ? अपने ऊपर चाहे लाख बीते, मगर मैं किसी का खदुक रहना नही चाहता । किसी का मेरे यहाँ कौड़ी का एक दाँत भी बाकी नही है । पेट काटकर तो मालिक की कौड़ी देता हूँ । आपकी दया से यह लड़का अगर कुछ पढ़ जायगा, तो मेरा दुख छूट जायगा । आपका नाम लेता रहूँगा । आपकी एक निसानी रह जायगी । मेरे यहाँ आपका नकद डेढ़ रुपया और साढ़े बारह सेर सीधा बाकी है । कहीं पुरजे पर टाँक लीजिए ।[1]

(३)

योगियों की चिन्ता परब्रह्म के आलिगन का सुखानुभव करती है । कवियों की कल्पना लोकोत्तरानन्द का आलिंगन करती है । चतुर चित्रकार का चित्त मौन सजीवता का आलिङ्गन करता है । देशभक्त का हृदय राजनीति का आलिंगन करता है । रणधीर वीर हँसते-हँसते मृत्यु का आलिंगन करता है । स्वदेशाभिमानी मनस्वी आपत्तियों का आलिंगन करता है । संन्यासी 'सोऽहमस्मि' की अखण्ड वृत्ति का आलिंगन करता है । पुण्यात्मा पुरुष कीर्त्ति का आलिगन करता है । अपव्ययी दरिद्रता का आलिंगन करता है । वाणिज्य-व्यस्त व्यक्ति लक्ष्मी का आलिंगन करता है । परोपकार-परायण पुरुष दया का, तपस्वी क्षमा का, उद्योगी सफलता का, मनोयोगी विद्या का, साहसी सिद्धि का और ब्रह्मचर्यव्रती तेजस्विता का आलिगन करता है । किन्तु, प्रेम, विश्व-ब्रह्माण्ड का आलिंगन करता है । प्रेम के लिए सब कुछ आलिंग्य है—ऐसी कोई वस्तु नही, जो प्रेम से आलिंगित न हो सके ।[2]

---

१. 'देहाती दुनिया' से ।—देखिए, 'शिवपूजन-रचनावली' (वही), पृ० १३४-३५ ।

२. 'आलिंगन'-शीर्षक लेख से ।—देखिए, 'शिवपूजन-रचनावली' (वही, खण्ड ३, सन् १९५७ ई०),

(४)

'मतवाला' में कविता और समालोचना निरालाजी के स्वीकृत करने पर ही छपती थी। सेठजी[१] और मुंशीजी[२] उनका जितना आदर करते थे, उतना अब शायद ही किसी साहित्यिक को किसी प्रकाशक से मिल सके। पूज्य आचार्य 'द्विवेदीजी' को जो सम्मान 'इण्डियन प्रेस' के स्वामी श्रीचिन्तामणि घोष से मिला था, वही सम्मान सेठजी से निरालाजी को मिला। निरालाजी अहर्निश इतने चिन्तनशील रहते थे कि उन्हें अपने शरीर और वस्त्र की भी सुधि नहीं रहती थी। वे निरन्तर अपनी चिन्तनधारा में इस प्रकार निमग्न रहते थे कि सामने ही होनेवाली बातचीत भी नहीं सुन पाते थे। कभी-कभी उनसे सेठजी और मुंशीजी बातें करने लगते थे तो बातचीत के अन्त में उन लोगों को यह जानकर हँसी आती थी कि निरालाजी ने कुछ भी नहीं सुना या समझा। वास्तव में वे अन्यमनस्क होकर किसी की बात का तिरस्कार नहीं करते थे, बल्कि वे स्वभावतः बाह्यज्ञान-शून्य रहते थे।[३]

शिवबन्धन पाण्डेय[४]

आप शाहाबाद-जिला के 'दुलही' (चान्द) नामक ग्राम के निवासी श्रीगौरीशंकर पाण्डेयजी के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९४६ वि० (सन् १८९२ ई०) की अग्रहायण-शुक्लाष्टमी (शुक्रवार) को हुआ था।[५] सम्प्रति, आप शाहाबाद-मण्डलान्तर्गत 'तिलारी' (चेनारी) नामक ग्राम के कबीर-मन्दिर के महन्थ हैं। आपके गुरु श्री १०८ प्रह्लादसाहबजी थे।

---

१. श्रीमहादेवप्रसादजी सेठ।

२. मुंशी नवजादिकलाल श्रीवास्तव।

३. 'निरालाजी के संस्मरण' शीर्षक लेख से।—देखिए, 'शिवपूजन-रचनावली' (वही, सन् १९५९ ई०), पृ० २७९।

४. इनका अधिकतर प्रचलित नाम महन्थ शिवबन्धनदास है।

५. परिषद् के 'साहित्यिक इतिहास-विभाग' मे सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

आप संस्कृत, हिन्दी, उर्दू तथा गुजराती के समर्थ विद्वान् हैं। आपने सन् १९७९ वि० से ही साहित्यिक रचनाओं का सर्जन आरम्भ कर दिया था। आपकी रचनाओं में कबीर-दर्शन की झाँकी मिलती है। आप एक सच्चे सन्त कवि हैं। आपके द्वारा लिखित निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं—(१) सद्गुरुस्तोत्रावली, (२) मोक्ष-प्रवेशिका और योगजीत-विजय तथा (३) श्रीशान्तिसरोजाञ्जलि। इनके अतिरिक्त 'सिद्धान्त-सारामृत' नामक आपकी एक पुस्तक अभी तक अप्रकाशित ही पड़ी है।

उदाहरण

(१)

सुनिये भव भंजन भ्रमहारी !
क्रोध कराल कुटिल भट अतिशय, जो त्रिभुवन संहारी,
सो समक्ष मोहि घेर लियो है, हनत प्रचारि प्रचारी।
मिथ्या दृष्टि तासु प्रिय वामा, चपल चंचला कारी,
छटी छबीली चीत खैचि मम, विषय तड़ित गहि मारी।
ताते प्रज्ञा व्यग्र होइ अति, परी विशुद्ध हमारी,
सारासार विभाग करै को, बिनु चेतना विचारी।
याते तव चरनन ते न्यारे, निरय सदैव विहारी,
ऐसो 'शिवबन्ध' दुर्गति लखि, सद्गुरु लगौ गोहारी॥[१]

(२)

यथा शस्त्र हनि नीर में, नीरहि पीड़ न होय,
उलटि घाव शस्त्रहि लगै, यह जानत सब कोय।
यह जानत सब कोय, नीर को पीड़ न होई,
उलटि पीड तेहि होय, क्षमा-द्रोही जो कोई।
खड्ग काटि नहि सकै, परम कोमल रेशम को,
तथा क्षमा-संयोग, लगै नहि दाव यमन को।

१. 'सद्गुरुस्तोत्रावली' से। लेखक द्वारा प्राप्त।

जैसे रज महि-मह परी, सहती चरण प्रहार,
वायू के परसंग से, रमे अकास मझार।
रमे अकाल मझार परे, नृप मुकुटन जाई,
संत चुड़ा विश्राम, परमपद दर्शन पाई।
तथा क्षमा संसर्ग, सहन शक्ति जब आई,
अवसि परम पद लहै, सहज भवभीति न साई ॥[1]

शिवस्वरूप वर्मा

आप शाहाबाद-जिला के 'ताराचक' (बड़गाँव) नामक ग्राम के निवासी श्रीसर्वानन्दजी के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९४९ वि० (सन् १८९२ ई०) की भाद्र-कृष्ण चतुर्दशी (५ सितम्बर, रविवार) को हुआ था।[2] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही आपके पिताजी की देखरेख में हुई। सन् १९११ ई० में डुमराँव-राज हाई स्कूल से आपने मैट्रिकुलेशन की परीक्षा प्रथम श्रेणी में, छात्रवृत्ति के साथ पास की। बी०ए० की डिग्री आपने पटना कॉलेज में पढ़कर सन् १९१५ ई० में प्राप्त की और उसके अनेक वर्षों बाद आपको बी० एल्० तथा बी० एड्० की डिग्रियाँ भी मिली। आपने सन् १९२६ ई० में कलकत्ता-विश्वविद्यालय से हिन्दी में एम्० ए० की उपाधि प्राप्त की। आपके जीवन का अधिकांश शिक्षण-कार्य में व्यतीत हुआ। उस अवधि में लगभग सात-आठ वर्षों तक आप पटना-विश्वविद्यालय के हिन्दी बोर्ड ऑव स्टडीज और बोर्ड ऑव एक्जामिनर्स के सदस्य रहे। सन् १९३९ ई० में आप पारिभाषिक शब्द-निर्माण-उपसमिति के सदस्य नियुक्त हुए तथा सन् १९४६ से १९४९ ई० तक आप बुनियादी शिक्षा-साहित्य के निर्माण के आयोजक रहे। सन् १९४९ से १९५३ ई० तक आपने बिहार-पाठ्य-पुस्तक-निर्धारिणी समिति के मंत्री-पद को भी सुशोभित किया। अपनी हिन्दी-सेवा के परिणामस्वरूप, सन् १९४१ ई० में होनेवाले शाहाबाद-जिला हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का सभापतित्व आपने ही किया था। 'नवीन शिक्षक' (हिन्दी) और 'बिहार-एजुकेशनिस्ट' (अँगरेजी) के सम्पादक के रूप में आपने अपनी सम्पादन-कला का अच्छा परिचय दिया था।

आपकी साहित्य-सेवा का आरम्भिक वर्ष सन् १९२३ ई० बतलाया जाता है। आप हिन्दी और अँगरेजी—दोनों भाषाओं में लिखा करते हैं। हिन्दी में आपके लिखे

---

१. 'मोक्ष-प्रवेशिका' के 'क्षमा-शील-वर्णन' नामक खण्ड से। लेखक द्वारा प्राप्त।

२. परिषद के साहित्यिक इतिहास-विभाग में आपके द्वारा प्रेषित और सुरक्षित सामग्री के अनुसार।
—देखिए, 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ७५७) भी।

स्फुट लेख[1] 'किशोर', 'अग्रदूत' आदि तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ करते थे। आपके द्वारा हिन्दी में रचित तीन पुस्तकें बतलाई जाती हैं—(१) बिहार में बुनियादी साहित्य, (२) दालिम कुमार तथा (३) सीत-बसन्त।[2]

शीतलसिंह गहरवार

आप इमामगंज, गया के निवासी श्रीबिहारीसिंहजी के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १६२२ वि० (सन् १८६५ ई०) की ज्येष्ठ शुक्ल-पूर्णिमा को हुआ था।[3] आपने गया के साहबगंज हाई स्कूल से सं० १८८७ वि० में प्रवेशिका-परीक्षा पास की थी। प्रवेशिका के बाद, प्राचीन काव्य-ग्रन्थो का अध्ययन कर आप स्वयं भी काव्य-रचना करने लगे। आपका साहित्यिक जीवन सं० १६४० वि० से आरम्भ होता है। आपकी गणना प्राचीन हिन्दी-काव्य-साहित्य के मर्मज्ञ विद्वानों में होती है। आपकी एकमात्र पुस्तकाकार रचना 'श्रीसीतारामचरितायन' है। इसके अतिरिक्त आपके द्वारा रचित कुछ स्फुट रचनाएँ भी बतलाई जाती है। आपकी रचना के उदाहरण हमें नही मिल सके।

शुकदेवनारायण वर्मा 'खाकी'

आप सारन-जिला के 'हरखौली' (मीरगंज) नामक ग्राम के निवासी हैं। आपका जन्म सं० १६४५ वि० (सन् १८८८ ई०) की आषाढ कृष्ण-चतुर्दशी को हुआ था।[4] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा मीरगंज के प्राथमिक विद्यालय में हुई। उसके बाद, आपने सन् १६०६ ई० में प्रवेशिका-परीक्षा हथुआ के इड्न स्कूल से प्रथम श्रेणी में पास की। सन् १६१२ ई० में आप पटना कॉलेज से आइ० ए० की परीक्षा में उत्तीर्ण हुए। इस परीक्षा में आपने बिहार और उड़ीसा—दोनों प्रदेशों में आठवाँ स्थान प्राप्त किया था। आइ० ए० पास करने के बाद सीवान के बी० एम्० हाई स्कूल में अध्यापक के पद पर आपकी नियुक्ति हो गई। सन् १६२१ ई० के असहयोग-आन्दोलन में सम्मिलित होने के कारण आपको उक्त पद छोड़ देना पड़ा। फिर, कुछ वर्षों के बाद मीरगंज के डालमिया जैन हाई स्कूल में आप सहायक शिक्षक के पद पर चले आये, जहाँ अन्त-अन्त तक रहे।

आप सही मानी में एक हिन्दी-सेवक थे। गोपालगंज (छपरा) में आपके द्वारा स्थापित 'तुलसी-साहित्य-समिति' तथा 'हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, सारन' आपकी हिन्दी-सेवा के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं।

---

१. अँगरेजी में आपके द्वारा लिखे स्फुट लेख मुख्यत 'सर्चलाइट', 'पाथ फाइण्डर' आदि पत्रो मे मिलते है।

२. आपके द्वारा लिखित दो अँगरेजी-पुस्तको के नाम ये है—१ The Scheme of Post-Basic Education in Bihar तथा २. Free India Readers Series.

३, 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० १६५।
—देखिए, 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ (वही, पृ० ६४४) भी।

४. आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

आपके द्वारा लिखित प्रकाशित-अप्रकाशित पुस्तकों के नाम ये हैं—(१) मोक्ष-मार्त्तण्ड, (२) विवेक-वचनावली, (३) खाकी-पहेली, (४) खाकी-दोहावली, (५) गोरेगट का भूत और भारत का देवदूत, (६) रामायण का राम-नाम, (७) हनुमान-नाटक, (८) रामराज, (९) सती-प्रताप, (१०) सुहागिन-सर्वस्व, (११) सुहागिन शृंगार, (१२) खाकी-कुसुमांजलि, (१३) स्वतन्त्र भारत, (१४) कुमारी का जन्म, (१५) कुमारी-तपस्या, (१६) कुमारी-विवाह, (१७) सप्तसाधन तथा खाकी-झाँकी[1], (१८) मानव-मात्र का एक धर्म, (१९) चपला-विपला, (२०) बिल्ली-बहार तथा (२१) खाकी-गल्प। आपकी रचना के उदाहरण भी हमें नहीं मिल सके।

श्यामकृष्ण सहाय

आप शाहाबाद-जिला के 'वेलकप' नामक स्थान के निवासी मुंशी भगवन्त सहायजी के पुत्र थे।[2] आपका जन्म सन् १८८१ ई० की पहली मई को हुआ था।[3] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा राँची में हुई। राँची जिला स्कूल से आपने प्रवेशिका की परीक्षा पास की। तदनन्तर कॉलेज की परीक्षाएँ पासकर बैरिस्टरी के अध्ययन के लिए आप लन्दन चले गये। सन् १९०९ ई० से आपने बैरिस्टरी की प्रैक्टिस शुरू कर दी। आपने राँची में कई हिन्दी-स्कूलों की स्थापना कर उनका संचालन स्वयं किया। आपने आर्यसमाज तथा बिहार-क्लब आदि अनेक संस्थाओं के प्रधान-पद को भी सुशोभित किया था।

आपमें हिन्दी के प्रति प्रेम बाल्यावस्था से ही था। आपकी स्फुट रचनाएँ छात्रावस्था से ही विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ करती थीं। आपके द्वारा लिखित कहानियाँ मुख्य रूप से 'कहानियाँ' एवं 'गल्पमाला' में देखने को मिलती हैं। आपके द्वारा लिखित दो हिन्दी-पुस्तकें प्रकाश में आ चुकी हैं—(१) म्युनिसिपल कानून-पुस्तक और (२) वेदों में नारी और शूद्र।

उदाहरण

(१)

१९०९ ई० से मैंने बैरिस्टरी शुरू की, मगर उस समय सिर पर बड़े भाई बालकृष्ण सहाय की छत्रछाया थी। बैरिस्टरी की अपेक्षा मैं अपने परिवार के साथ सार्वजनिक कार्यों की ओर अधिक

---

१. इस पुस्तक की लगभग २००० प्रतियाँ हाथोहाथ बिक गईं। अतः इसका दूसरा संस्करण 'सप्तसाधन' तथा 'रामकृष्ण-झाँकी' के नाम से आपने तैयार किया।

२. आपके द्वारा दिनांक २५ जनवरी, सन् १९५९ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

३. सम्प्रति, आपके वंशधर राँची-नगर के 'अमलाटोली' नामक मुहल्ले में श्रद्धानन्द-पथ पर निवास करते हैं।

ध्यान देता था। म्युनिसिपैलिटी, कौन्सिल और आर्यसमाज मेरे कार्यों के क्षेत्र थे। सन् १९२३ ई० में मै सरकारी वकील नियुक्त हुआ था।[१]

(२)

बात किसी गाँव की है। आदिवासियों के एक परिवार में यह घटना घटी थी। दो भाई थे। बड़े की शादी हो चुकी थी, छोटा अभी कुँआरा था। छोटा भाई यद्यपि विवाह योग्य हो चुका था, फिर भी अभाव के कारण उसका विवाह नही हो पाया था। एक दिन उसने अपने बड़े भाई से कहा कि मेरा विवाह कर दो।

बड़ा भाई इस समस्या से अपरिचित नही था। वह भी चाहता था कि छोटे भाई की शादी हो जाय, इसका घर बस जाय। उसने कहा—अबकी धान की फसल हो जाने दो तबतक अपने पास कुछ हो भी जायगा। आखिर लड़की का दाम देना होगा या नहीं। बिना फसल काटे वह कहाँ से आयगा ?

यही बात तूल पकड़ गई। छोटे भाई ने क्रोध में कुल्हाड़ी से एकाएक हमला कर दिया। बड़े भाई की मृत्यु हो गई।[२]

श्यामजी शर्मा

आप शाहाबाद-जिला के 'भदवर' (पो० कुलहड़िया) ग्राम-निवासी पं० हरिहर पाण्डेयजी के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९३१ वि० (सन् १८७४ ई०) की पौष शुक्ल-पंचमी को हुआ था।[३] आपके जीवन के विषय में मात्र यही ज्ञात है कि आपको काव्यतीर्थ की उपाधि प्राप्त थी और आप बिहार-सरकार के शिक्षा-विभाग में संस्कृत-हिन्दी-शिक्षक के पद पर

---

१. 'आदिवासी' (वर्ष १२, अक ५०, २२ जनवरी, सन् १९५९ ई०, गणतन्त्र-अक) मे प्रकाशित 'बदलता हुआ समाज' शीर्षक लेख से।

२. वही।

३. परिषद के साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के अनुसार। —देखिए, 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, पृ० २९९), 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ६४९), 'हिन्दीसेवी-ससार' (वही, पृ० २९४) तथा श्रीसियाशरणप्रसाद 'सिया' (लाल दरवाजा, मुँगेर) एव आचार्य शिवपूजन सहायजी द्वारा प्रदत्त और विभाग में सुरक्षित सामग्री।

प्रतिष्ठित थे। आपने अनेक जिला स्कूलों को अपनी सेवाएँ दी थीं। सन् १९११—१५ ई० तक आप भागलपुर जिला-स्कूल में थे। मोतीहारी जिला-स्कूल और पटनासिटी स्कूल में भी आपके कार्य करने का उल्लेख मिलता है। आप अपने सम्पादकत्व में भागलपुर से ही 'आर्यावर्त्त' नामक एक मासिक पत्रिका भी प्रकाशित कराते थे।

आपकी गणना अच्छे साहित्य-प्रेमी एवं साहित्यकारों में होती थी। साहित्य के क्षेत्र में आपने सन् १८९८ ई० में प्रवेश किया था। आपने हिन्दी-गद्य एवं पद्य दोनों ही में अपनी रचनाएँ कीं। आपके द्वारा लिखित पुस्तकाकार प्रकाशित रचनाओं के नाम ये हैं—(१) श्याम-विनोद,[1] (२) खड़ीबोली-पद्यादर्श,[2] (३) अबला-रक्षक,[3] (४) हिन्दू-समाज से विधवाओं की प्रार्थना (गद्य), (५) क्या विधवा-विवाह अधर्म है? (गद्य), (६) पिंगल-दर्पण, (७) अलंकार-दीपक, (८) वेद में क्या है? (निबन्ध), (९) श्याम-सरोज-सतसई (पद्य) तथा (१०) रामवनवास (महाकाव्य)[4]। इनके अतिरिक्त आपके द्वारा रचित स्फुट लेख एवं कविताएँ भी बतलाई गई हैं। आपके द्वारा लिखित जो पुस्तकें अभी तक अप्रकाशित हैं, उनके नाम इस प्रकार हैं—(१) रामचरितामृत (महाकाव्य), (२) श्याम-दोहावली (ब्रज-भाषा में ७०० दोहे), (३) दैवीशक्ति की साधना (मिस्मेरिज्म, हिप्नॉटिज्म, हस्तरेखा-विचार), (४) स्वामी दयानन्द के सिद्धान्तों पर मेरे विचार, (५) श्राद्ध-विचार, (६) ऋग्वेद के नासदीय-सूक्त-विवेचन, (७) यजुर्वेद के अध्याय ३१, ३२ और ४० पर तुलनात्मक विवेचन तथा 'पितर' मन्त्र पर विवेचन। 'मिश्रबन्धु-विनोद' में आपके और कुछ नये ग्रन्थों की चर्चा है।

उदाहरण

(१)

गई लरिकाई नाहिं तन तरुनाई आई,
कछु चतुराई हू की बातन करैं लगी।
चंचलाई आई सखि नैनन की कोरन में,
बतियाँ रसीली सुनि कानहू धरैं लगी॥

---

१. पद्य मे लिखित संक्षिप्त रामायण। सन् १९०० ई० मे प्रकाशित।

२. पद्य मे रचित। सन् १९१० ई० के पूर्व प्रकाशित।

३. निबन्ध। विधवा-विवाह और वियोग का वर्णन प० ज्ञानप्रकाश और प० मतलब सिन्धु नामक कल्पित व्यक्तियों के वार्त्तालाप के रूप मे किया गया है। सन् १९१० ई० के पूर्व का प्रकाशन। इसकी आलोचना 'साहित्य-पत्रिका' (ख० ९, स० ६; सितम्बर, सन् १९१४ ई०; पृ० ३२) मे प्रकाशित हुई थी।

४. जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ (वही, पृ० ६४९) मे आपके द्वारा रचित ये पुस्तकें भी बतलाई गई है—(१) भाग्य-परिवर्त्तन, (२) प्रेमामोहनी, (३) प्रियावल्लभ, (४) श्यामहर्षवर्द्धन, (५) सत्त्वामृत-काव्य, (६) बाल-विधवा-गुहार, (७) स्वाधीन विचार, (८) विधवा-विवाह, (९) प० मानी-मति-चपेटिका तथा (१०) वृन्द-विलास ('वृन्द-सतसई' के दोहो पर कुण्डलियाँ)। 'भागलपुर-दर्पण' (वही, पृ० २३३) मे आपके द्वारा रचित एक और पुस्तक 'भारतरत्न' की चर्चा है। कहा गया है कि इसमें भारत के विख्यात नररत्नो की जीवनी है।

सुन्दर लतान माँहि फूलन फूलन पै भृंग वृन्द,
गूँजत बिलोकि हिय आनन्द भरै लगी।
ढाँकि मुख अंचल सों श्याम को बखान सुनि,
सकुच भये ते उर सकुच करै लगी॥[1]

(२)

सेत सारी साजि नख सिख पाँव नूपुर छोर।
'श्याम' जामे जाग नहि सुनि तासु कहुँ कोउ सोर।
चैत पूर्णा देखि फैली चाँदनी भरपूर।
चाह करि पिय मिलन हित चलि कामिनी रसपूर॥[2]

श्यामनारायण चतुर्वेदी

आप सारन-जिला के 'बगही' नामक ग्राम के निवासी पं० हरदयाल चौबे के पुत्र थे।[3] आपका जन्म सं० १९२४ वि० (सन् १८६७ ई०) की चैत्र शुक्ल-द्वादशी को हुआ था।[4] आपकी माता का नाम 'बुद्धिमती' था।[5] बचपन में ही आपके पिताजी का देहान्त हो गया और आपके तीनों भाइयो और आपकी माताजी का भरण-पोषण आपके सौतेले भाई इन्द्रदत्तजी करते रहे। बाल्यकाल से ही आपने संस्कृत की पढ़ाई प्रारम्भ की।

---

१. 'रसिक-मित्र' (कानपुर, वर्ष ५, सख्या ६; २५ मार्च, सन् १९०२ ई०), पृ० २३।

२. वही, पृ० २९।

३. आपके पूर्वज गोरखपुर-जिला के 'नेपुरा' नामक गाँव के निवासी श्रीब्रह्मदत्त चौबे के वशज थे, जो नेपुरा छोड़कर बिहार चले आये थे। उक्त चौबेजी के वशजो मे प० हरिनाथ चौबे अमनौर के बाबूसाहब से १०० बीघो का ब्रह्मोत्तर प्राप्त कर, बगही गाँव मे आ बसे। इन सौ बीघो के अलावा और भी भूमि द्रव्य देकर उनसे खरीदी और बगही, चौबे लोगो की एक बड़ी जमीन्दारी बनी। इन लोगो की प्रधान जीविका, जमीन्दारी, खेती और पठन-पाठन पर ही आश्रित थी।

४. श्रीकमलाप्रसाद वर्मा (गुलजारबाग, पटना) द्वारा लिखित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित जीवनी के अनुसार।

५. प० हरदयाल चौबे के दो स्त्रियाँ थीं। एक से दो पुत्र पं० इन्द्रदत्त चौबे और पं० देवकीनन्दन चौबे थे तथा दूसरी (बुद्धिमती) से तीन—प० रामनारायण चौबे, पं० भगवत चौबे और प० श्यामनारायण चौबे।

अमनौर (सारन) के एक साधारण पण्डित से आपने सारस्वत-चन्द्रिका का अध्ययन समाप्त कर कौमुदी-पाठ का अध्ययन आरम्भ किया। इसी समय आपका विवाह पटना के पं० शिवनन्दन शर्माजी की कन्या से हो गया।

अपनी ससुराल में रहकर आप रायबहादुर राधाकृष्णजी की गुरहट्टा संस्कृत-पाठशाला में निःशुल्क पढ़ने लगे। वहाँ आपका संसर्ग बड़े-बड़े पंडितों से हुआ। गुरहट्टा संस्कृत-पाठशाला में लगभग सात वर्षों तक रहकर आपने साहित्य-व्याकरण आदि विषयों में अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली। आपने काशी जाकर वैद्यकशास्त्र में भी निपुणता प्राप्त की। आप देशाटन की इच्छा से काशी से पंजाब की ओर चल पड़े। पंजाब में आप वेदों और वैदिक यज्ञों के परम भक्त स्व० रायसाहब श्रीशिवनाथजी के यहाँ रहकर उनके पुत्र श्रीहरिश्चन्द्रजी को प्राचीन शैली के अनुसार गुरुकुल की शिक्षा देने लगे। पंजाब में रहकर आपने कर्मकाण्ड में बड़ी अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली। आपकी योग्यता के परिणामस्वरूप काशीवालों ने भी आपसे यज्ञ करवाया। पंजाब में कुछ समय और बिताकर आप पटना वापस आ गये। यहाँ जिस विद्यालय में आपने शिक्षा प्राप्त की थी, उसीमें शिक्षक बनकर आप विद्या-दान करने लगे। इसके साथ-साथ अवकाश के क्षणों में वैद्यक-चिकित्सा का कार्य भी चलता था। चिकित्सा के क्षेत्र में कुछ ही दिनों में आपको प्रभूत प्रसिद्धि प्राप्त हुई। इन्हीं दिनों आपने अनेक महौषधियों का आविष्कार भी किया। आपका औषधालय पटना में पादरी की हवेली के निकट सोनार-टोली में था। यह स्थान हिन्दी-संस्कृत के विद्वानों का एक बहुत बड़ा केन्द्र था, जहाँ सुबह-शाम अच्छे-अच्छे विद्वान् इकट्ठे होकर विभिन्न साहित्यिक विषयों पर विचार-विमर्श करते थे। कुछ दिनों बाद पटना की सारी सम्पत्ति अपने जामाता आयुर्वेदाचार्य पं० कमलाप्रसादमणि त्रिपाठी को देकर आप छपरा चले आये। छपरा में, आपकी योग्यता पर मुग्ध होकर लोगों ने आपको वहाँ के भारतेश्वरी मारवाड़ी संस्कृत-कॉलेज का प्रधानाचार्य बनाया, जहाँ रहकर आपने बड़ी योग्यता के साथ न जाने कितने लोगों को संस्कृत और वैद्यक का विद्वान् बना दिया। इस समय तक आपने वेद, कर्मकाण्ड, आगम, साहित्य तथा व्याकरण की विशेष योग्यता प्राप्त कर ली थी। आपकी इन्हीं योग्यताओं को दृष्टि में रखते हुए सरकार ने आपको महामहोपाध्याय की उपाधि देकर सम्मानित किया। आप जब ६२ वर्ष के हुए, तब आपकी सहधर्मिणी का देहावसान हो गया। इसके पश्चात् आपने कॉलेज के प्रधानाचार्य पद से त्यागपत्र दे दिया। आप मूल रूप से संस्कृत के विद्वान् थे, किन्तु आपने हिन्दी में ऋग्वेद का अनुवाद, पंजाब के श्रीशिवनाथजी के साथ किया था। यह अनुवाद प्रकाशित भी हो चुका है। आपकी रचना के उदाहरण हमें नहीं मिल सके।[१]

●

१. आपकी विस्तृत जीवनी रोचक छन्दों में 'जीवन-संग्राम : महामहोपाध्याय पं० श्यामनारायण चतुर्वेदी' के नाम से ग्रन्थागार, कमला-कुंज, गुलजारबाग (पटना) द्वारा प्रकाशित हुई है, जो एक रुपये मे आज भी प्राप्य है।

श्यामनारायण सिंह

आप सारन-जिला के सुप्रसिद्ध 'सोनपुर' नामक स्थान के निवासी थे। आपका जन्म सं० १९५३ वि० (सन् १८९६ ई०) की फाल्गुन शुक्ल-पंचमी (शुक्रवार) को हुआ था।[1] अपने बाल्यकाल से ही आप सन्त-समाज के सत्संग में आ गये थे। आप 'रामचरितमानस' के अच्छे ज्ञाता थे। रामायणी कलाकार के रूप में आप अपने इलाके में प्रसिद्ध थे। सन्तों के संसर्ग में रहकर आपने उनकी बहुत-सी अच्छाइयाँ सीख ली। उनके बीच नित्य जो भजन गाये जाते थे, उनके अतिरिक्त आपने और भी बहुत-से भजन स्वयं बना डाले। स्वरचित भजनों को आपने स्वरबद्ध तो किया, किन्तु लिपिबद्ध नहीं कर सके। कालान्तर में आपने उन्हें 'कैथी लिपि' में लिखने का प्रयास किया। परन्तु दैव-दुर्विपाक से वह लेख भी दीमकों द्वारा नष्ट कर दिया गया। उन्हीं नष्टप्राय भजनों में से कुछ प्राप्त हो सके हैं। आपको लगभग ३०० भजन, कविताएँ, दृष्टिकूट आदि कण्ठाग्र थे। आपने भजन, दृष्टिकूट, प्रभाती, स्तुति, सोहर आदि विभिन्न प्रकार की काव्य-रचनाएँ की थीं।

उदाहरण

(१)

कासे कहूँ मैं दिल की बतिया
हो सुरतिया बिना डरपत जियरा हमार हो।
कामदेव सताये रतिया, गुनत न कोई जतिया
नैनवाँ मे भई खगुंधार हो।
क्रोध हूँ जलावे छतिया, स्वामी के न भावे बतिया
मुखवा से झहड़त अंगार हो।
लोभ के लमी है लतिया, धावत है दिन वो रतिया
घट गइले मेरु से पहाड़ हो।
मोह के मन्दिर है थतिया, मिली बैठे पुतहूँ नतिया।
नित नव स्वारथ उच्चार हो।

---

१. 'आभा' (सोनपुर-अंक), मई, सन् १९५६ ई० में प्रकाशित श्रीराणा मित्रजीत सिंह लिखित 'सोनपुर के कवि और उनकी रचनाएँ'-शीर्षक लेख के अनुसार।

श्यामनारायण गतिया, योग न जुगतिया
गुप्त भये करतार हो ॥[१]

(२)

परदे-परदे से मिल जाना, दिल मे दाग लगाना ना ।
नाम हरि के दिल से प्यारे, कभी न भुलाना ना ॥
पाकर नर के बदन रतन के, खाक मिलाना ना ।
पर नारी को देखकर प्यारे, नैन हिलाना ना ॥
अपने कर्म का भोग सभी है, किसी को दोष लगाना ना ।
जो करना है काज आज, कर देर लगाना ना ॥
श्यामनारायण दया धर्म को, कभी भुलाना ना······॥[२]

श्रीकृष्ण मिश्र

आप भागलपुर-जिला के 'लालूचक' नामक स्थान के निवासी हैं।[३] आपका जन्म सं० १९५१ वि० (सन् १८९४ ई०) की अग्रहायण शुक्ल-नवमी को हुआ था।[४] लगभग नौ-दस साल तक आपका लालन-पालन करके आपकी स्नेहमयी माता हैजे का शिकार

१. 'आभा' (वही, मई, सन् १९५६ ई०) मे प्रकाशित उसी लेख से।

२. वही।

३. आपके पूर्वज उत्तरप्रदेश के कन्नौज-नगर के निवासी थे। आपके एक पुरखा प० दीनानाथ मिश्र ब्रिटिश सरकार की सेवा मे भर्त्ती हुए और उन्हे (दीनानाथ सूबेदार को) इनाम मे भागलपुर के करीब ७० एकड की जागीर मिली। अत' वे भागलपुर चले आये और अपनी जागीर के निकट कोहड़ा-ग्राम मे बस गये। फिर, आपके पितामह अथवा प्रपितामह श्रीप्यारेलाल मिश्र 'कोहड़ा' छोड़कर 'लालूचक'-ग्राम मे आकर बस गये। आपके पिता मुँगेर के सिविलकोर्ट मे सरिश्तेदार थे। उनके जीवन का अधिकाश मुँगेर में ही व्यतीत हुआ।

४. देखिए, 'बीते दिन' (प० श्रीकृष्ण मिश्र, सन् १९७२ ई०), पृ० ५; 'हिन्दीसेवी-ससार' (वही, पृ० ३००) तथा साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री।

होकर काल कवलित हो गईं। आरम्भ में बरहपुरा के एक मौलवी साहब आपकी शिक्षा के लिए नियुक्त किये गये, जिनसे आपने अँगरेजी और उर्दू का प्रारम्भिक ज्ञान प्राप्त किया। तत्पश्चात् आपका नाम भागलपुर के मिरजानहाट-स्थित एक मिड्ल स्कूल में लिखवाया गया। वहाँ से सन् १९०६-७ ई० में आपका नाम वहीं के जिला-स्कूल में लिखाया गया। स्कूल में आप एक मेधावी और परिश्रमी छात्र थे। सन् १९११ ई० में आपने छात्रवृत्ति के साथ प्रथम श्रेणी में मैट्रिकुलेशन की परीक्षा पास की। सन् १९११ ई० के बाद आप तेजनारायण-जुबली-कॉलेज में शिक्षा पाने लगे। आई० ए० की परीक्षा में उत्तीर्ण होने पर आपको बीस रुपये माहवार छात्रवृत्ति मिलने लगी। सन् १९१५ ई० में आपने सम्मान के साथ बी० ए० की परीक्षा पास की। उसके बाद एम्० ए० की शिक्षा के लिए आप कलकत्ता-विश्वविद्यालय चले गये। वहाँ एम्० ए० के साथ-साथ आप कानून भी पढ़ने लगे। उस समय सरकार की ओर से कलकत्ता से 'साप्ताहिक युद्ध-वार्त्ता'-नाम एक समाचारपत्र अँगरेजी में प्रकाशित होता था। उसके हिन्दी-अनुवाद के लिए अनिरुद्ध समय में आप ही नियुक्त थे। उसके बाद, 'कलकत्ता-समाचार' नामक हिन्दी-दैनिक में भी आप सम्पादकीय लेख लिखा करते थे। सन् १९१७ ई० में आपका विवाह सुप्रसिद्ध नेता प० रविशंकर शुक्ल की ज्येष्ठा पुत्री श्रीमती रामप्यारी देवी के साथ हुआ और उसी वर्ष आपने प्रथम श्रेणी में एम्० ए० की परीक्षा पास की। परीक्षा-फल के साथ-साथ आपको एक रजत-पदक और एक सौ रुपये नकद प्राप्त हुए। तत्पश्चात् सन् १९१८ ई० में विधि-स्नातक-परीक्षा पास कर आपने वकालत करने का निश्चय कर लिया। आप अपने पिताजी के पास मुँगेर चले आये और सन् १९१९ ई० के आरम्भ से ही वकालत करने लगे। धीरे-धीरे आपकी वकालत चल निकली और आप वकीलों के बीच भी सम्मानित हुए। बिहार-वकील-संघ के हजारीबाग अधिवेशन के सभापति आप ही चुने गये थे। सन् १९५२ ई० के अगस्त में आप सरकारी वकील के पद पर नियुक्त हुए। उस पद पर आप लगभग पन्द्रह वर्षों तक रहे।

वकालत करते हुए आपने देश की राजनीति में भी पूरी दिलचस्पी ली। देशभक्ति के भावों से आपका हृदय बराबर ओत-प्रोत रहा। आप काँगरेस के एक कर्मठ सदस्य रहे। आपके जीवन पर डॉ० राजेन्द्रप्रसाद और प० रविशंकर शुक्ल का पर्याप्त प्रभाव पड़ा। सन् १९२०-२१ ई० में आप ट्रेड-यूनियन-संगठन से सम्बद्ध हुए। उस समय जब श्रीतारापद मुखर्जी के नेतृत्व में अखिल भारत एवं बर्मा पोस्टल तथा आर० एम्० एस्० कान्फरेंस की स्थापना हुई, तब आप बिहार-शाखा के मन्त्री बनाये गये। उस समय आपने 'पोस्टल एडवोकेट' नामक एक अँगरेजी-मासिक-पत्र भी निकाला था, जो चल न सका। सन् १९३० ई० के सत्याग्रह-आन्दोलन के सिलसिले में आप बन्दी भी बनाये गये। सामाजिक कार्यों में भी आपकी विशेष दिलचस्पी रही। इसी ख्याल से आपने म्युनिसि-पैलिटी के कई चुनाव जीते और भागलपुर-विश्वविद्यालय की सिनेट के सदस्य हुए। मुँगेर के श्रीकृष्ण सेवा-सदन की स्थापना में भी आपका प्रमुख हाथ रहा। सम्भवतः आपकी प्रेरणा से ही मुँगेर में हिन्दी-साहित्य-परिषद् की स्थापना हुई, जिसके सभापति आप लम्बे

अर्से तक रहे। आगे चलकर जब प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की स्थापना हुई, तब आप उसके भी दो अधिवेशनों (पूर्णिया और बेगूसराय) के सभापति हुए।

हिन्दी-साहित्य के प्रति आपकी अभिरुचि छात्रावस्था से ही थी। इसका श्रेय आपने अपने हिन्दी-शिक्षक प० रामलोचन पाण्डेयजी को दिया है। जब आप भागलपुर कॉलेज में उच्चाध्ययन के लिए आये, तब वहाँ की साहित्यिक गतिविधि में और भी तेजी आई। वहाँ आपने भगवान्-पुस्तकालय के साहित्यिक कार्यक्रमों में पूरी दिलचस्पी ली। उसी समय से 'कान्यकुब्ज-पत्रिका' में आपके लेख प्रकाशित होने लगे। फिर अन्य तत्कालीन मासिक पत्रिकाओं में भी आपके लेख छपे। उसके बाद पं० नर्मदाप्रसाद मिश्र की प्रेरणा से आपने सन् १९१६ ई० में 'प्रेमा' नामक अपना पहला उपन्यास लिखा, जो काफी लोकप्रिय हुआ। सन् १९२८ ई० के आसपास आपने अपने दूसरे उपन्यास 'महाकाल'[१] की रचना की। उसके बाद, सन् १९३६ ई० में, आपने 'देवकन्या'[२] नामक एक नाटक की रचना की। सन् १९३० ई० में आपने जेल में ही एक 'हिन्दी-व्याकरण'[३] की भी रचना की थी। सम्प्रति, धर्म एवं आध्यात्म में अटूट आस्था के साथ आप अपना जीवन-यापन कर रहे हैं।

उदाहरण

राजेन्द्रप्रसादजी की मुझपर कृपादृष्टि कहे या स्नेहदृष्टि रहती थी। जब वे पटना हाइकोर्ट में वकालत करते थे तब मैं कभी-कभो उनके पटना-गया रोड पर स्थित बँगले मे ठहरता था। मै तो कट्टर कान्यकुब्ज ब्राह्मण था। अपने ही रसोई बनाकर भोजन करता था। यह जेल जाने के पहले की बात है। राजेन्द्रबाबू जबतक मेरी रसोई बन नही जाती, देखते रहते और पूछताछ करते रहते थे। उनके हाथों मे हमेशा किताबें होती थीं। वे आदमी नही देवता थे। मैने सभी देश के बड़े-बड़े नेताओं को देखा है। महात्मा गाँधी, वल्लभभाई पटेल के सिवा राजेन्द्रबाबू के ऐसा संत, विद्वान्, साथी, देशभक्त और कोई नहीं जँचा। राष्ट्रपति ने अपने बगल में अपने सिंहासन पर बिठाया। रानी

१. तारा प्रेस, मुँगेर से प्रकाशित।

२. महाशक्ति प्रेस, बनारस से प्रकाशित। यह नाटक अभी भी लोकप्रिय है। इसका अभिनय देहातो में आज भी समय-समय किया जाता है।

३. इस पुस्तक की रचना आपने जेलर श्रीजगदेव पाण्डेयजी के लिए की थी। श्रीपाण्डेय पुस्तक-प्रकाशक भी थे।

एलिजाबेथ की जीवनी पर आधारित चित्र था। पंचमढी में राष्ट्रपति भोजन के समय मुझे फोन से बुलवा लेते थे। मै बड़ी सोसाइटी का अभ्यस्त न था। वहाँ की ठाट-बाट में भौचक्का रह जाता। राजेन्द्रबाबू तो मुझे पखाना और पेशाबखाना तक दिखा आये थे। बड़प्पन और साधुता इसे कहते है। कक्काजी (प० रविशंकर शुक्ल) बडे ही मातृभक्त और धार्मिक व्यक्ति थे। लाख व्यस्त रहने पर पूजा किये बिना और माता से दो बाते किये बिना बाहर नही निकलते थे।'[1]

(डॉ०) श्रीकृष्ण सिंह 'बिहार-केसरी'

आप मुँगेर-जिला के प्रसिद्ध ग्राम 'माउर' (बरबीघा) के निवासी श्रीबाबू हरिहर-प्रसाद सिंह के चतुर्थ पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९४५ वि० की कार्त्तिक शुक्ल-पंचमी (२१ अक्टूबर, सन् १८८८ ई०) को हुआ था।[2] आपकी प्राथमिक शिक्षा गाँव की ही पाठशाला में हुई। अक्षर-ज्ञान करानेवाले आपके ग्रामीण गुरु श्रीलक्ष्मीदास का स्नेह आप पर सदा रहा। अपनी बाल्यावस्था से ही आप पढ़ने-लिखने में बडे तेज थे। गोस्वामी तुलसीदास के प्रति आपके हृदय में अपार श्रद्धा थी। बचपन से ही आपमें पुस्तक-संग्रह की भी असाधारण प्रवृत्ति थी। आपमें धर्मानुरक्ति भी घर कर गई थी। ये सारे संस्कार आपको अपने पूज्य पितृदेव के सम्पर्क से ही प्राप्त हुए थे, जो अपने समय के एक सुपरिचित शैव थे। प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने के बाद, उच्च विद्यालयीय शिक्षा के लिए आप मुँगेर जिला-स्कूल में प्रविष्ट हुए। उन्हीं दिनो मुँगेर की गंगा में प्रविष्ट हो, हाथों में 'गीता' और 'कृपाण' लेकर आपने देशभक्ति का जो व्रत लिया, उसका आजीवन पालन किया। आगे चलकर तत्कालीन बंगाल के जन-नायक श्रीसुरेन्द्रनाथ बनर्जी के तत्त्वावधान में, मुंगेर में छात्र-संघ का जो अधि-वेशन हुआ, उसमें आपने प्रमुख रूप से भाग लिया। प्रवेशिका (इण्ट्रेन्स) परीक्षा विशिष्टता के साथ पास करने के बाद आपका नाम पटना-कॉलेज में लिखाया गया।

---

१. 'बीते दिन' (प० श्रीकृष्ण मिश्र, सन्, १९७२ ई०). पृ० २६-२७।

२ 'श्रीकृष्ण-अभिनन्दन-ग्रन्थ' (स० रामधारी सिंह 'दिनकर', स० २००५ वि०), पृ० ४१९। आपके प्रस्तुत परिचय-लेखन मे ये पुस्तके भी अत्यधिक सहायक हुई है— 'मशाल अब भी जलती है' (श्रीमथुरा ठाकुर, सन् १९६५-६६ ई०, पृ० ८२), 'प्रान्त के जगमगाते हीरे' (श्रीरासविहारी राय शर्मा, सन् १९५५ ई०, पृ० ५८-५९), 'जयन्ती स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ६७२ण) और 'बिहार-अब्दकोश (वही, पृ० २४९-५०)।

वहाँ पढ़ते समय भी आपने अपनी अटूट देशभक्ति का परिचय दिया। अध्ययन-काल से ही आपकी विशेष अभिरुचि राजनीति की ओर थी। विद्यालयीय जीवन में ही आप श्रीअरविन्द के लेख, सर सुरेन्द्रनाथ बनर्जी के भाषण और लोकमान्य बालगंगाधर तिलकजी के उद्‌गारों से परिचित हो चुके थे।

पटना-विश्वविद्यालय से एम्० ए० तथा पटना लॉ-कॉलेज से बी० एल्० की उपाधि प्राप्त कर आपने मुँगेर में वकालत शुरू की। कुछ ही दिनों में आपकी वकालत चमक उठी। इस पेशे में आने पर भी आपकी राजनीति-प्रियता घटी नहीं, बल्कि और भी बढ़ती ही गई। वाणी के धनी होने के कारण आपका न्याय-तर्क बड़ा ही श्रुति-मधुर एवं प्रिय होता था। तर्क में सत्यपक्ष की स्थापना ही आपका उद्देश्य रहा। सन् १६१६ ई० से १६२१ ई० तक आप इस कार्य में लगे रहे। इसी बीच आपने मुँगेर में 'होमरूल-आन्दोलन' का संचालन भी किया। आप 'ऑल इण्डिया होमरूल-आन्दोलन' के मन्त्री एवं मुँगेर की 'पीपुल्स-एसोसियेशन' नामक स्थानीय लोकसंस्था के संचालक एवं मन्त्री भी रहे।

सन् १६१७ ई० में गांधीजी के चम्पारन आने पर आपने उनके कार्यक्रमों में सक्रिय रूप से भाग लेना चाहा, किन्तु अपने भाई की मृत्यु के कारण आप उसमें शामिल न हो सके। परन्तु, सन् १६२१ ई० में देशव्यापी असहयोग-आन्दोलन छिड़ने पर आपने अपनी चलती हुई वकालत को छोड़कर गांधीजी के नेतृत्व में उसमें सक्रिय रूप से भाग लिया। इसके पूर्व वाराणसी में आपने उनके दर्शन किये थे। असहयोग-आन्दोलन के सिलसिले में आपने मुँगेर-जिला के चप्पे चप्पे का पैदल दौरा किया। सन् १६२३-२४ ई० में अखिलभारतीय-कौंगरेस-कमिटी के निर्णय के अनुसार आपने मुँगेर जिला बोर्ड की सदस्यता स्वीकार की। यद्यपि वहाँ के लोग आपको ही बोर्ड के चेयरमैन-पद पर आसीन कराना चाहते थे, तथापि आपने वहाँ के 'शाह मुहम्मद जुबैर साहब' को उस पद पर अधिष्ठित कराकर स्वयं वाइस-चेयरमैन के रूप में कार्य करना स्वीकार कर एक बड़े त्याग का परिचय दिया। आपके समय में मुँगेर-जिला-बोर्ड की स्थिति बड़ी सुदृढ़ रही। इसी तरह सन् १६२७ ई० में आप बिहार-विधान-परिषद् (कौन्सिल) के सदस्य निर्वाचित हुए तथा दल के सर्वसम्मत नेता चुने गये। 'स्वराज्य-दल' के नेता के रूप में भी आपके कार्य बड़े ही प्रशंसनीय रहे। सन् १६३४ ई० में आप केन्द्रीय एसेम्बली के सदस्य निर्वाचित हुए।

आपकी देशभक्ति अनुपम थी। आपने कई बार जेल की यातनाएँ सहीं। हजारीबाग केन्द्रीय कारागार से छूटकर आप अभी बाहर हुए ही थे कि पुनः आपकी गिरफ्तारी हो गई। आपको दो वर्षों की सजा हुई। किन्तु, आपके चेहरे पर देशभक्ति की आभा सदा विराजमान रही। गिरफ्तारी का यह क्रम बराबर चलता रहा।

अँगरेजी-राज्य के विरोध में आपने कई वैयक्तिक सत्याग्रहों में भाग लिया तथा जेल की कठोरतम यातनाएँ सहीं। सन् १६२९ ई० के नगर-पालिका-चुनाव में आपने मुँगेर से अपना मनोनयन-पत्र दाखिल किया। उसी वर्ष कौंसिल ऑफ् स्टेट के निर्वाचन में भी उम्मीदवार बने। अखिलभारतीय कौंगरेस-कमिटी के आप सन् १६२३ ई० में सदस्य थे। सन् १९३६ ई० में आप बिहार-प्रान्तीय कौंगरेस-कमिटी के सभापति-पद पर प्रतिष्ठित

हुए। कॉंगरेस के आदेशानुसार आपने सन् १९३७ ई० में बिहार के आम चुनाव में हाथ बँटाया तथा तत्कालीन प्रादेशिक सरकार के आपही प्रधान (मुख्य) मंत्री बनाये गये। बिहार-मन्त्रिमण्डल के नेता के रूप में आपने एक वर्ष तक मन्त्रिमण्डल चलाया था कि सन् १९३८ ई० में 'अण्डमन' के राजनीतिक कैदियों को भारत लाने के प्रश्न पर तत्कालीन प्रान्तीय अँगरेज गवर्नर सर मॉरिस हैलेट से आपका मतभेद हो गया। फलतः उसी प्रश्न को लेकर आपने अपना त्याग-पत्र दे दिया। अन्त में अँगरेजों ने अपना हठ छोड़कर मुख्यमन्त्री के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं करने का आश्वासन दिया और मन्त्रिमण्डल के संचालन के लिए पुनः आपको आमन्त्रित किया।

सन् १९४७ ई० में देश के आजाद होने पर आप ही बिहार-राज्य के मुख्यमन्त्री बनाये गये। लगातार १५ वर्षों तक आपने मुख्यमन्त्री की हैसियत से बिहार की उल्लेखनीय सेवा की। बिहार के सर्वमान्य नेता के अतिरिक्त आप एक कुशल-प्रशासक और वक्ता भी थे। आपने अपनी वक्तृत्व-शक्ति के बल पर ही सन् १९४६ ई० के साम्प्रदायिक दंगे के समय बिहार को बचाया था। आपकी अटूट देशभक्ति, सेवा निर्भीकता आदि गुणों के कारण जनता ने आपको 'बिहार-केसरी' की उपाधि से विभूषित किया।

आपकी स्वाध्याय-प्रियता के समक्ष अध्ययनशील विद्यार्थी भी मात हो जाते थे। संसार की कोई भी नवीन पुस्तक आप पढ़े बिना नहीं रहते थे। अनेकानेक कार्यों में व्यस्त रहकर भी आपने स्वाध्याय का कार्यक्रम कभी बन्द नहीं किया। सन् १९४६ ई० में आपको पटना-विश्वविद्यालय ने 'डॉक्टरेट' की मानद उपाधि से विभूषित किया था। सं० २००५ वि० के कार्त्तिक माह में मुँगेर-नगर में आपको एक 'अभिनन्दन-ग्रन्थ' समर्पित कर इस राज्य की जनता ने आपके प्रति अपनी सम्मान-भावना और कृतज्ञता प्रकट की थी।

आपके द्वारा लिखित अनेक स्फुट निबन्ध पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं। 'निर्माण की वेला' नामक आपके भाषणों का एक संकलन, बिहार-सरकार के 'जन-सम्पर्क-विभाग' की ओर से प्रकाशित है। आपके द्वारा लिखित 'राजनीति-शास्त्र'-विषयक एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ भी प्रकाश में आ चुका है। ३१ जनवरी, सन् १९६१ ई० को आपका पार्थिव शरीर कीर्त्ति-काया में परिवर्त्तित हो गया।

उदाहरण

(१)

मनुष्य के संबंध में प्रत्येक सामाजिक दर्शन की अपनी-अपनी धारणा है। १६वीं शताब्दी के बाद के वैज्ञानिक युग का मानव बाइ-बिल की कल्पना के मानव से भिन्न है। आदम स्मिथ अथवा अन्य अर्थशास्त्रियों के आर्थिक सिद्धान्तों की मानव-कल्पना मार्क्स के दर्शन के बाद वाली मानव-कल्पना से भिन्न है। एक विशिष्ट समाज-दर्शन

को समझने के लिए अनिवार्य रूप से उसके पीछे मनुष्य-संबंधी कल्पना को समझना अपेक्षित है। मेरे नम्र विचार में मानव के संबंध मे गाँधीजी की धारणा उनके समस्त दर्शन-रूपी सौरमण्डल में सूर्य्य का स्थान पाती है। उन्होंने स्वयं बार-बार कहा है कि मनुष्य तथा पदार्थो-सबंधी उनकी सभी योजनाओं में मनुष्य सर्वाधिक महत्त्व का है। मानव-संबंधी इस धारणा की सचाई को स्वीकार करने पर मानव संबंधी तथा राष्ट्र-संबंधी उनकी समस्त धारणा प्रोद्भासित हो उठती है। उनके अनुसार मनुष्य के अन्दर अनन्त दैवी शक्तियाँ हैं। मानव द्वारा ईश्वर बुद्धि तथा प्रेम के रूप में कार्य करता है। मनुष्य अपनी इच्छा, बुद्धि, चेतना तथा प्रेमशक्ति में स्वतन्त्र तथा इनका स्वामी है। वह स्वयं अपने भाग्य का निर्माता है।'[1]

(२)

बुद्ध ने उत्तम जीवन के लिए जिस दर्शन का प्रवर्त्तन किया, उसकी व्याख्या करने में मैं अपने को समर्थ नहीं पाता। इस जीवन-दर्शन की सादगी और ऐश्वर्य पर आदमी मुग्ध हो जाता है। बुद्ध के अनुसार, जीवन वस्तुतः अस्तित्व नहीं बल्कि विकास है। यह जीवन एक यात्रा है, जिसका लक्ष्य है आत्मसिद्धि, मनुष्य की गुप्त शक्तियों का विकास और 'अहम्' का इस प्रकार विस्तार जिससे वैयक्तिकता के सारे बन्धन दूर हो जायँ और मनुष्य सबके साथ तादात्म्य का अनुभव करने लगे। चार उदात्त सत्य और अष्ट मार्ग जीवन की एक पद्धति के सैन्द्रियसंपूर्ण को व्यक्त करते हैं, और वह चाहते थे कि जीवन का वास्तविक उद्देश्य पूरा करने के लिए यह पद्धति अपनानी चाहिए। एक यूनानी दार्शनिक ने कहा है कि ज्ञान ही पुण्य है, किन्तु बुद्ध ने देखा कि इसके लिए ठोस

---

१. निर्माण की वेला' (डॉ० श्रीकृष्ण सिंह, सन् १९५६ ई०), पृ० २३।

मनोवैज्ञानिक नीव पर आधारित आचार-संबंधी प्रयास आवश्यक है। जीवन का सही रूप देखने के लिए अज्ञान पर विजय पानी होगी। एक बार भी जीवन का सही रूप जान लेने पर यह मालूम पड़ जायगा कि हमलोग सब समय अस्थायी वस्तुओं के पीछे दौड़ रहे है, और वे वस्तुएँ वास्तविक आनन्द का कारण नही हो सकती। साधारण जीवन का अर्थ है कष्टमय जीवन। यह और भी स्पष्ट हो जायगा कि इस भाग-दौड़ के लिए तृष्णा ही मनुष्य को उत्प्रेरित करती है। बुद्ध यह नहीं कहते कि कामना का अन्त कर दिया जाय, जैसा कि एक संन्यासी करना चाहेगा।[१]

श्रीधरप्रसाद शर्मा

आप पटना-जिला के 'राघवपुर' (बिहटा) नामक ग्राम के निवासी पं० श्रीरघुनाथ शर्मा के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९५५ वि० (सन् १८९८ ई०) की आषाढ कृष्ण-एकादशी (मंगलवार) को हुआ था।[२] आपकी प्राथमिक शिक्षा घर पर ही हुई थी। फिर, घर पर ही रहकर आपने अपने भ्राता पं० अवधप्रसाद शर्मा से संस्कृत की शिक्षा ली। आगे चलकर आपने संस्कृत की 'काव्यतीर्थ' एवं 'शास्त्री' की परीक्षाएँ क्रमशः बंगाल और बिहार-संस्कृत-समिति से पास की। आपको 'साहित्य-मनीषी' की उपाधि भी प्राप्त थी।

आपकी रचनाएँ सं० १९७५ वि० से ही प्रकाश में आने लगी थीं। आपने भागवत के दशम स्कन्ध उत्तरार्द्ध और एकादश स्कन्ध का हिन्दी-पद्यानुवाद किया था, जो अद्यावधि अप्रकाशित ही है। आपने मगही-भाषा में भी स्त्रियों द्वारा गाये जाने योग्य कुछ गीतों और भजनो की रचना की थी। आपकी कुछ स्फुट काव्य-रचनाएँ खड़ी-बोली में भी मिलती है। आपके द्वारा लिखित एवं प्रकाशित कुछ पुस्तकों के नाम ये हैं— (१) नई दुनिया, (२) भागवत-माहात्म्य,[३] (३) श्रीमद्भगवद्गीता[४] (राधेश्याम-तर्ज), (४) वीर अभिमन्यु, (५) सीताराम-विवाह-कीर्त्तन, (६) लकादहन, (७) राम-वन-गमन, (८) उमा शंकर-विवाह-कीर्त्तन, (९) सुदामा-चरित, (१०) गाधी-विरह-लहरी,[५] (११) होली-

---

१. 'निर्माण की वेला' (वही), पृ० ४०।
२. साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के अनुसार।
३. प्रकाशक स्वय। प्रकाशन-काल नहीं।
४. प्रकाशक वही। प्रकाशन-काल : सन् १९५३ ई०।
५. प्रकाशक वही। प्रकाशन-काल नहीं।

धमार : चैत गुलबहार[1]। इस प्रकार आपके द्वारा लिखित लगभग चौतीस पुस्तकें बतलाई जाती हैं।

उदाहरण

(१)

हे दीनबन्धु भगवान हमें निज चन्द्रबदन दरसा जाना,
आँखे प्यासी हैं दर्शन की इनकी यह प्यास बुझा जाना।
भव भय भञ्जन करुणा निधान विनती तुमसे यह मेरी है,
नैया भवसागर धार पड़ी करुणाकर पार लगा जाना।
हाथों में जकड़ी लोभ कड़ी पग में माया जंजीर पड़ी,
विषयालय में कैद हुए बन्दी को नाथ छुडा जाना।
अज्ञानों की अँधियारी में ये काम क्रोध है लूट रहे,
तृष्णा विभावरी में पधार झट ज्ञान-प्रदीप जगा जाना।
श्रीधर श्रीधर की गर्ज यही है अर्ज यही स्वीकार करो,
निज चरण सरोज पराग सरस वंशीधर शीश चढ़ा जाना॥[2]

(२)

अगर पूछते हो कि क्या चाहते हैं,
सनातन धरम की विजय चाहते हैं।
रहै वेदस्मृति शास्त्र का पाठ जारी,
कुशिक्षा विदेशी की क्षय चाहते हैं।
न हो धर्म के मार्ग में विघ्न बाधा,
सदा होके रहना अभय चाहते हैं।
पुरातन सदाचार का प्यार प्रकटे,
स्वधर्मानुरागी हृदय चाहते हैं।

---

१. प्रकाशक स्वयं। प्रकाशन-काल नहीं।
२ 'नई दुनिया' (प० मिश्र श्रीधर शर्मा, सन् १९५३ ई०), पृ० १।

न माने कभी भ्रष्ट कानून कोई,
व्यवस्था सभी धर्ममय चाहते हैं।
भरत भूमि भारत का श्रीधर सदा ही,
समुन्नत व उज्वल उदय चाहते हैं।[1]

(३)

नहीं दर्द दिल है छिपाने के काबिल,
ये बातें है सबको सुनाने के काबिल।
सुधा की हरारत खुदा जानते हैं,
नहीं है जबाँ पै बुलाने के काबिल।
हैं रक्षक सहायक सभी मौन बैठे,
न है कोई नियम निभाने के काबिल।
समय पै समस्या भी आती नहीं है,
ये है दुर्दशा क्या सुनाने के काबिल।[2]

(४)

लौट जाओ ऊधो लेइ पाँती मथुरा की ओर,
बाँचि ना सुनाओ यहाँ बात अनरीत की।
गोपियाँ वियोगिन बनेगी अब योगिन ना,
चाट जिन्हे लागी मनमोहन की प्रीत की॥
'श्रीधर' बरसाने बसोगे नही एको छन,
घर घर बाढ़ी यो वियोग व्यथा भीत की।
दिन में बटोही बाट चलत कही न कभी,
जेठ दुपहरी-सी जहाँ है रात शीत की॥[3]

---

१. 'नई दुनिया' (वही), पृ० ८।
२. साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री मे 'सुधा का विलाप'-शीर्षक कविता से।
३. 'रसिक-विनोदिनी' (माघ-फाल्गुन, स० १९९४ वि०), पृ० ४।

सकलनारायण शर्मा

आप आरा-नगर के निवासी सुप्रसिद्ध विद्वान् पं० सिद्धिनाथ पाण्डेय (प० गोकुल-दत्त शर्मा) के पुत्र थे। आपका जन्म स० १९२८ वि० (सन् १८७१ ई०) की पौष-कृष्णाष्टमी (गुरुवार) को हुआ था।[१] बाल्यावस्था में, अत्यन्त चचल स्वभाव के होने के कारण, आपका मन पढ़ने-लिखने में नही लगता था। लगभग सोलह वर्ष तक आपकी कुछ भी शिक्षा नही हुई। उसके बाद अपने घर की सस्कृत-पाठशाला के छात्रों के ससर्ग से आपने ज्योतिष एवं कर्मकाण्ड का किंचित् ज्ञान प्राप्त किया। तत्पश्चात् पं० पीताम्बर मिश्र, पं० गणपति मिश्र तथा महामहोपाध्याय पं० रघुनन्दन त्रिपाठी क्रमशः आपके शिक्षा-गुरु हुए। उनके शिष्यत्व में, चार वर्षों में ही आप 'काव्य-व्याकरण-तीर्थ' हो गये। आगे चलकर आप 'सांख्यतीर्थ' भी हुए। सांख्यतीर्थ-परीक्षा में उत्तीर्ण होने पर आपको ३०६ रुपये पुरस्कार-स्वरूप मिले थे। अपने व्याकरण-अध्ययन के 'परिष्कार' के लिए आप काशी भी गये, जहाँ पं० सगमलाल झा तथा पं० तात्या शास्त्री से आपने न्याय और 'परिष्कार' का अध्ययन किया।

आरम्भ में जीविका के लिए आपने पौरोहित्य-वृत्ति का आश्रय लिया था। किन्तु, बाद में अपने घर पर ही एक पाठशाला खोलकर आप विद्या-दान करने लगे। इसके पूर्व कुछ महीनों के लिए आरा जिला-स्कूल में आप हेडपण्डित के पद पर प्रतिष्ठित थे। प० गणपति शास्त्री का स्वर्गवास होने के बाद आप कुछ दिनों के लिए वर्णधर्मोपयोगिनी संस्कृत-पाठशाला के भी अवैतनिक प्रधानाध्यापक हुए थे। आगे चलकर आपने अपने प्रयास से आरा-नगर में संस्कृत-महाविद्यालय की स्थापना की। आपकी विद्वत्ता से प्रभावित होकर कलकत्ता-विश्वविद्यालय के तत्कालीन उप-कुलपति सर आशुतोष मुखर्जी ने सन् १९१४ ई० में आपकी नियुक्ति कलकत्ता के सस्कृत-कॉलेज में 'व्याख्याता' के पद पर कर ली। फिर, जब सर मुखर्जी के प्रयास से कलकत्ता-विश्वविद्यालय में एम्० ए० स्तर के पठन-पाठन के लिए हिन्दी स्वीकृत हुई, तब दरभगा-निवासी श्रीगगापति सिंह के साथ आप भी वहाँ हिन्दी-अध्यापन करने लगे। कलकत्ता में रहकर आपने 'हिन्दी-परिषद्' की स्थापना में प० ललिताप्रसाद सुकुल को अमूल्य सहयोग प्रदान किया। इसके पूर्व सन् १९०१ ई० में ही बाबू जयबहादुर तथा बाबू रामकृष्णदासजी की सहायता से आपने आरा में नागरी-प्रचारिणी सभा की स्थापना की थी, जिसके माध्यम से कई राज्यों में हिन्दी का प्रचार हुआ।

---

१. देखिए, 'बिहार-विभाकर' (वही, पृ० ३००), 'साप्ताहिक शाहाबाद' (सन् १९५५ ई०, पृ० ७-८), 'साहित्य' (वही, वर्ष २, अक ४, जनवरी, सन् १९५२ ई०, पृ० ५२ तथा वर्ष २, अक १, अप्रैल, सन् १९५२, ई०, पृ० ५१) तथा दिनाक ३१ मार्च, सन् १९५५ ई० को बाबू शिवनन्दन सहाय द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री। आपके परिचय-लेखन में 'हरिऔध-अभिनन्दन-ग्रन्थ' (वही, पृ० ५४१), 'जयन्ती-स्मारक-ग्रन्थ' (वही, पृ० ५४३), 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, पृ० १२३-२४) तथा 'बिहार की साहित्यिक-प्रगति' (वही, पृ० ९८-९९) से भी सहायता ली गई है।

आप एक आदर्श शिवभक्त थे। किन्तु, अन्य देवताओं के प्रति कभी भी आपने अनादर का भाव प्रदर्शित नहीं किया। एक बार भक्त श्रीरामरूपजी से आपने राजयोग की दीक्षा ली। किन्तु, कुछ कारणवश आपने उसकी साधना नहीं की। आप एक कुशल वक्ता और शास्त्रार्थ में पारंगत थे। वेदों में आपकी अपूर्व आस्था थी। अतः वैदिक मत के प्रचार के लिए आपने सम्पूर्ण संस्कृत-साहित्य, ईसाई और इस्लाम-धर्म-ग्रंथों का आलोड़न किया था।

आप एक सफल पत्रकार भी थे। सम्पादन-कला के प्रति आरम्भ से ही आपमें अभिरुचि थी। सन् १९०८ ई० में आप 'भारत-मित्र' के सम्पादक पं० रुद्रदत्त शर्मा के निकट कलकत्ता गये थे। किन्तु, कुछ कारणवश वहाँ टिक न सके। फिर, अवसर आने पर खड्गविलास प्रेस, पटना द्वारा प्रकाशित 'साहित्य-शिक्षा' से आप सम्बद्ध हुए। आपने लगभग सत्ताईस वर्षों तक बड़ी सफलता से उसका सम्पादन किया।

हिन्दी के प्रति आप अपने छात्र-जीवन से ही आकृष्ट थे। उसी समय आपके हृदय में हिन्दी के प्रति अनुराग प्रस्फुटित और पल्लवित हुआ। हिन्दी के ग्रन्थों और हिन्दी-पिंगलादि के अध्ययन में सुप्रसिद्ध बाबा सुमेरसिंह साहबजादे से आपको पर्याप्त सहायता मिली थी। उन्होंने अल्पकाल में ही, बड़ी सुगमता से आपको काव्य-रचना-सम्बन्धी बहुत-सारी बातें बतला दी थीं। इस दिशा में आपके लिए पं० अम्बिकादत्त व्यास भी सहायक सिद्ध हुए। आरम्भ से ही आप आशुकवि थे। एक बार डुमराँव-निवासी 'हरिजी' के पिता दीवान जयप्रकाशलालजी के नाम पर आपने हँसते हँसते पाँच सौ श्लोकों की रचना कर डाली थी, जो 'यशःप्रकाश' के नाम से पुस्तकाकार प्रकाशित हुए। आप कलकत्ता और प्रयाग के हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के अधिवेशनों में सम्मिलित हुए थे। बिहार-प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के छपरा में हुए चतुर्थ अधिवेशन के तो आप अध्यक्ष ही थे।[१] आपकी विशिष्ट विद्वत्ता से प्रभावित होकर सन् १९३५ ई० में अँगरेजी-सरकार की ओर से आप 'महामहोपाध्याय' की उपाधि से विभूषित हुए। बिहार की पण्डित-सभा ने आपको 'विद्या-भूषण' की उपाधि प्रदान की थी। फिर, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग ने आपको 'साहित्य-वाचस्पति' की और आरा-नागरी-प्रचारिणी सभा ने 'विद्या-वाचस्पति' की उपाधियाँ प्रदान की।

मूलरूप से आप संस्कृत के विद्वान् थे। किन्तु, संस्कृत में आपने केवल तीन-चार रचनाएँ ही प्रस्तुत की। मिश्रबन्धुओं ने आपको हिन्दी के उत्कृष्ट गद्य-लेखकों में माना है। हिन्दी में आपकी लगभग दस पुस्तकाकार रचनाएँ बतलाई जाती हैं। उनमें कुछ प्रमुख के नाम इस प्रकार हैं—(१) हिन्दी-सिद्धान्त-प्रकाश, (२) सृष्टि-तत्त्व, (३) प्रेमतत्त्व, (४) वीरबाला-निबन्धमाला, (५) आरा-पुरातत्त्व, (६) व्याकरण-तत्त्व, (७) जैनेन्द्र किशोर (जीवनी), (८) पेडलर साहब की (जीवनी), (९) राजरानी (उपन्यास)

१. आपका अध्यक्षीय भाषण 'बिहार-साहित्य' के नाम से पुस्तकाकार प्रकाशित है।

२. संस्कृत-रचनाओं के नाम—(१) सिद्धिनाथ-कुसुमाजलि, (२) तारकेश्वर यशोगानम् (३) यश:प्रकाश तथा (४) ब्रह्मचर्य और सच्चरित्रता पर एक एकाकी नाटक, जिसकी रचना आपने अस्सी वर्ष की आयु में की।

और (१०) अपराजिता। आप सं० २०१० वि० की भाद्रपद शुक्ला दशमी को ८१ वर्ष की आयु में परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

वैदिक गंगा आधिदैविक है। आधिभौतिक गंगा बायी साँसवाली 'ईडा' नाड़ी है। यह बात 'हठयोग-प्रदीपिका' में लिखी हुई है। सात्विक बुद्धि आध्यात्मिक गंगा है। विराट् रूप में 'आकाश' परमात्मा का मस्तक है। वहीं भूमण्डल की गंगा जल-परमाणु है। इसी अभिप्राय को पुराण में बतलाया है कि महादेव सिर पर गंगा को धारण करते है।

× × × ×

गंगा की सृष्टि प्रत्येक कल्प के आदि में होती है। वे पहले-पहल कभी नहीं हुई। इसी से नित्य वेद में उक्त गंगाजी की चर्चा है। भगीरथ जी ने अपने पितरों के उद्धार के लिए राहे बनवायी, जिसमें उनकी (गंगा की) धारा कपिलाश्रम तक पहुँच जाय। वे गंगाजी के प्रथम आविष्कारक नहीं। वेद-प्रेमी जानते है कि 'विष्णु' का अर्थ 'सूर्य' भी होता है। सूर्य-मंडल में विष्णु भगवान की पूजा अध्यास के द्वारा होती है। सूर्य की किरणों से वृष्टि के लिए जल-परमाणु आकाश में इकट्ठे होते है। उन्हीं से नदियों की उत्पत्ति होती है। गंगाजी सब भारतीय नदियों में प्रधान हैं। फिर हम उन्हे 'विष्णु-पदाब्ज-सम्भूता' क्यों न कहे ?[१]

(२)

मीमांसा दर्शन में लिखा है कि वेदों में इतिहास अथवा किसी देश अथवा किसी व्यक्ति का नाम नहीं है। उनके शब्दों के सामान्य व्यापक अर्थ का ग्रहण होता है—'परंश्रुति सामान्यमात्रम्'

---

१. 'गंगा' (मासिक, प्रवाह १, तरंग ७, मई, सन् १९३१ ई०; पृ० ६९७-९८) मे प्रकाशित 'वेद मे गंगा-गरिमा'-शीर्षक लेख से।

विद्वान् लक्ष्य और व्यंग्य अर्थ के द्वारा इतिहासादिक की झलक पाते हैं। हम भी उसी शैली के अनुसार वैदिक काल के बिहार का एक चित्र अङ्कित कर रहे है। वैदिक समय में बिहार दीन-दुखियों का आश्रय-स्थल था। यजुर्वेद कहता है कि मगध देश के लोग रोते-कलपते मनुष्यों की खोज खबर लें—'अतिक्रुष्टाय मागधम्'। यजुर्वेद।[१]

सत्यनारायण 'शरण'

आप शाहाबाद-जिला के 'अख्तियारपुर' नामक ग्राम के निवासी मुंशी शीतल-प्रसादजी के ज्येष्ठ पुत्र थे। आपका जन्म सं० १६२७ वि० (सन् १८७० ई०) के पौष मास की पूर्णिमा को हुआ था।[२] आप मुख्यतः अपने अनुज श्रीजगन्नाथजी (झुनकूबाबू) के साथ गोरखपुर-जिला के 'बाँसगाँव' की मुंसिफी में काम करते थे। खड़ीबोली और ब्रजभाषा के अतिरिक्त आपकी रचनाएँ भोजपुरी में भी मिलती है। आपकी कोई पुस्तकाकार रचना नही मिलती, केवल स्फुट रचनाएँ ही मिलती हैं।

उदाहरण

(१)

मथवा सुघिला मुख चुमिला बलइया ले ले,
बबुआ हमार रवाँ बड़का कहाइला।
ममिता हमार हवे रवाँ पर के ले सऽ,
हमहूँ इ बात सुनि सच हूँ पतिआइला।
शरन करत मनुहार ओ दुलार प्यार,
ध्यान बीच रवाँ के तऽ गोदी में बइठाइला।
आईं रवाँ आईं दरसाईं मुख हमरा के,
काहे रवाँ रूसल बानी एही जा ना आइला॥

---

१. 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही), पृ० ४७।

२. स्व० श्रीशिवनन्दन सहाय (अख्तियारपुर, शाहाबाद) द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

३. वही।

(२)

चंचला चमक चहुँ ओर चित्त चुभी चाह,
　　　　चातक चकोर चारु चमू चहुँ ओर हैं।
महमहे मंजुल महक मालतीन मंजु,
　　　　माते मकरन्द मधु लेत मन चोर हैं।
लहलही ललित लवंग ललितकान लुब्ध,
　　　　लेटे लाल ललना ललकि एक ठोर है।
कलित कदम्ब कीर करि-करि शोर उठे,
　　　　कूक उठी कोयल कुहुक उठे मोर है ॥[२]

(३)

सारी गुलवारी लगी मोतिन किनारी रति,
　　　　रंभा छबि हारी द्युति निंदत तमारी की।
भूषन सँवारी है गयंद गतिवारी होत,
　　　　छवि है न्यारी केश बेश लकवारी की।
अति सुकुमारी प्यारी छाम लंकवारी सो,
　　　　सिधारी गुन वारी जुरी गोल बनवारी की,
गारी देत ग्वारी किलकारी तारी दै दै कर,
　　　　मुरि मुसुक्याय मारी चोट पिचकारी की ॥[१]

१. 'समस्या-पूर्त्ति' (काशी, आषाढ़-शुक्ल १, गुरुवार, स० १९५४ वि०)।

२. वही (पटना, मार्च, सन् १८९७ ई०), पृ० २०।

सत्यनारायण सिंह 'वर्मा'

आप मुजफ्फरपुर-जिला के ब्रह्मपुर-खुटाही' (पारू) के निवासी श्रीमहाराज सिंहजी के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९५७ वि० (सन् १९०० ई०) की कार्त्तिक कृष्ण-नवमी (बुधवार) को हुआ था।[१] आपकी प्राथमिक शिक्षा घर पर ही हुई। सन् १९१५ ई० में आपका नाम मधुबनी नगर के 'वाट्सन स्कूल' में लिखवाया गया। वहाँ रहते हुए आपने अपने शिक्षक श्रीक्षेमधारी सिंह से कलात्मकता की शिक्षा ली। उनके सम्पर्क में रहकर आपने कला, कविता एवं सफल लेखन के बहुत-सारे गुण अर्जित किये। उन्ही की प्रेरणा से आप अपने विद्यालय की ओर से आयोजित वाद-विवाद-प्रतियोगिताओं में सम्मिलित होते रहे। कई बार ऐसी प्रतियोगिताओं में आप सर्वप्रथम हुए। आपमें काव्य-रचना की प्रवृत्ति आरम्भ से ही प्रखर थी। विद्यार्थी-जीवन से ही आपकी प्रसिद्धि एक कवि के रूप में होने लगी और आप सभा-समितियों और कीर्त्तन-मण्डलियों में बुलाये जाने लगे। इस कार्य में आपको मधुबनी के प्रसिद्ध वकील श्रीशुकदेवनारायणजी का यथेष्ट योगदान मिलता रहा। हरिकीर्त्तन के लिए नगर में आपकी बड़ी प्रतिष्ठा हुई।

सन् १९२१ ई० में महात्मा गांधी द्वारा असहयोग-आन्दोलन के छिड़ने पर आपने अपना विद्यार्थी-जीवन त्याग कर देश-सेवा के कार्य में सक्रिय भाग लिया। पुनः अपने अभिभावकों के आदेश से आपने प्रवेशिका (इण्ट्रेन्स)-परीक्षा पास की। आपके ही मन्त्रित्व में, मधुबनी में सबडिवीजनल कॉंगरेस-कमिटी की स्थापना हुई और उसी समय आपके सहयोग से वहाँ 'गांधी-विद्यालय' नामक एक संस्था का जन्म हुआ। आप उसके प्रधान पण्डित के पद पर प्रतिष्ठित हुए। कुछ दिनों बाद, आर्थिक स्थिति दुर्बल हो जाने के कारण आपने उक्त विद्यालय की नौकरी छोड़कर डिस्ट्रिक्ट-बोर्ड की नौकरी पकड़ ली और आप खराटी-स्टेट (दरभंगा) चले गये। वहाँ रहे कुछ ही दिन हुए थे कि आपकी बुलाहट पारू (दरभंगा) मिड्ल स्कूल से हुई। वहाँ की दशा अत्यन्त दयनीय थी। आपके वहाँ जाते ही उसका सुधार हो गया। तत्पश्चात् आप पुनः जी० एम० एच० ई० स्कूल, मधुबनी (दरभंगा) चले गये। वहीं से आपने हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग की 'विशारद' उपाधि-परीक्षा पास की। मधुबनी में आपने 'साहित्य-सदन' नामक एक प्रकाशन संस्था की नींव डाली। शिक्षकों और शुभचिन्तकों के सहयोग से वह संस्था भी कुछ ही दिनों में चमक उठी। 'साहित्य-सदन' के सम्यक् संचालन के लिए आपने अपने भाई के सहयोग से दर्जनों स्कूली पुस्तकें लिखी। आगे चलकर आपके अस्वस्थ हो जाने के कारण यह संस्था सदा के लिए बन्द हो गई।

शिक्षा के क्षेत्र में जहाँ आप एक कुशल शिक्षक रहे, वहीं आयुर्वेद के भी एक अच्छे ज्ञाता थे। आयुर्वेद के रहस्य को जानकर आपने उस जमाने में मलेरिया की एक

---

१. देखिए, 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही), पृ० ६३२। आपके परिचय-लेखन में उक्त सामग्री के अतिरिक्त 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, पृ० ६२३) तथा दिनांक १३-अक्टूबर, सन् १९५६ ई० को आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री से भी पर्याप्त सहायता ली गई है।

अभूतपूर्व दवा का निर्माण किया था, जिसकी प्रशंसा 'अखिलभारतीय वैद्य-सम्मेलन' ने आपको 'वैद्य-विभूषण' की उपाधि प्रदान कर की थी।

सार्वजनिक कार्यों के प्रति आप बड़े ही जागरूक रहे। मधुबनी में 'गोशाला', 'युवक-वाचनालय' आदि संस्थाएँ आपकी समाज-सेवा-प्रियता के उदाहरण हैं। आप मधुबनी-नगर के गण्यमान्य व्यक्तियों में गिने जाते हैं। साहित्य एवं साहित्यिकों का सम्मान आपकी कुल-परम्परा है। मधुबनी-नगर में बाहर से आगत सज्जनों को अभिनन्दित करने में आपने सदा योगदान किया है।

आपके द्वारा लिखित लगभग २० (बीस) पुस्तकों का उल्लेख है, जिनमें 'कल्याणकल्पद्रुम' के अतिरिक्त 'कीर्त्तन-भजनावली' आदि कई पुस्तकें मुद्रित एवं प्रकाशित हैं। आपके द्वारा रचित अन्य पुस्तकों के नाम हैं— १. 'कविता-संग्रह', २. 'राष्ट्रीय मुरली', ३. 'राष्ट्र का हुंकार', ४ 'पद्य-शब्दकोश', ५. 'जयहिन्द', ६. स्वागत-पुष्पाञ्जलि', ७. 'राष्ट्रभाषा कौन हो?', ८. विवरण-चन्द्रिका', ६ 'छन्द-प्रभा', १०. 'प्रबन्ध-प्रभाकर', ११. 'निबन्ध-सुधाकर', १२. 'प्रचलित हिन्दी-मुहावरे और कहावतें', १३. 'तुलसी-तरंग', १४. 'गो-साहित्य' (भाग १-२), १५. 'हिन्दी-भगवद्गीता', १६. 'अलंकार-गुटका', १७. 'गोस्वामी तुलसीदास और उनकी काव्य-कला' आदि।

उदाहरण

(१)

यह राष्ट्र-ध्वजा-धन प्यारा, सब कुछ बलिदान करेंगे।
झंडा है प्राण हमारा
है प्राणों से भी प्यारा
तन-मन-धन इस पै वारा, सब कुछ कुर्बान करेंगे॥
यह राष्ट्र०॥
शूली पर उछल चढ़ेंगे
बन्धन से नही डरेंगे
सब कुछ सानन्द सहेंगे, पर झंडा नहीं तजेंगे॥
यह राष्ट्र०॥
आओ झंडा फहरा दें
'वर्मा' रिपु को थहरा दें
सत्याग्रह समर दिखा दें, पर हिंसा नहीं करेंगे।
यह राष्ट्र-ध्वजा-धन मेरा, सब कुछ बलिदान करेंगे॥[१]

---

१. आपके द्वारा प्रेषित सामग्री से।

(२)

पददलित हुई मानवता को, जिसने हो व्यग्र उठाया है,
उत्पीड़ित आत्मा में जिसने, बल-पावक सुलगाया है,
सुप्त उच्च भावों को जिसने, जनता-बीच जगाया है,
निःस्वार्थ सेवा का जिसने, सुन्दर मन्त्र सिखाया है,
कहो कौन भारत-माता का, जीवन नयन सितारा है,
शान्ति-दूत वा क्रान्ति-पुजारी, अखिल विश्व का प्यारा है ।।
बन्दूकें-बम-टैंक-मशीनें, तोपें दगतीं धमक रहीं,
प्रलयंकर है दृश्य भयंकर, लोथे लुघरी जही तहीं,
कवच-अहिंसा सत्य-शस्त्र से, जिसने हमें बढ़ाया है,
देश-प्रेम-बलिदान-त्याग का, जिसने पाठ पढाया है,
है वह कौन राष्ट्र का जीवन, दीन-दरिद्र दुलारा है,
अनुरागी वा बड़ा विरागी, अखिल विश्व का प्यारा है ।।
है विशुद्ध जो पूर्ण बुद्ध है, अर्द्ध नग्न है संन्यासी,
योग-युक्त है शोक-मुक्त है, शुद्ध ब्रह्म है अविनाशी,
जगत दास जो दास जगत का, कर्मठ है निष्कामी है,
हिन्द-हृदय-सम्राट् लाड़ला, बिना छत्र का स्वामी है ।।[१]

(३)

भाद्रमास बीत चला। पावस पुजेरी की पूजा भी समाप्त हुई। घनघटा घंटा भी बजना बन्द हुआ। दामिनी-दीपक की आरती बुझ गई। इन्द्रधनुष की सप्तरंगी माला भी दिखाई नहीं पड़ती। अमृत-फल रसाल का भोग-राग भी लग चुका। भला अब भी भगवती शरत् प्रसन्न न हों? आश्विन आया। भगवती शरत् भी आ धमकी।

प्रकृति की सखी के शुभागमन की सूचना मिली। मारे आनन्द के वह फूल उठी। बन-ठनकर तैयार हुई। राज्य की सजावट होने लगी।

---

१. आपके द्वारा प्रेषित सामग्री से।

अगस्त नीच-कीच को मार भगाया। पथ परिष्कृत हुआ। सरिता-वनिता को सूचना मिली। उसकी सनक शान्त हुई। उसने मलिन वसन उतार फेंका। प्रोज्ज्वल पट धारण किया। कुश-कास-कुसुम की शुभ्रमाला गूँथी। मन्द-गयन्द गति से मिलने चली। साथ में सहेलियाँ सफरियाँ अठखेलियाँ कर रही थी। कल-कल संगीत हो रहा था। तरंगिणी तट पर श्यामा सुर मिला रही थी। सारिका वंशी बजा रही थी। उधर सरोवर ने समाचार सुना। उसने झटपट विमल वस्त्र धारण किया। प्रफुल्ल पंकजों की माला गूँथी। मतवाले मधुकरों की मंडली इकट्ठी थी।[1]

साधुशरण

आप सारन-जिला के 'खजुहट्टी' (दिघवा-दुबौली) नामक ग्राम के निवासी श्रीमुंशी-रघुनाथ प्रसाद जी के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९५७ वि० (सन् १९०० ई०) की आषाढ़ शुक्ल-द्वितीया (२९ जून, शुक्रवार) को हुआ था।[2] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। तदनन्तर आपने प्रवेशिका (इण्ट्रेन्स) तक की शिक्षा पाई। आपने सं० १९८१ वि० से हिन्दी में लिखना प्रारम्भ किया। आपकी रचनाएँ तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओ में प्रकाशित होती रही हैं। आप मुख्य रूप से कविताएँ और कहानियाँ लिखा करते हैं। आपकी रचनाएँ 'वीणा', 'माधुरी', 'सुधा', 'सरस्वती', 'त्यागभूमि', 'विशाल भारत', 'आर्य-महिला', 'हिमालय', 'भविष्य', 'कर्मभूमि' आदि पत्रिकाओं में यथावसर प्रकाशित होती रही हैं।[3] आपके द्वारा लिखित 'प्रेम-पुष्प' नामक एक निबन्ध-संग्रह सं० १९८१ वि० में प्रकाशित हुआ था। इसके अतिरिक्त आपने और भी दर्जनों पुस्तकें लिखीं। इनमें (१) 'जीवन', (२) 'कसक', (३) 'भूलभुलैया' और (४) 'दीपक' नामक कहानी-संग्रह प्रकाशित भी हो चुके है।[4] 'मालिन' नामक आपका एक उपन्यास भी प्रकाश में आ चुका है।[5] इनके अतिरिक्त 'मानव-मनोविज्ञान' नामक एक

---

१. आपके द्वारा प्रेषित सामग्री से।

२. आपके द्वारा दिनाक २५ दिसम्बर, सन् १९५५ ई०, को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

३. प्रकाशक—हिन्दी-पुस्तक-एजेन्सी, कलकत्ता। प्रकाशन-काल—सं० १९८१ वि०।

४. इन संग्रहों के प्रकाशक आप स्वय थे।

५. यह हिन्दी-प्रचारक पुस्तकालय, काशी से सन् १९५२ ई० मे प्रकाशित हुआ था।

पुस्तक आपने हजार पृष्ठों की लिखी थी, जो अद्यावधि प्रकाश में नहीं आ सकी है। (१) स्वर्ग, (२) अश्रुकण', (३) अकिंचन, (४) रैनबसेरा, (५) 'जादूगर-नर्त्तकी' तथा (६) 'वनदेवी' नामक छह सामाजिक उपन्यास भी आपने लिखे, जो आजतक प्रकाशित नहीं हो सके हैं। आपके द्वारा लिखित 'पृथ्वीराज' नामक एक नाटक भी प्रकाश में आने की अपेक्षा रखता है। सम्प्रति, आप अपने गाँव में रहकर ही साहित्य-साधना-रत हैं। आपके द्वारा लिखित रचनाओं के उदाहरण हमें नहीं प्राप्त हो सके।

साँवलियाजी

आप छपरा-निवासी गायनाचार्य पं० कुञ्जविहारीजी के सुपुत्र थे। आपका जन्म स० १९२५ वि० सन् १८६८ ई० की कार्त्तिक सुदी-षष्ठी (बुधवार) को हुआ था।[१] आपकी गणना वैष्णव कृष्ण-भक्तों में होती है। आपके दीक्षा गुरु थे श्रीराधालालजी गोस्वामी। आपका व्यक्तित्व बड़ा ही प्रभावशाली एवं आकर्षक था। आप श्यामवर्ण, लम्बे और स्वस्थ थे। बगलबन्दी और साफा पहना करते थे। अपने पिता की तरह आप एक प्रसिद्ध संगीताचार्य भी थे। चैतन्य-मंदिर (गायघाट, पटना सिटी) के प्रमुख गायकों में आप भी एक थे। पटना सिटी के दीवान मुहल्ले के श्रीभागवत नारायण सिंहजी के यहाँ भी आपके भजन-गान के आयोजन अक्सर हुआ करते थे। आपके द्वारा रचित कृष्ण-भक्ति-सम्बन्धी अनेक पद मिलते हैं। आप लगभग साठ वर्ष की अवस्था में परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

झुलन चलो श्रीराधा महरानी।
जमुना तीर सुमन बहु फूले, वन, शोभा सरसानी।
समय सुहावन अति मनभावन, पावस ऋतु मनमानी।
घन घमण्ड चहु दिस सों छाए, रिमि झिमि बरसत पानी।
चलो वेगि कहि मानि हमारी, समय सुहावन जानी।
करि सोरह सिंगार विविध विध, पहिर वसन रँगधानी।
ब्रज जुबतिन में नागरि आगरि, सब सुखमा की खानी।
सामलिया प्रभु प्राण जीवन धन, त्रिभुवन की ठकुरानी।[२]

---

१. श्रीकृष्णकुमार गोस्वामी (गायघाट, पटना सिटी) द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

२. श्रीकृष्णकुमार गोस्वामी (वही) से प्राप्त।

(२)

हिंडोरा पड़ा बाग में आला, झूलें नन्द के लाला ना।
वाम भाग वृषभानु किशोरी, सँग ब्रजबाला ना।
उमड़ि उमडि घन चहुँ दिस छाये, बुँद बरमाला ना।
तड़पि तड़पि छिन छिन में चपला, चहुँ चमकाला ना।
गावत राग मलार सखि ललिता, धुनि आला ना।
बाजत बीन रवाव मुरज धुनि, होत निराला ना।
गावत सावन अति मनभावन, मदन भुपाला ना।
साँवलिया छवि निरखि मगन, देवन हरखाला ना।[१]

साँवलियाविहारीलाल वर्मा

आप छपरा-नगर के निवासी श्रीमथुराप्रसादजी के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९५३ वि० की ज्येष्ठ शुक्ल-अष्टमी (१८ जून, सन् १८९६ ई०) को हुआ था।[२] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा छपरा, मोतीहारी और मुजफ्फरपुर के जिला स्कूलों में हुई। सन् १९०५ ई० में आप छपरा जिला स्कूल में प्रविष्ट हुए। उस समय हिन्दी पढनेवाले छात्रों की सख्या अत्यल्प थी। सन् १९१४ ई० में आपने मुजफ्फरपुर जिला-स्कूल से प्रवेशिका (इण्ट्रेन्स)-परीक्षा पास की। तदनन्तर आप वहीं के जी० बी० बी० कॉलेज में अध्ययनार्थ आये। वहाँ से आपने आइ० ए० की परीक्षा पास की। वहाँ पढ़ते समय आपपर इतिहास के तत्कालीन प्राध्यापक आचार्य कृपलानीजी की कृपा सदैव रही। उन्होंने आपके विषयानुराग से प्रसन्न होकर आपको सदा स्नेह-दान दिया। सन् १९१८ ई० में आपने पटना कॉलेज से बी० ए० की परीक्षा और सन् १९२० ई० में अर्थशास्त्र लेकर एम्० ए० की परीक्षा पास की। एम्० ए० परीक्षा में, विश्वविद्यालय-भर में आपका स्थान सर्वोच्च रहा।[३] उसके बाद सन् १९२१ ई० से सन् १९२३ ई० तक आप पटना-

---

१. श्रीकृष्णकुमार गोस्वामी (वही) से प्राप्त।

२. देखिए, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद' का 'उदघाटन-समारोह-स्मारक', पृ० ६।

३. आपके प्रस्तुत परिचय-लेखन मे 'श्रीसाँवलियाविहारीलाल वर्मा तथा प्राचीन साहित्य मे श्रीराम एव वैदिक साहित्य में सीता' (श्रीपूर्णेन्दु अनुमण्डलीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, सीतामढ़ी, सन् १९६६ ई०, पृ० २), 'बिहार-अब्दकोश' (वही, पृ० २५१), 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ६७२ घ), 'मिश्रबन्धु-विनोद; (वही, पृ० ५७६), 'हिन्दीसेवी-ससार' (वही, पृ० ३१७) आदि पुस्तक-पुस्तिकाओ से भी सहायता ली गई है।

विश्वविद्यालय के अर्थशास्त्र-विभाग में प्राध्यापक-पद को अलंकृत करते रहे। तत्पश्चात् कानून की अन्तिम परीक्षा पास कर विशेष परिस्थितिवश आपको कॉलेज के प्राध्यापक-पद से त्याग-पत्र देना पड़ा। यद्यपि पटना-कॉलेज के तत्कालीन प्राचार्य श्री एच्० ए० हौर्न ने इसके पूर्व आपको उच्च शिक्षा के लिए इंगलैण्ड भेजने की योजना बना रखी थी, तथापि आपके द्वारा किये गये इस पद त्याग से सारे कार्यक्रम ज्यों-के-त्यों रह गये। आपने देशभक्ति से प्रेरित होकर नौकरी छोड़कर वकालत करने का निश्चय किया। सन् १९२३ ई० में आपने छपरा नगर में वकालत शुरू की।

सन् १९२४ ई० मे आपने राजनीति में प्रवेश किया। उस समय से सन् १९६२ ई० तक आप अखिलभारतीय कॉंगरेस के कर्मठ सदस्य रहे। सन् १९३० ई० में गांधीजी की गिरफ्तारी के बाद आपने वकालत छोड़ दी और कॉंगरेस के संगठन में सक्रिय होकर भाग लिया। गाधी-इर्विन-समझौते के बाद पुन: सन् १९३१ ई० में आपने सीतामढ़ी (मुजफ्फरपुर) में वकालत शुरू की, जहाँ आज भी आप कार्यरत हैं।

आप अनेक संस्थाओ के सभापति, संस्थापक तथा सदस्य हैं। आप बिहार-विधान-सभा के भी बहुत दिनों तक सदस्य थे। आज भी आप बिहार-राज्य-विधि-आयोग के सदस्य हैं। आप प्रान्तीय पुस्तकालय-संघ के सभापति-पद को भी अलंकृत कर चुके हैं। आध्यात्मिक संस्थाओं से भी आपका अटूट सम्बन्ध रहा है। सम्प्रति, आप 'बिहार प्रादेशिक थियोसोफिकल फेडरेशन' उप-सभापति हैं। आप एक अच्छे देशाटन-प्रेमी, अध्ययनशील, संस्थाओं के निर्माता[१], सभा-सम्मेलनानुरागी और कठोर परिश्रमी व्यक्ति है।

बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की स्थापना होने पर उसकी ओर से आप अखिल-भारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की स्थायी समिति के सदस्य निर्वाचित हुए और सन् १९६२ ई० के सम्मेलन-अधिनियम के स्वीकृत होने तक आपकी सदस्यता बनी रही। सन् १९२७ ई० में बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का सोनपुर (छपरा) में जो विशेषाधिवेशन हुआ था, उसका आपने ही सभापतित्व किया था।[१] बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् की स्थायी समिति के सदस्यों में भी आपका विशिष्ट स्थान रहा।

हिन्दी-भाषा एवं साहित्य के प्रति आपकी अपार श्रद्धा है। दर्शन, आध्यात्म और भूगोल आपके प्रिय विषय रहे हैं। आपने हिन्दी में सन् १९१५ ई० से ही लिखना प्रारम्भ किया था। सन् १९२५-२६ ई० में आपकी प्रथम पुस्तक (१) 'यूरोपीय महा-भारत'[२] (पॉच भागों में) या 'द्वितीय महाभारत' है। इसके अतिरिक्त (२) 'गद्य-चन्द्रिका', (३) 'गद्य-चन्द्रोदय', (४) 'लोक-सेवक महेन्द्रप्रसाद', (५) 'बदरी-केदार-यात्रा', (६) 'इस्लाम की झाँकी', (७) 'विश्वधर्म-दर्शन',[३] (८) 'अन्तर्राष्ट्रीय विधि',[४]

---

१. छपरा-नगर मे आपने 'नवयुवक-पुस्तकालय', 'वर्मा पुस्तकालय', 'नाट्य-परिषद', 'साहित्य-परिषद', 'कन्या-विद्यालय' आदि अनेक सस्थाओ का सृजन किया था। इसी प्रकार, आपके ही प्रयास से मुजफ्फरपुर मे भी एक 'मण्डल-पुस्तकालय' की स्थापना हुई थी।

२. बर्मन प्रेस, मुजफ्फरपुर से प्रकाशित।

३. बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद, पटना द्वारा सन् १९५३ ई० मे प्रकाशित।

४. भारत-सरकार द्वारा प्रकाशित।

(६) दक्षिण-भारत की यात्रा' तथा (१०) 'प्रतीक-पूजा का प्रारम्भ और विकास'[१] नामक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। आपके द्वारा भोजपुरी में लिखित (१०) 'रामेश्वर-यात्रा' नामक पुस्तक भी प्रकाशित है।[२] इन दिनों आप दर्शन एवं विधि-सम्बन्धी ग्रन्थों के अध्ययन एवं प्रणयन में दत्तचित्त है।

उदाहरण

(१)

सुतरां, गीता में कर्म, भक्ति और ज्ञान का समन्वय करके दिखला दिया गया है कि योग-निष्ठा द्वारा स्थितप्रज्ञ को जो अवस्था प्राप्त होती है और ज्ञान-निष्ठा द्वारा जीवन्मुक्त (गुणातीत) को जो अवस्था प्राप्त होती है, उनमें भेद नही है। दोनों में किसी भी अवस्था को प्राप्त करने पर साधक के लिए कोई कर्म अथवा अकर्म नही रह जाता; किन्तु वे 'लोक-संग्रह' के लिए कर्म करते हैं; वे अपने आचरण से जिसे प्रमाण बनाते है, उसका अनुसरण करते हैं। भगवान् कहते हैं—हे पार्थ! मुझे तीन लोकों में कुछ भी करने को नहीं है, कोई पाने योग्य वस्तु न पाई हो—ऐसा भी नहीं है, तब भी मैं कर्म में लगा रहता हूँ। यदि मै सावधान हो कर्मो में न लगूँ तो बड़ी हानि होगी; क्योंकि मनुष्य सब प्रकार से मेरे ही मार्ग का अनुसरण करते है। हे भारत! कर्म में आसक्त हुए अज्ञानी जन जिस प्रकार कर्म करते हैं, आसक्तिरहित पुरुष भी लोकसंग्रह के लिए उसी प्रकार कर्म करे। अतएव परमात्मा के स्वरूप में अटल होकर स्थित-प्रज्ञ अथवा

---

१. बिहार-हिन्दी-ग्रन्थ अकादमी, पटना-३ द्वारा सन् १९७४ ई० मे प्रकाशित।

२. इनके अतिरिक्त आपके द्वारा लिखित कुछ पुस्तके अभीतक प्रकाश मे नहीं आ सकी हैं। तेरह वर्षों की कठिन साधना के बाद 'गीता पर भाष्य' नामक एक पुस्तक आपने लिखी है, जिसमे 'गता' को सर्वदेशीय ग्रन्थ बतलाते हुए शंकर से राधाकृष्णन तक के मत-मतान्तरों का समावेश है। इस प्रकार, गीता के समानान्तर भाव के साहित्य का संकलन करते हुए, लेखक ने सम्पूर्ण भारतीय वाङ्मय का आलोड़न कर डाला है। आपकी एक अन्य पुस्तक 'भारत के मन्दिर और तीर्थ' भी प्रकाशन के लिए प्रस्तुत है। भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति स्व० डॉ० राजेन्द्रप्रसादजी के अनुरोध से आपने 'प्राइवेट इण्टरनेशनल लॉ'. पर भी एक पुस्तक का लेखन-कार्य प्रारम्भ किया है।

गुणातीत को चाहिए कि समस्त विहित कर्मो को भलीभाँति करता हुआ अज्ञानी जनों के सम्मुख कर्म का आदर्श उपस्थित करें ।[१]

(२)

पञ्चमकार तंत्रशास्त्र के प्राण है। परन्तु इनके यथार्थ सांकेतिक अर्थ के अज्ञान से तांत्रिकों के विषय में नितान्त भ्रान्त धारणाएँ फैली हुई हैं। इनका रहस्य नितान्त गूढ़ है। जो इनके बाह्य वस्तुओं का निर्देश समझते है वे वास्तविकता से बहुत दूर हैं। ये आभ्यन्तरिक अनुष्ठान के प्रतीक हैं।

मद्य बाहरी शराब नहीं है, प्रत्युत ब्रह्मरन्ध्र में स्थित सहस्र-दल-कमल से क्षरित होनेवाली सुधा है। इसी को पीनेवाला व्यक्ति मद्यप कहलाता है। इसी प्रकार, समस्त पाँचों मकारों का वास्तविक अर्थ दूसरा ही है। परन्तु तामसिक वामाचारियों ने इन प्रतीकों की ओर कभी ध्यान नही दिया, प्रत्युत वे बाहरी भौतिक पदार्थो के सेवन को ही अपना लक्ष्य मानते है। ऐसे ही लोगों ने चक्रपूजा को अनाचार का केन्द्र बना रखा है, जिसके कारण तंत्र के प्रति जनता में इतनी अनास्था, अश्रद्धा तथा घृणा के भाव भरे हुए हैं।[२]

(३)

भारत की अधोगति के अनेक कारणों में से एक कारण इस देश की वर्त्तमान सामाजिक अवस्था भी है। सामाजिक कुरीतियों से हमारी जातीय शक्ति का बिलकुल ह्रास हो गया है। इसका परिणाम यह हुआ कि हमारे लौकिक और पारमार्थिक आदर्श अब केवल हमारे इतिहास और शास्त्रों के पन्ने में ही मिलते है—हमारे वर्त्तमान जीवन में कम।

---

१. 'विश्वधर्म-दर्शन' (साँवलियाविहारीलाल वर्मा, सन् १९५३ ई०), पृ० १०२।

२. वही, पृ० २१६।

जहाँ शास्त्रों में ब्रह्मचर्य की महिमा गाई गई है, वहाँ आजकल शारदा-ऐक्ट के सदृश लाभदायक कानून का भी शास्त्रों की दुहाई देकर विरोध किया जाता है। जिस देश में गार्गी और मैत्रेयी ऐसी विदुषी नारियाँ थी, वहीं की देवियाँ शिक्षा-विहीन रक्खी जाती है और कन्याओं की शिक्षा के लिए प्रयत्न करना पड़ता है। जहाँ पर आचारण की पवित्रता प्रथम श्रेणी का गुण समझा जाता था, वहाँ आचारवान् सीधे-साधे व्यक्ति आजकल के शिक्षित-समुदाय द्वारा बुद्धू और बेवकूफ समझे जाते है।'[१]

(४)

वैदिक सभ्यता के उषःकाल में समाज आज की तरह जटिल नहीं था। जीवन आडम्बरहीन होने के कारण विशेष रूप से अन्न और वस्त्र में ही केन्द्रित था। इन दोनों वस्तुओं का साधन कृषि में है। आज के जटिल आडम्बरपूर्ण समाज में भी अन्न और वस्त्र का स्थान सर्वोपरि है, मनुष्य-मात्र को अन्य पदार्थ मिले या न मिले, उसके लिए सबसे प्रथम क्षुधानिवारणार्थ अन्न और तत्पश्चात् लज्जा को ढकने एवं सरदी से बचने के लिए वस्त्र की आवश्यकता होती है। कृषि में इन दोनों की प्राप्ति है। आज हमारे देश में अन्न की कमी है और इसी कारण भारत के स्वतन्त्र हो जाने पर भी क्षुधा से क्लान्त साधारण जनता स्वतन्त्रता के लाभ को अनुभव नहीं करती। विदेश मे भी हमारी प्रतिष्ठा इसी कारण घट गई है। उनके सामने आज के भारत का चित्र एक भुक्खड़ के रूप में प्रदर्शित हो रहा है। सैकड़ों वर्षों से गुलामी रहते आने के कारण आज पहले नौकरी-पेशावालों की, तब सेठ-साहूकारों की समाज में प्रतिष्ठा अधिक हो रही है और हम अपनी उस गौरवपूर्ण कहावत को भूल-सा

१. 'लोक-सेवक महेन्द्र प्रसाद' (साँवलियाविहारीलाल वर्मा, सन् १९३८ ई०), पृ० ५२-५३।

गये हैं, जो वैदिक काल से प्रतिष्ठित है—'उत्तम खेती मध्यम बान, निकृष्ट चाकरी, भीख निदान ।'[१]

सियाशरण 'सिया'

आप मुँगेर-जिला के 'सुरानन्दपुर' (बाघी-बेगूसराय) के निवासी श्रीबनारसी प्रसाद के सुपुत्र हैं । आपका जन्म सं० १९५३ वि० (सन् १८९६ ई०) की फाल्गुन शुक्ल-नवमी को हुआ था ।[२] आपकी प्राथमिक शिक्षा घर पर ही हुई । तदनन्तर आपका नाम सी० एम्० एस्० स्कूल, भागलपुर में लिखाया गया । इस विद्यालय से सन् १९१६ ई० में आपने प्रवेशिका (इण्ट्रेन्स)-परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास की । इसके बाद आपका प्रवेश टी० एन्० जुबली कॉलेज, भागलपुर में हुआ । सन् १९१८ ई० में आपने वहाँ से आइ० ए० की परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास की । इसी कॉलेज से सन् १९२० ई० में आपने बी० ए० की परीक्षा पास की । बी० ए० तक अध्ययन कर लेने के बाद आपने सन् १९२१ ई० में, कानून की पढ़ाई के लिए पटना लॉ-कॉलेज में नाम लिखाया और सन् १९२३ ई० में उक्त कॉलेज से बी० एल्० की परीक्षा पास की । सन् १९२३ ई० में आपने मुँगेर-न्यायालय में वकालत शुरू की । इस पेशे में रहते हुए आपने साहित्य की भरपूर सेवा की । सन् १९१४ ई० से ही आपकी साहित्यिक कृतियाँ प्रकाश में आने लगी थीं । विद्यार्थी-जीवन में ही आपको साहित्य-साधना के प्रति आकर्षण हो चुका था । कविता, कहानियाँ एवं गम्भीर निबन्ध लिखने में आप पारंगत थे । आपके द्वारा लिखित कविताएँ प्रायः तत्कालीन सभी प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ करती थीं । 'श्रीकमला', 'स्वतन्त्र', 'प्रभाकर' आदि पत्रिकाएँ आपके गीत एवं काव्य-रचनाएँ प्रकाशित कर गौरवान्वित थीं । आप ब्रजभाषा और खड़ी-बोली—दोनों भाषाओं में रचनाएँ करते थे । आपकी दो पुस्तकें, 'प्रेमाञ्जलि' और 'प्रेम-पुष्प' सन् १९३१—३३ ई० में प्रकाशित हुई थीं ।[३] उपर्युक्त पुस्तकों के अतिरिक्त आपने जीवनी और राजनीति-सम्बन्धी कई पुस्तकें लिखी थीं । आपके द्वारा लिखित ये पुस्तकें अद्यावधि अप्रकाशित हैं—(१) 'राष्ट्रीय संगीत', (२) 'लोरियाँ', (३) 'पद्य तथा गीति-संग्रह', (४) 'नेपोलियन बोनापार्ट' (जीवनी), (५) 'फ्रांस की राज्यक्रान्ति', (६) 'सुरभि' (कहानी-संग्रह) और (७) 'वाल्मीकि और तुलसी' । सम्प्रति, आप लाल दरवाजा, मुँगेर में जीवन-यापन कर रहे हैं ।

---

१. परिषद्-पत्रिका' (वर्ष १०, अंक १, अप्रैल, सन् १९७० ई०), पृ० २३ ।

२. आपके द्वारा २३ सितम्बर, १९५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में प्रकाशित सामग्री के अनुसार ।

३. तारा प्रिंटिंग वर्क्स, मुँगेर से मुद्रित और प्रकाशित ।

उदाहरण

(१)

गोस्वामी तुलसीदास का जन्म ऐसे समय में हुआ था, जिस समय भारतवर्ष में वैष्णव धर्म का प्रचुर प्रचार था तथा भक्ति की सरिता चारों ओर उमड रही थी। वैष्णव-सम्प्रदाय से भी कभी-कभी मुठभेड़ हो जाती थी। ऐसे समय जब गोस्वामी तुलसीदास रामचरितमानस की रचना करने को बैठे तो उनकी दृष्टि के सामने अन्यान्य विषयो के अतिरिक्त दो विषय प्रमुख रूप से विद्यमान थे। एक तो वैष्णव और शैव सम्प्रदाय रूपी गंगा और यमुना को अपने रामचरितमानस रूपी प्रयागराज में संगम कराना, दूसरा यह प्रतिपादन करना कि श्रीरामचन्द्रजी पूर्ण ब्रह्म है, विष्णु के अवतार हैं। इसीलिए रामचरितमानस मे तुलसीदासजी हमारे सामने 'प्रभु सोइ राम कि अपर काउ, जाहि जपत त्रिपुरारि···।' 'राम सो अवध नृपति सुत सोई, की अज अगुन अलख गति कोई।' इत्यादि प्रश्न रखकर और पुनः रामजन्म के हेतु को बतलाते हुए बार-बार अपने पाठक को यह कहकर कि—

'भगत बछल प्रभु कृपानिधाना, विस्वास पगटे भगवाना'
'विप्र धेनु सुर संतहित लीन्ह मनुज अवतार'
'निज इच्छा निर्मित तनु माया गुण गो पार'
'श्रुति संत पालक राम तुम्ह, जगदीश माया जानकी'

इत्यादि प्रतिपादन करते हैं कि श्री राम भगवान् विष्णु के अवतार है।[१]

(२)

मानवता के घर की रानी, होय, बनी है पशुता आज,
जल में, थल में उच्च व्योम मे, चमक रहा है उसका ताज।

---

१. आपके द्वारा प्रेषित एव साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री से।

बज्र विनिन्दित अस्त्रशस्त्र को, करता भेंट जिसे विज्ञान,
प्रकृति होड़ में उससे हारी, दानवता की विजय महान् ।
कभी चढ़ी वह टैंकों पर है, कभी हाइ बम्बर बनकर,
कभी यू - वोटों के स्वरूप में, या इकोस्टिक माइन बनकर ।
कभी तोप के गोले बनकर, कभी मैग्नेटिक माइन बन,
उगल रही अंगारे प्रतिपल, हाय ! कभी नग्न-नर्त्तन ।
मानवता के बने बनाये, स्वर्ग हुए सारे विध्वस्त,
आज बेबसी और बेकसी, में सारा जग है संत्रस्त ।
मानवता के शोणित पी - पी दानवता हुंकार रही,
और इधर लाखों नर-नारी, हाय ! हाय ! चित्कार रही ।
बसे बसाये कितनों के थे, जो अब सोने का संसार,
क्षण में क्रोध-पात्र बन बैठे, कैसा भीषण अत्याचार ।
कबतक हाय रहेगा पशुते ! तेरा यह अति निष्ठुर काण्ड,
फूटेगा, हाँ फूटेगा ही तेरे पापों का यह भाण्ड ।[१]

(३)

हौ दधि बेचन काज गई, उत औचक आय गये बनवारी,
देखत वा छवि का बरनौ, सुधहू न रही बुधहू न हमारी ।
श्याम सुश्याम लखौ सिगरे, ससि सूर लखे दृग स्याम हमारी,
मैं सखि ! ढूँढू कहाँ हरि को, जहँ देखु 'सिया' तहँ घोर अँधारी ।
को सुनिके मुरली हरि के सखि ! होय गयो नहिं प्रेम पगी सी,
को लखि मोहन मूरति को नहि भूलि गयो गृह-नेह यती सी ।
को पड़ि बंक विलोचनि में हरि की न भयो सखि ! चित्र लिखी सी,
जो लखिहैं हरि बाँसि बजावत, तौन 'सिया' कह कौन गती सी ।[२]

---

१. आपके द्वारा प्रेषित एवं साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री से ।
२. 'प्रेमाञ्जलि' (सियाशरणप्रसाद 'सिया'; वर्ष १२, अप्रैल, १९३१ ई०), पृष्ठ ४-५ ।

(४)

प्रभु तुम दीनन के हितकारी ।
जब-जब दीन पुकार्‌यो तोको, ताही तुरत उबारी ॥
टेर सुनत गजराज उबार्‌यो, पाव पयादह धाई ।
दीन द्रौपदी रोय पुकार्‌यो, चीर बढायौ आई ॥
दीन विभीषण तुव पँह आयो, तेहि लंकेश बनाई ।
दीन सुदामा तन्डुल लायौ, ताको उर लिपटाई ॥
जूठो बेर खिलाई शवरी, तेहि निज धाम पठाई ॥
दीन विदुर के शाक सराह्यौ, कौरव-नौत ठुकराई ।
दासी कुबरी अतिशय दीना, ताको हिया लगाई ।
दीन 'सिया' की टेर सुनो अब, होओ तुरत सहाई ॥'[1]

✶

सियाशरण मधुकरिया 'प्रेमअली'

आपका जन्म गया-जिला के 'सूपी' ग्राम में आश्विन-कृष्ण ३० (भौमवार), सं० १६१६ वि० (सन् १८६२ ई०) को हुआ था ।[2] लगभग ६ वर्ष की अवस्था में अर्थात् सं० १६२७ वि० के वैशाख-शुक्ल पक्ष में आपका यज्ञोपवीत-संस्कार हुआ । उसके दो वर्ष बाद, अपने पूज्य पिताजी का शरीरान्त हो जाने के उपरान्त आपने जगन्नाथपुरी की यात्रा की । वहाँ संतों के सत्संग से आपके मन में भगवत्सेवा की वृत्ति जगी और अपने घर वापस आकर, एक ठाकुर द्वारा एक मंदिर की स्थापना कर उसीमें आप नियमित रूप से 'भक्तमाल' की कथा कहने लगे । सं० १६३१ वि० की रामविवाह-पंचमी के दिन आपका विवाह हुआ । विवाह के आठ वर्ष बाद सं० १६३६ वि० की रामनवमी को आपको पुत्ररत्न की प्राप्ति हुई और इसी बीच आपकी माता का देहान्त भी हो गया । अपनी माता के देहावसान के बाद अपने पाँच वर्ष के पुत्र का यज्ञोपवीत-संस्कार करके आपने गृहस्थाश्रम त्याग दिया और निकटस्थ 'ददरे'-ग्राम के रसिक महात्मा श्रीकिशोरीशरणजी के विरक्त शिष्य बनकर उन्हीं के साथ रहने लगे । सं० १६४६ वि० में आपने मिथिला की यात्रा की और वहाँ पर अग्निकुण्ड पर दो वर्ष तक भजन करते रहे । सं० १६४८ वि० के श्रावण-मास में मणि-पर्वत के उत्सव के अवसर पर आप अयोध्या आये और दो वर्ष तक आपने श्रीजानकीघाट-मन्दिर में पुजारी का

१ 'प्रेम-पुष्प' (सियाशरणप्रसाद, सन् १६३३ ई०), पृ० २३ ।
२. 'रामभक्ति में रसिक-सम्प्रदाय' (डॉ० भगवतीप्रसाद सिंह, स० २०२४ वि०), पृ० ५२० ।

कार्य किया। स० १९५० वि० में परमहंस श्रीसीताशरणजी के आदेश से मधुकरी-वृत्ति से 'बदनपुर' के मन्दिर में आप एकान्त साधनापूर्ण जीवन व्यतीत करने लगे।

आपकी गणना रामभक्ति के रसिक-सम्प्रदाय के प्रमुख भक्तों में होती है। आप अपने समय के प्रमुख रसावेशी महात्मा थे। आपकी मानसी सेवा से तत्कालीन समाज पूर्णतया परिचित था। आपने भक्ति-सम्बन्धी कुछ स्फुट काव्य-रचना की थी।[१] आपका देहावसान सं० २००२ वि० की आश्विन कृष्ण-नवमी को हो गया।

उदाहरण

(१)

मै देखि आई सियजी को दुलहा मोहनवाँ।
दुलही छबि छहरत सियजू की दुलहा छबि दशरथ जू के ललनवाँ ॥
बड़े-बड़े नैन भृकुटि वाकी बाँकी जुलुम करै री अनोखी चितवनिवाँ ॥
कुण्डल हलनि चमकि दशननि की कतल करै री घुँघुरारी जुलफनवाँ ॥
अधर अरुण पर ढुरनि नासामणि कहर करैरी मृदु मंद मुसक्यनवाँ ॥
नखसिख लौ छवि देखि सुँदर कै बावरी भई सो री सुधि न अपनवाँ ॥
पान खवाय अङ्ग परसि सजन के मिट्यो पीर री सुनि मधुर बचनवाँ ॥
'प्रेमअलि' मै सिय सँग जायब जूठनि खाय कै सेइहौ चरनवाँ ॥[२]

(२)

हौ दासी मिथिलेस लली की।
प्रिय प्यारी सनेह सुख सरि महँ विकसनि चहौ नित प्रेम कली की।
श्री कौसिला सुवन सुन्दर सँग विहरन प्यारी सुमन कली की ॥
यह रस स्वाद मगन रहौ निसिदिन जानौ नहिं कछु सुगति भली की।
जन्म-जन्म चेरो भयो चाहत यहै साध उर 'प्रेमअली' की ॥[३]

★

---

१. एक बार कनक-भवन के पुजारी महात्मा श्रीश्यामसुन्दरीशरण के यह कहने पर कि 'स्वकीय कविता होने पर फिर पूर्वाचार्यों की वाणी मे निष्ठा नही रह जाती', उन्होने कविता करना छोड दिया।—देखिए, 'रामभक्ति मे रसिक-सम्प्रदाय' (वही), पृ० ५२१।

२. वही।

३. वही।

सीताराम मिश्र 'शशि'

आप गया-जिला के 'कोराप' (डबूर) नामक ग्राम के निवासी पं० श्रीरामगुलाम मिश्र के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १६५० वि० (सन् १८६३ ई०) की फाल्गुन शुक्ल-एकादशी को हुआ था।[१] आपकी शिक्षा घर पर ही हुई। आपके पिताजी ने अक्षरारम्भ करवाया। उन्होंने ही आपको संस्कृत की शिक्षा दी। संस्कृत के अध्ययन के पश्चात् आपने हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषाएँ सीखी। हिन्दी-भाषा और साहित्य का आपने सम्यक् अध्ययन किया। बिना किसी परीक्षा में सम्मिलित हुए, आपने हिन्दी का इतना अधिक ज्ञान प्राप्त कर लिया कि कुछ ही वर्षों के बाद सं० १६६० वि० से आपके द्वारा लिखित हिन्दी-रचनाएँ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होने लगीं। आप बहुधा 'समस्या-पूर्त्तियाँ' किया करते थे। आपके द्वारा की गई समस्या-पूर्त्तियाँ 'रसिक-विनोदिनी' नामक मासिक पत्रिका में नियमित रूप से छपा करती थीं।[२] उपर्युक्त पत्रिका के अतिरिक्त अन्य पत्रिकाओं में भी आपकी रचनाएँ छपी। पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित रचनाओं के अतिरिक्त आपके द्वारा लिखित पुस्तकों में 'भृगुरारि-क्षेत्र' नामक पुस्तिका सं० १६६१ वि० में श्रीकृष्ण मिश्र 'केशव' के द्वारा प्रकाशित हुई थी। इसके अतिरिक्त आपने तीन नाटकों की भी रचना की थी, ऐसा कहा जाता है।[३] सम्प्रति, आप घर पर ही रहकर जीवन-यापन कर रहे हैं।

उदाहरण

श्याम सरूप सबै अति खोटन, नेकु दया दिल में दरसै,
व्योम बसे 'शशि' सूरजहूँ, फणि पाइ समै झट जा गरसै।
कोयल कूक दुटूक करै हिय, चम्पकली न अली परसै,
कारी घटा घन देखु सखी, गरजै कहूँ जाय, कहूँ बरसै ।।[४]

१. आपके द्वारा भाद्रपद कृष्ण ३, सं० २०१३ वि० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

२ 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० १६५।

३. आपने संस्कृत मे तीन खण्ड-काव्यो रचना की थी। अनिवार्य कारणवश उपर्युक्त सातो पुस्तके अप्रकाशित रह गई।

४ 'रसिक-विनोदिनी' (भाद्रपद, स० १६६२ वि०), पृ० ३।

सुरेन्द्र प्रसाद[1]

आप मुजफ्फरपुर-जिला के 'बेलसर' (अनिरुद्ध-बेलसर) नामक ग्राम के निवासी श्रीमुंशी देवी प्रसाद के सुपुत्र हैं। आपका जन्म सं० १६४१ वि० (सन् १८८४ ई०) की चैत्र कृष्ण-प्रतिपदा को हुआ था।[2] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही उर्दू-फारसी के माध्यम से हुई। सन् १९०३ ई० में आपने सुपौल उच्च विद्यालय से प्रवेशिका (इण्ट्रेन्स)-परीक्षा पास की। सन् १९०८ ई० में आपने शिक्षक-प्रशिक्षण-परीक्षा पास कर ली और उसके बाद सुलतानगंज मिड्ल स्कूल में तथा वहीं के हाई स्कूल में क्रमशः कार्य-सम्पादन किया। उसी समय आपने सुलतानगंज में 'अखिलभारतीय हरिकीर्त्तन-सम्मेलन' को जन्म दिया, जो अद्यावधि संचालित है। तत्पश्चात् सन् १९१५ ई० में मधेपुरा हाई स्कूल में शिक्षक के पद पर आपकी नियुक्ति हो गई। मधेपुरा में रहते हुए आपने 'ब्रह्म-समाज' की स्थापना की तथा अपने गाँव 'बेलसर' में भी सन् १९१८ ई० में गोवर्द्धन-प्रेमानन्द मिड्ल स्कूल स्थापित कर अपने शिक्षा-प्रेम परिचय दिया। आगे चलकर वही विद्यालय 'बेसिक स्कूल' के रूप में परिणत हो गया। शिक्षक के पद पर रहते हुए भी समाज की अधिकाधिक सेवा आप करते रहे। समाज-सेवा के अतिरिक्त आपने साहित्य-सेवा में भी सक्रिय योगदान किया। आपको पत्रिका-सम्पादन का भी अनुभव था। 'रूपकला-हरिकीर्त्तन-सम्मेलन' द्वारा प्रकाशित 'भक्ति-प्रचारक' (मासिक) का भी आपने सम्पादन किया था। आपकी कई साहित्यिक कृतियाँ प्रकाश में आ चुकी हैं। प्रकाशित पुस्तकों में निम्न-लिखित प्रमुख हैं—(१) दैविक गुण-दर्पण, (२) हिन्दी का भण्डार, (३) हिन्दी-व्यावहारिक वाग्धाराएँ, (४) ईश्वर-भक्ति, (५) जीवन-सरिता। उपर्युक्त पुस्तकों के अतिरिक्त आपके द्वारा लिखित 'शान्ति-सागर' और 'ज्ञान-दीपक' नामक दो पुस्तकों की पाण्डुलिपियाँ पड़ी हुई हैं। अर्थाभाव के कारण आजतक उनका प्रकाशन नहीं हो सका है। सम्प्रति, आप अपने गाँव में ही जीवन-यापन करते हुए भगवद्भजन एवं साहित्य-सेवा-रत हैं। आपकी रचना के उदाहरण हमें नहीं मिल सके।

सैयद मुहम्मद हुसैन 'दीन'

आप गया-जिला के 'मियाँबीघा' नामक ग्राम के निवासी श्रीसैयद इब्राहिम हुसैन के पुत्र हैं। आपका जन्म सन् १८९७ ई० की ३ जनवरी को हुआ था।[3] आपकी प्रारम्भिक

---

१ आपके वैष्णव नाम 'वैदेहीशरण' तथा 'धीरमणि' है।

२. आपके द्वारा दिनाक २० जुलाई, सन् १९५७ ई० को लिखित एव साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

३. आपके पूर्वजो मे दो 'औरगजेब' के शासन-काल मे 'बगदाद' से भारत आकर राजसेवा मे लगे। उनमे एक तो ससार-त्यागी फकीर हो गये और दूसरे नौकरी छोड़कर उपर्युक्त ग्राम मे आकर बस गये। इसी वश मे आगे चलकर आपके पिता नई शिक्षा-दीक्षा से युक्त हो हजारीबाग जिलान्तर्गत 'गादी-श्रीरामपुर' नामक स्थान के पोस्टमास्टर नियुक्त हुए। उनके जीवन का कार्यस्थल अन्त-अन्त तक वहीं रहा। वहीं आपका जन्म हुआ। आपके द्वारा दिनाक १६ दिसम्बर, सन् १९६२ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री से।

शिक्षा अपने ग्राम की पाठशाला में ही हुई। उक्त ग्राम के 'मिड्ल स्कूल' से ही आपने प्रथम श्रेणी में छात्रवृत्ति के साथ मिड्ल-परीक्षा पास की। सन् १९१४ ई० में आपने गिरिडीह हाई स्कूल से मैट्रिक (प्रवेशिका)-परीक्षा पास की। उसके बाद, आपका अध्ययन आगे नहीं बढ सका।

आपने सन् १९२४ ई० से ही हिन्दी में अनुवाद कर बहुत-सी पुस्तकें लिखना प्रारम्भ किया। आपकी मौलिक रचनाएँ सन् १९४० ई० से प्रकाश में आने लगीं। बचपन से ही आपमें काव्य-प्रतिभा के प्रमाण मिलने लगे थे। आपने प्रवेशिका के बाद अध्यापन-कार्य शुरू कर दिया। सन् १९४६ ई० में आपने हिन्दी में बी० ए० की परीक्षा पास की। आप बड़े ही स्वाध्यायी व्यक्ति हैं। अध्यापन-कार्य में लगे रहने के कारण आपने हिन्दी में कई बालोपयोगी पुस्तकें लिखीं। बँगला से हिन्दी में अनुवाद कर भी आपने हिन्दी के साहित्य-भाण्डार को भरने में भरपूर योगदान किया।[1] आपने करीब चालीस हिन्दी-पुस्तकों का उर्दू में अनुवाद किया। हास्य-व्यंग्य लिखने में आपकी अच्छी गति है। सन् १९४० ई० में 'चुटकियाँ' नामक हास्य-व्यंग्य-प्रधान कविता-संग्रह आपने लिखकर तैयार किया, जिसकी अनेक कविताएँ जन-जिह्वा पर मुखरित हैं। हिन्दी के हास्य-व्यंग्य-साहित्य के संवर्द्धन में आजतक आप कार्यरत हैं। आप हिन्दी के प्रशस्त कवि 'श्रीबेधडक बनारसी', 'श्रीबेढब बनारसी' आदि के सम्पर्क में रह चुके हैं। सम्प्रति, आप अपने ग्राम गादी-श्रीरामपुर से आकर 'गिरिडीह' में निवास कर रहे हैं। अतएव, अब आप 'दीन गिरिडीहवी' के नाम से ही अपनी कविताएँ लिखा करते हैं। आपके द्वारा लिखित एवं प्रकाशित निम्नलिखित तेईस हिन्दी-पुस्तकों का पता हमें चला है। १. विवाह का घर, २. अलंकार,[2] ३. चुटकियाँ,[3] ४. राष्ट्रभाषा-व्याकरण,[3] ५. महात्मा गांधी, ६. गुरु गोरखनाथ, ७. गुरु नानक, ८. सत्याग्रही बालक प्रह्लाद, ९. सपूत श्रवणकुमार, १० छत्रपति शिवाजी, ११ भगवान् बुद्ध, १२. वीर हनुमान्, १३. राजा भर्तृहरि, १४. पितामह भीष्म, १५ सम्राट् अशोक, १६ कविवर टैगौर, १७. पं० जवाहरलाल नेहरू, १८. गुरु गौतमस्वामी, १९. दानवीर कर्ण, २०. प्रोफेसर राममूर्त्ति, २१. महात्मा जरथुस्त्र, २२. चक्रवर्त्ती सम्राट् चन्द्रगुप्त और २३. पार्श्वनाथ[4]। इनके अतिरिक्त आपके द्वारा लिखित १. चन्द्रहार (काव्य), २. मिलन-मन्दिर (कहानी) तथा लगभग १०० जीवनियाँ अद्यावधि प्रकाशनार्थ पडी हुई हैं।

---

१. बँगला से अनूदित ये दोनो पुस्तके नवयुवक पुस्तकमाला-कार्यालय, काशी से सन् १९४० ई० में प्रकाशित।

२. यह 'दीन-कुटीर', पो०—गादी-श्रीरामपुर (गिरिडीह), से सन् १९५२ ई० मे प्रकाशित हुई थी।

३. वहीं से प्रकाशित।

४. सख्या ५ से २३ तक की पुस्तकें सुबोध ग्रन्थमाला-कार्यालय, राँची से प्रकाशित हुई थीं।

उदाहरण

(१)

स्वर्णमय जिसका रूप निहार,
लिपटकर बना गले का हार,
जलाई जिसने तेरी पाँख,
क्या भीगी उसकी भी आँख?
मूर्ख क्यों जागे में सोता है, पतिंगे व्यर्थ जान खोता है।
जिसे समझा तूने अभिराम,
बता क्या मिला तुझे परिणाम।
मिटा डाला अपने को आप,
छुटा नहि तेरे तन का ताप।
'दीन' अब देख प्रात होता है, पतिंगे व्यर्थ जान खोता है ॥[१]

(२)

कौन बतलाये हमें जग का कोई भगवान भी है ॥
क्यों नहीं झूठों के मुख में तू फफोले है उठाता?
पैर चोरों के गलाकर क्यों नहीं लँगड़ा बनाता?
क्यों नहीं व्यभिचारियों को तू नपुंसक कर रहा है?
भक्त तेरा बता क्यों? भूखा तड़पकर मर रहा है?
क्या इसी पर शान तेरी और तेरा मान भी है?
कौन बतलाये...... ॥
जो कहीं होता कोई भगवान इस संसार का भी।
नाश होता दैन्य-दुख व्यभिचार अत्याचार का भी ॥
शान्ति का संसार होता प्रेम का बाजार होता।
धूर्त्तता चोरी ठगी होती न भ्रष्टाचार होता ॥

---

१ दिनांक २४ दिसम्बर, सन् १९६२ ई० को आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री से।

सिर झुकाकर विश्व कहता 'दीन' दैव-विधान भी है।
कौन बतलाये...... ॥[१]

(३)

काम-काज तजकर अजी, छोड़ो घर का ध्यान,
जटा बढाकर बन गये, साधक सिद्ध महान्।
साधक सिद्ध महान्, संग में मुड़िया चेला,
देश भ्रमण कर फिरैं, पास में नहीं अधेला।
कह 'घोंचू' कविराय, कसम वैताल पचीसी,
साधू रहे प्रसन्न, जगत की ऐसी तैसी॥
पवन वसन्ती लागते, मन में उठा हिलोर,
उठी छैल चिन्ता तजो, चल बजार की ओर।
चल बजार की ओर, बने रसिया फिर डोलें,
फूटी कौड़ी पास नही, पर जेब टटोलें।
कह 'घोंचू' कविराय, समझ पर पड़ गये पत्थर,
सूखी थूथन लिये, डोलते बने चुकन्दर॥
अपना कहि-कहि जग मुआ, अपना हुआ न कोय,
कर फैलाये चल बसा, अपना सब कुछ खोय।
अपना सब कुछ खोय, चला पंछी मन मारे,
जिमि ज्वारी जूये में, अपना सब धन हारे।
कह 'घोंचू' कविराय, सोच क्या करता भकुआ,
पूड़ी रबड़ी भूल, फाँकता रह जा सतुआ॥[२]

(४)

यह पुस्तिका ही क्या और इसकी भूमिका ही क्या ? बस इतना ही कि मुझे कुछ लिखने के शौक ने घर दबाया और मैंने लिखा।

---

१. आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री से।
२. 'चुटकियाँ' ('दीन' गिरिडीहवी, सन् १९५२ ई०), पृ० २२-२३।

इसकी न तो कोई खास तालीम ही मिली कि शब्दों के मोती पिरोये जाते। हाँ, तुकबन्दियाँ किसी तरह होती रही। जब कुछ जमा हो गये, तो पुस्तिका की शकल दे दी गई। हँसना और खुश रहना भी इन्सान के लिए उतना ही जरूरी है जितना खाना-पीना। इस पुस्तिका में समय-समय पर मेरी लिखी हुई हास्यरस की तुकबन्दियों का संग्रह है। कोई कलर, कोई विशेषता तो इनमें है नहीं। परन्तु, इन्हे पढकर यदि एक पाठक ने भी अपनी खीस निपोर दी, तो मै समझूँगा कि मैं भी कवि बन गया और यदि कोई पाठक ठहाका मारकर हँस गया, तो उस दिन से मै अपने को एक महाकवि ही समझने लगूँगा। पूरी किताब पढ़कर भी आप यदि नही हँसे तो मुझे मान लेना पड़ेगा कि आप बिल्कुल मुर्दादिल है और अपनी हँसी में भी कृपण नम्बर वन है। और अधिक क्या लिखूँ ? थोड़ा लिखना बहुत समझना।[१]

हरदीपनारायण सिंह 'दीप'

आप मुजफ्फरपुर-जिलान्तर्गत 'फुलकहाँ' (शिवहर) नामक ग्राम के निवासी श्रीअपूछलाल सिंह जी के आत्मज हैं। आपका जन्म सं० १९४९ वि० (सन् १८९२ ई०) की वैशाख शुक्ल-सप्तमी (सोमवार) को हुआ था।[२] आपके बचपन की शिक्षा ग्राम के ही विद्यालय में हुई, जहाँ लोअर और मिड्ल की परीक्षाएँ आपने छात्रवृत्ति के साथ पास की। तदनन्तर मुजफ्फरपुर जिला-स्कूल से आपने सन् १९१३ ई० में प्रवेशिका (मैट्रिक) की परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास की। उसके बाद आपका प्रवेश मुजफ्फरपुर के जी० बी० कॉलेज (वर्त्तमान लंगटसिंह महाविद्यालय) में हुआ। वहाँ से सन् १९१५ ई० में आपने आई० ए० की परीक्षा में उत्तीर्णता प्राप्त की। सन् १९१७ ई० में आपने बी० ए० की परीक्षा विशिष्टता के साथ कॉलेज में सर्वोच्च स्थान प्राप्त कर पास की। तत्पश्चात् आपने अपनी आजीविका के

---

१. 'चुटकियाँ' (वही), पृ० १।

२. आपके द्वारा दिनाक ७ मई, सन् १९५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

लिए हिन्दू हाई स्कूल, हजारीबाग और जलालाबाद में शिक्षक के पद पर कार्य किया। आप अभी सेवा-कार्य में लगे ही थे कि देश में स्वाधीनता-आन्दोलन के संचालक महात्मा गाधी की देशव्यापी पुकार आपके कानों तक पहुँची और सन् १९१७ ई० में आपने अपनी सद्यः-प्राप्त नौकरी छोड़कर उस आन्दोलन में साथ दिया। इसके परिणामस्वरूप आपने अनेक कष्ट झेले। वहाँ के किसानों की समस्या का समाधान होने पर आपने कलकत्ता-विश्वविद्यालय में एम्० ए० और बी० एल्० की कक्षाओं में नाम लिखाया। किन्तु आप ये परीक्षाएँ नहीं दे सके। उसके बाद आप कुछ दिनो के लिए डुमराँव हाई स्कूल में सहायक शिक्षक नियुक्त हुए। फिर सन् १९२१ ई० में बिहार-सरकार के शिक्षा-विभाग में पहले विद्यालय-अवर-निरीक्षक (सब-इन्सपेक्टर ऑफ स्कूल्स) और बाद में सन् १९४५ ई० में विद्यालय-उप-निरीक्षक (डिप्टी-इन्सपेक्टर ऑफ स्कूल्स) के पद पर आपने कार्य-सम्पादन किया। इस विभाग मे क्रमश' प्रोन्नत होकर आप जिला-शिक्षा-निरीक्षक (डिस्ट्रिक्ट इन्सपेक्टर ऑफ स्कूल्स) के पद तक पहुँचे। सन् १९५२ ई० में आपने सरकारी सेवा से मुक्ति पाई। उस समय आप मुंगेर में पदस्थापित थे। शिक्षा सेवा से निवृत्त होकर आपने कुछ दिनों तक महनार रोड उच्च विद्यालय में प्रधानाध्यापक का कार्य किया, किन्तु उसके बाद स्थायी रूप से आप अपने लहेरियासराय (दरभंगा)-स्थित 'दीप-भवन' में रहने लगे।

आपकी हिन्दी-सेवा प्रशंसनीय है। मोतीहारी के आन्दोलन से अवकाश पाते ही आपने चाईबासा (सिंहभूमि-जिला) में हिन्दी-प्रचार का कार्य किया। उसके पूर्व सन् १९१८ ई० से ही आपने हिन्दी में लिखना शुरू किया था। आपके द्वारा लिखित पुस्तकों में (१) पातिव्रत (नाटक), (२) दीपवचनामृत, (३) आदर्श दम्पति-विलाप, (४) प्रेमपुष्प (कविता), (५) कृष्णाकुमारी, (६) महामाया (दोनो उपन्यास), (७) विनय-शतक (दो भागो में, कविता), (८) मनोरंजन (कविता) आदि पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।[१] इन पुस्तकों के अतिरिक्त आपके स्फुट निबन्ध यथावसर पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे हैं।

उदाहरण

(१)

सखे ! मन की गति कैसी ? पवन बेग से भी तीव्र। तब इसका वश होना सुकर कैसे ? नहीं, सुकर नहीं, वरन् दुष्कर, पर अभ्यास से

---

१. आपकी पहली पुस्तक 'पातिव्रत'-नाटक का प्रकाशन, पी० एन० सिंह ऐण्ड कम्पनी, लहेरिया-सराय (दरभगा) द्वारा सन् १९२३ ई० मे हुआ था। शेष पुस्तकें हिन्दी-पुस्तक-भण्डार, लहेरियासराय से सन् १९२८-२९ ई० के बीच प्रकाशित हुईं। सन् १९३०-३२ ई० मे आपकी और भी दो पुस्तकें प्रकाश में आईं।

ही सुकर और साध्य । बस, उपाय मालूम हो गया । धीरे-धीरे इस उपाय को काम मे ला मन को जीतो । स्मरण रक्खो, मन को जीत लेने ही मे सच्ची जीत और स्वयं ही मन के वश हो जाने ही पर सच्ची हार, फलतः भरमार दुःख अगम आपार, नाना प्रकार के व्यर्थ भार और कारबार, अन्त मे लाचार हो विचार से हाथ फेर व्यभिचार और अत्याचार की गोद में मार के साथ मरना ही निश्चय । मित्र ! उठो देर न करो । आज से ही मन को वश करने मे लग जाओ और इसे वश कर इस संसार को सारमय बना, यही पर स्वर्गसुख लाभकर अपना अभीष्ट सिद्ध करो, तथा साक्षात् जगद्रचयिता परमेश्वर के दर्शन कर निशिदिन उनकी गोद में खेल सच्चा आनन्द लूटो ।

इस संसार में धनी कौन ? यथार्थ मे धनी वह जिसका हृदय उदार है । परन्तु जो हृदय को चुराता है वही धनहीन, गरीब, कायर और कृपण है । लोग सूम भी उसी को कहते है । धन की शोभा कब होती है ? देने-लेने, खाने-खिलाने तथा सुमार्ग में लगाने ही से—अन्यथा नहीं ।[१]

(२)

अच्छा ! लो, मैं तुम्हें भलीभाँति समझा देती हूँ कि हम स्त्रियों की शोभा गुण में है रूप मे नही । हाँ सुरूप में लावण्य होने से गुण और लावण्य दोनों ही मिल 'सोने और सुगन्ध' रूपी कहावत को भले ही चरितार्थ करें, पर सच्ची शोभा गुण और कार्य ही में है । मान लो कि कोई स्त्री खूब रूपवती है, उसके प्रत्येक नस में लावण्य झलक रहा है, यहाँ तक कि वह मानो कामदेव को भी मोह रही है । परन्तु यदि उसमें सद्गुण नहीं है, यदि वह गुणों से विहीन है, तो ठीक 'विषरस भरा कनक घट' की ऐसी मालूम पड़ती है । उसकी उपमा

---

१. 'दीप-वचनामृत' (हरदीपनारायण सिंह 'दीप', सन् १९२९ ई०), पृ० ८।

यदि मनोहारिणी विषैली सर्पिणी से दी जाय तो कोई मान-हानि न होगी। क्योंकि जैसे नागिन जिस किसी को पकड़ती है, जो कोई दुर्भाग्यवश उसके पञ्जे में आ पडता है उसे विना काटे वह नही छोडती, कभी-कभी यमपुर को भी पहुँचा देती है, ठीक वैसे ही उस बिचारे की दशा होती है जो गुणहीन कुलटा स्त्री के फन्दे में पड़ जाता है। उसका उसके ग्रास से उबरना दुस्तर हो जाता है। मेरी समझ में तो मृत्यु के गाल में पड़ना लाखों दर्जे अच्छा है बनिस्वत कुलटा स्त्री से भेंट तक होने के।[१]

✶

हरनाथ सहाय

आप शाहाबाद-जिलान्तर्गत 'कुम्हैला' नामक ग्राम के निवासी श्रीरामगुलाम लाल के सुपुत्र हैं। आपका जन्म सं० १६४५ वि० (सन् १८८८ ई०) की श्रावण शुक्ला-सप्तमी (मंगलवार) को हुआ था।[२] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर हो हुई। तदनन्तर, आपने कलकत्ता-जैसी महानगरी में रहकर शिक्षा पाई। वहाँ रहकर आपने कलकत्ता-विश्वविद्यालय से एम्० ए० की परीक्षा पास की। एम्० ए० पास कर आपने राजराजेश्वरी उच्च विद्यालय, सूर्यपुरा (शाहाबाद) में अध्यापन-कार्य प्रारम्भ किया। इस विद्यालय में शिक्षण-कार्य करते हुए आपने ज्यौतिष एवं दर्शन-शास्त्र का चिन्तन-मनन किया। आप सूर्यपुरा-राज के राज-ज्यौतिषी के रूप में स्वीकृत थे। सन् १६१८ ई० से आपने उपर्युक्त दोनों विषयों पर विशेष रूप से केन्द्रित होना आरम्भ किया था। इस सम्बन्ध में आपने अनेक ग्रन्थों का पर्यालोचन किया। सन् १६३६ ई० से आपने अनेक ऐसे उपयोगी विषयों पर लेखनी चलाई, जिनकी आवश्यकता तत्कालीन विद्यालयों की विभिन्न श्रेणियों में थी। उसी वर्ष आपने आठवीं और नवीं कक्षा के लिए 'अलजेबरा' (बीजगणित) की पुस्तकें लिखी, जो बिहार-टेक्स्ट-बुक-कमिटी से स्वीकृत हुईं। इनके अतिरिक्त आपने 'चिन्तन'[३] तथा 'पञ्चदर्शन'[४] नामक दो साहित्यिक पुस्तकों की भी रचना की। उक्त पुस्तकों के अतिरिक्त आपके द्वारा लिखित स्फुट हिन्दी-लेख 'बिहार', 'शान्ति-संदेश' तथा 'कल्याण' नामक पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए।[५]

---

१. 'पातिव्रत' (हरदीपनारायण सिंह 'दीप' (सन् १६२३ ई०), पृ० ५।

२. आपके द्वारा २० जनवरी, सन् १६५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

३. अशोक प्रेस, पटना से सन् १६५२ ई० मे प्रकाशित।

४. उपमा-प्रकाशन पटना से सन् १६५४ ई० में प्रकाशित।

५ आपके अँगरेजी लेख मुख्य रूप से 'डिवाइन लाइफ' नामक पत्रिका मे प्रकाशित हुआ करते थे।

ज्यौतिष-विषयक आपकी एक पुस्तक 'सरल पंचाङ्ग-ज्योतिष' या 'बाल-ज्योतिष'[1] के नाम से प्रसिद्ध है। आप अद्यावधि अपने ज्यौतिष-विषयक ज्ञान से समाज की सेवा करते जा रहे हैं। सम्प्रति, आप मीठापुर, पटना-स्थित अपने निवास-स्थान में जीवन के अन्तिम दिन व्यतीत कर रहे हैं।

उदाहरण

(१)

विश्व का प्रत्येक प्राणी युग-युग से सुख की खोज में दौड़ रहा है और उसी के लिए एँड़ी-चोटी का पसीना एक किए हुए है। किन्तु, जीवन के समग्र सुख-साधन और विलास-सामग्रियों के रहते भी वस्तुतः बहुत थोड़े ही व्यक्ति सुख पाते है; क्योंकि आनन्द का उत्स किसी बाह्य वस्तु-विशेष में नहीं है, बल्कि आनन्द का निर्झर हमारे ही मन के अन्दर है। विश्व के बाह्य पदार्थ हमें क्षणिक सुख भले ही प्रदान करें किन्तु क्षण-क्षण में परिवर्तित एवं नष्ट होने के कारण वे हमें कोई वास्तविक सुख-शान्ति एवं आत्म-संतोष कदापि नहीं दे सकते। वास्तविक और शाश्वत आनन्द हमें वास्तविक तथा शाश्वत पदार्थ ही प्रदान कर सकते हैं। हम प्रतिक्षण सांसारिक वस्तुओं को परिवर्तन तथा नाश के झंझा से त्रस्त देखते हैं। परिवर्तन और नाश उनका अवश्यम्भावी धर्म है। ठीक उसी तरह हमारी मानसिक स्थितियाँ और क्रियाएँ भी सर्वदा परिवर्तन से परे है— और वह है आत्मा। प्रत्येक दृश्य का, चाहे वह परिवर्तन हो या नाश का, द्रष्टा होने के कारण यह आत्मा उन परिवर्तनशील वस्तुओं की श्रेणी में नहीं आ सकता।[2]

---

१. यह भी सम्भवत. अशोक प्रेस, पटना से प्रकाशित।

२. 'चिन्तन' (हरनाथ सहाय, सन् १९५१ ई०), पृष्ठ २३।

(२)

ब्रह्म से आत्मा की उत्पत्ति उसी प्रकार होती है जैसे अग्नि से स्फुलिंग की। यह आत्मा पञ्चकोषों से आच्छन्न रहता है। प्रथम और सबसे गुह्यतम कोष है आनन्दमय कोष, जिसका निर्माण जनलोक तथा अन्य श्रेष्ठतर लोकों के तत्त्वों से होता है। इस कोष मे आत्मा परमानन्द लाभ करता है। प्रत्येक सात्विक विचार और उन्नत महत्त्वाकांक्षाएँ इस कोष को शक्तिशाली बनाती हैं। इसे ही 'कारण शरीर' कहा जाता है। दूसरा कोष है विज्ञानमय कोष, जो बुद्धि या प्रतिभा का केन्द्र-स्थल है। यह महर्लोक के तत्त्वों से निर्मित है। तीसरा है मनोमय कोष (मानस-शरीर),जो स्वर्लोक के तत्त्वों से निर्मित है। चतुर्थ प्राणमय कोष है, जो भूर्लोक के तत्त्वों से निर्मित है। प्राणमय, मनोमय और विज्ञानमय कोष आत्मा के सूक्ष्म शरीर के निर्माता हैं और अन्नमय कोष स्थूल शरीर का निर्माता है। स्थूल शरीर मृत्युपरान्त नष्ट हो जाता है, किन्तु सूक्ष्म शरीर, जो आत्मा को आवृत किये रहता है, मृत्युपरान्त भी नष्ट नही होता और आत्मा का पुनर्जन्म तबतक चलता रहता है, जबतक ज्ञान की अन्तिम अवस्था को यह प्राप्त नहीं कर लेता। ज्ञान कहते है आत्मा के सत्य स्वरूप की अनुभूति को, जिसके प्राप्त हो जाने पर दृश्यमान पदार्थों से मायाकृत सम्बन्ध छूट जाता है।[१]

हरिवंशप्रसाद द्विवेदी 'जौहरी'

आप गया-नगर-स्थित 'पुरानीगोदाम' नामक मुहल्ले के निवासी पं० ज्वालाप्रसाद द्विवेदी के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९५६ वि० (सन् १८९९ ई०) की कार्त्तिक-पूर्णिमा को हुआ था।[२] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। तदनन्तर, आपने हिन्दी और उर्दू के माध्यम से शिक्षा प्राप्त की। आप क्रमशः इन दोनों भाषाओं के अच्छे ज्ञाता हो गये। आपने स्वाध्याय के बल पर साहित्य का संवर्द्धन किया। आपका अधिकांश समय

१. 'चिन्तन' (वही), पृ० ४-५।
२. 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० १९९।

साहित्य के अध्ययन में ही व्यतीत हुआ। आपकी रचनाएँ कुछ ही वर्षों में हिन्दी और उर्दू दोनों भाषाओं में प्रकाश में आने लगी। आप अपनी साहित्यिक रचनाएँ 'जौहरी' के नाम से लिखा करते थे। आपकी रचनाएँ 'रसिक-विनोदिनी सभा' की प्रमुख पत्रिका 'रसिक-विनोदिनी' में नियमित रूप से प्रकाशित होती थी। आप एक सफल पूर्त्तिकार थे। इसके साथ ही, आप 'रसिक-विनोदिनी' पत्रिका के संरक्षक एवं नियमित लेखक भी रहे। आपकी साहित्यिक कृतियाँ देश की तत्कालीन सभी प्रसिद्ध पत्रिकाओं में मुद्रित होती थीं। 'रसिक-विनोदिनी' के अतिरिक्त 'सुकवि', 'समस्या-पूर्त्ति' आदि पत्रिकाओं में भी आपकी स्फुट काव्य-रचनाएँ उपलब्ध हैं। आपका परलोकवास सं० २००१ वि० में हुआ।

उदाहरण

(१)

छाई अँधेरी अहै चहुँधा नहि
नेक दिखै अपनो कर है
'जौहरी' जागी रहौ अबलौ,
अबलौ ना मिट्यो मन को डर है।
को यह बूँद मे टेर सुनै,
दुख जानि रट्यो परमेसर है
आस उन्ही की रही अब तो,
जब पास नही कोई दूसर है॥[1]

(२)

ह्वै घनश्याम बतावै नही,
घनश्याम कहाँ निकरै घरसैं।
'जौहरी' जात अकास चढ़े,
अलि पूछति हौ अति आदरसैं।
नीचे की बात की कौन कहै,
बरु पूछि थकी हूौ अटा परसैं।

१. 'सुकवि', (वर्ष ४, अंक २: मई, सन् १६३१ ई०), पृ० ४८।

नाहक है बिनती करिबो,
गरजै कहूँ जाय कहूँ बरसै ॥[1]

(३)

गोरी के सुलाल लाल गालन गुवालन पै,
गोदना मलिन्द मतवारो दरसत है।
दाड़िम से दमकि रहे है जुग जोवन त्यों
स्वासन सैं सीतन समीर सरसत है।
क्वैलिया की कूकै कढ़ि आवति है वैननि सैं
'जौहरी' निरखि नैन कंज हरसत है।
आदर तिहारो दिन चार के बसन्त कहो,
इतै मास बारहो बसन्त बरसत है ॥[2]

(४)

मास मसोसि बिताय दई अलि,
अन्त दिखानी नहीं दु.ख गीत की।
छाती अरी दिन राती दुखै,
निमपाती दबाई सबै विपरीत की।
जानि परै कोऊ जादू करी,
महिंसो सकि कोई गुनी ते न प्रीत की।
'जौहरी' जीहौं न ग्रीषम लौ,
जब लाभ न रंच बितै ऋतु शीत की।[3]

★

---

१ 'रसिक-विनोदनी' (भाद्रपद, स० १९९२ वि०), पृ० ४।
२ वही, पृ० ४।
३ वही (माघ-फाल्गुन, सं० १९९४ वि०), पृ० ७।

हरिवंश मिश्र

आप सारन-जिलान्तर्गत 'मिश्र-बतरहा' (थाना - मीरगंज) के निवासी पं० श्रीउदित नारायण मिश्र[1] के पुत्र थे।[2] आपका जन्म सं० १६४८ वि० (सन् १८६१ ई०) की माघ-कृष्ण-चतुर्थी को हुआ था।

आप बाल्यकाल से ही बड़े विद्यानुरागी और तीक्ष्ण बुद्धि के थे। लगभग आठ वर्ष की उम्र में आपने अपनी स्कूली शिक्षा आरम्भ कर दी। जब आप मिड्ल-क्लास में पढ़ते थे, तभी आपके पिता ने पढ़ाई छुडाकर संस्कृत पढ़ाना आरम्भ किया। आपके संस्कृताध्यापक थे पं० लक्ष्मीकान्त झा। आपने संस्कृत में 'व्याकरणाचार्य' और 'काव्यतीर्थ' की उपाधियाँ प्राप्त की थी। प्राय प्रत्येक परीक्षा में आपने प्रथम श्रेणी ही प्राप्त की। संस्कृत की शिक्षा समाप्त करने के बाद, आप हथुआ-राज के संस्कृत-विद्यालय में प्रधानाध्यापक नियुक्त हुए। कुछ ही दिनो में उक्त राज के पण्डितों में आप सर्वप्रधान हो गये।[3] आप हिन्दी के एक सुपरिचित लेखक थे। 'इन्दु', 'सरस्वती', 'मर्यादा', 'पाटलिपुत्र' और 'ज्ञानशक्ति' आदि में आपकी गद्य-पद्य-रचनाएँ बराबर प्रकाशित हुआ करती थीं। आपने संस्कृत के दो ग्रन्थों की टीकाएँ भी लिखी थीं, जो अबतक अप्रकाशित पड़ी हैं। आप सन् १६२१ ई० में, दुर्भाग्यवश राजयक्ष्मा-रोग से पीड़ित हो गये और उसी वर्ष १० अगस्त (बुधवार) के दो बजे दिन में परलोक सिधार गये।[4] आपकी रचना के उदाहरण हमें नहीं मिल सके।

हरिवंश सहाय

आप चम्पारन-जिलान्तर्गत 'बड़ीअरिया', (गोविन्दगंज) नामक ग्राम के निवासी श्रीगंगदेवलालजी के आत्मज हैं।[5] आपका जन्म सं० १६३६ वि० (सन् १८८२ ई०)

---

१. आपके पूर्वज लगभग सवा दो सौ वर्ष पूर्व जडामणि नामक स्थान के निवासी थे। उनमें मेघमन मिश्र ही मिश्र-बतरहा मे बुलाकर बसाये गये थे। आपके पितामह प० शालिग्राम मिश्र बड़े ही सुयोग्य एव ख्यातिलब्ध पण्डित थे। काशी से संस्कृत की शिक्षा प्राप्त करके जब ये वापस आये, तभी से इनकी बड़ी ख्याति हुई। फलित-ज्यौतिष के तो आप अद्वितीय आचार्य माने गये। आपके पिता भी ज्यौतिष, वेदान्त, दर्शन आदि के पारगत विद्वान् थे। इनसे शिक्षित होकर इनके छात्र गौरव का अनुभव करते थे।

२. श्रीशिवप्रसाद गुप्त (पुरानीबाजार, हथुआ, सारन) द्वारा प्राप्त सूचना के अनुसार।—देखिए, 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही), पृ० ६७२ (घ)।

३. देखिए, एकादश सारन-जिला-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन (१६५३) के अवसर पर श्रीकुमार नकुलेश्वरेन्द्र शाही, स्वागताध्यक्ष का भाषण।

४. 'प्रजाबन्धु' (श्रावण-शुक्ल १३, मगलवार, स० १६७८ वि०), पृ० ५।

५. आपके पूर्वज बेतिया-राज के महाराजो के द्वारा वर्षों पूर्व चम्पारन-जिला के पश्चिमोत्तर भाग में सैनिक-सेवा-कार्य के लिए भेजे गये थे।

की श्रावणी-अमावास्या को हुआ था।[१] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा गाँव की ही पाठशाला में हुई। तदनन्तर, उच्च अध्ययन के लिए आप कलकत्ता चले गये। कलकत्ता-विश्वविद्यालय से आपने बी० ए० की परीक्षा पास की। विश्वविद्यालयीय उपाधि के अतिरिक्त आपने स्वाध्याय के बल पर हिन्दी, उर्दू और फारसी का भी ज्ञान प्राप्त किया। सन् १९०४ ई० से आप चम्पारन में स्वदेशी-आन्दोलन के प्रचार-कार्य में लगे। तत्पश्चात् सन् १९१९ ई० में, पटना से प्रकाशित होनेवाले 'देश' के सम्पादन में एक सहकारी के रूप में आपने यथेष्ट योगदान किया। कुछ वर्षों के बाद, आपकी नियुक्ति 'बेतिया-राज-स्कूल' में शिक्षक के पद पर हुई। परन्तु, कानपुर से प्रकाशित होनेवाले देशव्यापी दैनिक 'प्रताप' और प्रयाग से निकलनेवाली तत्कालीन प्रसिद्ध मासिक पत्रिका 'मर्यादा' में नियमित रूप से चम्पारन के नीलहों के विरुद्ध लेख लिखने के कारण आपको उक्त पद से बाध्य होकर हट जाना पड़ा। वहाँ से अलग होने पर भी तत्कालीन अँगरेजी-सरकार की शनि-दृष्टि आपपर लगी रही और आप जहाँ-जहाँ गये, आपके पीछे गुप्तचर लगे रहे। इस विद्यालय से हटकर आप भागलपुर की मारवाड़ी-पाठशाला के प्रधानाध्यापक-पद पर प्रतिष्ठित हुए। वहाँ भी आपकी तलाशी ली गई। वहाँ आपके पास कुछ राष्ट्रीय लोगों के चित्र थे, जो ले लिये गये। पाठशाला के पुस्तकालय में आपके द्वारा लिखित 'अमेरिका की स्वतन्त्रता' नामक पुस्तक की पाण्डुलिपि थी। उसे भी पुलिस उठा ले गई। आपकी विचारधारा से परिचित होने के कारण ही इलाहाबाद-विश्वविद्यालय के तत्कालीन अधिकारियों ने वहाँ के लॉ-कॉलेज में आपका प्रवेश नहीं होने दिया।

आप महात्मा गांधी के भी सहयोगी रहे। नीलहों के अत्याचार के विरुद्ध जब गांधीजी ने आन्दोलन छेड़ा, तब आप भी उनके साथ रहे। इस आन्दोलन के चलते आपने कई बार जेल की यातना सही। आप एक सक्रिय राजनीतिज्ञ थे। अतएव भारत के स्वतंत्र होने पर आप बिहार-विधान-सभा के सदस्य मनोनीत हुए।

आपकी गणना कुशल सम्पादकों में भी होती थी। सुप्रसिद्ध पत्र 'देश' (पटना) के अतिरिक्त आपने 'हिन्दी-सर्चलाइट' और 'साम्यवादी' (कलकत्ता) का सम्पादन-कार्य भी बड़े मनोयोग से किया। आगे चलकर आपके सम्पादकत्व में चम्पारन से 'कुसुमांजलि' नामक एक मासिक पत्रिका भी प्रकाशित हुई। आपकी हिन्दी-रचनाएँ सन् १९११-१२ ई० से ही प्रकाश में आने लगी। आगे चलकर राष्ट्रीय विचारधारा के आपके अनेक लेख पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए। हिन्दी-भाषा और साहित्य की सेवा में आपने जो तत्परता बरती, उसके फलस्वरूप चम्पारन-जिला हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के रामनगर अधिवेशन के अवसर पर आपको ही अध्यक्ष चुना गया। हिन्दी-सेवा में आपकी विशेष दिलचस्पी हमेशा रही। आप एक कुशल अनुवादक भी रहे। अँगरेजी से अनूदित आपके अनेक ग्रन्थ आज भी प्रकाशन की अपेक्षा रखते हैं। हिन्दी में आपके द्वारा लिखित मौलिक पुस्तक 'अमेरिका की स्वधीनता का इतिहास' सर्वथा प्रशंसनीय है। इसका प्रकाशन

---

१. आपके द्वारा दिनांक १२ जुलाई, सन् १९५९ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री के अनुसार। आपके प्रस्तुत परिचय-लेखन मे निम्नलिखित पुस्तकों से भी सहायता ली गई है : 'हिन्दी-सेवी-संसार' (वही, पृ० ३३७), 'चम्पारन की साहित्य-साधना' (वही, पृ० २०९) तथा 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ५९२)।

सन् १९१६ ई० में, लखनऊ-काँगरेस के अवसर पर कुछ क्रान्तिकारियों ने किया था। 'भारतात्मा' नामक आपकी दूसरी पुस्तकाकार रचना अद्यावधि प्रकाशित नहीं हो सकी है। सम्प्रति, आप मोतीहारी (चम्पारन) में जीवन-यापन कर रहे हैं। आपकी रचना के उदाहरण हमें नहीं मिल सके।

★

हरिहर प्रसाद 'जिज्ञासु'

आप गया-नगर के 'लहेरी-टोला' नामक मुहल्ले के श्रीहरिकृष्णदासजी के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९२६ वि० (सन् १८६९ ई०) की भाद्रपद-कृष्ण-चतुर्दशी को हुआ था।[१] आपकी प्राथमिक शिक्षा घर पर ही हुई। पाँच वर्ष की आयु में ही आपका अक्षरारम्भ हो गया और मात्र दो वर्षों की हिन्दी-शिक्षा प्राप्त कर आपने अँगरेजी की शिक्षा के लिए उच्च माध्यमिक विद्यालय (हाई स्कूल) में प्रवेश किया। वहाँ से आपने इण्ट्रेन्स (प्रवेशिका)-परीक्षा पास की। कतिपय कारणवश आपकी विद्यालयीय शिक्षा आगे नहीं बढ़ सकी। आप एक स्वाध्यायप्रिय एवं अध्यवसायी व्यक्ति थे, इसीलिए आपने बड़ी गंभीरता से हिन्दी-भाषा और साहित्य का आलोडन किया। अपने अध्यवसाय को उज्जीवित रखने के लिए आपने अपने घर पर ही एक प्रेस खोल रखा था, जो 'अग्रवाल-बन्धु प्रेस' के नाम से प्रसिद्ध था। गया-नगर में यह प्रेस आज भी है। इस प्रेस से 'गया-समाचार' नामक एक भव्य पत्रिका (मासिक) निकली थी, जो अल्पप्राण सिद्ध हुई।

आपकी अभिरुचि पूर्णतः साहित्यिक थी। आपकी साहित्यिक सेवा का आरम्भ सन् १९०१ ई० से होता है। आप अपने जमाने के प्रसिद्ध हास्यरस-लेखकों एवं कवियों में गिने जाते थे। गया से हास्यरस-प्रधान 'रँगीला' नामक एक मासिक पत्रिका आपके ही सम्पादकत्व में निकलती थी। आप गद्य और पद्य दोनों में ही समान रूप से लिखते थे। आपके द्वारा लिखित कई नाटक प्राप्त हैं। आप एक सफल नाटककार के रूप में विश्रुत थे। आप हिन्दी के अतिरिक्त मगही-भाषा के भी बड़े ही सरस कवि थे। आपकी मगही-कविताएँ अधिकतर राष्ट्रीय भावनाओं से ओतप्रोत हैं।[२] आपके द्वारा लिखित निम्नलिखित ग्रन्थ उपलब्ध हैं: १. जया (नाटक), २. राजसिंह (नाटक), ३. भारत-पराजय (नाटक), ४. कामिनी-मदन (नाटक), ५. सभ्य-स्वयंवर, ६. बैंकर-प्रभा (प्रहसन), ७ होनहार, ८. परिणाम, ९. कुलांगना, १०. कुलदीपबाबू (प्रहसन), ११. सुशीला, १२. शीला, १३. अवधकिशोर, १४. डबल नवाब, १५. भोली बीबी (प्रहसन), १६. जगमग (उपन्यास), १७. छिनार-छत्तीसी (लावनी), १८. नया ग्रन्थकार (साहित्यशास्त्र), १९. गीतावली तथा २०. कमोदकला (उपन्यास)।[३] आपका जीवन साहित्य-सेवा एवं पुस्तक-प्रकाशन में ही आद्यन्त लगा रहा।[४]

---

१ 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० १९९।

२ आपके अनेक मगही-गीतों को तत्कालीन अँगरेजी सरकार ने जब्त कर लिया था और आपके प्रेस की अनेक बार तलाशी ली गई थी।—'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० २०१।

३ ये लगभग सारी पुस्तकें अग्रवाल-प्रेस, गया से प्रकाशित हुई थीं।

४. अन्तिम दोनों पुस्तकों को आपने स्वयं प्रकाशित किया था। प्रथम का प्रकाशन सन् १९०३ ई० में और द्वितीय का सन् १९२२ ई० में हुआ था।

तदनन्तर आपने बी० एम० की परीक्षा सन् १९१९ ई० मे पास की। सन् १९२८ ई० में आपने सी० टी० को परीक्षा पास कर जीविकोपार्जन के निमित्त शिक्षण-कार्य को अपना अभिप्रेत साधन बनाया। इस वृत्ति से आपके अन्तःकरण को विशेष तृप्ति मिली। अतएव विभिन्न माध्यमिक तथा उच्चांगल-विद्यालयों में आपने करीब ३० वर्षों तक शिक्षक-पद की शोभा बढ़ाई। इस कार्य में रहने के कारण आपकी सामाजिक मान्यता इतनी बढ़ी कि आप कई बार अनेक सस्थाओ के सभापति एवं सदस्य चुने गये। विद्यालयो में शिक्षण के अतिरिक्त लोगों के बीच हिन्दी-प्रचार आपका एक व्यसन हो गया। आप बेतिया-आर्यसमाज के सभापति-पद पर कई वषा तक प्रतिष्ठित रहे। अखिलभारतोय कॉंगरेस-कमिटी के भी आप सदस्य थे। चम्पारन-जिला-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के मन्त्री के रूप में आपने वर्षों कार्य-सम्पादन किया था। बेतिया-हिन्दी-साहित्य-परिषद् के आप आद्य सभापति थे।

सन् १९१४ ई० से आपकी लेखनी के द्वारा साहित्यिक रचनाएँ लिखी जाने लगी। आपके द्वारा लिखित कविताएँ, लेख एवं अन्य रचनाएँ यथावसर तत्कालीन भारत की प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं। आपने सन् १९३७ ई० में बेतिया से 'प्रकाश' नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन अपने सम्पादकत्व में किया। यह पत्रिका उस क्षेत्र के हिन्दी-प्रचार में बड़ी सहायिका सिद्ध हुई। आपके द्वारा लिखित पुस्तको के नाम ये है—(१) विजय-पताका[1], (२) श्रद्धाजलि,[2] (३) कुसुमाजलि[3], (४) गद्य-विनोद, (५) प्रेम-प्रवाह, (६) रसिक-कवितावली, (७) काव्य-सुधा, (८) अन्तःज्वाला, (९) अभ्यर्थना तथा (१०) बेखटक बेतियावी। हिन्दी-प्रकाशन-समिति, बेतिया से आपके सम्पादन में 'प्रकाश' नामक एक काव्य-संकलन भी प्रकाशित हुआ था। अपने जीवन के अन्तिम दिनो में आप विपिन-विद्यालय (चम्पारन) के हिन्दी-प्राध्यापक-पद को अलंकृत कर रहे थे। पिछले सात-आठ वर्ष पूर्व आपका निधन हो गया।

उदाहरण

(१)

मेरे नव जीवन की सौख्यवाटिका में सुशुभ्र मनोरागों की सुपल्लवित प्रफुल्ल बल्लरियों पर सुविपुल भावभ्रमर अद्भुत कौतूहल दिखाने लग गये थे। अन्तःकरण में शरद्ऋतुवाली पूर्णिमा की विभावरी पर शान्ति सम्राज्ञी का अभिषेक हो चुका था। मानस

---

१. सन् १९१८ ई० में रत्नाकर-प्रेस, मुजफ्फरपुर से मुद्रित होकर प्रकाशित।
२. सन् १९३९ ई० में न्यू प्रेस, बेतिया से मुद्रित होकर प्रकाशित।
३. सन् १९२८ ई० में सुद्रण-यन्त्रालय से मुद्रित होकर प्रकाशित।

प्रयाग में प्रेम-पीयूष-प्रवाहिनी सुपवित्र दर्शन, सम्भाषण, सम्मिलन सरिताओं का सुरम्य सङ्गम हो गया था, पर हा! नष्ट हो गया! एक साथ ही सत्यानाश हो गया!! मेरी आशालता मुर्झा गई! उजड़ गई!! मेरे मनोरथ के सुकोमल बिरवे कुम्हला गये। हाय! अभिनव अभिलाषाओं के निष्कंटक राज्य में भीषण विभ्राट प्रस्फुटित हो गया। नव्यकल्पनाओं का अत्युत्तम उपनिवेश नष्टभ्रष्ट हो गया। इच्छा, आकाङ्क्षा, आमोद-प्रमोद, प्रणय-प्रीति का सुखद-संगम सूख गया! छूमंतर हो गया!! समझा था कि हृदय पुहुमी पर एक सुललित प्रेम-लतिका उगी हुई है, जिसे न जाने किस लाड़-प्यार से बचा रक्खा था, बढ निकलेगी, कालान्तर में लहराने लगेगी और फिर अपने सौरभ से सम्पूर्ण उपवन को चर्चित करेगी। हार बनकर सहृदय समूह के हृदय पर स्वर्गीय सुषमा प्रदर्शित करेगी तथा अपने पालनेहारे को सुयश का पात्र बनायेगी।[1]

(२)

कविता केवल कोकिल की 'कूक' नही, कला है। वह शारदा की देन है; देश के इतिहास का दर्पण है। कविता का मानव जीवन के साथ अविच्छिन्न सम्बन्ध होता है। कविता कवि के जीवन भर की यत्नसंचित सर्वश्रेष्ठ निधि है। कविता युग का मानचित्र तथा मानव-जीवन का प्रतीक है। कविता कवि का दर्पण है। जिस प्रकार साहित्य में समाज का चित्र मिलता है उसी प्रकार साहित्य का रूप कविता में प्रतिबिम्बित होता है। कविता घटनाओं, भावनाओं और कल्पनाओं का चित्रांकन होता है। किसी-किसी की धारणा है कि कविता साहित्य का शृंगार नही, उसकी आत्मा है। शृंगार के विना तो काम चल

---

१. आपके द्वारा दिनाक २२ अक्टूबर, सन् १९५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री से।

सकता है पर काव्य-विहीन साहित्य का अस्तित्व ही नहीं रह सकता। भाषा साहित्य में परिलक्षित है और साहित्य कविता मे। संस्कृत-साहित्य पंचत्व को प्राप्त हो चुका होता, यदि काव्य अपने अमर भावो के द्वारा उसे अमर न बना देते। अमर भाव शब्दों मे होते है—ध्वनि मे नही।

कविता मे दार्शनिकता को समाविष्ट कर कवि अमर साहित्य की सृष्टि करता है। सिद्ध कलाकार आत्मा को परमात्मा से मिला देने की क्षमता रखता है।[१]

(३)

ले विजय संवाद देखो, मस्त मृदु मधुमास आया,
भव चराचर के लिए यह नव ललित उल्लास लाया।
जीर्णता के रूप का अवसान करने के लिए ही,
था शिशिर पहुँचा कि मुख पर है मनोहर हास छाया॥
दुग्ध-स्निग्ध सुरम्य शय्या पर लगा शुचि प्यार झरने,
मूक हृद्वीणा स्वरित होकर लगी झंकार करने,
म्लान निष्प्रभ जीव ने नव ज्योति का संचार पाया।
आज फिर ऋतुराज आया भ्रमर का भंडार भरने॥
सरस सुमनों के निकुंजों में मलिन्दों को मनाने,
कोकिला के नीड में चुपचाप जा पहुँचा जगाने,
कुसुम के सुरभित सुकण से है सुसज्जित मधु समीरण।
कामिनी के कच कपोलों से लगा हौले हटाने॥
निखिल उपवन के द्रुमों में मृदुल मंजरियाँ सुहातीं,
वनलताएँ विकसतीं नव पल्लवों से लहलहाती,

१. आपके द्वारा २५ अक्टूबर, सन् १९५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री से।

शुभ्र सरस रसाल पर पुनि राग पंचम पिक सुनाते,
अप्सराएँ निकल मलयानिल स्वरो में स्वर मिलातीं ॥
प्रकृति ने स्वर्णिम सुहावन साज प्रांगण में सजाया,
मधुकरों ने मुग्ध हो नूतन मनोरम राग गाया।
देख पति दुकूल ओढे प्रकृति को सुषमा-सदन में
प्रणय का उपहार लेकर मस्त मृदु मधुमास आया ॥[१]

(४)

अवनि के अंक में पट लाल ओढे कौन लेटे है ?
नजर आते जगे लेटे, मगर क्यो मौन लेटे हैं ?
पुत्र वे शूर पाटलीपुत्र के पर नूर नयनों के,
कि धरती के कलेजे है, कि लेटे वीर बेटे है।
लपेटे लाल से दुकूल तन मे आज लेटे है,
पडे ज्यों लाल शय्या पर बड़े गजराज लेटे है।
पसीना बह रहा हर देह से क्यों लाल लोहू सा,
बनी ब्रज मे ललित होली रँगे ब्रजराज लेटे है ॥
पत्नियों की नवल आशा धवल अरमान लेटे हैं,
सुघर सिगार औ सौभाग्य के सामान लेटे हैं,
जननियों के धरोहर प्राण के जीवन सहारा जो,
देवियों और देवों के लिए वरदान लेटे है ॥
महामणिमय विषैले फण समेटे व्याल लेटे है,
कि लाखों लाल नीलम पद्मराग प्रवाल लेटे है,
राष्ट्र के कर्णधार समाज के सौभाग्य गौरव जो,
देश के नौनिहाल वसुन्धरा के लाल लेटे हैं ॥

---

१. आपके द्वारा दिनाक २२ अक्टूबर, सन् १९५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री से।

शारदा के सदन में वीन के नवतार लेटे है,
शान्ति सुख से छिपाये क्रान्तिस्वर-विस्तार लेटे हैं,
दानवी कर्म से आकुल सुरों ने तार जो छेड़े,
समझ लो, बस करोड़ो ईश के अवतार लेटे है ॥[१]

हर्षराम सिंह 'हर्ष'

आप गया के 'कोइरीबारी' नामक मुहल्ले के निवासी थे। आपका जन्म सं० १६२४ वि० (सन् १८६७ ई०) की चैत्र शुक्ल-द्वितीया (गुरुवार) को हुआ था।[२] आप एक काव्य-संगीत-मर्मज्ञ कवि थे। काशी, कानपुर, पटना और गया से प्रकाशित तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में आपकी काव्य-रचनाएँ बराबर छपती थी। मूलत. आप समस्या-पूर्त्ति में बड़े सिद्धहस्त थे। आपकी निम्नलिखित पुस्तकाकार रचनाएँ बतलाई जाती हैं—(१) हर्ष-बहार, (२) नवीन नायिका, (३) महिषमर्दनी दुर्गे, (४) भयानक समय, (५) काव्य-कुंज, (६) भजन-कीर्त्तन, (७) गजल-गुणागार, (८) उजली कजली और (६) तरुण-तरंग। आप सन् १६४४ ई० के १० अप्रैल को परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

नई गौनहि आई अहै नवला, पट तानि अटा चढ़ि सोवति है।
धुनि कान परै पिय के पग की, हिय कँप उठै मुँह मोरति है ॥
हरखू हरखाय कहै रसबात तो, आँसुन ते तन धोवति है।
सब कोनहि कोन चिरी सी फिरे, कहि नाही नहीं दम खोवति है ॥[३]

(२)

असगुन दिखाय अब मोको अनेक हाय,
फरकत बाम बाहु ऐसे में बचैया को।
सपने में रात रुण्ड लैके कृपाण ढिग,
बार-बार कहे सठ तेरो है सहैया को ॥

---

१. आपके द्वारा दिनाक २२ अक्टूबर, सन् १६५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री से।
२. 'गया के लेखक और कवि' (वही), पृ० १६७।
३. 'समस्या-पूर्त्ति' (पटना, अगस्त, सन् १६१७ ई०), पृ०

गढ़ पै गुमान करि गीध गण लोट जाय,
बोलत शृगाल स्वान साँझ ही समैया को।
पूछे कंसराय घबराय 'हर्षराम' हूँ ते,
सांचो कहो भयो कहा जनम कन्हैया को ॥[1]

(३)

चाप के टूटत ही सखियाँ, सब बोल उठी बिधि आप भली की।
सांवरो गात अहै हर्षराम जू, जोड़ी भली मिथिलेश लली की ॥
एक से एक जुटे सब भूप, न जोर चली यहाँ कोउ बली की।
देखु सिया बहराय रही, कर कञ्ज ते माल लै कञ्ज कली की ॥[2]

(४)

कामरी ओढ़ेवाले पर का मरी जाती है री,
अधिक अन्देशो कैसे साथ करी कारे की।
कीरति किशोरी तेरी कीर्ति घर की है बड़ी,
सबको लपेटि फेकि यमुना में न्यारे की।
नेकु थिर ह्वै कै सुनु सुघर सलोनी सांचि,
तू तो हर्षराम मेरे साथी अहै वारे की।
चीर चोर छीर-चोर दधि राहगीर चोर,
कौन खूबी पाई भला मोरपक्ष वारे की ॥[3]

★

हवलदारी राम गुप्त 'हलधर'

आप पलामू-जिलान्तर्गत 'हरिहरगंज' नामक ग्राम के निवासी हैं। आपका जन्म सन् १८६४ ई० की पहली जनवरी को हुआ था।[4] आपकी प्राथमिक शिक्षा घर ही हुई।

---

१ 'समस्या-पूर्त्ति' (वही), पृ० ८।
२. 'रसिक-विनोदिनी' (आषाढ़-श्रावण, स० १९९२ वि०), पृ० ३—७।
३. वही (आश्विन, स० १९९२ वि०), पृ० ४।
४. आपके द्वारा दिनांक २४ सितम्बर, सन् १९५४ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के अनुसार। साथ ही, देखिए, 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ६७३) तथा 'हिन्दी-सेवी ससार' (वही, पृ० ३४७)।

तदनन्तर आपने डालटेनगंज में रहकर अध्ययन किया। अध्ययनोपरान्त आपकी नियुक्ति बिहार-सरकार के शिक्षा-विभाग में हुई और आपने बिहार के विभिन्न राजकीय उच्च विद्यालयों में अध्यापन-कार्य किया। शिक्षण-कार्य से निवृत्त होकर आपने डालटेनगंज में हलधर प्रेस की स्थापना की। कई वर्षों से आप एक साप्ताहिक पत्र 'हलधर' का प्रकाशन करते आ रहे हैं, जिसके प्रधान सम्पादक भी आपही हैं। इस पत्र के पूर्व आपने 'रौनियार वैश्य' और 'रौनियार-बन्धु' नामक दो मासिक पत्रिकाओं का सम्पादन-कार्य भी किया था।

आपने अपने समाज-सुधार के कार्यों में अपने जीवन का एक बहुत बड़ा भाग लगा दिया था। अनेक पारिवारिक झझटों और नौकरी की पाबन्दी में रहते हुए भी आप समाज-सेवा में संलग्न रहे। सन् १९२८ ई० में तिरहुत-प्रमण्डलीय रौनियार वैश्य-सभा के पाँचवें अधिवेशन का सभापतित्व आपने बड़े गौरव के साथ किया। इसी प्रकार, सन् १९५१ ई० में अखिलभारतीय रौनियार वैश्य-महासभा के ११वें अधिवेशन के सभापति-पद को भी अपने अलकृत किया।

आपके द्वारा पुस्तकालय-आन्दोलन को भी काफी प्राणवत्ता प्राप्त हुई। मारवाड़ी-हिन्दी-पुस्तकालय (बिहार) और महावीर पुस्तकालय की आपने सदा सेवा की। एक लम्बे अरसे तक आप ही उसके सयुक्त मन्त्री रहे। कार्यव्यस्त रहते हुए आपने साहित्यिक सेवा से अपने को कभी विमुख नहीं रखा। लगभग पचास वर्ष पूर्व से ही आपने हिन्दी में लिखना शुरू किया था। आपके द्वारा हिन्दी में लिखित अनेक निबन्ध 'गंगा', 'बालक', 'मारवाड़ी', 'अग्रवाल', 'वैश्य-बन्धु' आदि पत्रिकाओं में यथावसर प्रकाशित होते रहे हैं। हिन्दी में आपने लगभग पच्चीस पुस्तकें रची। आपके द्वारा लिखित एवं प्रकाशित पुस्तकों के नाम ये हैं—(१) कंगाल की बेटी (उपन्यास), (२) वीर लक्ष्मण, (३) त्यागी भरत, (४) बालक-विनोद, (५) बालिका-विनोद (एकांकी नाटक), (६) आदर्श विवाह, (७) जातीय संगठन, (८) कुरीति-निवारण, (९) सुनीति-संचारण, (१०) वैश्य-कर्म, (११) सरल शुभंकरी, (१२) पत्र-प्रभाकर, (१३) संगीत, (१४) बाल-व्यायाम, (१५) स्वास्थ्य-रक्षा, (१६) कोंहड़ा पाँड़े, (१७) ऐंठू सिंह, (१८) देव-माहात्म्य, (१९) छोटानागपुर का इतिहास, (२०) बेटी-बहू, (२१) गृहिणी, (२२) आदर्श नारी, (२३) आदर्श विमाता और (२४) पलामू का बृहत् इतिहास। इनमें करीब पन्द्रह पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं और पाँच अद्यावधि अप्रकाशित हैं। इन पुस्तकों के अविलम्ब प्रकाशन के लिए आप सतत जागरूक हैं। आपने अपने अदम्य उत्साह और सच्ची निष्ठा के कारण पलामू-जिला को सदा नवचेतना दी है और अभी भी आप अपना अमूल्य समय देकर हिन्दी-साहित्य की सेवा में रत हैं। सम्प्रति, आप अपने साप्ताहिक 'हलधर' के माध्यम से, समाज में जागरण का संदेश देते हुए 'डालटेनगंज' जैसे अनुर्वर भू-प्रदेश को संजीवनी शक्ति दे रहे हैं।

आपके साथ आपके पुत्र श्रीमदनप्रसाद गुप्त और श्रीललितप्रसाद गुप्त, दोनों ही आपके बताये मार्ग पर चलकर साहित्य और समाज की सेवा में संलग्न हैं।

उदाहरण

(१)

इस लीलामय जगत् में, समय-समय पर ऐसी-ऐसी घटनाएँ हो जाया करती है, जो मनुष्य को—सब कुछ जानते और तनिक इच्छा न होते हुए भी—अयोग्य कार्य करने के लिए बाध्य कर देती है। लालजी वर्त्तमान समाज-सुधारकों के पूरे समर्थक थे। वह अपने पुत्र का विवाह, सुधार की रीति पर करना चाहते थे। उन्होंने इसके लिए चेष्टा भी की, परन्तु उनके मार्ग में ऐसी-ऐसी घटनाएँ उपस्थित हुईं कि उन्हें बाध्य होकर यह विवाह करना ही पड़ा। बारात में व्यर्थ सैकड़ों आदमियों को ले जाने से दोनों पक्ष में क्या-क्या कठिनाइयाँ होती है, इसे वह जानते थे। नाच-तमाशे आदि में विशेष रुपये खर्च करना उन्हें पसन्द न था; पर बेचारे अपने अन्ध-परम्परा-भक्त हित-कुटुम्बियों के मारे लाचार थे। क्या करें, किसको नाराज करें—किसको खुश ! लेकिन नीति तो कहती है कि जो सबको खुश करना चाहता है, वह किसी को खुश नहीं कर पाता। आखिर, वही हुआ भी। बाराती भी असन्तुष्ट रहे और समधी से भी खटपट हो ही गई।[१]

(२)

कल भैया ने भौजी के लिये एक सुन्दर हार ला दिया। उसे देखकर मेरा मन भी ललच गया। मैंने भैया से जिद की कि मुझको भी ला दो। इसपर भैया ने तो कुछ नही कहा, भौजी चट बोल उठीं—"कहाँ से ला देंगे ? क्या कहीं से तोड़ा आ रहा है ? वर्षो से रटते रहने पर तो आज एक ही लाये हैं। यहाँ क्या भतार की कमाई है ? जब भतार के यहाँ जाना तब सोने का चाक गढ़वा लेना।" सच

---

१. 'कगाल की बेटी' (श्री हवलदारीराम गुप्त 'हलधर', प्रकाशन-काल नहीं), पृ० ३२।

कहती हूँ बहन ! ये बातें मुझे तीर-सी लगीं। मैं रोने लगी। भैया कुछ बोले नही, चुपचाप बाहर चले गये। भौजी ऐंठकर हाथ चमकाती और यह कहती हुई चली गईं कि "आँसू ढार रही है ! बाप रे बाप ! इतना गुमान।" कहो तो यह कैसी बात है ? इसपर भी कोई जीना चाहेगा ? आज माँ रहती तो भौजी ऐसा कहने पाती ? [१]

हीरालाल झा 'हेम'

आप भागलपुर-जिलान्तर्गत 'भ्रमरपुर' (थाना—बिहपुर) नामक ग्राम के निवासी पं० होरिल झा के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १६४६ वि० (सन् १८६२ ई०) की कार्त्तिक शुक्ल-एकादशी को हुआ था। [२] आपने पटना नॉर्मल स्कूल से प्रथम श्रेणी में बी० एम्० की परीक्षा पास की थी। इस परीक्षा में सम्पूर्ण प्रदेश में आपका स्थान सर्वोच्च था। उसके बाद आपने द्वितीय श्रेणी में मैट्रिक की परीक्षा पास की। आगे चलकर आपने 'विशारद' और 'काव्यतीर्थ' की उपाधियाँ भी प्राप्त की। जीविका के लिए आप सर्वप्रथम मधेपुरा (सहरसा) हाई स्कूल में अध्यापक के पद पर नियुक्त हुए थे। बाद में आप पटना नॉर्मल स्कूल में चले आये, जहाँ बहुत दिनों तक रहे। जीवन के अन्तिम दिनों में आप भागलपुर-स्थित मारवाड़ी-पाठशाला में चले आये थे।

पटना नॉर्मल स्कूल में अध्ययन करते समय ही आप कविवर पं० श्रीजनार्दन मिश्रजी 'परमेश' की प्रेरणा से काव्य-रचना करने लगे थे। यह क्रम आपने जीवन-भर जारी रखा। आपने अपनी साहित्य-रचना का वास्तविक आरम्भ सं० १६७४ वि० बतलाया है। एक बार मैथिल-महासभा के बाईसवें अधिवेशन में एक मैथिली-समस्या-पूर्त्ति में सर्वप्रथम होने के कारण महासभा की ओर से आपको स्वर्ण-पदक भी प्राप्त हुआ था। आपके द्वारा रचित और प्रकाशित पुस्तकाकार रचनाओं में—(१) मैथिली-भाषा-व्याकरण-भास्कर[३], (२) हिन्दी-व्याकरण-बूटी[४] तथा (३) ब्रह्मचारी[५] प्रमुख हैं। इनके अतिरिक्त आपकी और भी स्फुट रचनाएँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई थीं।[६]

---

१. 'बालिका-विनोद' (श्री हवलदारी राम गुप्त 'हलधर', सन् १६३८ ई०), पृ० २।

२. आपके द्वारा दिनांक १८ अप्रैल, सन् १६५५ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री के आधार पर।

३. मैथिली मे रचित। रमेश्वर प्रेस, दरभंगा से प्रकाशित।

४ खड़ीबोली मे रचित।

५. खड़ीबोली-गद्य में रचित।

६. आपकी अप्रकाशित पुस्तकाकार रचनाओ के नाम ये है—(१) 'चण्डी' (गद्य में सम्पूर्ण दुर्गा-सप्तशती की कथा), (२) वार्षिक कृत्य-निर्णय (हिन्दी), (३) महाकवि विद्यापति (निबन्ध) तथा (४) कोकिल-दूत (मैथिली में खण्ड-काव्य)।

उदाहरण

(१)

जब तक मनुष्य के शरीर में हृदय का पुर्जा जुड़ा है, उसे स्निग्ध करने, कठोरता के मोर्चे से बचाने के लिए कविता-स्नेह (तैल) नितान्त आवश्यक है। जिस समय मनुष्य समाज हृदयहीन हो जायगा, उस दिन कविता की आवश्यकता नहीं रहेगी। मनुष्यता के दो प्रधान अंग हैं। एक मस्तिष्क, दूसरा हृदय। विज्ञान मस्तिष्क है तो कविता हृदय। मस्तिष्क का पौधा विज्ञान की खाद से बढता है और हृदय की कली कविता के प्रकाश से खिलती है। मस्तिष्क का ढोल विज्ञान के डंके से बोलता है, पर हृदय की तन्त्री कविता के तार से गूंजती है।[1]

(२)

भक्तसिरमौर तेरा और क्या बयान करें,
हिन्दूधर्म नैया के सुघर खेवैया हो।
रामनाम-अमृत के रसिक पिवैया तुम,
विश्वबीच जीवन के अमर करैया हो।
भक्तिज्ञान-पचड़े के पूरे परखैया तुम,
कलिकाल मध्य जीव मारग देखैया हो।
माता हुलसी की गोद सफल करैया तुम,
मातृभाषा-प्रेम-बीज वपन करैया हो॥[2]

(३)

मनमोहन में न रमा मन को,
भटका फिरता पा नरतन है।

---

१. आपके द्वारा प्रेषित सामग्री से।
२. वही।

अति लोलुप लंपट लालची हो,
करता रहता सदा धन धन है।
करता नहीं मेल-मिलाप से काम,
सदा सब ही से अनबन है।
कवि 'हेम' हृदय हरिनाम नहीं,
यह जीवन भी कोई जीवन है।[1]

(४)

जानी नहि कर्म-धर्म-सदाचार नाम मन्त्र,
पात्रक विचार नहि सेखिये रखौने की।
भेष-भाषा-भाव भूलि, देश-दशा ज्ञान नहि,
पौरुष-परमान नहि गाथा सुनौने की॥
जातीय नेम नहि, मातृभूमि प्रेम नहि,
'हेम' नहि सत्संग, आशा के बढ़ौने की।
बैर-कूट प्रेम राखि, जाति-द्रोह-च्छेम राखि,
मैथिल सँ मेल नहि, मैथिले कहौने की॥[2]

★

हुबलाल झा[3]

आप मुँगेर-जिलान्तर्गत सोन्हौली-ग्राम (पोस्ट—सरोड़ा)-निवासी श्रीअशर्फी झा[4] के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९४७ वि० (सन् १८९० ई०) की आश्विन-विजयादशमी

---

१. आपके द्वारा प्रेषित सामग्री से।

२. वही।

३ आपके छोटे चाचा प० श्रीकेशवलाल झा 'अमल' हिन्दी के सुकवि एवं सुलेखक हैं। इन्होंने अपने सम्पादकत्व मे 'छाया' नाम की मासिक पत्रिका निकाली थी। इन्ही के कनिष्ठ भ्राता प० श्रीनवलकिशोर झा 'नवल', साहित्यालंकार हिन्दी के यशस्वी कवि एव लेखक है।

द्विज मैथिलकुल सान्डिली, श्रीअशर्फी सुत आहि।
जेजिवाडे पीचहि कहत मूल ग्राम है ताहि॥
वैद्यनाथ अनद दिशि, बीस कोस परिमाण।
वरुणा नदी के बाम तट, ग्राम सोन्हौली जान॥
—'भारत-भूषण' (हुबलाल झा, सन् १९२३ ई०), पृ० २५

४. यह झा-वंश सदा से इलाके मे अपनी विद्वत्ता के लिए प्रसिद्ध है। पं० श्रीअशर्फी झा के पिता पं० श्री गोपाल झा एक अच्छे मूर्त्तिकार और काली-भक्त थे। इनके पिता प० श्रीझारू झा भी एक अच्छे तान्त्रिक और संस्कृत के विद्वान् थे।

को हुआ था।[१] आपने अपने घर पर केवल संस्कृत की शिक्षा प्राप्त की थी, किन्तु अध्यवसाय से उर्दू, बँगला और फारसी भाषाओं पर भी अधिकार प्राप्त कर लिया था। प्राय: इन सभी भाषाओं में आप लिखने भी लगे थे। आपके रचना-काल का आरम्भ सं० १६५८ वि० माना जाता है। आपकी प्रकाशित पुस्तकों में 'भारत भूषण' (गद्य-पद्य) उल्लेखनीय है। इनके अतिरिक्त आपकी दो पुस्तकें—(१) 'श्रीकाली-कथा' और (२) 'भावाञ्जलि' (पद्य) अभीतक अप्रकाशित हैं। आप सन् १६६० ई० में परलोकगामी हुए। कहा जाता है कि आपने अपनी मृत्यु की तिथि अपने घरवालों को छह मास पूर्व ही बतला दी थी।

उदाहरण

(१)

ईश्वर एक हैं परन्तु तीन प्रकार से माने जाते हैं। सांसारिक जीवों के लिए सगुण ईश्वर; योगियों के लिए निर्गुण और ज्ञानियों के लिए सर्वव्यापक और यही ठीक है क्योंकि यदि योगी सगुण ईश्वर माने तो उनकी योगसिद्धि सम्पूर्ण न होगी और अज्ञान न मिटैगा। इसी प्रकार सांसारिक जीव यदि निर्गुण मानै तो उनका काम न चलैगा। इसलिए सनातन धर्म सर्व धर्मोत्तम है क्योंकि इस धर्मवाले जो सगुणोपासक है वे निर्गुण और सर्वव्यापक ही से सगुण सिद्ध करके भजन करते हैं परन्तु और धर्मवाले जैसे मुहम्मदी इत्यादि में ऐसा न होता है। ये लोग सांसारिक जीव हो करके निर्गुण उपासक हैं परन्तु सो भी ठीक न रहने देते।[२]

(२)

समयचक्र ही के फेर से राजा, रंक तथा दरिद्र औत्तानपाद होकर बैठता है। समय ही के फेर से कालीदास मूर्ख महाविद्वान् हो गये तथा कालचक्र ही से राजा प्रताप भानु लक्ष्मी और ज्ञानभ्रष्ट हो गये। इसी कारण से हमारे भारतवर्ष की भी अवनति हो गई है।

---

१. श्रीउग्रमोहन झा 'धवल', विशारद (साहित्य-सदन, सोन्हौली) द्वारा दिनाक १ अक्टूबर, सन् १६५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

२. 'भारत-भूषण' (वही), पृ० १।

समय के फेर से ब्रह्मण संध्या-तर्पण सब भूले। नित्यक्रिया जाती रही, लोगों ने यंत्र-मंत्र सब खोया। वेद भूल गये। वर्णाश्रम धर्म जाता रहा, इसके लिए सोच न करना चाहिए। परन्तु अपने धर्म को खूब दृढ रखना चाहिए क्योंकि यह कलियुग है। इसमें सनातन धर्म को विघ्न करनेवाले अनेक हुए हैं और होंगे परन्तु जो पुरुष दृढ़ व्रति है, वे प्राण जाने पर भी अपना धर्म न छोड़े है, न छोड़ेंगे।[1]

(३)

ईश्वर त्रय सगुणाअगुण, सर्वव्यापक जान।
सांसारिक हुबलाल अरु, योगी ज्ञानी मान॥
समयचक्र फिरतो रहै, पलक थीर ना होय।
याही ते हुबलाल कह, गिरि रज रज गिरि होय॥[2]

(४)

निन्दहु जनि निज धर्म को, है यामें बड़ दोष।
कोऊ सुनि हुबलाल कह, प्रीति करै या रोष॥
कथित ऋषिन की गूढ़ अति, ज्यहि त्यहि अर्थ न लाग।
त्यहिते द्विज हुबलाल कह, मूर्ख होंहि मह भाग॥[3]

---

१. 'भारत-भूषण' (वही), पृ० ३-४।
२. वही, पृ० १—२।
३. वही, पृ० ४—६।

परिशिष्ट १

[प्रस्तुत खण्ड से सम्बद्ध कुछ परिचय, जिनके विवरण बाद में प्राप्त हुए]

कार्त्तिकेयचरण मुखोपाध्याय

आप छपरा-नगर के 'कालीबाडी' नामक मुहल्ले के निवासी पं० श्रीकाली-किङ्कर मुखोपाध्याय[1] के आत्मज थे। आपका जन्म सं० १९५४ वि० (सन् १८९७ ई०) के भाद्र मास की शुक्ल-चतुर्दशी (गुरुवार) को हुआ था।[2] बचपन से ही हिन्दी-साहित्य के प्रति आपका प्रेम परिलक्षित होता था। छात्रावस्था से ही आप हिन्दी लिखने का सफल प्रयास करने लगे थे। आपके हिन्दी-प्रेम को पल्लवित कराने मे माँझी (सारन) के स्वनामधन्य बाबू राजवल्लभ सहायजी ने विशेष साहाय्य प्रदान कर आपको उत्साहित किया था। वे हिन्दी के प्राचीन कवियों की रचनाओं के बडे प्रेमी थे। हिन्दी के प्रति आपका घनिष्ठ अनुराग देखकर जब कभी कोई बंगाली सज्जन आपसे हिन्दी की निन्दा और बँगला की प्रशंसा करते तब आप तुरत उनसे तर्क करने को तैयार हो जाते थे और हिन्दी की प्राचीन महत्ता को प्रमाणित करके ही दम लेते थे।[3] इस प्रकार, आप हिन्दी-भाषी लोगों के गौरव-स्तम्भ रहे हैं। आपने हिन्दी की सेवा अनासक्त-भाव से की थी, जो स्मरणीय है। आपने हिन्दी को केवल दिया ही है, उससे कुछ लिया नही।

हिन्दी-प्रेम के कारण ही आप अपने दैनिक गृहस्थी-सम्बन्धी कार्यों के सम्पादन में भी उसीका प्रयोग करते थे। आपने अपना विवाह स्वयं आयोजित किया था। विवाह के पश्चात् आपने अपनी धर्मपत्नी श्रीमती नलिनीबाला देवी को भी अच्छी

---

१. हिन्दी के वर्त्तमान युग के उष:काल अर्थात् उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध मे जबकि बिहार में पत्र-पत्रिकाओ का सर्वथा अभाव था, आपके पिता एवं पितृव्य श्रीभवानीचरण मुखोपाध्याय ने छपरा में 'नसीम-सारन' नामक एक मुद्रणालय की स्थापना की थी। इसी प्रेस से तत्कालीन भारत-विख्यात साहित्यकार पं० अम्बिकादत्त व्यासजी के सम्पादकत्व मे 'सारन-सरोज' नामक एक मासिक पत्रिका का भी प्रकाशन हुआ था। अद्यावधि उसकी प्राचीन दुर्लभ प्रतियाँ पुस्तकालयो में प्राप्त होती है। यह पत्रिका कई वर्षों तक निकलने के बाद बन्द हो गई थी।

२. देखिए, 'बिहार के नवयुवक-हृदय' (वही), पृ० ६९, 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही), पृ० ५२७,; (हिन्दी-सेवी ससार' वही), पृ० ३४, 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही), पृ० ६७२(घ) और 'उत्तर-बिहार' (२८ जुलाई, सन् १९६० ई०), पृ० ५।

आपकी माता का नाम श्रीमती विधुमुखीदेवी था। आपके पूर्वज प्राय: ढाई सौ वर्षों से इस नगर मे रहते आ रहे है। इसके पूर्व वे बगाल मे रहते थे।

"बंगाल के शूर-वंशीय राजाओ ने कन्नौज से बगाल के-बर्दमान जिला-स्थित 'कालना' नामक ग्राम में जिन पाँच ब्राह्मणो को धर्म-प्रचार के लिए बुलाया था, उन्हीं मे आपका यह परिवार भी एक था।" —देखिए ,'बिहार के नवयुवक-हृदय' (वही), पृ० ६९।

३. वही।

हिन्दी सिखलाई और उनके मन में भी हिन्दी-प्रेम को इतना दृढ़ किया कि उन्होंने भी आगे चलकर हिन्दी में ही अपनी रचनाएँ प्रस्तुत कीं।[1] पति-पत्नी दोनो का हिन्दी-साहित्यानुराग प्रशंसनीय था। आप दोनो का दाम्पत्य-जीवन भी सर्वथा मधुर रहा। पंडित अमृतलाल चक्रवर्त्ती, बा० गिरिजाकुमार घोष, नलिनीमोहन सान्याल तथा इण्डियन प्रेस के प्रतिष्ठाता स्व० बाबू चिन्तामणि के बाद हिन्दी से इतना अधिक अनुराग रखनेवाले बंगाली सज्जन आप ही थे।

अध्ययन के अनन्तर आपने पाँच वर्षा तक कलकत्ता से प्रकाशित होनेवाले दैनिक 'भारत-मित्र' में सहकारी सम्पादक का कार्य-सम्पादन किया। इस पत्र में रहते हुए आपने सम्पादन-कला में अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली। 'भारत-मित्र' से मुक्त होने पर आप कलकत्ता के सुप्रसिद्ध साहित्य-शिल्पी बाबू रामलालजी बर्मन के यहाँ पुस्तक-लेखन का कार्य करने लगे। वहाँ रहते हुए आपने संशोधन, अनुवाद आदि बहुविध कार्य किये। उसके बाद आपने 'हिन्दी-दारोगा-दफ्तर' के सम्पादन और 'हिंदू-पंच' के निरीक्षण का कार्य सम्पन्न किया। पं० ईश्वरीप्रसादजी के जीवन-काल से ही 'पंच' के सम्पादन और प्रकाशन आदि समस्त कार्यों में आप विशेष तत्पर रहा करते थे। वस्तुत' आपने ही उसका सम्पादन-कार्य अनेक वर्षों तक सँभाला।

साहित्य-साधना के साथ-साथ आपने कृषि और कुटीर-शिल्प की दिशा में भी अद्भुत प्रयोग किये थे। आपके द्वारा विहित कृषि एवं शिल्प-प्रयोग जीवन को सर्वथा उपयोगी बनाने में सफल सिद्ध हुए। आप शारीरिक और मानसिक दोनो प्रकार से अत्यधिक परिश्रम क्षमता-सम्पन्न व्यक्ति थे।

आपके द्वारा सम्पादित पत्र-पत्रिकाओं की संख्या छह-सात से भी ज्यादा है। 'हिन्दू पंच', 'भारत-मित्र', 'विजय', 'बाँसुरी', 'हलधर' आदि अनेक पत्र आपके ही सम्पादकत्व में फूले-फले। इनके अतिरिक्त आपने दर्जनों पुस्तकें लिखकर हिन्दी-साहित्य की श्रीवृद्धि की थी। आपके द्वारा लिखित, अनूदित एवं सम्पादित लगभग बारह दर्जन पुस्तकें बतलाई जाती हैं। आपकी भाषा सरल होने के साथ-साथ पुष्ट, प्रौढ़ और प्रांजल होती थी। यावज्जीवन आप प्रायः गम्भीर विषयों पर ही लेखनी चलाते रहे। आपके द्वारा लिखित पुस्तकों में कुछ प्रमुख पुस्तकों के नाम इस प्रकार हैं—(१) मुस्तफा कमालपाशा, (२) सती सुभद्रा, (३) मणिपुर का इतिहास, (४) सावित्री-सत्यवान, (५) नल-दमयन्ती, (६) सती पार्वती, (७) सीतादेवी, (८) शैव्या-हरिश्चन्द्र, (९) सती शकुन्तला, (१०) देवी द्रौपदी, (११) श्रीराम-कथा, (१२) हिन्दी-वर्ण-परिचय (दो भाग), (१३) बाग-बगीचा, (१४) साग-सब्जी, (१५) कृषि और कृषक, (१६) किराने की खेती, (१७) भदई-फसलों की खेती, (१८) रबी-फसलों की खेती, (१९) तेलहन की खेती, (२०) चरित्रहीन, (२१) चन्द्रशेखर, (२२) कपालकुण्डला, (२३) युगलांगुलीय, (२४) राधारानी, (२५) शैतानी-शरारत, (२६) शैतान की नानी, (२७) खूनियों का जत्था, (२८) रणभूमि-रिपोर्टर, (२९) टर्कों का कैदी, (३०) कैदी की करामात, (३१) जर्मन-जासूस, (३२) पिशाचिनी, (३३) चीना सुन्दरी, (३४) जासूसी गुलदस्ता, (३५) जासूस की डायरी, (३६) जासूस की झोली,

---

१. इन्होंने अपनी रचनाओ मे 'सती शकुन्तला' नामक एक सुन्दर पुस्तक हिन्दी मे ही लिखी थी।

(३७) रेगिस्तान की रानी, (३८) हवाई किला, (३९) कापालिक डाकू, (४०) चाण्डाल-चौकड़ी, (४१) विद्रोही राजा, (४२) कलकत्ता-रहस्य (दो भाग) एवं (४३) कुटीर-शिल्पकला[१]। सन् १९४० ई० के आसपास आपकी इहलीला समाप्त हो गई।

उदाहरण

(१)

यद्यपि प्रातःकाल मही का दृश्य मनोहर होता है।
पवन मन्द गति बह बह करके कुसुम सुरभि बहु ढोता है॥
बालातप की रश्मि-राशि भी नील गगन में छाती है।
जिन्हें देखकर कमल कली निज ठंढो करती छाती है॥
मृदु कलरव से नदियाँ गाकर सिन्धु-मिलन को धाती हैं।
नीड़ों से निज चिड़ियाँ उड उड़ गान मनोरम गाती हैं॥
सूर्य-किरण से पुष्प निचय के सूख अश्रु सब जाते हैं।
पाकर इष्ट हृदय का अपने सब आनन्द मनाते है॥
अलि-दल टूट-टूट फूलों पर मधुमय रस ले जाते है।
भूँ-भूँ स्वर से गा-गाकर वे श्रवण सुधा बरसाते हैं॥
उठते हैं रवि को लख नभ में कार्यलीन नर होते हैं।
कृषक-वृन्द तज आलस अपने खेत जोतते बोते हैं॥
दिन के श्रम से थके सूर्य फिर मातृ-क्रोड़ में सोते है।
सारा तेज प्रताप रश्मि-बल क्षणभर में सब खोते है॥
चारों ओर सुधाकर के सँग सती यामिनी आती है।
प्राणाधार चातकी पाकर सारा क्लेश भुलाती है॥
किन्तु मुझे हा! बिना तुम्हारे सुन्दर दृश्य न भाते है।
ठंढी वायु गरम लगती है प्राण व्यथित हो जाते है॥
नदियों, भ्रमरों और खगों की प्रिय बोली दुख देती है।
कुसुम सुरभि यह बिना तुम्हारे सब धीरज हर लेती है॥[१]

---

१. 'बिहार के नवयुवक-हृदय' (वही), पृ० ७३-७४।

(२)

५ मार्च (१९४०) को मैं छपरे से रवाना हुआ। ६ को रामगढ़ पहुँचा। श्री लक्ष्मीबाबू को न तो मैं पहचानता था और न वे मुझे। फिर भी मुलाकात होते ही उन्होंने ऐसा व्यवहार किया, मानों मैं उनका बहुत दिनों का परिचित हूँ। सैकड़ों कार्यों में व्यस्त रहते हुए भी उन्होंने प्रत्येक अवसर पर, जब कभी मैं अपने प्रयोगों और खोजों के विषय में बातें करने गया, बड़े ध्यान से मेरी बातें सुनीं।

× ⊠ ⊠ ⊠

२० मार्च तक मैं कांग्रेस प्रदर्शनी में रहा। इतने दिनों में शायद पाँच-सात बार ही मैंने उनसे मुलाकात की। पर, उनके सद्व्यवहार, उनकी कर्मण्यता, उनकी सरलता और उनके सहज-सौजन्य ने मुझे मोह-सा लिया।

बातों-ही-बातों में एक दिन उन्होंने मुझसे कहा—"आप श्रीमान् राजेन्द्रबाबू से मिलिये।" उन्होंने एक पुर्जा भी राजेन्द्रबाबू के नाम लिख दिया। दूसरे दिन मैं राष्ट्रपति राजेन्द्रबाबू के दर्शनों को गया।[१]

कालीकुमार मुखोपाध्याय

आप भागलपुर-जिलान्तर्गत 'डुमरामा' (थाना—अमरपुर) नामक स्थान के निवासी श्रीविद्यानन्द मुखोपाध्याय के पुत्र हैं।[२] आपका जन्म सन् १८९६ ई० (शकाब्द १८१७) की फाल्गुन-शुक्ल-चतुर्दशी (गुरुवार) को हुआ था।[३] आपने सन् १९२६ ई० में पटना-विश्वविद्यालय से अँगरेजी में, सन् १९२७ ई० में कलकत्ता-विश्वविद्यालय से हिन्दी में और फिर सन् १९२९ ई० में कलकत्ता-विश्वविद्यालय से ही उर्दू में एम्० ए० की परीक्षाएँ पास की थीं। जीविका के लिए आजीवन आप शिक्षण का कार्य ही करते रहे।

---

१. 'उत्तर-बिहार' (साप्ताहिक, २८ जुलाई, सन् १९६० ई०), पृ० ६।

२. आपके पूर्वज बहुत पहले बंगाल से बिहार चले आये थे।

३. आपके द्वारा दिनांक २७ मई, सन् १९५७ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री से।—देखिए, 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ६७२ ह) तथा 'हिन्दी-सेवी संसार' (वही, पृ० ३४) भी।

आप क्रमशः भागलपुर, दुमका और छपरा के जिला-स्कूलों और दरभंगा के नॉर्थब्रुक हाई स्कूल में प्रधानाध्यापक के पद पर रहे।

मूल रूप से बँगला-भाषी होते हुए भी आप अपनी मातृभाषा हिन्दी ही कहा करते हैं। आपके अनुसार आपका रचना-काल सन् १९३१ ई० से आरम्भ होता है। आपने अपनी रचनाएँ भी हिन्दी में ही कीं। आपने अधिकतर आलोचनात्मक लेख ही लिखे। आपके द्वारा लिखित लेख 'सरस्वती', 'माधुरी' आदि पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ करते थे। आपके द्वारा लिखित पुस्तकों के नाम ये हैं—(१) समालोचना-सप्तक, (२) जिज्ञासु, (३) हमारी राष्ट्रीय शिक्षा कैसी होनी चाहिए, (४) समालोचना-पंचायत, (५) संसार-सार-संग्रह-गल्प और (६) पगडंडी।[१]

उदाहरण

आज का संयोग स्वर्णिम,
कल नहीं फिर आस उसकी।
आज का संभोग दैविक,
कल उतरती लाश उसकी।
आज का उल्लास जो है,
कल नहीं आधार उसका।
आज का जो स्रोत बहता,
कल नहीं संचार उसका।
आज का जो बोलबाला,
कल नहीं फिर मोल उसका॥[२]

कीर्त्यानन्द सिंह

आप पूर्णिया जिलान्तर्गत सुप्रसिद्ध बनैली-राज के अधीश्वर महाराज श्रीमान् लीलानन्द सिंहजी के कनिष्ठ पुत्र थे। आपका जन्म सन् १८८३ ई० के २२ सितम्बर

---

१. इनमें केवल प्रथम पुस्तक पब्लिशिंग हाउस, मुँगेर से प्रकाशित हुई थी। शेष पुस्तकें सम्भवतः अप्रकाशित ही हैं।

२. आपके द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री से।

को हुआ था।[1] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई थी। अँगरेजी पढ़ाने के लिए एक अँगरेज शिक्षक नियुक्त किये गये थे। संस्कृत, हिन्दी तथा अन्य विषयों को पढाने के लिए अलग-अलग शिक्षक रखे गये थे। उसके बाद आपकी स्कूली शिक्षा पूर्णिया जिला-स्कूल में हुई। प्रवेशिका-परीक्षा में उत्तीर्ण होकर आप इलाहाबाद के म्योर-सेण्ट्रल कॉलेज में पढ़ने लगे और आगे चलकर उसी विश्वविद्यालय से आप स्नातक हुए। वहाँ आपके प्राइवेट ट्यूटर थे—मिस्टर जे० जी० जेनिंग्स, जो उसी कॉलेज में अँगरेजी के अध्यापक थे। उस समय तक बिहार के प्राचीन प्रतिष्ठित किसी भी राजवंश में कोई स्नातक नहीं हुआ था। अपने स्वाध्याय के बल पर आप वैज्ञानिक विषयों के भी पूर्ण ज्ञाता बन गये थे। अपने इस ज्ञान का लाभ आप व्यावहारिक जीवन में भी उठाते थे। आप एक अच्छे 'मोटरिस्ट' थे। खेलकूद में भी आपकी विशेष दिलचस्पी थी। फुटबॉल के तो आप अद्वितीय खेलाड़ी थे। इसके अतिरिक्त 'पोलो', 'टेनिस', 'बिलियर्ड' आदि खेलने में भी आपने निपुणता प्राप्त की थी। आपकी आखेट-निपुणता से तो बिहारवासी भलीभाँति परिचित हैं। वास्तव में, भारतीय आखेट-विद्या के आप पूर्ण ज्ञाता थे। आपकी गणना भारत-विख्यात साहसी शिकारियों में होती थी। आपके द्वारा शिकार में मारे गये जन्तुओं के बहुमूल्य चर्मादि स्मारक-स्वरूप संगृहीत किये गये हैं। आप जैसे आखेट-वीर थे वैसे दानवीर भी। हिन्दू-विश्वविद्यालय को एक लाख रुपये और भागलपुर के टी० एन्० जे० कॉलेज (अब टी० एन्० बी० कॉलेज) को छह लाख रुपये आपने दिये थे। आपको संगीत-विद्या की भी अच्छी जानकारी थी। विद्वानों तथा गुणी जनों का सत्संग आपके लिए अत्यधिक आनन्दप्रद था। आपने अपने साथ कई बड़े-बड़े विद्वानों को आश्रय प्रदान किया था। बिहार के सुविख्यात हिन्दी, भोजपुरी एवं अँगरेजी के कवि श्रीरघुवीर नारायण आपके ही 'निजी सचिव' थे।

आप प्रान्त की अनेकानेक प्रमुख संस्थाओं एवं समितियों के अध्यक्ष थे। अनेक वर्षों तक आप बिहार एवं उड़ीसा-विधान-परिषद् के सदस्य रहे। उसके पूर्व आप बंगाल विधान-परिषद् के सदस्य थे। विभिन्न विधान-परिषदों में आपके कार्यों की भूरि-भूरि प्रशंसा हुई।

हिन्दी-भाषा और साहित्य के प्रति आपकी अपार श्रद्धा-भक्ति थी और इन दोनों के विकास में आपका अपूर्व सहयोग रहा। आपने अनेक संस्थाओं और साहित्य-सेवियों को आर्थिक सहायता देकर उन्नत और उत्साहित किया था। बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का विशाल भवन पटना में आपही के नाम पर बना है, जिसके लिए आपके सुपुत्र कुमार श्यामानन्द सिंह और कुमार तारानन्द सिंह ने दस हजार रुपये दिये थे। इसके अतिरिक्त आपने मासिक 'मनोरंजन' की भी सहायता दो हजार रुपयों से की थी और

---

१. 'साहित्य-पत्रिका' (मासिक; आरा, खण्ड ८, अंक ९, सितम्बर, सन् १९१३ ई०), पृ० ३३—३७। 'बिहार-विभाकर' मे आपकी जन्म-तिथि २५ सितम्बर, सन् १८८३ ई० अंकित है। —देखिए, वही, पृ० ३५२। —देखिए, 'बिहार की साहित्यिक प्रगति' (वही), पृ० २४९ तथा 'सरस्वती' (मासिक, मई, सन् १९२६ ई०), पृ० ६२४—२८ भी।

उसके सम्पादक श्रीईश्वरीप्रसाद शर्मा को 'रामचरित' नामक उनकी पुस्तक पर एक सहस्र मुद्रा का पुरस्कार रेशमी वस्त्रों के साथ दिया था।[१] भागलपुर में जब (सन् १९१३ ई०) चतुर्थ अखिलभारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का अधिवेशन हुआ तब आपही उसके स्वागताध्यक्ष हुए। फिर, जब मुजफ्फरपुर में बिहार-प्रादेशिक हिन्दी साहित्य-सम्मेलन का छठा अधिवेशन (सन् १९२४ ई०) सम्पन्न होने जा रहा था तब उसके सभापतित्व के लिए भी आपका ही नाम प्रस्तावित हुआ। आपने अँगरेजी में 'पूर्णिया—ए शिकार लैण्ड' नामक एक पुस्तक की रचना भी की थी, जिसका हिन्दी-अनुवाद श्रीलक्ष्मीनारायण 'सुधांशु' ने 'गंगा' में प्रकाशित कराया था। पुस्तक-भण्डार, लहेरियासराय से प्रकाशित हिन्दी-पुस्तक 'शिकारियों की सच्ची कहानियाँ' में भी इसके अंश मुद्रित हैं। हिन्दी में आपके द्वारा लिखित कुछ स्फुट लेख भी, विशेषतः आखेट-सम्बन्धी, प्रकाशित हुए थे। अपने जीवन के अन्तिम दिनों में आप आखेट-सम्बन्धी अपने अनुभवों पर आधारित एक ग्रन्थ की रचना कर रहे थे, जो सम्भवतः पूरा नहीं हो सका। आप सन् १९३८ ई० की १९ जनवरी (बुधवार) को काशी में कैलासवासी हुए।

उदाहरण

(१)

जिस समय हिन्दी में कविता का सूर्य प्रखर प्रतिभा से चमक रहा था, उसी समय मिथिला में मैथिलकोकिल विद्यापति अपने सुन्दर और कोमल-कान्त पदों से काव्यानुरागियों और भक्तजनों को स्वर्गीय आनन्द प्रदान कर रहे थे। यद्यपि आपकी रचनाएँ मैथिली-भाषा मे है, तथापि किसी को इस बात से आपत्ति नही हो सकती कि वे हिन्दी की ही सम्पत्ति हैं। मैथिली हिन्दी का ही एक रूप है और जिस जमाने में ये कविताएँ आपने लिखी थी, उस समय हिन्दी का यह रूप नहीं था, जो आज है। उस समय मैथिली में लिखी हुई ये कविताएँ केवल मिथिला या बिहार प्रान्त की ही सीमा तक न रहीं, बल्कि पड़ोसी

---

१ आपके भ्रातुष्पुत्र कुमार रमानन्द सिंह ने भी शर्माजी को, 'प्रेमगगा' नामक पुस्तक समर्पित करने के उपलक्ष्य मे पाँच सौ रुपये का पुरस्कार दिया था। आपके ही दूसरे भ्रातुष्पुत्र कुमार कृष्णानन्द सिंह ने सुल्तानगज (भागलपुर) से 'गगा' नामक प्रसिद्ध साहित्यिक पत्रिका वर्षों तक प्रकाशित की थी। आपके राज-परिवार का साहित्यानुराग बिहार-प्रान्त में आदर्श है —देखिए, 'बिहार की साहित्यक प्रगति' (वही), पृ० २४९।

बगाल में भी जाकर थोड़े समय के भीतर ऐसी सर्वप्रिय हुई कि आजतक वहाँ की कविता का आदि-आदर्श विद्यापति की रचना ही मानी जाती है। थोड़े ही दिन पहले तक बंगाली लोग इसी भ्रम में थे कि विद्यापति बंगाली थे ; पर अब उनका यह मोह मिट गया है और पुष्ट प्रमाणों के सामने उनकी निरी धारणा का कोई मूल्य शेष नही रह गया है। इधर आरा की नागरी-प्रचारिणी सभा ने टीका-टिप्पणियों से युक्त तथा विद्यापति की गवेषणापूर्ण जीवनी के साथ उनकी रचनाओं का एक संग्रह 'मैथिलकोकिल विद्यापति' के नाम से निकालकर हिन्दी-संसार को भी इन्हें अपने प्राचीन कवि-मण्डल में उच्च स्थान देने के लिए बाध्य कर दिया; नहीं तो सिवा मिथिला के अन्य हिन्दी-भाषी प्रान्तों में इनकी उतनी प्रसिद्धि नहीं थी।[१]

गोवर्द्धन गोस्वामी

आप पटना-नगर के 'गायघाट' नामक मुहल्ले के निवासी स्वनामधन्य श्रीराधालाल गोस्वामी के पुत्र थे। आपका जन्म सन् १८६४ ई० (सं० १९५१ वि०) की कार्त्तिक-शुक्ल-प्रतिपदा के दिन हुआ था।[२] बचपन से ही आप बड़े तेजस्वी, कुशाग्रबुद्धि और श्रमशील थे। हिन्दी के प्रति अनुराग भी आपमें बाल्यावस्था से ही था। श्रीराधाचरण गोस्वामी विद्यावागीश के ज्येष्ठ पुत्र श्रीभैरवचरण गोस्वामी से आपका विशेष सौहार्द था। आप दोनों भाई-भाई की तरह आरम्भ से ही पठन-पाठन और खेल-कूद में सम्मिलित रहते थे। बाद में युग्मनाम से आपके साहित्य का प्रकाशन भी होने लगा। गायघाट के श्रीचैतन्य-पुस्तकालय और चैतन्य-सभा के मन्त्री रहकर, आपने हिन्दी-प्रचार-प्रसार की दिशा में श्लाघनीय सेवा की थी। इसी बीच आप स्वतन्त्र लेखन के साथ-साथ अनेक उपयोगी ग्रन्थों के अनुवाद आदि का कार्य भी सफलतापूर्वक करते रहे, जिनमें अधिकांश अप्रकाशित ही रह गये। सं० १९९८ वि० की ज्येष्ठ शुक्ल-पूर्णिमा को आप परलोकगामी हुए।

---

१. 'बिहार की साहित्यिक प्रगति' (वही), पृ० २५४-५५।

२. श्रीचैतन्य-मन्दिर (गायघाट, पटनासिटी, पटना) से प्राप्त सूचना के आधार पर

उदाहरण

(१)

गौरनाम को करो प्रचार, भवसागर से उतरो पार।
मन में कर निश्चय अनुराग, मूरख चित्त चेत लो जाग।
करो कीर्त्तन प्रेम समाज, खोल मृदंग झाँझ सब साज।
मुसलमान इक काजी नीच, बड़ो दुष्ट हो जग के बीच।
कर उद्धार अगाड़ी गए, हरिदास प्रभु सँग में लए।

× × × ×

गौर गौर सब मिलके कहो, वृन्दाविपिन सघन मे रहो।
गौर-गोबर्द्धन दोनों दास, नित उठ करैं चरन की आस ॥[1]

(२)

प्रभु अनन्दन जगत वन्दन, मेरी ओर निहारिये।
निज दास आपनो जान स्वामी, भव सों पार उतारिये ॥
जय जय निमाई प्रेमदाता, प्राणधन सब दुख हरन।
सब मिलि निताई के अनुज, के चरण की गहु लो सरन ॥
नदिया बिहारी पद कमल, मम हृदय में अनुराग हो।
जय गौर षड़ भुज महा प्रभु, भक्ति के प्रादुर्भाव हो ॥
नदिया नागर पावन कियो, तारन पतित जग से कियो।
राजा को संशय दूर कर, धरि षड् भुजा दर्शन दियो ॥
कलि में प्रभु अवतार ले, उद्धार पतितन को कियो।
काजी जगाई से पतित को, चित्त आकर्षण कियो ॥

× × × ×

नित प्रात के उठते समय, सह भक्ति जो जन गावहीं।
कहै गौर गोबर्द्धन दोऊ, निश्चय परम पद पावहीं ॥[2]

---

१. श्रीचैतन्य-मन्दिर (वही) से प्राप्त।

२. वहीं से प्राप्त।

चन्द्रशेखर पाठक

आप पटना-जिलान्तर्गत 'बिहारशरीफ' नामक स्थान के निवासी पं० माधोराम पाठक[१] के पुत्र थे। आपका जन्म सन् १८८६ ई० (सं० १९४३ वि०) ज्येष्ठ-कृष्ण-एकादशी को हुआ था[२]। जब आपकी उम्र कुल आठ वर्ष की थी, तभी आपके पिता स्वर्गवासी हो गये। पिता के देहान्त के बाद, आपकी शिक्षा आपके मौसेरे दादा 'बिहार-बन्धु' के यशस्वी सम्पादक पं० केशवराम भट्ट के निर्देशन में हुई। बिहारशरीफ के हाई स्कूल में आपने एण्ट्रेन्स तक शिक्षा पाई थी। उसके बाद सन् १९०२ ई० में भट्टजी का देहान्त हो जाने के बाद आप असहाय हो गये।

स्व० पं० केशवराम भट्टजी ने ही आपको शुद्ध हिन्दी लिखना सिखलाया था। उनके द्वारा स्थापित बाल-सभा से, जिसमें स्कूल में पढ़नेवाले लड़के हिन्दी में लेख आदि लिखकर सुनाया करते थे, आपको हिन्दी-लेखन की दिशा में विशेष प्रेरणा मिली। तत्पश्चात् श्रीभट्टजी जब दिवंगत हो गये तब आप 'बिहार-बन्धु' में लेख लिखने लगे। इस बीच अस्वस्थ होने पर स्वास्थ्य-लाभ के लिए जब आप काशी गये, तब आपने वहाँ 'रमा' नामक उपन्यास (दो भागों में) लिखा, जिसे चुनार के जाह्नवी प्रेस ने सन् १९०७ ई० में प्रकाशित किया था। उस समय आपकी उम्र कुल बीस वर्ष की थी। उसके बाद, आप 'चन्द्रकान्ता' के सुप्रसिद्ध लेखक बाबू देवकीनन्दन खत्री के साथ हिन्दी-सेवा का कार्य करने लगे। इसी क्रम में, आपने 'मदालसा' और 'अर्थ में अनर्थ' नामक दो पुस्तकें रचकर प्रकाशित कराईं।

काशी से नागपुर जाकर लगभग दो वर्षों तक आपने बड़ी योग्यता के साथ 'मारवाड़ी' (साप्ताहिक) का सम्पादन किया। वहाँ से 'बड़ा बाजार-गजट' के सम्पादक नियुक्त होकर आप कलकत्ता चले आये, जहाँ आठ मास तक रहे। उसके बाद पत्र-सम्पादन का कार्य छोड़कर आप अपना विशेष समय पुस्तक-रचना में देने लगे। अपने जीवन के अन्तिम दिनों में आप कलकत्ता के सुविख्यात आर० डी० बाहिती ऐण्ड कम्पनी के व्यवस्थापक-पद पर कार्य कर रहे थे। उक्त कम्पनी के विकास का श्रेय, वास्तव में आपको ही है।

आप बड़े निष्ठावान्, आस्तिक, सहृदय, मधुरभाषी एवं कर्मठ पुरुष थे। साथ ही, आप कलात्मक रुचि के साथ-साथ बड़े शौकीन मिजाज के व्यक्ति थे। रहन-सहन, खानपान, वेशभूषा आदि में स्वच्छता और सुन्दरता का बहुत ध्यान रखते थे।

आपकी गणना हिन्दी के प्रसिद्ध उपन्यास-लेखकों में होती थी। आपके मौलिक उपन्यासों में कुछ प्रमुख के नाम इस प्रकार हैं——(१) वारांगना-रहस्य, (२) विलासिनी-

---

१. इनके पूर्वज बहुत पहले ही महाराष्ट्र से आकर 'बिहारशरीफ' (पटना) में बस गये थे। ये स्वयं अपने नगर के एक नामी मुख्तार और प्रतिष्ठित रईस थे। संस्कृत-साहित्य पर इनकी अपार श्रद्धा तो थी ही, संगीत के प्रति भी असीम अनुराग था।

२. देखिए—'मारवाड़ी सुधार' (वर्ष २, अंक ४; पौष, सं० १९७९ वि०) में प्रकाशित श्रीनवरंग तुलसान (आरा) का लेख। 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ६४०-४१) में आपका जन्म-काल सं० १९४४ वि० माना गया है।

विलास, (३) शशिबाला, (४) भीमसिंह, (५) शोणित-चक्र, (६) हेमलता, (७) आदर्श लीला, (८) कृष्णवसना सुन्दरी, (९) लीला, (१०) प्रतिमा-विसर्जन, (११) मायापुरी[१], तथा (१२) विचित्र समाज-सेवक। इनके अतिरिक्त आप 'भारती' नामक एक मौलिक उपन्यास की रचना कर रहे थे। कहा नहीं जा सकता, उसके प्रकाशन का क्या हुआ। इन मनोरंजक एवं शिक्षाप्रद उपन्यासों के अलावा आपने कुछ वीरो एवं समाजसेवियों की जीवनियाँ भी लिखीं, जिनमें निम्नलिखित प्रसिद्ध हुईं—(१) कर्मवीर महात्मा गांधी, (२) महाराणा प्रताप, (३) नेपोलियन बोनापार्ट, (४) लार्ड किचनर, (५) सिकन्दरशाह, (६) पृथ्वीराज तथा (७) लाला लाजपत राय। इनके साथ ही आपने (१) सन् सत्तावन का गदर और (२) पंजाब का भीषण हत्याकाण्ड नामक पुस्तकों की रचना कर राष्ट्रीय साहित्य-कोष को भी समृद्ध किया।[२] आपके द्वारा अनूदित ग्रन्थों में सबसे प्रमुख और उपयोगी 'गोधन' बतलाया जाता है। आप सन् १९०७ ई० में स्वर्गवासी हो गये।

उदाहरण

(१)

गुलाब का फूल बड़ा सुन्दर है—परन्तु नित्य-प्रति देखते रहने के कारण उसमें नवीनता नहीं रहती, प्रवृत्ति का आकर्षण उसकी ओर से हट जाता है, परन्तु केतकी का फूल वैसा सुन्दर और सुहावना न रहने पर भी, जब पहली बार आँखों के सामने आता है, तो उसपर प्रवृत्ति का झोंक जा पहुँचता है, उसे ग्रहण करने की इच्छा होती है। ठीक यही दशा दिग्विजय की भी हुई। कांग्रेस में उसे नवीनता दिखाई दी, वहाँ उपस्थित मनुष्यों और नेताओं में उसे नवीनता दिखाई दी, उनकी बातों में, उसे ज्ञान का महासागर दिखाई दिया, उनकी भाव-भङ्गी और उनके कर्म्म में, उसे धर्म्म की झलक दीख पड़ी—दिग्विजय मन ही मन सोचने लगा—यही तो वह कर्म्म है, जिसे

१. इस उपन्यास की रचना सम्भवतः अँगरेजी के प्रसिद्ध उपन्यास 'वैनिटी-फेयर' की प्रेरणा से हुई थी।

२. इनमे अधिकांश पुस्तको को आपने अपनी 'पाठक-कम्पनी' द्वारा प्रकाशित किया था। आपकी कई पुस्तकें कलकत्ता के ही अन्य प्रसिद्ध प्रकाशको द्वारा भी प्रकाशित हुई थी।

बाबा नित्य-प्रति बैठकर समझाया करते है, रामायण बालकाण्ड की कितनी ही चौपाइयो का सार तो इनके कार्य मे दिखाई देता है।[1]

(२)

इस संसार में जन्म लेकर जिसने देश-सेवा की ओर ध्यान न दिया; जिसने अपनी मातृभूमि के लिए कष्ट सहना स्वीकार न किया; जिसने अपने समाज की उन्नति अथवा अवनति पर लक्ष्य न दे उसे अधोगति से ऊपर उठाने का उद्योग न किया; जो किसी न किसी प्रकार से भी अपने देश के काम न आया—उसका जीवन वृथा है और उसका इस वसुन्धरा पर जन्म ग्रहण करना निष्फल है। वह ईश्वर के आगे उसके नियम का पालनेवाला कहलाकर स्वर्ग का अधिकारी न होगा। उसके स्वार्थ पर बन्धु-बान्धवों के अतिरिक्त कोई भी दूसरा उसे अपना समझकर उसके लिए आँसू न बहायगा और वह जबतक जीवित रहेगा, इस पृथ्वी का भारस्वरूप होता हुआ अंत में चिन्तानल में दग्ध हो जायगा—परन्तु मृत्यु के समय उसके हृदय में शान्ति न रहेगी। वह मरने पर भी जीवित न रह सकेगा; क्योंकि वह अपनी कीर्ति स्थापित नही कर गया है, उसकी मृत्यु के साथ ही साथ उसका नाम निशान भी इस संसार से चला जायगा।[2]

★

जगतनारायण लाल

आप शाहाबाद-जिला के 'आँखगाँव' नामक ग्राम के निवासी श्रीभागवत प्रसादजी के आत्मज थे। आपका जन्म सन् १८९६ ई० (सं० १९४७ वि०) की ३१ जुलाई को हुआ था।[3] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा आरा में हुई। तदनन्तर, आपका अध्ययन

१. 'भारती' (पं० चन्द्रशेखर पाठक, सं० १९९१ वि०), पृ० १५।

२. 'लॉर्ड किचनर' (चन्द्रशेखर पाठक, सं० १९७४ वि०), पृ० १७२।

३. —देखिए 'बिहार-अब्दकोश', (वही), पृ० २१६ तथा डॉ० बजरंग वर्मा, बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद, पटना-४ के सौजन्य से प्राप्त सूचना के आधार पर। उक्त सामग्री के अतिरिक्त आपके परिचय-लेखन मे 'हिन्दी-सेवी संसार' (वही, पृ०-८७), 'बिहार-अब्दकोश' (वही, पृ० २१६), 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ५७८) तथा 'मिश्रबन्धु-विनोद' (वही, पृ० ४५६) से भी सहायता ली गई है।

गाजीपुर में हुआ। उसके बाद आपने इलाहाबाद-विश्वविद्यालय में प्रवेश किया। उस विश्वविद्यालय से आपने सन् १९१७ ई० तक एम० ए०, एम० डी० और एल्-एल्० बी० की उपाधि-परीक्षाएँ पास की।

एल्-एल्० बी० पास करने के बाद ही, सन् १९१७ ई० में आपने पटना-न्यायालय में वकालत शुरू कर दी। वकालत करते हुए आपने बिहार की सार्वजनिक संस्थाओं से अपना सम्बन्ध बनाये रखा। सार्वजनिक सेवा के प्राय सभी कार्यों मे आप बड़ी दिलचस्पी से भाग लेते रहे। सन् १९२०-२१ ई० के देशव्यापी असहयोग-आन्दोलन में आपने भाग लिया और सन् १९२१ ई० में इसी कारण आपने जेल की यातना भी सही। जेल से मुक्त होकर आप सदाकत-आश्रम, पटना-स्थित 'बिहार-विद्यापीठ' में अर्थशास्त्र के प्राध्यापक-पद पर प्रतिष्ठित हुए। सन् १९२६ ई० तक आप उक्त कार्य में रत रहे। इसके पूर्व सन् १९२१ ई० से ही आप पटना-जिला कॉंगरेस-कमिटी के क्रमश: प्रधानमन्त्री और सभापति-पद को अलंकृत कर चुके थे। आपके जीवन का यह क्रम सन् १९३२ ई० तक चलता रहा। सन् १९३२ ई० से आप बिहार-प्रान्तीय कॉंगरेस-कमिटी के सह-मन्त्री के रूप में कार्य-सम्पादन करने लगे थे। आप बिहार-प्रान्तीय हिन्दू-महासभा के प्रधानमन्त्री और सभापति भी रहे। सन् १९२६ ई० से सन् १९३५ ई० के बीच आप अखिल भारतीय हिन्दू-महासभा के अध्यक्ष हुए। इसी बीच, सन् १९३३-३४ ई० में, आप बिहार-कॉंगरेस नेशनलिस्ट-पार्टी के अध्यक्ष चुन लिये गये। सन् १९२७—३० ई० के आसपास आप कॉंगरेस पार्टी की ओर से बिहार लेजिस्लेटिव कौंसिल के सदस्य निर्वाचित हुए। सन् १९३७ ई० से सन् १९३९ ई० तक बिहार-कॉंगरेस की जो प्रथम सरकार बनी, उसमें आप बराबर पार्लियामेण्टरी सेक्रेटरी के पद पर प्रतिष्ठित रहे। सन् १९४८ ई० में आप 'लिंग्विस्टिक-बाउण्ड्री-कमिटी' के सदस्य पद पर रहे। उसी वर्ष आप भारतीय विधान-परिषद् के सदस्य भी चुने गये। सन् १९४७ ई० से आप पटना-सिटी म्युनिसिपल ऐडमिनिस्ट्रेटिव कमिटी के 'चेयरमैन' और सन् १९५२ ई० तक बिहार-विधानसभा के उपाध्यक्ष रहे।

अपने राजनीतिक जीवन के कारण सन् १९२१ ई० से लेकर सन् १९४४ ई० के बीच आपने कई बार जेल की यातनाएँ सही। सार्वजनिक कार्यों के प्रति आपकी दीर्घनिष्ठा का ही परिणाम था कि आप 'भारत स्काउट ऐण्ड गाइड' की बिहार-शाखा के चीफ कमिश्नर के पद पर अनेक वर्षों तक रहे। बाद में, कॉंगरेसी सरकार के स्थापित होने पर आप अनेक विभागों के मन्त्रिपदों पर प्रतिष्ठित होते रहे।

उपर्युक्त राजनीतिक कार्यों के अतिरिक्त आपने साहित्य-सेवा के कार्यों में भी कम सहयोग नहीं दिया। आपने सन् १९२८ ई० में ही 'महावीर' नामक एक अर्ध-साप्ताहिक पत्र को जन्म दिया था। आप ही उसके संस्थापक और सम्पादक दोनों ही थे। इसके अतिरिक्त आपने 'नवीन भारत' नामक एक दैनिक पत्र का भी संचालन किया था, जिसके आप 'मैनेजिंग-डाइरेक्टर' थे। आपके द्वारा लिखित पुस्तकों में 'ज्योत्स्ना' नामक आपकी धार्मिक कविताओं का एक संग्रह सन् १९५८-५९ ई० में प्रकाशित हुआ था।

इसके अतिरिक्त 'एक ही आवश्यक बात' नामक आपकी एक और पुस्तक की विशेष चर्चा रही। यह पुस्तक आगे चलकर आप ही के द्वारा रूपान्तरित भी हुई। आपने अर्थशास्त्र की भी दो पुस्तकों का प्रणयन किया था तथा 'हिन्दूधर्म' नामक एक अन्य पुस्तक की भी रचना की थी। पुस्तकाकार रचनाओं के अतिरिक्त आपके द्वारा लिखित अनेक विचारात्मक निबन्ध भी पत्र-पत्रिकाओं[१] में प्रकाशित हुआ करते थे। आपका परलोकगमन सन् १९६६ ई० के ३ दिसम्बर (शनिवार, १० बजे रात्रि) को हो गया।

उदाहरण

(१)

प्रीतम को पतियाँ लिखूँ, छाये देस विदेस।
लिखि-लिखि चहुँ पठाइहौं, कहुँ पैहै संदेस॥
बिरहिन तलफत रैनदिन, आवहु हे हृदयेश।
पल-पल बीतत तुम बिना, जैसे पहर असेस॥
मो सों हठ अब ना करो, ऐ मेरे जदुराइ।
मैं अब कित बाकी रही, जब तुव हाथ बिकाइ॥
मो सों अब रहनो विलग, यह तुमरो अनियाउ।
जौ तुमहीं अनुचित करौ, तौ अब केहि ढिग जाँउ॥
मम अवगुन चित ना धरौ, तिनको ओर न छोर।
निज गुण राशि समुद्र में, कीजै सकल विभोर॥
मों तें सह्यो न जातु है, भवसागर की पीर।
नैया मेरी खैंचि के, लाओ प्रभुजी तीर॥
तुम समरथ मम साँइयाँ, करुणा उदधि अपार।
दीठि तिहारो परत ही, है यह बेड़ा पार॥[२]

(२)

१९२८-२९ में अपने साप्ताहिक पत्र 'महावीर' के अग्रलेख के लिए चलाए गये राजद्रोह के मुकदमे में सजा पाकर मुझे १ साल कारावास

१. आपने हिन्दी के अतिरिक्त अँगरेजी मे भी एक पुस्तक 'लाइट अंड्र ए सेल' के नाम से लिखी थी।
२. 'ज्योत्स्ना' (जगतनारायण लाल, सन् १९४७ ई०), पृ० २२-२३।

में रहना पड़ा। बन्दी-जीवन के उस काल में कुछ समय तक तो हजारीबाग जेल के एक बड़े अहाते से घिरे हुए सेलों में मुझे बिल्कुल एकान्त जीवन व्यतीत करना पड़ा। उसके बाद ४-५ और भी बन्दी आ गये। उस एकान्त जीवन में धीरे-धीरे मेरे अन्दर परिवर्त्तन होने लगा। बाहर की खबरें काफी चिन्ताजनक थीं; क्योंकि मेरी धर्मपत्नी को राजयक्ष्मा हो गयी थी और उनकी बीमारी असाध्य हो गयी थी। फिर भी इन चिन्ताओं के बीच एकान्तवास मे मेरा अधिक समय भजन, पूजन और आध्यात्मचिन्तन में व्यतीत होने लगा। ज्यों-ज्यो समय बीतने लगा पूजा-भजनादि में अनुराग बढता गया। धीरे-धीरे पूजा के समय शुद्ध विचारों और शुद्ध संकल्पों का प्रवाह होने लगा, इसी प्रकार प्रार्थना और भजनादि के साथ कुछ २ स्वतंत्र रूप से गुनगुनाने की प्रवृत्ति होने लगी। यह प्रवृत्ति उत्तरोत्तर बढती गयी। विचारों और संकल्पों की बाढ़-सी आने लगी, परन्तु पूजा के बाद उन सबों को याद रखना कठिन था।'[1]

जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी

आप मुँगेर-जिले के 'मलयपुर' (जमुई) नामक स्थान के निवासी श्रीकालीप्रसादजी के आत्मज थे। आपका जन्म सं० १९३२ वि० (सन् १८७५ ई०) की आश्विन शुक्ल-विजयादशमी (रविवार) को बंगाल के नदिया-जिले के 'छिटका' नामक ग्राम में हुआ था।[2]

---

१. 'ज्योत्स्ना' (वही), पृ० १ (प्राक्कथन)।

२. आपके जन्म के साल ही 'छिटका' मे भीषण अग्निकाण्ड हुआ था, जिसके कारण लोगो ने आपको लेकर जंगल की शरण ली थी। इसी कारण चार वर्षों तक आप 'जगली' कहलाये। फिर, जब आपके मामा जगन्नाथजी का दर्शन कर लौटे तब आपका यह नाम बदला। इस ग्राम को प्रथम बार आपके पूर्वज श्रीकुंजबिहारीलाल ने, जो मूलत' मथुरा के चौबे थे, कलकत्ता से आकर बसाया था। वे बडे ही गो-भक्त थे। आज से सौ-डेढ़ सौ वर्ष पहले वे कलकत्ता मे व्यापार करते थे। व्यापार के अतिरिक्त गौओ को कसाइयो के हाथ से खरीदकर अपने पास रखते थे।

जन्म के बाद आप अपनी बहन के साथ अपने मामा श्रीबलदेवलालजी के पास 'मलयपुर' (मुँगेर) भेज दिये गये। उस समय आपकी उम्र करीब छह-सात महीने की रही होगी। तत्पश्चात् आपको पुनः 'छिटका' जाने का अवसर नहीं मिला। सं० १९३४ वि० की अगहन सुदी-द्वादशी को आपके पिता का देहान्त शीतला-रोग से, मलयपुर में ही हो गया। उस समय आप भी उसी रोग से आक्रान्त हुए, किन्तु, भगवत्कृपा से बच गये। आपको आपके मामा पाण्डे श्रीबलदेवप्रसाद, श्रीगिरधरलाल तथा श्रीजयकृष्णलाल—तीनों की असीम ममता मिलती रही। सभी आपको अपने पुत्र की तरह मानते थे।

देहात में रहने के कारण, आपके पढ़ने-लिखने का कोई सिलसिला बहुत दिनों तक कुछ भी नहीं रहा। कुछ दिनों तक आप मौलवी के 'मकतब' में उर्दू पढ़ने के लिए भेजे गये। फिर, पण्डितजी के यहाँ संस्कृत पढने के नाम पर कुछ मास व्यतीत हुए। अन्त में, एक हिन्दी-पाठशाला में आपका नाम लिखाया गया। वहाँ भी आप ज्यादा दिन नहीं रह सके। तत्पश्चात्, कुछ दिनों तक आप गाँव के जमीन्दार के यहाँ एक बंगाली मास्टर से अँगरेजी पढ़ते रहे। परन्तु, वह भी आपको परिस्थितिवश छोड़ देनी पड़ी। इसी बीच आपका सम्पर्क अपने एक दूर के रिश्तेदार श्रीहरेरामजी से हुआ। वे फारसी के साथ-साथ हिन्दी के कवित्त, सवैये आदि भी खूब बनाते थे। वे बड़े बे-फिक्र और हास्यप्रिय व्यक्ति थे और उन्हे पुस्तकों के पढ़ने का बड़ा व्यसन था। उनके सम्पर्क का आप पर अच्छा प्रभाव पड़ा। उनकी संगति में पड़कर आप उनसे सुनी कविताएँ दूसरे लड़कों को सुनाते और उनका मनोरंजन कर खूब हँसाते। हास-परिहास की बातें आपने उन्हीं से सीखी। सं० १९४५ वि० (सन् १८८८ ई०) में, १३ वर्ष की उम्र में आपका नाम 'जमुई' के माइनर-स्कूल में लिखाया गया, जहाँ से सन् १८९२ ई० में आपने छात्रवृत्ति के साथ मिड्ल-परीक्षा पास की। उसके बाद, आप मुँगेर के जिला-स्कूल में प्रविष्ट हुए। वहाँ आपकी गिनती अच्छे विद्यार्थियों में होने लगी। संस्कृत में आप सदा प्रथम होते थे और प्रायः प्रतिवर्ष पुरस्कृत होते थे। छात्र-जीवन से ही आपने कविता लिखना आरम्भ कर दिया। सं० १९५३ वि० में, 'भ्रातृ-सम्बन्ध' पर कविता लिखने के कारण आपको पच्चीस रुपयों का प्रथम पुरस्कार प्राप्त हुआ। आपने सन् १८९७ ई० में मैट्रोपोलिटन-इन्स्टिट्यूट, कलकत्ता से एण्ट्रेंस-परीक्षा द्वितीय श्रेणी मे पास की। पुनः उसी कॉलेज से आपने एफ्० ए० (आइ० ए०) तक अध्ययन किया।

फलतः उनके लिए कलकत्ता मे रहकर जीवन-यापन करना कठिन हो गया। मल्लिक-परिवार ने अपनी जमीन्दारी के अन्तर्गत पडनेवाला 'छिटका' नामक उक्त जंगल उन्हें रहने के लिए दे दिया। तभी से उनका परिवार वहाँ रहने लगा और वह जंगल एक आबाद गाँव के रूप मे परिणत हो गया। आपका ननिहाल 'मलयपुर' (मुँगेर) मे था। अतः आपका लालन-पालन भी उसी ग्राम में हुआ, क्योंकि आपके जन्म के कुछ ही दिनो के बाद आपके पिताजी का निधन हो गया।—दिनांक २० अगस्त, सन् १९६४ ई० को प्राप्त और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के आधार पर।—देखिए, 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' [वही, पृ० ६७२ (ढ)] तथा 'मिश्रबन्धु विनोद' (वही, पृ० २४०) भी।

सं० १९५७ वि० में आपका शुभ विवाह 'जहाँगीरपुर' (जिल–एटा)-निवासी श्रीजयन्ती प्रसादजी की कन्या से हुआ। आपने सन् १९०२ ई० में अपने मामा के साथ 'चपड़े' का कार्य-भार सम्हालना शुरू किया। 'मिरजामल-जगन्नाथ एण्ड कम्पनी' के नाम से आपलोगों की व्यापारिक संस्था थी। तत्पश्चात् सं० १९६१ वि० में, आप 'बोर्ड ऑफ एक्जामिनर्स' के 'हिन्दी-पण्डित' के पद पर तीन महीने तक रहे। उसके पूर्व, सं० १९६० वि० में आपने 'हित-वार्त्ता' नामक एक मासिक पत्रिका का सह-सम्पादन-कार्य-भार सँभाला था।

साहित्य-क्षेत्र में आपका जब आगमन हुआ तब पं० श्रीमहावीरप्रसाद द्विवेदीजी की लेखनी से हिन्दी के साहित्यिक-जगत् को प्रोत्साहन मिल रहा था। ऐसे ही समय विनोद-भरी रचना-प्रणाली, चोखी शैली और मँजी भाषा लेकर आपने उनका साथ दिया और तत्कालीन हिन्दी-साहित्याकाश में देदीप्यमान नक्षत्र की भाँति आप चमकने लगे। पं० सकलनारायण शर्मा की तरह आप भी द्विवेदीजी के क्षेत्र से पृथक् ही गद्य की चुहल-भरी शैली की सृष्टि में प्रवृत्त हुए। व्यापार-सम्बन्ध से कलकत्ता-प्रवासी होने के फल-स्वरूप बाबू बालमुकुन्द गुप्त से भी आपका सतत सम्पर्क रहा। गुप्तजी की प्रेरणा से आप तात्कालिक गद्य-शैली की परख में सदा दत्तचित्त रहा करते थे। आपने स्वयं द्विवेदीजी की भी आलोचना कर 'हिन्दी-संसार' को अपनी ईमानदारी और साहस से चौंका दिया। द्विवेदीजी की लेखमाला 'कालिदास की निरंकुशता' के उत्तर में आपने जो आलोचनात्मक लेखमाला 'भारत-मित्र' में लिखी, वह समस्त हिन्दी-जगत् में बड़े चाव से पढ़ी गई और आगे चलकर पुस्तकाकार 'निरंकुशता-निदर्शन' के नाम से प्रकाशित भी हुई। अपनी हास्य व्यंग्यपूर्ण शैली के कारण ही आप 'हास्यरसावतार' के रूप में प्रसिद्ध हुए। अखिलभारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के द्वादश, अधिवेशन (लाहौर) के अध्यक्ष-पद से दिया गया आपका भाषण हिन्दी गद्य-शैली के सुधार और निखार पर तथ्यपूर्ण परामर्श देने की क्षमता रखता है। इसी प्रकार, बिहार प्रादेशिक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सोनपुर में हुए प्रथम अधिवेशन के अवसर पर आपने जो भाषण दिया था, वह भी अपने ढंग का निराला है। अपने भाषण में आपने भाषा की शुद्धता और स्वच्छता तथा अनुप्रास की जो बहार छोड़ रखी है, वह देखते ही बनती है। अखिलभारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के षष्ठ अधिवेशन के अवसर पर आपने 'अनुप्रास का अन्वेषण' नामक जो व्यंग्य-विनोदपूर्ण निबन्ध पढ़ सुनाया था, उसकी छाप बहुत दिनों तक सहृदय-साहित्यिकों के मन-मस्तिष्क पर अमिट रहेगी। आपके द्वारा लिखित विविधविषयक अनेकानेक निबन्धों एवं पुस्तकों का पता चलता है, जो प्रकाशित और अप्रकाशित मिलाकर लगभग बीस-इक्कीस हैं। इनके नाम इस प्रकार हैं—(१) वसन्तमालती, (२) संसार-चक्र, (३) तूफान, (४) विचित्र विचरण, (५) भारत की वर्त्तमान दशा, (६) स्वदेशी आन्दोलन, (७) गद्यमाला, (८) निरंकुशता-निदर्शन[१], (९) कृष्ण-चरित्र, (१०) राष्ट्रीय गीत, (११) अनुप्रास का अन्वेषण, (१२) सिंहावलोकन, (१३) हिन्दी-लिंग-

१. देवनाथ प्रेस, कलकत्ता से प्रकाशित।

विचार, (१४) विचित्र वीर डान, (१५) मधुर मिलन, (१६) प्रेम-निर्वाह, (१७) विवाह-कुसुम, (१८) अक्षान्त, (१६) बिहार का साहित्य[1], (२०) निबन्ध-निचय[2] और (२१) तुलसीदास (नाटक)। आप सं० १६६७ वि० में स्वर्गवासी हो गये।

उदाहरण

(१)

हरि हो ऐसे दिन कब ऐहैं।
भारत को धन भारत रहिहै, कबहु विदेस न जैहै।
शिलपकला नित नूतन बढ़ि-बढ़ि, दुख दारिद्र भगैहैं॥
कोइ नहिं करन गुलामी चहिहें, उद्यम करि-करि खैहैं।
सारी वस्तु देस महँ मिलिहैं, कोउ न विदेसी लैहै॥
बढिहे प्रेम एकता दिन-दिन, फूट बैर बिनसैहै।
राजा राज न्याय सों करिहे, प्रजा स्वराजहिं पैहै।
ईर्षा द्वेष कलह करि अपनों, कोउ नहिं समय बितैहै॥
जैसो नाम रह्यो भारत को, फिर वैसो वह पैहैं।
'जगन्नाथ' तजि और प्रपंचहि, तुमरो गुन नित गैहैं॥[3]

(२)

आज मंगलमय शुभ मुहूर्त है—सुखमय शुभ समय है—आनन्दमय अद्वितीय अवसर है। आज हमलोग शुचि शालग्रामी नदी के तट पर, पवित्र हरिहर क्षेत्र में, वीणापाणि भगवती भारती की भक्तिपूर्वक आराधना करने के लिए बहुत दिनों के बाद एकत्र हुए है। वीणापाणि की उपासना से बढ़कर और कोई उपासना नहीं है। इससे अर्थ, धर्म्म, काम, मोक्ष सब कुछ सहज ही प्राप्त हो जाते है। शारदा देवी की कृपा से मनुष्य अमर होता है।

---

१. पुस्तक-भण्डार, लहेरियासराय से प्रकाशित।
२. गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय, लखनऊ से प्रकाशित।
३. स्वदेशी-आन्दोलन (पं० जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी, सं० १६६४ वि०), पृ० १

आज हम भी अमरत्व-प्राप्ति की आकांक्षा से यहाँ आये हैं। आशा है, माता की अनुकम्पा से अवश्य ही अमर हो जायँगे।

माता के मन्दिर में भेदभाव नही है और न पक्षपात है। वहाँ राजा-रंक, धनी-दरिद्र सबको समान अधिकार और समान स्वतन्त्रता है। सरस्वती की सेवा पर सबका ही समान स्वत्व है। इसीसे आज बिहार के छोटे-बड़े, बालक-बूढ़े, स्त्री-पुरुष, अमीर-गरीब, हिन्दू-मुसलमान जाति-भेद, वर्ण-भेद, व्यक्ति-भेद भूलकर जगज्जननी के श्रीचरणों में पुष्पांजलि प्रदान करने को प्रस्तुत है।[1]

(३)

अँगरेजों में ग्रिअरसन और ओलढ्न साहब हैं, जिनका हिन्दी से सम्बन्ध है। ग्रिअरसन साहब ने तो हिन्दी का उपकार करते हुए अपकार ही किया है। इन्हीं के समय में नागरी के बदले अदालतों में कैथी अक्षर हुए और आरम्भिक शिक्षा की पुस्तकें कैथी में छपने लगीं। बिहार प्रान्त की भोजपुरी, मैथिली आदि बोलियों में पुस्तकें छपवा कर बिहारवासियों में इन्होंने फूट का बीज बो दिया, जिसका फल मैथिल सभा से हिन्दी का बहिष्कृत होना है। हमारे मैथिल भाई भ्रमवश देश की हानि कर रहे हैं। हमारा सानुरोध निवेदन है कि वह लोग जल्दी न करें। जो कुछ करें, सोच-समझकर करें। धन्यवाद है ओलढ्न साहब को, जिनकी कृपा से अदालत के कागज-पत्र कैथी के बदले नागरी में छपने लगे है।[2]

---

१. 'बिहार की साहित्यिक प्रगति' (वही, सन् १९१९ ई०), पृ० १।

२. वही, पृ० ६-७।

दीनदयालु सिंह

~आप पटना-जिले के 'तारणपुर' (पो० लखनगार) नामक स्थान के निवासी बाबू रामप्रकाश सिंहजी के पुत्र थे। आपका जन्म (सं० १९१५ वि०) सन् १८५८ ई० की श्रावण शुक्ल-षष्ठी को हुआ था।[१] आपने पटना के खड्गविलास प्रेस से प्रकाशित साप्ताहिक 'द्विज-पत्रिका' के प्रधान सम्पादक के पद पर बहुत दिनों तक कार्य किया था। हिन्दी में आपके द्वारा लिखित अनेक पुस्तकें बतलाई जाती हैं, जिनमें 'भारतवर्ष का इतिहास' प्रमुख है।

उदाहरण

(१)

महाभारत में लिखा है कि किसी समय इस देश में भरत नामक एक पुरुवंशी महाराज ने एकछत्र राज्य किया। इसीसे इस देश का नाम भरत-खण्ड पड़ा। ये प्रसिद्ध राजा दुष्यन्त और रानी शकुन्तला के पुत्र थे। महाभारत का भारत शब्द भी इन्हीं के नाम से सम्बन्ध रखता है। ये ऐसे पुण्यात्मा और यशस्वी पुरुष हुए कि जिनके नाम से अबतक यह देश भरत-खण्ड कहलाता है, पर जिस तरह और देशवालों के आने के कारण बहुत से चाल-व्यवहार और नामों का अदल-बदल हुआ उसी तरह भरत-खण्ड का भी हिन्दुस्तान हो गया। हिन्दू शब्द का अर्थ लोग कई एक प्रकार से करते हैं, कोई तो कहते है कि यह सिन्धु वा सिन्ध से निकला है। ······श्रीमान् दयानन्द सरस्वती कहते थे कि यह सब झूठ है। हिन्दू ऐसा नाम मुसलमानों ने द्रोह से रक्खा है, जिसका माने उनकी भाषा मे नास्तिक और गुलाम है। हमलोगों को उचित है कि सदा अपने को आर्य और देश को आर्य्य-स्थान कहें। ······जो हो यदि सिन्धु-वाली बात ठीक नहीं है तो हयेन्दु वा इन्दुवा हिमालय पर्वत और

---

१. श्रीधीरेन्द्रनाथ सिंह (लालघाट, वाराणसी) द्वारा दिनांक २ मार्च, सन् १९६४ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के आधार पर।

विन्दु तीर्थ के आदि अन्त के अक्षर से बना हुआ शब्द ठीक होगा।...
सर राजा राधाकान्त देव ने 'शब्दकल्पद्रुम' में इस शब्द को संस्कृत
माना है।[१]

★

दीनदयाल सिंह 'विरागी'

आप शाहाबाद-जिले के 'भदवर' ग्राम-निवासी स्व० श्रीवशिष्ठनारायण सिंह के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९४३ वि० (सन् १८८६ ई०) की वैशाख कृष्ण-प्रतिपदा (बुधवार) को हुआ था।[२] आरम्भ में आपकी शिक्षा ग्राम-पाठशाला में हुई। बाद में, सन् १९०० ई० में, मिड्ल वर्नाक्युलर की परीक्षा पास कर आप आरा (शाहाबाद) के जे० जे० एकेडमी हाईस्कूल में पढ़ने गये, जहाँ सन् १९०५ ई० तक रहे। अस्वस्थ होने के कारण आपको उक्त हाईस्कूल के साथ साथ अपनी पढाई भी बराबर के लिए छोड़ देनी पड़ी। सन् १९०८ ई० में आप पलामू-जिले के एक एम्० ई० स्कूल के प्रधानाध्यापक रहे। उसके बाद आप क्रमशः कुल्हड़िया मिड्ल स्कूल, आरा महाजनी-स्कूल आदि विद्यालयों में शिक्षण का कार्य करते रहे।

आपकी साहित्यिक रचना का आरम्भिक वर्ष सन् १९०८ ई० बतलाया गया है। आपने अपना सारा जीवन हिन्दी-सेवा में लगा दिया। आपकी अधिकाश पुस्तकाकार कृतियाँ अभीतक अप्रकाशित ही पड़ी हैं। आपके द्वारा रचित कृतियों के नाम इस प्रकार हैं—(१) वेदान्त-प्रकाश, (२) पातञ्जल योगदर्शन का हिन्दी-पद्यानुवाद, (३) गीता-महाभाष्य (छन्दोबद्ध), (४) गीता-रहस्य (छन्दोबद्ध), (५) अष्टावक्र-गीता, (६) ब्रह्म-गुणानुवाद, (७) नवउपनिषद् (पद्यबद्ध) तथा (८) आत्मबोध[२] (विभिन्न धार्मिक ग्रन्थों के आधार पर आत्मा-परमात्मा का विवेचन)। आपकी कुछएक और भी पुस्तकाकार कृतियाँ व्याकरण एवं छन्दःशास्त्र से सम्बन्धित बतलाई जाती है। आपकी स्फुट काव्य-रचनाएँ बनारस से प्रकाशित 'क्षत्रिय-मित्र' पत्रिका में प्रकाशित हुआ करती थी।[२]

उदाहरण

(१)

विश्व नदी में पंचस्रोत ज्ञानेन्द्रिय पाँचो।
पंचभूत से हुई नदी, उद्गम ये पाँचो॥
वक्रचाल से चली, प्राण है पंचतरंगा।
मन है सरितामूल, भँवर शब्दादि प्रसंगा॥

---

१. श्रीधीरेन्द्रनाथ सिंह (वही) से प्राप्त 'भारतवर्ष का इतिहास' के आरम्भ से अविकल उद्धृत, पृ० १।

२. आपके द्वारा दिनाक २८ नवम्बर, सन् १९६४ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

पंचक्लेश है वेद विभाग, पंच है क्लेशा।
मन वृत्तियाँ पचास नदी पंचाशत वेषा ॥[१]

(२)

ब्रह्मज्ञान से मान-मोह हटते है ऐसे।
पावसान्त में मेघ व्योम से हटते है जैसे ॥
हटता नही विकार हृदय मे जब हो ज्ञाना।
हटत दरिद्र कुटुम्ब लहत हित से अपमाना ॥
नास होय सब कर्म ज्ञान से इसी प्रकारा ॥
जैसे फल के बाद होय कदली संहारा ॥[२]

(३)

पहिले करि जग्य दया धरिकै,
दरिकै अरि को धन लेत तबै ॥
मरजाद गई कहि बातन को,
तप तुंग पसारत जात तबै ॥
तन छत्रिन को लहि दीन कहै,
ना बिचारत हौ मनसान अबै ॥
अबहूँ बेसहूर सहूर करो,
दिन चार मैं ह्वै है तमासे सबै ॥[३]

(४)

तव तोतन बालक को लहि कै,
कछु जानत ना गुन गूढ़ जबै ॥
मति मंद महा मुसकात नहीं,
मनमोज मनोज को ओज अबै ॥

---

१. हिन्दी के अतिरिक्त अँगरेजी और संस्कृत का भी आपको अच्छा ज्ञान था। अँगरेजी में तो आप काव्य-रचनाएँ भी किया करते थे।

२. आपके द्वारा प्रेषित सामग्री से।

३. 'क्षत्रिय-पत्रिका' (बाँकीपुर, खण्ड १, सं० २, आषाढ़ शुक्ल-दशमी, सं० १९३८ वि०)।

वहि दीन अधीन भयो किहिके,
ना प्रवीन गहो मसि भीन अबै ।।
अबहूँ बेसहूर सहूर करो,
दिन चार में ह्वै है तमासे सबै ।।[1]

★

दीपनारायण गुप्त

आप गया-जिले के 'ददपी' नामक ग्राम के निवासी श्रीलोची सावजी के पुत्र हैं आपका जन्म सन् १८६३ ई० की कार्त्तिक-दीपावली को हुआ था ।[2] आपकी प्राथमिक शिक्षा घर पर ही हुई। तदनन्तर आपने श्रीरामचीज सिंह 'वल्लभ' (चक्रधरपुर) की शरण में रहकर विद्योपार्जन किया । आपने स्वाध्याय कभी नहीं छोड़ा और उसी के बल पर हिन्दी, बँगला, उड़िया, मराठी, अँगरेजी, गुजराती आदि कई भाषाओं का ज्ञान प्राप्त किया । हिन्दी का आपको प्रचुर ज्ञान हो गया । कुछ वर्षों के बाद, स्वाधीनता-संग्राम में आपने खुलकर भाग लिया । इस सिलसिले में चक्रधरपुर में रहते हुए, आपने सिंहभूम जिला स्वातन्त्र्य-समर के सचालकों के बीच अपना स्थान बना लिया । देशरत्न डॉ० राजेन्द्र प्रसादजी के द्वारा संचालित रचनात्मक कार्यों में आपका पूरा योगदान रहा । सन् १६१३ ई० में आपके प्रयास से सिहभूम-जिला का प्रथम पुस्तकालय 'हितैषी पुस्तकालय' के नाम से स्थापित हुआ । सुलेखक होने के साथ-साथ आप एक अच्छे वक्ता भी थे । आपकी गणना वहाँ के अच्छे हिन्दी-लेखकों में की जाती है । सम्प्रति, आप चक्रधरपुर में ही साहित्य-साधना-रत हैं । आपकी रचना के उदाहरण हमें नहीं मिल सके ।

★

देवकीनन्दन भट्ट 'अनंग'[3]

आप मुँगेर-जिले के 'बड़गूजर' नामक ग्राम के निवासी पं० श्री भुखरी महराज के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १६४३ वि० (सन् १८८६ ई०) की ज्येष्ठ शुक्ला-चतुर्दशी (मंगलवार) को हुआ था ।[4] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हिन्दी और संस्कृत के माध्यम से हुई थी। उसके बाद आपने संस्कृत का गहरा अध्ययन किया । स्वाध्याय के बल पर आपका संस्कृत और हिन्दी का ज्ञान प्रखर हो गया । कुछ दिनों के बाद आपने हिन्दी में लिखना आरम्भ किया और शीघ्र ही आप एक अच्छे साहित्यकार के रूप में माने जाने लगे । राष्ट्रभाषा हिन्दी और राष्ट्रप्रेम ये दोनों ही आपके प्रिय विषय थे ।

---

१. 'क्षत्रिय-पत्रिका' (वही) ।
२. श्रीशशिकर (चक्रधरपुर) द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के अनुसार । आपके परिचय-लेखन मे 'राँची-एक्सप्रेस' (साप्ताहिक, १० जनवरी, सन् १६७१ ई०, पृ० ११) से भी सहायता ली गई है ।
३. आपके पितृव्य श्रीछत्रधारी महराज भी अपने समय के अच्छे कवि थे ।

आपने हिन्दी में एक नाटक 'धर्म-प्रचार' लिखा, जो उसी समय प्रकाशित हुआ था। इसके अतिरिक्त आपकी स्फुट काव्य-रचनाएँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। आपकी काव्य-रचनाओं में राष्ट्रप्रेम और शृंगार—दोनों का ही समावेश है। सन् १९५१ ई० में, ६५ वर्ष की अवस्था में आपका स्वर्गारोहण हो गया।

उदाहरण

जगदीश भारत की दशा पर,
आप अब कुछ ध्यान दो।
जिस भाँति पुनरुत्थान हो,
यह सुखद सब हिय आन दो॥
सोये हजारों वर्ष हम,
अज्ञान निद्रा मे महा।
होवे सुमति संचार सबमें,
आत्म-शक्ति महान् दो॥
परतन्त्रता की बेड़ियाँ टूटें,
सुशीला भूमि की।
स्वाधीन देवकीनंद हों,
जिमि देश यह वरदान दो॥[1]

★

नरेन्द्रनारायण सिन्हा

आप मुजफ्फरपुर-जिले के 'नन्दवारा' नामक ग्राम के श्रीमुंशी कनप्रसादजी के सुपुत्र थे। आपका जन्म सं० १९४० वि० (सन् १८८३ ई०) के २ दिसम्बर को हुआ था।[2] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। सन् १९०० ई० में प्रवेशिका (इण्ट्रेन्स) की परीक्षा देकर आपने अपनी विद्यालयीय शिक्षा समाप्त की। आर्थिक कठिनाई के कारण आपकी उच्च शिक्षा नहीं हो सकी। आपमें बचपन से ही साहित्यिक चेतना एवं स्फुरण के संकेत प्राप्त होते थे। अतएव, आपने हिन्दी, अँगरेजी, संस्कृत और बँगला की

---

१. डॉ० गयादत्त भट्ट (वही) द्वारा प्राप्त सामग्री से।

२. देखिए, 'बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद' का 'वार्षिक कार्य-विवरण' (सन् १९५५-५६ ई०), पृ० ४५ तथा 'उत्तर-बिहार' (साप्ताहिक, १९ फरवरी, सन् १९७३ ई०), पृ० ५। 'उत्तर-बिहार (वही) में भ्रमवश आपकी जन्म-तिथि २ दिसम्बर, सन् १८६५ ई० मुद्रित है।

योग्यता स्वाध्याय के बल पर प्राप्त की। आगे चलकर आपकी साहित्य-निष्ठा इतनी प्रखर हुई कि एक समय आप घर-द्वार छोड़कर वैराग्य-भाव से कहीं निकल गये। आप बडे ही दानवीर थे। अपने जीवन के अन्तिम दिनों में आपने ग्रामस्थ राम-जानकी-मन्दिर के लिए तीन बीघा जमीन रजिस्ट्री कर दी। इसके अतिरिक्त आपने बैरगनियाँ (मुजफ्फरपुर)-स्थित गुरुकुल-महाविद्यालय को भी भवन-निर्माणार्थ तीन हजार रुपयों के दान दिये, जिसके कारण उस भवन का नाम 'नरेन्द्र-भवन' पड़ा।

सन् १९०४ ई० में आप दरभंगा-राज के कानूनी कारिन्दा होकर कलकत्ता चले गये। दो वर्षों के बाद आपने वहीं पत्रकार का जीवन-यापन किया। सर्वप्रथम आप 'एकलिपि विस्तार-परिषद्' के मुखपत्र 'देवनागर' के प्रबन्धक हुए और फिर उस पत्र के सम्पादक। सन् १९०७ ई० में आपने वहाँ से प्रकाशित होनेवाले 'भारतमित्र' और सन् १९०८ ई० में वहीं से प्रकाशित 'हिन्दी बंगवासी' के सम्पादकीय विभाग में कार्य-सम्पादन किया। बाद में, आप वहीं के मासिक पत्र 'प्रभकार' और 'हिन्दी-कल्पद्रुम' के सम्पादक हुए। आपकी प्रतिभा से 'सरस्वती' के सम्पादक आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी भी बहुत प्रभावित थे। 'बंगवासी' और 'देवनागर' के बन्द हो जाने पर आप कुछ दिनों के लिए 'मतवाला' में भी चले गये थे। आपके आते ही 'मतवाला' में अनेक प्रकार के परिवर्त्तन हुए। कुछ कालान्तर श्रीद्विवेदीजी ने आपको 'सरस्वती' की सेवा में बुला लिया। अतः सन् १९११ ई० में आप कलकत्ता से प्रयाग चले गये और वहाँ आपने 'सरस्वती' का सह-सम्पादन-कार्य प्रारम्भ किया। आपकी जादुई लेखनी के चमत्कार से 'सरस्वती' भी चमक उठी। 'सरस्वती' के बाद आपने प्रयाग से निकलनेवाली मासिक पत्रिका 'मर्यादा' और साप्ताहिक 'अभ्युदय' का सम्पादन-भार अपने ऊपर लिया। तदनन्तर आप अखिलभारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग के मन्त्री-पद पर प्रतिष्ठित हुए। उस कालावधि में आपने 'सम्मेलन-पत्रिका' को जन्म दिया और एक वर्ष तक आप ही उसका सम्पादन-कार्य करते रहे।

सन् १९१५ ई० में आप खड्गविलास प्रेस, पटना से प्रकाशित मासिक 'हरिश्चन्द्र-कला' का सम्पादन करने के लिए पटना चले आये और उसके बाद उसी प्रेस से 'साप्ताहिक शिक्षा' का सन् १९३४ ई० तक सम्पादन करते रहे। अन्त में, आपने बिहार-सरकार द्वारा प्रकाशित होनेवाले त्रैमासिक पत्र 'किसान' का सम्पादन-भार अपने ऊपर लिया। आगे चलकर जब वह मासिक रूप में निकलने लगा तब उसपर विधिवत् आपका नाम भी मुद्रित होने लगा। सन् १९४२ ई० में, उसके बन्द हो जाने के बाद आप अपने घर पर स्थायी रूप से रहने लगे।

इसके पूर्व, प्रयाग से चले आने पर, बीच के कुछ वर्षों में आपने 'हिन्दू-विश्वविद्यालय' के संस्थापक महामना मालवीयजी के विश्वविद्यालय-निर्माण-कार्य में भी अत्यधिक साहाय्य प्रदान किया। विश्वविद्यालय के बन जाने पर आप 'माधुरी' में चले गये। उस पत्रिका की श्री-वृद्धि में भी आपका पूर्ण सहयोग उपलब्ध हुआ।

आपके मूल नाम तथा अन्य अनेक छद्मनामों से लिखे आपके विविध-विषयक लेख और काव्य अनेक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे हैं। आपकी प्रकाशित और

अप्रकाशित पुस्तकों के नाम इस प्रकार हैं—(१) महाराजकुमार रामदीन सिंह (जीवनी), (२) इन्द्रगुप्त (ऐतिहासिक उपन्यास), (३) आत्मोपदेश (एपिक्टेटस के उपदेशों का सार-संग्रह), (४) भक्तियोग (भक्ति-सम्बन्धी योगों का एकत्र संकलन—मूल श्लोक और हिन्दी-टीका), (५) हनुमान-शतक (१०१ छप्पय), (६) पद्माकर (जीवनी), (७) भारतीय चरिताम्बुधि (अपूर्ण)। इनमें केवल प्रथम तीन और पाँच ही प्रकाशित हैं। सन् १९६६ ई० के ६ मार्च को आपने गुरुकुल महाविद्यालय, बैरगनिया के प्राङ्गण में ही अपनी इहलीला का विसर्जन किया। आपकी रचना के उदाहरण हमें नहीं मिले।

पीटर शान्ति नवरंगी

आप राँची-जिले के पाटपुर (खूँटी-प्रमण्डल) नामक ग्राम के निवासी श्रीविलियम प्रेमोदय नवरंगी एवं श्रीमती वासन्तीदेवी नवरंगी के पुत्र थे। आपका जन्म सन् १८९९ ई० के ३० दिसम्बर को हुआ था।[१] आपकी आरम्भिक शिक्षा अपने ग्राम में ही हुई। आगे चलकर आपने हिन्दी की 'साहित्यरत्न' तथा 'साहित्यभूषण'-परीक्षाएँ पास की। सन् १९२१ ई० के १८ जून को आपने ईसाई-समाज में और सन् १९२७ ई० के २१ दिसम्बर को मिशन में प्रवेश किया। आप कैथोलिक-मिशन के सदस्य थे। एक लम्बे अर्से तक आपने सन्त जॉन्स हाईस्कूल, राँची में शिक्षक का कार्य किया। उसके बाद आप मिशनरियों के लिए संस्थापित संत अलबर्ट कॉलेज में चले गये, जहाँ आप मूलतः हिन्दी के ही शिक्षक रहे।

कैथोलिक-मिशन में रहते हुए आपने यह अनुभव किया था कि इस क्षेत्र के लिए 'नागपुरी' का बड़ा महत्त्व है। आपका यह झुकाव केवल धार्मिक कारणों से ही नहीं था। वास्तव में, नागपुरी आपकी मातृभाषा के समान थी, जिसके कारण आपके हृदय में उसके लिए स्वाभाविक स्नेह स्फुरित हुआ। आपने हिन्दी और नागपुरी के अतिरिक्त अँगरेजी में भी पुस्तकों की रचना की। इनमें नागपुरी-पुस्तकों की संख्या सबसे अधिक है। आपके द्वारा लिखित-सम्पादित नागपुरिया-पुस्तकों के नाम इस प्रकार हैं—(१) नागपुरिया-सदानी-बोली का व्याकरण[२], (२) सदानी रीडर[३], (३) नागपुरिया-साहित्य[४],

---

१. देखिए, 'नागपुरी और उसके बृहत् त्रय' (वही), पृ० ५०। आपका यह परिचय मुख्य रूप से उक्त पुस्तक में प्रस्तुत सामग्री के आधार पर ही तैयार किया गया है।

२. इसके पूर्व सन् १९५६ ई० में आपने अँगरेजी मे एक व्याकरण 'A Simple Sadani Grammar' लिखकर धार्मिक साहित्य-समिति, कैथोलिक मिशन, राँची से प्रकाशित किया था। १६६ पृष्ठो की इस पुस्तक मे 'सगुनिया जोलहा' नामक एक लोककथा भी देवनागरी-लिपि में सम्मिलित है।

३ इसका प्रकाशन सन् १९५७ ई० मे हुआ था। इसे एक प्रकार से 'A Simple Sadani Grammar' का पूरक माना जा सकता है। इस पुस्तक के तीन खण्ड हैं। प्रथम खण्ड में लोक-कथाएँ एव वार्त्ताएँ, दूसरे खण्ड में नागपुरी-गीत तथा तीसरे खण्ड में 'प्रेम-लहरी' (पद्य मे यीसु की सक्षिप्त जीवनी) है।

४. यह एक सम्पादित ग्रन्थ है। इसके दो भाग है—(क) गद्य-भाग और (ख) पद्य-भाग। इसके गद्य-भाग में 'बहिरा-बहिरी'-शीर्षक कथा, जो 'आदिवासी' (७ जनवरी, सन् १९६५ ई०) में प्रकाशित।

(४) संत मरकुस-लिखल परभु ईसु कर सुसमाचार, (५) संत मती-लिखल परभु कर सुसमाचार, (६) संत लूकस-लिखल परभु ईसु कर सुसमाचार, (७) संत जोहन-लिखल प्रभु ईसु कर सुसमाचार[1] तथा (८) ईसु-चरित-चिन्तामइन[2]। अपने अन्तिम दिनों में आप नागपुरी-शब्दकोश के प्रणयन में प्रवृत्त थे, जिसे दुर्भाग्यवश पूरा नहो कर सके। आपने हिन्दी में भी अनेक पुस्तको की रचना कर उनका प्रकाशन किया। हिन्दी में आपके द्वारा रचित पुस्तकों के नाम इस प्रकार हैं—(१) छोटानागपुर का संक्षिप्त इतिहास, (२) सत्यमेव जयते (नाटक), (३) अदन-बिछोह (नाटक), (४) पाँच एकांकी (एकांकी) तथा (५) हिन्दी-भाषा-प्रदीप। आपने रेवरेण्ड फादर जे० वीवर की पुस्तक 'दि लीस्ट सोसायटी' का 'श्रीयीशु का छोटा संघ' नाम से हिन्दी में एक अनुवाद भी प्रस्तुत किया था।[3] आप सन् १९६८ ई० के ४ नवम्बर को मांडर-अस्पताल में प्रभु के प्यारे हो गये।

उदाहरण

(१)

एक दिन राजकुँवर घोड़ा चइढ़के शिकार खेलेक निकललक। जाते-जाते ऊ ओहे ठन पोहुँचलक जहाँ बेलपइत रानी सएँ आवेक खन उड़न-खटोला ले पानी पियेक उतइर रहएँ। उहाँ घोड़ा दउड़ाते आलक तो बड़ा सुन्दर सुगन्ध सुँघलक। ऊ सुगन्ध कर पाछे-पाछे चललक तो ठीक ओहे कुवाँ ठन आलक जहाँ बेलपइत रानी के डोमिन छोंड़ी ढकेइल दे रहे। ऊ कुवाँ ठिन आएके सुनतहे तो केउ कुवाँ भीतरे बिलइख-बिलइख के गावत हे। ऊ कुवाँ में हुलकलक मगर केकहों नि पालक। खाली एक ठो बड़ा सुन्दर केंवरा फूल फुइल रहे अउर उकरे सुगन्ध निकलत रहे। से ऊ फूल के तोरलक अउर घर ले लानलक अउर पलंग कर मुँड़सिरवाँ बटे टाइँग देलक।

प्रकाशित हुई थी, आपकी ही रचना है। शेष छह कथाओ के लेखक श्रीप्रीतम मसीह बारोइया है। इस सग्रह की उल्लेखनीय रचना है 'सगुनियाँ जोलहा'। यह एक लोककथा है, जो 'Sadani Folklore Stories' से ली गई है। इसे अत्यन्त कलात्मकता-सहित आपने नाटक का रूप दिया है। इसके पद्य-भाग मे लोककठ से सगृहीत डमकच, बिरहागीत, फगुवा, झूमर, पावस, लहसुवा तथा भजन सगृहीत है। कुछ गीत स्वय आपके तथा श्रीबारो भइया के द्वारा लिखित है।

१. सख्या ५ से ८ तक की पुस्तकें वस्तुत' चार खण्डो मे बाइबल का नागपुरी मे अनुवाद है।
२. इसका प्रकाशन सन् १९६४ ई० मे, कैथोलिक प्रेस, राँची से हुआ था।
३. इसका प्रकाशन सन् १९५५ ई० मे हुआ था।

गोटा सुतेक-कोठरी उकर सुगन्ध के सुइँघ के पूछलक, "ई फूल के कहाँ ले लानली ?" कुँवर कहलक जे कुवाँ कर पानी मोके पियाए रहिस, हुआँए इके पालों, अउर ले लानलों।" ई बात सुइन के डोमिन बड़ा उदास भेलक। एक दिन राजकुँवर कहाँओ जाए रहे, सेखन डोमिन फूल के गंदुर-गढा मे फेइँक देलक, अउर राजकुँवर जेखन उकर खोजार करलक, सेखन कहलक, कि फूल ठो तो एकदम सुइख जाए रहे, से ऊ "सरल-मूरझाल फूल के का करब" कइहके फेइँक देलों।"[1]

(२)

महराज, अपने पुछली कि पाप का हेके ? भगवान कर कोनो इछा, नियम चाहे हुकुम के जाइन-बुइझ के तोरेक पाप हेके। भगवान मनवा के सिरिजालैं, मनुखतन, अमर-आतमा, जीवन अउर धरती कर सउब चीज मन के देलै। से मनवा ऊपर भगवान कर सउब हक, सउब अइधकार आहे। तो जे मनुख भगवान कर इछा, नियम चाहे हुकुम कर बिरुद्ध चलेला, से उनकर हक अउर अइधकार के नि मानेक खोजेला उनकर अपमाइन-अपराध करेला, उनकर दुसमन बइन जाएला। एहे पाप हेके, अउर जे पाप करेला ऊ पापी कहाएला। पापी भगवान कर इछा ले अपन इछा के बइढ़के मानेला, भगवान कर नियम ले अपन सवारथ के उत्तम समझेला, भगवान कर हुकुम तोइर के अपनेहें अपन भगवान होएक खोजेला, अउर उनके नराज कइरके डंड कर जोग ठहरेला।[2]

(३)

नींदो बेटा, नींदो रे, धन मोर नींदो रे,
प्रभु मोर नींदो रे, हिया के दुलारे रे॥

---

१. 'सदानी-रीडर' (पृ० ४२-४३) से।—देखिए,'नागपुरी और उसके बृहत्-त्रय' (वही), पृ०५३-५४।
२. 'ईसु-चरित-चिन्तामइन' (पीटर शान्ति नवरंगी, सन् १९६४ ई०), पृ० ३३।

अहो रे हीरा मोरा, अहो रे हो रूपा मोरा,
झकमक तारा मंडल छाड़ि आलि ।।
दिव्य सरूप तजि बाल-स्वरूप धरि घाली,
माता कर हिया परे नींदो रे, नींदो रे ।।
सोना-सियोन कर सोना टुक बेटा रे,
सालिम-सान्तिपुरी कर जगमग जोती ।
लील गलील-झील कर अनमोल मोती,
माता कर हिया परे नीदो रे, नींदो रे ।।
दीन-हीन-चिन्तामनी, सन्त-कल्पपद्रुम बेटा रे,
कहाँ कर कहाँ रऊरे मनुख-प्रेम से आली ।
जगत कर कर्त्ता-धर्त्ता त्राता निकबर घाली,
माता कर हिया परे नीदो रे, नींदो रे ।।
कलयान कमल सुभ करुणाजतन बेटा रे,
मंगलगान सम गगन बेधि कर आली ।
कृपा-प्रसाद-सोत-त्रिसित लोके घाली,
माता कर हिया परे नींदो रे ।।[१]

●

बलदेव पाण्डेय 'बलभद्र'

आप गया-जिले के 'ओकरी' (घोसी) नामक ग्राम के निवासी श्रीमनबोध पाण्डेय[२] के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९२८ वि० (सन् १८७१ ई०) की चैत्र कृष्ण-चतुर्थी को हुआ था।[३] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा संस्कृत के माध्यम से हुई। संस्कृत-साहित्य में आपने ज्योतिष और आयुर्वेद का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया था। सं० १९४९ वि० के आसपास आपकी काव्य-रचनाएँ प्रकाश में आने लगी थीं। कविता की प्राचीन शैली के आप

---

१. 'प्रेमलहरी' से।—देखिए, 'नागपुरी और उसके बृहत्-त्रय' (वही), पृ० ५४-५५।

२. आपके पूर्वज युक्तप्रान्त (अब उत्तर-प्रदेश) के उन्नाव जिले से पहले 'चिरान' (छपरा, बिहार) आये, तदनन्तर गया-जिले के उक्त ग्राम मे स्थायी रूप से बस गये। आपके पिता-पितामह आदि अपनी विद्वत्ता के लिए जनश्रुत व्यक्ति थे।

विशेष प्रेमी थे। कवित्त, सवैया, चौपाई आदि छन्दों में आपकी समस्या-पूर्त्तियाँ मिलती हैं। आपकी हिन्दी-रचनाएँ यत्र-तत्र इतनी अधिक मिलती है कि उन्हे संकलित कर दिया जाय, तो एक ग्रन्थ अवश्य तैयार हो जायगा। काव्य-प्रतिभा के साथ-साथ आपको मधुर-कण्ठ होने का भी वरदान प्राप्त था। आप अपने रचित गीतों को बड़े ही मधुर राग से गाते थे। आपकी कविताओं में शृंगार, करुणा और वात्सल्य-रस का बड़ा ही मधुर समन्वय हुआ है। समस्या-पूर्त्तियों के लिखने में आपका आशुकवित्व परिलक्षित होता था।[१] स० २०१३ की भाद्र शुक्ल-एकादशी को आपका परलोक-गमन हुआ।

उदाहरण

(१)

चाहौ सबै अघनाशन को,
तब तीरथराज में मंजिये जाई,
जहँ भानुसुता अरु गङ्ग विराजत,
गुप्तगिरा मिलि बेनी कहाई।
अक्षयवट फल देत उन्हे,
जेहि सत्य श्रद्धा तँह अंक मिलाई,
सुनिके अब हर्ष बढे मन में,
बलभद्र चले गृह-काज विहाई ॥[२]

(२)

कचमेचक झारि सुधारि लिये,
अलनीगन पेख किये शोरबा,
अधराम्बर लोल कपोल बने,
शुक तुण्ड ही घ्राण लसी रदवा,
अति पीन पयोधर उन्नत है,
कल कुम्भून लाज रही गरबा,
मदिरेक्षण नारि लिये गगरी,
गगरी पर मौज करे करबा ॥[३]

---

१. सम्प्रति, आपके कनिष्ठ पुत्र डॉ० मिथिलाशरण पाण्डेय (इतिहास-विभाग, पटना विश्वविद्यालय, पटना) आपकी परम्परा के पालकों में हैं।

२. उन्हीं के द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री से।

३. वही।

बलिराम मिश्र

आप गया-जिलान्तर्गत 'बारा' (पो० कुर्था) नामक स्थान के निवासी पं० विद्याधर मिश्र के सुपुत्र थे। आपका जन्म सन् १८८५ ई० की २ जनवरी (पौष कृष्ण-पंचमी) को हुआ था।[१] आपकी शिक्षा-दीक्षा आपके ननिहाल जहानाबाद (गया) में हुई। आपने ज्योतिष, प्राचीन मध्यमा की परीक्षा, श्रीव्रजभूषण संस्कृत-महाविद्यालय, खरखूरा (गया) से पास कर सन् १९०७ ई० से अपनी शिक्षा का क्रम स्थगित कर दिया।

आपमें काव्य-रचना की प्रवृत्ति आरम्भ से ही थी। सन् १९०९ ई० से आप क्रमबद्ध रचना करने लगे। आपकी दो पुस्तकाकार कृतियाँ हिन्दी में प्रकाशित बतलाई जाती हैं—(१) सत्यनारायण-व्रत-कथा का हिन्दी-पद्यानुवाद और (२) सग्राम-पचासा। आप लगभग ६० वर्ष की अवस्था में सन् १९४५ ई० के ३ अप्रैल को परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

प्यारे तुम्हें बिन भावत है नहिं,
भोजन, भौन, प्रासाद, सुहावन।
हाय कहाँ तुम जाई बसे,
चितचोर कहाँ गई प्रीति सुपावन॥
चैन नहीं दिन रैन रहै,
निसि सैन समे गृह लागे भयावन।
बलिराम महादुःखदायी सुसाज,
सजाई के आई है सुन्दर सावन॥[२]

(२)

राम युवराज होत, दासी कैकयी से कही,
राजा प्रजा दोनों कहत हैं, तौ कहन दै।
सकल सृंगार तजि, कोपगृह जाके रहौ,
दसरथ को आज, सोकधारा में बहन दै।

---

१. श्रीरामनरेश सिंह (प्रधानाध्यापक, माध्यमिक विद्यालय, अमरा, पो० सियाडीह, गया) द्वारा दिनाक २७ अगस्त, सन् १९७३ ई० को प्रेषित और परिषद् के साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के आधार पर।

२. श्रीरामनरेश सिंह (वही) द्वारा प्राप्त।

चौदह बरस जाके, राम बन में निवास करें,
औध को राज-भार, भरत को सहन दैं।
ज्यौं लौं बरदान दोऊ, पूरा न करैंगे तौलों,
जूरा मत बाँध, बाल बगरौ रहन दै॥[१]

★

ब्रजकिशोर नारायण 'बेढब'

आप पटना-जिलान्तर्गत 'अमावाँ' (राज) नामक स्थान के निवासी श्रीमाधो प्रसादजी के सुपुत्र थे। आपका जन्म सन् १८८५ ई० के १४ अक्टूबर को हुआ था।[२] आप बचपन में ही गया-नगर में चले आये, जहाँ जीवन-पर्यन्त रहे। आपकी आरम्भिक शिक्षा भी वहीं हुई। मिड्ल-परीक्षा में ही आपने अपनी विशेष प्रतिभा का परिचय दिया और छात्रवृत्ति प्राप्त की। पिता का देहान्त अल्पवय में ही हो जाने के कारण आपने अपने अध्यवसाय से ही आगे शिक्षा के लिए मार्ग प्रशस्त किया। मिड्ल तक हिन्दी पढ़ी, फिर आठवीं कक्षा में उर्दू-फारसी ले ली। फारसी में आपकी दक्षता देख स्कूल के मौलवी विस्मय-विमुग्ध रह गये। आगे चलकर आप टाउन-स्कूल, गया (तत्कालीन हरिदास-सेमिनरी) से प्रथम श्रेणी में प्रवेशिका-परीक्षा पास कर पटना-कॉलेज के आइ० एस्-सी०-वर्ग में दाखिल हुए। वहाँ मिण्टो-होस्टल में बिहार के भूतपूर्व मुख्य-मन्त्री डॉ० श्रीकृष्ण सिंह तथा भूतपूर्व वित्त-मन्त्री डॉ० अनुग्रहनारायण सिंह के अतिरिक्त अनेक गण्यमान्य व्यक्ति आपके मित्र थे। आइ० एस्-सी०-परीक्षा पास करने के बाद घरेलू परिस्थितियों के कारण आपको नौकरी स्वीकार करनी पड़ी। आरम्भ में आप कई स्कूलों में शिक्षक रहे। फिर, कचहरी में 'सिरिश्तेदार' हुए और कानून की परीक्षा पास कर वकील बने। वकालत आपने पहले-पहल सन् १९१७ ई० में, गया में शुरू की और जीवन के अन्तिम दिनों तक आप इसी जीविका से सम्बद्ध रहे। वकालत के साथ-साथ आप सार्वजनिक हित के कामों में भी रुचि लेते रहे। महात्मा गांधी द्वारा प्रवर्त्तित असहयोग-आन्दोलन तथा राष्ट्रवादी विचारधारा का आपके विचारों पर पर्याप्त प्रभाव था। आप समाज-सुधार और धार्मिक सहिष्णुता के कट्टर समर्थक थे।

साहित्य के अध्ययन और साहित्य-सृजन की ओर आपका झुकाव प्रारम्भ से ही था। किन्तु, आपके साहित्यिक-जीवन का बाजाप्ता आरम्भ सन् १९२९ ई० (सं० १९८६ वि०) से हुआ, जब आप 'कुश्ता' साहब के सम्पर्क में आये। उन्हीं की प्रेरणा से

---

१. श्रीरामनरेश सिंह (वही) से प्राप्त।

२. आपके सुपुत्र और हिन्दी के सुपरिचित लेखक डॉ० शिवनन्दन प्रसाद (हिन्दी-विभागाध्यक्ष, भागलपुर-विश्वविद्यालय) द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित विवरण के अनुसार।—देखिए, 'योगी' (साप्ताहिक, २८ नवम्बर, सन् १९५९ ई०) के अंक में श्रीबाचस्पति बाँकीपुरी-लिखित 'बेढब गयावी की कविताएँ' शीर्षक लेख भी।

आप हिन्दी और उर्दू में हास्य एवं व्यंग्यपूर्ण रचनाएँ करने लगे। उस समय के कवि-सम्मेलनों और मुशायरों में आपकी हास्यपूर्ण रचनाएँ सुनकर लोग लोट-पोट हो जाते थे। श्रीअवधकिशोर प्रसाद 'कुश्ता', श्रीसुखदेव प्रसाद 'बिस्मिल' और आपका 'त्रिक्' अक्सर कवि-सम्मेलनों और मुशायरो में देखा जाता था। आपकी स्फुट रचनाएँ तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में आदरणीय स्थान पाती थी। आपकी कोई पुस्तकाकार रचना तो नहीं मिलती, केवल स्फुट रचनाएँ ही प्राप्त होती हैं।[१] आप सन् १६५८ ई० की ३ जुलाई को परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

वहाँ लम्बे लम्बे हैं गेसू कमर तक,
यहाँ टीक रखने में मुश्किल पड़ी है।
वहाँ है घड़ा उसकी पतली कमर पर,
यहाँ 'रिस्ट' पर एक छोटी घड़ी है,
वहाँ पाय नाजुक में भारी कड़े हैं,
यहाँ मूछ दिक्कत से अपनी कड़ी है।
गरज यह, तजरबा बताता है 'बेढब',
कि हर शय में मर्दों से औरत बड़ी है।[२]

(२)

जब से फैशन की धुन समाई है,
मूँछ दाढ़ी पर आफत आई है।
कर लें बाबू हजार बी० ए० पास,
घर में बी० बी० की ही दुहाई है।
उनकी दो बीबियों में सुबहो-शाम,
रूस-जापान की लड़ाई है।

---

१. डॉ० शिवनन्दन प्रसादजी (वही) के पास आपकी प्रतिनिधि स्फुट रचनाओ का एक संग्रह सुरक्षित है, जिसके शीघ्र ही प्रकाशित होने की सम्भावना है।

२. उन्हीं से प्राप्त।

रोटी चलती नही वकालत से,
हमसे अच्छा तो 'नानबाई' है ।
घर मे क्यों रक्खे इस्त्री कोई,
जब खड़े घाट की धुलाई है ।
कहते अमले सभी है हाकिम से,
तू खुदा है, तेरी खुदाई है ।
बज़्म शोअरा में क्या ही बेढब ने,
अपनी डफली अलग बजाई है ।[1]

ब्रजविहारी सिंह

आप मुजफ्फरपुर-जिले के 'वसन्तपुर-पट्टी' (थाना--पारू) नामक ग्राम के निवासी बाबू महावीरप्रसाद सिंह के पुत्र थे । आपका जन्म सं० १९३९ वि० (सन् १८८२ ई०) की आश्विन शुक्ल-अष्टमी (चन्द्रवार) को हुआ था ।[2] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई । १६ वर्ष की उम्र में आपने मिड्ल-इङ्गलिश की परीक्षा पास कर ली थी । उसके बाद आपने स्वतन्त्र रूप से अध्ययन करना शुरू किया । स्वाध्याय के बल पर आपने अँगरेजी, हिन्दी, उर्दू, फारसी, बँगला, गुजराती और मराठी भाषाओं का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर लिया था । इन सारी भाषाओं में आप लिखना और पढ़ना दोनों जानते थे । सं० १९५७ वि० में आपने छपरा में अपनी स्वतन्त्र दवा की दूकान खोली, जिसके माध्यम से आपने वहाँ अच्छा यश अर्जित कर लिया था । उन्ही दिनों सुरसंड के श्री सरयूप्रसाद नारायण सिंह[3] से आपका सम्पर्क बढ़ा । उन्होंने अपने राज के प्रबन्धक के पद पर आपको नियुक्त कर लिया । आपने सुरसंड-राज की सेवा में अपने जीवन के बाईस वर्ष लगा दिये थे । बीच-बीच में यथावसर आपने दूसरे राज्यों एवं मठों, जैसे शिवहर, सीतामढ़ी आदि की भी देख-रेख की । सुरसंड-राज में रहते हुए आपने वहाँ 'राजेश्वरी उच्चाङ्गल विद्यालय' की स्थापना की थी । उस राज के प्रबन्धक के पद पर आसीन रहकर उक्त विद्यालय की अभिवृद्धि में आप सदा तत्पर रहे । सं० १९५७ वि० से आप रचनात्मक साहित्य की ओर प्रवृत्त हुए । आपने कलकत्ता से निकलनेवाले साप्ताहिक पत्र 'भारत-मित्र' तथा पटना से प्रकाशित होनेवाले साप्ताहिक 'बिहार-बन्धु' के सम्पादकीय

---

१. डॉ० शिवनन्दन प्रसादजी (वही) से प्राप्त ।

२. श्रीमदन, साहित्यभूषण, विशारद (ग्राम-पो० शिवहर, मुजफ्फरपुर) द्वारा दिनांक ७ मई, सन् १९५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के अनुसार ।

३. भारत-सरकार के जापान-स्थित भूतपूर्व राजदूत स्वनामधन्य श्रीसी० पी० एन० सिंह के पिता ।

विभाग में कई वर्षों तक कार्य-सम्पादन किया। तत्पश्चात् सन् १९०८ ई० में छपरा से प्रकाशित होनेवाले पाक्षिक पत्र 'हितचिन्तक' के सम्पादक एवं प्रबन्धक का कार्य-भार भी आपने सँभाला।[१] हिन्दी में आपके द्वारा लिखित 'कोटा-रानी' नामक एक उपन्यास श्रीवेङ्कटेश्वर प्रेस, बम्बई से प्रकाशित हुआ था। उस जमाने में उसकी एक हजार प्रतियाँ प्रकाशित हुई थी। हिन्दी में आयुर्वेद-विषयक एक पुस्तक 'वनौषधि-चन्द्रिका' की रचना भी आपने की थी। आयुर्वेद के अतिरिक्त होमियोपैथी के सम्बन्ध में भी आपने एक पुस्तक 'एलेक्ट्रो-होमियोपैथी' के नाम से लिखी थी। दुर्भाग्यवश अद्यावधि ये दोनों उपयोगी पुस्तकें प्रकाशित न हो सकी।[२] आपके द्वारा लिखित साहित्यिक निबन्ध एवं स्फुट कविताएँ 'भारत-मित्र', 'बिहार-बन्धु', 'भूमिहार-ब्राह्मण-पत्रिका' आदि पत्र-पत्रिकाओं में यथावसर प्रकाशित हुआ करती थी। सन् १९३९ ई० की ५ जनवरी को संध्या ५ बजे अपने घर पर ही आपका परलोकवास हुआ। आपकी रचना के उदाहरण हमें नही प्राप्त हो सके।

मथुराप्रसाद सिंह

आप सारन जिलान्तर्गत 'तेलछा' नामक ग्राम के निवासी श्रीवेणीप्रसाद श्रीवास्तव के पुत्र थे। आपका जन्म सं० १९४० वि० (सन् १८८३ ई०) की श्रावण शुक्ल-सप्तमी को हुआ था। आपका रहन-सहन बहुत उच्च था। आपका बचपन काफी सुख और सम्पन्नता में बीता। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। घर ही पर विद्यालयीय शिक्षा के अतिरिक्त एक मौलवी साहब आपको उर्दू और फारसी पढ़ाने आया करते थे। विद्यालयीय शिक्षा के बाद आपका प्रवेश उच्च विद्यालय में हुआ। तदनन्तर, आपने कलकत्ता-विश्वविद्यालय से बी० ए० की डिग्री प्राप्त की। बी० ए० पास करने के बाद आपने कानून का अध्ययन किया। इसमें उत्तीर्ण होकर आपने छपरा में ही वकालत शुरू की। आपकी वकालत कुछ दिनों में ही चल निकली। उन्ही दिनों देश में स्वतन्त्रता-आन्दोलन की लहर हिलकोरें ले रही थी। देश के नवयुवकों में देश-प्रेम की सोई हुई चिनगारी एकाएक धधक उठी। बहुत-से सरकारी अधिकारियों ने अपनी नौकरी से त्याग-पत्र दे दिया। सारा देश उस आन्दोलन से आन्दोलित हो उठा था। देश के अधिक-से-अधिक लोग उसमें भाग लेने के लिए बेचैन हो उठे।[३] उन्ही दिनों आपने भी अपनी चलती वकालत छोड़कर काँगरेस के

---

१. देखिए, 'लक्ष्मी' (मासिक, गया, फरवरी, सन् १९०८ ई०, वर्ष ५, अक ८), पृ० ३१।

२. श्रीमदन, साहित्यभूषण के अनुसार उक्त दोनो पुस्तको की पाण्डुलिपियाँ, आपके पुत्र के पास आज भी सुरक्षित है।

३. देखिए, 'सुधा' (मासिक, जून १९३८ ई०, अक १)। आपके परिचय-लेखन मे उक्त सामग्री के अतिरिक्त दिनाक २५ जुलाई, सन् १९५६ ई० को श्रीविपिनविहारी 'अकुल' तथा श्रीजितेन्द्र प्रसाद (११, मैंगल्स रोड, पटना) द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री से भी सहायता ली गई है।

कार्यों में गहरी दिलचस्पी लेना शुरू कर दिया। आपने डॉ० राजेन्द्र प्रसादजी का सान्निध्य प्राप्त किया और अपने को उनके सच्चे सहयोगियों में प्रमाणित किया। सच्ची देश-सेवा की लगन से काम करने के कारण आपने कभी भी अपने व्यक्तित्व को महत्त्वपूर्ण नहीं बनाया। दिखावट की झलक तक आपमें नहीं रही। यही कारण है कि आपकी विनयशीलता और नम्रता की चर्चा अभी भी है।[१] आपके गाँव 'तेलछा' ने 'साबरमती' का रूप ले रखा था। वहाँ घर-घर चर्खे चलने लगे थे। आप बड़ी ही धार्मिक विचारधारा के व्यक्ति थे। 'रामचरितमानस' और 'गीता' का पाठ करना आपकी दिनचर्या थी। आपने अपने जीवन को देश-सेवा के लिए समर्पित कर दिया था। इस सिलसिले में आपको कई बार जेल-यातना भी सहनी पड़ी। अनेक कष्टों के बीच जेल जाना और वहाँ से मुक्त होकर पुनः वहीं जाने का आपका कार्यक्रम-सा हो गया था। सन् १९४२ ई० की क्रान्ति के छिड़ने पर भी आप चुपचाप बैठे नहीं रहे। इस बार भी आप जेल गये। स्वतन्त्रता-संग्राम के जिन पुजारियों ने अपने जीवन को मातृभूमि की बलिवेदी पर उत्सर्ग किया है, उनमें आप सदा अग्रणी रहे। आजीवन आपने बिहार-प्रान्तीय काँगरेस-कमिटी का मन्त्रिपद सँभाला। सार्वजनिक सेवा की दृष्टि से आपने बिहार-प्रान्तीय सेवा-समिति का प्रधान रहकर नेतृत्व किया था। अनेक वर्षों तक आप 'गांधी-सेवा-संघ' और 'चर्खा संघ' के भी सदस्य रहे। 'बिहार-विद्यापीठ' (सदाकत आश्रम) के ता आप संस्थापकों में थे। 'बिहार-विद्यापीठ' एक प्रकार से आप-जैसे सुधी चिन्तकों की ही देन है। डॉ० राजेन्द्र प्रसादजी के निजी सचिव होने के कारण आपने वर्षों तक देशसेवा के अनेक कार्यों में अनेक प्रकार का साहाय्य प्रदान किया। 'चम्पारन-सत्याग्रह' से लेकर 'भूकम्प पीड़ितों' की सहायता आदि में आपका योगदान बड़ा ही उल्लेख्य रहा है। उस समय आपने भारत के विभिन्न प्रान्तों के अलावा सिलोन और बर्मा का भी दौरा किया।[२]

हिन्दी-साहित्य की सेवा में भी आपने कम सहयोग नहीं किया। कई वर्षों तक 'बिहार प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन' तथा 'अखिलभारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन' की स्थायी समिति के आप सदस्य रहे। संगीत और साहित्य-कला से आपको बड़ा प्रेम था। पटना से प्रकाशित होनेवाले तत्कालीन सुप्रसिद्ध साप्ताहिक पत्र 'देश' के सम्पादन एवं संचालन में आपका पूरा सहयोग प्राप्त था। कलकत्ता में जिस समय अ० भा० हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का तीसरा वार्षिक अधिवेशन हुआ था, उस समय आपने उसमें पूरा सहयोग किया था। उस अधिवेशन की अध्यक्षता भारतेन्दु हरिश्चन्द्रजी के मित्र चौधरी बदरीनारायण 'प्रेमघन' जी ने की थी। राजेन्द्र बाबू उस अधिवेशन के स्वागत-मन्त्री थे। आपके योगदान से अधिवेशन की शोभा अधिक बढ़

---

१. आपके पितामह श्रीमुन्शी शीतलाप्रसाद श्रीवास्तव, चुनार, आजमगढ़, मिर्जापुर, अहरौरा, देवगाँव आदि स्थलों में तहसीलदार थे। सन् १८९६ ई० में डिप्टी-मजिस्ट्रेट के पद से सेवा-निवृत्त होकर वे स्वर्गवासी हुए। आपके पौत्र श्रीविपिनबिहारी 'अकुल', एम्० ए० द्वारा दिनांक २५ जुलाई, सन् १९५६ ई० को प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग में सुरक्षित सामग्री से।

२ देखिए, 'सुधा' (मासिक, जून, १९३८ ई०) के निबन्ध का उपसंहार।

गई थी। आपके द्वारा हिन्दी में लिखित स्फुट लेख तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ करते थे। सन् १९४७ ई० की २ फरवरी (फाल्गुन, शिवरात्रि) को दिल्ली में अचानक हृदय की गति रुक जाने से आपका परलोक-गमन हो गया। आपकी रचना के उदाहरण हमें नहीं प्राप्त हो सके।

महेन्द्र सिंह[1]

आप सारन-जिले के 'मानिकपुर' (गोपालगंज) नामक ग्राम के निवासी बाबू दुर्गा सिंहजी[2] के सुपुत्र थे। आपका जन्म सं० १९४३ वि० (सन् १८८६ ई०) की श्रावण-अमावास्या को हुआ था।[3] आपकी आरम्भिक शिक्षा घर पर ही एक मुंशीजी के द्वारा हुई। उसके बाद आप गोपालगंज के बी० एम० एच० ई० स्कूल में भेजे गये। पढ़ने में आपकी विशेष रुचि थी। अतः हमेशा आपको प्रथम श्रेणी के ही अंक आते थे। आपने उसी स्कूल से मैट्रिक तक की शिक्षा प्राप्त की। संस्कृत से भी आपको प्रेम था। इस कारण, आपने सस्कृत-प्रथमा की परीक्षा भी दी। अपने पिता की मृत्यु हो जाने के कारण मध्यमा की परीक्षा आप नही दे सके। सन् १९१० ई० में आपने अध्यापन की वृत्ति अपनाई। तब से सन् १९२० ई० तक पूर्ण योग्यता के साथ आप उक्त कार्य में संलग्न रहे। सन् १९२० ई० में जब महात्मा गांधी ने असहयोग-आन्दोलन के लिए आह्वान किया, तब विदेशी वस्त्रों एवं वस्तुओं का बहिष्कार कर आप उस आन्दोलन में कूद पड़े। उस आन्दोलन से विमुख करने के लिए उस समय आपको अनेक प्रकार के प्रलोभन दिये गये, किन्तु आप अडिग रहे। सन् १९२१ ई० की जनवरी में आप गिरफ्तार कर लिये गये। उसके बाद भी आपने कई बार जेल की यातनाएँ सही। सन् १९२३ ई० में आप गोपालगंज लोकल बोर्ड के चेयरमैन हुए। उस पद को भी आपने बड़ी मुस्तैदी से सँभाला। उस पद पर रहकर आपने अनेक स्कूल खोले और उस क्षेत्र में शिक्षा का अच्छा विकास किया। आपने अपने गाँव में, सन् १९१६ ई० में ही एक नेशनल स्कूल खोल रखा था।

सामाजिक कार्यों में भी आपकी विशेष दिलचस्पी थी। महात्मा गांधी के कट्टर अनुयायी होने के कारण आपने हरिजनों के विकास-कार्य में भी हाथ बटाया। उनके लिए आवास, स्कूल, मन्दिर, कुएँ आदि की व्यवस्था की। अपनी निजी सम्पत्ति से आपने अनेक कुएँ खुदवाये थे। गाँव में आपकी बड़ी प्रतिष्ठा थी। चाहे जैसी भी समस्या हो,

---

१. आप अपने द्वारा स्थापित महावीरजी के मन्दिर मे नित्य झाड़ू देना परम कर्त्तव्य मानते थे। अतः आगे 'बाबा झाड़ूदास' के नाम से भी प्रसिद्ध हुए।

२. ये बड़े ही स्वाभिमानी और पुरुषार्थवाले व्यक्ति थे। इनकी पत्नी 'सयोगादेवी' भी एक निर्भीक और धर्मात्मा महिला थी। वर्त्तमान श्रम-मन्त्री श्रीमती रामदुलारी सिन्हा आपकी ही पुत्री है।

. आपके पुत्र श्रीरामनगीना सिंह 'विकल' द्वारा प्रेषित और साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के आधार पर।

उसके सुलझाने के लिए आप ही चुने जाते थे। विधवाओं और दीन-दुखियों के तो आप प्राण ही थे। आपकी दानशीलता देखते ही बनती थी।

सन् १६३६ ई० में कॉंगरेस की नीति से मतभेद हो जाने के कारण आपने राजनीति से सन्यास ले लिया। सन् १६४७ ई० के २६ मई को आप वास्तव में एक संन्यासी हो गये। आध्यात्मिकता आपने अपने माता-पिता से विरासत में ली थी। सन् १६१० ई० में, लगभग २४ वर्ष की अवस्था में ही, आपने पैदल अयोध्या की यात्रा की। आगे चलकर आपने वहीं के सुप्रसिद्ध हनुमत्-निवास से 'रामनाम' की दीक्षा ली। उसके बाद, आपका अधिकांश जीवन तीर्थ-भ्रमण और ईश्वर-भजन में ही व्यतीत हुआ।

आपकी साहित्य-सेवा का आरम्भिक वर्ष सन् १६३७ ई० माना जाता है। आपने मुख्यतः खड़ीबोली में भजनों की रचना की है। आपके लिखे कुछ भजन भोजपुरी में भी बतलाये जाते हैं। कहते हैं, आपने श्रीमद्भागवत का भी अनुवाद किया था। आपके द्वारा लिखित केवल दो पुस्तकें प्रकाशित हुई थीं - (१) 'पाँच विकट यात्राएँ' [१] और (२) 'मानसरोवर की झाँकी'। [२] इनके अतिरिक्त आपकी और कोई पुस्तकाकार रचना नहीं मिलती। सन् १६५० ई० के मई महीने में आप कैंसर-रोग के शिकार हुए और २८ जुलाई, सन् १६५१ ई० की संध्या के सात बजे आप साकेतवासी हो गये।

उदाहरण

(१)

दीन दयालु दया करिके, भवसागर से करु पार मुझे।
मझधार पड़ी प्रभु नाव मेरी, कहुँ सूझत नाहि अधार मुझे॥
परिवार भरा अति भार प्रभो, अरुझावत विविध प्रकार मुझे।
निरधार भयो पतवार विना, अब डोलत नाथ उबार मुझे॥[३]

(२)

भज लो रामनाम नित प्यारे !
आये जब कर मूँठी बाँधे, जननि जनक दुलारे।

---

१. वाणीमन्दिर, छपरा से सन् १६४० ई० में प्रकाशित।

२. वहीं से प्रकाशित। युद्ध के कारण ये दोनों पुस्तकें बिहार-सरकार द्वारा जब्त कर ली गई थीं।

३. श्रीमती रामसँवारीदेवी (गोपालगंज, छपरा) से प्राप्त। यह भजन सन् १६३० ई० मे हजारीबाग सेण्ट्रल जेल मे लिखा गया था।

हितमित कुल परिवार मुदित मन, धावत बदन निहारे।
बालापन तुम खेल बिताए, तरुन तिया पर वारे।
कौड़ी पीछे जन्म गँवाए, प्रभु की सुरति बिसारे।
जब लों तनिक रस रहत बदन, सब मिली कसि-कसि गारे।
प्रान पखेरू होत बटोही घर से देत निकारे।
या दुनियाँ की रीति पुरानी, देखहु नयन उघारे।
स्वारथ से सब संग लगे है, कोउ नहि अंत तुम्हारे।
अजहूँ चेत सुबोध बावरे, बिगरी ताहि सुधारे।
संत समागम नेह लगाओ, जो भव-सागर तारे॥[१]

(३)

पिया नाहीं मिलत हमार ए सजनी,
स्वामी नाहि मिलत हमार ए राम।
रैन दिवस हम चहुँ ओर खोजनी,
सायं आउर परभात ए राम।
अष्टजाम आँख मूँदि हम खोजनीं,
पिया के सुरत ना दिखात।
कासी में खोजनीं अजोधेया मे खोजनी,
गंगा - जमुना किनार।
मथुरा वृन्दावन पचि-पचि खोजनी,
घर - घर कइनीं पुछार।
अंग बंग कलिंग में खोजनीं,
उतकल आउर असाम।
मध्य, पंजाब, गुजरात में खोजनीं,
हैदराबाद निजाम।

---

१. श्रीमती रामसँवारी देवी (वही) से प्राप्त। मृत्यु-शय्या पर लिखित।

कासमीर करनाटक खोजनी,
बम्बे आउर मदरास।
सातो पुरी रामेसवर खोजनी,
थकि-थकि भइनी उदास।
खोजत खोजत जब वरधा अइनी,
सरधा भइल भरपूर।
ज्ञान अंजन गुरु गाँधी अँजलन,
भरम सब हो गये दूर।
सत्य अहिंसा दीपक दिहले,
रामनाम आधार।
जगमग जोति 'शरन' हिय छिटकत,
घट घट पिया के निहार॥ [1]

राजदेव झा

आप दरभंगा-जिलान्तर्गत 'भखराइन' (मधेपुर) नामक ग्राम के निवासी पं० तिलकदत्त झा[2] के पुत्र थे। आपका जन्म सन् १८८८ ई० की अग्रहायण शुक्ल-पंचमी (सोमवार) को हुआ था।[2] आपकी शिक्षा १५ वर्षों तक हुई, किन्तु उसी समय आपके पिता का निधन हो गया, जिसके कारण आपका अध्ययन छूट गया। अर्थाभाव के कारण यद्यपि आपका विद्यालयीय अध्ययन नहीं हो सका, तथापि आपने व्याकरण, साहित्य, पिंगल, ज्योतिष आदि का स्वतः गहन अध्ययन किया। तदनन्तर, आपने कविताएँ एवं लेख लिखना शुरू किया। आपका एक गीतिनाट्य 'बाल्य गीतगोविन्द' नाम से प्रसिद्ध है। आप हिन्दी, बँगला, मैथिली, उर्दू आदि भाषाओं में काव्य-रचना किया करते थे। आपके लिखने की शैली बहुत ही सुन्दर तथा सुबोध थी। भारतीय राजे-महाराजों के यहाँ आपकी कविताएँ बड़े आदर से सुनी जाती थीं। आपकी प्रकाशित रचनाओं में निम्नलिखित मुख्य हैं—१. ब्राह्मण-शुद्धि-सभा, २. कर्ण कायस्थ-कुरीति-वर्णन, ३. देश-सुधार, ४. कलकत्ता की हिन्दू-मुसलमान-लड़ाई का वर्णन और ५. भविष्यवाणी।

---

१. श्रीमती रामसँवारी देवी (वही) से प्राप्त। यह भोजपुरी-भजन रचनात्मक सत्याग्रह के अवसर पर सती-आश्रम की सभा मे सुनाया गया था।

२. इनकी गणना इने-गिने विद्वानो मे होती थी। इनके पूर्वज भी बड़े विद्वान् थे। साहित्यिक इतिहास-विभाग में दिनांक २१ सितम्बर, सन् १९५६ ई० को प्राप्त और सुरक्षित सामग्री से। —देखिए, 'जयन्ती-स्मारक ग्रन्थ' (वही, पृ० ६७२) भी।

इन प्रकाशित रचनाओं के अतिरिक्त (१) 'शिव-विवाह' (काव्य), (२) 'हनुमान्-दिग्विजय' (नाटक), (३) 'सत्य हरिश्चन्द्र', (४) 'छात्रों के लिए सदाचार-वर्णन', (५) 'भूकम्प-वर्णन' आदि पुस्तकें अभी अप्रकाशित ही हैं। सन् १९५० ई० में आप परलोक-वासी हो गये। आपकी रचना के उदाहरण हमें नहीं मिले।

राधा प्रसाद

आप शाहाबाद-जिला के 'भरखर' (मोहनिया) नामक ग्राम के निवासी श्रीश्याम सुन्दरलालजी के पुत्र हैं। आपका जन्म सं० १९४६ वि० (सन् १८८९ ई०) की फाल्गुन शुक्ल-चतुर्थी को हुआ।[१] आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। तदनन्तर, आपने 'सेण्ट्रल हिन्दू कॉलेज', वाराणसी से बी० ए० की परीक्षा पास की। उक्त परीक्षा में सफलता प्राप्त करने के बाद आपने अध्यापन कार्य प्रारम्भ किया। अध्यापन के सिलसिले में आपने टाउन हाईस्कूल, आरा तथा राजराजेश्वरी हाईस्कूल, सूर्यपुरा (आरा) की सेवा की। इन विद्यालयों में आप अँगरेजी-भाषा के शिक्षक पद पर रहे। अध्यापन-कार्य करते हुए आपने पटना ट्रेनिंग-कॉलेज से एस्० टी० सी० की परीक्षा में उत्तीर्णता प्राप्त की। सन् १९१६ ई० से लेकर सन् १९४० ई० तक लगातार आपने शिक्षण-कार्य किया। इन्ही दिनों आपने अपनी साहित्यिक रचनाएँ भी की, जो कालक्रम से प्रकाश में आईं। हिन्दी की प्राचीन कविताओं के प्रति आपकी बड़ी श्रद्धा थी। आप बड़े ही सुयोग्य लेखक, सफल वक्ता तथा हिन्दी के पोषक-प्रचारक थे। आपकी कोई प्रकाशित पुस्तक नहीं मिलती। आपकी साहित्यिक रचनाएँ उस समय की 'लक्ष्मी', 'शिक्षा' आदि पत्र-पत्रिकाओं में बड़े आदर के साथ प्रकाशित हुआ करती थी। आपकी रचना के उदाहरण हमें नहीं प्राप्त हो सके।

क्षेमधारी सिंह[२]

आप 'मधुबनी' नगर के निवासी श्रीबाबू हर्षधारी सिंह के द्वितीय पुत्र थे। आपका जन्म सन् १८९४ ई० की फाल्गुन कृष्ण-दशमी (बृहस्पतिवार) को हुआ था।[३] दस वर्ष की आयु में ही आपके पिता का देहान्त हो गया। आपके चाचा बाबू तन्त्रधारी सिंह ने आपका उपनयन-संस्कार करवाया। उन्हीं के अभिभावकत्व में आपकी शिक्षा-दीक्षा का प्रबन्ध हुआ। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। तदनन्तर, आपने संस्कृत के माध्यम से पढ़ना शुरू किया। सुप्रसिद्ध पं० श्रीबबुजन झाजी की देख-रेख में आपने पाणिनि-कृत अष्टाध्यायी और अमरकोश का अध्ययन आरम्भ किया। कुछ काल के अनन्तर आपका नाम 'वाटसन-विद्यालय', मधुबनी में लिखाया गया। तत्कालीन सुप्रसिद्ध

१ आपके द्वारा प्रेषित और 'साहित्यिक इतिहास-विभाग मे सुरक्षित सामग्री के अनुसार।

२. श्रीकरसाहब के नाम से प्रसिद्ध।

३. देखिए, 'निबन्ध-चन्द्रिका' (क्षेमधारी सिंह, सन् १९६६ ई०), पृ० 'क' (भूमिका-भाग)।

रायबहादुर पं० शिवशंकर झा उस विद्यालय के प्रधानाध्यापक थे। वे घर पर भी आपको पढ़ाने जाया करते थे। सन् १९१० ई० में आपने कलकत्ता-विश्वविद्यालय से प्रवेशिका (इण्ट्रेन्स)-परीक्षा पास की। तत्पश्चात् उच्च अध्ययन के लिए आप डॉ० गंगानाथ झाजी के अभिभावकत्व में, प्रयाग में पढने लगे। वहाँ म्योर सेण्ट्रल महाविद्यालय में आपका माम लिखाया गया। तर्कशास्त्र, इतिहास और संस्कृत लेकर आपने पढ़ना शुरू किया। प्रयाग जाकर आप प्रतिदिन त्रिवेणी-स्नान किया करते थे। सन् १९१३ ई० में आपने वहाँ से आई० ए०-परीक्षा पास की। सर डॉ० गंगानाथ झाजी के अभिभावकत्व में आपने उचित आचारादि की भी शिक्षा पाई। फिर, दर्शन और संस्कृत विषय लेकर आपने बी० ए० कक्षा में प्रवेश किया। किन्तु, उसी वर्ष पारिवारिक कारणवश आपको प्रयाग छोड़कर जी० बी० बी० महाविद्यालय, मुजफ्फरपुर आना पड़ा। दुर्भाग्यवश, उसी समय आपके चाचा अस्वस्थ होकर काशी-लाभ कर गये, फलतः आपका अध्ययन कुछ काल के लिए अवरुद्ध-सा हो गया और आपने एक शिक्षक का पद-भार स्वीकार कर लिया। मधुबनी के ही वाटसन-विद्यालय में आप सन् १९१४ से १९१७ ई० तक उक्त पद पर रहे। वहीं से आपने स्वतन्त्र रूप से बी० ए० की परीक्षा दी और सन् १९१८ ई० में उक्त परीक्षा पास की। बी० ए० पास करने के बाद आपकी नियुक्ति सरकारी सेवा में हो गई। किन्तु, आपने उसे छोड़ दिया। आपकी सेवा-क्षमता एवं त्याग देखकर तत्कालीन बिहार सरकार ने आपको मानद दण्डाधिकारी (ऑनरेरी मजिस्ट्रेट) के पद पर नियुक्त किया। आपके विद्वत्तापूर्ण न्याय से उच्च न्यायालय के न्यायाधीश भी बहुत प्रभावित हुए और सन् १९३१ ई० में तत्कालीन सरकार ने आपको 'रायबहादुर' की उपाधि से विभूषित करना चाहा, किन्तु आपने उसे भी स्वीकार नहीं किया।

न्याय-कार्य में संलग्न रहकर भी आप संस्कृत साहित्य के काव्य, व्याकरण, पुराण, धर्मशास्त्र, भारतीय एवं पाश्चात्य दर्शन, वेद और तन्त्र का अध्ययन करते रहे। आपका निजी पुस्तकालय आज भी आपके द्वारा रेखांकित ग्रन्थों से भरा-पडा है। मिथिला की पण्डित-परम्परा में जिन गण्य-मान्य व्यक्तियों के नाम आते हैं, उनमें श्रीदामोदर झा (सेवा निवृत्त न्यायाधीश), पं० नागेश्वर मिश्र आदि आपके शिष्य रह चुके हैं। तत्कालीन प्रसिद्ध पं० चुम्बे झा, म० म० पं० जयदेव मिश्र, पं० रविनाथ झा आदि भी आपके निकट सम्पर्क में रहनेवाले विद्वान् थे।[१] सन् १९२३ ई० में काशी की 'संस्कृत-विद्वत्-परिषद्' ने आपको 'वेदान्त-विनोद' की उपाधि से अलंकृत किया था। आप 'बिहार-उड़ीसा-संस्कृत-समिति' से भी परीक्षक के रूप में सम्बद्ध थे। सन् १९२६ ई० में, 'अखिलभारतीय मैथिल-महासभा' की ओर से जो 'विद्वत्सम्मेलन' हुआ था, उसके

---

१. आपके द्वारा रचित कुछ प्रमुख संस्कृत-पुस्तकों के नाम है—(१) श्रीभवानी शतनाम-स्तोत्र, (२) श्रीस्तुतिमाला, (३) श्रीकालीककारादि सहस्रनाम—१, (४) श्रीकर भक्ति-तरंग, (५) कालीककारादि शतनाम, (६) तारा तकारादि शतनाम, (७) कृष्ण-शतनाम, (८) सूर्य्य-शतनाम, (९) कालीककारादि सहस्रनाम—२, (१०) तारातकारादि सहस्रनाम, (११) सुरथचरितम्-महाकाव्यम्, (१२) चिन्माला, (१३) शान्तिमाला, (१४) शिवस्तुतिमाला, (१५) तारातत्त्व-माला, (१६) श्यामातत्त्वमाला, (१७) दिनकर सहस्रनाम, (१८) अर्चना-ख्याति, (१९) विकीर्ण पद्यानि, (२०) कामकला, (२१) तन्त्रसार-रहस्य तथा (२२) कर्पूर स्तोत्रस्य टीका।

सभापति-पद को आपने ही सुशोभित किया था। पुनः सन् १६३५ ई० में 'मैथिली-साहित्य-परिषद्' के स्वागताध्यक्ष का पदभार सँभालकर आपने मधुबनी की प्रतिष्ठा बढ़ाई थी। आपके नैसर्गिक विद्यानुराग का ही परिणाम था कि एक-से-एक धुरन्धर विद्वान् आपकी संगति का लाभ उठाना चाहते थे।

आपके द्वारा लिखित ४५ पुस्तकों की चर्चा आपकी 'निबन्ध-चन्द्रिका' नामक पुस्तक में हुई है। आपने संस्कृत[१], मैथिली, हिन्दी तथा अँगरेजी भाषाओं में उक्त पुस्तकें लिखीं। मैथिली में आपने कालिदास के सुप्रसिद्ध नाटक 'अभिज्ञान शाकुन्तल' का अनुवाद बहुत पहले ही किया था। इसके अतिरिक्त मैथिली में आपके द्वारा लिखित अधोलिखित पुस्तकें भी हैं—(१) सांख्य-खद्योतिका, (२) श्रीकरभक्ति-तरंग, (३) शृङ्गारपद दुहगोट, (४) निबन्ध-चन्द्रिका, (५) मनोविज्ञान और (६) कर्त्तव्यशास्त्र। मैथिली की उपर्युक्त पुस्तकों के अलावा आपके द्वारा रचित खड़ीबोली की ये पुस्तकें बतलाई जाती हैं—(१) नीतिशास्त्र, (२) भारतीय दर्शन-चयनिका, (३) अध्यात्म-विज्ञान, और (४) पाश्चात्य दर्शन[१]। आप सन् १६६१ ई० के २६ मार्च को परलोकगामी हुए।

उदाहरण

(१)

शिव शब्द कल्याणवाचक थिक। विश्वक वा सृष्टिक समस्त कल्याणक आधार उत्पत्ति थिक। एहि उत्पत्तिक सम्बन्ध में भारतीय विभिन्न दर्शन अपन-अपन मतानुसार विश्वक उत्पत्ति पर प्रकाश देलन्हि अछि। आस्तिक दर्शनक छओ गोट शाखा अछि, परन्तु सभक सीर एके थीक 'ईश्वर' वा 'ब्रह्म'। एहिसँ स्वतन्त्र आओर व्यापक शैव दर्शन अछि। एहि दर्शनक आदिगुरु शङ्कर थिकाह तथा शैव तत्त्वसँ ई आरम्भ होइत अछि, तैं शैव कहबैत अछि। शिव तत्त्वसँ तद्धित कएल गेल अछि व्यवहारावस्था में शिवक भक्त शैव कहबैत अछि। आओर ओ सम्प्रदायो कहबैत अछि शैव। प्रत्येक सम्प्रदाय

---

१. अँगरेजी में आपके द्वारा लिखित निम्नलिखित पुस्तकें हैं—(१) शेक्सपियर और मिल्टन, (२) अँगरेजी-अनुवाद (दुर्गासप्तशती), (३) इंगलिश ट्रान्सलेशन ऑफ उपदेश-सहस्री, (४) इंगलिश ट्रान्सलेशन ऑफ शतरुद्री, (५) इंगलिश ट्रान्सलेशन ऑफ वेणीसंहार, (६) ए स्टडी ऑफ वेस्टर्न फिलोसोफी, (७) अभिज्ञान शाकुन्तल, (८) इंगलिश ग्रामर ऐण्ड कम्पोजिशन, (६) एक्सप्लेनेट्री नोट्स, (१०) शांकर वेदान्त, तथा (११) डिक्शनरी, १६५५ ई०। इनमें कई अद्यावधि अप्रकाशित हैं।

एकर यत्न करैत अछि जे सर्वमान्य सिद्धान्तक स्थापना करी। ताहि मे शाक्त आओर 'वैष्णव' एहि दूनूक विषय पर अनेक विचार भेल अछि। एहि दूनू दर्शनक व्यापक निरूपणसँ छओ दर्शन एकर पोषक बनि जाइत अछि आओर अपन तत्त्वसँ उत्पन्न भए ओहि मे विलीन भए जाइत अछि। तहिना चरम श्रेयक अधिष्ठाता आदि तत्त्व शिवतत्त्व थीक जकर विचारक संग ३६ गोट तत्त्वक विवेचना कएल जायत।[१]

●

---

१. 'निबन्ध-चन्द्रिका' (वही), पृ० २०० ।

परिशिष्ट-२

(परिचय-तालिका)

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम	
१.	१	अचम्भित चौधरी 'दीन'	१. विनय-पुष्पांजलि	* ६. विनय-वाणी
		कवि-नाटककार-गद्यकार	२. स्वदेशी-संगीत	* ७. बालि-वध
		जन्म : सन् १८८६ ई०	(तीन भागों में)	* ८. रामराज्य की झाँकी
		प्रेमनगर-पोठिया	*३. दीन-सतसई	* ९. भक्त शबरी
		(भागलपुर)	*४. मानस-पूजन	*१०. भक्त रैदास
			*५. विविध विषय	
२.	४	अनुग्रहनारायण सिंह	१. मेरे संस्मरण	
		गद्यकार		
		जन्म : सन् १८८७ ई०		
		पोइवाँ (गया)		
३.	६	अनूपलाल मण्डल	१. रहिमन सुधा	१८. केन्द्र और परिधि
		कथाकार-गद्यकार-	२. निर्वासिता	१९. तूफान और तिनके
		सम्पादक-अनुवादक-	३. मीमांसा	२०. नारी : एक समस्या
		जीवनी-लेखक	४. रक्त और रंग	२१. शेष पाण्डुलिपि
		जन्म : सन् १८९६ ई०	५. समाज की वेदी पर	२२. गरीबी के दिन
		समेली (पूर्णिया)	६ सविता	२३. श्रीमद्भगवद्गीता
			७. साकी	२४. नीतिशास्त्र या समाजशास्त्र
			८. रूपरेखा	
			९. ज्योतिर्मयी	२५. महर्षि अरविन्द
			१०. वे अभागे	२६. मुसोलिनी का बचपन
			११. ज्वाला	२७. श्रीरघुवंश प्र० सिंह (कुरसेला) का जीवन-चरित्र
			१२. दस बीघा जमीन	
			१३. आवारों की दुनिया	
			१४. बुझने न पाये	२८ पंचामृत
			१५. अभिशाप	२९. उपनिषद् की कहानियाँ (दो भागों में)
			१६. दर्द की तसवीरें	
			१७ अभियान का पथ	३०. उपदेश की कहानियाँ (चार भागों में)

* तारक-चिह्नित रचनाएँ अप्रकाशित है। रचनाओ के प्रकाशित-अप्रकाशित होने का निर्णय प्राप्त सूचनाओ के आधार पर किया गया है।

क्र० सं०	प० सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
४.	६	अपूछलाल सिंह (अपूछ, अनूपलता, अनूपकवि, हरिजीकवि) कवि जन्म : सन् १८५५ ई० फुलकहा (मुजफ्फरपुर)	१. श्रीमोहन-दधिदान २. पावस-प्रकाश
५.	१२	अमरनाथ झा गद्यकार जन्म : सन् १८९७ ई० सरिसब-पाही (दरभंगा)	१. हिन्दी-साहित्य-संग्रह २. हिन्दी-साहित्य-रत्न ३. विचारधारा ४. पद्मपराग
६.	१६	अयोध्याप्रसाद सिंह कवि-उपन्यासकार-गद्यकार जन्म : सन् १८७७ ई० मलयपुर (मुंगेर)	१. प्रेम-महिमा २ ललित-मनोरमा ३. जय-जगदम्ब *४. ऋतु-संहार
७.	१७	अवतार मिश्र (कान्त) कवि-कोषकार जन्म : सन् १८७६ ई० बड़िअरिया (चम्पारन)	*१. रसनाशतक *२. शिवस्तवन *३. अनेकार्थावली *४. पर्यायवाची कोष
८.	२०	अवधकिशोर प्रसाद (कुश्ता) कवि-नाटककार जन्म : सन् १८९३ ई० बामी टोला (गया)	१. छिपी कटारी २. अनोखी बर्छी *३. चंचलकुमारी *४. अजामिल-उद्धार *५. भूल पर भूल
९.	२२	अवधनन्दन गद्यकार-बालसाहित्यकार-जीवनी-लेखक जन्म : सन् १९०० ई० डेरनी (सारन)	१. वीर दुर्गादास की जीवनी २. भगवान् बुद्ध की जीवनी ३. तमिल-साहित्य एवं संस्कृति ४. दक्षिण-भारत का सांस्कृतिक परिचय ५. हिन्दी-स्वयं-शिक्षक ६. हिन्दी-अँगरेजी स्वयंशिक्षक ७. हिन्दी-शिक्षण-पद्धति ८. हिन्दी-इंगलिश-सम्बोधिनी ९. बालकृष्ण १०. लवकुश ११. बच्चों की किताब

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम	
१०.	२५	अवधनारायण कथाकार-गद्यकार जन्म : सन् १८८५ ई० शुभंकरपुर (दरभंगा)	१. विमाता २. झलक	*३. सेकेण्डहैण्ड लेडी (सगही बहू)
११.	२६	अवधनारायणसिंह राठौर (अवध) कवि-गद्यकार जन्म : सन् १९८३ ई० मनेर (पटना)	१. श्री लक्ष्मण-जीवनी २. श्रीसमझ्या-संगीत (दो भागों में) ३. कलित-कीर्त्तन ४. सुतीक्ष्ण-प्रेम-परिचय *५. नाम-कीर्त्तन *६. प्रार्थना-कीर्त्तन	* ७ लीला-कीर्त्तन * ८ छवि-कीर्त्तन * ९ उपदेश-कीर्त्तन *१०. केवट-कृपालु *११. व्याकरण-विरबा तथा स्फुट रचनाएँ
१२.	२९	अवधप्रसाद शर्मा कवि-अनुवादक जन्म : सन् १८९५ ई० राघवपुर (पटना)	*१. कुमारसम्भव का हिन्दी-पद्यानुवाद	
१३.	३१	अवधविहारी शरण गद्यकार जन्म : सन् १८९१ ई० वल्लूपुर (शाहाबाद)	१. मेगास्थनीज का यात्रा-विवरण २. श्रीरामनामामृत	*३. रूप-वन्दना *४. रामचरितमानस के बालकाण्ड की टीका
१४.	३३	अवधेशप्रसाद द्विवेदी गद्यकार-सम्पादक जन्म : सन् १८९९ ई० बढ़ईटोला (सारन)	स्फुट रचनाएँ	
१५.	३४	अक्षयवट मिश्र (विप्रचन्द्र) कवि-गद्यकार-सम्पादक जन्म : सन् १८७४ ई० डुमराँव (शाहाबाद)	१. दुर्गादत्त परमहंस २. उपदेश रामायण ३. दशावतार-कथा ४ लेखमणिमाला ५. आत्मचरित-चम्पू ६. आनन्दकुसुमोद्यान	७. सदाबहार ८. लार्ड हार्डिंज का स्वागत ९. देवी चौधरानी १०. मृणालिनी ११. रजनी

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम	
१६.	४०	आद्यादत्त ठाकुर आलोचक-गद्यकार जन्म : सन् १८८६ ई० माधोपुर (दरभंगा)	स्फुट रचनाएँ	
१७.	४२	इन्द्रदेवनारायण गद्यकार-टीकाकार जन्म : सन् १८७१ ई० केसरिया (चम्पारन)	१. मानस-मयंक २ रामनामकोष ३. मणि-मंजूषा	४. हनुमानबाहुक ५ कवितावली की टीका *६ रामचरितमानस की टीका
१८	४५	ईश्वरदास जालान गद्यकार जन्म : सन् १८९५ ई० मुजफ्फरपुर	लिमिटेड कम्पनियाँ तथा स्फुट रचनाएँ	
१९.	४८.	ईश्वरीप्रसाद शर्मा कवि-गद्यकार-कथाकार- अनुवादक-सम्पादक जन्म : सन् १८९३ ई० मिश्रटोला (आरा)	१. चन्द्रकुमार २. हिरण्मयी *३. सौरभ *४. मान-मर्दन ५. चना-चबेना *६. कचालू-रसीला ७. कोकिला ८. स्वर्णमयी ९. मागधी-कुसुम १०. शालिनीबाबू ११. गल्पमाला १२. हिन्दी-बँगला-कोष १३. चन्द्रधर १४. अन्योक्तितरंगिनी १५. मातृवन्दना १६. सन् सत्तावन का गदर १७. सूर्योदय १८. रँगीली-दुनिया १९. ईसप की कहानियाँ (तीन भागों में)	२०. सिपाही-विद्रोह २१. सीता २२. शकुन्तला २३ सती पार्वती २४ पंचशर २५ उद्भ्रान्त प्रेम २६. अन्नपूर्णा का मन्दिर २७. किन्नरी २८. इन्दुमती २९. प्रेमगंगा ३०. प्रेमिका ३१. जल-चिकित्सा ३२. सुशील-शिक्षा ३३. चन्द्रकुमार वा मनोरमा ३४. सच्ची मैत्री ३५ बाल-गल्पमाला ३६. पंजाब-हत्याकाण्ड ३७. हिन्दी-बँगला-कोष ३८. रामचरित्र

क्र०सं०	प०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम	
२०.	५५	उदयनारायण सिंह गद्यकार-टीकाकार-अनुवादक जन्म : सन् १८५४ ई० मधुरापुर (मुजफ्फरपुर)	१. संस्कृत-प्रवेशिका २. सूर्य-सिद्धान्त (सटीक) ३. आर्यभट्टीयम् (सटीक) ४. न्याय-दर्शन (सटीक) ५. गोभिल-गृह्यसूत्र (सटीक) ६. खादिरगृह्यसूत्र (सटीक)	७. द्राह्यायणगृह्य-सूत्र (सटीक) ८. वाराहगृह्यसूत्र (सटीक) ९. कौशिकगृह्य-सूत्र (,,) १०. सर्वदर्शन-संग्रह (,,) ११. सिद्धान्त-शिरोमणि (सटीक) १२. जीवन्मुक्ति-विवेक (सटीक) १३. महावाक्यरत्नावली १४. क्षत्रिय-वंशावली
२१.	५६	उमानाथ पाठक (चातुर) गद्यकार-कवि जन्म : सन् १८८७ ई० बेहलिया-बिगहा (गया)	*१. बरनी-विलाप *२. ऋतुसंहार	३. चातुर-दोहावली ४. अक्षर-चालीसा
२२.	६१	उमापतिदत्त शर्मा गद्यकार-जीवनी-लेखक जन्म : सन् १८७२ ई० चिलहरी (शाहाबाद)	१. ऋजुस्तवमंजूषा	२. नेपोलियन की जीवनी
२३.	६३	उमेश मिश्र गद्यकार-टीकाकार-अनुवादक-सम्पादक जन्म : सन् १८९५ ई० बिन्हीं (दरभंगा)	१. कृष्णजन्म २. कीर्त्तिलता ३. कीर्त्तिपताका ४. गोरक्ष-विजय ५. जया ६. विजया ७. शास्त्रार्थ-रत्नावली ८. प्राचीन वैष्णव-सम्प्रदाय ९. भारतीय दर्शन १०. विद्यापति ठाकुर	११. सांख्ययोग-दर्शन १२. मैथिली-संस्कृति और सभ्यता १३. तर्कशास्त्र की रूपरेखा १४. गद्य-कुसुममाला १५. गद्य-कुसुमांजलि १६. साहित्य-दर्पण १७. शंकर मिश्र १८. भवभूति १९. नलोपाख्यान २०. यक्ष-पाण्डव-संवाद

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
२४.	६८	कन्हैयालाल मिश्र कवि-सम्पादक- गद्यकार-कथाकार जन्म : सन् १८६४ ई० कुरका (गया)	१. भाषा-पिंगल-सार २. हिन्दी-व्याकरण ३. सरल शुभंकरी ४. लोअर अंकगणित ५. लोअर भूगोल ६. बिहार के गृहस्थों का जीवन-चरित्र ७. मनुष्य का मातृत्व-सम्बन्ध ८. विद्याशक्ति ९. समस्यापूर्त्ति १०. जॉर्ज-राज्याभिषेक ११. भारतवर्ष का इतिहास १२. ललित-माधुरी १३. कमलिनी
२५.	७०	कमलदेव नारायण गद्यकार-निबन्धकार- कथाकार-बालसाहित्यकार जन्म : सन् १९०० ई० बखरा (मुजफ्फरपुर)	१. ईश्वरचन्द्र विद्यासागर २. युगल-कुसुम ३. अर्द्धांगिनी ४. झरना ५. राम की ओर ६. बिखरे फूल ७. घर कैसे चले ८. एक भूल ९. खानदानी १०. जोड़ा ११. माया १२. जीजा १३. गपशप १४. भूखा भगवान् १५. बदर्जे मजबूरी १६. भले आदमी कैसे बनें १७. हँसते कैसे रहें १८. हिन्दी-मुहावरे और उनका उपयोग १९. साइन्स की बातें २०. दाम्पत्य-जीवन की समस्याएँ २१. नवासा २२. रानी या नारी २३. भगवान् सो गये हैं २४. प्रेमनगर की सैर २५. वैज्ञानिक वातावरण २६. बच्चों के खेल
२६.	७३	कमलानन्द सिंह (सरोज) कवि-गद्यकार-अनुवादक जन्म : सन् १८७६ ई० श्रीनगर (पूर्णिया)	१ सरोज-रचनावली (i) मिथिला-चन्द्रास्त (ii) हा! व्यास-शोक-प्रकाश (iii) आलोचक और आलोचना (iv) दुष्यन्त के प्रति शकुन्तला का प्रेम-पत्र (v) म० म० कविवर विद्यापति ठाकुर (vi) श्रीएडवर्ड बत्तीसी (vii) शान्तनु-प्रति गंगा (viii) पत्रावली (ix) रायबहादुर दीनबन्धु मित्र (x) डायरी (xi) आनन्द-मठ (xii) वीरांगना-काव्य (xiii) वोट-बत्तीसी (xiv) दाम्पत्य-दण्ड-विधान (xv) स्फुट गेय पद (xvi) समस्यापूर्त्ति (xvii) मैथिलक धन-विद्या *(xviii) राजा-रानी

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम	
२७.	८०	कमलाप्रसाद वर्मा सम्पादक-कवि- गद्यकार-निबन्धकार- जीवनी-लेखक जन्म : सन् १८८३ ई० बबुरा (शाहाबाद)	१ कुल-कलंकिनी २. अभिमन्यु का आत्मदान ३. राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद ४. करबला ५. जीवन-संग्राम ६. वैशाली ७. परलोक की बातें ८. भयानक भूल ९ निर्बल-सेवा १०. रोम का इतिहास	११. भूलती-भागती यादें १२. हिमालय १३. आध्यात्मिक रहस्यों में सामाजिक जीवन १४. विवेकानन्द की जीवनी १५. राजनीति-विकास १६. पाटलिपुत्र का ऐतिहासिक महत्त्व १७. अनोखा रंडीबाज
२८.	८५	कामताानाथ शर्मा (मदनेश) कवि-निबन्धकार- यात्रा-वृत्तान्तकार जन्म : सन् १८९३ ई० दधपी (गया)	१. श्रीकृष्णलीला-सार २. विरह-बत्तीसी ३. सिंहभूमि का सफर ४. गंगासागर-यात्रा ५. आरती-प्रकाश	६. गोमाता का आर्त्तनाद ७. कीर्त्तन-कल्पलता ८. योगीन्द्र-गिरिवर्णन ९. सीता-माहात्म्य
२९.	८७	कालिका प्रसाद गद्यकार-निबन्धकार जन्म : सन् १८८२ ई० ब्राह्मणीघाट (गया)	१. व्याकरण पढ़ने की विधि	२. शिक्षा-सम्बन्धी स्फुट निबन्ध
३०.	८८	कालिका प्रसाद कवि-गद्यकार जन्म : सन् १८८३ ई० बह्मवार (शाहाबाद)	कवित्त-हजारा तथा स्फुट रचनाएँ	
३१.	८९	काशीनाथ झा कवि-गद्यकार-अनुवादक जन्म : सन् १८८२ ई० कोइलख (दरभंगा)	१. प्रस्थानत्रयी-प्रकाशिका	*२. वेदान्त-पंचदशी-सार
३२.	९२	कुलेशचन्द्र तिवारी कवि-गद्यकार जन्म : सन् १८८६ ई० गोड्डा (भागलपुर)	स्फुट रचनाएँ	

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
३३.	६३	कृष्णचैतन्य गोस्वामी कवि-गद्यकार-सम्पादक जन्म : सन् १८८६ ई० गायघाट (पटना)	१. उपासना-विधि २. गौड़-प्रेमामृत
३४.	६६	कृष्णप्रकाश सिंह (कृष्ण, त्रिपुरारि) कथाकार-निबन्धकार- अनुवादक-नाटककार जन्म : सन् १८९२ ई० औरंगाबाद (गया)	१. वीर-चूड़ामणि २. शान्ति और सुख ३. सेण्ट्रल को-ऑप-रेटिव बैंक के कायदे ४. सहयोग-पाठ ५. नेलसन ६. जैवधर्म ७. निर्मलानन्द ८. पन्ना ९. कुसुम १०. मर्यादापुरुषोत्तम राम ११. श्रान्त पथिक १२. शिक्षामृत
३५.	९८	कृष्णवल्लभ सहाय गद्यकार-सम्पादक जन्म : सन् १८९८ ई० शेखपुरा (पटना)	स्फुट रचनाएँ
३६.	१००	केदारनाथ सिंह कवि जन्म : सन् १८९४ ई० ओकरी (गया)	*विधवा-विलाप
३७.	१००	गंगानन्द सिंह गद्यकार जन्म : सन् १८९८ ई० श्रीनगर (पूर्णिया)	१. वाल्मीकि का अपने काव्य में आत्मप्रकाश २. हिन्दूधर्म और उसकी भित्ति ३. अगिलही
३८.	१०३	गंगानाथ झा गद्यकार-भाष्यकार- निबन्धकार-अनुवादक जन्म : सन् १८७२ ई० सरिसब-पाही टोल (दरभंगा)	१. वेदान्त-दीपक २. योगसार-संग्रह ३. सांख्य-तत्त्व-कौमुदी ४. काव्य-प्रकाश ५. योगभाष्य ६. छान्दोग्योपनिषद् ७. शांकरभाष्य ८. शबरभाष्य ९. प्रशस्तपादभाष्य १०. न्याय-भाष्य ११. खण्डन-खण्ड-खाद्य १२. श्लोक-वार्त्तिक १३. तन्त्र-वार्त्तिक १४. वामन-काव्यालंकार-सूत्र १५. जैमिनी-मीमांसा-सूत्र १६. तर्कभाषा १७. न्याय-प्रकाश १८. वैशेषिकदर्शन १९. धर्म-कर्म-रहस्य २०. कवि-रहस्य २१. हिन्दू-धर्मशास्त्र

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम	
३९.	१०६	गंगापति सिंह	१. चन्द्रकवि की	१०. नरपशु
		(श्रीजयसुन्दर)	मिथिला-रामायण	११. कन्नौज-पतन
		जीवनी-लेखक-	२. रामकृष्ण परमहंस की	१२. खड्गबहादुर
		कथाकार-	संक्षिप्त जीवनी	१३. आत्मकथा
		निबन्धकार-	*३. ग्रियर्सन साहब की	१४. बाल-मैथिली-
		बाल-साहित्यकार	संक्षिप्त जीवनी	व्याकरण
		जन्म : सन् १८९४ ई०	*४. मिथिला की घरेलू	१५. लोअर-साहित्य
		पचही-ड्योढ़ी	कहानियाँ	१६. भूगोल-परिचय
		(दरभंगा)	*५. मैथिली-शब्द-समुद्र	१७. बच्चों का उपदेश
			६. सुशीला	१८. प्रवेशिका मैथिली-
			*७. विधवा-क्रन्दन	साहित्य
			*८. पौराणिक कथाओं	१९. लघु मैथिली-साहित्य
			का वैज्ञानिक तत्त्व	२०. संस्कृत-पाठ्य-पुस्तक
			९. विवाह-विज्ञान	का नोट
४०.	१०८	गंगाप्रसाद जायसवाल	१. राष्ट्रीय मधुर वंशी	४. गंगा-संगीत-सुमनोद्यान
		(गगा)	२. राजापुरी ब्राह्मणों के	*५. मछली-मांस-निषेध
		गद्यकार-कवि	नाम खुली चिट्ठी	*६. यज्ञोपवीत-विधान
		जन्म : सन् १८९९ ई०	३. श्रीमहावीरी झंडा	*७. गायत्री-मन्त्र-विधान
		डुमराँव (शाहाबाद)		
४१.	११२	गंगाप्रसाद श्रीवास्तव	१. लम्बी-दाढ़ी	१३. गड़बड़झाला
		हास्यरसावतार-	२. उलटफेर	१४. गंगा-जमनी
		कथाकार-गद्यकार	३. मार-मारकर हकीम	१५. कुर्सी-मैन
		जन्म : सन् १८९१ ई०	४. मीठी हँसी	१६. आँखों में धूल
		छपरा (सारन)	५. मि० लतखोरीलाल	१७. हवाई डाक्टर
			६. स्वामी चौखटानन्द	१८. नाकों में दम
			७. महाशय भड़ाम	१९. जवानी बनाम बुढ़ापा
			सिंह शर्मा	२०. रंग बेढब
			८. नोंक-झोंक	२१. धोखाधड़ी
			९. दुमदार आदमी	२२. घदौलत-सीट
			१०. मरदानी औरत	२३. चड्ढा-गुलखेरू
			११. विलायती उल्लू	२४. काठ का उल्लू
			१२. बौछार	२५. प्राणनाथ

क्र०सं०	प०सं०	साहित्यकारो के नाम	पुस्तको के नाम	
४२.	११५	गजाधर प्रसाद गद्यकार-टीकाकार जन्म : सन् १८७६ ई० रढ़ुई (गया)	१. ईशावास्य-उपनिषद् की हिन्दी-टीका २. जीवन और समस्या	३. श्रीमद्भगवद्गीता में कर्मफल-त्याग
४३.	११६	गयाप्रसाद (माणिक) कवि-सम्पादक जन्म : सन् १८८१ ई० पुरानी गोदाम (गया)	१. अलंकार-वृक्ष २. स्फुट रचनाएँ	
४४.	११७	गिरिजादत्त पाठक (गिरिजा, द्विजराज, दत्त, विज्ञ-बक्सरी) कवि-सम्पादक जन्म : सन् १८६८ ई० बक्सर (शाहाबाद)	१. भारत का गोवंश २. स्फुट रचनाएँ	
४५.	१२०	गुप्तेश्वर पाण्डेय गद्यकार जन्म : सन् १८६६ ई० रववार (शाहाबाद)	१. पारिवारिक योजना	
४६.	१२१	गुरुमहादेवाश्रमप्रताप शाही कवि जन्म : सन् १८६३ ई० हथुआ (सारन)	स्फुट रचनाएँ	
४७.	१२२	गोपाललाल वर्मा गद्यकार जन्म : सन् १८६४ ई० माउर (मुँगेर)	स्फुट रचनाएँ	
४८.	१२१	गोपाल शास्त्री कवि-गद्यकार जन्म : सन् १८६२ ई० जगन्नाथपुर (सारन)	१. कविता-कुंज २. राष्ट्रभाषा-भूषण ३. हिन्दी-दीपिका ४. राष्ट्रधर्मोपदेशिका या हिन्दूधर्मोपदेशिका	५. हरिजन-स्मृति ६. भारतीय संस्कृति ७. संस्कृत-शिक्षक ८. मीमांसा-परिभाषा
४९.	१२६	गोपकिशोर लाल नाटककार जन्म : सन् १८८५ ई० देवरी (गया)	*१. ग्रहों का फेर	

क्र०सं०	पृ० सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
५०.	१२७	गोवर्द्धनलाल गद्यकार जन्म : सन् १८६० ई० धामीटोला (गया)	१. नीति-विज्ञान २. अर्थ-विज्ञान ३. विकास-विज्ञान
५१.	१३०	गोविन्दप्रसाद शुक्ल कवि-अनुवादक जन्म : सन् १८८६ ई० दामोदरपुर (मुँगेर)	भ्रमर स्फुट रचनाएँ
५२.	१३३	गौरीनाथ झा गद्यकार-सम्पादक-टीकाकार जन्म : सन् १८८५ ई० महरैल (दरभंगा)	१. ऋग्वेद-संहिता की हिन्दी-टीका २. ईश्वर-सिद्धि
५३.	१३५	चण्डीप्रसाद ठाकुर कवि-अनुवादक जन्म : सन् १८६८ ई० कदराचक (भागलपुर)	१. रघुवंश का समश्लोकी अनुवाद २. स्फुट रचनाएँ
५४.	१३६	चन्द्रशेखरधर मिश्र कवि-सम्पादक-गद्यकार जन्म : सन् १८५६ ई० रत्नमाला (चम्पारन)	१. गूलर-गुण-विकास २. आरोग्य-प्रकाश *३ आत्मकथा
५५.	१४०	चमकलाल चौधरी कवि जन्म : सन् १८६१ ई० पोठिया (भागलपुर)	लाल-कीर्त्तन-कुसुम
५६.	१४१	छत्रधारी सिंह (शारद) कवि जन्म : सन् १८५५ ई० मलयपुर (मुँगेर)	रसिक-मन-रंजन
५७.	१४२	छात्रानन्द मिश्र गद्यकार-कथाकार-नाटककार जन्म : सन् १८७० ई० छतदेन (गया)	१. सुदामा-चरित्र २. प्रतिमा ३. कथामंजरी ४. राधा-विनोद ५. लघु भाषा-व्याकरण ६. समस्या-संग्रह ७. अनिरुद्ध-चरित्र

क्र० सं०	पृ० सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
५८	१४२	छेदीलाल झा (सेवक) कवि-गद्यकार जन्म : सन् १८९६ ई० वंशीपुर (भागलपुर)	स्फुट रचनाएँ
५९.	१४३	छोटेलाल भैया कवि-गद्यकार जन्म : सन् १८८३ ई० नवागढ़ी (गया)	१. राधा-विरह २. शंख-ध्वनि
६०.	१४३	जंगबहादुर सिंह अष्ठाना (जयरामदास) कवि-गद्यकार-टीकाकार जन्म : सन् १८६४ ई० कोठिया-अवधनन्दन (मुजफ्फरपुर)	१. ललित भागवत २. भक्तमाल-भूषण *३. मानस-मुखबन्ध-प्रकाश ४. ललित-रामायण *५ रामायण-शब्द-संग्रह ६. बाल-विवाह ७. श्रीचारधाम-यात्रा-पाठ ८. ज्ञान-गीता ९. नूतन मानस-शंका-मोचन १०. लीला-रामायण ११. माया-वर्णन १२. पत्र-प्रकाश १३ छात्रबन्धु
६१.	१४७	जगतनारायण झा गद्यकार-निबन्धकार धार्मिक साहित्यकार जन्म : १८९५ ई० दोन (सारन)	१. कराची-काँगरेस के फैसले २. धर्म-ज्योति ३. चरित्र-गठन ४. सत्संगति ५. बड़ों के प्रति बच्चों का सन्देश ६. परलोक जीवन ७ परलोक की कहानियाँ ८. इस्लाम की खूबियाँ ९. सुख की अचूक कुंजी १०. साधन-चतुष्टय ११. रामजी और भरतजी १२. कृष्णजी और सुदामाजी १३. गौतमजी—हंस किसका ? १४. श्रीरामजी और केवट १५. सीताजी और वनवास १६. राजा हरिश्चन्द्रजी १७. भक्त प्रह्लादजी १८ बालकृष्ण की लीलाएँ १९. अचल ध्रुवजी २०. बुद्ध भगवान् और चेला २१. कृष्णजी की प्रेम-लीलाएँ २२. महर्षि वेदव्यासजी २३. श्रीगौतमबुद्धजी २४. श्रीवर्द्धमान महावीरजी २५. प्रभु यीसूमसीह २६. श्रीगुरुनानकदेवजी

क्र० सं०	पृ० सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
			२७. हजरत मुहम्मदसाहब २८. महात्मा जरथुस्त्रजी २९. जगद्गुरु शंकराचार्य ३०. सर्वधर्म-समन्वय ३१. भीष्मपितामह ३२. धर्मराज युधिष्ठिरजी ३३. भारतीय संस्कृति ३४. मै भारतीय हूँ ३५. मैं कौन हूँ ३६. अद्भुत बालक ३७. साम्प्रदायिकता-निवारण ३८. विश्व और व्यक्ति *३९. व्यावहारिक ब्रह्मज्ञान *४०. धर्म-चर्चा
६२.	१५०	जगदम्बसहाय श्रीवास्तव कवि- गद्यकार जन्म : सन् १८८७ ई० अहियापुर (मुजफ्फरपुर)	१ अरेराज-माहात्म्य *२ जगदम्ब-सतसई *३. भारत की आत्मकथा
६३.	१५२	जगदीश झा (विमल) कवि-गद्यकार-कथाकार-निबन्धकार जन्म : सन् १८९१ ई० कुमैठा (भागलपुर)	१ वीणा-झंकार २. पद्य-प्रसून ३. पद्य-संग्रह ४. खरा सोना ५. जीवन-ज्योति ६. लीला ७. आशा पर पानी ८. दुरंगी दुनिया ९. रमणी १०. सावित्री ११. तरंगिनी १२ छाया १३. गरीब १४ सती-पंचरत्न १५. आदर्श सम्राट् १६. महावीर
६४.	१५५	जगन्नाथजी (मनुज) गद्यकार-निबन्धकार जन्म : सन् १८९६ ई० बेतिया (चम्पारन)	प्रकाश
६५.	१५७	जगन्नाथ प्रसाद (वैष्णव) कवि-गद्यकार-सम्पादक जन्म : सन् १८९१ ई० बड़कागाँव (मुजफ्फरपुर)	१. जन्म-बधैया-संकीर्त्तन २. विवाह-संकीर्त्तन ३. झूलन-संकीर्त्तन ४. होली-संकीर्त्तन ५. चैती-संकीर्त्तन ६. चेतावनी-संकीर्त्तन ७. संतवाणी-संकीर्त्तन ८. नाम-संकीर्त्तन ९. राधाकृष्ण-संकीर्त्तन १०. शिव-संकीर्त्तन ११. शक्ति-संकीर्त्तन १२. महावीर-संकीर्त्तन

क्र० सं०	पृ० सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
६६.	१५६	जगन्नाथप्रसाद मिश्र सम्पादक-गद्यकार-निबन्धकार जन्म : सन् १८६६ ई० पतोर (दरभंगा)	१. समाजवाद क्या है ? २. जानते हो ? ३. बच्चों का चिड़ियाखाना ४. जीवन-देवता की वाणी ५. एक ही दुनिया ६. साहित्य की वर्त्तमान धारा ७. जीवन और जगत् ८. मनुष्य की मर्यादा ६. प्रेम और दाम्पत्य १०. राजनीति-विज्ञान * ११. साहित्य-विवेचन १२. महान् मनीषी १३. स्वाभिमानी १४. प्रेम-प्रपंच १५. साहित्य की आधुनिक प्रवृत्तियाँ १६. रवीन्द्रनाथ ठाकुर १७. दुर्वासा १८. विश्वामित्र १६. व्यास २०. अगस्त्य २१. साहित्य-विविधा
६७.	१६३	जगन्नाथप्रसाद सिंह (किंकर) नाटककार-कवि-सम्पादक जन्म : सन् १८६२ ई० देव (गया)	१. नर-नारायण-नाटक २. महात्मा तुलसीदास नाटक ३. सती-पार्वती-नाटक ४. पुनर्जन्म-नाटक ५. राजर्षि प्रह्लाद-नाटक ६. बालकृष्ण-नाटक ७. वतन का पुजारी-नाटक ८. वेश्या-नाटक ६. भजन-छड़ी-पद्य-पुस्तक १०. श्रीकृष्ण-भजनमाला
६८.	१६८	जगन्नाथ भक्त कवि जन्म : सन् १८६७ ई० पालगंज (हजारीबाग)	स्फुट रचनाएँ
६६.	१६६	जगन्नाथराय शर्मा कवि-गद्यकार-निबन्धकार-टीकाकार-सम्पादक जन्म : सन् १८६६ ई० डिहरी (शाहाबाद)	१. विक्रम-विजय २. तरुण-तरंग ३. पद्यालय ४. अपभ्रंश-दर्पण ५. रामायण और भाव-चित्रावली में मानस-सन्देश-अंश ६. रामचरितमानस की कथावस्तु ७. सूर-साहित्य-दर्पण ८. हमारा सांस्कृतिक साहित्य ६. अयोध्याकाण्ड १०. ब्रज-साहित्य-सौरभ ११. निबन्ध-रत्नाकर
७०.	१६६	जनार्दन झा (जनसीदन) सम्पादक-गद्यकार-अनुवादक-कथाकार-कवि जन्म : सन् १८७२ ई० कुमर-बाजितपुर	१. राजर्षि २. मुकुट ३. चरित्र-गठन ४. ऋद्धि ५. स्वर्णलता ७. नेपोलियन बोनापार्ट ८. आश्चर्य घटना ६. विचित्र वधू-रहस्य १०. सुशीला-चरित्र ११. पतिव्रता

क्र०सं०	प०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
			१३. राजपूत जीवन-संध्या १४. माधवी-कंकण १५. समाज १६. गौरमोहन १७. नवीन संन्यासी १८. रत्नदीप १९. अद्भुत कथा २०. भारतीय साधक २१. ग्रह-नक्षत्र २२. सिक्ख-जाति का इतिहास २३. शुश्रूषा २४. षोडशी २५. सम्राट् अकबर २६. पारस्य २७. मनुस्मृति की टीका २८. विषवृक्ष २९. देवी चौधरानी ३०. इन्दिरा ३१. प्राणियों के अन्तः-करण की बात ३२ पुरुष-परीक्षा ३३. अन्योक्तिमाला ३४. कलिकाल-कुतूहल ३५. मैथिली-नीति-पद्यावली ३६. चिकित्सा-सागर ३७. वाटिका-विनोद ३८. पाचन-मुष्टियोग ३९. द्रव्यगुण-शिक्षा ४०. अनुभूत मुष्टियोग ४१. पुनर्विवाह ४२ शशिकला ४३. द्विरागमन-रहस्य *४४. काव्य-निर्णयम् की टीका *४५ आत्मकथा ४६. स्फुट रचनाएँ
७१	१७४	जनार्दन मिश्र (परमेश) कवि-गद्यकार-सम्पादक-कथाकार-नाटककार-अनुवादक जन्म : सन् १८९० ई० सनौर (संतालपरगना)	१. जार्ज-किरणोदय २. हमारा सर्वस्व ३. जीवन-प्रभा ४. सती ५. रस-बिन्दु ६. कालापहाड़ ७. राष्ट्रीय गान ८. पद्य-पुष्प ९. बिल्वदल १०. बरवै रामायण की विवेचनापूर्ण टीका ११. चकवार-चरित्र *१२. उल्लूपी *१३. वीरों की कहानियाँ या वीर-वृत्तान्त १४ कृष्ण १५. घटखर्पर-काव्य १६. हेमा १७. राष्ट्रीय गान
७२	१८०	जनार्दन मिश्र, डॉ० गद्यकार-निबन्धकार-जीवनी-लेखक जन्म : सन् १८९७ ई० मिश्रपुर (भागलपुर)	१. विद्यापति २. भारतीय संस्कृति की प्रस्तावना ३. सूरदास ४. भारतीय प्रतीक-विद्या ५ तन्त्र की खोज में सत्संग आदि

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
७३.	१८२	जयन्तीप्रसाद दुबे (शंकर) कवि-अनुवादक जन्म : सन् १८९४ ई० बन्दनवार (संतालपरगना)	* श्रीमद्भगवद्गीता का पद्यानुवाद
७४.	१८३	जवाहर प्रसाद कवि जन्म : सन् १८७५ ई० चन्दाअखौरी (शाहाबाद)	हनुमानाष्टक
७५.	१८४	जवाहिर मल्ल अग्रवाल (पोखराज) कवि-गद्यकार जन्म : सन् १८५१ ई० दाऊदनगर (गया)	१ इतिहास-मुकुर २. उपालम्भ ३. हरगंगा ४. पुलिस-स्तोत्र
७६.	१८६	जानकीशरण (स्नेहलता) कवि टीकाकार- गद्यकार-अनुवादक जन्म : सन् १८८१ ई० दौलतपुर (गया)	१. मानस-मार्त्तण्ड २. मानस-अभिप्राय-दीपक-चक्षु ३. श्रीसीताराम-संकीर्त्तन-पदावली ४. विरहानल *५. श्रीरामनाम-कला-कोषमणि-मंजूषा *६. विनय-पत्रिका *७. राम-सतसई *८. श्रीमानस-पूर्वोत्तर-पक्ष *९. हनुमान-बाहुक *१०. शतपंच-चौपाई *११. श्रीसीताराम-नखशिख *१२. जयकार-शतक *१३. नवीन भक्तमाल *१४ श्रीसीताराम-चरित्र-गीतावली *१५ फुटकर पद *१६. तुलसी-साहित्य-भूषण दो खण्डों में) *१७ श्रीसीताराम-संकीर्त्तन-पदावली (तीन भागों में)
७७.	१९०	जीवनारायण मिश्र गद्यकार जन्म : सन् १८६८ ई० कुरका (गया)	१. बनिजारी २. बिहार के गृहस्थों का जीवन

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम	
७८	१९१.	जैनेन्द्रकिशोर जैन	१. कमलिनी	२३. बारह-भावना
		उपन्यासकार-नाटककार-	२. मनोरमा	२४. शृंगारलता
		अनुवादक-गद्यकार-कवि-	३. प्रमिला	*२५. संयोगिनी उपन्यास
		जीवनी-लेखक	४ सुलोचना	*२६. दुराचारी उपन्यास
		जन्म : सन् १८७१ ई०	५. सोमा सती	*२७ शरतकुमारी उपन्यास
		आरा (शाहाबाद)	६. चुडेल (दो भागों में)	*२८ कलिकौतुक-नाटक
			७ परख	*२९. मनोरमा-सती-नाटक
			८. सत्यवती	*३० श्रीपालचरित्र-नाटक
			९. सुकुमाल	*३१. प्रद्युम्न-चरित्र-नाटक
			१०. मनोवती	*३२. वेश्या-विहार-नाटक
			११. गुलेनार	*३३. ज्ञानप्रकाश-प्रहसन
			१२. भजन-नवरत्न	*३४. कृपणदास-प्रहसन
			१३. सावन-सिंगार	*३५. धन
			१४. सावन-सोहाग	*३६ पहेली
			१५. होली की पिचकारी	*३७. अंजनासती
			१६ चैती गुलाब	*३८. सगीतमाला
			१७. हास्य-मंजरी	*३९. रामरस
			१८. वीर द्रौपदी	*४० श्रावकाचार-दोहावली
			१९. बाबू रामदीन सिंह की जीवनी	*४१. सेठ सुदर्शन पूजा
				*४२ श्रीवासुपूज्य की निर्वाण-पूजा
			२०. संगीत-मनोरमा	
			२१. वीरेन्द्र वीर या चाँदी का तिलिस्म	*४३. सेठ तीजव्रत-कथा
				*४४. कर्नाटक देश में जैनियों का निवास
			२२. खगोल-विज्ञान	
७९.	१९३	तपेश्वर सिंह (तपस्वी)	स्फुट रचनाएँ	
		गद्यकार-निबन्धकार-कवि		
		जन्म : सन् १८९२ ई०		
		कुड़वा (गया)		
८०.	१९५	तारकचरण भट्ट (तारक)	स्फुट रचनाएँ	
		कवि		
		जन्म : सन् १८८४ ई०		
		कृष्णद्वारका (गया)		
८१	१९६	तेजनाथ झा	१. कुण्डलिया-रामायण	४. रामजन्म
		कवि-नाटककार	२. भक्ति-प्रकाश	*५. सुरराज-विजय
		जन्म : सन् १८५४ ई०	३. गौरीशंकर-विनोद	
		महरैल (दरभंगा)		

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम	
८२.	१९८	तेजनाथ झा (मिहिर) सम्पादक-गद्यकार-कवि जन्म : सन् १८६३ ई० बरारी (भागलपुर)	शिवायन	स्फुट रचनाएँ
८३.	१९९	त्रिलोकनाथ मिश्र नाटककार-टीकाकार जन्म : सन् १८८६ ई० गौसपुर (सहरसा)	१. जीमूतवाहन २. शुद्धिरत्न	३. पथ्यापथ्य-प्रदीप ४. साहित्य-दर्पण की टीका
८४	१९९	त्रिलोचन झा (लोचन) कवि-गद्यकार जन्म : सन् १८७८ ई० बानूछपरा (चम्पारन)	१. श्रीमद्गणपतिशतक २. आत्मविनोद ३. श्रीमंगलशतक ४. जनेश्वर-विलाप ५. शोकोच्छ्वास ६. कमलानन्द-विनोद	७ मिथिला की वर्त्तमान अवस्था और उसमें आवश्यक सुधार ८ सम्मेलन-सवाद ९. शकुन्तलोपाख्यान १०. जीवन-चरित-विषय
८५.	२०१	त्रिवेणी उपाध्याय कवि-टीकाकार जन्म : सन् १८८८ ई० नवादा (गया)	स्फुट रचनाएँ	
८६.	२०२	दामोदर सहाय सिंह (कविकिंकर) कवि-गद्यकार-आलोचक-बाल-साहित्यकार-अनुवादक-जीवनी-लेखक जन्म : सन् १८७५ ई० शीतलपुर (सारन)	१. सन्धि-सन्देश २. सुधा-सरोवर ३. कविता-कुसुम ४. श्रीहरिगीतिका ५. कल है ६. उद्यम-विचार ७. नृप-सूर्यास्त ८. काल-पचासा ९. चातक-चालीसी १० भ्रातृभाव ११. शिक्षा-निबन्धावली १२. हमारी शिक्षा-प्रणाली १३. निगम और निगमन १४. भक्ति १५. रसाल	१६. अंगूर १७. सरल सितारी १८. बाल-सितारी १९. बाल-संकीर्त्तन २०. धार्मिक वार्त्तालाप २१. कबीर : एक लघु जीवनी *२२. कविता की भाषा *२३. कविता-कानन *२४. सुरभित कानन *२५. आत्म-प्रकाश *२६. भ्रातृभाव-संगीत *२७. तुलसी कवि-किंकर *२८. रामायण-कर्म-संगीत *२९. गीतामृत *३०. कवितालोचन *३१ मानसावगाहन

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
			*३२. वनिता-विनोद-समालोचना *३३ निबन्ध-निलय *३४. मुँह का मनोरंजन *३५. समाज और शिक्षा *३६. कर्नल आलकट *३७. पाश्चात्य और नैतिक दर्शन *३८. पंचपुरावृत्त *३९. सनातन धर्म *४०. मूर्त्तिपूजा का जन्म *४१. मनुष्य का स्वास्थ्य *४२ वर्त्तमान असन्तोष *४३. ब्रह्मविद्या *४४. शिक्षा का इतिहास ४५. आधारिका
८७.	२०८	दिनेशप्रसाद वर्मा नाटककार-बाल-साहित्य-कार-गद्यकार-कवि जन्म : सन् १८९६ ई० जहाँगीर (भागलपुर)	भँवर में भारत अर्थात् सिन्ध-पतन-नाटक
८८.	२०९	दीपनारायण प्रसाद गद्यकार-भाष्यकार जन्म : सन् १८९६ ई० मोगलबाजार (मुँगेर)	१. मेरी कैलास-मान-सरोवर-यात्रा २. श्रीमद्भगवद्गीता भावात्मक भाष्य ३. श्रीरामचरित-मानस : भावात्मक भाष्य ४. चर्पटपञ्जरिका : भावात्मक भाष्य ५. आदित्यहृदयम् : भाषा-भाष्य
८९.	२१०	दुर्गाप्रसाद त्रिपाठी सम्पादक-कवि-कथाकार-निबन्धकार जन्म : सन् १८९६ ई० कायमनगर (शाहाबाद)	१. स्वर्ग-सोपान २. मंजरी ३. हिन्दू-नारी
९०	२१२	दुर्गाशंकर प्रसाद सिंह (नाथ) कवि-गद्यकार-नाटक-कार-निबन्धकार-कथाकार जन्म : सन् १८९६ ई० दलीपपुर (शाहाबाद)	१. ज्वालामुखी २. गद्य-संग्रह ३. हृदय की ओर ४. भूख की ज्वाला ५ भोजपुरी-लोक-गीतों में करुण-रस ६. नारी-जीवन ७. वह शिल्पी था ८. तुम राजा मैं रंक ९. फरार की डायरी १०. सामूहिक खेती ११. कुँअरसिंह : एक अध्ययन १२. भोजपुरी के कवि और काव्य १३. गुनावन १४. एटम के युग में १५. बाबू कुँअरसिंह १६. साहित्य-रामायन (तीन खण्डों में) १७. भोज, भोजपुर और भोजपुरी-प्रदेश

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
			१८. भोजपुरी : एक समीक्षा १९ न्याय के न्याय २० कैकयी का त्याग २१ विरही हृदय या विरह-चालीसा २२. अतीत-भारत २३ तब, जब भोजपुरी पर कोई नहीं लिखता था २४ ससिमाला २५ कुँअरसिंह की जीवनी २६. युवक-युवती क्या जानें ? (काम-विज्ञान) २७. डैनटूट सारस २८. भोजपुरी-निबन्धों का संग्रह २९ भोजपुरी-लोकगीतों में शृंगार-रस ३०. भोजपुरी-लोकगीतों में वीर-रस ३१ भोजपुरी-लोकगीतों में शान्त-रस ३२. भोजपुरी-लोकगीतों में हास्य-रस ३३ लेखनी की बहक ३४. पद्यांजलि ३५. भोजपुरी-भाषा के ४० नये आविष्कृत संतकवि ३६. भोजपुरी के गत ५० वर्षों में विकास का सिंहावलोकन ३७ माला के राजा भोजदेव की भोजपुरी-भाषी प्रदेशों पर विजय तथा १६८ वर्षों का शासन
६१.	२१८	दुर्गेशनन्दन (माणिक) सम्पादक-कवि जन्म : सन् १९०० ई० पुरानी गोदाम (गया)	स्फुट रचनाएँ
६२.	२१९	देवदत्त त्रिपाठी गद्यकार जन्म : सन् १८७९ ई० दलीपपुर (शाहाबाद)	स्फुट रचनाएँ
६३.	२२१	देवनारायण मिश्र कवि जन्म : सन् १८९० ई० बारा (गया)	स्फुट रचनाएँ
६४	२२४	देवशरण शर्मा कवि-अनुवादक-नाटककार जन्म : सन् १८९० ई० जहानाबाद (गया)	*१. भगवद्गीता का पद्यानुवाद *२. भागवत के दशम स्कन्ध का पद्यानुवाद *३. अछूतोद्धार

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
६५.	१२७	देवेन्द्र प्रसाद गद्यकार जन्म : सन् १८८८ ई० आरा (शाहाबाद)	स्फुट रचनाएँ
६६.	२२७	द्वारिका प्रसाद कवि-गद्यकार जन्म : सन् १८६८ ई० हसुआ (गया)	श्रीमद्भागवत-भजनावली अथवा दीन द्वारिका-दुर्वादल * स्फुट रचनाएँ
६७	२२८	धनजय पाठक कवि-गद्यकार जन्म : सन् १८६१ ई० दलीपपुर (शाहाबाद)	स्फुट रचनाएँ
६८.	२३०	धनीराम बक्सी (धनी) गद्यकार-अनुवादक बाल-साहित्यकार-कवि जन्म : सन् १८६६ ई० चाईबासा (सिंहभूम)	१. तूफान २ चित्र ३ अँधेरी बात ४. भजनमाला ५. मार्गोपदेशिका ६. नागरी-बोध ७ सरल शिशुपाठ ८. सरल शिशु-गणित ६. बाल-रामायण १०. सरल धर्म-शिक्षक ११ हिन्दी-अँगरेजी-शिक्षक १२. हिन्दी-बँगला-शिक्षक १३ वर्णमाला-पहाड़ा १४ लाल बुझक्कड़ १५ हिन्दी-अँगरेजी-हो-भाषा-शिक्षक (दो भागों में) १६. हिन्दी-अक्षर-बोध १७. हिन्दी-वर्णबोध १८ शिशु वर्ण-शिक्षा १६ सरल पत्रबोध २०. बाल-हितोपदेश २१ ऐंग्लो-हिन्दी-प्राइमर २२. त्रिभाषी (हिन्दी-बँगला-उड़िया) २३ गिनती-पहाड़ा
६६.	२३२	धनुषधारी दास (गोपालजी दास) सम्पादक-कवि-गद्यकार-जीवनी-लेखक-अनुवादक जन्म : सन् १८६५ ई० कहुआ (दरभंगा)	१. मैथिली में बिहारी २ तिलक-पचीसी ३ विद्यापति ४. रुपैया-राज *५ पाण्डव-गुप्तवास *६. संगठन-सोपान *७ मैथिली-सतसई *८ कीर्त्तन-कलाप
१००.	२३४.	धनुषधारी मिश्र सम्पादक-अनुवादक-कवि-गद्यकार जन्म : सन १८७६ ई० कुरका (गया)	१. देवर्षि-पितृतर्पण २ कार्त्तिक-माहात्म्य ३. मुहूर्त्त-चिन्तामणि ४. गया-पद्धति ५. दुर्गापाठ ६. सन्ध्या-वन्दन ७ मनुष्य का मातृत्व-सम्बन्ध

क्र०सं०	प०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
१०१.	२३५	धर्मनाथ मिश्र (धर्म) गद्यकार-निबन्धकार-कवि जन्म : सन् १८९६ ई० मँझौली (सारन)	१. आयुर्वेद-संगीत २. नपुंसक-कल्पद्रुम
१०२.	२३७	धर्मराज ओझा गद्यकार जन्म सन् : १८८१ ई० देवकुली (शाहाबाद)	स्फुट रचनाएँ
१०३.	२३७	धर्मलाल सिंह सम्पादक-गद्यकार जन्म : सन् १८९८ ई० गोरजा (दरभंगा)	१. गोपालन की पहली और दूसरी पुस्तक २. गोधन *३. क्षीर-सागर
१०४.	२४०	नन्दकिशोर सिंह (किशोर) सम्पादक-जीवनी-लेखक- कवि गद्यकार-अनुवादक बाल-साहित्यकार जन्म : सन् १८९६ ई० ऐमन-डिहरी (शाहाबाद)	१. ईश्वरचन्द्र विद्यासागर २. सतीत्व-प्रभा ३. नारी-हृदय ४. मेवे की झोली ५. बालरस-रंग *६. बाल-रामायण *७. प्राचीन सभ्यता का इतिहास *८. करुणा *९. रणजीत सिंह *१०. मासफल *११. दश अवतार-कथा *१२ भेषज-दीपिका *१३. शिवनन्दन सहाय की जीवनी *१४. हिन्दू-संगठन *१५. धर्मवीर प्रह्लाद *१६. भाई भाई *१७. भोजपुरी-गीतावली *१८. भोजपुरी-शब्दकोश *१९. बनबेर
१०५.	२४३	नरसिंहमोहन मिश्र (सिंह) कवि-गद्यकार जन्म : सन् १८९७ ई० बूढ़ानाथ पथ, भागलपुर	१. स्फुट रचनाएँ
१०६.	२४४	नवमीलाल देव (वैद्य) कवि गद्यकार जन्म : सन् १८७७ ई० डाल्टेनगंज (पलामू)	१. गांधी-गौरव २. खादी-महत्त्व ३. दयानन्द-महिमा *४. सुलभ चिकित्सा *५. भारतीय न्याय-दर्शन
१०७	२४५	नित्यानन्द सिंह (बुन्देला) कवि जन्म : सन् १८५६ ई० तमघट्टी (पूर्णिया)	नित्या-विलास स्फुट रचनाएँ
१०८	२४७	निर्भयलाल चौधरी सम्पादक-कवि जन्म : सन् १८७६ ई० तारालाही (दरभंगा)	१. भजनामृत-तरंगिणी २. आनन्दबहार ३. हरिकीर्त्तन-भजनावली ४. भक्त-प्रमोद

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम	
१०९.	२५०	पंचमसिंह वर्मा सम्पादक-गद्यकार जन्म : सन् १८७१ ई० जम्होर (गया)	१. पु.पुन-गंगा माहात्म्य २ गया-माहात्म्य-सार ३ गया-श्राद्ध-पद्धति ४. गया-यात्रा	५. सन्त-वचनामृत-सार ६. विज्ञान रूपण-दीपिका
११०.	२५२	पत्तनलाल (सुशील) कवि-गद्यकार-जीवनी-लेखक जन्म : सन् १८५९ ई० दाऊदनगर (गया)	१. रोला-रामायण २. शुबली-साठिका ३. भर्त्तृहरि-शतक ४. नीति-शतक ५. साधु ६ उजाड़ गाँव ७. यात्री	८ देशी खेल (दो भागों में) ९. ग्रियर्सन साहब की बिदाई १०. जवाहिरलाल की जीवनी
१११.	५५७	पन्नालाल भैया (छैल) कवि-कथाकार-गद्यकार जन्म : सन् १८८४ ई० ऊपरडीह (गया)	१. जमाल-माला २. कुण्डलिया-कुण्डल ३. भर्त्तृहरि-भूषण *४. मेघ-मंजरी	५. उर्वशी वा मोहनकुमारी ६ कजली-विनोद ७. वसन्त-बहार ८ काली घटा
११२.	२६०	परमेश्वरप्रसाद शर्मा गद्यकार-टीकाकार जन्म : सन् १८९८ ई० शिवकुण्ड (मुँगेर)	सूरसागर की टीका स्फुट रचनाएँ	
११३.	२६२	प्रमोदशरण पाठक सम्पादक-गद्यकार-कवि जन्म : सन् १९०० ई० फतुहा (पटना)	* भूदेवों का भारत स्फुट रचनाएँ	
११४	२६५	पारसनाथ सहाय गद्यकार-निबन्धकार जन्म : सन् १९०० ई० बेलकुण्डी (हजारीबाग)	१. सत्य की खोज में २. क्या आत्मा अमर है? ३. तर्कशास्त्र का प्रारम्भिक अध्ययन	४ तर्कशास्त्र के मूल सिद्धान्त
११५.	२६७	पारसनाथ सिंह पत्रकार-इतिहासकार-कलाकार-निबन्धकार-गद्यकार जन्म : सन् १८९६ ई० परसा (सारन)	१. जगत सेठ २. परिचय ३. रुपये की कहानी ४. विनोद और व्यंग्य	५ आँखों देखा युद्ध ६. ज्योतिषचर्चा ७ कुसुमावली ८ पद्म-पराग

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
११६	२७१	पाण्डेय पुण्यात्मा (आत्मा) सम्पादक-गद्यकार-निबन्धकार-अनुवादक जन्म : सन् १८६८ ई० बरेजा (सारन)	१ राष्ट्रीय कविताएँ २. आत्म-संस्मरण ३. निबन्ध-निचय ४ वेदान्त-दर्शन ५. उमा
११७.	२७३	पुण्यानन्द झा सम्पादक-अनुवादक-गद्यकार-आत्मकथाकार-कवि जन्म : सन् १८६८ ई० जहानपुर (पूर्णिया)	१. मिथिला-दर्पण २. पीतल की मूर्त्ति ३. एसेम्बली का अध्ययन ४ मेरी जीवनी
११८.	२७५	पृथ्वीनाथ सिंह गद्यकार जन्म : सन् १८७३ ई० वारणपुर (पटना)	१. पुनपुन-माहात्म्य २. उद्भिज-विद्या
११९.	२७६	फूलदेव सहाय वर्मा सम्पादक-निबन्धकार-कोषकार-अनुवादक जन्म : सन् १८८६ ई० कोंड़सर (सारन)	१. प्रारम्भिक रसायन (दो भागों में) २. साधारण रसायन (दो भागों में) ३ वैज्ञानिक शब्दावली (रसायन) ४. मिट्टी के बरतन ५. अँगरेजी-हिन्दी-वैज्ञानिक कोष (रसायन, दो भागों में) ६. प्रांगारिक रसायन ७ रसायन-प्रवेशिका ८ अकार्बनिक रसायन ९ कार्बन-रसायन १०. सामान्य विज्ञान ११. विज्ञान और वैज्ञानिक १२. रबर १३. ईख और चीनी १४ पेट्रोलियम १५. प्लास्टिक १६. विटामिन और आहार १७. छात्र-जीवन १८. कोयला १९. खाद और उर्वरक २०. कार्बोहाइड्रेट और ग्लाइकोसाइड २१. लुगदी और कागज २२. लाख और चपड़ा २३. मेटेरिया-मेडिका का अनुवाद २४. हिन्दी-विश्वकोष (सात-आठ खण्डों में)
१२०.	२८०	बजरंगदत्त शर्मा गद्यकार-कवि-समालोचक जन्म : सन् १८८७ ई० मुरारपुर (गया)	१. मिथ्या कलंक २. विजयादशमी ३. दिवाली में दिवाला ४. होली में हजामत ५. प्यार-प्यारी-संवाद ६. मै दुखी क्यों हूँ ?

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
१२१.	९८१	बदरीनाथ झा (कविशेखर) कोषकार-सम्पादक- कवि-गद्यकार जन्म : सन् १८९३ ई० सरिसब-पाही (दरभगा)	१. संस्कृत-मिथिला-कोष २. एकावली-परिचय ३. मैथिली-गीत-रत्नावली *४. काव्य-विवेक
१२२	२८५	बदरीनाथ वर्मा सम्पादक-गद्यकार-निबन्धकार जन्म : सन् १८८९ ई० अवगोल (गया)	१. समाज २ हिन्दी और उर्दू
१२३.	९८८	बदरीनाथ मिश्र कवि जन्म : सन् १८९७ ई० नरहन्ना (पटना)	१. जगदीश-प्रार्थना-शतक *२ आनन्द-सरोवर *३ शिवायन
१२४.	२८९	बनारसीलाल (काशी) कवि-गद्यकार-बाल- साहित्यकार जन्म : सन् १८९७ ई० रामडीहरा (शाहाबाद)	१ हिन्दी-पाठमाला (दो भागों में) २. अलंकार-प्रवेशिका ३ पिंगल-प्रवेशिका *४. काशी-कविता-कुंज
१२५.	२९२	बलदेवप्रसाद मिश्र (छबीन) कवि-गद्यकार जन्म : सन् १८९९ ई० ग्रामबेल (गया)	१. काव्य-कलानिधि २ कुण्डलिया-कुण्डल ३. सावन-मोहिनी-कविता ४. सावन-सरोज ५. श्रीसत्यनारायण-कथा ६. फाल्गुन-तरंगिणी ७ पावस-बहार ८. दुर्जन-दैत्य-दपेटिका ९. काव्य-कानन-कुठार १०. पूर्णानन्द-सागर ११. रसिक-विनोद १२. नायिका-भेद १३. शिव-माहात्म्य १४. खण्डन-खाद्य
१२६.	१९४	बलदेव मिश्र गद्यकार-कवि-इतिहासकार- जीवनी-लेखक जन्म : सन् १८९६ ई० बनगाँव (सहरसा)	१. छात्र-जीवन २. रामायण-शिक्षा ३. भारत-शिक्षा ४ संस्कृति ५. गपशप-विवेक ६. कविवर पं०चन्दा झा *७. मैथिली-साहित्य-सेवी लोकनीक इतिहास *८. ज्योतिष के नवरत्न *९. गणित का इतिहास *१०. बनगाँव का इतिहास *११. संस्कृत-साहित्य में मैथिलों की देन *१२. महान् पुरुषक जीवन-चरित्र *१३. समाज

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम	
१२७.	२९६	बलदेवलाल (बलदेव) कवि-अनुवादक जन्म : सन् १८५८ ई० पुरानी गोदाम (गया)	*१. नामावली *२. भजनावली *३. पावस-पचासा	*४. भट्टि-महाकाव्य का सवैया-छन्दोबद्धानुवाद *५. ब्रजभाषा में स्फुट काव्य
१२८.	२९८	ब्रजनन्दन सहाय (ब्रजवल्लभ) सम्पादक-कथाकार नाटककार-कवि-अनुवादक- जीवनी-लेखक जन्म : सन् १८७४ ई० अखितयारपुर (शाहाबाद)	१ सौन्दर्योपासक २. लालचीन ३. विस्मृत सम्राट् ४. विश्व-दर्शन ५. राजेन्द्र-मालती ६. अद्भुत प्रायश्चित्त ७. राधाकान्त ८. अरण्यबाला ९. चन्द्रशेखर १०. रजनी ११. कमलाकान्त का इजहार १२. सप्तम प्रतिमा १३. उद्धव-नाटक १४. उर्षांगिनी १५. वरदान	१६. कलंक-मार्जन (कैकेयी) १७. बूढ़ा वर १८ निर्जन द्वीपवासी का विलाप १९. हनुमान-लहरी २०. ब्रज-विनोद २१. सत्यभामा-मंगल २२ मैथिल-कोकिल विद्यापति २३. पं० बलदेव मिश्र २४. बंकिमचन्द्र २५. राधाकृष्णदासजी २६. अर्थशास्त्र २७. शिक्षा-विलास
१२९.	३०२	ब्रजविहारी शरण नाटककार-कथाकार- कवि-गद्यकार जन्म : सन् १८८७ ई० बक्सर (शाहाबाद)	१. साँगा २. दलित कुसुम ३. अशोक ४. कुणाल और तिष्यरक्षिता	५. नन्द-पतन ६ इन्दु ७. हूण *८. चन्द्रगुप्त मौर्य (अपूर्ण)
१३०.	३०५	बाबूलाल शर्मा कवि जन्म : सन् १८९३ ई० मानपुर (गया)	स्फुट रचनाएँ	
१३१.	३०६	बालमुकुन्द सहाय कवि-गद्यकार जन्म : सन् १८९० ई० रामचन्द्रपुर (मुँगेर)	१. भारत-विजय	२. मानस-मीमांसा

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
१३२.	३०६	बेचूनारायण जीवनी-लेखक गद्यकार-कवि-बाल-साहित्यकार जन्म : सन् १८८४ ई० नबीनगर (गया)	१. चिन्तन २ शिशु-चिन्तन ३ ब्रह्मानन्द केशवचन्द्र सेन ४. राजा राममोहन राय ५ जीवन-वेद ६. हिन्दी-व्याकरण ७. प्रार्थना ८ पाठ-टीका ९. अंकगणित १०. सम्राट् पंचम जार्ज और महारानी मेरी
१३३.	३०७	भगवतीचरण सम्पादक-कवि-नाटककार-गद्यकार जन्म : सन् १८९६ ई० चम्पारन	१ जमदग्नि का सत्याग्रह *२. यसमा *३ ब्रह्मकण्ठ *४. मुगलेआजम *५. माया (अपूर्ण)
१३४.	३१०	भगवतीप्रसाद सिंह (शूर) कवि-गद्यकार जन्म : सन् १८५५ ई० रतनपुरा (छपरा)	१. फलित स्वप्न २. देश वन्दना *३. भारतीय दर्शन का सारांश *४. योरोपीय दर्शन का सारांश *५ स्वतन्त्र प्रवाह : भावात्मक दर्शन
१३५.	३१३	भगीरथ झा (रमेश) कवि गद्यकार जन्म : सन् १८९४ ई० कुशौंगढ़ी (मुँगेर)	१ सौरभ २. गद्य-कुसुम
१३६.	३१४	भवप्रीतानन्द ओझा कवि जन्म : सन् १८८६ ई० कुंडा (संताल परगना)	१. झूमर-पारिजात २. झूमर-रसतरंगिणी ३. झूमर-रस-मंजरी ४. धेरा-रत्नमंजूषा ५. वैद्यनाथ-क्षेत्र-सर्वस्व
१३७.	३१९	भवानीदयाल संन्यासी सम्पादक-जीवनी-लेखक-इतिहासकार-गद्यकार-कवि जन्म : सन् १८९२ ई० बहुआरा (शाहाबाद)	१. दक्षिण-अफ्रिका के सत्याग्रह का इतिहास २. दक्षिण-अफ्रिका के मेरे अनुभव ३. सत्याग्रही महात्मा गांधी ४. हमारी कारावास-कहानी ५. ट्रान्सवाल में भारत-वासी ६. नेटाली हिन्दू ७ शिक्षित और किसान ८. वैदिक धर्म और आर्य-सभ्यता ९. वैदिक प्रार्थना १०. भजन-प्रकाश ११. प्रवासी की कहानी

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
			१२. वर्ण-व्यवस्था और मरण-व्यवस्था १३ बोअर युद्ध का इतिहास १४. स्वामी शंकरानन्द की बृहत् जीवनी १५. सत्याग्रह का इतिहास *१६. दक्षिण-अफ्रिका में आर्य संन्यासी
१३८.	३२४	भागवतप्रसाद मिश्र (राघव) कवि जन्म : सन् १८९२ ई० राघवपुर (पटना)	स्फुट रचनाएँ
१३९.	३२६	भिखारी ठाकुर कवि-नाटककार जन्म : सन् १८८७ ई० कुतुपुर (सारन)	१. बिदेसिया २. हरिकीर्त्तन ३. शंका-समाधान ४. भजनमाला ५. कलियुग-बहार ६. बहरा-बहार ७. देवी-कीर्त्तन या भिखारी-चौयुगी ८. राधेश्याम-बहार ९. यशोदा-सखी-संवाद १०. घीचोर-बहार ११. पुत्रवधू १२. बेटी-वियोग १३. विधवा-विलाप १४ श्रीगंगा-स्नान १५. माई-विरोध १६. ननद-भौजाई-संवाद १७. नवीन बिरहा १८. कलियुग-प्रेम (चार भागों में) १९. चौवर्ण पदवी (नाई-पुकार) २०. बुढ़शाला का बयान २१. भिखारी जयहिन्द-खबर
१४०.	३३०	भुवनेश्वर झा निबन्धकार-गद्यकार जन्म : सन् १८९८ ई० धमौरा (चम्पारन)	१. दिल्ली २. निबन्ध-संग्रह
१४१.	३३२	भुवनेश्वर झा (भुवनेश) कवि नाटककार-गद्यकार जन्म : सन् १८७५ ई० बल्लीपुर (दरभंगा)	१. मैथिली-योग-वाशिष्ठ-सार २. स्वर्ण-परीक्षा ३. कृष्ण-चरितावली *४. क्रान्तिकारी बालक प्रह्लाद *५. सत्यप्रतिज्ञ हरिश्चन्द्र *६. परोपकार वकवध *७. बलि-वामन ८. कीर्त्तन-चन्द्रिका *९. विनय *१०. पद-चेतावनी *११. पर्व-पदावली *१२. सुलभ-योगमालिका

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
१४२.	३३४	भुवनेश्वरीप्रसाद चौधरी (भुवनेश) कवि-गद्यकार-अनुवादक जन्म : सन् १८६३ ई० बाथ (भागलपुर)	१. ऋतु-वैभव-विलास २. विनोद-वाटिका ३. स्तुति पुष्पांजलि ४. ग्रीष्म-गरिमा ५. कुल-वधू ६. बिहार-वैभव ७. मन्दारगुरु-धर्म-प्रशस्ति ८ अम्बाष्टक ९. विभूति १०. आत्मानुसन्धान और अनुभूति ११. जीवन-सुधा १२ किरातार्जुनीय १३. रघुवंश *१४. बालगीतोपदेश *१५. संस्कृत-हिन्दी के स्फुट पद्य
१४३.	३३८	भुवनेश्वर प्रसाद (भुवनेश, भुवन) कवि-अनुवादक जन्म : सन् १८९६ ई० नबीगंज (सारन)	स्फुट रचनाएँ
१४४.	३४०	भोलालाल दास सम्पादक-गद्यकार-कवि-इतिहासकार जन्म : सन् १८९४ ई० कसरौर (दरभंगा)	१. हिन्दू लॉ में स्त्रियों का अधिकार २. अक्षरों की लड़ाई ३. भारतवर्ष का इतिहास ४. गद्य-मंजूषा
१४५.	३४४	मथुराप्रसाद दीक्षित सम्पादक-गद्यकार-निबन्धकार-जीवनी-लेखक-इतिहासकार जन्म : सन् १८९५ ई० पिरारी (सारन)	१. सेवा-क्षेत्र २. बाबू कुँवर सिंह ३. नादिरशाह ४. गोविन्द-गीतावली ५. वैशाली ६ सर गणेशदत्त ७ चाणक्य ८. पशु-चिकित्सा *९. वैशाली दर्शन *१०. ज्योतिरीश्वर और वर्ण-रत्नाकर
१४६.	३४६	मधुसूदन ओझा (स्वतंत्र) सम्पादक-कवि-गद्यकार-जीवनी-लेखक-कोषकार जन्म : सन् १८९८ ई० मटिला (शाहाबाद)	१. कंस-वध २ धर्मवीर मोरध्वज ३. जालिम जमींदार ४. पुण्याश्रवकथा-कोष ५. श्रेणिक-चरित्र ६ काल-पुरुष ७. स्वतन्त्र सोपान ८. सप्त सोपान ९. मुक्ति संघर्ष
१४७.	३५०	मनमोहन चौधरी कवि जन्म : सन् १८५२ ई० प्रसाद (दरभंगा)	१. मनमोहन-विलास अर्थात् भजन-प्रकाश २. वंशावली महाराजा दरभंगा

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
१४८	३५१	मनोरजनप्रसाद सिह कवि-गद्यकार- जीवनी-लेखक-यात्रा-वृत्तान्त- लेखक जन्म : सन् १९०० ई० डुमराँव (शाहाबाद)	१ राष्ट्रीय मुरली २. राजा कुँवरसिंह ३ उत्तराखण्ड के पथ पर ४. भगवान् हमारे ५. गौतम बुद्ध ६. गुनगुन ७ संगिनी
१४९.	३५६	महादेवप्रसाद शास्त्री टीकाकार-अनुवादक जन्म : सन् १८९१ ई० मथुरापुर (मुजफ्फरपुर)	१. साहित्य-लहरी की व्याख्यात्मक टीका २. जगद्विनोद की टीका ३. ब्रजमाधुरी-सार की टीका *४ जातकमाला का हिन्दी-अनुवाद
१५०.	३५७	महादेवप्रसाद सिंह (घनश्याम) कवि-गद्यकार नाटककार-निबन्धकार जन्म सन् १८९४ ई० नचाप (शाहाबाद)	१. भारत का गुलाब २ राष्ट्रीय झंकार ३. बेदर्दी ४ देश-सुधार ५. भारत-पुकार ६ दीन-पुकार ७ देश-घतिया ८ अँगरेजवा ९. भारत-सुधार १०. रविदास-रामायण ११. राधेश्याम-नाटक १२ शीत-बसंत १३ वीर कुँअरविजयी (१६ भागों में) १४. ढोलन का गीत १५. लोरिकायन (तीन भागों में) १६. बारह सखी का बारहमासा
१५१.	३५९	महावीरप्रसाद द्विवेदी कवि जन्म : सन् १८५६ ई० बहेलिया-बिगहा (गया)	स्फुट रचनाएँ
१५२.	३६२	महेशचन्द्र प्रसाद सम्पादक- नाटककार-कवि- अनुवादक-इतिहासकार जन्म : सन् १८८७ ई० नादरागंज (गया)	१. सावित्री नाटिका २. हर्ष में विषाद ३. भारत-भाग्योदय ४. शोक-संगीत ५ भारतेश्वर का संदेश ६. संस्कृत-साहित्य का इतिहास ७ ज्ञान-गंगा ८. स्वदेश-सतसई ९ श्रीबाहुबलि-शतक १० प्रबोध-चन्द्रोदय ११. मनुष्य-सतसई १२ डाह का फल १३ देश-दुर्दशा-नाटक १४. हिमालय १५. दुर्गासप्तशती १६. दण्डी-यात्रा

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम	
१५३	३६६	महेशनारायण सम्पादक-कवि जन्म : सन् १८५८ ई० बमनगावाँ (संताल परगना)	स्फुट रचनाएँ	
१५४.	३६८	महेश्वरी प्रसाद (यत्न) गद्यकार-बाल-साहित्यकार- निबन्धकार जन्म : सन् १८६६ ई० श्रीमन्तपुर (मुँगेर)	१. सुसाहित्य-संग्रह	२. बच्चों की कहानियाँ
१५५.	३६९	मोहनलाल मिश्र कवि-गद्यकार जन्म : सन् १८७८ ई० बमनीघाट (गया)	स्फुट रचनाएँ	
१५६.	३६९	यदुनन्दन प्रसाद गद्यकार- पाठ्यपुस्तक-लेखक जन्म : सन् १८६६ ई० दाऊदनगर (गया)	१. पॉपुलर-ट्रान्सलेशन २. रचना-तत्त्व (तीन भागों में) ३. मिड्ल रचना-प्रकाश	४. अपर हिन्दी-व्याकरण ५. साहित्यरत्न-मंजूषा ६. प्रवेशिका नवीन पद्य संग्रह
१५७.	३७१	यमुनाप्रसाद पाठक (श्याम-सलिल) गद्यकार-कवि- सम्पादक जन्म : सन् १८९७ ई० सुरवल (सारन)	स्फुट रचनाएँ	
१५८.	३७१	यशोदानन्द (अखौरी, जसुदा, यशोदा, अकिंचन, प्रपन्न, किंकर) सम्पादक-कवि गद्यकार- अनुवादक जन्म : सन् १८९९ ई० हरपुर-रामनाथ (शाहाबाद)	१. जोसेफ विलमट का हिन्दी-अनुवाद (पाँच भागों में) २. भगवान् रामकृष्ण-देव के उपदेश-शतक ३. विवेक-रचनावली ४. शिक्षा-विज्ञान की भूमिका	५. होली की भेंट *६. माम की माँ का हिन्दी-पद्यानुवाद *७ करीमा का हिन्दी-पद्यानुवाद

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
१५९.	३७६	यज्ञनारायण चौबे (रामायणीजी) कवि जन्म : सन् १८५४ ई० बैना (शाहाबाद)	स्फुट रचनाएँ
१६०.	३७७	यज्ञेश्वर सिंह (पामर) कवि-नाटककार- आत्मकथा-लेखक जन्म : सन् १८८५ ई० जारंग (मुजफ्फरपुर)	१. पामर-पुकार २. पामर-उद्गार ३. यज्ञेश्वर-विनोद ४. क्षत्रिय-तिमिर-कुठार *५. श्रीसीताराम-नाटक *६ राम-रहस्य-नाटक *७. पामर की आत्म-कहानी *८. पामर-दोहावली *९. पामर-सतसई
१६१.	३८०	युगेश्वर मिश्र (युगेश) कवि-नाटककार-अनुवादक जन्म : सन् १८९८ ई० रेपुरा (मुजफ्फरपुर)	१. विभूत की चुटकी २. वीणा ३. सत्य हरिश्चन्द्र-नाटक ४. मदन-दहन-नाटक ५. भारत-दुर्भाग्य-नाटक ६ प्रसुरधबाला
१६२.	३८२	योगेश्वराचार्य कवि-गद्यकार जन्म : सन् १८८५ ई० रुपौलिया (चम्पारन)	१ स्वरूप-प्रकाश *२. स्वरूप-गीता *३. यन्त्रावली *४. शिक्षा-चेतावनी *५. भूकम्प-रहस्य *६. विज्ञान-सार *७ शिवस्तोत्र तथा पूजन-विधि *८ फुटकर दोहावली *९. भवानी-स्तवन *१० त्रिभुवननाथ-माहात्म्य
१६३.	३८६	रंगनाथ पाठक सम्पादक-गद्यकार जन्म : सन् १८८५ ई० एकौना (शाहाबाद)	१. स्फोट दर्शन २. षड्दर्शन-रहस्य
१६४.	३९०	रगबहादुर प्रसाद (बहादुर) कवि जन्म : सन् १८९७ ई० नयागाँव (सारन)	१. गांधीजी का अल्टिमेटम २. माता की पुकार ३. रण-निमन्त्रण ४. आजादी की पहली लड़ाई ५. बिहिया की लड़ाई ६. भोजपुर
१६५.	३९२	रघुनन्दन त्रिपाठी कवि-गद्यकार- नाटककार जन्म : सन् १८५५ ई० दलीपपुर (शाहाबाद)	१. धर्म-चिन्तामणि

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
१६६.	३९५	रघुनन्दनदास (बबुए, रघुनाथ) कवि-अनुवादक- नाटककार जन्म : सन् १८६१ ई० सखवाड़ (दरभंगा)	१. भर्तृहरि-निर्वेद नाटक का अनुवाद २. उत्तररामचरित का मैथिली-अनुवाद ३. मिथिला-नाटक ४ दूतांगद-व्यायोग ५. पावस-प्रमोद-सट्टक ६ सावित्री-सत्यवान्-नाटक ७. सुभद्राहरण-महाकाव्य ८. वीरबालक-खण्ड काव्य ९. राधा-नखशिख १०. अम्बपचीसी ११. हरताली व्रतकथा १२. जीमूतवाहन-व्रतकथा
१६७.	३९७	रघुनाथप्रसाद मिश्र (रवीन्द्र) कवि जन्म : सन् १८६८ ई० राघवपुर (पटना)	रस-मंजूषा
१६८	४०१	रघुवरदयाल कवि-गद्यकार जन्म : सन् १८८६ ई० गम्हरिया (सारन)	१. जीवन-रसायन-शास्त्र
१६९.	४०१	रघुवीर नारायण कवि गद्यकार-अनुवादक जन्म : सन् १८८४ ई० दहियावाँ (सारन)	१. रम्भा २. रघुवीर-पत्र-पुष्प ३. रघुवीर-रस रंग ४. निकुंज-कलाप ५. रघुवीर-रस-गंगा
१७०.	४०७.	रघुवीर प्रसाद गद्यकार अनुवादक- पाठ्यपुस्तक-लेखक जन्म : सन् १८८० ई० मुरार (शाहाबाद)	१ आमोद-पाठ *२. प्राकृतिक पाठ-दर्शन
१७१.	४०८.	रजनीकान्त शास्त्री गद्यकार जन्म : सन् १८८१ ई० एकौना (शाहाबाद)	१. सिद्धान्त-कौमुदी *२ मानस-मीमांसा ३. नवीन मूल रामायण ४. ज्योतिर्गणित-कौमुदी ५. वियाहुत-वंश का इतिहास *६. हिन्दू-जाति का उत्थान और पतन *७. सत्यार्थ-दर्शन

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
१७२.	४११	रमाप्रसाद मिश्र (रमेश) सम्पादक-कवि जन्म : सन् १८९८ ई० सुनाठी (गया)	स्फुट रचनाएँ
१७३.	४१५	रमाशंकर मिश्र गद्यकार-निबन्धकार जन्म : सन् १८९२ ई० मुरारपुर (गया)	स्फुट रचनाएँ
१७४.	४१७	रमेश प्रसाद सम्पादक-गद्यकार जन्म : सन् १८९९ ई० मुरार (शाहाबाद)	स्फुट रचनाएँ
१७५.	४१९	राघवप्रसाद सिंह (महन्थ) कवि-बाल-साहित्यकार जन्म : सन् १८८८ ई० वैनी (दरभंगा)	१. राष्ट्रीय संगीत *२. कला-मंजरी *३. पदबद्ध रामायण
१७६.	४२१	राजकिशोर सिंह सम्पादक-गद्यकार जन्म : १८९४ ई० एमन-डिहरी (शाहाबाद)	१. हिन्दू-संगठन २. हंगरी का अहिंसात्मक असहयोग ३. ब्रिटिश राज-रहस्य ४. एशिया का जागरण ५. ईंची-रहस्य
१७७.	४२४	राजवल्लभ सिंह (वल्लभ) कवि-नाटककार-अनुवादक जन्म : सन् १९०० ई० दफ्तरपुर (सारन)	१. राष्ट्र-लहरी *२. वल्लभ-सतसई *३. राष्ट्र-लहरी *४. सुलभ बन्धु *५. वल्लभ-बन्धु *६. पुत्र-प्रेमाञ्जलि *७. मोहनमाला *८. भक्ति-मञ्जरी *९. श्याम-स्नेह *१०. हरिजन *११. खादूराम *१२. भाग्यचक्र *१३. होनिहार बहू *१४. बणिबेटी *१५. दूसरा जन्म *१६. होली *१७. भरथरी *१८. आत्मगीता *१९. चरखा संगीत *२०. प्रकृति-प्रेम *२१. प्रेम-पुकार *२२. प्रेमोपहार *२३. समाज-सेवा *२४. हार-सप्तक *२५. सनेह-सोपान *२६. प्रेम-पराग *२७. विरह-वेदना *२८. प्रेम-प्रसून *२९. महँगू-कथा *३०. रण-दुन्दुभी *३१. विनोद मंजरी

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम	
१७८.	४२८	राजराजेश्वरी प्रसाद सिंह (प्यारे) कवि-अनुवादक-गद्यकार जन्म : सन् १८६५ ई० सूर्यपुरा (शाहाबाद)	१. दीवान २. चित्रांगदा	३. वीरबाला ४. स्वाधीन बाला
१७९.	४३१	राजाराम मिश्र कवि जन्म : सन् १८५७ ई० चौबेपुर (बक्सर)	१. कुँवर-पचासा	
१८०.	४३३	राजेन्द्र प्रसाद गद्यकार-कवि-अनुवादक जन्म : सन् १८८५ ई० कटेयाँ (शाहाबाद)	१. गीतामृत-त्रिवेणी २. उपनिषत्पीयूष	३. भर्तृहरि-शतक का पद्यानुवाद *४. महाभारत का पद्यानुवाद
१८१.	४३५	राजेन्द्र प्रसाद, डॉ० गद्यकार-सम्पादक-आत्मकथा-लेखक-इतिहासकार जन्म : सन् १८८४ ई० जीरादेई (सारन)	१ चम्पारन में महात्मा गांधी २ खादी का अर्थशास्त्र ३ संस्कृत का अध्ययन ४ साहित्य, शिक्षा और संस्कृति	५ आत्मकथा ६. बापू के कदमों में ७. बिहार में महात्मा गांधी
१८२.	४४२	राजेश्वरप्रसाद वर्मा गद्यकार-कथाकार-नाटककार-कवि सुन्दरी (सारन)	१ जोरू के बदले जमाई *२ चम्पारन के खण्डहरों में *३ बाघिन की बेटी	*४. मणिमेखला *५ अनंगपाल *६. मंडला *७. अमर सेनापति
१८३.	४४४	राजेश्वरीप्रसाद वर्मा गद्यकार-निबन्धकार जन्म : सन् १८८३ ई० लखनपुर (मुजफ्फरपुर)	१. कर्म २. इन्द्रियाँ या मन	३. आत्मोन्नति
१८४.	४४६	राधाकृष्ण झा गद्यकार-निबन्धकार-इतिहासकार-पाठ्यपुस्तक-लेखक जन्म : सन् १८८८ ई० कहलगाँव (भागलपुर)	१ भारतीय शासन-पद्धति २ भारत की सम्पत्तिक अवस्था ३ राजनीतिक अर्थशास्त्र	४. भारत में अँगरेजी राज *५ राष्ट्रज्ञान

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
१८५	४४९	राधालाल गोस्वामी (दास) कवि जन्म : सन् १८५३ ई० गायघाट (पटना)	* जन्माष्टमी-राधाष्टमी-बधाई
१८६.	४५२	राधिकारमण प्रसाद सिंह कथाकार-गद्यकार-नाटककार संस्मरण-लेखक जन्म : सन् १८९० ई० सूर्यपुरा (शाहाबाद)	१. नये रिफॉर्मर २. नवीन सुधारक ३. कुसुमांजलि ४ नवजीवन ५. तरंग ६. राम रहीम ७. पुरुष और नारी ८ सूरदास ९. संस्कार १०. पूरब और पच्छिम ११. चुम्बन और चाँटा १२. माया मिली न राम १३. मॉडर्न कौन, सुन्दर कौन? १४. अपनी-अपनी नजर, अपनी-अपनी डगर १५. गांधी-टोपी १६. सावनी समाँ १७. नारी क्या एक पहेली? १८. हवेली और झोपड़ी १९ देव और दानव २०. वे और हम २१. धर्म और मर्म २२. तब और अब २३. अबला क्या ऐसी सबला? २४. धर्म की धुरी २५. अपना-पराया २६ नजर बदली, बदल गये नजारे २७ टूटा तारा २८. बिखरे मोती[1] (चार भागों में)
१८७.	४५८	रामकृष्णदास (ठाकुर प्रसाद) कवि-जीवनी लेखक जन्म : सन् १८८७ ई० जगदीशपुर (सारन)	१. ज्ञानरतन सम्पुट २. श्रीरामकथा बतर्ज-राधेश्याम (२७ खण्डों में) ३. श्रीहरिश्चन्द्र-चरित्र ४. वैराग्य-विनोद ५. चन्द्रहास-चरित्र ६. नीतिशतक ७. लोकोक्ति-संग्रह ८. षट्ऋतु-वर्णन ९ श्रीवत्सोपाख्यान *१०. शब्द-रत्नाकर *११. छन्द-अमरकोश *१२. गीताज्ञान-चन्द्रिका
१८८.	६४०	रामचन्द्र प्रसाद गद्यकार-कवि-पाठ्यपुस्तक-लेखक जन्म : सन् १८९० ई० बेगमपुर (आरा)	भारतवर्ष का इतिहास

१. दो भाग प्रकाशित।

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
१८९.	४६२	रामचन्द्र शर्मा (काव्यकंठ) कवि-गद्यकार जन्म : सन् १८६६ ई० तरी (शाहाबाद)	१. शिवा-प्रतिभा *२ पत्रिका *३ मुरलिका *४ हमारी कविताएँ
१९०.	४६५	रामचरित्र सिंह कवि-गद्यकार जन्म : सन् १८५६ ई० तारणपुर (पटना)	१. नृप-वंशावली *२. चतुर-विलास *३. नीति-विलास *४. हास-विलास (तीन भागों में) *५. मनोरंजन-विलास *६. देशी गणित-क्षेत्र-चन्द्रिका *७. लेखा-प्रदीप
१९१.	४६७	रामचीज पाण्डेय (राम) कथाकार-गद्यकार-कवि जन्म : सन् १८८५ ई० अरवल (गया)	१ चन्द्रकला[१] २. बिहारी वीर ३. ब्राह्मण-रत्नमाला ४. मित्र-वेष में शत्रु
१९२.	४७०	रामजीशरण विन्ध्याचल (कविकिंकर) कवि जन्म : सन् १८८२ ई० हरपुरनाग (चम्पारन)	१. कृष्णायन *२ प्रार्थना-मनोरमा *३. हनुमतयशःपताका *४. महासंकटमोचन *५. विपत्ति-भंजनी ६. विनय-रत्नाकर ७ सूर्य-चालीसा ८. तुलसी-चालीसा *९. नाम-यश-दर्पण *१०. नाम-यश-कुटीर *११. प्रेमवर्द्धिनी *१२. मंगल-मंजषा *१३. शारदा लम्बोदर *१४. विलोम-दोहावली *१५. कलह-मोचिनी विनय *१६. गीता-पद्यावली *१७. जानकी-विनय *१८ श्रीगुरु-चालीसा *१९. जै महावीरजी *२०. कल्प-लतिका *२१. प्रेमकुसुमांजलि
१९३.	४७३	रामदहिन मिश्र (गिरिजेश) गद्यकार-जीवनी-लेखक-कोषकार-सम्पादक-अनुवादक-इतिहासकार-कथाकार जन्म : सन् १८८६ ई० पथार (शाहाबाद)	१. दशकुमारचरितका हिन्दी-अनुवाद २ पार्वती-परिणय का हिन्दी-अनुवाद ३. प्रवेशिका हिन्दी-व्याकरण ४. साहित्य-मीमांसा ५. साहित्य-सुधा ६. साहित्य-सुषमा ७. काव्यालोक ८. काव्य-दर्पण ९. काव्य में अप्रस्तुत-योजना १०. काव्य-विमर्श ११. हिन्दी-मुहावरा-कोश १२. फुटकर निबन्ध १३. साहित्य १४. मेघदूत-विमर्श

१. श्रीईश्वरनाथ सिंह के साथ लिखित उपन्यास।

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
			१५. साहित्यालंकार १६. साहित्य-परिचय १७. साहित्य-सौन्दर्य १८. भारत का मैट्रिकुलेशन-इतिहास १९. रचना-विचार २०. महाभारतीय सुनीति-कथा २१. बाल-रामायण २२. बाल-महाभारत २३. भारत का प्राचीन इतिहास २४. पुराणों की कहानियाँ (दो भागों में) २५. भारत-भूगोल २६. ईसप्‌नीति-कथा (दो भागों में) २७. विज्ञान की सरल बातें २८ श्रीबालकृष्ण-कथामृत (दो भागों में) २९. रामायण के उपदेश ३०. राजपूतों की कहानियाँ ३१. अलादीन ३२. रॉबिन्सन क्रूसो ३३ ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ३४. यूरोप और एशिया का परिचय ३५. नल-दमयन्ती की कथा ३६. बालवीर-परिचय ३७. बाल-निबन्धावली (दो भागों में) ३८. मगध का प्राचीन इतिहास ३९. कर्मवीर ४०. बच्चों की कहानियाँ ४१. बलिदान की कहानियाँ ४२ मनोरंजक कहानियाँ ४३. विदेशी कहानियाँ ४४. भक्तों के भगवान् ४५. नेपोलियन बोनापार्ट ४६. ब्रह्मानन्द केशवचन्द्र सेन ४७. राजा राममोहन राय ४८. बिहार के रत्न ४९. हरिजन-बन्धु ५०. हवाई जहाज ५१. लामाओं का देश ५२. अच्छी चाल
१९४.	४७६	रामदहिन शर्मा कवि जन्म : सन् १८९० ई० पुराना भोजपुर (शाहाबाद)	* देहाती भाइयों से अपील

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम	
१६५.	४८१	रामदीन पाण्डेय कथाकार-गद्यकार-नाटककार-अनुवादक-इतिहासकार जन्म । सन् १८६२ ई० माधोदिदरी (पलामू)	१. विद्यार्थी २. सौन्दरनन्द का अनुवाद ३. जानकीहरण का हिन्दी-अनुवाद ४ चलती पिटारी ५. ज्योत्स्ना ६. प्राचीन-भारत की सांग्रामिकता ७. जीवन-ज्योति ८. नवीन-कण	९. काव्य की उपेक्षिता *१०. ग्यारह कहानियों का संग्रह *११. हिन्दी-सहित्य का क्रमबद्ध इतिहास *१२. प्रसादजी के नाटकीय साहित्य का विवेचन *१३. प्राचीन भारत के सांग्रामिक संगठन का इतिहास *१४. सत्रह एकांकी
१६६.	४८५	रामधारीलाल (प्रेम) कवि-अनुवादक जन्म । सन् १८८६ ई० खिजिरपुरा (चम्पारन)	१. शिवमहिम्नछन्दांग २. अखण्ड शिवस्तोत्र	*३. प्रेम-प्रवाह
१६७.	४८७	रामनिरीक्षण सिंह गद्यकार-कवि-निबन्धकार जन्म : सन् १८६२ ई० समर्था (दरभंगा)	१. हमारा समाज २. पवित्र जीवन	३. स्वतंत्र भारत के नागरिक
१६८.	४६१	रामप्रसाद सिंह (साधक) कवि-गद्यकार-निबन्धकार जन्म : सन् १८६३ ई० गोरवडीह (मुँगेर)	१. राष्ट्रीय तरंग २. उद्बोधन ३. बाबा से अपील ४. निवेदन ५. गो-माता की पुकार ६. गांधी-गुणगान *७. विश्व-साहित्य की झलक	*८. कवि की आँख *९. हिन्दी-कवि और ऋतु *१०. साहित्य-सेवियों का समादर *११. दिव्य-दर्शन *१२. स्वर्गीय प्रणय *१३. मनमौजी कवि
१६६.	४६५	रामप्रीत शर्मा (प्रियतम, शिव) सम्पादक-कवि-गद्यकार जन्म : सन् १८६६ ई० केसठ (शाहाबाद)	१. नल-दमयन्ती २. पिंगल-मंजूषा ३. बाल-विनोद ४. राष्ट्रभाषा *५. प्रियतम-विनोद	*६ प्रेम *७. व्याकरण-शास्त्र *८. रीतिकाव्य की कला *९. भोजपुरी सरस रचना-संग्रह

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम	
२००.	४६७	रामबालक पाण्डेय सम्पादक-गद्यकार जन्म : सन् १८६८ ई० गोविन्दपुर (सारन)	१ भक्ति में साहित्य	२ ढोढ़ानाथ माहात्म्य
२०१.	४६७	रामरत्न त्रिपाठी गद्यकार-कवि जन्म : सन् १८६६ ई० अहियापुर (मुजफ्फरपुर)	स्फुट रचनाएँ	
२०२.	४६८	रामरक्षा मिश्र कवि-अनुवादक- बाल-साहित्यकार जन्म : सन् १८६६ ई० शिवदाहा (मुजफ्फरपुर)	*बिहारी-सतसई का छन्दोबद्ध अनुवाद	*स्फुट कविताएँ
२०३.	५००	रामस्वरूप शर्मा (स्वच्छ) कवि जन्म : सन् १८६८ ई० बड़हिया (मुँगेर)	१. भारत-भ्रमर २. होली का हल्ला	*३. काव्य-कणिका
२०४.	५०१	रामलोचनशरण (बिहारी) सम्पादक-गद्यकार-बाल- साहित्यकार-अनुवादक जन्म : सन् १८६१ ई० राघोपुर (मुजफ्फरपुर)	१. व्याकरण-बोध २. व्याकरण-चन्द्रिका ३. व्याकरण-नवनीत ४. व्याकरण-चन्द्रोदय ५. बाल-रचना ६. रचना-प्रवेशिका ७ रचना-चन्द्रिका ८. रचना-चन्द्रोदय ९. रचना-नवनीत १०. नीति-निबन्ध ११. गद्य-साहित्य १२. गद्यमोद १३. गद्य-प्रकाश १४. साहित्य-सरोज १५. साहित्य-विनोद	१६. साहित्य-प्रमोद १७. राष्ट्रीय साहित्य (छह भागों में) १८. राष्ट्रीय कविता-संग्रह १९. काव्य सरिता २०. इतिहास-परिचय २१. प्रकृति-परिचय २२ प्रतिवेश-परिचय २३. धर्म-शिक्षा २४. शिशुकर्म-संगीत २५ मनोहर पोथी २६. गणित पढ़ाने की विधि २७ ऐतिहासिक कथामाला २८ मैथिली रामायण

क्र०सं०	प०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम	
२०५.	५०६	रामशरण उपाध्याय गद्यकार-इतिहासकार जन्म : सन् १८६१ ई० हासा (दरभंगा)	१. मगध का प्राचीन इतिहास २. भारत का इतिहास	३. इंगलैण्ड का इतिहास ४. इंगलैण्ड का भूगोल
२०६	५१०	रामसकल पाठक (द्विजराम) कवि जन्म : सन् १८६६ ई० सहनीपट्टी (शाहाबाद)	१. सती-सर्वस्व २. सुन्दरी-विलाप ३. भारतभूमि-विलास ४. स्त्री-शिक्षा	५. बक्सर-माहात्म्य ६. विधवा-विलाप ७. विद्या-महिमा ८. भारत-पुकार
२०७.	५१३	रामाजी कवि जन्म : १८६६ ई० खेढ़ाँय (सारन)	स्फुट रचनाएँ	
२०८.	५१५	रामानुग्रहलाल (मेहीदास) गद्यकार-कवि जन्म : सन् १८८४ ई० सिकलीगढ़-धरहरा (पूर्णिया)	१. संतमत-सिद्धान्त और गुरु-कीर्त्तन २. रामचरितमानस-सार ३. विनय-पत्रिका-सार ४. घटरामायण की भावार्थ-पदावली ५. सत्संग-योग (चार भागों में) ६. गीता-योग-प्रकाश ७ मेंहीदास-वचनामृत	८. मेंहीं-पदावली ९ ईश्वर का स्वरूप और उसकी प्राप्ति १०. वेद-दर्शन-योग ११. संतवाणी—सटीक १२. सत्संग सुधार (दो भागों में) १३. मोक्ष-दर्शन १४. ज्ञानयोग-युक्त ईश्वर-भक्ति *१५. व्याख्यान-संग्रह
२०९.	५२३	रामानुग्रह शर्मा (नवनिधि) कवि जन्म : सन् १८८३ ई० मैगरा (गया)	पुहुप-कविता-संग्रह	
२१०.	५२३	रामावतार नारायण गद्यकार जन्म : सन् १९०० ई० सीतामढ़ी (मुजफ्फरपुर)	१. ललकार २. रत्न-प्रकाश ३. स्वर्णकार-परिचय	*४. भगवती मीरा का विष-पान *५. उत्तर-भारत का भौगोलिक इतिहास

क्र०सं०	प०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
२११	५२५	रामावतार प्रसाद कवि-गद्यकार-जीवनी-लेखक जन्म : सन् १८७३ ई० छपरा (सारन)	१. धर्म-प्रकाश २. कृष्ण-भजनावली ३ हनुमत-चरित
२१२	५२६	रामावतार मिश्र (राम) सम्पादक-कवि-गद्यकार-नाटककार-अनुवादक जन्म : सन् १८९८ ई० बेनीपुर (गया)	१. विनायक-जन्म-नाटक २. दमयन्ती-प्रलाप ३. दिलीप की गो-सेवा ४. सिद्धार्थ-जन्म ५ मनुस्मृति, द्वितीय अध्याय का अनुवाद ६. फाल्गुन-महिमा ७ तुलसी-पद पुष्पांजलि ८. लघु बालिका-साहित्य ९. स्तोत्र तथा पूर्त्ति
२१३.	५२९	रामेश्वरीप्रसाद (राम) नाटककार-गद्यकार कवि जन्म : सन् १८८९ ई० बाढ़ (पटना)	१. प्रेम-योगिनी-नाटक २. पीयूष-सागर ३ राम-संगीत-विनोद ४. आनन्द-भण्डार ५ अछूतोद्धार-नाटक *६. आदर्श भारत-नाटक *७ रामावतार-नाटक *८. वीर छत्रसाल-नाटक *९. बीसवीं सदी-नाटक *१०. मनोराज-नाटक *११. गणतन्त्र भारत-नाटक *१२. स्वदेश *१३. संग्राम *१४. शरणार्थी *१५. हजरते-कण्ट्रोल *१६ म्युनिसिपल वार्ड-कमिश्नर *१७. मोख्तार साहब *१८. घण्टाल गुरु *१९. मानवधर्म रूपक *२० भूख *२१ रोटी *२२. जमींदार साहब
२१४.	५३२	रुद्रप्रसाद (रुद्र) अनुवादक-कवि-नाटककार जन्म : सन् १८५९ ई० कटेयाँ (सारन)	१. करीमा का हिन्दी-अनुवाद २. आनन्दमाला ३. विनोदमाला ४. प्रमोदमाला ५. रुद्र-कौतुक-विचित्र ६ कुचाल-सुधार ७. व्यय-व्यर्थ-निवारण ८ नवीन होली ९ बेहान्वी कचहरी-नाटक
२१५.	५३३	रूपनारायण गुप्त सम्पादक-गद्यकार-पाठ्यपुस्तक-लेखक जन्म : सन् १८९० ई० पटना सिटी (पटना)	१. अकबर-बीरबल-विनोद २. व्यापार-शिक्षा ३. आदर्श शिक्षा ४ हिन्दी-अँगरेजी-शिक्षा

क्र०सं०	प०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
२१६.	५३३	रूपनारायण सिंह (चूडामणि) कवि जन्म : सन् १८७४ ई० अहियापुर (गया)	१. रामलीला-प्रभाकर (सातों काण्ड) २. शम्भु-शतक ३. रामचरित स्मरण
२१७.	५३४	ललितकुमार सिंह (नटवर) कथाकार-कवि-नाटककार-सम्पादक-जीवनी-लेखक जन्म : सन् १८६८ ई० सरैयागंज, मुजफ्फरपुर	१. ललित-राग-संग्रह २. गुलाल ३. बाँसुरी ४. धनुर्धर-नाटक ५. दाव पेंच ६. दीपिका ७ चतुर-चर ८. आदर्श शासन * ९. भूतों की गिरफ्तारी *१० कलंक *११. खुदीराम बोस
२१८.	५३६	लक्ष्मणशरण (मोदलता) कवि (भक्ति) जन्म : सन् १८८८ ई० खँगुरा-पहसौल (मुजफ्फरपुर)	१. मोदलता-पदावली *२ संत-चरित्र-दोहावली *३. राम-गौनोत्सव-झूला *४. भादों-झिझरी *५. एकादशी-रहस्य
२१९.	५४१	लक्ष्मीनारायण गद्यकार जन्म : सन् १८९८ ई० उलाव (मुँगेर)	स्फुट रचनाएँ
२२०.	५४४	लक्ष्मीनारायण सिन्हा गद्यकार-कृषि-साहित्यकार जन्म : सन् १८९५ ई० सुन्दरपुर (मुजफ्फरपुर)	१ चरखा-शास्त्र २. कपास की खेती ३. ऊख की खेती ४. साग-तरकारी की खेती
२२१.	५४६	लालजी सहाय अनुवादक-गद्यकार जन्म : सन् १८९७ ई० मैहस (मुँगेर)	'अमरसिंह थापा' का हिन्दी-अनुवाद
२२२.	५५०	[illegible] सिन्हा सम्पादक-कथाकार-जीवनी-लेखक-अनुवादक जन्म : सन् १८८८ ई० बमार (शाहाबाद)	१. रूपवती २. श्रीरूपकलाजी : एक झाँकी ३. डॉ० सच्चिदानन्द सिन्हा ४. उपनिषदों के अनुवाद

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम	
२२३	५५२	वासुदेव पाठक (कवि) साहित्यशास्त्रकार- कवि अनुवादक जन्म : सन् १८७३ ई० इस्लामपुर (गया)	१ अनङ्गप्रिया-नायिका-भेद *२. विद्याभूषण-अलंकार *३ बिहार-भास्कर ४. गीता-रत्नावली	*५. कन्हैया-कुंज-विहार *६. भक्ति-शतक *७ राधा-चन्द्रिका *८ अन्योक्ति-लतिका *९ साहित्य-शृंगार
२२४.	५५४	विक्रमादित्य श्रीवास्तव (आदित्य) कवि-कथाकार-गद्यकार जन्म : सन् १८९२ ई० महिला (शाहाबाद)	*१ कुँअर सिंह *२ अमरसिंह	*३. पंचरोग
२२५.	५५७	व्रजभूषण त्रिपाठी कवि-गद्यकार जन्म : सन् १८९२ ई० अहियापुर (मुजफ्फरपुर)	१ मानस पूर्व-पक्ष का उत्तर-पक्ष	२ बजरंग-पचीसी
२२६.	५५८	विजयानन्द त्रिपाठी (श्रीकवि) सम्पादक-अनुवादक- कवि-नाटककार- कथाकार-इतिहासकार जन्म : सन् १८५६ ई० बेलौटी (शाहाबाद)	१. महामोह-विद्रावण का अनुवाद २ सच्चा सपना ३. रत्नावली नाटिका का पद्यात्मक अनुवाद ४ विक्रमोर्वशीयम् का गद्य-पद्यानुवाद ५ मालविकाग्निमित्रम् का गद्य-पद्यानुवाद	६ प्रियदर्शिका का गद्य-पद्यानुवाद ७ भारतीय इतिहास-पंजिका ८. मेघदूत का समवृत्त एवं समश्लोकी अनुवाद ९ महाअँधेर-नगरी *१०. प्रेम-साम्राज्यादर्श
२२७	५६३	विपिनविहारी वर्मा निबन्धकार-गद्यकार जन्म : सन् १८९२ ई० शिकारपुर (चम्पारन)	स्फुट रचनाएँ	
२२८.	५६४	विन्ध्येश्वरी प्रसाद शास्त्री सम्पादक-गद्यकार- बाल-साहित्यकार-अनुवादक जन्म : सन् १८८६ ई० विलासपुर (सारन)	१ बालोपयोगी जीवनियाँ २. सनातन धर्म (चार भागों में)	*३. ब्रात्य-संस्कार

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम	
२२६	५६७	विश्वेश्वरदयाल (सुखशान्ति) कवि जन्म : सन् १८६४ ई० गोरावाँ (पटना)	पद-संग्रह	
२३०.	५७०	विष्वकसेनाचार्य कवि जन्म : सन् १८६३ ई० अमारी (गया)	प्रेम-प्रवाह	
२३१.	५७५	वेदाग मिश्र निबन्धकार गद्यकार जन्म : सन् १६०० ई० मिश्रटोला, दरभंगा	मंजूषा	
२३२.	५७७	शशिनाथ चौधरी सम्पादक गद्यकार· बाल-साहित्यकार जन्म : सन् १८६६ ई० मिश्रटोला, दरभंगा	१. भगवान् बुद्ध २. सौन्दर्य-विज्ञान *३ सदाचार-सोपान *४. सौन्दर्य-साधन ५. मिथिला-दर्शन	६ प्रेम-विज्ञान या प्रेमतत्त्व ७. चरित्र-गठन या सदाचार-सोपान
२३३	५८०	शशिभूषण राय गद्यकार-इतिहासकार जन्म : सन् १८८६ ई० सिमरा (संताल परगना)	संतालपरगना का इतिहास	
२३४.	५८०	शार्ङ्गधर सिंह गद्यकार जन्म : सन् १८६६ ई० व्रजकिशोर पथ, पटना	स्फुट रचनाएँ	
२३५.	५८१	शालिग्राम सिंह कवि जन्म : सन् १८६१ ई० सुपौल-जमुआ (मुंगेर)	*कविता-कामिनी	
२३६.	५८४	शिवकुमार लाल · कवि-गद्यकार- पाठ्यपुस्तक-लेखक जन्म : सन् १८६५ ई० मँझवारी (शाहाबाद)	स्फुट रचनाएँ	

क्र० सं०	पृ० सं०	साहित्यकारो के नाम	पुस्तकों के नाम	
२३७	५८६	शिवदुलारे मिश्र (मधुकर) गद्यकार कवि-टीकाकार जन्म : सन् १८९७ ई० लालूचक (भागलपुर)	१. विश्वामित्र २. तुलसी-सतसई की टीका ३ तरुण-तरंग	*४. तिलक-तरंग *५ समग *६ बनचक्र-विधान
२३८	५८८	शिवनन्दनप्रसाद सिंह (युवक-विहार) कवि-अनुवादक जन्म : सन् १८९४ ई० मीरगंज (गया)	१ शिवनन्दन-पचासा	२ श्रीमद्भागवत का हिन्दी-अनुवाद
२३९.	५८९	शिवनन्दन मिश्र (नन्द) कवि-गद्यकार-अनुवादक जन्म : सन् १८८७ ई० सोनबरसा (शाहाबाद)	१. उषा-अनिरुद्ध २ द्रौपदी-चीरहरण ३. मोरध्वज ४. केशरगुलबहार ५ अँधेर नगरी	६. शकुन्तला ७ लीलावती ८ सुन्दरकाण्ड-रामायण का मैथिली अनुवाद
२४०	५९०	शिवनन्दन सहाय जीवनी-लेखक-गद्यकार-कवि-अनुवादक जन्म : सन् १८६० ई० (शाहाबाद)	१. सच्चरित्र हरिश्चन्द्र का जीवन-चरित्र २. श्रीसीताराम-भगवानप्रसादजी की जीवनी ३. बाबू साहबप्रसाद सिंह की जीवनी ४ गोस्वामी तुलसीदास ५. गौरांग महाप्रभु ६ मीराबाई की जीवनी ७. सुदामा-नाटक ८. उद्धव-नाटक ९. गत पचास वर्षों में हिन्दी की दशा	१०. बंगाल का इतिहास ११ दयानन्द-मत-मूलोच्छेद १२. सनातनधर्म की जय १३ आशुबोध ज्योतिष १४ आली १५. साहित्य-वातायन १६ कुसुम-कुंज १७ कविता-कुसुम १८ चयनिका १९. विचित्र-संग्रह
२४१.	५९९	शिवनाथ मिश्र (व्यास, कविमणि) कवि जन्म : सन् १८९९ ई० पिटरा (शाहाबाद)	*१. हिरण्यकशिपु-वध	*२. प्रेम-पंचक

क्र०सं०	पृ० सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम	
२४२.	६००	शिवप्रसाद चतुर्वेदी कवि जन्म : सन् १८८७ ई० मलयपुर (मुँगेर)	कविता-संग्रह	
२४३.	६०२	शिवप्रसाद पाण्डेय (सुमति) कवि-टीकाकार गद्यकार-सम्पादक जन्म : सन् १८७६ ई० महेन्द्रू (पटना)	१. सुमित-विनोद (दो भागों में) २. ऋतुसंहार का हिन्दी-गद्य-पद्यानुवाद ३ शिवमहिम्नस्तोत्र (हिन्दी-टीका-सहित) ४. शिवताण्डव तथा वेदसार-शिवस्तोत्र (हिन्दी-टीका-सहित) *५ अलंकार-दर्पण *६. मानव-जीवन *७. साहित्य-प्रसंग *८ प्रार्थना ९. प्रेम-परिचय १०. सुकवि-सतसई के दोहों पर कुण्डलियाँ अथवा श्रीकृष्ण-रसायन अथवा सुमति-सतसई ११. विनय-पत्रिका की टीका	१२ रामचरितमानस की टीका १३ छप्पय-रामायण की टीका १४. जानकी-मंगल की टीका १५ तुलसी-भूषण १६. अलंकार-परिचय १७ वैदिक संध्या-पद्धति १८. गौतमाश्रमोपाख्यान-काव्य *१९. दुर्गापूजा-पद्धति २०. श्रीरघुवर-गुण-दर्पण २१. श्रीचित्रगुप्त-कथा सटीक २२. नित्य-तर्पण-पद्धति २३. नूतन साहित्य २४. विनय-पद्य-संग्रह
२४४.	६०८	शिवप्रसाद सिंह (शिव) कवि जन्म : सन् १८९२ ई० नवगाईं (मुँगेर)	*१. ब्रज-विहार	*२ शिव-शतक
२४५.	६१०	शिवपूजन सहाय गद्यकार-सम्पादक-कथाकार-संस्मरण-लेखक-जीवनी-लेखक जन्म : सन् १८९३ ई०	१ बिहार का बिहार २. विभूति ३. देहाती दुनिया ४. भीष्म	५. ग्राम-सुधार ७. दो घड़ी ८. माँ के सपूत ९. अन्नपूर्णा के मन्दिर में

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
			११. बालोद्यान १२. आदर्श परिचय १३. सेवा-धर्म १४. बिम्ब-प्रतिबिम्ब १५. मेरा बचपन १६ वे दिन : वे लोग १७ अमर सेनानी बाबू कुँअर सिंह १८. हिन्दी-साहित्य और बिहार (दो खण्डों में)
२४६.	६१६	शिववन्धन पाण्डेय कवि जन्म : सन १८६२ ई० दुलही (शाहाबाद)	१. सद्‌गुरु-स्तोत्रावली २. मोक्ष-प्रवेशिका और योगजीत-विजय ३. श्रीशान्ति सरोजाञ्जलि *४. सिद्धान्त-सारामृत
२४७	६१८	शिवस्वरूप वर्मा गद्यकार-सम्पादक जन्म : सन् १८६२ ई० ताराचक (शाहाबाद)	१. बिहार में बुनियादी साहित्य २. दालिम कुमार ३. सीत वसन्त
२४८.	६१६	शीतलसिंह गहरवार कवि जन्म : सन् १८६५ ई० इमामगंज (गया)	श्रीसीताराम चरितायन
२४६.	६१६	शुकदेवनारायण वर्मा (खाकी) कवि-गद्यकार-नाटककार जन्म : सन १८८८ ई० हरखौली (सारन)	१. मोक्ष-मार्त्तण्ड २. विवेक-वचनावली ३. खाकी-पहेली ४. खाकी-दोहावली ५. गोरेगट का भूत और भारत का देवदूत ६. रामायण का राम नाम ७. हनुमान-नाटक ८. रामराज ६. सती-प्रताप १० सुहागिन-सर्वस्व ११. सुहागिन शृंगार १२. खाकी-कुसुमाञ्जलि १३. स्वतंत्र भारत १४. कुमारी का जन्म १५. कुमारी-तपस्या १६. कुमारी-विवाह १७. सप्तसाधन तथा खाकी-झाँकी १८ मानवमात्र का एक धर्म १६. चपला-विपला २०. बिल्ली-बहार २१. खाकी-गल्प
२५०.	६२०	श्यामकृष्ण सहाय गद्यकार-कथाकार जन्म : सन् १८८१ ई० बेलकप (शाहाबाद)	१. म्युनिसिपल कानून-पुस्तक २. वेदों में नारी और शूद्र

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
२५१	६२१	श्यामजी शर्मा कवि गद्यकार-सम्पादक-निबन्धकार जन्म : सन् १८७४ ई० भदवर (शाहाबाद)	१. श्याम-विनोद २ खड़ीबोली-पद्यादर्श ३ अबला-रक्षक ४. हिन्दू-समाज से विधवाओं की प्रार्थना ५ क्या विधवा-विवाह अधर्म है ? ६. पिंगल दर्पण ७. अलंकार-दीपक ८. वेद में क्या है ? ९ श्याम-सरोज-सतसई १० राम-वनवास *११. राम-चरितामृत *१२ श्याम-दोहावली *१३. दैवी शक्ति की साधना *१४. स्वामी दयानन्द के सिद्धान्तों पर मेरे विचार *१५ श्राद्ध-विचार *१६. ऋग्वेद के नासदीय-सूक्त-विवेचन *१७. यजुर्वेद के अध्याय ३१, ३२ और ४० पर तुलनात्मक विवेचन तथा 'पितर'-मन्त्र पर विवेचन १८ भाग्य-परिवर्त्तन १९. प्रेमामोहिनी २०. प्रियावल्लभ २१. श्याम-हर्षवर्द्धन २२. सत्त्वामृत-काव्य २३. बाल-विधवा-गुहार २४. स्वाधीन-विचार २५. विधवा-विवाह २६. पं० मानीमति-चपेटिका २७. वृन्द-विलास २८. भारतरत्न
२५२	६२३	श्यामनारायण चतुर्वेदी अनुवादक-गद्यकार जन्म : सन् १८६७ ई० बगही (सारन)	ऋग्वेद का हिन्दी-अनुवाद
२५३.	६२५	श्यामनारायण सिंह कवि जन्म : सन् १८६६ ई० सोनपुर (सारन)	स्फुट रचनाएँ
२५४.	६२६	श्रीकृष्ण मिश्र कथाकार-नाटककार-सम्पादक-संस्मरण-लेखक-गद्यकार जन्म : सन् १८६४ ई० लालूचक (भागलपुर)	१. प्रेमा २. महाकाल ३. देवकन्या ४. हिन्दी-व्याकरण ५. बीते दिन
२५५.	६२६	श्रीकृष्ण सिंह (बिहार-केसरी) गद्यकार जन्म : सन् १८८८ ई०	१. निर्माण की वेला २. राजनीति-शास्त्र

क्र० सं०	प० सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
२५६	६३३	श्रीधरप्रसाद शर्मा कवि-अनुवादक जन्म : सन् १८६६ ई० राघवपुर (पटना)	१. नई दुनिया २. भागवत-माहात्म्य ३. श्रीमद्भगवद्गीता (राधेश्याम-तर्ज) ४ वीर अभिमन्यु ५. सीताराम विवाह-कीर्त्तन ६ लंका दहन ७. राम-वन-गमन ८ उमाशंकर-विवाह-कीर्त्तन ९. सुदामा-चरित १०. गांधी-विरह लहरी ११. होली-धमार : चैत-गुलबहार
२५७.	६३६	सकलनारायण शर्मा कथाकार-जीवनी-लेखक-गद्यकार-सम्पादक जन्म : सन् १८७१ ई० आरा (शाहाबाद)	१. हिन्दी सिद्धान्त-प्रकाश २. सृष्टि-तत्त्व ३. प्रेम-तत्त्व ४ वीरबाला-निबन्ध-माला ५. आरा पुरातत्त्व ६ व्याकरण तत्त्व ७ जैनेन्द्र किशोर ८. पेडलर साहब की जीवनी ९ राजरानी १० अपराजिता
२५८.	६३९	सत्यनारायण शरण कवि जन्म : सन् १८७० ई० अख्तियारपुर (शाहाबाद)	स्फुट रचनाएँ
२५९.	६४१	सत्यनारायण सिंह (वर्मा) कवि-गद्यकार-निबन्धकार-कोषकार-अनुवादक जन्म : सन् १९०० ई० ब्रह्मपुर खुटाही (मुजफ्फरपुर)	*१. कविता-संग्रह *२. राष्ट्रीय मुरली *३. राष्ट्र का हुंकार *४. पद्य-शब्दकोश *५. जयहिन्द *६. स्वागत-पुष्पाञ्जलि *७ राष्ट्रभाषा कौन हो? *८. विवरण-चन्द्रिका *९. छन्दप्रभा *१०. प्रबन्ध प्रभाकर *११. निबन्ध सुधाकर *१२. प्रचलित हिन्दी-मुहावरे और कहावतें *१३. तुलसी-तरंग *१४. गो-साहित्य (दो भागों में) १५. हिन्दी-भगवद्गीता *१६. अलंकार-गुटका *१७. गोस्वामी तुलसीदास और उनकी काव्य-कला १८. कल्याण कल्पद्रुम १९. कीर्त्तन-भजनावली
२६०.	६४४	साधुशरण कथाकार-नाटककार-गद्यकार जन्म : सन् १९०० ई० खजुहट्टी (सारन)	१. प्रेम-पुष्प २. जीवन ३. कसक ४. भूल-भुलैया ५. दीपक ६ मालिन *७. मानव-मनोविज्ञान *८. स्वर्ग *९. अश्रु कण *१०. अकिंचन *११. रैन-बसेरा *१२ जादूगर-नर्त्तकी *१३. वनदेवी *१४. पृथ्वीराज

क्र० सं०	प० सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
२६१	६४५	सॉंवलियाजी कवि जन्म : सन् १८६८ ई० छपरा (सारन	स्फुट रचनाएँ
२६२	६४६	साँवलियाविहारी-लाल वर्मा गद्यकार-जीवनी लेखक-यात्रा-वृत्तान्त-लेखक जन्म : सन् १८६६ ई० छपरा (सारन)	१. यूरोपीय महाभारत (पाँच भागों में) २ गद्य-चन्द्रिका ३. गद्य-चन्द्रोदय ४ लोकसेवक महेन्द्र प्रसाद ५ बदरी-केदार-यात्रा ६ इस्लाम की झाँकी ७. विश्वधर्म दर्शन ८ अन्तरराष्ट्रीय विधि ९ दक्षिण-भारत की यात्रा १० प्रतीक-पूजा का आरम्भ और विकास ११. रामेश्वर-यात्रा *१२ गीता पर भाष्य *१३ भारत के मन्दिर और तीर्थ
२६३.	६५१	सियाशरणप्रसाद (सिया) कवि-गद्यकार-कथाकार-जीवनी-लेखक जन्म : सन् १८६६ ई० सुरानन्दपुर (मुँगेर)	१. प्रेमाञ्जलि २ प्रेमपुष्प *३. राष्ट्रीय संगीत *४. लोरियाँ ५. पद्य तथा गीति-संग्रह *६. नेपोलियन बोनापार्ट *७. फ्रांस की राज्य-क्रान्ति *८ सुरभि *९. वाल्मीकि और तुलसी
२६४.	६५४	सियाशरण मधुकरिया (प्रेमअली) कवि जन्म : सन् १८६२ ई० सूपी (गया)	स्फुट रचनाएँ
२६५.	६५६	सीताराम मिश्र (शशि) कवि-नाटककार जन्म : सन् १८६३ ई० कोराप (गया)	भृगुरारि-क्षेत्र
२६६.	६५७	सुरेन्द्र प्रसाद (वैदेही-शरण, धीरमणि) गद्यकार-सम्पादक जन्म : सन् १८८४ ई० बेलसर (मुजफ्फरपुर)	१ दैविक गुण-दर्पण २. हिन्दी का भण्डार ३. हिन्दी-व्यावहारिक वाग्धाराएँ ४. ईश्वर-भक्ति ५. जीवन-सरिता *६. शान्ति-सागर *७ ज्ञान-दीपक

क्र०सं०	प०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
२६७.	६५७	सैयद मुहम्मद हुसैन (दीन, गिरिडीहवी) कवि-गद्यकार-जीवनी-लेखक- अनुवादक जन्म : सन् १८६७ ई० मियाँबीघा (गया)	१. चुटकियाँ २. विवाह का घर ३. अलंकार ४. राष्ट्रभाषा-व्याकरण ५. महात्मा गांधी ६. गुरु गोरखनाथ ७ गुरु नानक ८ सत्याग्रही बालक प्रह्लाद ९. सपूत श्रवणकुमार १० छत्रपति शिवाजी ११. भगवान् बुद्ध १२ वीर हनुमान १३. राजा भर्तृहरि १४ पितामह भीष्म १५ सम्राट् अशोक १६. कविवर टैगोर १७ प० जवाहरलाल नेहरू १८. गुरु गौतम स्वामी १९ दानवीर कर्ण २०. प्रोफेसर राममूर्त्ति २१ महात्मा जरथुस्त्र २२. चक्रवर्त्ती सम्राट् चन्द्रगुप्त २३. पार्श्वनाथ
२६८	६६१	हरदीपनारायण सिंह (दीप) कवि-नाटककार-कथाकार- गद्यकार जन्म : सन् १८९२ ई० फुलकहाँ (मुजफ्फरपुर)	१. पातिव्रत २ दीप वचनामृत ३ आदर्श दम्पति-विलाप ४ प्रेम पुष्प ५ कृष्णाकुमारी ६. महामाया ७ विनयशतक ८. मनोरंजन
२६९.	६६४	हरनाथ सहाय गद्यकार- पाठ्यपुस्तक-लेखक जन्म : सन् १८८८ ई० कुम्हैला (शाहाबाद)	१. अलजेबरा २. चिन्तन ३. पत्रदर्शन ४. सरल पत्र क्रम-ज्योतिष
२७०.	६६६	हरिवंशप्रसाद द्विवेदी (जौहरी) कवि जन्म : सन् १८९९ ई० पुरानी गोदाम (गया)	स्फुट रचनाएँ
२७१.	६६९	हरिवंश मिश्र गद्यकार-टीकाकार जन्म : सन् १८९१ ई० मिश्र-बवरहा (सारन)	स्फुट रचनाएँ

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
२७२	६६९	हरिवंश सहाय सम्पादक-इतिहासकार- गद्यकार जन्म : सन् १८८२ ई० बड़िअरिया (चम्पारन)	१. अमेरिका की स्वाधीनता का इतिहास २. भारतात्मा
२७३.	६७१	हरिहर प्रसाद (जिजल) गद्यकार-सम्पादक-नाटककार- कथाकार-कवि जन्म : सन् १८६९ ई० लहेरीटोला (गया)	१. जया २. राजसिंह ३ भारत-पराजय ४ कामिनी-मदन ५. सभ्य-स्वयंवर ६ बैंकर-प्रभा ७ होनहार ८. परिणाम ९. कुलांगना १०. कुलदीपबाबू ११. सुशीला १२ शीला १३. अवधकिशोर १४. डबल नवाब १५. भोली बीबी १६. जगमग १७. छिनार-छतीसी १८ नया ग्रन्थकार १९ गीतावली २०. कामोद-कला
२७४.	६७३	हरिहर प्रसाद (रसिक) गद्यकार-कवि-सम्पादक जन्म : सन् १८९९ ई० हरपुरनाग (चम्पारन)	१. विजय-पताका २. श्रद्धांजलि ३. कुसुमांजलि ४. गद्य-विनोद ५. प्रेम-प्रवाह ६. रसिक-कवितावली ७. काव्य-सुधा ८. अन्तःज्वाला ९. अभ्यर्थना १०. बेखटक बेतियावी
२७५.	६७८	हर्षराम सिंह 'हर्ष' कवि जन्म : सन् १८६७ ई० कोइरीबारी (गया)	१. हर्ष-बहार २. नवीन नायिका ३. महिषमर्दिनी दुर्गे ४. भयानक समय ५. काव्य कुंज ६. भजन-कीर्त्तन ७. गजल-गुणागार ८. उजली कजली ९. तरुण-तरंग
२७६	६७९	हवलदारीराम गुप्त (हलधर) कथाकार-नाटककार- गद्यकार-सम्पादक-इतिहासकार जन्म : सन् १८९४ ई० हरिहरगंज (पलामू)	१. कंगाल की बेटी २. वीर लक्ष्मण ३. त्यागी भरत ४. बालक-विनोद ५. बालिका-विनोद ६. आदर्श विवाह ७ जातीय संगठन ८. कुरीति-निवारण ९. सुनीति-संचारण १०. वैश्य-कर्म ११. सरल-शुभंकरी १२. पत्र-प्रभाकर १३. संगीत १४. बाल-व्यायाम १५. स्वास्थ्य-रक्षा १६. कोंहड़ा पाँडे १७. ऐंठू सिंह १८ देव-माहात्म्य

क्र० सं०	प० सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम	
			१६ छोटानागपुर का इतिहास	२२. आदर्श नारी
				२३ आदर्श विमाता
			२०. बेटी-बहू	२४. पलामू का बृहद इतिहास
			२१. गृहिणी	
२७७	६८२	हीरालाल झा (हेम) कवि-गद्यकार जन्म : सन् १८६२ ई० भ्रमरपुर (भागलपुर)	१. मैथिली-भाषा-व्याकरण भास्कर २ हिन्दी-व्याकरण-बूटी	३ ब्रह्मचारी
२७८.	६८४	हुबलाल झा गद्यकार-कवि जन्म : सन् १८६० ई० सोन्हौली (मुँगेर)	१. भ.रत-भूषण २ श्रीकाली कथा	३ भावाञ्जलि
*२७६.	६८७	कार्त्तिकेयचरण मुखोपाध्याय सम्पादक-कथाकार-गद्यकार जीवनी-लेखक-कवि-कृषि साहित्यकार जन्म : सन् १८६७ ई० कालीबाड़ी (छपरा)	१. मुस्तफा कमालपाशा	२३. युगलाङ्गुलीय
			२ सती सुभद्रा	२४ राधारानी
			३ मणिपुर का इतिहास	२५ शैतानी-शरारत
			४. सावित्री सत्यवान	२६. शैतान की नानी
			५ नल-दमयन्ती	२७ खूनियों का जत्था
			६. सती पार्वती	२८. रणभूमि-रिपोर्टर
			७. सीतादेवी	२९. टर्की का कैदी
			८ शैव्या-हरिश्चन्द्र	३०. कैदी की करामात
			६. सती शकुन्तला	३१. जर्मन जासूस
			१० देवी द्रौपदी	३२. पिशाचिनी
			११ श्रीराम-कथा	३३. चीना-सुन्दरी
			१२. हिन्दी-वर्ण-परिचय (दो भाग)	३४ जासूसी गु दस्ता
				३५. जासूस की डायरी
			१३. बाग-बगीचा	
			१४. साग-सब्जी	३६. जासूस की झोली
			१५ कृषि और कृषक	३७. रेगिस्तान की रानी
			१६. किराने की खेती	३८. हवाई किला
			१७ भदई-फसलों की खेती	३६. कापालिक डाकू
			१८. रबी-फसलों की खेती	४० चाण्डाल-चौकड़ी
			१६. तेलहन की खेती	४१. विद्रोही राजा
			२०. चरित्रहीन	४२. कलकत्ता-रहस्य (दो भागों में)
			२१. चन्द्रशेखर	
			२२. कपालकुण्डला	४३. कुटीरशिल्पकला

*क्रम-संख्या २७६ से ३०७ तक के साहित्यकार परिशिष्ट-१ के अन्तर्गत अकारादि क्रम से चर्चित साहित्यकार हैं।

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
२८०	६९०	कालीकुमार मुखोपाध्याय गद्यकार-कवि जन्म : सन् १८६६ ई० डुमरामा (भागलपुर)	१. समालोचना-सप्तक *२ जिज्ञासु *३. हमारी राष्ट्रीय शिक्षा कैसी होनी चाहिए *४ समालोचना-पंचायत *५. संसार-सार-संग्रह-गल्प *६. पगडंडी
२८१	६९२	कीर्त्यानन्द सिंह गद्यकार जन्म : सन् १८८३ ई० बनैली (पूर्णिया)	स्फुट रचनाएँ
२८२.	६९४	गोवर्द्धन गोस्वामी कवि अनुवादक जन्म : सन् १८९४ ई० गायघाट (पटना)	स्फुट रचनाएँ
२८३.	६९६	चन्द्रशेखर पाठक कथाकार-गद्यकार-सम्पादक-जीवनी-लेखक आदि जन्म : सन् १८८६ ई० बिहारशरीफ (पटना)	१. रमा (दो भागों में) २. मदालसा ३. अर्थ में अनर्थ ४. वारांगना-रहस्य ५. विलासिनी-विलास ६. शशिबाला ७ भीमसिंह ८. शोणित-चक्र ९. हेमलता १०. आदर्श लीला ११. कृष्णवसना सुन्दरी १२. लीला १३. प्रतिमा-विसर्जन १४. मायापुरी १५. विचित्र समाज सेवक *१६. भारती १७. कर्मवीर महात्मा गांधी १८ महाराणा प्रताप १९. नेपोलियन बोनापार्ट २० लार्ड किचनर २१. सिकन्दरशाह २२ पृथ्वीराज २३. लाला लाजपत राय २४ सन् सत्तावन का गदर २५. पंजाब का भीषण हत्याकाड २६ गोधन
२८४.	६९८	जगतनारायण लाल कवि-गद्यकार-सम्पादक जन्म : सन १८९६ ई० औंखगाँव (शाहाबाद)	१. ज्योत्स्ना २. एक ही आवश्यक बात ३. हिन्दू-धर्म

क्र०सं० पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
२८५. ७०१	जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी गद्यकार-सम्पादक-कवि-नाटककार जन्म : सन् १८७५ ई० मलयपुर (मुँगेर)	१. वसन्त-मालती २ संसार-चक्र ३ तूफान ४ विचित्र विचरण ५ भारत की वर्तमान दशा ६ स्वदेशी आन्दोलन ७ गद्यमाला ८ निरंकुशता-निदर्शन ९. कृष्ण-चरित्र १०. राष्ट्रीय गीत ११. अनुप्रास का अन्वेषण १२. सिंहावलोकन १३. हिन्दी-लिंग-विचार १४. विचित्र वीर डॉन १५ मधुर मिलन १६. प्रेम-निर्वाह १७ विवाह कुसुम १८ आक्षान्त १९ बिहार का साहित्य २०. निबन्ध-निचय २१. तुलसीदास
२८६. ७०७	दीनदयाल सिंह (विरागी) कवि-गद्यकार अनुवादक जन्म : सन् १८८६ ई० भदवर (शाहाबाद)	१ वेदान्त-प्रकाश २ पातंजल योग-दर्शन का हिन्दी-पद्यानुवाद ३. गीता-महात्म्य ४. गीता-रहस्य ५ अष्टावक्र-गीता ६. ब्रह्म-गुणानुवाद ७. नव उपनिषद् ८ आत्मबोध
२८७ ७०६	दीनदयालु सिंह सम्पादक-इतिहासकार जन्म : सन् १८५८ ई० तारणपुर (पटना)	भारतवर्ष का इतिहास
२८८. ७०९	दीपनारायण गुप्त गद्यकार जन्म : सन् १८९३ ई० दधपी (गया)	स्फुट रचनाएँ
२८९. ७०९	देवकीनन्दन भट्ट (अनंग) नाटककार-कवि जन्म : सन् १८८६ ई० बड़गुजर (मुँगेर)	धर्म-प्रचार
२९०. ७१०	नरेन्द्रनारायण सिन्हा सम्पादक-कथाकार-जीवनी-लेखक-टीकाकार जन्म : सन् १८८३ ई० मन्दवारा (मुजफ्फरपुर)	१. महाराजकुमार रामदीन सिंह २. चन्द्रगुप्त ३ आत्मोपदेश *४. भक्तियोग ५. हनुमान-शतक *६. पद्माकर *७. भारतीय चरिताम्बुधि

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
२९१	७१२	पीटर शान्ति नवरंगी गद्यकार-कवि-नाटककार- पाठ्यपुस्तक-लेखक जन्म : सन् १८९९ ई० पाटपुर (राँची)	१. नागपुरिया-सदानी-बोली का व्याकरण २ सदानी-रीडर ३ नागपुरिया-साहित्य ४. संत मरकुस-लिखल परभु ईसुकर सुसमाचार ५. संत मत्ती-लिखल परभुकर सुसमाचार ६. संत लूकस-लिखल परभु ईसुकर सुसमाचार ७ संत जोहन लिखल परभु ईसुकर सुसमाचार ८ ईसु-चरित-चिन्तामन ९ छोटानागपुर का संक्षिप्त इतिहास १०. सत्यमेव जयते ११ अदन-बिछोह १२ पाँच एकांकी १३. हिन्दी-भाषा-प्रदीप १४. श्रीयीसु का छोटा संघ
२९२.	७१५	बलदेव पाण्डेय (बलभद्र) कवि जन्म : सन् १८७१ ई० आकरी (गया)	स्फुट रचनाएँ
२९३.	७१७	बलिराम मिश्र कवि-अनुवादक जन्म : सन् १८८५ ई० बारा (गया)	१. सत्यनारायण-व्रत-कथा का हिन्दी-पद्यानुवाद २. सग्राम पचासा
२९४.	७१८	ब्रजकिशोर नारायण (बेढब) कवि जन्म : सन् १८८५ ई० अमावाँ (पटना)	स्फुट रचनाएँ
२९५.	७२०	ब्रजबिहारी सिंह कथाकार-गद्यकार-सम्पादक जन्म : सन् १८८२ ई० बसन्तपुर-पट्टी (मुजफ्फरपुर)	१. कीटा-रानी *२. वनौषधि-चन्द्रिका *३. एलेक्ट्रो-होमियोपैथी

क्र०सं०	पृ०सं०	साहित्यकारों के नाम	पुस्तकों के नाम
२९६	७२१	मथुराप्रसाद सिंह गद्यकार-सम्पादक जन्म : सन् १८८३ ई० वेलछा (सारन)	स्फुट रचनाएँ
२९७	७२३	महेन्द्र सिंह गद्यकार-कवि यात्रा वृत्तान्तकार जन्म : सन् १८८६ ई० मानिकपुर (सारन)	१ पाँच विकट यात्राएँ २ मानसरोवर की झाँकी
२९८	७२६	राजदेव झा नाटककार-कवि-गद्यकार जन्म : सन् १८८८ ई० मखराइन (दरभंगा)	१. बाल्य गीतगोविन्द २. ब्राह्मण शुद्धि-सभा ३ कर्ण कायस्थ-कुरीति-वर्णन ४ देश-सुधार ५. कलकत्ते की हिन्दू-मुसलमान-लड़ाई का वर्णन ६ भविष्यवाणी *७. शिव-विवाह *८. हनुमान-दिग्विजय *९ सत्य हरिश्चन्द्र *१० छात्रों के लिए सदाचार-वर्णन *११ भूकम्प-वर्णन
२९९	७२६	राधा प्रसाद गद्यकार जन्म : सन् १८८९ ई० भरखर (शाहाबाद)	स्फुट रचनाएँ
३००.	७२७	क्षेमधारी सिंह गद्यकार जन्म : सन् १८९४ ई० मधुबनी (दरभंगा)	१. शकुन्तला का अनुवाद २. सांख्य-खद्योतिका ३. श्रीकर-भक्ति-तरंग ४. शृंगार-पद दुहगोट ५. निबन्ध-चन्द्रिका ६. मनोविज्ञान ७ कर्त्तव्यशास्त्र ८ नीतिशास्त्र ९ भारतीय दर्शन-चयनिका १०. अध्यात्म-विज्ञान ११ पाश्चात्य-दर्शन

●

परिशिष्ट—२

[प्रस्तुत खण्ड से सम्बद्ध कुछ साहित्यकारों की रचना के उदाहरण, जो बाद में प्राप्त हुए ।]

कालिका प्रसाद[1]

उदाहरण

(१)

शिक्षा की वर्त्तमान अवस्था से जो प्रबल असन्तोष अधिकांश चिन्तन-शील जनता मे देख पडता है, उसके अनेक कारणों में सर्वप्रधान शायद यही है कि विद्यमान प्रणाली जो कुछ भी देती है, केवल मानसिक शिक्षा देती है, शारीरिक बहुत अल्प, नैतिक नाम को ही, और उपार्जन-शिक्षा तो कुछ भी नही। अर्थात् पारिभाषिक शब्दों के आवरण से विमुक्त स्पष्ट भाषा में, हमारा आज का शिक्षित नवयुवक स्कूल में पढाये गये विविध विषयों मे थोड़ी बहुत जानकारी प्राप्त कर चुका है ; अँगरेजी लिखना, पढ़ना और बोलना कुछ सीख गया है , संस्कृत या फारसीदाँ कहलाने का भी दावा चाहे तो कर सकता है; अशोक के सुशासन और सिकन्दर के दिग्विजय की कथा चाहिए तो उससे सुन लीजिए ; संसार में सबसे लम्बी नदी कहाँ है या सबसे बड़ा नगर कौन है, यह जानना चाहते हो तो पूछ लीजिए; वृष्टि कैसी होती है और इन्द्रधनुष क्या वस्तु है अथवा ग्रहण लगने के क्या कारण हैं—यह इच्छा हो तो समझ लीजिए ; चक्रवृद्धि और हुंडी या आवर्त्त-दशमलव-भिन्न के लम्बे-लम्बे प्रश्न उससे निकलवा लीजिए; स्वास्थ्यरक्षा के सभी उपाय उसको कंठाग्र है; सचाई और दया की प्रशंसा में अथवा बाल-विवाह के दोषों के ऊपर उससे निबंध लिखवा लीजिए या वक्तृता सुन लीजिए । जहाँ तक केवल विद्योपार्जन की बात है, यह सब कुछ ठीक है; वह पढ़-लिख गया,

---

१. देखिए, प्रस्तुत खण्ड, पृ० ८८

इसमें कोई सन्देह नही; यद्यपि दुर्भाग्यवश अनेक मैट्रिकुलेट ऐसे भी मिलेंगे जो आठ-दस वर्ष अँगरेजी पढ़कर भी आज एक छोटा-सा साधारण पत्र शुद्ध अँगरेजी मे नही लिख सकते, इतना ही नही, वे कभी-कभी अँगरेजी से भी अधिक भूलें—दुख की बात है—अपनी मातृ-भाषा लिखने में करते है। अस्तु, हमारा उदाहृत शिक्षित युवा, इस प्रकार कई भाषाओं और अनेक विषयो का जाननेवाला कहा जा सकता है—यह भी नि.सन्देह बड़े महत्त्व का गुण है, इसकी भी अपरिहार्य आवश्यकता है और सर्वदा ही शिक्षाक्रम का मुख्यांश बना ही रहेगा। परन्तु खेद-जनक बात, असंतोष का विषय, यह है कि शिक्षा का कोई विशेष प्रभाव उसके आचरण पर नही पड़ता है।[1]

द्वारिका प्रसाद[2]

१

सब दिशि हार खाई, राउर शरण धाई,
अबहू कृपा की दृष्टि फेरु मातु जानकी।
तू ही जगदम्ब अम्ब ! तू ही दुख हरणी हो,
तू ही पापनाशिनि हौ मेरी मातु जानकी।
प्रभु अर्द्धाङ्गिनि अमरपुरबासिनी हौ,
नाम लेत अघवा बिलाय मातु जानकी।
संकट बिहात नाम लेत तीन लोक जाने,
पतित अनेकन उबार्‌यो मातु जानकी॥
सीयाराम सीयाराम रसना रटत जब,
त्रास यमपुर के मिटाय मातु जानकी॥
घोर अघ मण्डित निहार्‌यो दशकन्ध जब,
शरण निहार्‌यो तब एक मातु जानकी॥

---

१. 'गद्य-चन्द्रोदय' (सं० साँवलियाविहारीलाल वर्मा, प्रकाशन-काल नहीं), पृ० १५३-५४।
२. देखिए, प्रस्तुत खण्ड, पृ० २२७।

अपर उपाय नाहीं देखि निज तरन कौ,
हठ करी रार ठान्यो तोसों मातु जानकी ॥[१]

(२)

हे नाथ ! मम जीवन सहायक टुक दया इत कीजिए,
अज्ञान तम सशय विदारक चरण भक्ति दीजिए।
नित क्रोध मद व्यसनादि ताडत बेगि प्रभु हर लीजिए,
एक आस केवल हे दयामय घोरतम सम छीजिए॥
तार्‌यो अजामिल और गणिका निज प्रचण्ड प्रताप से,
दुःख से द्रवित उन जनकतनया को उबार्‌यो चाप से।
हे रावणारि त्रैलोक्य पावन अरु उवारण पाप से,
तार्‌यो पतित कोटिन्ह दयामय मै बचूँ क्यों आपसे ॥[२]

---

१. 'श्रीभगवदभजनावली' अथवा 'द्वारिका दूर्वादिल' (द्वारिका प्रसाद, सम् १६३७ ई०), पृ० १।
२ वही, पृ० २।